प्राचीन भारत के महर्षियों ने वेद के छः अंग बतलाये हैं: शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष। इन अंगों में प्रधान नेत्र रूप अंग ज्योतिष है। जैसे प्राणि मात्र के काम नेत्र के बिना नहीं हो सकते वैसे ही वेद सम्बन्धी यज्ञादि क्रिया कलाप तथा स्मृति सम्बन्धी जातकर्म, विवाह आदि संस्कार ज्योतिष के बिना नहीं हो सकते। काल सम्बन्धी शुभाशुभ ज्ञान के लिए ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है।

किन्तु यद्यपि पूर्वाचार्यों ने ज्योतिष शास्त्र के तीनों स्कन्धों–सिद्धान्त, संहिता, होरा–पर महत्त्व पूर्ण ग्रन्थ लिखें हैं तो भी आधुनिक पाठक के लिए वे उपयोगी नहीं हैं। ये ग्रन्थ मात्र शास्त्रीय पद्धति से लिखे गये हैं। इनसे लौकिक व्यवहार कुछ भी सिद्ध नहीं होता, यहां तक कि सामान्य मुहूर्त, जन्मपत्री, वर्ष प्रवेश भी नहीं बन पाते।

पञ्चाङ्ग देखना, चन्द्रशुद्धि, दिशाशूल, गर्भाधानादि संस्कार, मुहूर्त निकालना आदि सामान्य बातें गृहस्थमात्र को जानना आवश्यक है। और फलित ज्योतिष के विद्यार्थियों को भी उपर्युक्त सहज में सीखना आवश्यक है। बृहज्जातक, नीलकण्ठी, मुहूर्त चिन्तामणि आदि ग्रन्थ पढ़ने से भी सभी उपयोगी विषयों का ज्ञान ठीक नहीं हो पाता।

इसलिए सर्वसाधारण, बिना गुरु के उपदेश से गृहस्थाश्रमोपयोगी विषयों को जानने के लिए प्राचीन तथा नवीन ग्रन्थों से संग्रह करके भाषा टीका सहित प्रस्तुत ग्रंथ की रचना का प्रयोजन स्वतः सिद्ध हो जाता है।

मूल्य : रु० ३०.००

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

हिन्दी टीका सहित

श्रीविश्वभास्कर पंचांग के रचयिता
दैवज्ञचक्रचूडामणि, विद्यावारिधि, ज्योतिषाचार्य
पं० लक्ष्मीकान्त कन्याल

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली :: वाराणसी :: पटना

भारतीय संस्कृति ग्रन्थमाला के प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक-विक्रेता
प्रधान कार्यालय : अ. उल्लाह मार्ग, जवाहर नगर, दिल्ली-७
शाखाएँ : १. चौक, वाराणसी-१ (उ० प्र०)
२. अशोक राजपथ, पटना-४ (बिहार)

प्रथम संस्करण : लखनऊ, १९३१
पुनर्मुद्रण : दिल्ली, १९७६
मूल्य : रु० ३०.००

सुन्दरलाल जैन, मोतीलाल बनारसीदास, अ. उल्लाह मार्ग, जवाहर नगर, दिल्ली-७ द्वारा प्रकाशित तथा शान्तिलाल जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस, ए-४५, फेस-१, इंडस्ट्रियल एरिया, नारायणा, नई दिल्ली-२८ द्वारा मुद्रित ।

त्वदीयं वस्तु गोविन्द

मनुष्य का भविष्य, विधाता की भांति उसके लिए अज्ञेय रहा है। मनुष्य अपने भविष्य के प्रति जिज्ञासु भी रहा है और भयभीत भी। इस समस्या के समाधान के लिए उसने अपनी दृष्टि नीले अनन्त अन्तरिक्ष की ओर उठाई और सतत साधना के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि हजारों लाखों मील दूर भ्रमण कर रहे, ग्रह-उपग्रह उसके जीवन को प्रभावित करते हैं। ग्रहों-उपग्रहों की गति के सन्दर्भ में मानव जीवन का अध्ययन ही ज्योतिष शास्त्र है। ज्योतिष का सिद्धान्त है कि मनुष्य का जन्म-क्षण, उसके सम्पूर्ण जीवन का नियामक होता है।

ज्योतिष-शास्त्र एक विज्ञान है। वह एक प्रत्यक्ष विज्ञान है--इसमें विवाद नहीं; क्योंकि ज्योतिष का आधार गणित है। ग्रहों और उपग्रहों की गति एवं स्थिति की गणना करके ज्योतिषी जो निष्कर्ष निकालता है, वह शत-प्रतिशत सही होते हैं। ज्योतिष पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एकता सिद्ध करता है। सृष्टि में मनुष्य को उसकी तुच्छ स्थिति और अज्ञेय नियति के प्रति सावधान करता है।

मेरे पूज्य पिताजी स्वर्गीय श्री लक्ष्मीकान्त काण्डपाल उत्तराखण्ड के सुप्रसिद्ध ज्योतिषी थे। उन्होंने अपनी अल्पायु में ही, इस शास्त्र के माध्यम से देश विदेश में ख्याति अर्जित करली थी। उनकी भविष्य-वाणियां काल की कसौटी पर शत-प्रतिशत खरी उतरती थीं। पूज्य पिताजी ने ज्योतिष शास्त्र के प्रसार के लिए जापान आदि देशों की यात्राएं भी की थीं। देश-विदेश के कई गणमान्य व्यक्तियों की जन्म पत्रियां पूज्य पिताजी ने बनायी थीं, जो उन लोगों के जीवन पथ की निर्देशिकाएं सिद्ध हुईं। उनके प्रशंसा पत्र आज भी पिताजी के ग्रन्थागार में सुरक्षित हैं। पूज्य पिता जी पंचाङ्ग के भी रचयिता थे, जिसके आधार पर वे कालचक्र की सही गणना करते थे। इस प्रकार ज्योतिष शास्त्र की मर्यादा-वृद्धि में उन्होंने महत्त्व पूर्ण योगदान दिया था। उनका सम्पूर्ण जीवन ज्योतिष को समर्पित था। प्रस्तुत ग्रन्थ उनके गम्भीर अध्ययन और असंख्य अनुभवों का सुपरिणाम है। यह ग्रन्थ उनके जीवन काल में (पहली बार सन् १९३१ में) नवलकिशोर प्रेस लखनऊ में प्रकाशित हुआ था एवं देश-विदेश में सम्मान एवं चर्चा का विषय बना था। इसके प्रमाण मेरे पास सुरक्षित

हैं। खेद है कि काल-गणना करने वाले को, काल ने अल्पायु में ही अपना ग्रास बना लिया। अन्यथा ऐसे कई ग्रन्थ उनकी लेखनी ने लिखे होते।

शायद ही ऐसा कोई युग रहा हो जब ज्योतिष शास्त्र की समाज में कोई न कोई प्रतिष्ठा न रही हो। आज भी समाज में ज्योतिष चर्चा, आलोचना एवं आदर का विषय है। अल्पज्ञ, स्वार्थी और अनुभवहीन ज्योतिषियों के सुप्रचारित वर्ग ने इस शास्त्र को अपमान और आलोचना का कारण बनाया है, किन्तु आज भी समाज का प्रबुद्ध वर्ग ज्योतिष का आदर करता है और सही रत्न को पहचानने वाले जौहरी भी विद्यमान हैं।

वृक्ष पर लगे फल पर सबकी दृष्टि जाती है, किन्तु धरती के गर्भ में छिपे रत्न को निकालना और समाज के सामने ले आना श्रम साध्य तो है ही, सराहनीय भी है। पूज्य पिता जी की इस अमर किन्तु विस्मृत ज्योतिष कृति के प्रकाशन का श्रेय श्री मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन संस्थान की गुणग्राहकता को है जिन्होंने ज्योतिष प्रेमियों को एक समर्थ, सिद्ध एवं अनुभव पूर्ण ग्रन्थ दिया है, स्वर्गीय लेखक की आत्मा को शान्ति प्रदान की है एवं मुझे अपना ऋणी बनाया है। क्योंकि आज पूज्य पिता जी की मृत्यु के ३३ वर्ष बाद उनका यह ग्रन्थ पुनः समाज को समर्पित कर, मैं उनका सही श्राद्ध कर रहा हूं। ज्योतिष का यह अमर ग्रन्थ "ज्योतिष तत्त्व प्रकाश" आधुनिक युग के जिज्ञासुओं को, अध्येताओं को एवं अनुभवी ज्योतिषियों के हाथों में सौंपकर मैं अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करता हूं।

ज्योतिष प्रेमी समाज से विनम्र आग्रह है कि इस ग्रंथ के सम्बन्ध में अपनी सम्मतियों से वे मुझे परिचित करायें।

पूज्य पिता जी के पुनीत स्मरण के साथ

रामनवमी संवत् २०३२
अम्बा भवन, मालरोड,
अल्मोड़ा (उ० प्र०)

जी० पी० कान्डपाल
व्याख्याता
शासकीय स्नातक
महाविद्यालय, सीधी
(म० प्र०)



दैवज्ञचक्रचूडामणि, विद्यावारिधि,
पं० लक्ष्मीकान्त कन्याल ज्योतिषाचार्य

ॐनमः शिवाय ।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाशस्य

अध्यायक्रमतः

विषयानुक्रमणिका ।

तीसरा अध्याय

पाँचवाँ अध्याय

छठा अध्याय

साधारणमुहूर्ताः

वास्तुप्रकरणम्

नवाँ अध्याय

दसवाँ अध्याय

प्रश्नप्रकरणम्

निवेदन

प्रिय सज्जनो !

आप सबको प्राचीन पुराण इतिहास आदि के पढ़ने से विदित ही होगा कि इस भारतभूमि में ज्योतिषशास्त्र का कितना प्रचार था, और इसके द्वारा विद्वान् लोगों ने राजा आदि से कितनी प्रतिष्ठा पाई थी परन्तु आजकल आलस्यवश या परस्पर विद्वेष-वश उस ज्योतिषशास्त्र की कितनी अवनति हो गई है कि बगल में पंचांग को दाबकर शीघ्रबोध के एक-दो श्लोक याद कर एक-एक पैसा माँगते हुए अपने को ज्योतिषी बतला कर गली-गली में गाली और धक्का का अनुभव कर रहे हैं। इसी भूमि से ज्योतिषशास्त्ररूप अमूल्य रत्न को अनेक छल-प्रपंच से लेकर विदेशियों ने कितनी प्रतिष्ठा तथा द्रव्य संचय किया है और कर रहे हैं, यह सब आप सबको इतिहास आदि से मालूम ही है। अस्तु, "गतमर्थं न शोचयेत्। बीते हुए का शोक न करना चाहिए। किन्तु अब भी जितना ही ज्योतिष का हिस्सा बचा है उसी से यदि लाभ, प्रतिष्ठा, सुख उठाना चाहें. तो अनायास में हो सकता है।

आजकल कितने ही कुबुद्धि भाई लोग "पंडितजी ! ज्योतिष से दुनिया का क्या मतलब निकलता है।" ऐसा प्रश्न कर बैठते हैं। परन्तु उनके सामने मूक ही बनना पड़ता है क्योंकि उनके हृदय में तो उर्दू या अँगरेज़ी का सीधा-सीधा शब्द भरा हुआ है, उसके भीतर संस्कृत का कठोर आशयवाला शब्द कैसे प्रवेश पा सकता है। संस्कृत के महर्षिलोगों ने वेद के छः अंग बतलाए हैं— १ शिक्षा, २ कल्प, ३ निरुक्त, ४ व्याकरण, ५ छन्द, ६ ज्योतिष।

इन अंगों में प्रधान नेत्ररूप अंग ज्योतिष को माना है। जैसे प्राणिमात्र के सब काम नेत्र के विना नहीं बनते हैं वैसे ही वेदसम्बन्धी यज्ञादि क्रिया ज्योतिष के विना नहीं हो सकती है । कालसम्बन्धी शुभाशुभ ज्ञान के विना कोई कर्म शुभ फल को नहीं देता है। इस समय में भी कैसा ही मूर्ख या नास्तिक क्यों न हो परन्तु अच्छे काल की अपेक्षा सब करते ही हैं। अच्छे काल का निर्णय ज्योतिष के विना हो ही नहीं सकता है ।

सैकड़ों मनुष्य जन्मपत्री लेकर हमारे पास आते हैं और कहते हैं कि मैंने २) रु० देकर जन्मपत्री बनवाई उसका एक भी फल मुझे नहीं मिलता है, ज्योतिषी बड़े धूर्त होते हैं, ज्योतिष झूठा शास्त्र है, इत्यादि कटु भाषणों से कर्णेन्द्रियों को दूषित करते रहते हैं परन्तु उनसे क्या कहा जाय। एक-एक बात में अनेक ग्राम, या अनेक लक्ष रुपए देने लेनेवाले अब भी कितने मौजूद हैं। सामान्य भी जन्मपत्री दो रोज़ से न्यून काल में नहीं बन सकती है। आजकल मज़दूर भी १) रु० या १।) रु० रोज़ लेता है, तो मज़दूर से भी ज्योतिषी को नीच समझना कितने शोक की बात है। २५) या ५०) रु० के लिये मुकदमा दायर करते हैं, सैकड़ों रुपया वकील आदि के पीछे ख़र्च करते हैं, तो भी हार जाते हैं। जन्मपत्री का फल मिलना या न मिलना तो इष्टदंड के अधीन है । इष्टदंड में एक मिनट का फ़र्क़ होने से फलाफल में बहुधा फ़र्क़ हो जाता है। रात में लड़के का जन्म हुआ सवेरे ज्योतिषीजी को बुलाया गया और उनसे कहा गया कि रात में जब मैं एक नींद सोकर उठा, तब थोड़ी देर के बाद लड़के का जन्म हुआ। थोड़ी देर के बाद बाहर आया, तो चन्द्रमा को इस पेड़ पर देखा, आप इसकी जन्मपत्री ठीक बनाकर लाइए, मैं १) रु० दूँगा । ऐसा सुनकर ज्योतिषी ने जो कुछ मन में आया बनाकर दे दिया । कहिए, इससे कैसे फला-

फल मिल सकता है। बहुत से ज्योतिषी अपने दोष को हटाने के लिये जन्मपत्री के आख़िर में लिख देते हैं—

"न मया धारितः शंकुर्घटी चैकापि नोद्धृता।
परोपदिष्टवेलायां लिखिता जन्मपत्रिका॥"

अर्थात् मैंने शंकु या घड़ी नहीं रक्खी थी किन्तु इस लड़के के पिता आदि द्वारा बतलाए हुए काल के अनुसार जन्मपत्री लिख दी है। कहिए, इसमें ज्योतिष या ज्योतिषी का क्या दोष है। इसी प्रकार विवाह आदि में अशुभ होने से ज्योतिषी पर आक्षेप करना भी सर्वथा अनुचित है। क्योंकि विवाह आदि का विचार बहुत कठिन और चिरकालसाध्य है। आचार्यों ने लिखा है—

लक्षं व्याकरणं प्रोक्तं चतुर्लक्षं तु ज्योतिषम्।
सिद्धान्तसंहिताहोरारूपस्कन्धत्रयात्मकम्॥
ज्योतिःशास्त्रं विनैतन्न श्रौतं स्मार्तं च सिद्धयति॥

अर्थात् व्याकरण की संख्या अनुष्टुप्छन्द से एक लक्ष है और ज्योतिष की संख्या चार लक्ष है।

ज्योतिष शास्त्र के तीन स्कन्ध अर्थात् शाखाएँ हैं।

१ सिद्धान्त—जिसमें भूगोल, खगोल, गणित, ग्रहों की गति, विगति आदि वर्णित है। २ संहिता—भृगुसंहिता, वाराहीसंहिता आदि। ३ होरा—अर्थात् जन्मपत्री आदि का फलाफल वर्णित है। ज्योतिष के विना यज्ञ आदि वैदिक कर्म, विवाह आदि स्मार्त कर्म सिद्ध नहीं हो सकते हैं। उपर्युक्त चतुर्लक्षात्मक ज्योतिष का जानना या उसका विचार करना, और विचार करके फलाफल बतलाना क्या सहज बात है। व्याकरण-महाभाष्य में लिखा है—

चतुर्भिश्च प्रकारैर्विद्योपयुक्ता भवति—आगमकालेन, स्वाध्यायकालेन, प्रवचनकालेन, व्यवहारकालेनेति।

अर्थात् विद्या चार प्रकार से फलीभूत होती है। १—पढ़ने से।

२—स्वयं विचार करने से । ३—पढ़ाने से । ४—लौकिक व्यवहार से । इस समय के मनुष्य अल्पायु तथा कर्म क्षीण होने के कारण उपर्युक्त चारों प्रकार से विद्या को फलीभूत नहीं कर सकते हैं । यद्यपि पूर्वाचार्यों ने संक्षेप रीति से ज्योतिष का विषय विचार कर अनेक ग्रन्थ बनाये हैं तथापि आधुनिक अति आलसी कोमल बुद्धिवालों के उपकारार्थ कोई एक ग्रंथ नहीं मिलता है इसलिये दिनों दिन ज्योतिष की मर्यादा क्षीण होती जाती है । यत्र-तत्र कालेज वा पाठशाला में ज्योतिष की पढ़ाई भी होती है, तो केवल गणितमात्र की । इससे लौकिक व्यवहार कुछ भी सिद्ध नहीं होता है । कितने आचार्य वा तीर्थ आदि परीक्षा में पास, पूर्ण विद्वत्ता को लाभ किये हुए ज्योतिषियों से सामान्य मुहूर्त, जन्मपत्री, वर्षप्रवेश भी नहीं बनता है । कारण यह है कि बाल्यावस्था से अभ्यस्त विद्या ही साक्षात् फल देनेवाली होती है । इसलिये बाल्यावस्था में कम से कम लघुकौमुदीमात्र पढ़कर सन्धि, धातु, प्रत्यय, प्रातिपदिक, सुप्तिङ्विभक्ति, कृत्तद्धितसमास आदि का बोध लाभ कर व्यवहारोपयोगी हिसाब जानकर व्यवहारोपयोगी फलित ग्रन्थों का अभ्यास कर गणितमहार्णव में प्रवेश करने से ज्योतिष को प्रतिष्ठा, लोकमान्यता तथा ऐहिक सुखभागी होकर जन्म साफल्य कर सकता है अन्यथा नहीं । बहुत लोग यह भी कहते हैं कि ज्योतिष की गुप्त किल्ली किसी को कोई नहीं बतलाता है इसलिये फलित पढ़ने में प्रवृत्ति नहीं होती है परन्तु यह कहना सर्वथा भूल है । क्योंकि यदि विद्यार्थी निष्कपट होकर तन मन धन से गुरुदेव की शुश्रूषा करेगा, तो महत्त्वपूर्ण सब बातें विद्यार्थी को गुरुदेव से अलभ्य नहीं रहेंगी । यह बहुधा अनुभूत हो चुका है । अतएव लिखा है—

गुरुशुश्रूषया विद्या पुष्कलेन धनेन वा ।

अथवा विद्यया विद्या चतुर्थी नोपपद्यते ॥

जो छात्र सद्गुरु के पास बहुत दिन रहकर सुयोग्य या सुकीर्तिशाली नहीं होता है उसको कपटी या गुरुद्वेषी अवश्य समझना चाहिए।

अनेक पाखंडी प्रश्न कर बैठते हैं—

अवश्यं भाविनो भावा भवन्ति महतामपि।
नग्नत्वं नीलकण्ठस्य महाहिशयनं हरेः॥
यद्भावि न तद्भावि भावि चेन्न तदन्यथा॥

इत्यादि शास्त्रकारों के सिद्धान्त से जब भावी शुभाशुभ अवश्य ही होता है तब जन्मपत्री का क्या काम, और अशुभ ग्रहों के शान्त्यर्थ जप दानादिक करना भी व्यर्थ है। उनका उत्तर यह है कि जैसे कोई रोग उत्पन्न होनेवाला है, जिसको वैद्यक पूर्वरूप बतलाता है उसके शान्त्यर्थ औषधि सेवन, लंघन आदि अनेक उपाय से वह रोग शान्त हो जाता है। डाकू डाका डालने के लिये आता है, या आनेवाला है ऐसा सुनकर जो उसका उपाय करता है वह बच जाता है जो नहीं करता है वह नहीं बचता है। ऐसे ही ज्योतिषशास्त्र द्वारा ग्रहों से आनेवाले अरिष्ट को जानकर उसके शान्त्यर्थ जपादिक करता है उसको अनिष्ट कभी नहीं हो सकता है। यदि अरिष्ट के अनुसार शान्ति के लिये जपदानादि न होवें, तो अवश्य अशुभ होता है। इसलिये जन्मपत्री से ग्रहों की स्थिति दिखला कर अशुभ निवारणार्थ जपादि करना हिन्दूमात्र का धर्म है। मुसलमान, क्रिश्चियन आदि विधर्मी भी ग्रहों से शुभाशुभ जानने के लिये जन्मपत्री बनवाते हैं।

बहुत से लोग पूछ बैठते हैं कि ग्रह तो देवता है, देवता तो सबके लिये अच्छा ही करता है, तब उसकी शान्ति करना फ़िज़ूल है। क्या माता-पिता कभी पुत्र को दुःख दे सकते हैं। उसका

उत्तर यह है कि गीता आदि आर्ष ग्रन्थों का यह सिद्धान्त है कि सृष्टि के आदि में ईश्वर देवताओं की सृष्टि करके जीवों को कर्मानुसार फल देने का अधिकार देवताओं को देकर मानवी सृष्टि करते हैं इसलिये मनुष्य अपने सदाचारपरायण रहने से सुखभागी रहता है यदि ईश्वर ऐसा न करते, तो अज्ञानता से कुकर्म में फँसकर जीवों की कभी दुःख से निवृत्ति न होती। इस अटल सिद्धान्त को शिरोधार्य करके मनुष्यमात्र को ग्रहों की सेवा अवश्य करनी चाहिए।

ज्योतिष के विषय में इस प्रकार के अनेक प्रश्न कुठाराघात होते रहते हैं उन सबका उत्तर देने लगें, तो एक पुस्तक ही बन जाय। परन्तु सदाचारियों को तथा प्राचीन शास्त्र-प्रणाली माननेवालों को उस प्रश्नोत्तर से क्या लाभ हो सकता है। इसलिये इस आक्षेप पर अपना अमूल्य काल व्यय करना अनुचित समझता हूँ।

जैसे गृहस्थ गृहस्थाश्रम में पाचन चूर्ण, ज्वरान्तक, कफान्तक, मृतसंजीविनी आदि ओषधियाँ वैद्यों से लेकर रखना आवश्यक समझता है वैसे ही ज्योतिष के बिना हिन्दूमात्र का कोई काम नहीं हो सकता है। सब सन्देहों को दूर करनेवाला ज्योतिषी भी सर्वत्र सर्वदा नहीं मिलते हैं इसलिये कम से कम पंचांग देखना, चन्द्रशुद्धि, दिशाशूल, गर्भाधानादि संस्कार मुहूर्त को निकालना आदि सामान्य बातें गृहस्थमात्र को जानना आवश्यक है, और फलित ज्योतिष को पढ़नेवाले विद्यार्थियों को भी उपर्युक्त बातें सहज में सीखना आवश्यक है। बृहज्जातक, नीलकण्ठी, मुहूर्तचिन्तामणि आदि अनेक ग्रन्थ पढ़ने से भी सब उपयोगी विषयों का ज्ञान ठीक नहीं होता है। क्योंकि उपर्युक्त ग्रन्थों में कठिनता के कारण बालक को ज्ञान होना दुर्घट है। शीघ्रबोध तथा ज्योतिःसारसंग्रह से भी सबका ज्ञान नहीं होता है। या

अनेक ग्रन्थों से सबका संग्रह करने का सामर्थ्य बालक को कथमपि नहीं हो सकता है। इसलिये सर्वसाधारण, विना गुरु के उपदेश से सब गृहस्थाश्रमोपयोगी विषयों को जानने के लिये प्राचीन तथा नवीन ग्रन्थों से संग्रह करके अपनी बुद्धि के अनुसार भाषाटीका सहित सन्निवेश करके ज्योतिस्तत्त्वप्रकाश नाम का यह ग्रन्थ लिखकर तैयार किया है। इस ग्रन्थ को लिखकर मैंने लखनऊ के सुप्रसिद्ध नवलकिशोर प्रेस के अध्यक्ष श्रीमान् बाबू विष्णुनारायणजी की सेवा में उपस्थित किया, उदारमना बाबू साहब ने इसे अपने यन्त्रालय द्वारा प्रकाशित करने की जो उदारता की है, तदर्थ मैं उन्हें अनेकशः धन्यवाद दिए विना नहीं रह सकता हूँ। उन्होंने मुद्रित होने के पूर्व इस ग्रन्थ का संशोधन भी करा दिया है जिससे प्रमाद से छूटी हुई लेखसंबंधी त्रुटियाँ भी दूर हो गई हैं। आशा है हमारे देश के सर्वसाधारण विद्याप्रेमी तथा ज्योतिषी महानुभावगण मेरे परिश्रम को सफल करके मुझे अनुगृहीत करेंगे।

इत्यलं पल्लवितेन।

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति ॥

सद्वशंवद

लक्ष्मीकान्त कन्याल ज्योतिषाचार्य
मौज़ा-खान, रानीखेत, अल्मोड़ा
वर्तमान पता—
विष्णुविद्यालय, बरेली.

ॐ नमः शिवाय ।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

पहला अध्याय

मंगलाचरणम्

विश्ववन्द्यवन्दितं समस्ततापशामकं
सदाशिवं हृदब्जके सुचिन्त्य सर्वचिन्तितम् ।
विचक्षणावली मुदे गुरोः सुपादसेवना-
न्मया विवेचितं त्विदं समस्तसंस्कृतिप्रथम् ॥ १ ॥
सर्वदेशहितार्थाय सर्वतो मतमाहृतम् ।
सर्वदेशव्यवहृतेरनुकूलं विवेचितम् ॥ २ ॥
अल्मोड़ापत्तनस्थेन खानग्रामनिवासिना ।
विश्वभास्करनिर्मात्रा लक्ष्मीकान्तेन सूरिणा ॥ ३ ॥

ज्योतिःशास्त्रप्रवर्त्तकाः

ब्रह्माऽऽचार्यो वसिष्ठोऽत्रिर्मनुः पौलस्त्यरोमशौ ।
मरीचिराङ्गिरा व्यासो नारदः शौनको भृगुः ॥ १ ॥
च्यवनो यवनो गर्गः कश्यपश्च पराशरः ।
अष्टादशैते गम्भीरा ज्योतिःशास्त्रप्रवर्त्तकाः ॥ २ ॥

एषां मतमुपादाय संक्षेपेण निगद्यते।
ग्रन्थबाहुल्यभयतो न विविक्तं यथास्फुटम् ॥ ३ ॥

ब्रह्मा (ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त के रचयिता ब्रह्मगुप्त), आचार्य (सूर्यसिद्धान्त के रचयिता भास्कराचार्य), वसिष्ठ, अत्रि, मनु, पौलस्त्य, रोमश (लोमश), मरीचि, अङ्गिरा, व्यास, नारद, शौनक, भृगु, च्यवन, यवन, गर्ग, कश्यप तथा पराशर ये अठारह आचार्य ज्योतिःशास्त्र के प्रवर्त्तक (चलानेवाले) हुए हैं। उनका मत लेकर विस्तार के भय से संक्षेप करके इस ग्रंथ में लिखा जाता है ॥ १-३ ॥

ज्योतिःशास्त्रप्रशंसा

अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तेषु केवलम्।
प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ ॥ ४ ॥

सब शास्त्रों में केवल विवाद ही होता है प्रत्यक्ष कुछ नहीं दिखलाई पड़ता है, परन्तु ज्योतिषशास्त्र प्रत्यक्ष है क्योंकि इसमें सूर्य और चन्द्रमा साक्षी हैं ॥ ४ ॥

स्कन्धत्रयात्मकं ज्योतिःशास्त्रम्

सिद्धान्तसंहिताहोरारूपं स्कन्धत्रयात्मकम्।
ज्योतिःशास्त्रं विनैतन्न श्रौतं स्मार्त्तं च सिध्यति ॥ ५ ॥

ज्योतिषशास्त्र की तीन शाखाएँ हैं—

१—सिद्धान्त अर्थात् भूगोल, खगोलवर्णन, गणित, ग्रहों की गति आदि, २—संहिता (भृगुसंहिता, वाराहीसंहिता, वसिष्ठसंहिता आदि), ३—होरा या जातक अर्थात् जन्मपत्री आदि का फल बिना ज्योतिषशास्त्र के यज्ञ आदि वैदिक कर्म, विवाह आदि स्मार्त कर्म सिद्ध नहीं होते हैं ॥ ५ ॥

दैवज्ञप्रशंसा

त्रिस्कन्धज्ञो दर्शनीयः श्रौतस्मार्तक्रियापरः।

निर्दाम्भिकः सत्यवादी दैवज्ञो दैववित्स्थिरः ॥ ६ ॥

जो ज्योतिषी पूर्वोक्त तीनों स्कन्धों का जाननेवाला हो, श्रौत, स्मार्त कर्मों में तत्पर हो, पाखंड न करता हो, सत्यवादी हो, स्थिर स्वभाव हो वह दैव को जान सकता है तथा वह दर्शन के योग्य है ॥ ६ ॥

जगति प्रसारितमिवालिखितमिव मतौ निषिक्तमिव हृदये ।
शास्त्रं यस्य सभगणं नादेशा निष्फलास्तस्य ॥ ७ ॥

जिस ज्योतिर्वित् की दृष्टि समस्त संसार में फैल रही हो, जिसकी बुद्धि में तारागणसहित ज्योतिषशास्त्र के प्रत्येक विषय चित्रवत् अंकित हों, जिसके हृदय में ज्योतिषशास्त्र रूप अगाध समुद्र लहरें ले रहा हो, ऐसे ज्योतिषी द्वारा कहे गए फलादेश कभी निष्फल नहीं होते हैं ॥ ७ ॥

दैवज्ञदोषाः

तिथ्युत्पत्तिं न जानन्ति ग्रहाणां नैव साधनम् ।
परवाक्येन वर्त्तन्ते ते वै नक्षत्रसूचकाः ॥ ८ ॥

जो लोग तिथि की उत्पत्ति को नहीं जानते, ग्रहों का साधन नहीं जानते और दूसरे के कहने पर चलते हैं उनको नक्षत्रसूचक कहते हैं ॥ ८ ॥

अविदित्वैव यः शास्त्रं दैवसत्वं प्रपद्यते ।
स पंक्तिदूषकः पापो ज्ञेयो नक्षत्रसूचकः ॥ ९ ॥

जो विना शास्त्र जाने ही ज्योतिषी बन बैठते हैं वह पंक्ति को दूषित करनेवाला पापी है और उसे नक्षत्रसूचक कहते हैं ॥ ९ ॥

नक्षत्रसूची खलु पापरूपो
हेयः सदा सर्वसुधर्मकृत्ये ।
ज्योतिषं गारुडं चैवं धर्मशास्त्रं तथैव च ।
विना शास्त्रेण यो ब्रूयात्तमाहुर्ब्रह्मघातिनम् ॥ १० ॥

नक्षत्रसूची को देखने से पाप होता है और वह सब धर्मकार्यों

में वर्जित है। जो ज्योतिषशास्त्र, गरुड़विद्या और धर्मशास्त्र को शास्त्रप्रमाण के विना कहे उसे ब्रह्मघातक कहते हैं ॥ १० ॥

जातकप्रशंसा

अर्थार्जने सहायं पुरुषाणामापदर्णवे पोतः ।
यात्रासमये मन्त्री जातकमपहाय नास्त्यपरः ॥११॥

संसार में जातक को छोड़कर मनुष्य का कोई सहायक नहीं है क्योंकि यह द्रव्योपार्जन करने में सहायक होता है, आपत्तिरूपी समुद्र में नाव का काम देता है और यात्रा के समय मंत्री के समान सदुपदेश देता है ॥ ११ ॥

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाशुभं तस्य कर्मणः पक्तिम् ।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत्तमसि द्रव्याणि दीप इव ॥ १२ ॥

जिस मनुष्य ने शुभ या अशुभ कर्म पूर्व जन्म में किया हो उसके फल की परिपाकावस्था को बतलानेवाला यह शास्त्र ऐसा है जैसे अन्धकार में पदार्थों को दिखलानेवाला दीपक होता है ॥ १२ ॥

दैवपौरुषयोर्विचारः

फलेद्यदि प्राक्तनमेव तत्किं
कृष्याद्युपायेषु परः प्रयत्नः ।
श्रुतिः स्मृतिश्चापि नृणां निषेध-
विध्यात्मके कर्मणि किं निपण्णा ॥ १३ ॥

यदि पूर्वजन्म के कर्मों का फल अवश्य ही मिलता है, तो संसार में लोग खेती आदि कार्यों में क्यों प्रयत्न करते हैं ? श्रुति और स्मृति में भी विधि और निषेध के कर्म क्यों बतलाए गए हैं ? इससे यह सिद्ध हुआ कि उद्योग के विना दैव भी फलदायक नहीं होता है तात्पर्य यह कि पुरुषार्थ ही मुख्य है ॥ १३ ॥

दैवे पुरुषकारे च कर्मसिद्धिर्व्यवस्थिता ।
तत्र दैवमभिव्यक्तं पौरुषं पौर्वदैहिकम् ॥ १४ ॥

कर्म की सिद्धि दैव तथा पुरुषार्थ के संयोग से होती है जिसको हम लोग दैव कहते हैं वह कोई वस्तु नहीं है किन्तु पूर्वजन्म का पुरुषार्थ है ॥ १४ ॥

यथा ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् ।
एवं पुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति ॥ १५ ॥

जिस प्रकार एक पहिए से रथ नहीं चलता है उसी प्रकार उद्योग के बिना दैव भी सिद्ध नहीं होता है ॥ १५ ॥

दैवमात्मकृतं विद्यात्कर्म यत्पूर्वदैहिकम् ।
स्मृतः पुरुषकारस्तु क्रियते यदिहापरम् ॥ १६ ॥
हन्यते दुर्बलं दैवं पौरुषेण विपश्चिता ।

पूर्वजन्म में अपने किए हुए कर्म को दैव तथा इस जन्म में जो कर्म किया जाता है उसे पुरुषार्थ कहते हैं ॥ १६ ॥

कालमानम्

गुर्वक्षराणामुदितं च षष्ट्या
पलं पलानां घटिका किलैका ।
षष्ट्या घटीनां भदिनं तथार्य-
स्तिथ्यैकया चन्द्रमसो दिनं स्यात् ॥ १७ ॥
तत्त्रिंशता भवेन्मासः सावनोऽर्कोदयैस्तथा ।
ऐन्दवस्तिथिभिस्तद्वत्संक्रान्त्या सौर उच्यते ॥ १८ ॥
मासेन स्यादहोरात्रः पैत्रो वर्षेण दैवतः ।
युगानां सप्ततिः सैका मन्वन्तरमिहोच्यते ॥ १९ ॥
इत्थं युगसहस्रेण भूतसंहारकारकः ।
कल्पो ब्राह्ममहः प्रोक्तं शर्वरी तस्य तावती ॥ २० ॥
छिनन्देन्द्वद्रिशैलाङ्गत्रिखाब्ध्यब्धिकुशेलकैः ।
शकाब्दद्य गणो योऽयः सूर्यसिद्धान्तसम्मतः ॥२१॥

६० गुरु अक्षरों के उच्चारण करने से एक पल होता है

६० पलों की एक घड़ी होती है। ६० घड़ियों का एक दिन चान्द्र-मास का होता है। ३० दिनों का एक महीना होता है। तिथियों से चान्द्रमास और संक्रान्ति से सौरमास होता है। सौर वर्ष में ३६५ दिन, १५ घड़ी, ३० पल होते हैं। चान्द्रवर्ष में ३५४ दिन, २० घड़ियाँ होती हैं। सौरवर्ष से चान्द्रवर्ष प्रायः ११ दिन कम होता है। इस कारण तीसरे वर्ष एक अधिमास होता है और १४१ वर्ष के उपरान्त एक क्षयमास होता है। जिस वर्ष में क्षयमास होता है उस वर्ष दो अधिमास होते हैं। शुक्लपक्ष पितरों का दिन और कृष्णपक्ष पितरों की रात्रि होती है। उत्तरायण देवताओं का दिन और दक्षिणायन रात होती है। हम लोगों का जो एक महीना होता है वह पितरों का एक अहोरात्र होता है। हम लोगों का जो १ वर्ष होता है वह देवताओं का एक अहोरात्र होता है। इस अहोरात्र से:—

सत्ययुग का मान १७,२८,००० वर्ष।
त्रेतायुग का मान १२,९६,००० वर्ष।
द्वापरयुग का मान ८,६४,००० वर्ष।
कलियुग का मान ४,३२,००० वर्ष।

चारों युगों का जोड़ ४३,२०,००० वर्ष।

इस प्रकार एक हजार युग होने से ब्रह्मा का एक दिन होता है और रात भी उतनी ही होती है। ब्रह्मा का दिन अथवा कल्प ४३, २०,००,००,००० वर्ष। ७० युगों का एक मन्वन्तर होता है। आजकल सातवाँ वैवस्वत नाम का मन्वन्तर है। अट्ठाईसवाँ कलियुग है, उसका प्रथम चरण है, ब्रह्मा का दूसरा पहर है। श्वेतवाराह कल्प है। सन् ईसवी से ३१०२ वर्ष पहिले कलियुग की उत्पत्ति हुई, उस दिन सूर्य, चन्द्रमा और सब ग्रह एक ही राशि

में थे, और सूर्यसिद्धान्त के मत से ७,१४,४०,३६,७२,१६२ अह-र्गण है ॥ १७-२१ ॥

कालविचारः

काल छः प्रकार का होता है—

१ वर्ष, २ अयन, ३ ऋतु, ४ मास, ५ पक्ष, ६ दिन।

वर्ष ५ प्रकार का होता है—

चान्द्र, सौर, सावन, नाक्षत्र, बार्हस्पत्य।

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर अमावास्या तक चैत्र आदि बारह महीनों से ३५४ दिन का चान्द्रवर्ष होता है और मलमास होने पर १३ महीनों का वर्ष होता है। प्रभव आदि ६० संवत्सर इसी चान्द्रसंवत्सर के भेद हैं। मेष आदि १२ राशियों में सूर्य के भोग होने से ३६५ दिन का सौर वर्ष होता है। ३६० दिन का सावन वर्ष होता है। ३२४ दिनों का नाक्षत्र वर्ष होता है। मेष आदि एक-एक राशि में बृहस्पति का भोग होने से बार्हस्पत्य वर्ष होता है, उसमें ३६१ दिन होते हैं। कर्म आदि में संकल्प करने के समय चान्द्र वर्ष का ही ग्रहण है।

दक्षिणायन तथा उत्तरायण के भेद से अयन दो प्रकार का होता है। कर्क की संक्रान्ति से लेकर जब सूर्य ६ राशियों का भोग करता है उसे दक्षिणायन तथा मकरसंक्रांति से लेकर ६ राशियों के भोग को उत्तरायण कहते हैं।

सौर और चान्द्र-भेद से ऋतु दो प्रकार की होती है सौर ऋतु का आरम्भ मीन या मेष से होता है। सूर्य के दो राशियों के भोग करने से वसन्त आदि नाम की ६ ऋतुएँ होती हैं। चैत्र से आरम्भ करके दो-दो महीनों के वसन्त आदि नाम की ६ चान्द्र ऋतुएँ होती हैं परन्तु मलमास पड़ जाने पर प्रायः ६० दिन की चान्द्र ऋतु होती है। श्रौत, स्मार्त आदि कर्मों में इसी चान्द्र ऋतु का ग्रहण करना चाहिए।

चान्द्र, सौर, सावन, नाक्षत्र भेद से मास ४ प्रकार का होता है। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से अमावास्या तक अथवा कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से पूर्णिमा तक चान्द्रमास होता है। उन दोनों में शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होनेवाला चान्द्रमास मुख्य पक्ष है। कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होनेवाला चान्द्रमास विन्ध्याचल के दक्षिण में ग्रहण किया जाता है। पूजा आदि कर्मों में इसी चान्द्रमास का ग्रहण करना चाहिए। किन्हीं आचार्यों का मत है कि मीनराशि से आरम्भ करके चैत्र आदि सौरमास का ग्रहण करना चाहिए। पहली सूर्यसंक्रान्ति से दूसरी सूर्यसंक्रान्ति तक सौरमास होता है। ३० दिन का सावन मास होता है। अश्विनी आदि २७ नक्षत्रों में जब चन्द्रमा भोग करता है उसको नाक्षत्रमास कहते हैं। प्रतिपदा से पौर्णमासी तक शुक्लपक्ष तथा प्रतिपदा से अमावास्या तक कृष्णपक्ष होता है। ६० घड़ियों का रातदिन होता है।

संवत्सरः

विक्रमादित्यशाकस्य पञ्चत्रिंशाधिके शते।
शोधितो जायते शाकश्चैत्रशुक्लादितः क्रमात् ॥२२॥
स एव पञ्चाग्निकुभिर्युक्तः स्याद्विक्रमस्य हि।
रेवाया उत्तरे तीरे संवन्नाम्नातिविश्रुतः ॥ २३ ॥

विक्रम संवत् में १३५ घटा देने से शाके बन जाता है और उसका चैत्र महीने की शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होता है अथवा शाके में १३५ जोड़ देने से विक्रम का संवत् बन जाता है यह रेवा नदी के उत्तर में प्रसिद्ध है ॥ २२-२३ ॥

संवत्सरनामानि

प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः।
अङ्गिराः श्रीमुखो भावो युवा धाता तथैव च ॥ २४ ॥
ईश्वरो बहुधान्यश्च प्रमाथी विक्रमो वृषः।

चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवोऽव्ययः ॥ २५ ॥
सर्वजित्सर्वधारी च विरोधी विकृतिः खरः ।
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथदुर्मुखौ ॥ २६ ॥
हेमलम्बी विलम्बी च विकारी शार्वरी प्लवः ।
शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसुपराभवौ ॥ २७ ॥
प्लवङ्गः कीलकः सौम्यः साधारणो विरोधकृत् ।
परिधावी प्रमादी च आनन्दो राक्षसो नलः ॥ २८ ॥
पिंगलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्रदुर्मती ।
दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षः क्रोधनः क्षयः ॥ २९ ॥

उपर्युक्त ६० संवत्सरों के नाम हैं ॥ २४–२९ ॥

अयने

मकराद्राशिषट्केऽर्के प्रोक्तं चैवोत्तरायणम् ।
षट्सु कर्कादितो ज्ञेयं दक्षिणं ह्ययनं रवेः ॥ ३० ॥
गृहप्रवेशस्त्रिदशप्रतिष्ठा-
विवाहचौलव्रतबन्धदीक्षाः ।
सौम्यायने कर्म शुभं विधेयं
यद्गर्हितं तत्खलु दक्षिणे च ॥ ३१ ॥

मकरसंक्रान्ति से ६ राशियों में जब सूर्य रहता है उसको उत्तरायण कहते हैं और कर्क से ६ राशियों में जब सूर्य रहता है उसको दक्षिणायन कहते हैं । गृहप्रवेश, देवताओं के मन्दिर की प्रतिष्ठा, विवाह, चूड़ाकर्म, व्रतबन्ध, दीक्षा आदि शुभ कर्म उत्तरायण में करना चाहिए । निन्दित कार्य दक्षिणायन में होते हैं ॥ ३०–३१ ॥

ऋतवः

चैत्रादिद्विद्विमासाभ्यां वसन्ताद्यृतवश्च षट् ।
मीनमेषगते सूर्ये वसन्तः परिकीर्तितः ॥ ३२ ॥
वृषभे मिथुने ग्रीष्मो वर्षा कर्कटसिंहयोः ।

कन्यायां च तुलायां च शरदृतुरुदाहृतः ॥ ३३ ॥
हेमन्तो वृश्चिकद्वन्द्वे शिशिरो मृगकुम्भयोः ।

चैत्र आदि दो-दो महीनों की एक ऋतु होती है। इस प्रकार वसन्त आदि ६ ऋतुएँ होती हैं। अथवा मीन मेष का जब सूर्य होता है तब वसन्त, वृष मिथुन के सूर्य होने से ग्रीष्म, कर्क सिंह के सूर्य होने से वर्षा, कन्या तुला के सूर्य होने से शरत्, वृश्चिक धन के सूर्य होने से हेमन्त, मकर कुम्भ के सूर्य होने से शिशिर ऋतु होती है ॥ ३२–३३ ॥

चान्द्रादिमासभेदाः

मासो दर्शावधिश्चान्द्रः सौरः संक्रमणाद्रवेः ।
त्रिंशद्दिनः सावनको नाक्षत्रो विधुसंभ्रमात् ॥ ३४ ॥
चान्द्रस्तु द्विविधो मासो दर्शान्तः पूर्णिमान्तिकः ।
विवाहादौ स्मृतः सौरो यज्ञादौ सावनः स्मृतः ॥ ३५ ॥
वार्षिके पितृकार्ये च मासश्चान्द्रोऽभिधीयते ॥ ३६ ॥

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से अमावास्या तक चान्द्रमास होता है। सूर्य की एक संक्रान्ति से दूसरी संक्रान्ति तक सौरमास होता है। ३० दिन का सावनमास होता है। चन्द्रमा के घूमने से नाक्षत्रमास होता है। चान्द्रमास दो प्रकार का होता है—एक अमावास्यान्त, दूसरा पूर्णिमान्त। विवाह आदि कर्मों में सौरमास लिया जाता है। यज्ञ आदि कर्मों में सावनमास लिया जाता है। वार्षिक कर्मों में तथा पितृकार्यों में चान्द्रमास लिया जाता है ॥ ३४–३६ ॥

अधिमासः

द्वात्रिंशद्भिर्गतैर्मासैर्दिनैः षोडशभिस्तथा ।
घटिकानां चतुष्केण पतत्यधिकमासकः ॥ ३७ ॥

३२ महीने, १६ दिन, ४ घड़ी बीतने पर अधिमास होता है।

सूर्यसिद्धान्त के अनुसार ३३.५३५१ चान्द्रमासों में ३२.५३४३ सौरमास होते हैं। इस कारण सौरमासों को चान्द्रमास बनाने के लिये ३२ सौरमासों के उपरान्त अथवा २ वर्ष, ८ महीने के उपरान्त अधिमास पड़ेगा ॥ ३७ ॥

क्षयमासः

असंक्रान्तिमासोऽधिमासः स्फुटं स्याद्
द्विसंक्रान्तिमासः क्षयाख्यः कदाचित् ।
क्षयः कार्त्तिकादित्रये नान्यतः स्या-
त्तदा वर्षमध्येऽधिमासद्वयं स्यात् ॥ ३८ ॥

जिस चान्द्र महीने में संक्रान्ति नहीं होती है उसको अधिमास कहते हैं। जिस चान्द्रमास में दो संक्रान्तियाँ होती हैं उसको क्षयमास कहते हैं। वह कभी-कभी होता है। क्षयमास केवल कार्त्तिक आदि ३ महीनों में हुआ करता है। जिस वर्ष क्षयमास होता है उस वर्ष एक वर्ष के भीतर दो अधिमास होते हैं ॥ ३८ ॥

मासानां चैत्रादिसंज्ञाकरणे हेतुः

पुष्ययुक्ता पौर्णमासी पौषी मासे तु यत्र सा ।
नाम्ना स पौषो माघाद्याश्चैवमेकादशापरे ॥ ३९ ॥

जिस महीने में पौर्णमासी के दिन पुष्य नक्षत्र होता है उस महीने का नाम पौष है। इसी प्रकार और महीनों के नाम भी हैं। जैसे पूर्णमासी के दिन मघा नक्षत्र होने के कारण उस महीने का नाम माघ, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र होने के कारण फाल्गुन, चित्रा नक्षत्र पूर्णमासी के दिन होने से उस महीने का नाम चैत्र होता है इत्यादि ॥ ३९ ॥

पक्षौ

पूर्वापरं मासदलं हि पक्षौ पूर्वापरौ तौ सितनीलसंज्ञौ
पूर्वश्च दैवश्च परश्च पित्र्यः ॥ ४० ॥

एक महीने में दो पक्ष होते हैं उनको शुक्ल और कृष्णपक्ष कहते हैं। शुक्लपक्ष देवताओं और कृष्णपक्ष पितरों का है ॥ ४० ॥

तिथिज्ञानोपायः

मासभाच्चान्द्रभं यावद्गणयेत्तावदेव तु।
यावन्ति गणनाङ्कानि तावन्त्यस्तिथयः क्रमात् ॥ ४१ ॥

मासनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र तक गिनती करके जो संख्या आवे उसे तिथि कहते हैं। सूर्य से चन्द्रमा के १२ अंश दूर होने का नाम एक तिथि है ॥ ४१ ॥

तिथीशाः

तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः।
शिवो दुर्गान्तको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ॥
अमायाः पितरः स्मृताः ॥ ४२ ॥

प्रतिपदा के स्वामी अग्नि, द्वितीया के ब्रह्मा, तृतीया की स्वामिनी गौरी, चतुर्थी के स्वामी गणेश, पञ्चमी के शेषनाग, षष्ठी के कार्त्तिकेय, सप्तमी के सूर्य, अष्टमी के शिव, नवमी के दुर्गा, दशमी के काल, एकादशी के विश्वेदेव, द्वादशी के विष्णु, त्रयोदशी के कामदेव, चतुर्दशी के शिव, पौर्णमासी के चन्द्रमा तथा अमावास्या के पितर हैं ॥ ४२ ॥

अवमतिथिः

तारीख गते वार २४ घंटे के होते हैं परन्तु तिथि सदा २४ घंटे की नहीं होती है। तिथियों में क्षय तथा वृद्धि होती है। कभी-कभी एक तिथि दो दिन हो जाती है। कभी एक तिथि का लोप हो जाता है उसे अवमतिथि कहते हैं। इसका कारण यह है कि तारीख आदि सौरमान से होते हैं उसमें २४ घंटे का दिन होता है परन्तु तिथि आदि चान्द्रमान से होते हैं। चान्द्रदिन २४ घंटे ५४ मिनट का होता है। सौरदिन और चान्द्रदिन में ५४ मिनट

अथवा प्राय: $2\frac{1}{2}$ घड़ी का अन्तर होता है। चान्द्रमास $29\frac{1}{2}$ दिन का होता है और चान्द्रवर्ष ३५४ दिन का होता है। इसी कारण तिथि, नक्षत्र तथा योग घट-बढ़ जाते हैं।

तिथीनां नन्दादिसंज्ञा:

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता
पूर्णेति तिथ्योऽशुभमध्यशस्ता:।
सितेऽसिते शस्तसमाधमा: स्यु:
सितज्ञभौमार्कगुरौ च सिद्धा: ॥ ४३ ॥

१।६।११ नन्दा शुक्रवार को सिद्धा, २।७।१२ भद्रा बुधवार को सिद्धा, ३।८।१३ जया मंगलवार को सिद्धा, ४।९।१४ रिक्ता रविवार को सिद्धा तथा ५।१०।१५ पूर्णा बृहस्पतिवार को सिद्धा। सिद्धा तिथि सब दोषों का नाश करती है। यह तिथि शुक्लपक्ष में क्रम से अशुभ, मध्यम तथा शुभ एवं कृष्णपक्ष में क्रम से शुभ, सम तथा अधम होती है ॥ ४३ ॥

अधमास्तिथय:

नन्दा भद्रा नन्दिकाख्या जया च
रिक्ता भद्रा पूर्णसंज्ञाऽधमार्कात् ॥ ४४ ॥

रविवार को नन्दा, चन्द्रवार को भद्रा, मंगलवार को नन्दा, बुधवार को जया, बृहस्पतिवार को रिक्ता, शुक्रवार को भद्रा, शनिवार को पूर्णा तिथि अधम होती है ॥ ४४ ॥

पक्षरन्ध्रास्तिथयस्तेषां फलानि च

चतुर्दशी चतुर्थी च अष्टमी नवमी तथा।
षष्ठी च द्वादशी चैव पक्षरन्ध्राह्वया इमा: ॥ ४५ ॥
विवाहे विधवा नारी व्रात्य: स्याच्चोपनायने।
सीमन्ते गर्भनाश: स्यात्प्राशने मरणं ध्रुवम्।
किमत्र बहुनोक्तेन कृतं कर्म विनश्यति ॥ ४६ ॥

चतुर्दशी, चतुर्थी, अष्टमी, नवमी, षष्ठी तथा द्वादशी इन तिथियों को पक्षरन्ध्र तिथियाँ कहते हैं। इनमें विवाह करने से स्त्री विधवा होती है, उपनयन करने से वटु संस्कारहीन होता है, सीमन्त करने से गर्भ का नाश होता है तथा अन्नप्राशन करने से मरण होता है। इसमें जो कुछ कार्य किया जाता है उसका नाश होता है ॥ ४५–४६ ॥

वर्ज्यघट्यः

एताषु वसुनन्देन्दुतत्त्वदिक्शरसम्मिताः ।
हेयाः स्युरादिमा नाड्यः क्रमाच्छेषास्तु शोभनाः ॥४७॥

चतुर्थी को ८, षष्ठी को ९, अष्टमी को १४, नवमी को २५, द्वादशी को १० तथा चतुर्दशी को आदि की ५ घड़ियाँ वर्जित हैं शेष शुभ हैं ॥ ४७ ॥

दग्धास्तिथयः

चापान्त्यगे गोघटगे पतंगे
कर्काजगे स्त्रीमिथुनस्थिते च ।
सिंहालिगे नक्रघटे समाः स्यु-
स्तिथ्यो द्वितीयाप्रमुखाश्च दग्धाः ॥ ४८ ॥

दग्धातिथिचक्रम्

संक्रांति	धन मीन	वृ. कुं.	कर्क मेष	कं. मि.	सिं.वृ.	म. तु.
दग्धातिथि	२	४	६	८	१०	१२

धन, मीन आदि राशियों में सूर्य के स्थित रहते हुए द्वितीया आदि सम तिथियाँ दग्धसंज्ञक होती हैं अर्थात् धन, मीन के सूर्यों में द्वितीया; वृष, कुम्भ के सूर्यों में चतुर्थी; कर्क, मेष के सूर्यों में

षष्ठी; कन्या, मिथुन के सूर्यों में अष्टमी; सिंह, वृश्चिक के सूर्यों में दशमी; मकर, तुला के सूर्यों में द्वादशी तिथि दग्धा होती है। इस दग्धा तिथि में विवाह आदि शुभ कार्य नहीं करना चाहिए ॥ ४८ ॥

दग्धविषहुताशनयोगाः

सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दा
वेदांगसप्ताश्विगजांकशैलाः ।
सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशा
दग्धा विषाख्याश्च हुताशनाश्च ॥ ४९ ॥

रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, मंगल को पञ्चमी, बुध को तृतीया, बृहस्पति को षष्ठी, शुक्र को अष्टमी, शनि को नवमी हो, तो दग्धयोग होता है।

रविवार को चतुर्थी, सोमवार को षष्ठी, मंगल को सप्तमी, बुध को द्वितीया, बृहस्पति को अष्टमी, शुक्र को नवमी, शनि को सप्तमी हो, तो विषयोग होता है।

रविवार को द्वादशी, सोमवार को षष्ठी, मंगल को सप्तमी, बुध को अष्टमी, बृहस्पति को नवमी, शुक्र को दशमी, शनि को एकादशी हो, तो हुताशनयोग होता है। ये योग शुभ कार्यों में वर्जित हैं ॥ ४९ ॥

मासशून्यास्तिथयः

भाद्रे चन्द्रदृशौ नभस्यनलनेत्रे माधवे द्वादशी
पौषे वेदशरा इषे दशशिवा मार्गेऽद्रिनागा मधौ ।
गोऽष्टौ चोभयपक्षगाश्च तिथयः शून्या बुधैः कीर्तिताः
ऊर्जाषाढतपस्यशुक्रतपसां कृष्णे शराङ्गाब्धयः ॥५०॥

भाद्रपद में प्रतिपदा और द्वितीया, श्रावण में तृतीया और द्वितीया.

वैशाख में द्वादशी, पौष में चतुर्थी और पञ्चमी, आश्विन में दशमी और एकादशी, मार्गशीर्ष में सप्तमी और अष्टमी, चैत्र में नवमी और अष्टमी ये तिथियाँ दोनों पक्ष की शून्य तिथि कहलाती हैं। कार्त्तिककृष्ण में पञ्चमी, आषाढ़कृष्ण में षष्ठी, फाल्गुनकृष्ण में चतुर्थी, ज्येष्ठकृष्ण में चतुर्दशी, माघकृष्ण में पञ्चमी, कार्त्तिकशुक्ल में चतुर्दशी, आषाढ़शुक्ल में सप्तमी, फाल्गुनशुक्ल में तृतीया, ज्येष्ठशुक्ल में त्रयोदशी, माघशुक्ल में षष्ठी ये शून्य तिथियाँ हैं ॥५०॥

मासशून्यतिथिचक्रम्

मास	भाद्र	श्रावण	वैशाख	पौष	कुवार	अगहन	चैत्र	कार्तिक	आषाढ	फाल्गुन	ज्येष्ठ	माघ
कृष्ण तिथि	१ २	२ ३	१२	४ ५	१० ११	७ ८	८ ९	५	६	४	१४	५
शुक्ल तिथि	१ २	२ ३	१२	४ ५	१० ११	७ ८	८ ९	१४	७	३	१३	६

तिथिनामानि

प्रतिपच्च द्वितीया च तृतीया तदनन्तरम्।
चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी सप्तमी चाष्टमी तथा ॥ ५१ ॥
नवमी दशमी चैवैकादशी द्वादशी तथा।
त्रयोदशी ततो ज्ञेया ततः प्रोक्ता चतुर्दशी ॥
पूर्णिमा शुक्लपक्षेऽन्त्या कृष्णपक्षे त्वमा स्मृता ॥ ५२ ॥

वारनामानि

आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधश्चाथ बृहस्पतिः।
शुक्रः शनैश्चरश्चैव वाराः सप्त प्रकीर्तिताः ॥ ५३ ॥

वारेशाः

शिवो दुर्गा गुहो विष्णुर्ब्रह्मेन्द्रः कालसंज्ञकः ।
सूर्यादीनां क्रमादेते स्वामिनः परिकीर्तिताः ॥ ५४ ॥

रविवार के स्वामी शिव, सोम की स्वामिनी दुर्गा, भौम के स्वामी कार्त्तिकेय, बुध के विष्णु, गुरु के ब्रह्मा, शुक्र के इन्द्र तथा शनि के काल स्वामी हैं ॥ ५४ ॥

वारेषु सौम्यक्रूराः

गुरुश्चन्द्रो बुधः शुक्रः शुभा वाराः शुभे स्मृताः ।
क्रूरास्तु क्रूरकृत्ये स्युः सदा भौमार्कसूर्यजाः ॥ ५५ ॥

बृहस्पति, चन्द्र, बुध तथा शुक्र ये शुभ वार शुभ कार्यों में और मंगल, रवि तथा शनि ये क्रूर वार क्रूर कार्यों में काम आते हैं ॥५५॥

वाराणां स्थिरादिसंज्ञाः

स्थिरः सूर्यश्चरश्चन्द्रो भौमश्चोग्रो बुधः समः ।
लघुर्जीवो मृदुः शुक्रः शनिस्तीक्ष्णः समीरितः ॥ ५६ ॥

रविवार स्थिर, चन्द्रवार चर, भौमवार उग्र, बुधवार सम, बृहस्पतिवार लघु, शुक्रवार मृदु तथा शनिवार तीक्ष्ण है ॥ ५६ ॥

कालहोरा

गता नाड्यो द्विगुणिताः पञ्चभिश्च विभाजिताः ।
शेषं त्याज्यं गुतश्चैकः सप्ततष्टे प्रशंसितम् ॥ ५७ ॥
कालहोरेति विख्याता सौम्ये सौम्यफलप्रदा ।
सूर्यः शुक्रो बुधश्चन्द्रो मन्दजीवकुजाः क्रमात् ॥
यो वारो यत्र दिवसे तदादि गणयेत्क्रमात् ॥ ५८ ॥

सूर्योदय से गत नाड़ियों को दूना कर ५ का भाग देवे, शेष को छोड़ दे । फिर ७ का भाग दो जो लब्धि आवे उसको कालहोरा कहते हैं । यदि सौम्यवार की होरा आवे, तो सौम्य फल देनेवाली होती है । सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्र, शनि, बृहस्पति,

मंगल इस क्रम से कालहोरा होती है । जिस दिन जो वार हो उस दिन उसी वार की पहली होरा होती है ॥ ५७-५८ ॥

गुरुर्विवाहे गमने च शुक्रो बोधे सौम्यः सर्वकार्येषु चन्द्रः ।
कुजश्च युद्धे धनसंग्रहे शनिर्नृपेक्षणे सूर्य इतीह होराः॥५९॥

विवाह के समय बृहस्पति का, यात्रा के समय शुक्र का, दीक्षा या विद्यारम्भ के समय बुध का, सब कार्यों में चन्द्रमा का, युद्ध में मंगल का, धनसंग्रह में शनि का, राजदर्शन में सूर्य का विचार करना चाहिए ॥ ५९ ॥

वारात्षष्ठस्य षष्ठस्य होरा सार्धद्विनाडिका ॥ ६० ॥

वार से छठे-छठे की होरा होती है और हर एक की होरा २½, २½ घड़ी रहती है ॥ ६० ॥

वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य
धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेऽस्य ।
कुर्याद्दिक्शूलादि चिन्त्यं क्षणेषु
नैवोल्लंघ्यः परिघश्चापि दण्डः ॥ ६१ ॥

जिस वार में जो कर्म करने को कहा गया है उस वार की होरा म वह कर्म करना चाहिए। और जिस नक्षत्र में जो कर्म करने को कहा गया है उसी के स्वामी के नवांश में वह कर्म करना चाहिए और दिशाशूल आदि का भी विचार उन क्षणों में करना चाहिए, परिघ दण्ड का भी उल्लंघन नहीं करना चाहिए ॥ ६१ ॥

रातदिन में २४ होरा होती हैं। होरा का अर्थ प्रभाव या सामर्थ्य है ।

वारवेला

कृतमुनियमशरमंगलरामतुंषु भास्करादियामार्धे ।
प्रभवति हि वारवेला न शुभाशुभकार्यकरणाय ॥ ६२ ॥

रविः कविः कुजो राहुर्गुरुश्चन्द्रः शनिर्बुधः।
एतेषां राहुवेलायां वारवेलाः प्रकीर्तिताः॥ ६३॥

दिन में चार पहर होते हैं, प्रायः ८ घड़ी का एक पहर होता है। एक पहर के आधे को यामार्ध कहते हैं। यह प्रायः ४ घड़ी का होता है। दिनमान के घटने-बढ़ने से इनमें भी अन्तर पड़ता है। दिन के आठ भाग करने से आठ यामार्ध होते हैं। रविवार का चतुर्थ, सोमवार का सप्तम, मंगल का दूसरा, बुध का पाँचवाँ, बृहस्पति का आठवाँ, शुक्र का तीसरा, शनि का छठा यामार्ध वारवेला होती है। इसमें कोई शुभ कार्य नहीं करना चाहिए। प्रत्येक वार में पूर्वोक्त वेला राहु की होती है अतः वर्जित है॥ ६२–६३॥

कालवेला

कालस्य वेला रवितः शराद्रिकालानलागाम्बुधयो गजेन्दू।
दिने निशायामृतुवेदनेत्रनगेषु रामा विधुदन्तिनौ च॥६४॥

पूर्वोक्त वारवेला के समान दिन के ८ यामार्ध होते हैं। रविवार का पञ्चम, सोमवार का द्वितीय, मंगल का षष्ठ, बुध का तृतीय, बृहस्पति का सप्तम, शुक्र का चतुर्थ, शनि का प्रथम तथा अष्टम यामार्ध कालवेला होती है। ये सब कालवेलाएँ दिन की हैं। रात्रि में रविवार का षष्ठ, सोम का चतुर्थ, मंगल का द्वितीय, बुध का सप्तम, बृहस्पति का पञ्चम, शुक्र का तृतीय, शनि का प्रथम तथा अष्टम यामार्ध कालरात्रि होती है॥ ६४॥

रवौ वर्ज्यं चतुः पञ्च सोमे सप्तद्वयं तथा।
कुजे षष्ठद्वयं चैव बुधे बाणतृतीयकम्॥ ६५॥
गुरौ सप्ताष्टकं चैव शुक्रे वेदतृतीयकम्।
शनावाद्यन्तषष्ठं च दिने यामार्धवर्जिताः॥ ६६॥

रविवार को ४।५, सोमवार को ७।२, मंगल को ६।२, बुध को

५।३, बृहस्पति को ७।८, शुक्र को ४।३,शनि को १।८।६ यामार्ध दिन में सब कार्यों में वर्जित हैं ॥ ६५–६६ ॥

रवौ रसाब्धी हिमगौ हयाब्धी
द्वयं महीजे विधुजे शराब्धी ।
गुरौ रसाष्टौ भृगुजे तृतीये
शनौ रसाद्यन्तमिति क्षपायाम् ॥ ६७ ॥

रविवार को ६।७,सोमवार को ७। ४, मंगल को २, बुध को ५।७, बृहस्पति को ६।८, शुक्र को ३, शनि को ६।१।८ यामार्ध रात्रि में वर्जित हैं ॥ ६७ ॥

कुलिकादयः

कुलिकः कालवेला च यमघण्टश्च कण्टकः ।
वाराद् द्विघ्ने क्रमान्मन्दे बुधे जीवे कुजेक्षणः ॥ ६८ ॥

वर्तमान वार से शनिपर्यन्त गिनकर दूना करने से जो अंक आवे उस दिन वही मुहूर्त कुलिक होता है । जैसे रविवार को कुलिकदोष का विचार करना हो, तो रविवार से शनैश्चर तक गिनने से सात हुए, दो से गुणने पर चौदह हुए । अब यही चौदहवाँ मुहूर्त कुलिक-संज्ञक हुआ । बुध तक गिनकर दूना करने से कालवेला होती है । बृहस्पति तक गिनकर दूना करने से यमघण्ट मुहूर्त्त होता है। मंगल तक गिनकर दूना करने से कण्टक मुहूर्त्त होता है । कुलिक मुहूर्त्त में जो शुभ कार्य करे, उस कर्म का सर्वथा नाश, यमघण्ट में दारिद्र्य, कालवेला मृत्युदायक और कण्टक विघ्न करनेवाला होता है परंतु ये रात्रि में दोषदायक नहीं हैं । यदि अत्यावश्यक कार्य आ पड़े, तो इन दोषों का उत्तरार्ध त्याग देना चाहिए। दिन के सोलहवें अंश को मुहूर्त्त कहते हैं ॥ ६८ ॥

नक्षत्रों के नाम

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु,

पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा, रेवती ये २७ नक्षत्र हैं।

किसी आचार्य का मत है कि उत्तराषाढा और श्रवण के बीच में अभिजित् नाम का नक्षत्र होता है इससे २८ नक्षत्र हैं। किसी के मत से अभिजित् एक मुहूर्त्त का नाम है जो कि ठीक मध्याह्न में होता है। इसलिये नक्षत्र २७ ही होते हैं।

नक्षत्राणामीशाः

नासत्यान्तकवह्निधातृशशभृद्रुद्रादितीज्योरगा
ऋक्षेशाः पितरो भगोऽर्यमरवी त्वष्टा समीरः क्रमात्।
शक्राग्नी खलु मित्रइन्द्रनिर्ऋतिः क्षीराणि विश्वेविधि-
र्गोविन्दो वसवोऽम्बुपाजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधाः॥६९॥

अश्विनी के अश्विनीकुमार, भरणी के यम, कृत्तिका के अग्नि, रोहिणी के ब्रह्मा, मृगशिर के चन्द्रमा, आर्द्रा के रुद्र, पुनर्वसु के अदिति, पुष्य के बृहस्पति, आश्लेषा के सर्प, मघा के पितर, पूर्वाफाल्गुनी के भग, उत्तराफाल्गुनी के अर्यमा, हस्त के सूर्य, चित्रा के विश्वकर्मा, स्वाती के वायु, विशाखा के इन्द्र तथा अग्नि, अनुराधा के मित्र, ज्येष्ठा के इन्द्र, मूल के राक्षस, पूर्वाषाढ़ के जल, उत्तराषाढ़ के विश्वेदेव, अभिजित् के ब्रह्मा, श्रवण के विष्णु, धनिष्ठा के वसु, शतभिषा के वरुण, पूर्वाभाद्रपद के अजैकपाद (सूर्य-विशेष) उत्तराभाद्रपद के अहिर्बुध्न्य तथा रेवती के पूषा (सूर्यविशेष) स्वामी हैं॥ ६९ ॥

नक्षत्राणां ध्रुवादिसंज्ञाः तेषु कार्याणि च

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम्।
तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादि सिद्धयति ॥ ७० ॥

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी नक्षत्र और रविवार इनका नाम ध्रुव और स्थिर है। इन नक्षत्रों में और इस वार में स्थिर कर्म सिद्ध होते हैं जैसे बीज बोना, मकान बनवाना, वाटिका लगाना, शान्ति कर्म आदि ॥ ७० ॥

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम्।
तस्मिन्गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ ७१ ॥

स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्र, चन्द्रवार की संज्ञा चर और चल है। इनमें हाथी आदि की सवारी, उद्यान आदि में जाना शुभ है ॥ ७१ ॥

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा।
तस्मिन्घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥७२॥

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद, भरणी तथा मघा नक्षत्र मंगलवार का नाम उग्र या क्रूर है। इनमें मारण, आग लगाना, विष देना, शस्त्र आदि कर्म सिद्ध होते हैं ॥ ७२ ॥

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम्।
तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥ ७३ ॥

विशाखा, कृत्तिका नक्षत्र, बुधवार ये मिश्र या साधारण संज्ञक हैं। इनमें अग्निकार्य, मिश्रकर्म, वृषोत्सर्ग आदि कर्म सिद्ध होते हैं ॥ ७३ ॥

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघुगुरुस्तथा।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम् ॥ ७४ ॥

हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित नक्षत्र, बृहस्पतिवार की संज्ञा क्षिप्र या लघु है। इनमें दूकान का काम, स्त्री-सम्भोग, शास्त्र आदि का ज्ञान, आभूषणों को बनवाना, शिल्पकर्म आदि पद से चरसंज्ञक नक्षत्रों के भी कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ७४ ॥

मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदु मैत्रं भृगुस्तथा।
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम् ॥ ७५ ॥

मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा नक्षत्र, शुक्रवार की संज्ञा मृदु और मैत्र है। इनमें गीत गाना, वस्त्र पहिनना, क्रीड़ा करना, मित्र का कार्य, आभूषण पहिनना इत्यादि कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ७५॥

मूलेन्द्राद्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम् ।
तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम् ॥ ७६ ॥

मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा नक्षत्र तथा शनिवार की संज्ञा तीक्ष्ण या दारुण है। इनमें अभिचार (पुरश्चरण आदि से मारना), घात (शस्त्र आदि से मारना), उग्रकर्म (निर्दय कार्य), पशुओं का दमन (हाथी, घोड़े आदि का सिखाना) आदि कर्म सिद्ध होते हैं ॥ ७६ ॥

नक्षत्राणामधोमुखादिसंज्ञा

मूला हि मिश्रोग्रमधोमुखं भवे-
दूर्द्धास्यमार्द्रेज्यहरित्रयं ध्रुवम् ।
तिर्यङ् मुखं मैत्रकरानिलादिति
ज्येष्ठाश्विभानीदृशकृत्यमेषु सत् ॥ ७७ ॥

मूल, आश्लेषा, मिश्र, उग्र नक्षत्रों की अधोमुख संज्ञा है। आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्रों की ऊर्ध्वमुख संज्ञा है। अनुराधा, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अश्विनी नक्षत्रों की तिर्यङ् मुख संज्ञा है। इन नक्षत्रों में इन्हीं संज्ञाओं के सदृश काम करना चाहिए जैसे कुँवा, बावली, तालाब खोदवाना आदि कार्य अधोमुख नक्षत्रों में आरम्भ करे ॥ ७७ ॥

नक्षत्राणामन्धादिसंज्ञाः

अन्धाक्षश्चिपटाक्षश्च काणाक्षो दिव्यलोचनः ।
गणयेद्रोहिणीपूर्वं सप्तवारमनुक्रमात् ॥ ७८ ॥

रोहिणी नक्षत्र से यथाक्रम नक्षत्रों की सात आवृत्ति करने

से अन्धलोचन, मन्दलोचन, काणलोचन, सुलोचन संज्ञाएँ होती हैं इनका विचार चोरी के प्रश्न में होता है ॥ ७८ ॥

स्पष्टचक्रम्

रो०	पुष्य	उ.फा.	वि०	पू. षा.	ध०	रे०	अन्धलोचन
मृ०	कृत्तिका	ह०	अनु०	उ. षा.	शत०	अश्वि.	मन्दलोचन
आ०	म०	चि०	ज्ये०	अभि०	पू.भा.	भ०	काणलोचन
पुन०	पू. फा.	स्वा०	मू०	श्र०	उ.भा.	कृ०	सुलोचन

द्विपुष्करत्रिपुष्करयोगौ

भद्रातिथी रविजभूतनयार्कवारे
द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्निवैश्वे ।
त्रैपुष्करो भवति मृत्युविनाशवृद्धौ
त्रैगुण्यदो द्विगुणकृद्वसुतत्त्वचान्द्रे ॥ ७९ ॥

शनि, मंगल, रविवार इन दिनों में यदि द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी ये तिथि हों, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वभाद्रपद, पुनर्वसु, कृत्तिका, उत्तराषाढ़ ये नक्षत्र हों; तो इन तीनों के आपस में मिलने से त्रिपुष्कर योग होता है। वह मृत्यु, विनाश और वृद्धि में तिगुना फल देता है। जैसे त्रिपुष्कर योग में यदि किसी के घर में कोई मरे, तो तीन प्राणी मरें, कोई वस्तु खो जाय, तो उसका फल यह है कि तीन वस्तु खो जायँ। भद्रा तिथि (द्वितीया,

सप्तमी, द्वादशी) शनि, भौम, रविवार, धनिष्ठा, चित्रा और मृगशिर नक्षत्र के योग से द्विपुष्कर योग होता है इसका फल दोगुना होता है ॥ ७९ ॥

पञ्चके वर्ज्याणि

वासवोत्तरदलादिपञ्चके
याम्यदिग्गमनं गृहगोपनम् ।
प्रेतदाहतृणकाष्ठसञ्चयं
शय्यकावितरणं च वर्जयेत् ॥ ८० ॥

धनिष्ठा नक्षत्र का उत्तरार्ध, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती इन नक्षत्रों को पञ्चक कहते हैं। इनमें प्रेतदाह, घास तथा लकड़ी का इकट्ठा करना, खाट का बिनवाना वर्जित है ॥ ८० ॥

पञ्चकादिफलम्

पञ्चके पञ्चगुणितं त्रिगुणं च त्रिपुष्करे ।
यमले द्विगुणं सर्वं हानिवृद्ध्याधिकं भवेत् ॥ ८१ ॥

पञ्चकों में हानि, लाभ तथा व्याधि पाँचगुना, त्रिपुष्कर में तिगुना, द्विपुष्कर में दोगुना होती है ॥ ८१ ॥

अभिजित्प्रशंसा

शङ्कुमूले यदा छाया मध्याह्ने च प्रजायते ।
तदा चाभिजिदाख्याता घटिकैका स्मृता बुधैः ॥
जातोऽभिजिति राजा स्याद्व्यापारे सिद्धिरुत्तमा ॥८२॥

जब मध्याह्न में शंकु के मूल में छाया आ जाती है, तब एक घड़ी का अभिजित् मुहूर्त होता है। इसमें उत्पन्न होने से राजयोग होता है, व्यापार करने से बहुत लाभ होता है ॥ ८२ ॥

दग्धनक्षत्राणि

याम्यं त्वाष्ट्रं वैश्वदेवं धनिष्ठा-
र्यम्णं ज्येष्ठान्त्यं रवेर्दग्धभं स्यात् ॥ ८३ ॥

रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगल को उत्तराषाढ़, बुध को धनिष्ठा, बृहस्पति को उत्तराफाल्गुनी, शुक्र को ज्येष्ठा तथा शनि को रेवती दग्धनक्षत्र होते हैं ॥ ८३ ॥

शून्यनक्षत्राणि

कदास्रभे त्वाष्ट्रवायू विश्वेज्यौ भगवासवौ ।
विश्वश्रुती पाशिपौष्णे अजपाद्यग्निपित्र्यभे ॥ ८४ ॥
चित्राद्वीशौ शिवाख्यर्काः श्रुतिमूले यमेन्द्रभे ।
चैत्रादिमासे शून्याख्यास्तारावित्तविनाशदाः ॥ ८५ ॥

चैत्र में रोहिणी, अश्विनी; वैशाख में चित्रा, स्वाती; ज्येष्ठ में उत्तराषाढ़ा, पुष्य; आषाढ़ में पूर्वाफाल्गुनी, धनिष्ठा; श्रावण में उत्तराषाढ़ा, श्रवण; भाद्रपद में शतभिषा, रेवती; आश्विन में पूर्वभाद्रपद; कार्त्तिक में कृत्तिका, मघा; मार्गशीर्ष में चित्रा, विशाखा; पौष में आर्द्रा, अश्विनी, हस्त; माघ में श्रवण, मूल; फाल्गुन में भरणी तथा ज्येष्ठा शून्य नक्षत्र हैं। इनमें कार्य करने से धन का नाश होता है ॥ ८४–८५ ॥

अन्तरङ्गबहिरङ्गनक्षत्राणि

सूर्यभादुडुगणं पुनः पुन-
र्गणयतामिति चतुष्टयं त्रयम् ।
अन्तरङ्गबहिरङ्गसंज्ञकं
तत्र कर्म विदधीत तादृशम् ॥ ८६ ॥

सूर्य के नक्षत्र से ४ और ३ इस प्रकार गिनने से अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग नक्षत्र होते हैं। उनमें वैसा ही कार्य भी करना चाहिए।

जैसे अन्तरंग नक्षत्रों में पशुओं को लाना, बहिरंग नक्षत्रों में बेचना ॥ ८६ ॥

नक्षत्रराशिविभागः

सप्तविंशतिभैर्ज्योतिश्चक्रं स्तिमितवायुगम् ।
तदर्कांशो भवेद्राशिर्नवर्क्षचरणाङ्कितः ॥ ८७ ॥
अश्विनी भरणीकृत्तिकापादो मेषः ।
कृत्तिकायास्त्रयः पादा रोहिणीमृगशिरोऽर्धं वृषः ।
मृगशिरोऽर्धमार्द्रापुनर्वसुपादत्रयं मिथुनम् ।
पुनर्वसुपाद एकः पुष्यश्लेषान्तं कर्कः ।
मघापूर्वाफाल्गुन्युत्तराफाल्गुनीपादः सिंहः ।
उत्तराफाल्गुन्यास्त्रयः पादा हस्तचित्रार्धं कन्या ।
चित्रार्धं स्वातिविशाखापादत्रयं तुला ।
विशाखापाद एकोऽनुराधाज्येष्ठान्तं वृश्चिकः ।
मूलपूर्वाषाढोत्तराषाढापादो धनुः ।
उत्तराषाढायास्त्रयः पादाः श्रवणधनिष्ठार्धं मकरः ।
धनिष्ठार्धं शतभिषापूर्वभाद्रपदापादत्रयं कुम्भः ।
पूर्वभाद्रपदापाद एकः उत्तरभाद्रपदारेवत्यन्तं मीनः ।

एक नक्षत्र के चार चरण होते हैं। २७ नक्षत्रों की मिलकर १२ राशियाँ होती हैं इसलिये ९ चरणों की एक राशि हुई।

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका के एक चरण तक मेष राशि होती है।

कृत्तिका के तीन चरण रोहिणी पूरा मृगशिर के दो चरण तक वृष राशि होती है।

मृगशिर के दो चरण आर्द्रा पूरा पुनर्वसु के तीन चरण तक मिथुन राशि होती है।

पुनर्वसु का एक चरण पुष्य आश्लेषा संपूर्ण कर्कराशि।

मघा पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी का एक चरण सिंह।

उत्तराफाल्गुनी के तीन चरण हस्त चित्रा के दो चरण कन्या।
चित्रा के दो चरण स्वाती विशाखा के तीन चरण तुला।
विशाखा का एक चरण अनुराधा ज्येष्ठा वृश्चिक।
मूल पूर्वाषाढ़ा उत्तराषाढ़ा का एक चरण धनु।
उत्तराषाढ़ा के तीन चरण श्रवण धनिष्ठा के दो चरण मकर।
धनिष्ठा के दो चरण शतभिषा पूर्वाभाद्रपदा के तीन चरण तक कुम्भ।
पूर्वाभाद्रपदा का एक चरण उत्तराभाद्रपदा और रेवती तक मीन राशि होती है ॥ ८७ ॥

नक्षत्रज्ञानाय अवकहडाचक्रम्

चु चे चो लाश्विनी प्रोक्ता ली लू ले लो भरण्यथ।
अ इ उ ए कृत्तिका स्यादोवा वी वू तु रोहिणी ॥ ८८ ॥
वे वो का की मृगशिराः कु घ ङ छ तथार्द्रका।
के को हा ही पुनर्वसुर्हू हे हो डा तु पुष्यभम् ॥ ८९ ॥
डी डू डे डो तु आश्लेषा मा मी मू मे मघा स्मृता।
मो टा टी टू पूर्वफल्गु टे टो पाप्युत्तरं तथा ॥ ९० ॥
पू षा णा ठा हस्त तारा पे पो रा री तु चित्रका।
रू रे रो ता स्मृता स्वाती ती तू ते तो विशाखका ॥ ९१ ॥
ना नी नू नेऽनुराधर्क्षं ज्येष्ठा नो या यि यू स्मृता।
ये यो भा भी मूल तारा पूर्वाषाढा भ धा फ ढा ॥ ९२ ॥
भे भो जाज्युत्तराषाढा जू जे जो खाभिजिद्भवेत्।
खी खू खे खो श्रवणभं गा गी गू गे धनिष्ठिका ॥ ९३ ॥
गो सा सी सू शतभिषक से सो दा दी तु पूर्वभा।
दु थ झा ञोत्तराभाद्रं दे दो चा ची तु रेवती ॥ ९४ ॥

अभिजित् मिलाकर २८ नक्षत्र होते हैं। एक-एक नक्षत्र के ४-४ चरण होते हैं। इसलिये २८ नक्षत्रों के ११२ चरण हुए। प्रत्येक नक्षत्र के चरण अक्षरों में बाँटे गये हैं। जैसे चू चे चो ला अश्विनी

इत्यादि। प्रत्येक मनुष्य को इतना कण्ठस्थ नहीं रह सकता है इसलिये राशि पहचानने के लिये इसका संक्षेप इस प्रकार से प्रचलित है—

अ ल मेष, उ ब वृष, क छ मिथुन, ह ड कर्क, म ट सिंह, प ठ कन्या, र त तुला, न य वृश्चिक, भ ध धन, ख ग मकर, ग स कुम्भ, द च मीन, इसको याद कर लेने पर स्थूल रीति से बहुत काम निकल जाता है।

नक्षत्रचारः

पुनर्वसुमृगश्चार्द्रा ज्येष्ठा मैत्रं करस्तथा।
पूर्वाषाढोत्तराषाढे मूलं दक्षिणचारिणः ॥ ६५॥
कृत्तिका रोहिणी पुष्यश्चित्राश्लेषा च रेवती।
शतं धनिष्ठा श्रवणो नव मध्यमचारिणः॥ ६६ ॥
अश्विनी भरणी स्वाती विशाखा फल्गुनीद्वयम्।
मघा भाद्रपदायुग्मं नव चोत्तरचारिणः॥ ६७ ॥

पुनर्वसु, मृगशिर, आर्द्रा, ज्येष्ठा, अनुराधा, हस्त, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, मूल इन नक्षत्रों के तारे आकाश में दक्षिण दिशा की ओर दिखलाई पड़ते हैं।

कृत्तिका, रोहिणी, पुष्य, चित्रा, आश्लेषा, रेवती, शतभिषा, धनिष्ठा, श्रवण ये नव नक्षत्र आकाश के मध्य में दिखलाई पड़ते हैं।

अश्विनी, भरणी, स्वाती, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, मघा, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद ये नव नक्षत्र उत्तर में दिखलाई पड़ते हैं ॥ ६५–६७ ॥

गण्डान्तः

चतुर्घटी मूलमघाश्विनाद्यै-
र्गण्डान्तमन्ते च फणीन्द्रपौष्णे ॥ ६८ ॥

मूल, मघा, अश्विनी नक्षत्रों की आदि की दो घड़ी तथा आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती के अन्त की दो घड़ी सब मिलाकर चार घड़ी का गण्डान्त होता है ॥ ६८ ॥

नक्षत्रविषघट्यः

अ. ५०	पुन. ३०	ह. २१	मू. ५६	पू.भा. १६	उक्त घड़ी
भ. २४	पु. २०	चि. २०	पू.षा. २४	उ.भा. २४	से ऊपर
कृ. ३०	आश्ले. ३२	स्वा. १४	उ.षा. २०	रे. ३०	४ घड़ी
रो. ४०	म. ३०	वि. १४	श्र. १०		नक्षत्र विष-
मृ. १४	पू. फा. २०	अनु. १०	ध. १०		घड़ी जानना
आ. २१	उ.फा. १८	ज्ये. १४	श. १८		

वारविषघट्यः		तिथिविषघट्यः		
सूर्य २०	उससे ऊपर ४ घड़ी	१ । १५	९ । ७	उससे ऊपर
चन्द्र २	वारविषघटी होती	२ । ५	१० । १०	४ घड़ी तिथि
मंगल १२	है। इसमें शुभ कार्य	३ । ८	११ । ३	विषघड़ी कह-
बुध १०	वर्जित हैं।	४ । ७	१२ । १३	लाती है इ-
बृह. ७		५ । ७	१३ । १४	समें सब कार्य
शुक्र ५		६ । ११	१४ । ७	वर्जित हैं।
शनि २५		७ । ४	१५ । ८	
		८ । ८		

यदि नक्षत्र ६० घड़ी पूरा न हो, तो त्रैराशिक लगाना चाहिए। यदि चन्द्रमा केन्द्र त्रिकोण में बली हो या लग्नेश शुभयुक्त केन्द्र में हो, तो विषघड़ी दोष नहीं होता है।

तारा

जन्मर्क्षाद्दिनभं यावद्गणयेन्नवभिर्भजेत्।
शेषास्ताराः प्रकीर्त्तिताः ॥ ६६ ॥

जन्मनक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गिनें और ६ का भाग देवे, जो शेष बचे उसी को तारा जानना ॥ ६६ ॥

जन्मसम्पद्विपत्क्षेम प्रत्यरिः साधको वधः।
मैत्रातिमैत्रास्ताराः स्युस्त्रिरावृत्त्या नवैव हि ॥ १०० ॥

तारात्र्यों के नाम यह हैं। जन्म, सम्पत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मैत्र तथा अतिमैत्र। २७ नक्षत्रों की ३ आवृत्ति करने से ये ६ ताराएँ होती हैं ॥ १०० ॥

जन्मतारा द्वितीया च षष्ठी चैव चतुर्थिका।
अष्टमी नवमी चैव षडेतास्तु शुभावहाः ॥ १०१ ॥
त्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम् ॥ १०२ ॥
यदि स्यात्सवलश्चन्द्रस्तथापि क्लेशदायिनी ॥ १०३ ॥
तृतीया पञ्चमी तारा सप्तमी च नृणां भवेत्।
कृष्णे बलवती तारा शुक्लपक्षे तु चन्द्रमाः ॥ १०४ ॥
सदा ग्राह्या बुधैरेवं कृष्णे तारा न चन्द्रमाः ॥ १०५ ॥

प्रथमावृत्तौ दोषाधिक्यम्, द्वितीयावृत्तौ दोषाल्पता, तृतीयावृत्तौ दोषहानिः। आवश्यके लवणादिदानम्।

जन्मतारा, दूसरी, छठी, चौथी, आठवीं तथा नवीं ये ६ ताराएँ शुभ होती हैं। ३।५।७ ताराएँ अशुभ होती हैं। यद्यपि चन्द्रमा बलवान् हो तथापि तीसरी, पाँचवीं, सातवीं ताराएँ

मनुष्यों को कष्ट देनेवाली होती हैं। कृष्णपक्ष में तारा का बल तथा शुक्लपक्ष में चन्द्रमा का बल लेना चाहिए ॥ १०१-१०५ ॥

तारा की प्रथम आवृत्ति में अधिक दोष होता है। द्वितीय आवृत्ति में न्यून दोष होता है। तृतीय आवृत्ति में बहुत ही न्यून दोष होता है।

आवश्यक में दूसरी, तीसरी आवृत्ति की तारा को ग्रहण करते हैं और दोषपरिहार के लिये वध तारा में सुवर्ण तिल, विपत् में गुड़, प्रत्यरि में लवण का दान शास्त्रों में लिखा है।

अमृतसिद्धियोगः

हस्तः सूर्ये मृगः सोमे वारे भौमे तथाश्विनी ।
बुधे मैत्रं गुरौ पुष्यो रेवती भृगुनन्दने ॥ १०६ ॥
रोहिणी सूर्यपुत्रे च सर्वसिद्धिप्रदायकः ।
असावमृतसिद्धिश्च योगः प्रोक्तः पुरातनैः ॥ १०७ ॥

रविवार को हस्त, सोमवार को मृगशिर, मंगल को अश्विनी, बुधवार को अनुराधा, बृहस्पति को पुष्य, शुक्र को रेवती, शनि को रोहिणी नक्षत्र होने से अमृतसिद्धियोग होता है और यह योग सब प्रकार की सिद्धि देनेवाला होता है ॥ १०६-१०७ ॥

संवर्त्तकयोगः

सप्तम्यां च रवेर्वारो बुधस्य प्रतिपद्दिने ।
संवर्त्ताख्यस्तदा योगो वर्जितव्यः सदा बुधैः ॥ १०८ ॥

रविवार को सप्तमी, बुधवार को प्रतिपदा हो, तो संवर्त्तक नामक योग होता है इसको सदा वर्जित करना चाहिए ॥ १०८ ॥

यमदंष्ट्रयोगः

मघा धनिष्ठा सूर्ये तु चन्द्रे मूलविशाखके ।
कृत्तिका भरणी भौमे सौम्ये पूषा पुनर्वसुः ॥ १०९ ॥

गुरौ पूषाश्विनी शुक्रे रोहिणी चानुराधिका ।
शनौ विष्णुः शतभिषग्यमदंष्ट्राः प्रकीर्त्तिताः ॥ ११० ॥

रविवार को मघा या धनिष्ठा हो, चन्द्रवार को मूल या विशाखा हो, मंगल को कृत्तिका या भरणी हो, बुधवार को पूर्वाषाढ़ा या पुनर्वसु हो, बृहस्पति को रेवती या अश्विनी हो, शुक्रवार को रोहिणी या अनुराधा हो, शनिवार को श्रवण या शतभिषा हो, तो यमदंष्ट्र योग होता है इसमें शुभ कार्य वर्जित हैं ॥ १०९-११० ॥

मृत्युयोगः

नन्दा सूर्ये मंगले च भद्रा भार्गवसोमयोः ।
बुधे जया गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा च मृत्युदा ॥ १११ ॥

रवि तथा मंगलवार को नन्दा तिथि हो, शुक्र तथा सोमवार को भद्रा तिथि हो, बुधवार को जया तिथि हो, बृहस्पतिवार को रिक्ता तिथि हो, शनिवार को पूर्णा तिथि हो, तो मृत्युयोग होता है इसमें शुभ कार्य वर्जित हैं ॥ १११ ॥

क्रकचयोगः

तिथ्यंकेन समायुक्तो वाराङ्को यदि जायते ।
त्रयोदशाङ्कः क्रकचो योगो निन्द्यस्तदा बुधैः ॥ ११२ ॥

यदि तिथि और वार का अङ्क मिलाकर तेरह हो जाय, तो क्रकचयोग बन जाता है। यह सब कार्यों में निन्दित है। जैसे सप्तमी तिथि और शुक्रवार इन दोनों की संख्या मिलाकर ७+६=१३ होने से क्रकचयोग होता है। इसी प्रकार और भी जानो ॥ ११२ ॥

सर्वार्थसिद्धियोगः

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं
चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रम् ।

भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पे
श्चे ब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम् ॥ ११३ ॥
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं
शुक्रेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवाभम् ।
शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि
सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः ॥ ११४ ॥

रविवार को हस्त, मूल, तीनों उत्तरा, पुष्य और अश्विनी नक्षत्र हो, चन्द्रवार को श्रवण, रोहिणी, मृगशिर, पुष्य और अनुराधा नक्षत्र हो; मंगलवार को अश्विनी, आश्लेषा, उत्तराभाद्रपद, कृत्तिका और आश्लेषा नक्षत्र हो; बुधवार को रोहिणी, अनुराधा, हस्त, कृत्तिका, मृगशिर नक्षत्र हो; बृहस्पतिवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु और पुष्य नक्षत्र हो, शुक्रवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु और श्रवण नक्षत्र हो; शनिवार को श्रवण, रोहिणी और स्वाती नक्षत्र हो, तो सर्वार्थसिद्धियोग होता है इसमें सब कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ११३–११४ ॥

ज्वालामुखयोगः

चतुर्थी चोत्तरायुक्ता मघायुक्ता तु पञ्चमी ।
अनुराधया तृतीया तु नवम्या सह कृत्तिका ॥ ११५ ॥
अष्टमी रोहिणीयुक्ता योगो ज्वालामुखाभिधः ।
त्याज्योऽयं शुभकार्येषु गृह्यते त्वशुभे पुनः ॥ ११६ ॥

चतुर्थी के दिन उत्तरा, पञ्चमी के दिन मघा, तृतीया के दिन अनुराधा, नवमी के दिन कृत्तिका, अष्टमी के दिन रोहिणी होने से ज्वालामुखयोग होता है । यह शुभ कार्यों में वर्जित है ॥ ११५-११६ ॥

यमघण्टयोगः

सूर्यादिवारे तिथयो भवन्ति
मघाविशाखाशिवमूलवह्निः ।

आद्रं करोऽर्कादियमघण्टकाश्च
शुभे विवर्ज्या गमने त्ववश्यम् ॥ ११७ ॥

रविवार को मघा, चन्द्रवार को विशाखा, मंगल को आर्द्रा, बुध को मूल, बृहस्पति को कृत्तिका, शुक्र को रोहिणी, शनि को हस्त होने से यमघण्टयोग होता है। यह शुभ कार्य में वर्जित है ॥ ११७ ॥

वर्ज्यनाड्यः

यमघण्टे त्यजेदष्टौ मृत्यौ द्वादशनाडिकाः।
अन्येषां पापयोगानां मध्याह्नात्परतः शुभम् ॥ ११८ ॥

यमघंटयोग में ८ घड़ियाँ, मृत्युयोग में १२ घड़ियाँ वर्जित हैं और पापयोगों में मध्याह्न के उपरान्त अशुभ फल नहीं रहता है ॥ ११८ ॥

अशुभयोगादीनां परिहारः

पंग्वन्धकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः।
गौडमालवयोस्त्याज्या अन्यदेशे न गर्हिताः ॥ ११९ ॥

पंगु, अन्ध और काण लग्न तथा मास शून्य राशियाँ गौड़ और मालव देशों में वर्जित हैं अन्यत्र नहीं ॥ ११९ ॥

कुयोगास्तिथिवारोत्थास्तिथिभोत्था भवारजाः।
हूणवंगखसेष्वेव वर्ज्यास्त्रितयजास्तथा ॥ १२० ॥

तिथि और वार से बने हुए योग अथवा तिथि और नक्षत्र से उत्पन्न या नक्षत्र और वारों से उत्पन्न दुष्टयोग केवल हूण, वंग और खस देशों में वर्जित है ॥ १२० ॥

मृत्युक्रकचदग्धादीनिन्दौ शस्ते शुभाञ्जगुः।
केचिद्यामोत्तरं चान्ये यात्रायामेव निन्दितान् ॥ १२१ ॥

यदि चन्द्रमा शुभ हो, तो मृत्यु, क्रकच, दग्ध आदि योगों का अशुभ फल नहीं रहता। कुछ आचार्यों का मत है कि एक पहर के

बाद इन योगों का दुष्टफल नहीं रहता है । अन्य आचार्य कहते हैं कि यह योग केवल यात्रा ही में वर्जित है ॥ १२१ ॥

वारर्क्षतिथियोगेषु यात्रामेव विवर्जयेत् ।
विवाहादीनि कुर्वीत गर्गादीनामिदं वचः ॥ १२२ ॥

वार, नक्षत्र तथा तिथियों का योग केवल यात्रा ही में वर्जित है । विवाह आदि कर्म इन योगों में करने चाहिए यह गर्ग आदि का मत है ॥ १२२ ॥

विरुद्धयोगास्तिथिवारजाता
नक्षत्रवारप्रभवाश्च ये च ।
हूणेषु वंगेषु खसेषु वर्ज्याः
शेषेषु देशेषु न ते निषिद्धाः ॥ १२३ ॥

तिथि और वार से उत्पन्न या नक्षत्र और वार से उत्पन्न दुष्ट-योगों को केवल हूण, वङ्ग और खस देशों में वर्जित करें, और देशों में नहीं ॥ १२३ ॥

कुयोगः सिद्धियोगश्च यदि स्यातामुभावपि ।
सुयोगो हन्ति दुर्योगं कार्यसिद्धौ शुभावहः ॥ १२४ ॥

यदि दुष्टयोग और सिद्धियोग दोनों एक साथ पड़ें, तो अच्छा योग बुरे योग के फल को मार देता है और कार्यसिद्धि में शुभ फल देता है ॥ १२४ ॥

विष्कुम्भादियोगाः

विष्कुम्भः प्रीतिरायुष्मान्सौभाग्यः शोभनस्तथा ।
अतिगण्डः सुकर्मा च धृतिः शूलस्तथैव च ॥ १२५ ॥
गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा ।
वज्रः सिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान्परिघः शिवः ॥ १२६ ॥
सिद्धिः साध्यः शुभः शुक्लो ब्रह्म ऐन्द्रश्च वैधृतिः ।
सप्तविंशतियोगास्तु कुर्युर्नामसमं फलम् ॥ १२७ ॥

विष्कुम्भ आदि २७ योगों का नाम सदृश फल जानना चाहिए ॥ १२५–१२७ ॥

वर्ज्ययोगाः

विरुद्धसंज्ञा इह ये च योगा-
स्तेषामनिष्टः खलु पाद आद्यः ।
स वैधृतिस्तु व्यतिपातनामा
सर्वोऽप्यनिष्टः परिघस्य चार्धम् ॥१२८॥
तिस्रस्तु योगे प्रथमे च वज्रे
व्याघातसंज्ञे नवपञ्चशूले ।
गण्डेऽतिगण्डे च षडेव नाड्यः
शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयाः ॥ १२९ ॥

उपर्युक्त योगों में विरुद्ध नामवाले जो योग हैं उनका पहला चरण अनिष्टकारक होता है । परन्तु वैधृति और व्यतीपात नामवाले योगों के चारों चरण, परिघयोग के दो चरण अनिष्ट हैं । किसी आचार्य के मत से विष्कुम्भ तथा वज्रयोग में तीन नाड़ियाँ, व्याघात में ९ नाड़ियाँ, शूल में ५ नाड़ियाँ, गण्ड तथा अति-गण्ड में ६ नाड़ियाँ शुभ कार्यों में वर्जित हैं ॥ १२८–१२९ ॥

विष्कुम्भादियोगज्ञानोपायः

यस्मिन्नृक्षे स्थितो भानुर्यत्र तिष्ठति चन्द्रमाः ।
एकीकृत्य त्यजेदेकं योगा विष्कुम्भकादयः ॥ १३० ॥

जिस नक्षत्र में सूर्य हो और जिस नक्षत्र में चन्द्रमा हो उन दोनों को जोड़कर १ घटा देने से विष्कुम्भ आदि योग बन जाते हैं ॥ १३० ॥

आनन्दादियोगाः

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो
धाता सौम्यो ध्वांक्षकेतू क्रमेण ।

श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च
छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ ॥ १३१ ॥
उत्पातमृत्यू किल काणसिद्धी
शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च ।
मातंगरक्षश्चरसुस्थिराख्यः
प्रवर्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥ १३२ ॥

उपर्युक्त २८ आनन्द आदि योग अपने नाम के समान फल देनेवाले होते हैं ॥ १३१–१३२ ॥

आनन्दादियोगज्ञानोपायः

दास्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे कराद्बुधे ।
मैत्राद्गुरौ भृगौ वैश्वाद्गण्या मन्दे च वारुणात् ॥१३३॥

रविवार को अश्विनी नक्षत्र से, सोम को मृगशिर से, मंगल को आश्लेषा से, बुध को हस्त से, बृहस्पतिवार को अनुराधा से, शुक्रवार को उत्तराषाढ़ से तथा शनिवार को शतभिषा से गिने ।

रविवार को अश्विनी हो, तो आनन्दयोग । भरणी हो, तो कालदण्ड इत्यादि । सोमवार को मृगशिर हो, तो आनन्द, आर्द्रा हो, तो कालदण्ड इत्यादि । मंगलवार को आश्लेषा हो, तो आनन्द, मघा हो, तो कालदण्ड इत्यादि । इसी प्रकार बुधवार को हस्त हो, तो आनन्द, चित्रा हो, तो कालदण्ड इत्यादि जानना चाहिए ॥ १३३ ॥

दुष्टयोगेषु वर्ज्यनाड्यः

ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे चेषुनाड्यो
वर्ज्या वेदाः पद्मलुम्बे गदेऽश्वाः ।
धूम्रे काणे मौसले भूर्द्वयं द्वे
रक्षोमृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे ॥ १३४ ॥

ध्वांक्षमुद्गरवज्राणां घटी पञ्चकमादिषु ।
कालमौशलयोर्द्वन्द्वे चतस्रः पद्मलम्बयोः ॥ १३५ ॥

ध्वांक्ष, मुद्गर तथा वज्र योगों में आदि की ५ घड़ियाँ, काल, मुशल योगों में दो-दो घड़ियाँ, पद्म, लुम्ब योगों में चार-चार घड़ियाँ वर्जित हैं ॥१३४–१३५ ॥

एका धूम्रे गदे सप्त चरे तिस्रो घटीस्त्यजेत् ।
त्यजेत्सर्वान् शुभे मृत्युकालोत्पाताख्यराक्षसान् ॥ १३६ ॥

धूम्रयोग में १ घड़ी, गदयोग में ७ घड़ियाँ, चरयोग में ३ घड़ियाँ वर्जित हैं। मृत्यु, काल, उत्पात तथा राक्षसयोगों में सब घड़ियाँ शुभकार्य में वर्जित हैं ॥ १३६ ॥

करणानि

गततिथ्यो द्विनिघ्नाश्च शुक्लप्रतिपदादितः ।
एकोनाः सप्तहृच्छेषाः करणं स्याद्ववादिकम् ॥ १३७ ॥

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ करके गत तिथियों को २ से गुणा करे। गुणनफल में से १ घटाकर शेष में ७ का भाग देने से ववआदि करण निकल आते हैं ॥ १३७ ॥

ववश्च वालवश्चैव कौलवस्तैतिलस्तथा ।
गरश्च वणिजो विष्टिः सप्तैतानि चराणि च ॥ १३८ ॥
कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां शकुनिः पश्चिमे दले ।
चतुष्पादश्च नागश्च अमावास्या दलद्वये ॥ १३९ ॥
शुक्लप्रतिपदायास्तु किंस्तुघ्नः प्रथमे दले ।
स्थिराण्येतानि चत्वारि करणानि जगुर्बुधाः ॥ १४० ॥
शुक्लप्रतिपदान्ते च ववाख्यः करणो भवेत् ।
एकादशैव ज्ञेयानि चरस्थिरद्विभागतः ॥ १४१ ॥

वव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि ये सात करण चर हैं। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के परभाग में शकुनि करण

होता है। अमावास्या के पहले भाग में चतुष्पाद और दूसरे भाग में नाग करण होते हैं। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के प्रथम भाग में किंस्तुघ्न करण होता है। ये ४ करण स्थिर होते हैं। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के दूसरे भाग में बव करण होता है। इस प्रकार से चर और स्थिर मिलकर ११ करण होते हैं ॥ १३८-१४१ ॥

विष्टिकरणवर्ज्यता

न सिद्धिमायाति कृतं च विष्ट्यां
विषारिघातादिषु तन्त्रसिद्धिः ॥ १४२ ॥

विष्टि करण में किया हुआ काम सिद्ध नहीं होता है परन्तु विष, घात आदि तान्त्रिक कर्म सिद्ध होते हैं ॥ १४२ ॥

भद्रा

शुक्ले पूर्वार्धेऽष्टमीपञ्चदश्यो-
भंद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्धे।
कृष्णेऽन्त्यार्धे स्यात्तृतीयादशम्योः
पूर्वे भागे सप्तमीशम्भुतिथ्योः ॥ १४३ ॥

शुक्लपक्ष की अष्टमी, पौर्णमासी के पूर्वार्ध में, एकादशी, चतुर्थी के परार्ध में, कृष्णपक्ष की तृतीया, दशमी के परार्ध में, सप्तमी तथा चतुर्दशी के पूर्वार्ध में भद्रा होती है ॥ १४३ ॥

भद्रावासः

मेषत्रयालिगे चन्द्रे भद्रा स्वर्लोकचारिणी।
कन्याद्वये धनुर्युग्मे चन्द्रे भद्रा रसातले ॥ १४४ ॥
कुम्भे मीने तथा कर्के सिंहे चन्द्रे भुवि स्थिता।
भूर्लोकस्था सदा त्याज्या स्वर्गपातालगा शुभा ॥ १४५ ॥

मेष, वृष, मिथुन, वृश्चिक के चन्द्रमा होने से भद्रा स्वर्गलोक में; कन्या, तुला, धन, मकर के चन्द्रमा होने से पाताल में; कुम्भ,

मीन, कर्क, सिंह के चन्द्रमा में भूलोक में भद्रा रहती है । जब भूलोक में हो, तो सर्वथा वर्जित है अन्य लोक में हो, तो शुभ है ॥ १४४–१४५ ॥

भद्राफलम्

स्वर्गे भद्रा धनं धान्यं पाताले च धनागमः ।
मृत्युलोके यदा भद्रा कार्यसिद्धिस्तदा नहि ॥ १४६ ॥

भद्रा स्वर्ग में हो, तो धन-धान्य देनेवाली, पाताल में हो, तो धन प्राप्ति करानेवाली, मृत्युलोक में हो, तो कार्य को नाश करनेवाली होती है ॥ १४६ ॥

भद्राया मुखपुच्छादिफलं च

मुखे पञ्च गले त्वेका वक्षस्येकादश स्मृताः ।
नाभौ चतस्रः षट् कट्यां तिस्रः पुच्छाख्यनाडिकाः॥ १४७॥

भद्रा की ५ नाड़ी मुख में, १ गले में, ११ छाती में, ४ नाभि में, ६ कमर में, ३ पुच्छ में होती हैं ॥ १४७ ॥

कार्यहानिर्मुखे मृत्युर्गले वक्षसि निःस्वता ।
कट्यामुन्मत्तता नाभौ च्युतिः पुच्छे ध्रुवो जयः॥ १४८॥

भद्रा के मुख में काम करने से कार्यहानि, गले में काम करने से मृत्यु, छाती में काम करने से दारिद्र्य, कमर में काम करने से उन्मत्तता, नाभि में च्युति और पुच्छ में जय होता है ॥ १४८ ॥

अत्यावश्यके परिहारः

कार्येऽत्यावश्यके विष्टेर्मुखमात्रं परित्यजेत् ॥ १४९ ॥

अत्यावश्यक काम हो, तो भद्रा के केवल मुखमात्र को छोड़ देवे ॥ १४९ ॥

वृश्चिकी सर्पिणी भद्रा

शुक्ले तु वृश्चिकी भद्रा कृष्णपक्षे भुजंगमा ।

सा दिवा सर्पिणी रात्रौ वृश्चिकीत्यपरे जगुः ॥
मुखं त्याज्यं तु सर्पिण्या वृश्चिक्याः पुच्छमेव च॥१५०॥

शुक्लपक्ष की भद्रा का नाम वृश्चिकी है, कृष्णपक्ष की भद्रा का नाम सर्पिणी है। किसी का मत है कि दिन की भद्रा सर्पिणी, रात्रि की भद्रा वृश्चिकी है। भद्रा का मुख, वृश्चिकी भद्रा का पुच्छ छोड़ देना चाहिए ॥१५०॥

न कुर्यान्मंगलं विष्ट्या जीवितार्थी कदाचन ॥ १५१ ॥

यदि जीवित रहना चाहे, तो भद्रा में कभी शुभ कार्य न करे ॥ १५१ ॥

भद्राया ग्राह्यता

..................युद्धे भूपतिदर्शने।
वैद्यस्यागमने जलप्रतरणे शत्रोस्तथोच्चाटने।
स्त्रीसेवाक्रतुमज्जनेषु शकटे भद्रा सदा गृह्यते॥ १५२ ॥

युद्ध में, राजदर्शन में, वैद्य बुलाने में, जल को तरने में, शत्रु का उच्चाटन करने में, स्त्रीसेवन में, यज्ञ करने में, स्नान करने में, गाड़ी की सवारी में भद्रा का ग्रहण करना अच्छा है ॥ १५२ ॥

पहला अध्याय समाप्त।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

दूसरा अध्याय

प्रदोषादिविचारः

उदयात्प्राक्तनी सन्ध्या घटिकात्रयमुच्यते ।
सायंसन्ध्या त्रिघटिका अस्तादुपरि भास्वतः ॥ १ ॥
त्रिमुहूर्त्तः प्रदोषः स्याद्रवावस्तंगते ततः ।
महानिशा निशीथस्य मध्यस्य घटिकाद्वयम् ॥ २ ॥
उषःकालः पञ्च पञ्च सप्तपञ्चारुणोदयः ।
अष्टपञ्च भवेत्प्रातः शेषः सूर्योदयः स्मृतः ॥ ३ ॥

सूर्योदय से तीन घड़ी प्रातःसन्ध्या, सूर्यास्त से ३ घड़ी पर्यन्त सायंसन्ध्या । सूर्यास्त से ३ मुहूर्त्तपर्यन्त प्रदोष । अर्धरात्र की, मध्य की २ घड़ियाँ महानिशा कहलाती हैं । ५५ घड़ी में उषःकाल, ५७ में अरुणोदय, ५८ में प्रातःकाल तदनन्तर सूर्योदय कहलाता है ॥ १–३ ॥

दो घड़ी का एक मुहूर्त्त होता है । दिन में १५ मुहूर्त्त, रात्रि में १५ मुहूर्त्त, दिन में सूर्योदय से ३ मुहूर्त्त प्रातःकाल, तदनन्तर ३ मुहूर्त्त संगव, इसके अनन्तर ३ मुहूर्त्त मध्याह्न, तदनन्तर ३ मुहूर्त्त अपराह्न, तदुपरान्त ३ मुहूर्त्त सायाह्न होता है ।

दिनरात्रिमुहूर्त्तनामानि

गिरिशभुजगमित्राः पित्र्यवस्वाम्बुविश्वे-
ऽभिजिदथ च विधातापीन्द्रइन्द्राग्नी च ।

निरृ॑तिरुदकनाथोऽप्यर्यमाथो भगः स्युः
क्रमश इह मुहूर्त्ता वासरे बाणचन्द्राः ॥ ४ ॥
शिवोऽजपादादष्टौ स्युर्भेशा अदितिजीवकौ ।
विष्णवर्कत्वाष्ट्रमरुतो मुहूर्त्ता निशि कीर्त्तिताः ॥ ५ ॥

दिन में गिरिश, भुजग, मित्र, पित्र्य, वसु, अम्बु, विश्वे, अभिजित्, विधाता, इन्द्र, इन्द्राग्नी, निर्ऋति, वरुण, अर्यमा तथा भग ये १५ मुहूर्त्त होते हैं। रात्रि में शिव, अजैकपात्, अहिर्बुध्न्य, पूषा, दास्र, यम, अग्नि, ब्रह्मा, चन्द्र, अदिति, जीव, विष्णु, अर्क, त्वाष्ट्र तथा मरुत् ये १५ मुहूर्त्त होते हैं ॥ ४–५ ॥

निषिद्धमुहूर्त्ताः

रवावर्यमा ब्रह्म रक्षश्च सोमे
कुजे वह्निपित्र्ये बुधे चाभिजित्स्यात् ।
गुरौ तोयरक्षो भृगौ ब्राह्मपित्र्ये
शनावीशसार्पौ मुहूर्त्ता निषिद्धाः ॥ ६ ॥

रविवार के दिन अर्यमा मुहूर्त्त, चन्द्रमा के दिन ब्रह्म और रक्षस, मंगल के दिन वह्नि और पित्र्य, बुध के दिन अभिजित्, बृहस्पति के दिन जल और रक्षस, शुक्र के दिन ब्रह्म और पित्र्य, शनि के दिन ईश और सार्प ये मुहूर्त्त निषिद्ध हैं ॥ ६ ॥

सूर्यसंक्रान्तिः

संक्रान्तिकालादुभयत्र नाडिकाः
पुण्या मताः षोडश षोडशोष्णगोः ।
निशीथतोऽर्वागपरत्र संक्रमे
पूर्वापराह्नान्तिमपूर्वभागकौ ॥ ७ ॥

जिस समय में सूर्यसंक्रान्ति हो उससे आगे और पीछे सोलह-सोलह घड़ी पुण्यकाल होता है। अर्धरात्रि से पहले यदि संक्रान्ति हो, तो पहले दिन के पिछले दो पहर पुण्यकाल होते हैं। यदि

अर्धरात्रि के उपरान्त संक्रान्ति हो, तो दूसरे दिन का पूर्वभाग पुण्यकाल होता है ॥ ७ ॥

पूर्णे निशीथे यदि संक्रमः स्या-
द्दिनद्वयं पुण्यमथोदयास्तात् ।
पूर्वं परस्ताद्यदियाम्यसौम्या-
यने दिने पूर्वपरे तु पुण्ये ॥ ८ ॥
सन्ध्या त्रिनाडीप्रमितार्कबिम्बा-
दर्धोदितास्तादधऊर्ध्वमत्र ।
चेद्याम्यसौम्ये अयने क्रमात्स्तः
पुण्यौ तदानीं परपूर्वघस्रौ ॥ ९ ॥

यदि ठीक अर्धरात्रि में संक्रान्ति हो, तो दोनों दिन पुण्यकाल होता है। दक्षिणायन अर्थात् कर्कसंक्रान्ति सूर्योदय से पहले हो, तो पहला दिन पुण्यकाल होता है और जो सूर्यास्त के उपरान्त उत्तरायण अर्थात् मकरसंक्रान्ति हो, तो पर दिन पुण्यकाल होता है। यह गौड़ दाक्षिणात्य का मत है। सब धर्मशास्त्र के सिद्धान्त से सूर्यबिम्ब से आधे उदय होने की पहली ३ घड़ी और बिम्ब के आधे अस्त होने की पिछली ३ घड़ी सन्ध्या समय होता है। जो प्रातःसन्ध्या में कर्क की संक्रान्ति हो, तो दूसरा दिन पुण्यकाल होता है और सायंसन्ध्या में मकर की संक्रान्ति हो, तो पूर्व दिन पुण्यकाल होता है। मेष और तुला की संक्रान्ति को विषुवसंक्रान्ति कहते हैं। मकर और कर्क की संक्रान्ति को अयनसंक्रान्ति कहते हैं ॥ ८–९ ॥

धर्मशास्त्रे पुण्यकालव्यवस्था

प्रागूर्ध्वा दश पूर्वतः षडवनिस्तद्वत्पराः पूर्वत-
स्त्रिंशत्षोडश पूर्वतोऽथ परतः पूर्वाः पराः स्युर्दश ।
पूर्वाः षोडश चोत्तरा ऋतुभुवः पश्चात्खवेदाः पुनः

पूर्वाः षोडश चोत्तराः पुनरथो पुण्यास्तु मेषादितः॥१०॥

मेष में पूर्व-पर १० घटिका। वृष में पूर्व १६ घटिका, मिथुन में पिछली १६ घटिका, कर्क में पहली ३० घटिका, सिंह में पहली १६ घटिका। कन्या में पीछे की १६ घटिका, तुला में पहली और पिछली १० घटिका। वृश्चिक में पहली १६ घटिका, धन में पिछली १६ घटिका, मकर में पिछली ४० घटिका, कुम्भ में पहली १६ घटिका, मीन में पिछली १६ घटिका पुण्यकाल आचार्यों ने माने हैं॥ १०॥

अत्र विशेषः

याम्युत्तरा पुण्यतमा मयोक्ता
सायं भवेत्सा यदि सापि पूर्वा।
पूर्वा तु योक्ता यदि सा विभाते
साम्युत्तरा रात्रिनिषेधतः स्यात्॥ ११॥

जिस संक्रांति की पिछली घड़ी पुण्यतम मैंने कही है। यदि वह संक्रान्ति सन्ध्या के समय हो, तो उतनी ही पहली घड़ी पुण्यकाल जानना और जिस संक्रान्ति का पूर्व पुण्यकाल कहा है वह यदि सूर्योदय के समय हो, तो उतनी ही घड़ी पिछली पुण्यकाल जानना। कारण कि रात्रि में पुण्य का निषेध है।

यदि आधीरात से पहले संक्रान्ति हो, तो पहले दिन के पिछले दो पहर में और यदि आधीरात से परे संक्रान्ति हो, तो पिछले दिन के पहले दो पहर में पुण्यकाल होता है। कर्क और मीन की संक्रान्ति में भी इसी प्रकार जानना चाहिए।

यदि मीन की संक्रान्ति प्रदोष वा आधीरात के समय हो, तो पर दिन में पुण्यकाल और कर्क की संक्रान्ति सूर्योदय वा आधी-रात के समय हो, तो पूर्व दिन में पुण्यकाल जानना ऐसा माध-

वाचार्य लिखते हैं। इस विषय में विस्ताररूप से प्राचीन ग्रन्थों में लेख है ॥ ११ ॥

विषुवत्संक्रान्तिविचारः

सप्त शीर्षे मुखे त्रीणि त्रितयं करपादयोः ।
हृदये पञ्च धिष्ण्यानि विषुवत्पुरुषे न्यसेत् ॥ १२ ॥

विषुवत्संक्रान्ति का एक नराकार चक्र बनावे उसके सिर पर ७ नक्षत्र, मुख में ३ नक्षत्र, दोनों हाथ और दोनों पैरों में ३-३ नक्षत्र तथा हृदय में ५ नक्षत्र रक्खे ॥ १२ ॥

फलम्

कपाले भूपालस्तदनु वदने पण्डितवरो
धनाध्यक्षो वक्षस्यनुपमवधूर्दक्षिणकरे ।
करे वामे भैक्ष्यं भ्रमणमथवा दक्षिणपदे
पदे वामे मृत्युर्भवति निजनक्षत्रगणनात् ॥१३॥

यदि सिर पर संक्रान्ति पड़े, तो भूमिलाभ, मुख में संक्रान्ति पड़े, तो विद्यालाभ, छाती में संक्रान्ति पड़े, तो धन प्राप्ति, दाहिने हाथ में संक्रान्ति पड़े, तो स्त्रीलाभ, बाएँ हाथ में संक्रान्ति पड़े, तो भिक्षा माँगना, दाहिने पैर में संक्रान्ति पड़े, तो देश भ्रमण तथा बाएँ पैर में पड़े, तो मृत्यु। यह विचार अपने जन्म नक्षत्र से होता है ॥ १३ ॥

अन्यसंक्रान्तिविचारः

संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतस्त्रिभे
स्वभे निरुक्तं गमनं ततोऽङ्गभे ।
सुखं त्रिभे पीडनमङ्गभेऽशुकं
त्रिभेऽर्थहानी रसभे धनागमः ॥ १४ ॥

संक्रान्ति के नक्षत्र को छोड़कर उसके नीचेवाले नक्षत्र से अपने जन्म नक्षत्र तक गिने। यदि ३ नक्षत्र के भीतर अपना नक्षत्र आवे,

तो उसका फल गमन है। तदुपरान्त ६ नक्षत्र तक सुख, फिर ३ नक्षत्र तक पीड़ा, फिर ६ नक्षत्र तक वस्त्रलाभ, फिर ३ नक्षत्र तक धनहानि, फिर ६ नक्षत्र तक धनप्राप्ति होती है ॥ १४ ॥

शुभकार्ये वर्ज्यघटिकादयः

अयने विषुवे त्याज्यं पूर्वं मध्यं परं दिनम् ।
शेषसंक्रमणे पूर्वं पश्चात्षोडश नाडिकाः ॥१५॥

अयन और विषुवत्संक्रान्ति में पूर्व, मध्य और पर दिन शुभ कार्य में वर्जित है। शेष संक्रान्तियों में संक्रान्ति से पहले और पीछे सोलह-सोलह घड़ी वर्जित हैं ॥ १५ ॥

अन्यग्रहसंक्रान्तिषु वर्ज्यघट्यः

देवद्व्यङ्कर्तवोऽष्टाष्टौ
नाड्योऽङ्काः खनृपाः क्रमात् ।
वर्ज्याः संक्रमणेऽर्कादेः
प्रायोऽर्कस्यातिनिन्दिताः ॥ १६ ॥

सूर्यसंक्रम से पूर्वापर की ३३ घड़ी, चन्द्रमा के संक्रम में २, मंगल के संक्रम में ६, बुध के संक्रम में ६, बृहस्पति के संक्रम में ८८, शुक्र के संक्रम में ६, शनि के संक्रम में १६० घड़ी शुभ कार्य में वर्जित हैं। विशेषतः सूर्य की अति निन्दित हैं ॥ १६ ॥

द्वादशराशिनामानि तेषां स्वामिनश्च

मेषो वृषोऽथ मिथुनं कर्कटः सिंहकन्यके ।
तुलाऽथ वृश्चिको धन्वी मकरः कुम्भमीनकौ ॥ १७ ॥
मेषवृश्चिकयोर्भौमः शुक्रो वृषतुलाधिपः ।
कन्यामिथुनयोः सौम्यः कर्कस्वामी च चन्द्रमाः ॥ १८ ॥
सिंहस्याधिपतिः सूर्यो गुरुस्तु धनमीनयोः ।
शनिर्नक्रस्य कुम्भस्य कथितो गणकोत्तमैः ॥ १९ ॥

मेष और वृश्चिक का स्वामी मंगल, वृष और तुला का स्वामी

शुक्र, कन्या और मिथुन का स्वामी बुध, कर्क का स्वामी चन्द्रमा, सिंह का स्वामी सूर्य, धन और मीन का स्वामी बृहस्पति, मकर तथा कुम्भ का स्वामी शनि है ॥ १७–१६ ॥

राशिपर्यायाः

मेषाजवस्तं प्रथमं क्रियश्च
वृषोक्षगोतावुरिशुक्रभं च ।
बौधं नृयुग्मं जितुभं तृतीयं
चान्द्रं कुलीरं च चतुर्थराशिम् ॥ २० ॥
सिंहस्य कण्ठीरवलेयसंज्ञे
पाथोनपष्ठी त्ववला च तन्वी ।
जूकोवणिक्सप्तमतौलिसंज्ञाः
कौर्प्योऽष्टमं कौजमलेस्तु संज्ञाः ॥ २१ ॥
जैवं धनुस्तौक्षिकचापसंज्ञं
त्वाकेकरं स्याद्दशमं च चक्रम् ।
हृद्रोगकुम्भौ घटराशिसंज्ञे
मीनोझषश्चान्तिमरिष्फसंज्ञः ॥ २२ ॥

मेष राशि के पर्याय अज, वस्त, प्रथम तथा क्रिय । वृषराशि के पर्याय उक्षा, गो, तावुरि तथा शुक्र का गृह । मिथुन के पर्याय बुध का गृह, नृयुग्म और जितुम । कर्क के पर्याय चन्द्र का गृह और कुलीर । सिंह के पर्याय कण्ठीरव और लेय । कन्या के पर्याय पाथोन, अबला और तन्वी । तुला के पर्याय जूक, वणिक् और तौलि । वृश्चिक के पर्याय कौर्प्य, मंगल का घर और अलि । धन के पर्याय बृहस्पति का घर, तौक्षिक और चाप । मकर के पर्याय आकेकर और चक्र । कुम्भ के पर्याय हृद्रोग और घट तथा मीन के पर्याय झष, अन्तिम और रिष्फ ॥ २०–२२ ॥

शून्यराशयः

घटो झषो गौर्मिथुनं मेषकन्यालितौलिनः ।
धनुः कर्को मृगः सिंहश्चैत्रादौ शून्यराशयः ॥ २३ ॥

चैत्र में कुम्भ, वैशाख में मीन, ज्येष्ठ में वृष, आषाढ़ में मिथुन, श्रावण में मेष, भाद्रपद में कन्या, आश्विन में वृश्चिक, कार्त्तिक में तुला, मार्गशीर्ष में धन, पौष में कर्क, माघ में मकर, फाल्गुन में सिंह ये शून्य राशियाँ हैं ॥ २३ ॥

शून्यलग्नानि

प्रतिपदि तुलामकरौ सिंहमकरौ तृतीयायाम् ।
कन्यामिथुने पञ्चम्यां सप्तम्यां चैव धनुःकर्कौ ॥ २४ ॥
नवम्यां कर्कसिंहावेकादश्यां तु धनुर्मीनौ ।
त्रयोदश्यां वृषभमीनौ शून्यलग्नानि तिथियोगात् ॥२५॥

प्रतिपदा के दिन तुला और मकर, तृतीया के दिन सिंह और मकर, पञ्चमी के दिन कन्या और मिथुन, सप्तमी के दिन धन और कर्क, नवमी के दिन कर्क और सिंह, एकादशी के दिन धन और मीन, त्रयोदशी के दिन वृष और मीन ये शून्य लग्न हैं ॥२४-२५॥

पंग्वन्धबधिरलग्नानि

घस्रे तुलाली बधिरौ मृगाश्वौ
रात्रौ च सिंहाजवृषा दिवान्धाः ।
कन्या नृयुक्कर्कटका निशान्धा
दिने घटोऽन्त्यो निशि पंगुसंज्ञः ॥ २६ ॥

दिन में तुला और वृश्चिक लग्न बधिर (बहिरे) होते हैं । रात में मकर और धन लग्न बधिर होते हैं । सिंह, मेष और वृष लग्न दिन में अन्धे होते हैं । कन्या, मिथुन, कर्क लग्न रात में अन्धे होते हैं । दिन में कुम्भ और रात्रि में मीन लग्न पंगु होते हैं ॥ २६ ॥

कालाङ्गानि

कालाङ्गानि वराङ्गमाननमुरोहृत्क्रोडवासोभृतो।
वस्तिर्व्यंञ्जनमूरुजानुयुगले जंघे ततोऽङ्घ्रिद्वयम् ॥ २७ ॥

अथवा

शीर्षाननौ तथा बाहू हृत्क्रोडकटिबस्तयः।
गुह्योरुयुगले जानुयुग्मे वै जंघके तथा ॥
चरणौ द्वौ तथा लग्नाज्ज्ञेयाः शीर्षादयः क्रमात् ॥ २८ ॥

कालपुरुष का अंग लग्न से या मेष से इस प्रकार जानना चाहिए ॥ २७-२८ ॥

राशिस्वरूपचक्रम्

राशि	चरादि संज्ञा	विषम आदि	क्रूर आदि	दिशा	पुरुष आदि
मेष	चर	विषम	क्रूर	पूर्व	पुरुष
वृष	स्थिर	सम	सौम्य	दक्षिण	स्त्री
मिथुन	द्विस्वभाव	विषम	क्रूर	पश्चिम	पुरुष
कर्क	चर	सम	सौम्य	उत्तर	स्त्री
सिंह	स्थिर	विषम	क्रूर	पूर्व	पुरुष
कन्या	द्विस्वभाव	सम	सौम्य	दक्षिण	स्त्री
तुला	चर	विषम	क्रूर	पश्चिम	पुरुष
वृश्चिक	स्थिर	सम	सौम्य	उत्तर	स्त्री
धनु	द्विस्वभाव	विषम	क्रूर	पूर्व	पुरुष
मकर	चर	सम	सौम्य	दक्षिण	स्त्री
कुम्भ	स्थिर	विषम	क्रूर	पश्चिम	पुरुष
मीन	द्विस्वभाव	सम	सौम्य	उत्तर	स्त्री

लग्न स्थान	या	मेष	सिर	दूसरा स्थान	या	वृष	मुख
तीसरा ,,	या	मिथुन	बाहु	चौथा ,,	या	कर्क	चित्त
पाँचवाँ ,,	या	सिंह	गोद	छठा ,,	या	कन्या	कमर
सातवाँ ,,	या	तुला	पेट	आठवाँ ,,	या	वृश्चिक	गुह्य
नवाँ ,,	या	धनु	जाँघ	दसवाँ ,,	या	मकर	घुटना
ग्यारहवाँ ,,	या	कुम्भ	टाँग	बारहवाँ ,,	या	मीन	पैर

जैसे किसी के जन्मपत्र में मेष का सूर्य हो, (मेष का सूर्य उच्च का होता है), मेष सिर को बतलाता है इससे वह मनुष्य बड़े मस्तिष्कवाला होता है और वह मस्तिष्क द्वारा धन पैदा करेगा तथा वह मन्त्री आदि हो सकता है ।

राशीनां जातिप्रकृतिचक्रम्

मेष	जाति क्षत्रिय	प्रकृति पित्त
वृष	वैश्य	वात
मिथुन	शूद्र	त्रिधातु
कर्क	ब्राह्मण	कफ
सिंह	क्षत्रिय	पित्त
कन्या	वैश्य	वात
तुला	शूद्र	त्रिधातु
वृश्चिक	ब्राह्मण	कफ
धनु	क्षत्रिय	पित्त
मकर	वैश्य	वात
कुम्भ	शूद्र	त्रिधातु
मीन	ब्राह्मण	कफ

मेषराशि का स्वरूप—लाल रंग, बड़ा शरीर, चार पैर, रात्रि में बलवान्, पूर्व दिशा में निवास, राजा का मित्र, पर्वतों में फिरनेवाला, रजोगुण, पृष्ठोदय, अग्नि, स्वामी मंगल।

वृष का स्वरूप—सफ़ेद, स्वामी शुक्र, दीर्घ, चार पैर, रात्रि में बलवान्, दक्षिण दिशा का स्वामी, ग्राम में निवास, वैश्य जाति, भूमितत्त्व, रजोगुण, पृष्ठोदय।

मिथुन का स्वरूप—शीर्षोदय, स्त्रीपुरुष का जोड़ा, गदा और वीणा हाथ में, पश्चिम दिशा, शान्त, दो पैरवाला, रात्रि में बलवान्, ग्राम और गोष्ठ में निवास, वातप्रकृति, समान शरीरवाला, हरा रंग, स्वामी बुध।

कर्क का स्वरूप—गुलाबी रंग, वन में फिरनेवाला, ब्राह्मण जाति, रात्रि में बलवान्, बहुत पैरवाला, उत्तर दिशा, मोटा शरीर, सत्त्वगुण, जल, पृष्ठोदय, स्वामी चन्द्रमा।

सिंह का स्वरूप—स्वामी सूर्य, सत्त्वगुण, चार पैर, क्षत्रिय जाति, बलवान्, शीर्षोदय, बड़ा शरीर, गुलाबी रंग, पूर्व दिशा, दिन में बलवान्।

कन्या का स्वरूप—पर्वत में निवास, दिन में बलवान्, शीर्षोदय, मध्यम शरीर, दो पैर, दक्षिण दिशा, हाथ में धान और अग्नि, वैश्यवर्ण, चित्र विचित्र रंग, वायुतत्त्व, कुमारी, तापस, बालस्वभाव, स्वामी बुध।

तुला का स्वरूप—शीर्षोदय, दिन में बलवान्, काला रंग, रजोगुण, पश्चिम दिशा, भूचर, शूद्रजाति, मध्यम शरीर, दो पैर, स्वामी शुक्र।

वृश्चिक का स्वरूप—बहुत पैर, छोटा शरीर, ब्राह्मणजाति, सौम्य स्वभाव, दिन में बलवान्, कबरैला, जल और भूमि में निवास, बालों से भरा हुआ, अति तीक्ष्ण, स्वामी मंगल।

धन का स्वरूप—स्वामी बृहस्पति, सत्त्वगुण, पृष्ठोदय, पीला रंग, रात में बलवान्, अग्नि, क्षत्रिय, आदि में दो पैर तथा अन्त में चार पैरवाला, समान शरीर, धनुर्धारी, पूर्वदिशा, तेजस्वी।

मकर का स्वरूप—तमोगुण, भूमि में निवास, स्वामी शनि, पृष्ठोदय, दक्षिण दिशा, बड़ा शरीर, कबरैला, वन में फिरनेवाला, आदि में चार पैर तथा अन्त में बिना पैर, जल में चलनेवाला।

कुम्भ का स्वरूप—मध्यम शरीर, कबरैला, घड़ा लिये हुए मनुष्य का आकार, दो पैर, दिन में बलवान्, जल में स्थित, वातप्रकृति, शीर्षोदय, तमोगुण, शूद्रजाति, पश्चिम देश, स्वामी शनैश्चर।

मीन का स्वरूप—दिन में बलवान्, जल, सत्त्वगुण, ब्राह्मण, बिना पैर के, मध्यमदेह, उभयोदयी, पूछ और मुख मिली हुई दो मछलियों का सा आकार, स्वामी बृहस्पति।

पुरुषराशियों की पुरुषराशि से और स्त्रीराशियों की स्त्रीराशि से मित्रता होती है। मेष आदि राशियों को तीन बार घुमाने से पूर्व आदि दिशाओं के स्वामी क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ब्राह्मण वर्ण विदित हो जाते हैं।

चन्द्राशुद्धिः

मेष, सिंह तथा धन में चन्द्रमा होने पर वृष, कन्या तथा मकर राशिवालों की चन्द्राशुद्धि।

वृष, कन्या तथा मकर में चन्द्रमा होने पर मिथुन, तुला, कुम्भ की चन्द्राशुद्धि।

मिथुन, तुला, कुम्भ में चन्द्रमा होने पर कर्क, वृश्चिक, मीन की चन्द्राशुद्धि।

कर्क, वृश्चिक, मीन में चन्द्रमा होने पर मेष, सिंह, धन की चन्द्राशुद्धि ।

नवग्रहाः

रविविधुक्षितिजा बुधवाक्पती
भृगुशनी च तमः शिखिनो ग्रहाः ॥ २६ ॥

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु, ये नवग्रह हैं ॥ २६ ॥

दिगीशाः

रविः शुक्रो महीसूनुः स्वर्भानुर्भानुजो विधुः ।
बुधो बृहस्पतिश्चैव दिशामीशास्तथा ग्रहाः ॥ ३० ॥

सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनि, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति ये क्रम से पूर्व आदि दिशाओं के स्वामी हैं ॥ ३० ॥

सौम्यपापग्रहाः क्षीणश्चन्द्रश्च

क्षीणश्चन्द्रो रविर्भौमः पापो राहुः शनिः शिखी ।
बुधोऽपि तैर्युतः पापः शेषाश्चैव शुभग्रहाः ॥ ३१ ॥
कृष्णाष्टमी दलादूर्द्ध्वं यावच्छुक्लाष्टमी भवेत् ।
तावत्क्षीणशशी ज्ञेयः सम्पूर्णस्तदनन्तरम् ॥ ३२ ॥

क्षीण चन्द्रमा, सूर्य, मंगल, राहु, शनि, केतु ये पापग्रह हैं। पापग्रह से युक्त बुध भी पापग्रह हो जाता है शेष शुभ ग्रह हैं। कृष्णपक्ष की अष्टमी के उपरान्त शुक्लपक्ष की अष्टमी पर्यन्त क्षीण चन्द्रमा कहलाता है, उसके उपरान्त पूर्ण चन्द्र होता है॥३१–३२॥

यथाक्रमं वीर्यवन्तो ग्रहाः

शकुबुगुशुचराद्या वृद्धितो वीर्यवन्तः ॥ ३३ ॥

शनि, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रमा, सूर्य यथाक्रम पूर्व से पर अधिक बलवान् हैं ॥ ३३ ॥

ग्रहाणामुच्चादि

अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा
झषवणिजौ च दिवाकरादितुंगाः।
दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशै-
स्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः॥ ३४॥

मेष का सूर्य, वृष का चन्द्रमा, मकर का मंगल, कन्या का बुध, कर्क का बृहस्पति, मीन का शुक्र, तुला का शनि उच्च के होते हैं। उच्च से सातवाँ स्थान नीच होता है। जैसे तुला का सूर्य, वृश्चिक का चन्द्रमा, कर्क का मंगल, मीन का बुध, मकर का बृहस्पति, कन्या का शुक्र तथा मेष का शनि नीच होते हैं। १०। ३। २८। १५। ५। २७ २०। २०। ६ अंशों तक परमोच्च होते हैं। तु. १०। वृश्चिक ३। कर्क २८। मी. १५। म. ५। कन्या २७। मे. २०। धन २०। मि. ६ अंशों तक परम नीच होते हैं॥ ३४॥

मूलत्रिकोणानि

सिंहो वृषभमेषौ च कन्याधन्वितुलाघटाः।
रव्यादीनां क्रमान्मूलत्रिकोणा राशितः क्रमात्॥
कुम्भकर्कौ तु राहोः स्तः सिंहः केतोः प्रकीर्तितः॥३५॥

सूर्य का सिंह, चन्द्रमा का वृष, मंगल का मेष, बुध का कन्या, बृहस्पति का धन, शुक्र का तुला, शनि का कुम्भ, राहु का कुम्भ या कर्क, केतु का सिंह मूलत्रिकोण होते हैं॥ ३५॥

राहुकेतूनामुच्चादयः

उच्चं नृयुग्मं घटभं त्रिकोणं
कन्यागृहं शुक्रशनी च मित्रे।
सूर्यः शशांको धरणीसुतश्च
राहोरिपुर्विंशतिकः परांशः॥ ३६॥

राहु मिथुन राशि में उच्च का होता है उसका मूल त्रिकोण कुम्भ है, कन्या घर है, शुक्र तथा शनि मित्र हैं, सूर्य, चन्द्रमा और मंगल शत्रु हैं ॥ ३६ ॥

सिंहस्त्रिकोणं धनुरुच्चसंज्ञं
मीनो गृहं शुक्रशनी विपक्षौ ।
सूर्यारचन्द्राः सुहृदः समानौ
जीवेन्दुजौ षट् शिखिनः परांशाः ॥ ३७ ॥

केतु का मूल त्रिकोण सिंह है । धनराशि उच्च है, मीन घर है, शुक्र तथा शनि शत्रु हैं । सूर्य, मंगल, चन्द्रमा मित्र हैं, बुध तथा बृहस्पति सम हैं । ६ अंश पर्यन्त परमोच्च है । राहु ३ । ६ । ११ भावों में स्थित होकर सब दोषों को नाश करता है तथा कलियुग में प्रत्यक्ष फल देनेवाला है ॥ ३७ ॥

अन्यमते त्रिकोणानि

ये मन्दाद्यास्त्रिखेटाः कलियुगबलिनो विक्रमारित्रिकोणं
सूर्यस्य क्षोणिसूनोर्दशमभवगृहं कोणसंज्ञं पवित्रम् ।
अन्येषां खेचराणां नवमशिवमुखं तत्त्रिकोणं प्रसिद्धं
सर्वग्रन्थेषु धीरा मुनिजनसहिताः पाण्डुपुत्रा वदन्ति ॥३८॥

कलियुग में शनि, राहु, केतु बलवान् हैं, इनके त्रिकोण ३ । ६ हैं । सूर्य तथा मंगल के त्रिकोण १० । ११ हैं, शेष ग्रहों के त्रिकोण ५ । ९ हैं ऐसा सब ग्रन्थों का सिद्धान्त है ॥ ३८ ॥

राहोः सप्तमः केतुः

राहोश्छाया स्मृतः केतुर्यत्र राशौ भवेदयम् ।
तस्मात्सप्तमके केतू राहुः स्यान्नवमांशके ॥ ३९ ॥

राहु की छाया केतु कहलाती है और जिस राशि में राहु हो उस राशि से सातवें स्थान में केतु होता है ॥ ३९ ॥

ग्रहाणां मित्रादयः

शत्रूमन्दसितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषा रवे-
स्तीक्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्च सुहृदौ शेषाः समाः शीतगोः।
जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदो ज्ञोऽरिः सितार्कौ समौ
मित्रे सूर्यसितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चापरे ॥ ४० ॥
सूरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्योऽपरे त्वन्यथा
सौम्यार्कौ सुहृदौ समौ कुजगुरू शक्रस्य शेषावरी।
शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरस्य चान्येऽरयो
ये प्रोक्ताः सुहृदस्तु मन्दवदिमे राहोः परैस्तर्किताः ॥ ४१ ॥
राहोस्तु मित्राणि कवीज्यमन्दाः
केतोस्तथैवात्र वदन्ति तज्ज्ञाः ॥ ४२ ॥

सूर्य के शनि और शुक्र शत्रु हैं। बुध सम है। शेष ग्रह मित्र हैं। चन्द्रमा के सूर्य और बुध मित्र। शेष सम। शत्रु कोई नहीं। मंगल के बृहस्पति, चन्द्रमा और सूर्य मित्र। बुध शत्रु। शुक्र और शनि सम।

बुध के सूर्य और शुक्र मित्र। चन्द्रमा शत्रु। शेष सम।

बृहस्पति के बुध और शुक्र शत्रु। शनि सम। शेष मित्र।

शुक्र के बुध और शनि मित्र हैं, मंगल और बृहस्पति सम हैं। शेष ग्रह शत्रु हैं।

शनि के शुक्र और बुध मित्र। बृहस्पति सम। शेष ग्रह शत्रु हैं।

किसी के मत से शनि के समान राहु के भी मित्र आदि हैं। किसी के मत से शुक्र, बृहस्पति और शनि राहु के मित्र हैं। राहु के समान केतु के भी मित्र होते हैं। राहु के शुक्र और शनि मित्र। सूर्य, चन्द्रमा और मंगल शत्रु। बृहस्पति सम।

केतु के शुक्र और शनि शत्रु । सूर्य, चन्द्रमा और मंगल मित्र। बुध और बृहस्पति सम ।

चन्द्रमा, सूर्य, मंगल, बृहस्पति परस्पर मित्र हैं । बुध, शुक्र, शनि, राहु, केतु भी परस्पर मित्र हैं । चन्द्रमा आदि पूर्वोक्त ग्रहों की बुध आदि ग्रहों के साथ शत्रुता है ॥ ४०-४२ ॥

मैत्रीचक्रम्

ग्रह	मित्र	सम	शत्रु
सू.	मं. बृ. चं.	बु.	शु. श.
चं.	सू. बु	मं.बृ.शु.श.	०
मं.	चं. बृ. सू.	शु. श.	बु.
बु.	सू. शु.	मं. बृ. श.	चं.
बृ.	सू. मं. चं.	श.	बु. श.
शु.	बु. श.	मं. बृ	चं. सू.
श.	बु. शु.	बृ.	सू. चं. मं.
रा.	शु. श.	बृ.	सू. चं. मं.
के.	सू. चं. मं.	बु. बृ.	शु. श.

अतिमैत्री परमवैरं च

अतिमैत्री राहुशन्योरिन्दुगुर्वोः कुजार्कयोः ।
राहुरव्योः परं वैरं गुरुभार्गवयोरपि ॥
हिमांशुबुधयोर्वैरं विवस्वन्मन्दयोरपि ॥ ४३ ॥

राहु और शनि की, चन्द्रमा और बृहस्पति की, मंगल और सूर्य की बड़ी मित्रता है। सूर्य और राहु की, बृहस्पति और शुक्र कों, चन्द्रमा और बुध की, सूर्य और शनि की बड़ी शत्रुता है ॥४३॥

ग्रहाणां तात्कालिकमैत्री शत्रुता च

दशायबन्धुसहजस्वान्त्यस्थास्ते परस्परम् ।
अन्योन्यं मित्रतां यान्ति तत्कालं तानि वै मुने ॥ ४४ ॥
तथा त्रिकोणषष्ठाष्टसप्तैकस्थितखेचराः ।
अन्योन्यं रिपुतां यान्ति तत्कालं तानि वै मुने ॥ ४५ ॥

१० । ११ । ४ । ३ । २ । १२ स्थानों में स्थित ग्रह परस्पर तात्कालिक मित्र होते हैं। तथा त्रिकोण ५ । ९ । ६ । ८ । ७ । १ स्थानों में स्थित ग्रह तात्कालिक शत्रु होते हैं ॥ ४४-४५ ॥

अधिमित्राधिशत्रवः

तत्कालमित्रं च निसर्गमित्रं द्वयं भवेत्तत्त्वधिमित्रसंज्ञम् ।
तथैव शत्रोरधिशत्रुसंज्ञा चैकत्र शत्रुः समतामुपैति ॥ ४६ ॥

तत्काल मित्र और निसर्ग मित्र मिलकर अधिमित्र होते हैं। वैसे ही तत्काल शत्रु तथा निसर्ग शत्रु का नाम अधिशत्रु है। एक ओर से शत्रु, दूसरी ओर से मित्र ग्रह सम कहलाता है ॥ ४६ ॥

सूर्यादितः किं विचार्यम्

सूर्यादात्मपितृस्वभावनिरुजः शक्तिश्रियौ चिन्तये-
च्चेतोवृद्धिनृपप्रसादजननीसम्पत्करश्चन्द्रमाः ।
सत्त्वं रोगगुणानुजावनिसुतान् ज्ञातिं धरासूनुना
विद्यावन्धुविवेकमातुलसुहृद्वाक्कर्मकृद्बोधनः ॥ ४७ ॥
प्रज्ञावित्तशरीरपुष्टितनयज्ञानानि वागीश्वरात्
पत्नीवाहनभूषणानि मदनव्यापारसौख्यं भृगो-
रायुर्जीवनमृत्युकारणविपत्संपत्प्रदाता शनिः
सर्पेणैव पितामहं तु शिखिना मातामहं चिन्तयेत् ॥४८॥

आत्मा, पिता, स्वभाव, नीरोगता, सामर्थ्य, लक्ष्मी का विचार सूर्य से; चित्त, वृद्धि, राजा, प्रसन्नता, माता तथा सम्पत्ति का विचार चन्द्रमा से; पराक्रम, रोग, गुण, भाई, पृथ्वी, पुत्र तथा बिरादरी का विचार मंगल से; विद्या, बान्धव, विवेक, मामा, मित्र तथा वाणी का विचार बुध से; बुद्धि, धन, शरीर की पुष्टि, पुत्र तथा ज्ञान का विचार बृहस्पति से; स्त्री, वाहन, भूषण, कामदेव का व्यापार तथा सुख का विचार शुक्र से; आयु, जीवन, मृत्यु का कारण और विपत्ति का विचार शनि से; पितामह का विचार राहु से; मातामह का विचार केतु से करना चाहिए॥४७-४८॥

ग्रहाणामुदयास्तादिज्ञानम्

लग्न से दूसरे स्थान में जो ग्रह होता है वह उदय होने को तथा अष्टम राशि में जो ग्रह होता है वह अस्त (नाश) होने को तत्पर रहता है। लग्न से सप्तम राशि में जो ग्रह होता है वह अस्त होने को अभिमुख होता है। छठे स्थान में जो ग्रह होता है वह अस्त के सम्मुख होता है।

उदयादिफलम्

उदये सौख्यदा ज्ञेया वक्रे देशान्तरप्रदाः।
मार्गे ह्यारोग्यकर्त्तारश्चास्ते मानार्थहानिदाः॥ ४९ ॥

उदयी ग्रह सुख, वक्री ग्रह परदेश, मार्गी ग्रह आरोग्य, अस्त ग्रह आदर और धन का नाश करता है ॥ ४९ ॥

मित्रादिस्थफलानि

मित्रस्वर्क्षेत्रगाः स्वोच्चे त्वधिमित्रे समेऽपि वा।
सर्वे शुभफलाः प्रोक्ताः शत्रुगेहे त्वनिष्टदाः॥ ५० ॥

जो ग्रह मित्र के घर में हों या स्वक्षेत्री हों या अपने उच्च के हों या अधिमित्र या सम हों वे सब शुभ फल देनेवाले होते हैं। परन्तु जो ग्रह शत्रु के घर में हों वे अनिष्ट फल करनेवाले होते हैं॥५०॥

आत्मादीनां विचारः

कालात्मा दिनकृन्मनस्तु हिमगुः सत्त्वं कुजो ज्ञो वचः ।
जीवो ज्ञानसुखे सितश्च मदनो दुःखं दिनेशात्मजः॥५१॥

सूर्य आत्मा, चन्द्रमा मन, मंगल पराक्रम, बुध वाणी और बृहस्पति ज्ञान तथा सुख है। शुक्र कामदेव है। शनि दुःख है। यह कालपुरुष के अंगविभाग हैं। आत्मा आदि का विचार सूर्य आदि से करना चाहिए॥ ५१ ॥

ग्रहेषु राजादयः

राजानौ रविशीतगू क्षितिसुतो नेता कुमारो बुधः ।
सूरिर्दानवपूजितश्च सचिवौ प्रेष्यः सहस्रांशुजः ॥ ५२ ॥

सूर्य और चन्द्रमा राजा हैं, मंगल सेनापति हैं, बुध कुमार हैं, बृहस्पति तथा शुक्र मन्त्री हैं और शनि दास है॥ ५२ ॥

आत्मादीनां बलाबलविचारः

बलाबलाद्ग्रहाणां स्यादात्मादीनां बलाबलम् ।
नृपाद्याः प्रबलाः कुर्युः स्वरूपं शनिरन्यथा ॥ ५३ ॥
आदौ बलफलं प्रोक्तं ततो दृष्टिफलं स्मृतम् ।
ततो भावफलं प्रोक्तमिष्टानिष्टफलावहम् ॥ ५४ ॥
चेष्टाबलफलं चादौ स्थानवीर्यं ततो भवेत् ।
दिग्बलं च ततः प्रोक्तं कालायनबले ततः ॥
वक्रिणो बलिनः खेटाश्चेष्टाबलसमन्विताः ॥ ५५ ॥

ग्रहों के बलाबल से आत्मा आदि के बलाबल का विचार किया जाता है। पूर्वोक्त राजा आदि ग्रह बलवान् हों, तो पुरुष को भी अपने समान बनाते हैं। परन्तु शनि का विचार विपरीत है। सबसे पहले निसर्गबल का, तब दृष्टिफल, फिर भावफल (जिससे इष्ट या अनिष्ट का विचार होता है), फिर चेष्टाबल, फिर स्थानबल, दिग्बल, कालबल और अयनबल का विचार करे।

वक्रो ग्रह यदि बलवान् हों, तो उनको चेष्टाबल से युक्त कहते हैं ॥ ५३-५५ ॥

कालबलम्

निशायां बलिनश्चन्द्रकुजसौरा भवन्ति हि।
सर्वदा ज्ञो बली ज्ञेयो दिने शेषा द्विजोत्तम ॥ ५६ ॥

चन्द्रमा, मंगल, शनि रात्रि में; बुध सर्वदा; शेष ग्रह दिन में बलवान् होते हैं ॥ ५६ ॥

पक्षायनबलम्

कृष्णे च बलिनः क्रूराः सौम्या वीर्ययुताः सिते।
सौम्यायने सौम्यखेटो बली याम्यायनेऽपरः ॥ ५७ ॥

क्रूरग्रह कृष्णपक्ष में, सौम्यग्रह शुक्लपक्ष में, सौम्यग्रह उत्तरायण क्रूरग्रह दक्षिणायन में बलवान् होते हैं ॥ ५७ ॥

पूर्णबलादयः

स्वोच्चे शुभे बलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम्।
स्वर्क्षे दलं मित्रगेहे पादमात्रं प्रकीर्तितम् ॥ ५८ ॥
पादार्धं समभे प्रोक्तं व्यर्थनीचास्तशत्रुगे।
तद्वद्दुष्टफलं ब्रूयाद्व्यत्ययेन विचक्षणः ॥ ५९ ॥

यदि शुभग्रह अपने उच्च का हो, तो पूर्ण बली, अपने मूलत्रिकोण में चौथाई बलहीन, अपने घर में आधे बलवाला, मित्र के घर में चौथाई बलवाला होता है। सम के घर में अष्टमांश (आठवाँ हिस्सा) बलवाला तथा नीच या अस्त या शत्रु के घर में क्षीणबली होता है। बल के समान ही फल जानना चाहिए। दुष्टफल पूर्वोक्त फल के विपरीत हो जाता है। जैसे नीच का हो, तो शून्यबल पाता है इत्यादि ॥ ५८-५९ ॥

ग्रहाणां दिग्बलम्

बुधेज्यौ बलिनौ पूर्वे रविभौमौ च दक्षिणे ।
वारुणः सूर्यपुत्रश्च सितचन्द्रौ तथोत्तरे ॥ ६० ॥

बुध और बृहस्पति पूर्व में, सूर्य और मंगल दक्षिण में, शनि पश्चिम में, शुक्र और चन्द्रमा उत्तर में बलवान् होते हैं ।

कुण्डली में लग्न को पूर्वदिशा, सप्तमस्थान को पश्चिमदिशा, चतुर्थस्थान को दक्षिणदिशा, दशमस्थान को उत्तरदिशा समझना अर्थात् बुध, बृहस्पति लग्न में; शनि सप्तम में; सूर्य, मंगल चतुर्थ में; चन्द्रमा, शुक्र दशमस्थान में बलवान् होते हैं ॥ ६० ॥

ग्रहाणामेकराशिभोगकालः

मासं शुक्रबुधादित्याः सार्धमासं तु मंगलः ।
त्रयोदश गुरुर्मासांस्त्रिशन्मासान् शनैश्चरः ॥ ६१ ॥
मासानष्टादश तमः सपादद्विदिनं शशी ।
राहुवत्केतुरुक्तस्तु मुनिभिः पूर्वसूरिभिः ॥ ६२ ॥

सूर्य, बुध, शुक्र एक राशि में एक महीना रहते हैं । मंगल डेढ़ महीना, बृहस्पति १३ महीना, शनि ३० महीना, राहु और केतु १८ महीना, चन्द्रमा सवा दो दिन एक राशि में रहते हैं । वक्री या शीघ्री होने से कभी-कभी बुध आदि ग्रहों में अन्तर हो जाता है ॥ ६१–६२ ॥

स्वक्षेत्राणि

यस्य ग्रहस्य यो राशिस्तस्य तद्गृहमुच्यते ।
भौमोशनःसौम्यशशीनवित्सिता-
रेज्यार्किमन्दाङ्गिरसो गृहेश्वराः ॥
कन्याराहुगृहं प्रोक्तं मीनः केतुगृहं स्मृतम् ॥ ६३ ॥

सूर्य का सिंह, चन्द्रमा का कर्क, मंगल का मेष और वृश्चिक, बुध का मिथुन और कन्या, बृहस्पति का धन और मीन, शुक्र का

वृष और तुला, शनि का मकर और कुम्भ, राहु का कन्या, केतु का मीन स्वगृह कहलाता है ॥ ६३ ॥

ग्रहाणां बालाद्यवस्थाः

बालो रसांशै रसभे प्रदिष्ट-
स्ततः कुमारो हि युवाथ वृद्धः ।
मृतः क्रमादुत्क्रमतः समर्क्षे
बालाद्यवस्थाः कथिता ग्रहाणाम् ॥ ६४ ॥

ग्रहों की बाल आदि अवस्थाएँ इस प्रकार हैं । विषम राशि में ग्रह ६ अंश तक बालक रहता है । फिर ६ अंश तक कुमार, फिर ६ अंश तक तरुण, फिर ६ अंश तक वृद्ध, फिर ६ अंश तक मृत रहता है । सम राशि में इसके विपरीत अर्थात् पहले ६ अंश तक मृत, फिर वृद्ध इत्यादि ॥ ६४ ॥

अवस्थाफलानि

फलं तु किञ्चिद्वितनोति बाल-
श्चार्धं कुमारो यतते च पुंसाम् ।
युवा समग्रं खचरोऽथ वृद्धः
फलं च दुष्टं मरणं मृताख्यम् ॥ ६५ ॥

बालक ग्रह थोड़ा-सा फल देता है, कुमार ग्रह आधा फल देता है । तरुण ग्रह सम्पूर्ण फल देता है । वृद्ध ग्रह दुष्टफल देता है । मृत ग्रह मरण करता है ॥ ६५ ॥

जाग्रदाद्यवस्थाः

त्रिंशदंशं त्रिभागं च कल्पयित्वा पृथक् पृथक् ।
विषमादिक्रमेणैव समे वै विपरीतकम् ॥ ६६ ॥
विज्ञाय प्रथमं पुंसां जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिकाः ।
विशेषतः परीक्ष्यः स्याज्जागरः कार्यसाधकः ॥ ६७

स्वप्नावस्था मध्यफला उपदेष्टा गुरुर्यदि ।
निष्फला चरमावस्था ज्ञातव्या मुनिसत्तम ॥ ६८ ॥

प्रत्येक राशि के ३० अंशों के ३ भाग १०-१० अंशों में करे। विषम राशि में पहले १० अंश तक जाग्रत् अवस्था, फिर १० अंश तक स्वप्नावस्था, फिर १० अंश तक सुषुप्ति अवस्था होती है। सम राशि में विपरीत अर्थात् सुषुप्ति, स्वप्न, जाग्रत् क्रम से जाननी चाहिए । जाग्रत् अवस्था कार्यसाधन करनेवाली, स्वप्न अवस्था मध्यम फल देनेवाली, सुषुप्ति अवस्था निष्फल होती है । इसको अच्छी प्रकार विचार करे ॥ ६६-६८ ॥

दीप्ताद्यवस्थाः

स्वोच्चे दीप्तः कार्यसिद्धिश्च दीप्ते
नीचे दीनो दुःखदः स्यात्तदानीम् ।
मुदितो मित्रगेहस्थ आनन्दो मुदिते महान् ॥ ६९ ॥
स्वस्थः स्वगृहे ज्ञेयः कीर्त्तिर्लक्ष्मीस्तदा भवेत् ।
शत्रुगेहे स्थितः सुप्तः सुप्ते दुःखं रिपोर्भयम् ॥ ७० ॥
जितोऽन्येन निपीडितो धनहानिर्निपीडिते ।
नीचाभिमुखगो हीनो हीने च धननाशनम् ॥ ७१ ॥
मुषितोऽस्तंगतो ज्ञेयो मुषिते कार्यनाशनम् ।
सुवीर्य उच्चाभिलाषी सुवीर्ये रत्नसम्पदः ॥ ७२ ॥

जब ग्रह अपने उच्च का होता है, तो उसे दीप्त अवस्थावाला कहते हैं उसमें कार्यसिद्धि होती है ।

जब ग्रह नीच का हो, तो उसे दीन कहते हैं उसका फल दुःखप्राप्ति ।

जब अपने मित्र के घर में हो, तो उसे मुदित कहते हैं उसका फल बड़ा आनन्द ।

जब अपने घर का होता है, तो उसे स्वस्थ कहते हैं उसका फल कीर्त्ति और लक्ष्मी की प्राप्ति।

जब शत्रु के घर में हो, तो उसे सुप्त कहते हैं उसका फल दुःख तथा शत्रुभय।

जब किसी ग्रह को दूसरा ग्रह युद्ध में जीत लेवे, तो उसे निपीडित कहते हैं उसका फल धनहानि।

जब ग्रह नीच होने को सम्मुख हो, तो उसे हीन कहते हैं उसका फल धननाश।

जब ग्रह अस्त हो जावे, तो उसे मुषित कहते हैं उसका फल कार्यनाश।

जब ग्रह उच्च होने को तत्पर हो, तो उसे सुवीर्य कहते हैं उसका फल रत्न तथा सम्पत्ति की प्राप्ति ॥ ६९-७२ ॥

ग्रहाणां लज्जिताद्यवस्थाः

लज्जितो गर्वितश्चैव क्षुधितस्तृषितस्तथा।
मुदितः क्षोभितश्चैव ग्रहभावाः प्रकीर्त्तिताः ॥ ७३ ॥
पुत्रगेहगतः खेटो राहुकेतुयुतो भवेत्।
रविमन्दकुजैर्युक्तो लज्जितो ग्रह एव च ॥ ७४ ॥
तुंगस्थानगतो वापि त्रिकोणेऽपि भवेत्पुनः।
गर्वितः सोऽपि कथितो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥ ७५ ॥
शत्रुगेही शत्रुयुक्तो रिपुदृष्टो भवेद्यदि।
क्षुधितः स च विज्ञेयः शनियुक्तो यथा तथा ॥ ७६ ॥
जलराशौ स्थितः खेटः शत्रुणा चावलोकितः।
शुभग्रहा न पश्यन्ति तृषितः स उदाहृतः ॥ ७७ ॥
मित्रगेही मित्रयुक्तो मित्रेण चावलोकितः।
गुरुणा सहितो यश्च मुदितः स प्रकीर्त्तितः ॥ ७८ ॥
रविणा सहितो यश्च पापाः पश्यन्ति सर्वथा।

क्षोभितं तं विजानीयाच्छत्रुणा यदि वीक्षितः ॥ ७९ ॥
येषु येषु च भावेषु ग्रहास्तिष्ठन्ति सर्वथा ।
क्षुधिताः क्षोभिता वापि स नरो दुःखभाजनः ॥ ८० ॥
एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वभावेषु पण्डितैः ।
बलाबलविचारेण वक्तव्यः फलनिर्णयः ॥ ८१ ॥

लज्जित, गर्वित, क्षुधित, तृषित, मुदित और क्षोभित ये छः प्रकार के ग्रह होते हैं।

जब ग्रह पञ्चम स्थान में राहु, केतु, सूर्य, शनि तथा मंगल से युक्त हो, तो उसको लज्जित कहते हैं।

जब ग्रह उच्च स्थान में हो या त्रिकोण में हो, तो उसे गर्वित कहते हैं।

जब ग्रह शुक्र के घर में हो या शत्रु से युक्त या दृष्ट हो या शनि के साथ बैठा हो, तो उसे क्षुधित कहते हैं।

जब ग्रह जलराशि में स्थित हो या शत्रु से दृष्ट हो और शुभ ग्रह उसे न देखें, तो वह ग्रह तृषित कहलाता है।

जब ग्रह मित्र के घर में हो या मित्र से युक्त या दृष्ट हो या बृहस्पति सहित हो, तो वह मुदित कहलाता है।

जो ग्रह सूर्य के साथ हो या पापग्रह या शत्रुग्रह उसे देखते हों, तो वह ग्रह क्षोभित कहलाता है।

जिन-जिन भावों में क्षुधित या क्षोभित ग्रह हों, तो दुःख देने-वाले होते हैं।

इसी प्रकार सब भावों में बल और अबल का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए ॥ ७३-८१ ॥

अस्तलक्षणम्

रविणास्तमयो योगो वियोगस्तूदयो भवेत् ॥ ८२॥

जब ग्रह सूर्य के साथ हो, तो अस्त हो जाता है। जब सूर्य से पृथक् हो, तो उसका उदय होता है॥ ८२॥

वक्रग्रहादयः

सदैव वक्रिणौ दैत्यौ सूर्येन्दू शीघ्रगौ यतः।
सूर्यमुक्ता उदीयन्ते शीघ्राः खेटा धने रवेः॥ ८३॥
तृतीये च समाः प्रोक्ताश्चतुर्थे मन्दगामिनः।
भानोः खेटाः पञ्चमे च वक्राश्चाष्टमसप्तमे॥ ८४॥
अतिवक्राः स्मृता धर्मे दशमे मार्गगामिनः।
लाभद्वादशके शीघ्रा यदा वक्री भवेद्ग्रहः॥ ८५॥
सौम्योऽतिसौम्यश्चोग्रोऽतिपापः शीघ्रः स्वभाववत्।

राहु, केतु सदा वक्री होते हैं। सूर्य और चन्द्रमा शीघ्र चलनेवाले होते हैं।

जब ग्रह सूर्य से पृथक् हो जाते हैं, तो उनका उदय हो जाता है। सूर्य से दूसरे स्थान में ग्रहों की चाल शीघ्र हो जाती है, तीसरे घर में सम रहते हैं, चौथे स्थान में गति मन्द हो जाती है, सातवें और आठवें घर में वक्री हो जाते हैं, नवें स्थान में अतिवक्री हो जाते हैं, दसवें स्थान में मार्गी हो जाते हैं तथा ग्यारहवें और बारहवें स्थान में शीघ्री हो जाते हैं॥ ८३–८५॥

वक्रादिज्ञानम्

पूर्वास्ततः पश्चिम उद्गमोऽस्मा-
द्वक्रं ततोऽस्तः पर उद्गमः प्राक्।
मार्गी पुरस्तात्खलु दन्तदन्तै-
र्वेदैर्नृपैर्वेदरदैर्बुधः स्यात्॥ ८६॥

१. सूर्य के साथ या समीप रहने से ग्रह प्रायः अस्त हो जाते हैं तथा अशुभ फल देते हैं।

भृगोः सार्धद्विमासाष्टमासैस्त्र्यश्विदिनैः क्रमात् ।
नवभिस्त्र्यश्विदिवसैर्मासैरष्टमितैस्तथा ॥ ८७ ॥
भौमास्तादुदयस्तस्माद्वक्रं तदनुमार्गता ।
ततोऽस्त एवं क्रमतो वेदकाष्ठा द्विपंक्तिभिः ॥ ८८ ॥
मासैर्भुवासांघ्रिवेदैर्युगैः सांघ्रियुगैर्गुरोः ।
शनेः सांघ्रिभुवारामैर्वेदैः सार्धैश्च वह्निभिः॥ ८९ ॥

बुध पूर्व में अस्त होने के पश्चात् पश्चिम में उदय होता है, फिर वक्री होता है, फिर अस्त हो जाता है, फिर पूर्व में उदित होता है; फिर पूर्व में अस्त होने से पहिले मार्गी होता है। उसके दिनों की संख्या इस प्रकार है—३२ । ३२ । ४ । १६ । ४ । ३२ ॥

शुक्र के दिनों की संख्या इस प्रकार है—७५ । २४० । २३ । ९ । २३ । २४० ॥

मंगल अस्त होने के बाद उदयी होता है, फिर वक्री होता है, फिर मार्गी होता है, फिर अस्त हो जाता है। इस क्रम से मास-संख्या इस प्रकार है—४ । १० । २ । १० ॥

बृहस्पति के मासों की संख्या इस प्रकार है—१ । ४$\frac{1}{4}$ । ४ । ४$\frac{1}{4}$॥

शनि के मासों की संख्या इस प्रकार है—१$\frac{1}{4}$ । ३ । ४ । ३$\frac{1}{2}$ ॥ ८६–८९ ॥

वक्रग्रहफलम्

क्रूरा वक्रा महाक्रूराः सौम्या वक्रा महाशुभाः ॥ ९० ॥

क्रूर ग्रह वक्री होने पर अति क्रूर फल देते हैं। सौम्य ग्रह वक्री होने पर अति शुभ फल देते हैं ॥ ९० ॥

ग्रहाणां दोषपरिहारः

राहुदोषं बुधो हन्यादुभयोस्तु शनैश्चरः ।
त्रयाणां भूमिजो हन्ति चतुर्णां दानवार्चितः ॥ ९१ ॥

पञ्चानां देवमन्त्री च षण्णां दोषं तु चन्द्रमाः ।
सप्त दोषं रविर्हन्याद्विशेषादुत्तरायणे ॥ ६२ ॥

राहु के दोष को बुध; राहु और बुध दोनों के दोषों को शनि; राहु, बुध और शनि तीनों के दोषों को मंगल; उक्त चारों के दोषों को शुक्र; उक्त पाँचों के दोषों को बृहस्पति; उक्त छः ग्रहों के दोषों को चन्द्रमा; उक्त सात ग्रहों के दोषों को सूर्य नष्ट करता है । उक्त दोषों की शान्ति विशेषतः उत्तरायण में होती है ॥ ६१–६२ ॥

दूसरा अध्याय समाप्त ।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

तीसरा अध्याय

षोडश संस्काराः

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च।
नामक्रिया निष्क्रमणोऽन्नाशनं वपनक्रिया ॥ १ ॥
कर्णवेधो व्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः।
केशान्तः स्नानमुद्वाहो विवाहाग्निपरिग्रहः ॥
त्रेताग्निसंग्रहश्चेति संस्काराः षोडश स्मृताः ॥ २ ॥

गर्भाधान १, पुंसवन २, सीमन्त ३, जातकर्म ४, नामकरण ५, निष्क्रमण ६, अन्नप्राशन ७, चूड़ाकरण ८, कर्णवेध ९, व्रतबन्ध १०, वेदारम्भ ११, केशान्त १२, समावर्त्तन १३, विवाह १४, अग्न्याधान १५, त्रेताग्निसंग्रह १६ ये षोडश संस्कार हैं ॥ १-२ ॥

प्रथमरजोदर्शनविचारः

आद्यं रजः शुभं माघमार्गराधेयफाल्गुने।
ज्येष्ठश्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा ॥ ३ ॥
श्रतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे।
मध्यं च मूलादितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत् ॥ ४ ॥
भद्रा निद्रासंक्रमेदर्शरिक्ता
सन्ध्या षष्ठी द्वादशी वैधृतेषु।

रोगेऽष्टम्यां चन्द्रसूर्योपरागे
पाते चाद्यं नो रजोदर्शनं सत् ॥ ५ ॥

माघ, मार्गशीर्ष, वैशाख, कार्त्तिक, फाल्गुन, ज्येष्ठ और श्रावण इन मासों में शुक्लपक्ष में, शुभवार में, शुभलग्न में, दिन में, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृदु, क्षिप्र, ध्रुव, स्वाती नक्षत्रों में, सफ़ेद वस्त्र पहिना हो, तो प्रथम रजोदर्शन शुभ है। मूल, पुनर्वसु, मघा, मिश्र नक्षत्रों में मध्यम है। शेष मास, नक्षत्र आदि में अशुभ है। भद्रा, निद्रा, संक्रान्ति, अमावास्या, रिक्ता तिथि, सन्ध्या समय, षष्ठी, द्वादशी, वैधृति, अष्टमी, चन्द्रसूर्यग्रहण समय, पात में जब स्त्री रोगिणी हो, इनमें प्रथम रजोदर्शन शुभ नहीं है ॥३-५॥

गर्भाधानम्

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं
दास्रं पौष्णमघोपरागदिवसान्पातं तथा वैधृतिम् ।
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं स्वपत्नीगमे
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥ ६ ॥

तीन प्रकार का गण्डान्त, जन्मनक्षत्र, वैनाशिक नक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, मघा, ग्रहणदिन, पात, वैधृति, माता पिता का श्राद्ध-दिन, दिन में, परिघ, उत्पात, हतनक्षत्र, जन्म-राशि से अष्टम राशि, पापनक्षत्र इनमें गर्भाधान अशुभ है ॥ ६ ॥

भद्रा षष्ठी पर्वरिक्ताश्च सन्ध्या
भौमार्कार्कीनाद्यरात्रीश्चतस्रः ।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्र-
ब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे सत् ॥ ७ ॥

भद्रा, षष्ठी, पर्व, रिक्ता, सन्ध्या, मंगल, रवि, शनि, पहली चार रात्रियाँ गर्भाधान में वर्जित हैं। तीनों उत्तरा, मृगशिर,

हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा इन नक्षत्रों में गर्भाधान शुभ है ॥ ७ ॥

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभैश्च पापै-
स्त्र्यायारिगैः पुंग्रहदृष्टलग्ने ।
ओजांशकेऽब्जेऽपि च युग्मरात्रौ
चित्रादितीज्याश्विषु मध्यमं स्यात् ॥ ८ ॥

केन्द्र, त्रिकोण में शुभग्रह हों, ३ । ६ । ११ स्थानों में पापग्रह हों, लग्न को पुरुषग्रह देखता हो, विषम नवांश में चन्द्रमा हो, तथा समरात्रि हो, तो गर्भाधान शुभ है । चित्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी नक्षत्रों में गर्भाधान मध्यम है ॥ ८ ॥

बलान्वितावर्कसितौ स्वभांशे
पुंसां यदा चोपचये भवेताम् ।
तथाङ्गनानां शशिभूमिजौ वा
तदा भवेद्गर्भसमुद्भवश्च ॥ ९ ॥

जब पुरुष के सूर्य, शुक्र अपने नवांश में अथवा उपचयस्थान में बलवान् होकर बैठे हों, स्त्री के चन्द्रमा तथा मंगल भी उसी प्रकार बैठे हों, तब गर्भाधान होता है ॥ ९ ॥

स्त्रीणां विधौ चोपचये कुजेन
दृष्टेऽपि गर्भग्रहणस्य योगः ।
पुंसां तथा गीष्पतिना प्रदृष्टे
स्त्रीपुंसयोर्योगमतोऽन्यथा न ॥ १० ॥

जब स्त्री के उपचयस्थान में चन्द्रमा को मंगल देखे तथा पुरुष के चन्द्रमा को बृहस्पति देखे, तो गर्भधारण का योग होता है, अन्यथा नहीं ॥ १० ॥

पुंसवनम्

मूलादित्यशशांकपुष्यहरिभे हस्ते च पुंवासरे

लग्ने कुम्भनृयुग्मसिंहगुरुभे नन्दे सभद्रे तिथौ ।
मासे युग्मतृतीयकेऽथ धवले पक्षे शुभे रात्रिपे
कुर्यात्पुंसवनं च वृद्धिसुखदं केन्द्रत्रिकोणे शुभे ॥ ११ ॥

मूल, पुनर्वसु, मृगशिर, पुष्य, श्रवण और हस्त इन नक्षत्रों में; पुरुषवारों में; कुम्भ, मिथुन, सिंह, धनु और मीन इन लग्नों में; नन्दा और भद्रा तिथियों में; दूसरे अथवा तीसरे महीने में; शुक्लपक्ष में; चन्द्रमा की शुद्धि में; केन्द्र त्रिकोण में जब शुभग्रह हों, ऐसे मुहूर्त्त में पुंसवनकर्म करने से वृद्धि तथा सुख मिलता है ॥ ११ ॥

पुंसवनादिकर्मणि नव योगा वर्ज्याः

व्याघातं परिघं वज्रं व्यतीपातोऽथ वैधृतिः ।
गण्डातिगण्डशूलं च विष्कुम्भं नव वर्जयेत् ॥
कर्णवेधे विवाहे च व्रते पुंसवने तथा ॥ १२ ॥

व्याघात, परिघ, वज्र, व्यतीपात, वैधृति, गण्ड, अतिगण्ड, शूल तथा विष्कुम्भ ये ९ योग कर्णवेध, विवाह, व्रतबन्ध और पुंसवन में वर्जित हैं ॥ १२ ॥

सीमन्तः

चतुर्थे सावने मासि षष्ठे वाप्यथवाष्टमे ।
अरिक्तापर्वदिवसे कुजजीवार्कवासरे ॥ १३ ॥
सीमन्ते तिष्यहस्तादितिहरिशशभृत्पौष्णविध्युत्तराख्याः
सीमन्तलग्नादेकोऽपि क्रूरो व्ययसुताष्टसु ।
हन्ति सीमन्तिनीं नारीं तद्गर्भं वा न संशयः ॥ १४ ॥

चौथे, छठे अथवा अष्टम (सावन) मास में, रिक्ता, पर्व-तिथियों को छोड़कर, मंगल, बृहस्पति, रविवारों में, पुष्य, हस्त, पुनर्वसु, श्रवण, मृगशिर, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा नक्षत्रों में सीमन्त शुभ है। यदि सीमन्त लग्न से १२।५।८ स्थानों में एक भी क्रूर ग्रह

हो, तो सीमन्तिनी स्त्री का अथवा गर्भ का नाश होता है॥१३-१४॥

एते च पुंसवनादिसंस्काराः सकृदेव।
सकृच्च संस्कृता नारी सर्वगर्भेषु संस्कृता।

यदि एक गर्भ में भी स्त्री के पुंसवन आदि संस्कार हो जावें, तो सब गर्भों में संस्कार किये के समान हो जाता है।

जातकर्म

जन्मतोऽनन्तरं कार्यं जातकर्म यथाविधि।
दैवादतीतकालं चेदतीते सूतके भवेत्॥ १५॥

जन्म के उपरान्त ही जातकर्म यथाविधि करना चाहिए। यदि दैववशात् उस समय न हो सके, तो जब जननाशौच व्यतीत हो, तब करना चाहिए॥ १५॥

मृदुध्रुवचरक्षिप्रभेष्वेषामुदयेऽपि च।
गुरौ शुक्रेऽथवा केन्द्रे जातकर्म च नाम च॥ १६॥

मृदु, ध्रुव, चर और क्षिप्र नक्षत्रों में जब बृहस्पति या शुक्र केन्द्र में हों, तब जातकर्म और नामकर्म करना चाहिए॥ १६॥

नामकरणम्

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं
पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि।
एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे
मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात्॥ १७॥

असम्भवेऽष्टादशे एकोनविंशे दिने शतरात्रे व्युष्टे अयने संवत्सरे गते वा कुर्यात्।

मुख्यकाले चन्द्रानुकूल्यादि न विचारणीयम्। अतिक्रान्ते तु विचारावश्यकता।

वैधृतिव्यतीपातसंक्रान्तिग्रहणदिनामावास्याभद्रासु नाम-

कर्म्मादि शुभकर्म न कार्यम्। अत्र च गुरुशुक्रास्तादिदोषो नास्ति। अपराह्णे रात्रौ च न कार्यम्।

तच्च नाम कवर्गादिषु तृतीयचतुर्थपञ्चमवर्णैर्हकारान्यतमवर्णाद्यवयवकं यरलवान्यतमवर्णयुतम् ऋऌवर्णैर्रहितं विसर्गान्तं पित्रादिपुरुषत्रयानुरूपं शत्रुवाचकभिन्नं तद्धितान्तभिन्नं कृत्प्रत्ययान्तं द्व्यक्षरं चतुरक्षरं वा पुंसामयुग्माक्षरं स्त्रीणां कार्यम्।

पर्व, रिक्ता तिथियों को छोड़कर शुभ वार में; एकादश या द्वादश दिन में; मृदु, ध्रुव, क्षिप्र, चर नक्षत्रों में जातकर्म या नामकरण करना चाहिए ॥ १७ ॥

यदि उक्त दिन में किसी कारणवश न हो सके, तो १८ या १९ या १०० दिन बीतने पर या छः महीने में या साल भर में अवश्य करना चाहिए।

यदि मुख्य समय में संस्कार किया जाय, तो शुभतिथि, नक्षत्र, चन्द्रमा आदि का विचार न करे। मुख्य काल बीतने पर विचार अवश्य करे।

मुख्य काल में भी वैधृति, व्यतीपात आदि पड़ें, तो शुभ कर्म न करे। केवल मलमास, गुरु शुक्रास्तादि दोष इसमें नहीं होता है। अपराह्ण तथा रात्रि में नामकरण संस्कार न करना चाहिए।

राशि का नाम शतपदचक्रानुसार ही होता है। व्यावहारिक नाम कवर्ग आदि वर्गों में तीसरा, चौथा, पाँचवाँ वर्ण तथा हकार इनमें से कोई वर्ण जिसके आदि में हो य, र, ल, व में से किसी अक्षर से युक्त ऋ, ऌ अक्षरों से रहित अन्त में विसर्गवाला पिता आदि तीन पुरुषों में से किसी का अनुरूप, शत्रु के नाम से भिन्न, तद्धितप्रत्ययान्त से भिन्न, कृदन्त, दो अक्षर या चार अक्षरवाला (अक्षर से अच् लिया जाता है) ब्राह्मण का शर्मान्त,

क्षत्रिय का वर्मान्त, वैश्य का गुप्तान्त, शूद्र का दासान्त ऐसा नाम शुभकारक होता है।

अन्नप्राशनम्

रिक्तानन्दाष्टवर्ज्जं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारान्
लग्नं जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं मीनमेषालिकं च।
हित्वा षष्ठात्समे मास्यथ मृगदृशां पञ्चमादोजमासे
नक्षत्रैः स्यात्स्थिराख्यैः समृदुलघुचरैर्बालकान्नाशनं सत् ॥ १८॥

रिक्ता, नन्दा, अष्टमी और द्वादशी तिथियों को; तथा शनि, मंगल, रविवारों को; जन्मलग्न से अष्टम लग्न तथा मीन, मेष, वृश्चिक लग्नों को छोड़कर पुत्र का छठे मास से सम मास में; तथा कन्या का पञ्चम मास से विषम मास में; स्थिर, मृदु, लघु, चर नक्षत्रों में अन्नप्राशन शुभ है ॥ १८ ॥

केन्द्रत्रिकोणसहजेषु शुभैः खशुद्धे
लग्ने त्रिलाभरिपुगैश्च वदन्ति पापैः।
लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं प्रशस्तं
मैत्राम्बुपानिलजनुर्भमसच्च केचित् ॥ १९ ॥

केन्द्र, त्रिकोण, सहज स्थानों में शुभ ग्रह हों, दशम शुद्ध हो, ३। ११। ६ स्थानों में पापग्रह हों, लग्न ६। ८ स्थानों में चन्द्रमा न हो, तो शुभ है। कोई आचार्य अनुराधा, शतभिषा, स्वाती नक्षत्रों को भी अशुभ बतलाते हैं ॥ १९ ॥

क्षीणेन्दुपूर्णचन्द्रेज्यज्ञभौमार्कार्किभार्गवैः।
त्रिकोणव्ययकेन्द्राष्टस्थितैरुक्तं फलं ग्रहैः ॥ २० ॥
भिक्षाशी यज्ञकृद्दीर्घजीवी ज्ञानी च पित्तरुक्।
कुष्ठी चान्नक्लेशवातव्याधिमान्भोगभागिति ॥ २१ ॥

रविवारोऽपि ग्रन्थान्तरानुसारेण ग्राह्यः।

यदि क्षीण चन्द्रमा, पूर्ण चन्द्रमा, बृहस्पति, बुध, मंगल, सूर्य,

शनि, शुक्र, त्रिकोण, व्यय, केन्द्र, अष्टम स्थानों में हों, तो उनका फल यह है कि भिक्षा माँगनेवाला, यज्ञ करनेवाला, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पित्तरोगवाला, कुष्ठी, अन्न क्लेशवाला, वातव्याधिवाला तथा भोगी हो । (किसी-किसी ग्रंथ में रविवार भी उक्त है) ॥ २०-२१ ॥

कर्णवेधः

हित्वैतांश्चैत्रपौषावमहरिशयनं जन्ममासं च रिक्तां
युग्माब्दं जन्मतारामृतुमुनिवसुभिः सम्मिते मास्यथो वा ।
जन्माहात्सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे-
ऽथोजाब्दे विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः ॥२२॥

तीसरे या पाँचवें वर्ष में, चैत्र और पौष मासों को, अवमतिथि तथा चातुर्मास, जन्ममास, रिक्तातिथि, सम वर्षों को तथा जन्मनक्षत्र को छोड़कर ६ । ७ । ८ मासों में अथवा जन्मदिन से बारहवें अथवा सोलहवें दिन बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रवार में, विषम वर्ष में, श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृदु, लघु नक्षत्रों में कर्णवेध शुभ है ॥ २२ ॥

संशुद्धे मृतिभवने त्रिकोणकेन्द्र-
त्र्यायस्थैः शुभखचरैः कवीज्यलग्ने ।
पापाख्यैररिसहजायगेहसंस्थै-
र्लग्नस्थे त्रिदशगुरौ शुभावहः स्यात् ॥ २३ ॥

अष्टमस्थान शुद्ध हो, त्रिकोण, केन्द्र, ३ । ११ स्थानों में शुभ ग्रह हों, बृहस्पति या शुक्र लग्न में हों, पापग्रह ३ । ६ । ११ स्थानों में हों, लग्न में बृहस्पति हो, तो शुभ है ॥ २३ ॥

चूडाकरणम्

चूडावर्षात्तृतीयात्प्रभवति विषमेऽष्टार्करिक्ताद्यषष्ठी
पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम् ।

वारे लग्नांशयोश्चास्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते
शाक्रोपेतैर्विमैत्रैर्मृदुचरलघुभैरायषट्त्रिस्थपापैः ॥ २४॥

तीसरे वर्ष से विषम वर्ष में, अष्टमी, सप्तमी, रिक्ता, प्रतिपदा, षष्ठी, पर्व को छोड़कर, चैत्रमास को छोड़कर उत्तरायण में, बुध, चन्द्र, शुक्र, बृहस्पतिवार में, लग्नेश या लग्न का नवांशेश अष्टम में न हो, अष्टम शुद्ध हो, ज्येष्ठा, अनुराधा नक्षत्र को छोड़कर, मृदु, चर, लघु नक्षत्रों में ३ । ६ । ११ स्थानों में जब पापग्रह हों, तब चूड़ाकर्म शुभ है ॥ २४ ॥

क्षीणचन्द्रकुजसौरिभास्करै-
मृत्युशस्त्रमृतिपंगुताज्वराः ।
स्युः क्रमेण बुधजीवभार्गवैः
केन्द्रगैश्च शुभमिष्टतारया ॥ २५ ॥

यदि क्षीण चन्द्र, मङ्गल, शनि, सूर्य केन्द्र में हों, तो क्रम से मृत्यु, शस्त्र से मृत्यु, लूलापन तथा ज्वर होते हैं। यदि केन्द्र में बुध, बृहस्पति, शुक्र हों तथा तारा अच्छी हो, तो शुभ होता है ॥ २५ ॥

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत् ।
पञ्चवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥ २६ ॥

यदि बालक की माता के पेट में ५ महीने से अधिक का गर्भ हो, तो चूड़ाकर्म शुभ नहीं है। यदि बालक की अवस्था ५ वर्ष से अधिक हो, तो माता के गर्भिणी होने पर भी चूड़ाकर्म करना चाहिए ॥ २६ ॥

तारादौष्ट्येऽब्जे त्रिकोणोच्चगे वा
क्षौरं सत्स्यात्सौम्यमित्रस्ववर्गे ।
सौम्ये भेऽब्जे शोभने दुष्टतारा
शस्ता ज्ञेया क्षौरयात्रादिकृत्ये ॥ २७ ॥

यदि दुष्ट तारा हो परन्तु चन्द्रमा, त्रिकोण या उच्च का हो, अथवा सौम्यग्रह, मित्रगृह अथवा अपने वर्ग का हो, तो और शुभ है। यदि चन्द्रमा शुभ हो, तो दुष्ट तारा का दोष क्षीर तथा यात्रा आदि शुभ कार्यों में नहीं होता है ॥ २७ ॥

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाचरेत् ।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेऽपि नेष्यते ॥ २८ ॥

जिसकी माता रजोवती हो या १० दिन के भीतर माता प्रसूता हो, तो उस बालक का चूड़ाकर्म न करना चाहिए। ज्येष्ठ पुत्र का चूड़ाकर्म ज्येष्ठ के महीने में न करना चाहिए । किसी आचार्य का मत है कि मार्गशीर्ष में चौल न करना चाहिए ॥ २८ ॥

अक्षरारम्भः

गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य पञ्चमाब्दके
तिथौ शिवार्कदिग्द्विषट्शरत्रिके रवावुदक् ।
लघुश्रवोऽनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे
चरोनसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रहः सतां दिने ॥ २९ ॥

गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी का पूजन करके पाँचवें वर्ष में, चतुर्दशी सप्तमी, दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पञ्चमी, तृतीया तिथि को, उत्तरायण में, लघु, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा तथा अनुराधा इन नक्षत्रों में, चर लग्न को छोड़-कर शुभ लग्न में, अच्छे वार में अक्षरारम्भ कराना चाहिए॥ २९ ॥

विद्यारम्भः

पञ्चवर्षे उदगयने कुम्भादित्यविवर्जिते ।
मृगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये
गुरुद्वयेऽर्कजीवविर्त्सितेऽह्नि षट्शरत्रिके ।
शिवार्कदिग्द्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः
शुभैरधीतिरुत्तमा त्रिकोण केन्द्रगैः स्मृता ॥३०॥

पाँचवें वर्ष उत्तरायण में, कुम्भ का सूर्य छोड़कर विद्यारम्भ करना। मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य तथा आश्लेषा इन नक्षत्रों में, बृहस्पति, बुध तथा शुक्रवार को, ६।५। ३।१४।७।१०।२ तिथियों में, किसी आचार्य के मत से ध्रुव, रेवती तथा अनुराधा इन नक्षत्रों में त्रिकोण तथा केन्द्र में शुभ ग्रह होने पर विद्यारम्भ शुभ है ॥ ३० ॥

उपनयनम्

गर्भाष्टमेऽष्टमे वाऽब्दे ब्राह्मणस्योपनायनम्।
राज्ञामेकादशे सैके विशामेके यथाकुलम् ॥ ३१ ॥

ब्राह्मण का उपनयन गर्भाष्टम या अष्टम वर्ष में, क्षत्रिय का ग्यारहवें वर्ष में, वैश्य का बारहवें वर्ष में या सबका अपने कुल के अनुसार करना चाहिए ॥ ३१ ॥

आषोडशको विप्रो नोपनीयः कदाचन।
क्षत्रियो विंशतेरूर्ध्वं न वैश्यः पञ्चविंशतिः ॥ ३२ ॥

सोलह वर्ष के उपरान्त ब्राह्मण का, बीस वर्ष के उपरान्त क्षत्रिय का, पचीस वर्ष के उपरान्त वैश्य का उपनयन कदापि नहीं करना चाहिए ॥ ३२ ॥

अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः।
सावित्रीपतिता व्रात्या व्रात्यस्तोमादृते क्रतोः ॥ ३३ ॥

यदि यथोचित समय में इन तीनों वर्णों का संस्कार न किया जावे, तो वे सावित्रीपतित तथा व्रात्य अर्थात् संस्कारहीन हो जाते हैं। व्रात्यस्तोम यज्ञ बिना किये उनका उपनयन नहीं हो सकता है॥ ३३ ॥

उपनयने गुरुसूर्यशुद्धिः

शस्ते शशिनि सुरेज्ये सवितरि शस्ते च मेखलाबन्धः।

वटुजन्मराशेः

,, १।३।६।१० स्थानेषु गोचरे स्थितो गुरुः पूज्यः।

,, २।५।७।६।११ स्थानेषु स्थितो गुरुः शुद्धः।

,, ४।८।१२ स्थानेषु स्थितो गुरुर्वर्ज्यः।

,, १।२।५।७।६ स्थानेषु स्थितः सूर्यः पूज्यः।

,, ३।६।१०।११ स्थानेषु स्थितः सूर्यः शुभः।

,, ४।८।१२ स्थानेषु स्थितः सूर्यो वर्ज्यः।

जब गुरु, सूर्य तथा चन्द्र शुद्ध हों, तब मेखलाबन्धन अर्थात् व्रतबन्ध करना चाहिए। वटु की जन्मराशि से गोचर में—

१।३।६।१० स्थानों में स्थित बृहस्पति पूज्य है।

२।५।७।६।१० स्थानों में स्थित बृहस्पति शुभ है।

४।८।१२ स्थानों में स्थित बृहस्पति वर्जित है।

१।२।५।७।६ स्थानों में स्थित सूर्य पूज्य है।

३।६।१०।११ स्थानों में स्थित सूर्य शुभ है।

४।८।१२ स्थानों में स्थित सूर्य वर्जित है।

गुरुशुद्धिः

वटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तमः।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयान्यत्र निन्दितः॥ ३४॥
स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः।
रिष्फाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसन्॥ ३५॥

वटु या कन्या की जन्मराशि से त्रिकोण, लाभ, द्वितीय तथा सप्तम स्थान में गोचर में स्थित बृहस्पति श्रेष्ठ है, १०।६।३।१ स्थानों का बृहस्पति पूजा करने से शुभ होता है, ४।८।१२ स्थानों में स्थित बृहस्पति निन्दित है। यदि बृहस्पति अपने उच्च का, अपनी राशि का, अपने मित्र के घर का, अपने नवांश या वर्गोत्तम का हो, तो ४।८।१२ स्थानों में भी शुभ है। परन्तु

यदि नीचस्थ अथवा शत्रुगृही हो, तो शुभ स्थानों में भी अशुभ है ॥ ३४-३५ ॥

उच्चस्थादिगुरौ शुभम्

झषचापकुलीरस्थो जीवोऽप्यशुभगोचरः ।
अतिशोभनतां दद्याद्विवाहोपनयनादिषु ॥ ३६ ॥

यदि बृहस्पति धन, मीन या कर्कराशि का हो, गोचर में चाहे अशुभ भी हो, तब भी विवाह, उपनयन आदि में अत्यन्त शुभ फल देता है ॥ ३६ ॥

बृहस्पतिपूजा

व्रते जन्मत्रिखारिस्थो जीवोऽपीष्टोऽर्चनात्सकृत् ।
शुभोऽतिकाले तुर्याष्टव्ययस्थो द्विगुणार्चनात् ॥ ३७ ॥
व्रतकाले तु संप्राप्ते शुद्धिर्यस्य न जायते ।
कृत्वार्चां शक्तितः पश्चाद्विधेयं मौञ्जिबन्धनम् ॥ ३८ ॥

यदि १ । ३ । १० । ६ स्थानों में बृहस्पति हो, तो पूजा करने से व्रतबन्ध में शुभ होता है । यदि अतिकाल हो गया हो तथा ४ । ८ । १२ स्थानों में हो, तो द्विगुण पूजन करने से शुभदायी होता है । जब व्रतबन्ध के समय शुद्धि न हो, तो यथाशक्ति पूजन करके व्रतबन्ध करना चाहिए ॥ ३७-३८ ॥

अष्टकवर्गशुद्धिः

अष्टवर्गविशुद्धेषु गुरुशीतांशुभानुषु ।
व्रतोद्वाहौ च कर्त्तव्यौ गोचरे न कदाचन ॥ ३९ ॥

बृहस्पति, सूर्य, चन्द्रमा, अष्टकवर्ग में शुद्ध हों, तब व्रतबन्ध या विवाह करना चाहिए, गोचर की शुद्धि से नहीं ॥ ३९ ॥

वेधविचारः

प्राशनेऽन्नस्य चूडायां विद्धमृक्षं परित्यजेत् ।
चक्रे सप्तशलाकाख्ये सर्वकर्माणि निश्चितम् ॥

वर्जयित्वा विवाहं च कुर्याद्वेधस्य निर्णयम् ॥ ४० ॥

अन्नप्राशन और चूड़ाकरण में विद्ध नक्षत्र को छोड़ देना चाहिए। विवाह को छोड़कर अन्यत्र सब शुभ कार्यों में सप्तशलाकाचक्र से वेध का निर्णय करना चाहिए ॥ ४० ॥

अनध्यायाः

शुचिशुक्रपौषतपसां
दिगशिवरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः ।
भूतादित्रितयाष्टमि-
संक्रमणं च व्रतेष्वनध्यायाः ॥ ४१ ॥

आषाढ़ शुक्ल दशमी, ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया, पौष शुक्ल एकादशी, माघ शुक्ल द्वादशी, चतुर्दशी, पौर्णमासी, कृष्णपक्ष में अमावास्या, प्रतिपदा, अष्टमी, संक्रान्तिदिन ये व्रतबन्ध में अनध्याय हैं ॥ ४१ ॥

अर्कतर्कत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः ।
रात्र्यर्धसार्धप्रहरयाममध्यस्थितैः क्रमात् ॥ ४२ ॥

द्वादशी के दिन अर्ध रात्रि से पूर्व त्रयोदशी, षष्ठी के दिन डेढ़ पहर से पूर्व सप्तमी, तृतीया के दिन एक पहर से पूर्व चतुर्थी प्रवृत्त हो, तो प्रदोप हो जाता है, वह व्रतबन्ध में वर्जित है ॥ ४२ ॥

चतुर्दशीद्वयं चैव प्रतिपच्चाष्टमी तथा ।
पक्षयोरुभयोरेकमनध्यायाष्टकं विदुः ॥ ४३ ॥

चतुर्दशी, पौर्णमासी, कृष्णपक्ष में अमावास्या, प्रतिपदा, अष्टमी, दोनों पक्षों में आठ अनध्याय हैं ॥ ४३ ॥

अष्टकासु च सर्वासु युगमन्वन्तरादिषु ।
संध्यायां गर्जिते मेघे उल्काकरकादिपातने ॥
अनध्यायं प्रकुर्वीत तथा चोपपदादिषु ॥ ४४ ॥

अष्टका, युगादि, मन्वन्तरादि, संध्या समय, मेघ के गर्जने पर, उल्कापात, करकापात, उपपदादि तिथियों में अनध्याय होता है ॥ ४४ ॥

वर्ज्यकालः

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके।
प्राक्संध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहे ॥ ४५ ॥

कृष्णपक्ष में, प्रदोष में, अनध्याय में, शनिवार को रात्रि में, अपराह्ण में, गलग्रह में तथा जब पहले दिन सन्ध्या के समय मेघगर्जन हुआ हो, तो व्रतबन्ध करना अशुभ है ॥ ४५ ॥

मन्वादयो युगादयश्च

मन्वाद्यास्त्रितिथी मधौ तिथिरवी ऊर्जे शुचा दिक् तिथी
ज्येष्ठेऽन्त्ये च तिथिस्तिवषे नवतपस्यश्वाः सहस्ये शिवाः।
भाद्रेऽग्निश्च सिते त्वमाष्टनभसः कृष्णे युगाद्याः सिते
गोऽग्नी वाहुलराधयोर्मदनदर्शौ भाद्रमाघासिते ॥ ४६ ॥

चैत्र शुक्ल की तृतीया, पञ्चमी, कार्त्तिक शुक्ल की १५ । १२, आषाढ़ शुक्ल की १० । १५, ज्येष्ठ तथा फाल्गुन शुक्ल की १५, आश्विन शुक्ल नवमी, माघ शुक्ल सप्तमी, पौष शुक्ल एकादशी, भाद्रशुक्ल तृतीया, श्रावणकृष्ण अमावास्या तथा अष्टमी मन्वादि तिथि हैं। कार्त्तिक शुक्ल नवमी, वैशाख शुक्ल तृतीया, भाद्रकृष्ण त्रयोदशी, माघकृष्ण अमावास्या युगादि हैं ॥ ४६ ॥

सोपपदास्तिथयः

सिता ज्येष्ठे द्वितीया च आश्विने दशमी सिता।
चतुर्थी द्वादशी माघे एताः सोपपदाः स्मृताः ॥ ४७ ॥

ज्येष्ठशुक्ल द्वितीया, आश्विनशुक्ल दशमी, माघ की चतुर्थी तथा द्वादशी इन तिथियों को सोपपदा कहते हैं ॥ ४७ ॥

गलग्रहाः

त्रयोदश्यादिचत्वारि सप्तम्यादिदिनत्रयम् ।
चतुर्थी चैकतः प्रोक्ता अष्टावेते गलग्रहाः ॥ ४८ ॥

त्रयोदशी आदि चार तिथि, सप्तमी आदि तीन तिथि और चतुर्थी इन आठों तिथियों का नाम गलग्रह है ॥ ४८ ॥

शुभमासाः

माघादिमासषट्के तु मेखलाबन्धनं शुभम् ।
मृगकुम्भगते भानौ मध्यमं मीनमेषयोः ॥
उत्तमं गोयमस्थेऽर्के मध्यमं ह्यौपनायनम् ॥ ४९ ॥

माघ आदि ६ महीनों में व्रतबन्ध करना शुभ है। मकर, कुम्भ के सूर्य में मध्यम है। मीन, मेष के सूर्य में उत्तम है। वृष, मिथुन के सूर्य में मध्यम है ॥ ४९ ॥

ज्येष्ठापत्यस्य ज्येष्ठमासो वर्ज्यः

व्रतबन्धं विवाहं च चूडाकर्णस्य वेधनम् ।
ज्येष्ठपुत्रदुहित्रोश्च ज्येष्ठमासे न कारयेत् ॥ ५० ॥

ज्येष्ठ कन्या का विवाह, कर्णवेध तथा ज्येष्ठ पुत्र का चूड़ाकरण, व्रतबन्ध ज्येष्ठमास में नहीं करना चाहिए ॥ ५० ॥

वेदक्रमाच्छुभनक्षत्राणि

वेदक्रमाच्छशिशिवाहिकरत्रिमूल-
पूर्वासुपौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये ।
ध्रौवेषु चाश्विवसुपुष्यकरोत्तरेश-
कर्णे मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ सत् ॥ ५१ ॥

मृगशिर, आर्द्रा, आश्लेषा, हस्त, चित्रा, स्वाती और तीनों पूर्वाओं में ऋग्वेदवालों का, रेवती, हस्त, अनुराधा, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, रोहिणी और तीनों उत्तराओं में यजुर्वेदियों का, अश्विनी, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, आर्द्रा और श्रवण

में सामवेदियों का, मृगशिर, रेवती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, अनुराधा, धनिष्ठा और पुनर्वसु इन नक्षत्रों में अथर्व शाखावालों का व्रतबन्ध शुभ है ॥ ५१ ॥

उपनयनमुहूर्त्तः

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वा
रौद्रेऽर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत् ।
द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च
कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि नचापराह्णे ॥ ५२ ॥

क्षिप्र, ध्रुव, आश्लेषा, चर, मूल, मृदु, तीनों पूर्वा और आर्द्रा, इन नक्षत्रों में सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र और चन्द्र इन वारों में, २।३।५।११।१२।१० इन तिथियों में, कृष्णपक्ष के प्रथम त्रिभाग में अर्थात् पञ्चमी पर्यन्त व्रतबन्ध करना शुभ है परन्तु अपराह्ण में न करे ॥ ५२ ॥

तारा

सप्त पञ्च त्रितारा नेष्टाः ।
७।५।३ तारा वर्जित हैं ।

शाखेशा वर्णेशाश्च

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ
राजन्यानामोषधीशो विशां च ।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्या-
च्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः ॥ ५३ ॥

ब्राह्मणों के स्वामी बृहस्पति तथा शुक्र हैं, क्षत्रियों के स्वामी मंगल तथा सूर्य हैं, वैश्यों का स्वामी चन्द्रमा है, शूद्रों का स्वामी बुध है, अन्त्यजों का स्वामी शनि है । ऋक्शाखा का स्वामी बृहस्पति, यजुःशाखा का शुक्र, सामशाखा का मंगल, अथर्वशाखा का स्वामी बुध है ॥ ५३ ॥

शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं
शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत्।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे
स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितो व्रतेन ॥ ५४ ॥

व्रतबन्ध में शाखेश का वार तथा शाखेश का लग्नबल अति उत्तम होता है। शाखेश, सूर्य, चन्द्रमा, बृहस्पति का बल मिलने पर व्रतबन्ध करना शुभ है। जब बृहस्पति, शुक्र शत्रु के घर में हों अथवा ग्रहयुद्ध में पराजित हों या नीचराशि में हों, तो वटु श्रौत, स्मार्त कर्मों से हीन होता है ॥ ५४ ॥

जन्मनक्षत्रादयः

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती।
आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिमे ॥ ५५ ॥

जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मलग्न, जन्मतिथि आदि में व्रतबन्ध करने से वटु अधिक विद्यावान् होता है। इसका दोष ब्राह्मणों के ज्येष्ठपुत्र के लिये नहीं है, क्षत्रिय और वैश्यों के ज्येष्ठ पुत्र के लिये वर्जित हैं ॥ ५५ ॥

उपनयनलग्नम्

कवीज्यचन्द्रलग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः।
व्ययेऽब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः ॥ ५६ ॥
व्रतबन्धेऽष्टषड्रिष्फवर्जिताः शोभनाः शुभाः।
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ॥ ५७ ॥
मेखलाबन्धकार्ये च सर्वथा पञ्चमं गृहम्।
शुभयुक्तं प्रशंसन्ति तदालोकितमेव वा ॥ ५८ ॥

व्रतबन्धलग्न में शुक्र, बृहस्पति, चन्द्रमा तथा लग्नेश छठे तथा आठवें स्थान में अधम होते हैं। चन्द्रमा तथा शुक्र व्ययस्थान में, पापग्रह लग्न, अष्टम तथा पञ्चमस्थान में अधम फल देते हैं।

८। ६। १२ स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में स्थित शुभग्रह शुभ फल देते हैं, ३। ६। ११ स्थानों में पापग्रह शुभ फल देते हैं। वृष, कर्क राशियों का चन्द्रमा यदि पूर्ण होकर लग्न में बैठा हो, तो शुभ है। व्रतबन्ध में ५ स्थान शुभयुक्त या शुभ दृष्ट होना चाहिए ॥ ५६-५८ ॥

नांवशफलम्

क्रूरो जडो भवेत्पापः पटुः षट्कर्मकृद्बटुः ।
यज्ञार्थभाक् तथा मूर्खो रव्याद्यंशे तनौ क्रमात् ॥ ५९ ॥

व्रतबन्धलग्न में यदि सूर्य का नवांश हो, तो बटु क्रूरबुद्धि होता है। यदि चन्द्रमा का नवांश हो, तो जड़बुद्धि होता है। मंगल का हो, तो पापी, बुध का हो, तो चतुर, बृहस्पति का हो, तो षट्कर्म-(अध्यापन, अध्ययन, यजन, याजन, दान, प्रतिग्रह)-कर्त्ता, शुक्र का हो, तो यज्ञ करनेवाला, शनि का हो, तो मूर्ख होता है ॥५९॥

केन्द्रस्थग्रहफलम्

राजसेवी वैश्यवृत्तिः शस्त्रवृत्तिश्च पाठकः ।
प्राज्ञोऽर्थवान्म्लेच्छसेवी केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः ॥ ६० ॥

यदि केन्द्र में सूर्य हो, तो बटु राजा की सेवा करनेवाला, चन्द्रमा हो, तो वैश्यवृत्तिवाला, मंगल हो, तो शस्त्रवृत्तिवाला, बुध हो, तो पढ़ानेवाला, बृहस्पति हो, तो पण्डित, शुक्र हो, तो धनवान्, शनि हो, तो म्लेच्छों की सेवा करनेवाला होता है ॥ ६० ॥

क्रूरयुतसौम्यग्रहफलम्

शुक्रे जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमार्किसंयुते ।
निर्गुणः क्रूरचेष्टः स्यान्निर्घृणः सद्युते पटुः ॥ ६१ ॥

यदि शुक्र, बृहस्पति, चन्द्रमा सूर्य से युक्त हो, तो बटु निर्गुण होता है। मंगल के साथ हो, तो क्रूर चेष्टावाला, शनि के साथ हो, तो घृणारहित, यदि शुभग्रह से युक्त हो तो चतुर होता है ॥ ६१ ॥

मातुः रजोदर्शनशान्तिः

नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे नहि ।
शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्योऽन्यथा न सत् ॥६२॥

यदि नान्दीश्राद्ध के उपरान्त वटु वर या कन्या की माता रजस्वला होवे, दूसरा लग्न न मिलता हो, तो शान्ति करके चूड़ाकर्म, व्रतबन्ध, विवाह करने चाहिए, अन्यथा शुभ नहीं ॥ ६२ ॥

मेघगर्जनेऽनध्यायः

व्रतेऽह्नि पूर्वसंध्यायां वारिदो यदि गर्जति ।
तद्दिन स्यादनध्यायं व्रतं तत्र न कारयेत् ॥ ६३ ॥

यदि व्रतबन्ध के पहले दिन सायंकाल को मेघगर्जन हो, तो व्रतबन्ध का दिन अनध्याय हो जाता है, उस दिन व्रतबन्ध न करावे ॥ ६३ ॥

नान्दीश्राद्धं कृतं चेत्स्यादनध्यायस्तु कालिकः ।
तदोपनयन कार्यं वेदारम्भं न कारयेत् ॥ ६४ ॥

यदि नान्दीश्राद्ध कर लिया हो और कालिक अनध्याय आ पड़े, तो उपनयन करना चाहिए, परन्तु वेदारम्भ न कराना चाहिए ॥६४॥

चैत्रमाहात्म्यम्

शुद्धिर्न विद्यते यस्य प्राप्ते वर्षेऽष्टमे यदि ।
चैत्रे मीनगते भानौ तस्योपनयनं शुभम् ॥ ६५ ॥

अष्टम वर्ष के प्रवेश होने पर जिस वटु को गोचरादि शुद्धि न हो उसका व्रतबन्ध चैत्र के महीने में जब मीन का सूर्य हो शुभ है ॥ ६५ ॥

नष्टे शुक्रे तथा जीवे दुर्बले चन्द्रभास्करे ।
तत्रोपनयनं कार्यं चैत्रे मीनगते रवौ ॥ ६६ ॥

शुक्र या बृहस्पति अस्त हो जावे, चन्द्रमा, सूर्य बलहीन क्यों

न हों तथापि चैत्र मास में जब मीन का सूर्य हो, तो व्रतबन्ध करना चाहिए ॥ ६६ ॥

गोचराष्टकवर्गाभ्यां गुरुशुद्धिर्न लभ्यते ।
तत्रोपनयन कार्यं चैत्रे मीनगते रवौ ॥ ६७ ॥

गोचर तथा अष्टकवर्ग के अनुसार बृहस्पति की शुद्धि न भी मिले, तो भी चैत्र मास में जब मीन का सूर्य हो व्रतबन्ध करना चाहिए। इसमें और भी बहुत प्रमाण मिलते हैं ॥ ६७ ॥

पुनः संस्कारार्हः

ताराचन्द्रानुकूलेऽपि ग्रहाब्देषु शुभेष्विह ।
पुनर्वसौ व्रती विप्रः पुनः संस्कारमर्हति ॥ ६८ ॥

यदि शुभवर्ष हो, नक्षत्र, चन्द्रमा अनुकूल हों तथापि पुनर्वसु में उपनीत का फिर संस्कार करना चाहिए ॥ ६८ ॥

देवेज्यशुक्रयोरस्ते पुनर्वसौ गलग्रहे ।
उपनीतस्त्वनध्याये पुनः संस्कारमर्हति ॥ ६९ ॥

बृहस्पति शुक्र के अस्त में, पुनर्वसु नक्षत्र में, गलग्रह में, अनध्याय में जिसका व्रतबन्ध हो उसका फिर संस्कार करना चाहिए ॥ ६९ ॥

निशि प्रदोषेऽनध्याये मन्दे कृष्णे गलग्रहे ।
मधुं विना चोपनीतः पुनः संस्कारमर्हति ॥ ७० ॥

यदि रात्रि में, प्रदोष में, अनध्याय में, शनिवार को, अति-कृष्णपक्ष में, गलग्रह में व्रतबन्ध किया जावे, तो फिर नये संस्कार करना, परन्तु यदि चैत्र में पूर्वोक्त दोषों में भी व्रतबन्ध किया जावे, तो फिर संस्कार की आवश्यकता नहीं ॥ ७० ॥

केशान्तः समावर्तनं च

केशान्तः षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभः ।
व्रतोक्तदिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते ॥ ७१ ॥

सोलहवें वर्ष में, चूड़ाकर्म में कहे हुए नक्षत्रादि में केशान्त संस्कार अर्थात् व्रतबन्ध के बाद बाल कटाना शुभ है। जो दिन व्रतबन्ध में उक्त हैं उन्हीं में समावर्तन शुभ है ॥ ७१ ॥

क्षत्रियाणां छुरिकाबन्धः

विचैत्रव्रतमासादौ विभौमास्ते विभूमिजे।
छुरिकाबन्धनं शस्तं नृपाणां प्राग्विवाहतः ॥ ७२ ॥

चैत्र को छोड़कर व्रतबन्धोक्त मासों में, मंगलवार तथा भौमास्त को छोड़कर क्षत्रियों का छुरिकाबन्धन विवाह से पूर्व करना चाहिए। विवाह को छोड़कर सप्तशालाका चक्र का विचार करना चाहिए। विद्ध नक्षत्र वर्जित है। जन्म नक्षत्र तथा व्रतबन्ध मुहूर्त के नक्षत्र का वेध देखना चाहिए ॥ ७२ ॥

युतिः

यस्मिन्नृक्षे स्थितः खेटस्तदृक्षं युतिसंज्ञकम्।
विवाहादिशुभे कार्ये वर्जनीया प्रयत्नतः ॥
आवश्यके पादवेधं वर्जयन्ति मनीषिणः ॥ ७३ ॥

जन्मराशि में, विशेषतः जन्मनक्षत्र में, जिस वर्ष या जिस मास में पापग्रह स्थित हो उसे युति दोष कहते हैं, इसमें विवाहादि शुभ कर्म वर्जित हैं, विशेषतः कूर्माचल में युति दोष प्रसिद्ध है। आवश्यक में पादवेध वर्जित करते हैं ॥ ७३ ॥

वर्षमासाशुद्धिः

चतुर्थाष्टद्वादशस्थगुरोः संज्ञावर्षाशुद्धिः।
चतुर्थाष्टद्वादशस्थसूर्यस्य संज्ञामासाशुद्धिः।

जब ४। ८। १२ स्थानों में बृहस्पति हो, तो वर्ष की अशुद्धि (कूर्माचल में वर्ष अपैट कहलाती है) ४। ८। १२ स्थानों में सूर्य हो, तो मास अशुद्धि (मास अपैट) कहलाती है।

विवाह-विचारः

तत्र वरस्य गुणा दोषाश्च

कुलं शीलं वपुर्विद्या वयो वित्तं सनाथता ।
गुणाः सप्त वरे यस्मिंस्तस्मै कन्या प्रदीयते ॥ ७४ ॥

कुल, शील, शरीर, विद्या, अवस्था, धन तथा प्रभुता ये सात गुण जिसमें हों उसको कन्या देनी चाहिए ॥ ७४ ॥

सत्यं तपो ज्ञानमहिंसता च विद्याप्रियत्वं च सुशीलता च ।
एतानि यो धारयते स विद्वान्न केवलं यः पठते स विद्वान् ७५

सत्य, तप, ज्ञान, अहिंसा, विद्या में प्रीति, अच्छा चाल चलन जिसमें हो वह विद्वान् है, केवल पुस्तकों को पढ़ने से विद्वान् नहीं होता है ॥ ७५ ॥

अन्धो मूकः क्रियाहीनश्चापस्मारी नपुंसकः ।
दूरस्थः पतितः कुष्ठी दीर्घरोगी वरो न सत् ॥ ७६ ॥

अन्धा, गूँगा, कर्महीन, मृगी रोगवाला, नपुंसक, दूर देश में रहनेवाला, जाति से पतित, कोढ़ी और दीर्घरोगी को कन्या न देना चाहिए ॥ ७६ ॥

अत्यासन्ने नातिदूरे नात्याढ्ये नातिदुर्बले ।
वृत्तिहीने च मूर्खे च षट्सु कन्या न दीयते ॥ ७७ ॥

बहुत समीप रहनेवाला, बहुत दूर रहनेवाला, अत्यन्त धनाढ्य, अत्यन्त दरिद्री, आजीविका से रहित, मूर्ख इनको कन्या न देना चाहिए ॥ ७७ ॥

मूर्खनिर्धनशूराणां मोक्षमार्गानुगामिनाम् ।
त्रिगुणाधिकवर्षाणां न देया जातु कन्यका ॥ ७८ ॥

मूर्ख, धनहीन, शूर, मोक्षमार्ग में लगे हुए, कन्या की अवस्था की अपेक्षा से तिगुने से अधिक अवस्थावाले को कन्या कभी न देना चाहिए ॥ ७८ ॥

अपरीक्ष्य वरं कन्यां निर्गुणाय ददाति यः ।
कुलं तस्यैव तच्छोकसंतप्तं वै निकृन्तति ॥ ७९ ॥

विना वर की परीक्षा किये हुए निर्गुण वर को जो कन्या देता है वह उस कन्या के शोक के सन्ताप से कुल नाश को प्राप्त करता है ॥ ७९ ॥

कन्याया गुणा दोषाश्च

ललाटविपुला कुब्जा निर्लज्जाऽसत्यभाषिणी ।
व्याधिग्रस्ता च हीनाङ्गी स्थूलदीर्घा कलिप्रिया ॥ ८० ॥
अन्धा च बधिरा कन्या दशदोषान् विवर्जयेत् ।
हंसस्वरां मेघवर्णां मधुपिंगललोचनाम् ॥ ८१ ॥
तादृशीं वरयेत्कन्यां गृहस्थः सुखमेधते ।
अव्यङ्गाङ्गीं सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम् ॥ ८२ ॥
तनुलोमकेशदशनां मृद्वङ्गीमुद्वहेत्स्त्रियम् ।
वधूं सुलक्षणोपेतां प्रसन्नास्यां कुलोद्भवाम् ॥
कन्यकां वृणुयाद्रूपवतीं त्रैवर्गसिद्धये ॥८३ ॥

जिस कन्या का माथा बहुत चौड़ा हो, कुबड़ी हो, लज्जाहीन हो, असत्य बोलनेवाली हो, रोग से ग्रस्त हो, अंगहीन हो, बहुत मोटी हो, बहुत लम्बी हो, झगड़ालू हो, अन्धी या बहिरी हो ऐसी दश दोषवाली कन्या वर्जित है । बोलने में जिसका स्वर हंस के समान हो, शरीर का वर्ण निर्मल हो, शहद के समान जिसके पीले नेत्र हों, ऐसी कन्या को वरण करने से गृहस्थ सुखी होता है । जिसका कोई अंग टेढ़ा न हो, नाम अच्छा हो, चाल हंस या हाथी के समान हो, जिसके बाल कड़े न हों, दाँत कड़े न हों, अंग कोमल हों ऐसी कन्या विवाहयोग्य है । जिस कन्या में सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार अच्छे लक्षण हों, जिसका मुख प्रसन्न हो, अच्छे कुल में उत्पन्न हो, रूपवती हो ऐसी कन्या अर्थ, धर्म और काम के लिये होती है ॥ ८०–८३ ॥

वाग्दानतः पूर्वं विचारः

सापिंड्यं गोत्रशुद्धिं च शीलं सामुद्रिकाणि च।
जातकादिभमेलं च वीक्ष्यं वाग्दानतःपुरा ॥ ८४ ॥
पञ्च पाणिग्रहे दोषा वर्जनीयाः प्रयत्नतः।
दारिद्रयं मृत्युवैधव्यौ पौंश्चल्यमनपत्यता ॥ ८५ ॥

सपिंडता, गोत्रशुद्धि अर्थात् एक गोत्र की न हो, शील, सामुद्रिक तथा ज्योतिषशास्त्र में कहे हुए, नाड़ीवेध, षट्काष्टक आदि, वाग्दान अर्थात् सगाई से पहले विचार करे। दारिद्र्य, मृत्यु, वैधव्य, व्यभिचार, सन्तानाभाव का योग, इन पाँच महादोषों का विचार करे ॥ ८४-८५ ॥

भार्याभर्तृविनाशयोगाः

लग्ने पापा व्यये पापाः पाताले चाम्बरे तथा।
भार्या भर्तृविनाशाय भर्त्ता भार्यां विनाशयेत् ॥ ८६ ॥

जब वर तथा कन्या दोनों के लग्न, व्यय, चतुर्थ और दशम स्थान में पापग्रह हों, तो स्त्री पति का नाश करती है, पति स्त्री का नाश करता है ॥ ८६ ॥

लग्ने व्यये च पाताले यामित्रे चाष्टमे कुजे।
भार्या भर्तृविनाशाय भर्ता भार्यां विनाशयेत् ॥ ८७ ॥

जब १। १२। ४। ७। ८ स्थानों में मंगल हो, तो स्त्री पति का नाश करती है, पति स्त्री का नाश करता है, इसको मंगली कहते हैं ॥ ८७ ॥

भौमतुल्यो यदा भौमः पापो वा तादृशो भवेत्।
उद्वाहः शुभदः प्रोक्तश्चिरायुः पुत्रवर्धनः ॥ ८८ ॥

जब वर कन्या दोनों का मंगल समान हो या कोई पापग्रह मंगल के समान हो, तो विवाह शुभ है, दीर्घ आयु और पुत्रों की वृद्धि करनेवाला होता है ॥ ८८ ॥

न चन्द्रात्सप्तमः पापो न लग्नात्सप्तमो ग्रहः ।
यद्येकोऽपि भवेत्तत्र दम्पत्योरेकनाशकृत् ॥ ८९ ॥

चन्द्रमा से सप्तम स्थान में कोई पापग्रह न हो, लग्न से सप्तम स्थान में भी कोई ग्रह न हो, यदि एक भी हो, तो वर-कन्या दोनों में एक का नाश करता है ॥ ८९ ॥

षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः ।
अष्टमे च शनिं विद्यात्तस्य भार्या न जीवति ॥ ९० ॥

जिसके छठे घर में मंगल हो, सप्तम स्थान में राहु हो, अष्टम स्थान में शनि हो उसकी स्त्री नहीं जीती है ॥ ९० ॥

शुक्रः खलान्तरगतः सखलः सिताद्वा
पापाः सुखास्तमृतिगा रमणीहराः स्युः ।
लग्नव्ययाम्बुनिधनास्तकुजोमिथोघ्नः
स्त्रीणां मदाष्टमखगो विधवात्वकारी ॥ ९१ ॥

यदि शुक्र दो पापग्रहों के मध्य में हो या शुक्र पापग्रह सहित हो या शुक्र से ४ । ८ । ७ स्थानों में पापग्रह हो, तो स्त्री का नाश होता है, १ । १२ । ४ । ८ स्थानों में मंगल दोनों का नाश करता है । स्त्रियों के ७।८ स्थानों में स्थित ग्रह वैधव्यकारक होता है॥९१॥

यामित्रे च यदा सौरिर्लग्ने वा हिबुकेऽपि वा ।
नवमे द्वादशे चैव भौमदोषो न विद्यते ॥ ९२ ॥

जब ७ । १ । ४ । ९ । १२ स्थानों में शनि हो, तो मंगल का दोष नहीं होता है ॥ ९२ ॥

श्वशुरादिविचारः

श्वश्रूः सितोऽर्कः श्वशुरस्तनुस्तनू-
र्जामित्रपः स्याद्दयितोमनः शशी ।
एतद्बलं सम्प्रतिभाव्य तान्त्रिक-
स्तेषां फलं संप्रवदेद्विवाहतः ॥ ९३ ॥

शुक्र से सास, सूर्य से ससुर, लग्न से शरीर, सप्तमेश से पति, चन्द्रमा से चित्त का विचार करना चाहिए। विवाह के समय इनका बल अच्छे प्रकार से विचारकर ज्योतिषी फल को कहे ॥ ९३ ॥

सूर्यात्पतिः स्त्री च विधोस्तथारा-
द्वित्तं सुतो ज्ञाच्च सुखं गुरोश्च।
धर्मः सितादर्कसुताच्च वेश्म
ब्रूयात्समुद्वाहविधौ स्वयुक्त्या ॥ ९४ ॥

विवाह के समय सूर्य से पति, चन्द्रमा से स्त्री, मंगल से धन, बुध से पुत्र, बृहस्पति से सुख, शुक्र से धर्म, शनि से घर का विचार करे ॥ ९४ ॥

वैधव्यं निधने चिन्त्यं शरीरं जन्मलग्नभात्।
सप्तमे पतिसौभाग्यं पञ्चमे प्रसवस्तथा ॥ ९५ ॥

अष्टम स्थान से वैधव्य का, जन्मलग्न से शरीर का, सप्तम स्थान से पति का सौभाग्य, पञ्चम स्थान से सन्तान का विचार करे ॥ ९५ ॥

स्त्रीपुंसोस्तु फलं तुल्यं जातके किन्तु सप्तके।
सौभाग्यं चन्द्रलग्नाच्च वपुराकृतिरुच्यते ॥ ९६ ॥

जातक में स्त्री पुरुष दोनों का फल समान है, परन्तु स्त्री की जन्मपत्री में सप्तम स्थान से सौभाग्य का विचार, चन्द्रमा से शरीर का, लग्न से आकृति का विचार करे ॥ ९६ ॥

लग्नं देहो भृगुः श्वश्रूः श्वशुरोऽर्कों मनःशशी।
भर्त्ता कान्ता कलत्रेशस्तद्बलात्तत्सुखं वदेत् ॥ ९७ ॥

लग्न से शरीर का, शुक्र से सास का, सूर्य से ससुर का, चन्द्रमा से मन का, सप्तमेश से पति या स्त्री का विचार करे। पूर्वोक्त ग्रहों के विचार से पूर्वोक्त स्थानों का सुख दुःख जानना ॥ ९७ ॥

पतिं सूर्याद्विधोः कान्तां धनं भौमात्सुतं बुधात् ।
सुखं जीवाद् भृगोर्धर्मं वेश्मार्के युक्तितो वदेत् ॥ ९८ ॥

सूर्य से पति का, चन्द्रमा से स्त्री का, मंगल से धन का, बुध से पुत्र का, बृहस्पति से सुख का, शुक्र से धर्म का, शनि से घर का युक्तिपूर्वक विचार करें ॥ ९८ ॥

सुखं स्वोच्चादिके ज्ञेयं दुःखं नीचास्तगादिभिः ॥
स्वामिसद्दृष्टियोगात्तेषां सुखंतद्बलैर्व्यत्यये‌ऽन्यत् ॥९९॥

यदि ग्रह अपने उच्च आदि का हो, तो सुख जानना । नीच, अस्त आदि का हो, तो दुःख जानना । यदि पूर्वोक्त स्थानों पर भावेश या शुभग्रह बैठा हो या उनकी दृष्टि हो, तो शुभ फल होता है, अन्यथा अशुभ ॥ ९९ ॥

जीव-चन्द्र-सूर्य-भौम-बलविचारः

जीवो जीवप्रदाता च जन्मदाता च चन्द्रमाः ।
तेजोदाता भवेत्सूर्यो भूमिदाता महीसुतः ॥ १०० ॥

बृहस्पति जीव का, चन्द्रमा जन्म का, सूर्य तेज का, मंगल भूमि का प्रदान करनेवाला है ॥ १०० ॥

जीवहीना मृता कन्या सूर्यहीनो मृतो वरः ।
चन्द्रे हीने गता लक्ष्मीः स्थानहानिः कुजं विना ॥१०१॥

जिस कन्या का बृहस्पति हीनबल हो वह नहीं जीती है। जिस वर का सूर्य हीनबली हो वह नहीं जीता है। चन्द्रमा हीनबली होने से लक्ष्मी नहीं रहती है। मंगल के हीनबली होने से स्थानहानि होती है ॥ १०१ ॥

स्त्रीणां जन्मनि गुरुफलम्

नष्टात्मजा धनवती विधवा कुशीला
पुत्रान्विता हतधवा सुभगा विपुत्रा ।
स्वामिप्रिया विगतपुत्रधवा धनाढ्या

बन्ध्या भवेत्सुरगुरौ क्रमशोऽभिजन्म ॥ १०२ ॥

स्त्रियों के लग्न में बृहस्पति हो, तो सन्तान नाश, दूसरे स्थान में हो, तो धनवती, तीसरे में हो, तो विधवा, चौथे में हो, तो कुत्सित स्वभाव, पञ्चम में हो, तो पुत्रवती, छठे में हो, तो पतिहीन, सप्तम में हो, तो सौभाग्यवती, अष्टम में हो, तो पुत्रहीना, नवम में हो, तो पति की प्यारी, दशम में हो, तो पुत्र और पति से रहित, एकादश में हो, तो धनाढ्य बारह में हो, तो बन्ध्या होती है ॥ १०२ ॥

ज्येष्ठनक्षत्रं वर्ज्यम्

भामिनीजन्मनक्षत्राद्द्वितीयं यदि भर्तृभम् ।
न शुभं पतिनाशाय कथितं ब्रह्मयामले ॥ १०३ ॥

यदि स्त्री के जन्मनक्षत्र से पति का जन्मनक्षत्र दूसरा हो, तो शुभ नहीं होता है । ब्रह्मयामल में इसका फल पतिनाश लिखा है ॥ १०३ ॥

सेव्याधमर्णयुवती नगरादिभं चेत्
पूर्वं हि भृत्यधनिभर्तृपुरादिसङ्गात् ।
सेवाविनाशधननाशनभर्तृनाश-
ग्रामादिसौख्यहृदिदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥ १०४ ॥

पहला नक्षत्र स्वामी का हो, दूसरा सेवक का हो, तो सेवा का नाश होता है । पहला नक्षत्र ऋण देनेवाले का हो, दूसरा नक्षत्र ऋण लेनेवाले का हो, तो धन का नाश होता है । पहला नक्षत्र कन्या का हो, दूसरा नक्षत्र वर का हो, तो पति का नाश होता है । पहला नक्षत्र नगर का हो दूसरा नक्षत्र नगरवासी का हो, तो नगर या ग्रामसम्बन्धी सुख का नाश होता है ॥ १०४ ॥

जन्मपत्रीमेलनार्थं वर्णादयः

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम् ।

गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥ १०५ ॥

वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रहमैत्री, गणमैत्री, भकूट (षडष्टक) नाडीवेध यह आठ एक से एक गुण में अधिक हैं ॥ १०५ ॥

वर्णज्ञानम्

मीनालिकर्कटा विप्रा नृपाः सिंहाजधन्विनः ।
कन्यानक्रवृषा वैश्याः शूद्रा युग्मतुलाघटाः ॥ १०६ ॥
वरस्य वर्णतोऽधिका वधूर्न शस्यते बुधैः ।
एको गुणः सदृग्वर्णे तथा वर्णोत्तमे वरे ॥
हीनवर्णे वरे शून्यं केऽप्याहुः सदृशेऽर्धकम् ॥ १०७ ॥
सद्वर्णे एको गुणः । अन्यथा गुणाभावः ॥

मीन, वृश्चिक, कर्क राशि ब्राह्मण हैं । सिंह, मेष, धनराशि क्षत्रियवर्ण है । कन्या, मकर, वृष राशि वैश्य है । मिथुन तुला कुम्भ राशि शूद्र है । वर से उच्चवर्ण वाली कन्या श्रेष्ठ नहीं, समान वर्ण में या जब वर उत्तम वर्ण वाला हो, तो १ गुण मिलता है । जब वर हीन वर्ण वाला हो, तो शून्य गुण मिलता है । कोई समान में आधा गुण कहते हैं । अच्छे वर्ण में १ गुण अन्यथा शून्य गुण मिलता है ॥ १०६-१०७ ॥

वश्यम्

युग्मं कुम्भस्तुला कन्या प्राग्दलं धनुषो द्विपात् ॥ १०८ ॥
परार्धं धनुषश्चैव पूर्वार्धं मकरस्य च ।
केसरी वृषभाख्यश्च मेषश्चैते चतुष्पदाः ॥ १०९
नक्रोत्तरदलं मीनो जलचारी प्रकीर्त्तितः ।
कर्कः कीटकसंज्ञश्च वृश्चिकश्च सरीसृपः ॥ ११० ॥
सर्वेऽपि सिंहस्य वशे विनालिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत् ।
सिंहं विना वशाः सर्वे द्विपदानां चतुष्पदाः ॥ १११ ॥
भक्ष्या जलचरास्तेषां भयस्थाने सरीसृपाः ।

सख्यं वैरं च भक्ष्यं च वश्यमाहुस्त्रिधा बुधाः ॥ ११२ ॥

मिथुन, कुम्भ, तुला, कन्या, धन का पूर्वार्ध द्विपद अर्थात् मनुष्य राशि है। धन का उत्तरार्ध, मकर का पूर्वार्ध, सिंह, वृष, मेष चतुष्पद अर्थात् चौपाये हैं। मकर का उत्तरार्ध तथा मीन जलचारी हैं, कर्क कीटक है। वृश्चिक सरीसृप है। वृश्चिक के विना सिंह के सब वश्य हैं। शेष सब मनुष्यों के व्यवहार से जानना चाहिए। सिंह को छोड़कर सब चतुष्पद द्विपदों के वश में हैं। जलचर द्विपदों के भक्ष्य हैं, सरीसृप से उनको भय होता है ॥१०८-११२॥

वैरभक्ष्ये गुणाभावो द्वयोः सख्ये गुणद्वयम् ।
वश्यवैरे गुणस्त्वेको वश्यभक्ष्ये गुणार्धकम् ॥ ११३ ॥

वश्य तीन प्रकार का होता है। सख्य, वैर तथा भक्ष्य। वैर, भक्ष्य में गुण नहीं मिलता है। दोनों की मित्रता में दो गुण मिलते हैं। वश्य वैर में एक गुण मिलता है। वश्य भक्ष्य में आधा गुण मिलता है ॥ ११३ ॥

तारा

कन्यर्क्षाद्वरभं यावत्कन्याभं वरभादपि ।
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीण्वद्रिभमसत्स्मृतम् ॥ ११४ ॥

कन्या के नक्षत्र से वर नक्षत्र तक, तथा वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक गिने, उसमें ९ का भाग दे, जो ३। ५। ७ बचें, तो अशुभ तारा होती है ॥ ११४ ॥

जन्म सम्पद्विपत्क्षेम प्रत्यरिः साधको वधः ।
मैत्रातिमैत्रं ताराः स्युः स्वनामसदृशं फलम् ॥ ११५ ॥

ताराओं के नाम यह हैं। जन्म, सम्पत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मैत्र और अतिमैत्र। तारा पूर्वोक्त नव जानना ॥११५॥

एकतो लभ्यते तारा शुभा चैवाशुभान्यतः ।
तदा सार्धं गुणश्चैव ताराशुद्धौ मिथस्त्रयः ॥

उभयोर्न शुभा तारा तदा शून्यं समादिशेत् ॥ ११६ ॥

एक ओर से शुभ तारा मिले, दूसरो ओर से अशुभ तारा मिले, तो डेढ़ गुण मिलता है। दोनों ओर से तारा शुद्ध हो, तो तीन गुण मिलते हैं। यदि दोनों ओर से शुभ तारा न हो, तो शून्य मिलता है ॥ ११६ ॥

योनिः

अश्विन्यम्बुपयोर्हयो निगदितः स्वात्यर्कयोः कासरः
सिंहो वस्वजपाङ्घ्रयोः समुदितो याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः ।
मेषो देवपुरोहितानलभयोः कर्णाम्बुनोर्वानरः
स्याद्वै श्वाभिजितोस्तथैव नकुलश्चान्द्राब्जयोन्योरहिः॥११७॥
ज्येष्ठा मैत्रभयोः कुरंग उदितो मूलार्द्रयोः श्वा तथा
मार्जारोऽदितिसार्पयोरथ मघा योन्योस्तथैवोन्दुरुः ।
व्याघ्रो द्वीशभचित्रयोरपि च गौरर्यम्णबुध्न्यर्क्षयो-
र्योनिः पादगयोः परस्परमहावैरं भयोन्योस्त्यजेत् ॥ ११८॥
अष्टाविंशतिताराणां योनयश्च चतुर्दश ।
मैत्रं चैवातिमैत्रं च विवाहे नरयोषितोः ॥ ११६ ॥
महद्वैरे च वैरे च स्वभावे च यथाक्रमम् ।
मैत्रे चैवातिमैत्रे च खेन्दुद्वित्रिचतुर्गुणाः ॥ १२० ॥

इन श्लोकों का अर्थ चक्र से स्पष्ट है ॥ ११७-१२० ॥

नक्षत्र	योनि	महावैर योनि
अश्विनी	अश्व	भैंस
भरणी	हाथी	सिंह
कृत्तिका	मेष	वानर

रोहिणी	सर्प	नकुल
मृगशिर	सर्प	नकुल
आर्द्रा	कुत्ता	हरिण
पुनर्वसु	बिडाल	चूहा
पुष्य.	मेष.	वानर
आश्ले.	विडाल.	चूहा
मघा.	चूहा.	विडाल.
पू. फा.	चूहा.	विडाल.
उ. फा.	गाय.	व्याघ्र.
हस्त.	भैंस	अश्व.
चित्रा.	व्याघ्र.	गाय.
स्वाती.	भैंस.	अश्व.
विशा.	व्याघ्र.	गाय.
अनु.	हरिण.	कुत्ता.
ज्येष्ठा.	हरिण.	कुत्ता.

मूल.	कुत्ता.	हरिण.
पू. षा.	वानर.	मेष.
उ. षा.	नकुल.	सर्प.
श्रवण.	वानर.	मेष.
अभिजि.	नकुल.	सर्प.
धनिष्ठा.	सिंह.	हाथी.
शतभि.	अश्व.	भैंस.
पू. भा.	सिंह.	हाथी.
उ. भा.	गाय.	व्याघ्र.
रेवती.	हाथी.	सिंह.

पूर्वोक्त २८ नक्षत्रों की १४ योनि होती हैं। विवाह में वर-कन्या की मैत्री अतिमैत्री ग्रहण करनी चाहिए। महावैर वर्जित है।

महावैर में ० गुण।

वैर में १ गुण।

स्वभाव में २ गुण।

मैत्री में ३ गुण।

अतिमैत्री में ४ गुण।

ग्रहमैत्री (पृ० ४८) —

अन्योन्यमित्रं शस्तं स्यात्समभित्रं तु मध्यमम्।

उदासीनं कनिष्ठं स्यान्मृतिदं शात्रवं स्मृतम् ॥ १२३ ॥
शत्रुमित्रं च विज्ञेयं दम्पत्योः कलहप्रदम् ।
अन्योन्यसमशत्रुत्वं दम्पत्योर्निधनप्रदम् ॥ १२४ ॥

ग्रहों का समत्व, मित्रत्व, शत्रुत्व पूर्व वर्णित है । वर कन्या की जन्म-राशि से विचार करना चाहिए ।

यदि राशीश परस्पर मित्र हों, तो शुभ है । एक ओर सम अन्यत्र मित्र हो, तो मध्यम है । दोनों ओर सम हो, तो अधम है । दोनों ओर शत्रु हो, तो मृत्युदायक है । शत्रुमित्र हो, तो स्त्री-पुरुष में कलह हो । समशत्रु हो, तो स्त्री-पुरुष की मृत्यु होती है । एकाधिपत्य अति शुभ है ॥ १२३-१२४ ॥

ग्रहमैत्रं सप्तविधं गुणाः पञ्च प्रकीर्तिताः ।
तत्रैकाधिपतित्वे तु मित्रत्वे गुणपञ्चकम् ॥ १२५ ॥
चत्वारः सममित्रत्वे द्वयोः साम्ये त्रयो गुणाः ।
मित्रवैरगुणश्चैकः समवैरे गुणार्धकम् ॥
परस्परं खेटवैरे गुणं शून्यं विनिर्दिशेत् ॥ १२६ ॥

राश्योरेकाधिपतित्वे राशिपत्योर्मित्रत्वे च पञ्च गुणाः । राशिपत्योः समत्वशत्रुत्वेऽर्धो गुणः । राशिपतिसमत्व-मित्रत्वे चत्वारो गुणाः । शत्रुत्वमित्रत्वे एको गुणः । द्वयोः समत्वे त्रयो गुणाः । द्वयोः शत्रुत्वे गुणाभावः ।

ग्रह-मैत्री सात प्रकार की होती है । गुण पाँच होते हैं । एकाधिपति या परस्पर मैत्री होने पर पाँच गुण होते हैं । सममित्र में चार गुण । उभयतः सम होने पर तीन गुण । मित्र वैर में एक गुण । सम वैर में आधा गुण । परस्पर ग्रहों के वैर होने पर शून्य मिलता है अर्थात् राशियों का एक ही स्वामी हो या राशीश मित्र हो, तो पाँच गुण । राशीश समशत्रु हो, तो आधा गुण । सममित्र में चार गुण । शत्रुमित्र में एक गुण । दोनों ओर सम

होने से तीन गुण। दोनों ओर शत्रु होने से शून्य गुण मिलता है ॥ १२५-१२६ ॥

गणमैत्रम्

अनुराधा मृगोऽश्वस्तु श्रवणोऽदितिपुष्यके।
स्वाती हस्तो रेवती च नव देवगणाः स्मृताः ॥ १२७ ॥

अनुराधा, मृगशिर, अश्विनी, श्रवण, पुनर्वसु, पुष्य, स्वाती, हस्त और रेवती ये नव नक्षत्र देवगण हैं ॥ १२७ ॥

पूर्वात्रयं रोहिणी च उत्तरात्रयमेव वा।
आर्द्रा तु भरणी चैव नवैते मानुषा गणाः ॥ १२८ ॥

तीनों पूर्वा, रोहिणी, तीनों उत्तरा, आर्द्रा और भरणी ये नव नक्षत्र मनुष्य गण हैं ॥ १२८ ॥

आश्लेषा शतभिषङ्मूलविशाखाकृत्तिकामघाः।
चित्रा ज्येष्ठा धनिष्ठा च नवैते राक्षसा गणाः ॥ १२९ ॥

आश्लेषा, शतभिषा, मूल, विशाखा, कृत्तिका, मघा, चित्रा, ज्येष्ठा और धनिष्ठा ये नव नक्षत्र राक्षस गण हैं ॥ १२९ ॥

स्वगणे परमा प्रीतिर्मध्यमाऽमरमर्त्ययोः।
मर्त्यराक्षसयोर्वैरममरासुरयोरपि ॥ १३० ॥

अपने गण में परम प्रीति होती है। देवगण और मनुष्य गण में मध्यम प्रीति होती है। मनुष्य राक्षसों तथा देवता-राक्षसों में वैर होता है ॥ १३० ॥

राशीशयोः सुहृद्भावे मित्रत्वे चांशनाथयोः।
गणादिदोषेऽप्युद्वाहः पुत्रपौत्रप्रवर्धनः ॥ १३१ ॥

यदि राशियों के स्वामी मित्र हों अथवा नवांश के स्वामी मित्र हों, तो गण आदि के दोष में भी विवाह होता है, तथा पुत्र-पौत्र की वृद्धि होती है ॥ १३१ ॥

षड्गुणा गणसादृश्ये पञ्च स्युः सुरमानुषे।

नार्यां देवो नरः पुंसश्चत्वारो वा गुणास्त्रयः ॥ १३२ ॥
देवराक्षसयोः शून्यं तथैव नररक्षसोः ।
पुंसो रक्षो गणो यत्र नार्यां देवोऽथवा नरः ॥ १३३ ॥
गुणौ द्वौ क्रमशश्चैको गुणो ग्राह्योऽन्यथा नहि ।
ना देवो मनुजा वधूरिह रसास्तद्वैपरीत्ये शराः ॥
षट् साम्येऽसुपपूरुषः सुरवधूरत्रैव कोऽन्यत्र खम् ॥१३४॥

समान गण मिलने पर छः गुण होते हैं। देव-मनुष्य में पाँच गुण। स्त्री का देवगण हो, पुरुष का मनुष्यगण हो, तो चार या तीन गुण। देव राक्षस में या मनुष्य-राक्षस में शून्य गुण। पुरुष का राक्षस गण हो, स्त्री का देव या मनुष्य गण हो, तो दो तथा एक गुण मिलते हैं, अन्यथा गुण नहीं मिलता है। पुरुष देव हो स्त्री मनुष्य गण हो, तो छः गुण। इससे विपरीत में पाँच गुण। समता में छः गुण। पुरुष राक्षस गण हो, स्त्री देव गण हो, तो एक गुण, अन्यथा शून्य गुण मिलता है ॥ १३२-१३४ ॥

गणैक्ये षड्गुणाः। नरो देवो नृगणा कन्या अत्रापि षट्। वैपरीत्ये पञ्च। नरो राक्षसः कन्या देवगणा अत्रैकः। वैपरीत्ये गुणाभावः। मनुष्यराक्षसत्वेऽपि गुणाभावः।

एक गण होने पर छः गुण। वर देवगण हो कन्या मनुष्यगण हो, तब भी छः गुण। विपरीत में पाँच गुण। वर राक्षसगण हो, कन्या देवगण हो, तो एक गुण। विपरीत में शून्य गुण। मनुष्य राक्षस में भी शून्य गुण मिलता है।

भकूटम् (षट्काष्टकम्)

मृत्युः षडष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे ।
द्विर्द्वादशे निर्धनत्वं तयोरन्यत्र सौख्यकृत् ॥ १३५ ॥
एकराशौ महाप्रीतिश्चतुर्थे दशमे सुखम् ।
तृतीयैकादशे वित्तं सुप्रजा समसप्तके ॥ १३६ ॥

सत्कूटे सप्त, दुष्कूटे ग्रहमैत्रीसत्त्वे चत्वारः, अन्यथा एकः, चरणैक्ये गुणाभावः ।

वर-कन्या की जन्म-राशि से गिनती करना चाहिए। यदि एक से दूसरी ६।८ में पड़े, तो षडष्टक होता है। उसका फल मृत्यु है। ५।९ को नवात्मज कहते हैं, उसका फल सन्तानहानि है, २।१२ को द्विर्द्वादश कहते हैं, उसका फल निर्धनत्व है। इन स्थानों को छोड़कर अन्यत्र शुभ है। एक राशि में बड़ी प्रीति होती है, ४।१० में सुख मिलता है, ३।११ में धन मिलता है। सम सप्तम में अच्छी सन्तति होती है।

इसमें भी विशेषतः षडष्टक ही वर्जित किया जाता है। षडष्टक में भी मित्रषडष्टक ग्रहण करते हैं। शत्रु षडष्टक ही वर्जित करते हैं। जैसे मीन राशि का ५।७ से षडष्टक होगा। मीन का स्वामी बृहस्पति है। सिंह का स्वामी सूर्य है। इसलिये १२ का ५ से मित्र षडष्टक हुआ। परन्तु ७ का स्वामी शुक्र है। बृ. शु. आपस में शत्रु हैं। इसलिये १२ का ७ से शत्रु षडष्टक है। अच्छे कूट में सात गुण मिलते हैं। दुष्ट कूट में यदि ग्रहमैत्री हो, तो चार गुण मिलते हैं, अन्यथा एक गुण मिलता है। एक चरण होने पर शून्य गुण मिलता है॥ १२५-१२६ ॥

नाडीवेधः

ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्रभं चैकनाडी
पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या।
वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगमथो पौष्णभं चापरा स्या-
द्दम्पत्योरेकनाड्यां परिणयनमसन्मध्यनाड्यां हि मृत्युः १२७

ज्येष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, आर्द्रा, शतभिष और इन नक्षत्रों का दूसरा दूसरा नक्षत्र अर्थात् मूल, हस्त, पुनर्वसु, पूर्वाभाद्रपद और अश्विनी इन नव नक्षत्रों की आदि नाड़ी; पुष्य, मृगशिरा,

राधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढ़, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद इन नव नक्षत्रों की मध्यनाड़ी; और स्वाती, कृत्तिका, आश्लेषा, उत्तराषाढ़ और इन नक्षत्रों का दूसरा दूसरा नक्षत्र अर्थात् विशाखा, रोहिणी, मघा, श्रवण और रेवती इन नव नक्षत्रों की अन्त्य नाड़ी होती है।

कन्या जन्मनक्षत्र या वर जन्मनक्षत्र ये दोनों यदि किसी एक नाड़ी में हों, तो विवाह अशुभ होता है। यदि उक्त दोनों नक्षत्र मध्य नाड़ी में हों, तो कन्या तथा वर दोनों की मृत्यु होती है ॥ १३७ ॥

नाडीचक्रम्

अ.	आ.	पुन.	उ.फा.	ह.	ज्ये.	मू.	श.	पू.भा.	आदि नाड़ी
भ.	मृ.	पुष्य.	पू.फा.	चि.	अनु.	पू.षा.	ध.	उ.भा.	मध्य नाड़ी
कृ.	रो.	आश्ले.	म.	स्वा.	वि.	उ.षा.	श्र.	रे.	अन्त्य नाड़ी

यदि वर-कन्या दोनों का जन्मनक्षत्र एक नाड़ी में आ पड़े, तो नाड़ीवेध कहलाता है। उसका फल मृत्यु है। उसमें विवाह अशुभ है। नाड़ी पृथक् पृथक् होने पर आठ गुण मिलते हैं। एक नाड़ी सर्वथा त्याज्य है।

सर्वगुणयोगः

अत्र सर्वगुणमेलनेन विंशतिगुणसम्भवे मध्यमम्।
विंशत्यधिकगुणत्वेऽतिशुभम्। विंशत्यूनत्वे त्वशुभम्।
गुणैः षोडशभिर्निन्द्यं मध्यमं विंशतिस्तथा।
श्रेष्ठं त्रिंशद्गुणं यावत्परतस्तूत्तरोत्तरम् ॥ १३८ ॥
सद्कूटे इति ज्ञेयं दुष्टकूटेऽथ कथ्यते।
निन्द्यं गुणैर्विंशतिभिर्मध्यं बाणाधिकैर्मतम् ॥ १३९ ॥

तत्परैः पञ्चभिः श्रेष्ठं ततः श्रेष्ठतरं गुणैः।

वर्ण आदि सब मिलाकर ३६ गुण होते हैं। प्रत्येक में कितने गुण होते हैं यह बात ऊपर कही गई है। यदि सब मिलाकर २० गुण हों तो मध्यम है। यदि २० गुण से अधिक हों, तो अति शुभ है। यदि २० गुण से कम हो, तो अशुभ है। १६ गुण हों, तो निन्दित है। २० गुण हों, तो मध्यम है। ३० गुण तक श्रेष्ठ है ३० गुण से जितना अधिक हो, उतना ही श्रेष्ठ है। यह बात तब हो जब अच्छा भकूट हो, परन्तु जब दुष्ट भकूट हो, तो २० गुण मिलने पर निन्दित है। २५ गुण मिलने पर मध्यम है। ३० गुण मिलने पर श्रेष्ठ है, अधिक में अति श्रेष्ठ है॥ १३८-१३९॥

वर्गकूटः

अकचटतपयशवर्गाः खगेशमार्जारसिंहशुनाम्।
सर्पाखुमृगावीनां निजपञ्चमवैरिणामष्टौ॥ १४०॥

स्वर, व्यञ्जन सब अक्षर आठ वर्गों में बाँटे गये हैं। उनके गरुड़ आदि आठ वर्ग हैं। उनमें क्रम से वैर भी जानना।

जैसे अवर्ग का स्वामी गरुड़ (वैरी सर्प) कवर्ग का स्वामी मार्जार (वैरी मूषक) चवर्ग का स्वामी सिंह (वैरी मृग) टवर्ग का स्वामी श्वान (वैरी मेष) तवर्ग का स्वामी सर्प (वैरी गरुड़) पवर्ग का स्वामी मूषक (वैरी मार्जार) यवर्ग का स्वामी मृग (वैरी सिंह) शवर्ग का स्वामी मेढ़ा वैरी (श्वान)॥ १४०॥

स्ववर्गात्पञ्चमः शत्रुश्चतुर्थो मित्रसंज्ञकः।
उदासीनस्तृतीयस्तु वर्गभेदस्त्रिधोच्यते॥ १४१॥

वर्गभेद तीन प्रकार का है। अपने वर्ग से पञ्चम शत्रु होता है, चतुर्थ मित्र होता है, तीसरा उदासीन (न शत्रु न मित्र) होता है॥ १४१॥

स्ववर्गे परमा प्रीतिर्मित्रे प्रीतिश्च कथ्यते।

उदासीने प्रीतिरल्पा शत्रुवर्गे मृतिस्तथा ॥ १४२ ॥

अपने वर्ग में अत्यन्त प्रीति, मित्रवर्ग में भी प्रीति, उदासीन में अल्प प्रीति, शत्रुवर्ग में मृत्यु होती है।

जैसे वर का नाम आद्यादत्त, कन्या का नाम देवयानी है। यहाँ आद्यादत्त का गरुड़वर्ग हुआ। देवयानी का सर्पवर्ग हुआ। ये दोनों आपस में एक दूसरे से पाँचवें हुए इसलिये इनमें शत्रुता है, इसका फल मृत्यु है। यदि मृत्यु न भी हो, तो इनमें परस्पर कभी प्रीति न होगी, रात-दिन कलह रहेगा। स्वामी भृत्य के विषय में तथा नगर या ग्रामवास में भी यह वर्ग मिलाये जाते हैं ॥ १४२ ॥

साम्योपयोगिसंग्रहः

नाडीदोषस्तु विप्राणां वर्णदोषश्च क्षत्रिये।
गणदोषस्तु वैश्येषु योनिदोषस्तु पादजे ॥ १४३ ॥

ब्राह्मणों को नाड़ीदोष, क्षत्रियों को वर्णदोष, वैश्यों को गणदोष, शूद्रों को योनिदोष विशेषतः वर्जित है ॥ १४३ ॥

आदिनाडी पतिं हन्ति मध्यनाडी च कन्यकाम्।
अन्त्यनाडी द्वयोर्हन्त्री नाडीवेधं विवर्जयेत् ॥ १४४ ॥

आदि नाड़ी पति को, मध्य नाड़ी कन्या को तथा अन्त्य नाड़ी दोनों को मारती है। नाड़ीदोष को वर्जित करना चाहिए ॥ १४४ ॥

नाडीकूटं तु संग्राह्यं कूटानां तु शिरोमणिम्।
ब्रह्मणा कन्यकाकण्ठे सूत्रत्वेन विनिर्मितम् ॥ १४५ ॥

नाडीवेध सब कूटों का शिरोमणि है। ब्रह्माजी ने कन्या के गले के लिये उसको सूत्र बनाया है ॥ १४५ ॥

एकनक्षत्रजातानां नाडीदोषो न विद्यते।
अन्यर्क्षनाडीवेधेषु विवाहो वर्जितः सदा ॥ १४६ ॥

जो वर कन्या एक नक्षत्र में उत्पन्न हों उनको नाडीदोष नहीं

होता है। यदि और नक्षत्रों में नाडी-वेध हो, तो विवाह सर्वदा वर्जित है ॥ १४६ ॥

राश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्या-
न्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव।
नाडीदोषो नो गणानां च दोषो
नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात् ॥ १४७ ॥

यदि वर कन्या दोनों की एक राशि हो, तो नक्षत्र पृथक् होना चाहिए। यदि दोनों का नक्षत्र एक ही हो, तो राशि पृथक् होनी चाहिए या चरण का भेद होना चाहिए। ऐसा होने पर नाड़ी तथा गुण का दोष नहीं रहता है; किन्तु शुभ होता है ॥ १४७ ॥

मैत्र्यां राशिस्वामिनोरंशनाथ-
द्वन्द्वस्यापि स्याद्गणानां न दोषः।
खेटारित्वं नाशयेत्सद्भकूटं
खेटप्रीतिश्चापि दुष्टं भकूटम् ॥ १४८ ॥

वर कन्या के राशिस्वामी या नवांशस्वामी आपस में मित्र हों, तो गण का दोष नहीं रहता है। अच्छा भकूट ग्रहों की शत्रुता के दोष को नाश करता है। एवं ग्रहों की मित्रता दुष्ट भकूट के दोष को नाश करती है ॥ १४८ ॥

प्रोक्ते दुष्टभकूटके परिणयस्त्वेकाधिपत्ये शुभो
ऽथोराशीश्वरसौहृदेऽपि गदितो नाड्यृक्षशुद्धिर्यदि।
अन्यर्क्षेऽशपयोर्बलित्वसखिते नाड्यृक्षशुद्धौ तथा
ताराशुद्धिवशेन राशिवशताभावो निरुक्तो बुधैः ॥ १४९॥

यदि दुष्ट भकूट हो परन्तु नाड़ी नक्षत्र शुद्ध हो, तो निम्नलिखित परिहारों में विवाह शुभ होता है।

दोनों की राशियों के स्वामी एक हों या राशियों के स्वामी परस्पर मित्र हों, नवांश के स्वामी बली हों या आपस में मित्र हों

या वर कन्या की तारा परस्पर शुद्ध हो या स्त्री की राशि पुरुष-राशि के वश्य हो ॥ १४६ ॥

ग्रहसाम्यविधौ कूर्माचलीयप्रथा

यहाँ पर नाड़ीवेध और षट्काष्टक का विचार करते हैं। परन्तु कोई-कोई मित्र षट्काष्टक को ग्रहण करते हैं। केवल शत्रु षट्काष्टक वर्जित करते हैं। कोई-कोई ग्रहमैत्री तथा तारा का विचार भी करते हैं। वर्ण, वश्य आदि का विचार नहीं करते हैं, क्योंकि उनमें अल्प गुण होते हैं। केवल नाडीवेध, षट्काष्टक, ग्रहमैत्री आदि में २० से अधिक गुण मिलते हैं।

विशेषता यह है—वर के लग्न तथा शुक्र से, कन्या के लग्न तथा चन्द्रमा से १।४।७।८।१२ स्थानों के पापग्रहों का विचार करते हैं वर के सब पापग्रह मिलाकर कन्या के पापग्रहों से कम न होने चाहिए।

कन्या का	७। ८ स्थान	विशेषतया विचार किया जाता है।
वर का	२। ७ ,,	
दोनों का	५ ,,	

सूर्य से नवें स्थान में पिता का, मंगल से तीसरे में भ्राता का, चन्द्रमा से सप्तम में पति का विचार किया जाता है। पापमध्य-गत शुक्र या पापयुत शुक्र भी पापग्रह गिना जाता है।

अन्यत्र सर्वदेशेषु प्रथा

(१) मंगली-विचार।
(२) वर्ण आदि ८ बातों का विचार।
(३) नाड़ीवेध षडष्टक का विशेष विचार।
(४) कोई-कोई नव-पञ्चम, द्विर्द्वादश आदि का भी विचार करते हैं।

मूलादिविचारः

श्वश्रूविनाशमहिजौ सुतरां विधत्तः
कन्यासुतौ निऋतिजौ श्वशुरं हतश्च ।
ज्येष्ठाभजाततनया स्वधवाग्रजं च
शक्राग्निजा भवति देवरनाशकर्त्री ॥ १५० ॥

जो वर कन्या आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न हों, तो सास का नाश करते हैं। जो मूल में उत्पन्न हों, तो ससुर का नाश करते हैं। जो कन्या ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न हो, तो अपने जेठ का नाश करती है। जो कन्या विशाखा में उत्पन्न हो, तो देवर का नाश करती है ॥१५०॥

द्वीशाद्यपादत्रयजा कन्या देवरसौख्यदा ।
मूलान्त्यपादसार्पाद्यपादजाते तयोः शुभे ॥ १५१ ॥

विशाखा के प्रथम तीन चरणों में उत्पन्न हुई कन्या देवर को सुख देती है। मूल के चतुर्थ चरण में उत्पन्न हुए वर कन्या श्वशुर को सुख देनेवाले होते हैं। आश्लेषा के प्रथम चरण में उत्पन्न वर कन्या सास को सुख देनेवाले होते हैं ॥ १५१ ॥

विषकन्या अश्वत्थविवाहः

सूर्यभौमार्किवारेषु भद्रातिथिशताभिधे ।
आश्लेषा कृत्तिका चेत्स्यात्तत्र जाता विषाङ्गना ॥१५२॥
सावित्र्यादिव्रतं कृत्वा वैधव्यविनिवृत्तये ।
अश्वत्थादिभिरुद्वाह्य दद्यात्तां चिरजीविने ॥ १५३ ॥

रविवार, द्वितीया तिथि, शतभिषा नक्षत्र ।
मंगलवार, सप्तमी तिथि, आश्लेषा नक्षत्र ।
शनिवार, द्वादशी तिथि, कृत्तिका नक्षत्र ।

इनके संयोग में जो कन्या उत्पन्न हो उसको विषाङ्गना कहते हैं, उसका फल वैधव्य है, ऐसी कन्या को सावित्रीव्रत कराना चाहिए। अश्वत्थ आदि विवाह करके ऐसे वर के साथ उसका

विवाह करना चाहिए, जिसके ग्रह चिरायुवाले हों ॥ १५२–१५३ ॥

जन्मोत्थं च विलोक्य बालविधवायोगं विधाय व्रतं
सावित्र्या उत पैप्पलं हि सुतया दद्यादिमां वा रहः ।
सल्लग्नेऽच्युतमूर्त्तिपिप्पलघटैः कृत्वा विवाहं स्फुटं
दद्यात्तां चिरजीविनेऽत्र न भवेद्दोषः पुनर्भूभवः ॥१५४॥

जन्मलग्न से बालविधवा योग देखकर लड़की को सावित्री का या पिप्पल का व्रत एकान्त में करावे। या विष्णुप्रतिमा विवाह या पिप्पल या घट के साथ विवाह अच्छे लग्न में कराकर फिर उस कन्या का विवाह चिरजीवी वर के साथ करे। इसमें पुनर्भूदोष अर्थात् दूसरे विवाह का दोष नहीं होता है ॥ १५४ ॥

गुरुसूर्यशुद्धिः

स्त्रीणां गुरुबलं श्रेष्ठं पुरुषाणां रवेर्बलम् ।
द्वयोश्चन्द्रबलं श्रेष्ठमिति गर्गेण भाषितम् ॥ १५५ ॥

विवाह में स्त्रियों का बृहस्पति का बल, पुरुष का सूर्य का बल लेना चाहिए। दोनों का चन्द्रबल लेना चाहिए यह गर्ग का वचन है ॥ १५५ ॥

जन्मत्रिदशमारिस्थः पूजया शुभदो गुरुः ।
विवाहे च चतुर्थाष्टद्वादशस्थो मृतिप्रदः ॥ १५६ ॥

१ । ३ । १० । ६ स्थानों में स्थित बृहस्पति पूजा करने से शुभ फलदायक हो जाता है। परन्तु ४ । ८ । १२ स्थानों में स्थित बृहस्पति विवाह में मृत्यु को देता है ॥ १५६ ॥

चतुर्थे चाष्टमे चैव द्वादशस्थे दिवाकरे ।
वरः पञ्चत्वमाप्नोति कृते पाणिग्रहोत्सवे ॥ १५७ ॥

यदि ४ । ८ । १२ स्थानों में सूर्य हो, तो विवाह करने पर वर की मृत्यु होती है ॥ १५७ ॥

झषचापकुलीरस्थो जीवोऽप्यशुभगोचरः ।

अतिशोभनतां दद्याद्विवाहोपनयनादिषु ॥ १५८ ॥

मीन, धन, कर्क राशि का बृहस्पति गोचर में यद्यपि अशुभ भी हो तथापि विवाह, उपनयन आदि शुभ कार्यों में अत्यन्त शुभ फल देता है ॥ १५८ ॥

गुरुसूर्यशान्तिः

अनिष्टस्थानगे सूर्ये शुभराशिः पुरो भवेत् ।
त्रयोदशदिनं त्यक्त्वा शेषस्थं शुभमादिशेत् ॥ १५९ ॥

गोचर में सूर्य अशुभ स्थान में हो, तो संक्रान्ति से १३ दिन छोड़कर विवाह आदि करने से अशुभ फल नहीं रहता है ॥ १५९ ।

अशुभस्थानगे सूर्ये दद्याद्धेनुं सदक्षिणाम् ।
हाटकं वसनं पीतं दद्याद्दुष्टे बृहस्पतौ ॥ १६० ॥

यदि सूर्य अशुभ स्थान में हो, तो गोदान करे । यदि बृहस्पति अशुभ स्थान में हो, तो सुवर्णसहित पीत वस्त्र का दान करे ॥ १६० ॥

सहोदरसंस्कारविचारः

एकमातृजयोरेके वत्सरेऽपत्ययोर्द्वयोः ।
न संस्कारः समानः स्यान्मातृभेदे विधीयते ॥ १६१ ॥

यमलों को छोड़कर दो सहोदरों का समान संस्कार एक ही वर्ष में नहीं होता है । यदि दोनों की भिन्न माताएँ हों, तो हो सकता है ॥ १६१ ॥

त्रिज्येष्ठं वर्ज्यम्

आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयो-
र्जन्ममासभतिथौ करग्रहः ।
नोचितोऽथ विबुधैः प्रशस्यते
चेद्द्वितीयजनुषोः सुतप्रदः ॥ १६२ ॥

ज्येष्ठ पुत्र या कन्या का जन्ममास, जन्मनक्षत्र, जन्मतिथि में

विवाह उचित नहीं है। परन्तु यदि द्वितीय, तृतीय आदि पुत्र या कन्या हों, तो दोष नहीं है ॥ १६२ ॥

ज्येष्ठद्वन्द्वं मध्यमं संप्रदिष्टं
त्रिज्येष्ठं चेन्नैव युक्तं कदापि।
केचित्सूर्यं वह्निगं प्रोज्झ्य चाहु-
र्नैवान्योन्यं ज्येष्ठयोः स्याद्विवाहः ॥ १६३ ॥

दो ज्येष्ठ मध्यम हैं, तीन ज्येष्ठ सर्वथा वर्जित हैं। किसी आचार्य के मत से कृत्तिका नक्षत्र के सूर्य को छोड़कर शेष भाग ज्येष्ठ मास का शुभ है। ज्येष्ठ पुत्र तथा ज्येष्ठ कन्या का परस्पर विवाह नहीं होता है ॥ १६३ ॥

त्रिमंगलं वर्ज्यम्

कुले ऋतुत्रयादर्वाङ् मण्डनाच्च तु मुण्डनम्।
प्रवेशान्निर्गमो नेष्टो न कुर्यान्मंगलत्रयम् ॥ १६४ ॥

एक कुल में (तीन पीढ़ी के भीतर) ६ महीने के भीतर विवाह के उपरान्त चूड़ाकरण तथा उपनयन न करे। वधूप्रवेश के उपरान्त लड़की का विवाह न करे तथा तीन मंगल कार्य न करे ॥ १६४ ॥

संवत्सरपरिवर्त्तने

ऋतुत्रयस्य मध्ये चेदन्याब्दस्य प्रवेशनम्।
तदा ह्येकोदरस्यापि विवाहस्तु प्रशस्यते ॥ १६५ ॥

यदि ६ महीने से पहले ही संवत्सर बदल जावे, तो ६ महीने का विचार नहीं होता है ॥ १६५ ॥

षण्मासवर्जनम्

सुतपरिणयात्षण्मासान्तः सुताकरपीडनं
न च निजकुले तद्वद्वा मण्डनादपि मुण्डनम्।
न च सहजयोर्देये भ्रात्रोः सहोदरकन्यके
न च सहजसुतोद्वाहोऽब्दार्धे शुभे न पितृक्रिया ॥ १६६ ॥

पुत्र के विवाह के अनन्तर कन्या का विवाह छः महीनें के भीतर तीन पीढ़ियों में नहीं हो सकता है। एवं विवाह के पश्चात् छः महीने तक उपनयन नहीं हो सकता है। दो सहोदर भाइयों के साथ दो सहोदर कन्याओं का विवाह नहीं हो सकता है। दो सहोदर भाइयों का विवाह छः महीनें के भीतर नहीं हो सकता है। शुभ काम करनें के उपरान्त छः महीने तक श्राद्ध आदि पितृ-कर्म नहीं होता है ॥ १६६ ॥

प्रतिकूलादिविचारः

वध्वा वरस्यापि त्रिपूरुषे कुले
नाशं व्रजेत्कश्चन निश्चयोत्तरम्।
मासोत्तरं तत्र विवाह इष्यते
शान्त्याथवा सूतकनिर्गमे परैः ॥ १६७ ॥

यदि वाग्दान के अनन्तर कन्या या वर के कुल में तीन पीढ़ी के भीतर किसी की मृत्यु हो, तो एक महीनें के पश्चात् या अशौच पूरा होनें पर शान्ति करके विवाह हो सकता है ॥ १६७ ॥

चूडाव्रतं चापि विवाहतो व्रता-
च्चूडा न चेष्टा पुरुषत्रयान्तरे।
वधूप्रवेशाच्च सुताविनिर्गमः
षण्मासतो वाब्दविभेदतः शुभः ॥ १६८ ॥

विवाह के अनन्तर छः महीनें के भीतर तीन पीढ़ी में व्रतबन्ध नहीं करना चाहिए। तथा व्रतबन्ध के पश्चात् छः महीनें के भीतर चूड़ाकर्म न करना चाहिए। वधूप्रवेश के पीछे छः महीनें के भीतर कन्या बिदा नहीं हो सकती है। छः महीनें के अनन्तर या संवत्सर बदल जानें से शुभ होता है ॥ १६८ ॥

कन्यावरणमुहूर्त्तः

विश्वस्वातीवैष्णवपूर्वात्रयमैत्रै-

र्वस्वाग्नेयैर्वा करपीडोचितऋक्षैः।
वस्त्रालंकारादिसमेतैः फलपुष्पैः
सन्तोष्यादौ स्यादनु कन्यावरणं हि ॥ १६९ ॥

उत्तराषाढ़, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा कृत्तिका या विवाहोक्त नक्षत्रों में वस्त्र, अलंकार, फल, पुष्पों से कन्यावरण (सगाई) करना चाहिए ॥ १६९ ॥

वरवरणमुहूर्त्तः

धरणिदेवोऽथवा कन्यकासोदरः
शुभदिने गीतवाद्यादिभिः संयुतः।
वरवृतिं वस्त्रयज्ञोपवीतादिना
ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयैराचरेद् ॥ १७० ॥

ब्राह्मण या कन्या का भाई शुभ दिन में गीत, वाद्य, वस्त्र, यज्ञोपवीत आदि साथ लेकर वर का वरण अर्थात् तिलक चढ़ावे। ध्रुवसंज्ञक, कृत्तिका तथा तीनों पूर्वा नक्षत्र शुभ हैं ॥ १७० ॥

दर्शश्राद्धदिनवर्जनम्

विवाहमारभ्य चतुर्थिमध्ये
श्राद्धं दिनं दर्शदिनं यदि स्यात्।
वैधव्यमाप्नोति तदा तु कन्या
जीवेत्पतिश्चेदनपत्यता स्याद् ॥ १७१ ॥

विवाह के अनन्तर चतुर्थीकर्म के भीतर श्राद्ध का दिन या अमावास्या न होनी चाहिए। यदि हो, तो कन्या विधवा होती है। यदि विधवा न भी हो, तो सन्तानरहित होती है ॥ १७१ ॥

युग्माब्दविचारः

अब्देषु युग्मेषु च कन्यकानां
स्वजन्मवर्षाच्छुभदो विवाहः।
अयुग्मवर्षेषु शुभो नराणां

त्विपर्यये दुःखगदप्रदः स्यात् ॥ १७२ ॥

सम वर्षों में कन्या का विवाह, विषम वर्षों में पुत्र का विवाह शुभ है। विपरीत वर्षों में करने से दुःख तथा रोग होते हैं ॥१७२॥

विवाहे मासाः

मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगे
मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुचेः।
अलिमृगाजगते करपीडनं
भवति कार्त्तिकपौषमधुष्वपि ॥ १७३ ॥
मीनं चैत्रं च वर्जयेत्

मिथुन, कुम्भ, मकर, वृश्चिक, वृष, मेष इन राशियों में जब सूर्य हों, तब विवाह शुभ है। मिथुन के सूर्य में आषाढ़ शुक्ल प्रतिपदा से दशमी तक, वृश्चिक के सूर्य में कार्त्तिक में, मकर के सूर्य में पौष में, मेष के सूर्य में चैत्र में भी विवाह हो सकता है।

जब मीन का सूर्य हो चैत्र मास हो, तो विवाह वर्जित है। चातुर्मास अर्थात् हरिशयन वर्जित है ॥ १७३ ॥

विवाहनक्षत्रादयः

निर्वेधैः शशिकरमूलमैत्रपित्र्य-
ब्रह्मान्त्योत्तरपवनैः शुभो विवाहः।
रिक्तामारहिततिथौ शुभेऽह्नि वैश्व-
प्रान्त्यांघ्रिःश्रुतितिथिभागतोऽभिजित्स्यात् ॥ १७४ ॥

पञ्चशलाका वेध से रहित मृगशिर, हस्त, मूल, अनुराधा, मघा, रोहिणी, रेवती, तीनों उत्तरा, स्वाती इन नक्षत्रों में ४। ९। १४ अमावास्या को छोड़कर अन्य शुभ तिथि में, शुभ वार में विवाह करना श्रेष्ठ है। उत्तराषाढ़ा का चतुर्थ चरण तथा श्रवण का प्रथम चरण अभिजित् नक्षत्र होता है ॥ १७४ ॥

कर्त्तरी

लग्नात्पापावृज्वनृजू व्ययार्थस्थौ यदा तदा।
कर्त्तरी नाम सा ज्ञेया मृत्युदारिद्र्यशोकदा॥ १७५॥

जब लग्न से व्यय तथा धनस्थान में पापग्रह हों, व्ययस्थान में मार्गी पापग्रह हों तथा धनस्थान में वक्री पापग्रह हों, तो कर्त्तरी-योग होता है। इसका फल मृत्यु, दारिद्र्य तथा शोक है॥१७५॥

चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते दारिद्र्यं मरणं शुभम्।
सौख्यं सापत्न्यवैराग्ये पापद्वययुते मृतिः॥ १७६॥

यदि चन्द्रमा सूर्य से युक्त हो, तो दारिद्र्य, मंगल से युक्त हो तो मरण, बुध से युक्त हो तो शुभ, बृहस्पति से युक्त हो तो सुख, शुक्र से युक्त हो तो सापत्न (वैर), शनि से युक्त हो तो वैराग्य, दो पापग्रहों से युक्त हो तो मृत्यु करता है। इसका नाम संग्रह-दोष है॥ १७६॥

लग्नाष्टकं चन्द्राष्टकं च

जन्मलग्नभयोर्मृत्युराशौ नेष्टः करग्रहः।
एकाधिपत्ये राशीशमैत्रे वा नैव दोषकृत्॥ १७७॥

अपने जन्मलग्न या जन्मराशि से अष्टम लग्न में विवाह अशुभ है परन्तु जन्म या जन्मराशि का स्वामी तथा विवाहलग्न का स्वामी एक ही हो या दोनों की मित्रता हो, तो दोष नहीं है॥१७७॥

मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियोऽष्टमं
लग्नं यदा नाष्टमगेहदोषकृत्।
अन्योन्यमित्रत्ववशेन सा वधू-
र्भवेत्सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी॥ १७८॥

यदि अष्टम स्थान में १२। २। ४। ८। १०। ६ राशियाँ हों, तो अष्टम लग्न का दोष नहीं होता है। ग्रहों के परस्पर मित्रता

होने से कन्या को पुत्र आयु गृह तथा सुख का भोग मिलता है। अष्टमेश लग्न में हो, तो शुभ नहीं॥ १७८॥

जामित्रदोषः

लग्नाच्चन्द्रान्मदनभवनगे खेटे न स्यादिह परिणयनम्।

लग्न या चन्द्रमा से सप्तम स्थान में कोई ग्रह हो, तो विवाह नहीं हो सकता है।

तिथिगण्डान्तः

नन्दिकायास्तिथेरादौ पूर्णानां च तथान्तिमे।
घटिकैका शुभे त्याज्या तिथिगण्डोऽयमुच्यते॥ १७९॥

नन्दासंज्ञक तिथियों की आदि की एक घड़ी और पूर्णासंज्ञक तिथियों की अन्त की एक घड़ी तिथिगण्डान्त कहलाती है। यह शुभ कार्यों में त्याज्य है॥ १७९॥

नक्षत्रगण्डान्तः

ज्येष्ठाश्लेषारेवतीनामन्ते च घटिकाद्वयम्।
आदौ मूलमघाश्वानां भगण्डो घटिकाद्वयम्॥ १८०॥

ज्येष्ठा, आश्लेषा और रेवती की अन्त की दो घड़ियाँ, मूल, मघा और अश्विनी की आदि की दो घड़ियाँ नक्षत्र गण्डान्त हैं॥ १८०॥

लग्नगण्डान्तः

मीनवृश्चिककर्कान्ते घटिकार्धं परित्यजेत्।
आदौ मेषस्य चापस्य सिंहस्य घटिकार्धकम्॥ १८१॥

मीन, वृश्चिक और कर्क लग्नों के अन्त की आधी घड़ी, मेष, धन और सिंह की आदि की आधी घड़ी वर्जित है॥ १८१॥

विवाहे त्रिविधा गण्डान्तास्त्याज्याः

विवाह में तीनों प्रकार के गण्डान्त वर्जित हैं।

तारा

त्रिपञ्चसप्ततारा वर्ज्याः ।

३ । ५ । ७ तारा विवाह में वर्जित है । (पृष्ठ ३१)

लत्ता

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे
भं सप्तगोजातिशरैर्मितं हि ।
संलत्तयन्तेऽर्कशनीज्यभौमाः
सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात् ॥ १८२ ॥

जिस नक्षत्र में बुध स्थित हो उससे पिछले सातवें नक्षत्र पर लत्ता दोष करता है एवं राहु पिछले नवें नक्षत्र पर, पूर्ण चन्द्र पिछले बाईसवें नक्षत्र पर, शुक्र पिछले पाँचवें नक्षत्र पर लत्ता दोष करता है या लात मारता है । सूर्य अपने आगे के बारहवें नक्षत्र पर, शनि आगे के आठवें नक्षत्र पर, बृहस्पति आगे के छठे नक्षत्र पर, मंगल आगे के तीसरे नक्षत्र पर लत्ता दोष करते हैं ॥ १८२ ॥

रवेर्लत्ता हरेद्वित्तं कुजस्य कुरुते मृतिम् ।
बृहस्पतेर्बन्धुनाशं शनेः कुर्यात्कुलक्षयम् ॥ १८३ ॥
बुधस्य कुरुते त्रासं लत्ता राहोर्विनाशयेत् ।
शुक्रस्य दुःखदा नित्यं त्रासदा तु कलानिधेः ॥ १८४ ॥

सूर्य की लत्ता धन का नाश, मंगल की मृत्यु, बृहस्पति की बन्धुनाश, शनि की कुलक्षय करती है । बुध की त्रास, राहु की नाश, शुक्र की नित्य दुःख तथा चन्द्रमा की लत्ता त्रास करती है ॥ १८३-१८४ ॥

लत्तां मालवके देशे पातं कौशलके तथा ।
एकार्गलं तु काश्मीरे वेधं सर्वत्र वर्जयेत् ॥ १८५ ॥

मालवदेश में लत्ता का, कौशलदेश में पात का, काश्मीर देश में एकार्गल का, सब देशों में वेध का विचार लेना चाहिए ॥ १८५ ॥

पातः

हर्षणवैधृतिसाध्यव्यतीपातकगण्डशूलयोगानाम् ।
अन्ते यन्नक्षत्रं पातेन निपातितं तत्स्यात् ॥ १८६ ॥

हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतीपात, गण्ड तथा शूल इन योगों के अन्त में जो नक्षत्र हो वह पातयोग से दूषित होता है । यदि किसी चन्द्र नक्षत्र में इनमें से कोई योग समाप्त हो, तो पात दोष होता है । इसी पात को चंडीश या चण्डायुध भी कहते हैं ॥ १८६ ॥

पातेन पतितो ब्रह्मा पातेन पतितो हरिः ।
पातेन पतितो रुद्रस्तस्मात्पातं विवर्जयेत् ॥ १८७ ॥

पात के कारण ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र का पतन हुआ इसलिये पात को वर्जित करना चाहिए ॥ १८७ ॥

यामित्रम्

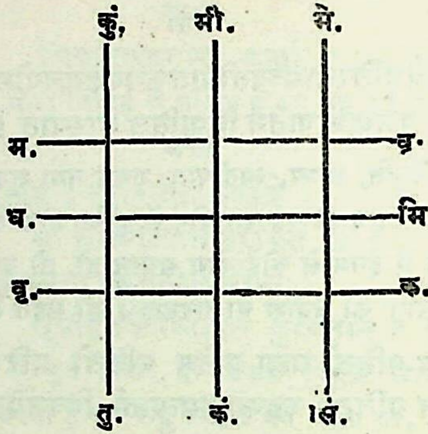
चतुर्दशं च नक्षत्रं यामित्रं लग्नभात्स्मृतम् ।
शुभयुक्तं तदिच्छन्ति पापयुक्तं च वर्जयेत् ॥ १८८ ॥

लग्न से चौदहवाँ नक्षत्र यामित्र कहलाता है । यदि वह शुभयुक्त हो, तो ग्रहण किया जाता है । पापयुक्त हो, तो वर्जित है॥१८८॥

क्रान्तिसाम्यम्

पञ्चास्याजौ गोमृगौ तौलिकुम्भौ
कन्यामीनौ कर्क्यली चापयुग्मे ।
तत्रान्योन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं
क्रान्ते साम्यं नो शुभं मंगलेषु ॥ १८९ ॥

इस क्रान्तिसाम्य चक्र में यदि सूर्य चन्द्रमा का परस्पर वेध हो, तो मंगलकार्यों में शुभ नहीं है जैसे वृष का सूर्य हो, मकर का चन्द्रमा हो, तो क्रान्तिसाम्य होगा ॥ १८९ ॥



शस्त्राहतोऽग्निदग्धो वा नागदष्टोऽपि जीवति ।
क्रान्तिसाम्यकृतोद्वाहो न जीवति कदाचन ॥ १९० ॥

शस्त्र से मारा हुआ या अग्नि से दग्ध अथवा सर्प से डँसा हुआ मनुष्य जी सकता है परन्तु क्रान्तिसाम्य में विवाह किया हुआ मनुष्य नहीं जीता है ॥ १९० ॥

वैधृतिव्यतिपातौ यौ क्रान्तिसाम्येऽर्कचन्द्रयोः ।
सत्कर्मारम्भणं तत्र व्यसनं मरणं विदुः ॥ १९१ ॥

सूर्य चन्द्रमा के क्रान्तिसाम्य में वैधृति, व्यतीपात योग होते हैं उनमें अच्छे कर्मों का आरम्भ करने से दुःख तथा मृत्यु फल है ॥ १९१ ॥

एकार्गलं खार्जूरं वा

व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वं
शूलान्त्यवज्रपरिघातिगण्डे ।
योगे विरुद्धे त्वभिजित्समेतः
खार्जूरमर्काद्विषमे शशी चेत् ॥ १९२ ॥

व्याघात, गण्ड, व्यतीपात, विष्कुम्भ, शूल, वैधृति, वज्र, परिघ तथा अतिगण्ड ये अशुभ योग जिस दिन हों तथा सूर्य के

नक्षत्र से विषम नक्षत्र पर चन्द्रमा हो, तो खार्जूर दोष होता है, इसी को एकार्गलदोष भी कहते हैं। इसमें नक्षत्रों की गणना अभिजित् सहित होती है ॥ १६२ ॥

व्रतबन्धविवाहादौ योगा वर्ज्याः

विवाहे प्रथमे क्षौरे सीमन्ते कर्णवेधने।
व्रतेऽन्नप्राशने चैव खार्जूरं परिवर्जयेत् ॥ १६३ ॥

विवाह, प्रथम क्षौर, सीमन्त, कर्णवेध, व्रतबन्ध तथा अन्न-प्राशन इनमें एकार्गलदोष वर्जित है ॥ १६३ ॥

युतिदोषः

यस्मिन्भवने चन्द्रस्तस्मिन्यदि जायते ग्रहः कश्चित्।
युतिरिति दोषस्तु तदा शुभयुक्तः केचिदिच्छन्ति ॥१६४॥

जिस घर में चन्द्रमा हो उसी घर में यदि कोई और भी ग्रह हो तो युतिदोष होता है। किसी के मत से शुभग्रह होने से दोष नहीं होता है ॥ १६४ ॥

यस्मिन्नृक्षे स्थितः खेटस्तदृक्षं युतिसंज्ञकम्।
तस्मिन्विवाहिता कन्या पुंश्चली जायते ध्रुवम् ॥ १६५ ॥

जिस नक्षत्र में कोई ग्रह हो उसे युति कहते हैं उसमें विवाह करने से कन्या व्यभिचारिणी होती है ॥ १६५ ॥

उपग्रहः

शराष्टदिक्शक्रनगातिधृत्य-
स्तिथिर्धृतिश्च प्रकृतेश्च पञ्च।
उपग्रहाः सूर्यभतोऽब्जताराः
शुभा नदेशे कुरुवाह्लिकानाम् ॥ १६६ ॥

यदि सूर्यनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र ५ । ८ । १० । १४ । ७ । १९ । १५ । १८ । २० । २२ । २३ । २४ । २५ वाँ हो, तो उपग्रह दोष होता है। यह दोष कुरु तथा वाह्लीक देशों में वर्जित है ॥ १६६ ॥

दशयोगदोषः फलं च

शशाङ्कसूर्यर्क्षयुतेऽभशेषे
खं भूयुगाङ्गानिदशेशतिथ्यः।
नागेन्दवोऽङ्केन्दुमिता नखाश्चे-
द्भवन्ति चैते दशयोगसंज्ञाः॥ १९७॥
वाताभ्राग्निमहीपचौरमरणं रुग्वज्रवादाः क्षतिः।

अश्विनी नक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र तक तथा सूर्य नक्षत्र तक गिनकर दोनों को आपस में जोड़कर २७ का भाग देने से यदि ०। १। ४। ६। १०। ११। १५। १८। १९। २० में से कोई अंक शेष रहे, तो दशयोग दोष होता है॥ १९७॥

यदि शून्य शेष रहे, तो वायुभय, १ शेष रहे, तो मेघभय, ४ शेष रहे, तो अग्निभय, ६ शेष रहे, तो राजभय, १० शेष रहे, तो चौरभय, ११ शेष रहे, तो मृत्युभय, १५ शेष रहे, तो रोगभय, १८ शेष रहे, तो वज्रभय, १९ शेष रहे, तो अपयश का भय, २० शेष रहे, तो हानि भय होता है।

मर्मादिवेधाः

मर्मकण्टकवेधं च शल्यं छिद्रं यो न जानाति।
नार्हति विवाहदीक्षालग्नं दातुं स दैवज्ञः॥ १९८॥

जो दैवज्ञ मर्म, कण्टक, वेध, शल्य तथा छिद्र इन दोषों को नहीं जानता है वह विवाहलग्न निश्चय करने के योग्य नहीं॥१९८॥

लग्ने पापे मर्मवेधः कण्टको नवपञ्चके।
चतुर्थे दशमे शल्यं छिद्रं भवति सप्तमे॥ १९९॥

लग्न में पापग्रह हो तो मर्मवेध, ९। ५ में पापग्रह हो तो कण्टकवेध, ४। १० में पापग्रह हो तो शल्यवेध, सप्तम में पापग्रह हो तो छिद्रवेध होता है॥ १९९॥

मरणं मर्मवेधे स्यात्कण्टके च कुलक्षयः।

शल्ये च नृपतेर्भीतिः पुत्रनाशश्च छिद्रके ॥ २०० ॥

मर्मवेध का फल मृत्यु, कण्टक का कुलक्षय, शल्य में राजभीति, छिद्र में पुत्रनाश होता है ॥ २०० ॥

ग्रहणोत्पातभम्

यस्मिन्धिष्ण्ये महोत्पातो ग्रहणं वा भवेद्यदि ।
तस्मिन्धिष्ण्ये शुभं कर्म षण्मासं वर्जयेद्बुधः ॥ २०१ ॥

जिस नक्षत्र में महाउत्पात या ग्रहण हुआ हो उस नक्षत्र में छः महीने तक सब शुभ कर्म वर्जित हैं ॥ २०१ ॥

विवाहे पञ्चशलाकाचक्रम्

पञ्चोर्ध्वाः स्थापयेद्रेखाः पञ्च तिर्यङ्मुखास्तथा ।
द्वयोश्च कोणयोर्द्वे द्वे चक्रं पञ्चशलाकम् ॥ २०२ ॥
ईशाने कृत्तिका देया क्रमादन्यानि भानि च ।
ग्रहास्तेषु प्रदातव्या ये च यत्र प्रतिष्ठिताः ॥ २०३ ॥
एकरेखास्थितिर्वेधो दिननाथादिभिर्ग्रहैः ।
विवाहे तत्र मासं तु न जीवति कदाचन ॥ २०४ ॥
खेटे तत्र गते तुरीयचरणाद्योर्वा तृतीयद्वयोः ।
वधूप्रवेशने दाने वरणे पाणिपीडने ।
वेधः पञ्चशलाकाख्योऽन्यत्र सप्तशलाककः ॥ २०५ ॥

पाँच खड़ी रेखा, पाँच तिरछी रेखा, दो-दो रेखा कोणों में लिखे, तो पञ्चशलाका चक्र बनता है । ईशान में कृत्तिका लिखकर अभिजित् सहित सब नक्षत्रों को क्रम से लिखे । जो ग्रह जिस नक्षत्र पर हों उनको लिखे । सूर्य आदि ग्रह जब एक रेखा में हों, तो वेध होता है । चौथे चरण का प्रथम चरण के साथ, द्वितीय चरण का तृतीय चरण के साथ वेध होता है । यदि वेध में विवाह करे, तो वर कन्या एक महीना भी जीवित नहीं रहते हैं । शुभग्रह का वेध हो, तो नक्षत्र चरण त्यागना चाहिए । पापग्रह का वेध

हो, तो सम्पूर्ण नक्षत्र वर्जित है । वधूप्रवेश, कन्यादान, वरण तथा विवाह में पञ्चशलाका का विचार करना चाहिए । अन्यत्र सप्तशलाका चक्र का विचार होता है ॥ २०२-२०५ ॥

रविवेधे च वैधव्यं कुजवेधे कुलक्षयम् ।
बुधवेधे भवेद्बन्ध्या प्रव्रज्या गुरुवेधतः ॥ २०६ ॥
अपुत्रा शुक्रवेधे च सौरे चन्द्रे च दुःखिता ।
परपुरुषरता राहोः केतोः स्वच्छन्दचारिणी ॥ २०७ ॥

सूर्य का वेध हो, तो कन्या विधवा होती है । मंगल का वेध हो, तो कुलक्षय होता है । बुध के वेध में कन्या बन्ध्या होती है । बृहस्पति के वेध में कन्या प्रव्रज्या ग्रहण करती है । शुक्र के वेध में सन्तति नहीं होती है । शनि तथा चन्द्रमा के वेध में दुःख, राहु के वेध में व्यभिचारिणी होती है । केतु के वेध में कन्या स्वछन्दचारिणी होती है ॥ २०६-२०७ ॥

बाणपञ्चकम्

रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रान्तियातां
शकमितिरथतष्टाङ्कैर्यदा पञ्च शेषाः ।
रुगनलनृपचौरा मृत्युसंज्ञश्च बाणो
नवहृतशरशेषे शेषकैक्ये स शल्यः ॥ २०८ ॥

सूर्य के गत अंशों को पाँच स्थानों में पृथक्-पृथक् स्थापित करे । उनमें क्रम से ६।३।१।८।४ का योग करे । योगफल में ९ का भाग देदे । जिस स्थान में पाँच शेप रहें वहाँ क्रम से रोग, अग्नि, नृप, चौर तथा मृत्यु बाण होते हैं । जैसे आदि में पाँच शेष रहे, तो रोग बाण, द्वितीय में पाँच शेप रहे, तो अग्नि बाण । तृतीय में पाँच शेष रहे, तो नृप बाण, चतुर्थ में पाँच शेष रहे, तो चौर बाण, पञ्चम में पाँच शेष रहे, तो मृत्यु बाण होता है । पाँचों

स्थानों के शेष अंकों को जोड़कर नव का भाग देने से यदि पाँच शेष रहे, तो लोहसहित बाण होता है ॥ २०८ ॥

रात्रौ चौररुजौ दिवानरपतिर्वह्निः सदा सन्ध्ययो-
मृ॑त्युश्चाथ शनौ नृपो विदि मृतिर्भौमेऽग्निचौरौ रवौ ।
रोगोऽथ व्रतगेहगोपनृपसेवायानपाणिग्रहे
वर्ज्याश्च क्रमतो वुधैरुगनलक्ष्मापालचौरामृतिः ॥ २०९ ॥

रात्रि में चौर तथा रोग बाण, दिन में नृप बाण, सब काल में अग्नि बाण, दोनों सन्ध्याओं में मृत्यु बाण वर्जित है।

शनि को नृप बाण, बुध को मृत्यु बाण, मंगल को अग्नि तथा चौर बाण, रवि को रोग बाण वर्जित है।

यज्ञोपवीत में रोग बाण, घर के छादन में अग्नि बाण, राजा की सेवा में नृप बाण, यात्रा में चौर बाण, विवाह में मृत्यु बाण वर्जित है ॥ २०९ ॥

विवाहलग्ने रेखाः

लत्ता पातो युतिर्वेधो जामित्रं बाणपञ्चकम् ।
एकार्गलोपग्रहं च क्रान्तिसाम्यं तथैव च ॥ २१० ॥
दग्धातिथिस्तु विज्ञेया दश दोषा महावलाः ।
एतान्दोषान्परित्यज्य लग्नं संशोधयेद्बुधः ॥ २११ ॥

लत्ता, पात, युति, वेध, जामित्र, 'बाण, एकार्गल, उपग्रह, क्रान्तिसाम्य तथा दग्धातिथि ये दस दोष बड़े बलवान् हैं। इनको छोड़कर विवाहलग्न स्थिर करे। इनमें भी पहले के पाँच अवश्य वर्जित करे, दूसरे पाँच आवश्यक में ग्रहण करे। तिथिपत्रों में विवाहलग्नों पर दो प्रकार की रेखाएँ लिखी रहती हैं। एक खड़ी (।) जिसका अर्थ शुभ है। दूसरी टेढ़ी (ऽ) जिसका अर्थ अशुभ है। सब रेखाओं का जोड़ मिलाकर दस दोष हैं। ये रेखाएँ

लत्ता आदि दस दोषों को यथाक्रम शुभ या अशुभ सूचित करती हैं ॥ २१०-२११ ॥

लत्तादिदोषापवादः

एकार्गलोपग्रहपातलत्ता-
जामित्रकर्तर्युदयास्तदोषाः ।
नश्यन्ति चन्द्रार्कबलोपपन्ने
लग्ने यथार्काभ्युदये तु दोषाः ॥ २१२ ॥

जब सूर्य, चन्द्रमा के बल से युक्त लग्न हो, तो एकार्गल, उपग्रह, पात, लत्ता, जामित्र, कर्तरी, उदय तथा अस्त दोषों का इस प्रकार नाश होता है जैसे सूर्योदय होने पर अन्धकार का ॥ २१२ ॥

लग्ने ग्रहाणां शुभाशुभस्थानानि

व्यये शनिः खेऽवनिजस्तृतीये
भृगुस्तनौ चन्द्रखला न शस्ताः ।
लग्नेट्कविग्लौश्च रिपौ मृतौ ग्लौ-
र्लग्नेट्शुभाराश्च मदे च सर्वे ॥ २१३ ॥

विवाहलग्न से बारहवें शनि, दशवें मंगल, तीसरे शुक्र, लग्न में चन्द्रमा तथा पापग्रह शुभ नहीं हैं। लग्नेश शुक्र तथा चन्द्रमा छठे अशुभ है। चन्द्रमा, लग्नेश, शुभग्रह तथा मंगल ये अष्टम स्थान में अशुभ हैं। सप्तम स्थान में कोई ग्रह शुभ नहीं है ॥२१३॥

त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोऽर्कपुत्रा-
स्त्र्यायारिगः क्षितिसुतो द्विगुणायगोऽब्जः ।
सप्तव्ययाष्टरहितौ ज्ञगुरू सितोऽष्ट-
त्रिद्यूनषड्व्ययगृहान्परिहृत्य शस्तः ॥ २१४ ॥

३ । ११ । ८ । ६ इन स्थानों में सूर्य, केतु, राहु तथा शनि श्रेष्ठ हैं, ३ । ११ । ६ में मंगल, २ । ३ । ११ में चन्द्रमा, ७ । १२ । ८ स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में बुध तथा बृहस्पति, ८ । ३ । ७ ।

६ । १२ स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में शुक्र शुभ है ॥ २१४ ॥

दोषपरिहारः

पापौ कर्त्तरिकारकौ रिपुगृहे नीचास्तगौ कर्त्तरी-
दोषो नैव सितेऽरिनीचगृहगे तत्षष्ठदोषोऽपि न ।
भौमेऽस्ते रिपुनीचगे नहि भवेद्भौमोऽष्टमो दोषकृ-
न्नीचे नीचनवांशके शशिनि रिष्फाष्टारिदोषोऽपि न२१५

कर्त्तरीयोगकारक क्रूर ग्रह अपने शत्रु राशि वा नीच राशि या अस्त के हों, तो कर्त्तरी का दोष नहीं होता है। यदि शुक्र शत्रु राशि का या नीच का होकर छठे घर में हो, तो छठे शुक्र का दोष नहीं होता। मंगल अस्त का या शत्रु राशि का या नीच राशि का हो, तो अष्टम मंगल का दोष नहीं। चन्द्रमा नीच का या नीच नवांशक का हो, तो ६ । ८ । १२ स्थानों में स्थित का दोष नहीं ॥ २१५ ॥

अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्षदग्ध-
तिथ्यन्धकाणबधिराङ्गमुखाश्च दोषाः ।
नश्यन्ति विद्गुरुसितेष्विह केन्द्रकोणे
तद्वच्च पापविधुयुक्तनवांशदोषः ॥ २१६ ॥

यदि बुध, बृहस्पति तथा शुक्र केन्द्र या त्रिकोण में हों, तो वर्ष, अयन, ऋतु, मास, नक्षत्र, पक्ष, दग्धतिथि, अन्ध, काण, बधिर आदि लग्न दोषों का तथा पापग्रह युक्त चन्द्रमा या पापयुक्त नवांश का दोष नाश हो जाता है ॥ २१६ ॥

केन्द्रे कोणे जीव आये रवौ वा
लग्ने चन्द्रे वापि वर्गोत्तमे वा ।
सर्वे दोषा नाशमायान्ति चन्द्रे
लाभे तद्वद्दुर्मुहूर्त्तांशदोषाः ॥ २१७ ॥

केन्द्र (सप्तम स्थान को छोड़कर) या त्रिकोण में बृहस्पति हो

या लाभस्थान में सूर्य हो या चन्द्रमा वर्गोत्तम होकर लग्न में हो (या लग्न से चन्द्रमा उपचय अर्थात् ३।६।१०।११ स्थानों में हो, तो) सब दोषों का नाश हो जाता है। दुष्ट मुहूर्त, निषिद्ध नवांशों का दोष भी नष्ट हो जाता है ॥ २१७ ॥

त्रिकोणे केन्द्रे वा मदनरहिते दोषशतकं
हरेत्सौम्यः शुक्रो द्विगुणमपि लक्षं सुरगुरुः ।
भवे दाये केन्द्रेऽङ्गप उत लवेशो यदि तदा
समूहं दोषाणां दहन इव तूलं शमयति ॥ २१८ ॥

यदि सप्तम स्थान को छोड़कर केन्द्र या त्रिकोण में बुध हो, तो १०० दोषों का नाश करता है। यदि शुक्र हो, तो २०० दोषों का नाश करता है। यदि बृहस्पति हो, तो एक लाख दोषों को शान्त करता है। लग्नेश या लग्न नवांशेश ११।१।४।१० स्थानों में हो, तो दोषों के समूह को ऐसा जला देता है जैसे अग्नि रुई को ॥ २१८ ॥

विंशोपकाः

द्वौ द्वौ ज्ञभृग्वोः पञ्चेन्दौ रवौ सार्धत्रयो गुरौ ।
रामा मन्दागुकेत्वारे सार्धैकं विंशोपकाः ॥ २१९ ॥

पूर्वोक्त शुभ स्थानों में यदि बुध, शुक्र हों, तो २।२ विंशोपक बल पाते हैं। चन्द्रमा ५ बल पाता है। सूर्य ३½ विश्वा बल पाता है। बृहस्पति ३ विश्वा बल पाता है। शनि, राहु, केतु, मंगल प्रत्येक १½–१½ विंशोपक बल पाते हैं ॥ २१९ ॥

दशविंशोपकाधिकं लग्नं शुभम्

लग्नं शुभं विवाहे स्याद्दशविंशोपकाधिकम् ॥ २२० ॥

विवाह में १० विश्वा से अधिक लग्न शुभ होता है ॥ २२० ॥

वर्षाधिक्यविषये

रवीज्यचन्द्रशुद्धिश्च दश वर्षाणि कारयेत् ।

अत ऊर्ध्वं रजस्कन्या तस्माद्दोषो न विद्यते ॥ २२१ ॥

कन्या की १० वर्ष की अवस्था होने तक सूर्य, बृहस्पति तथा चन्द्रमा की शुद्धि का विचार करें। तदनन्तर कन्या रजोवती कहलाती है इसलिये सूर्य आदि की शुद्धि का विचार न करें ॥ २२१ ॥

दशवर्षव्यतिक्रान्ता कन्या शुद्धिविवर्जिता।
तस्यास्तारेन्दुलग्नानां शुद्धौ पाणिग्रहो मतः ॥ २२२ ॥

जब कन्या १० वर्ष से अधिक अवस्थावाली हो जावे, तो बृहस्पति आदि की शुद्धि का विचार न करे। तारा, चन्द्रमा तथा लग्न की शुद्धि में विवाह करे ॥ २२२ ॥

सर्वत्रापि शुभं दद्याद्द्वादशाब्दात्परं गुरुः।
पञ्चषष्ठाब्दयोरेव शुभगोचरता मता ॥ २२३ ॥

बारह वर्ष की अवस्था के अनन्तर बृहस्पति सब स्थानों में शुभ है। शुभ गोचर का विचार केवल पाँचवें या छठे वर्ष में होता है ॥२२३॥

शनिरिक्ताफलम्

शनैश्चरदिने प्राप्ते यदि रिक्ता तिथिर्भवेत्।
तस्मिन्विवाहिता कन्या पतिसम्पत्तिवर्धिनी ॥ २२४ ॥

यदि शनिवार तथा रिक्ता तिथि के दिन कन्या का विवाह किया जावे, तो पति की सम्पत्ति की वृद्धि होती है ॥ २२४ ॥

मघादिपादा वर्ज्याः

मघायाः प्रथमे पादे मूलस्य प्रथमे तथा।
रेवत्याश्च चतुर्थांशे विवाहः प्राणनाशनः ॥ २२५ ॥

मघा के प्रथम चरण में, मूल के प्रथम चरण में, रेवती के चौथे चरण में विवाह प्राणनाशक होता है ॥ २२५ ॥

पुष्यनक्षत्रं विवाहे निन्दितम्

कीर्त्तितो मुनिभिः सर्वैः पुष्यः सर्वार्थसाधकः।

इति सत्यपि चोद्वाहे निन्दितः सर्वदाबुधैः ॥ २२६ ॥

मुनि लोगों ने सब कामों में पुष्य नक्षत्र की बड़ी प्रशंसा की है, सर्वार्थसाधक भी माना है परन्तु विवाह में सर्वदा निन्दित है ॥२२६॥

विवाहात्पूर्वं दलनादिदिनम्

विधोर्बलमवेक्ष्य वा दलनकण्डनं वारकं
गृहाङ्गणविभूषणान्यथ च वेदिकामण्डपान् ।
विवाहविहितोडुभिर्विरचयेत्तथोद्वाहतो
न पूर्वमिदमाचरेत्त्रिनवषण्मिते वासरे ॥ २२७ ॥

चन्द्रमा का बल देखकर विवाहोक्त नक्षत्रों में कूटना, पीसना, लीपना, पोतना, चित्रकारी, मण्डप आदि बनाना चाहिए। परन्तु विवाह से पूर्व ३। ६। ९ वें दिन में आरम्भ न करे ॥ २२७ ॥

विवाहानन्तरं प्रथमाब्दे वधूनिवासः

उद्वाहात्प्रथमे ज्येष्ठे यदि पत्युर्गृहे वसेत् ।
पत्युर्ज्येष्ठं तदा हन्ति पौषे तु श्वशुरं तथा ॥ २२८ ॥
श्वश्रूं साषाढमासे तु अधिमासे स्वकं पतिम् ।
आत्मानं तु क्षये मासि तातं तातगृहे मधौ ॥ २२९ ॥

विवाह के बाद कन्या पहले जेठ महीने में यदि पति के घर में रहे, तो पति के ज्येष्ठ भाई की मृत्यु होती है। पौष में श्वशुर की, आषाढ़ में सास की, अधिमास में पति की, क्षयमास में अपनी मृत्यु होती है। चैत महीने में पिता के घर रहे, तो पिता की मृत्यु होती है ॥ २२८–२२९ ॥

वधूप्रवेशः

समाद्रिपञ्चाङ्कदिने विवाहा-
द्वधूप्रवेशोऽष्टदिनान्तराले ।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमास-
दिनेऽक्षवर्षात्परतो यथेष्टम् ॥ २३० ॥

विवाह से १६ दिन के भीतर सम दिनों में या ७ । ५ । ६ वें दिनों में वधूप्रवेश शुभ है। यदि १६ दिन के भीतर न हो सके. तो विषम वर्ष, विषम मास, विषम दिनों में शुभ है। यदि पाँच वर्ष से अधिक हो जावें, तो जब चाहे तब करे ॥ २३० ॥

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले ।
वधूप्रवेशः सन्नेष्टो रिक्तारार्के बुधे परैः ॥ २३१ ॥

ध्रुव, क्षिप्र, मृदु, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा तथा स्वाती नक्षत्रों में, रिक्ता तिथि, रवि भौमवारों को छोड़कर शेष तिथि वारों में वधूप्रवेश शुभ है। किसी के मत से बुधवार भी वर्जित है ॥ २३१ ॥

द्विरागमनम्

चरेदथौजहायने घटालिमेषगे रवौ
रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्व वासरे ।
नृयुग्ममीनकन्यका तुलावृषे विलग्नके
द्विरागमं लघुध्रुवे चरेऽलपे मृदूडुनि ॥ २३२ ॥

विषम वर्ष (१ । ३ । ५) में, ११ । १ । ८ राशि के सूर्य में, सूर्य तथा बृहस्पति की शुद्धि में, शुभग्रहों के वार में, ३ । १२ । ६ । ७ । २ लग्नों में, लघु, ध्रुव, चर, मूल, मृदु नक्षत्रों में द्विरा-गमन शुभ है ॥ २३२ ॥

शुक्रविचारः

दैत्येज्यो ह्यभिमुखदक्षिणे यदि स्या-
द्गच्छेयुर्नहि शिशुगर्भिणीनवोढाः ।
बालश्चेद्व्रजति विपद्यते नवोढा
चेद्वन्ध्या भवति च गर्भिणी त्वगर्भा ॥२३३॥

सम्मुख तथा दक्षिण शुक्र में बालक, गर्भवती, नूतन विवाहिता यात्रा न करे। यदि बालक यात्रा करे, तो विपत्ति में पड़े, नूतन

विवाहिता यात्रा करे, तो बन्ध्या होवे, गर्भवती यात्रा करे, तो गर्भपात होवे ॥ २३३ ॥

पित्र्ये गृहे चेत्कुचपुष्पसम्भव-
स्तदा न दोषः प्रतिशुक्रसम्भवः ।
भृग्वङ्गिरोवत्सवसिष्ठकश्यपा-
त्रीणां भरद्वाजमुनेः कुले तथा ॥ २३४ ॥

यदि पिता के घर में कुच निकल आवें तथा रजोदर्शन होने लगे, तो सम्मुख शुक्र का दोष नहीं। भृगु, अंगिरा, वत्स, वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, भरद्वाज गोत्रवालों को सम्मुख शुक्र का दोष नहीं ॥ २३४ ॥

उदेति यस्यां दिशि यत्र याति
गोलभ्रमाद्वाथ ककुब्भसंस्थे ।
त्रिधोच्यते सम्मुख एव शुक्रो
यत्रोदितस्तां तु दिशं न यायात् ॥ २३५ ॥

सम्मुख शुक्र तीन प्रकार का होता है। १–जिस दिशा में शुक्र का उदय हो। २–उत्तर दक्षिण गोल भ्रमण से जिस दिशा में शुक्र आवे। ३–कृत्तिका आदि नक्षत्रों के वश से जिस दिशा में होवे। पूर्वोक्त दिशाओं में जानेवाले को शुक्र सम्मुख होगा। जिस दिशा में उदय हो उस दिशा की यात्रा न करे ॥ २३५ ॥

अस्तंगते गुरौ शुक्रे सिंहस्थे वा बृहस्पतौ ।
दीपोत्सववलेनैव कन्या भर्तृगृहं व्रजेत् ॥ २३६ ॥

जब बृहस्पति या शुक्र अस्त हो गये हों या सिंहस्थ बृहस्पति हो (कन्या का रजोदर्शन पिता के घर में होने लगा हो), अच्छा मुहूर्त न मिले, तो दीपावली के दिन कन्या पति के घर को जावे ॥ २३६ ॥

उपचयगते जीवे भृगौ केन्द्रमुपागते ।
शुद्धे लग्ने शुभाक्रान्ते गन्तव्यं भर्तृमन्दिरे ॥ २३७ ॥

बृहस्पति उपचय में हो, शुक्र केन्द्र में हो, लग्न शुभ हो तथा शुभग्रह से युक्त हो, तब स्त्री पति के घर की यात्रा करे ॥ २३७ ॥

पौष्णादिवह्निभाद्यङ्घ्रिं यावत्तिष्ठति चन्द्रमाः ।
तावच्छुक्रो भवेदन्धः सम्मुखे दक्षिणे हितः ॥ २३८ ॥

जब चन्द्रमा रेवती से लेकर कृत्तिका के प्रथम चरण के बीच में रहता है, तब शुक्र अन्धा हो जाता है । इसमें सम्मुख या दक्षिण शुक्र का दोष नहीं होता है ॥ २३८ ॥

तीसरा अध्याय समाप्त ।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

—·—०—·—

चौथा अध्याय

तन्वादिद्वादशभावनामानि

तनुर्धनं च भ्राता च सुहृत्पुत्रो रिपुर्वधूः ।
मृत्युश्च धर्मकर्मायौ व्ययो भावाः प्रकीर्त्तिताः ॥ १ ॥

तनु, धन, भ्राता, सुहृत, पुत्र, शत्रु, स्त्री, मृत्यु, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय ये १२ भावों के नाम हैं ॥ १ ॥

भावपर्यायाः

होरा तनुर्मूर्त्युदयं शिरश्च
वाग्वित्तकौटुम्बमथार्थसंज्ञम् ।
सहोत्थदुश्चिक्यगलं तृतीयं
शौर्यं च कर्णौ सुखमम्बु वन्धुः ॥ २ ॥
रसातलं वै हिबुकं च वेश्म
पातालहृद्वाहनमातृसंज्ञाः ।
बुद्धिप्रभावात्मजमन्त्रसंज्ञं
विवेकशक्ती उदरप्रवेशः ॥ ३ ॥
रोगक्षतारिव्यसनं तु चौर-
स्थानं भवेद्विघ्नमिहाहुरार्याः ।

चित्तोत्थकामो मदनश्च भर्तृ
स्थानं कलत्रं दधिसूपसञ्ज्ञम् ॥ ४ ॥
क्षीरं गुडं मूत्रककृच्छ्रनाम
गुह्यं च रन्ध्रं मरणान्तकायुः ।
धर्मोदयौ पैतृकभाग्यभं तु
गुरुस्तपोलाभशुभार्जितानि ॥ ५ ॥
आज्ञा च मानं दशमं च कर्म
तदास्पदं खं धनलाभमायम् ।
व्ययोऽन्त्यभं रिष्फविनाशसंज्ञं
लग्नान्त्यखण्डः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ ६ ॥
द्यूनं द्युनमथास्तं च यामित्रं सप्तमं स्मृतम् ॥

होरा, मूर्त्ति, उदय और सिर ये तनुभाव के पर्याय हैं।

वाक्, वित्त, कुटुम्ब और नेत्र धनभाव के पर्याय हैं।

सहोत्थ, दुश्चिक्य और गल ये तीसरे भाव के पर्याय हैं।

शौर्य, कर्ण, सुख, अम्बु, बन्धु, रसातल, हिबुक, वेश्म, पाताल, हृदय, वाहन और माता ये चतुर्थ भाव के पर्याय हैं।

बुद्धि, प्रभाव, आत्मज, मन्त्र, विवेक, शक्ति और उदरप्रवेश ये पञ्चमभाव के पर्याय हैं।

रोग, क्षत, अरि, व्यसन, चोर और विघ्न ये षष्ठभाव के पर्याय हैं।

चित्तोत्थ, काम, मदन, भर्ता, कलत्र, दधि और सूप ये सप्तम भाव के पर्याय हैं।

क्षीर, गुड, मूत्रकृच्छ्र, गुह्य, रन्ध्र, मरण, अन्तक और आयु ये अष्टमभाव के पर्याय हैं।

धर्म, उदय, पैतृक, भाग्य, गुरु, तप, लाभ, शुभ और अर्जित ये नवमभाव के पर्याय हैं।

आज्ञा, मान, कर्म, आस्पद और ख ये दशमभाव के पर्याय हैं।

लाभ और आय ये ग्यारहवें भाव के पर्याय हैं।

व्यय, अन्त्य, रिष्फ, विनाश और लग्न का अन्त्य खण्ड ये बारहवें भाव के पर्याय हैं॥ २-६ ॥

द्यून, द्युन, अस्त, यामित्र भी सप्तम भाव के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं॥

केन्द्रादि संज्ञा

केन्द्रचतुष्टयकण्टकसंज्ञाद्यचतुर्थसप्तदशानाम्।
परतः पणफरमापोक्लिमं च वेद्यं यथाक्रमशः॥ ७ ॥
स्वायाष्टमात्मजाः पणफराः स्यु-
स्त्र्यरिधर्मान्त्या आपोक्लिमाख्याः।
केन्द्रात्परं पणफरं
परतस्तु सर्वमापोक्लिमं स्यात्॥ ८ ॥
त्रिलाभदशमारीणां भवेदुपचयाख्यकम्।
चतुर्थाष्टमयोः संज्ञा चतुरस्रं स्मृता बुधैः॥ ९ ॥
त्रिकोणं नवपञ्चमे नवमं त्रित्रिकोणकम्।
षष्ठाष्टमद्वादशानां त्रिकसंज्ञा निगद्यते॥ १० ॥

१।४।७।१० स्थानों के नाम केन्द्र चतुष्टय और कण्टक हैं। उसके बाद क्रम से पणफर और आपोक्लिम हैं, २।५।८।११ पणफर, ३।६।९।१२ आपोक्लिम।

३।६।१०।११ स्थानों का नाम उपचय है।

४।८ स्थानों का नाम चतुरस्र है।

५।९ स्थानों का नाम त्रिकोण है।

९ वें स्थान का नाम त्रित्रिकोण है।

६।८।१२ स्थानों का नाम त्रिक है॥ ७-१० ॥

भावानां प्रसिद्धसंज्ञाः

१—लग्न, मूर्त्ति, अंग, उदय, वपु, तनु और कल्प।

२—धन, स्व, कुटुम्ब, अर्थ और कोश।

३—भ्राता, सहज, दुश्चिक्य, पराक्रम, सहोत्थ।

४—अम्बा, पाताल, तुर्य, सुहृत्, वाहन, यान, नीर, जल, अम्बु, सद्म, वेश्म, गृह, बन्धु, हिबुक और सुख।

५—पुत्र, प्रतिभा, धी, बुद्धि, विद्या, वाक्स्थान, तनय, आत्मज और तनुज।

६—रिपु, क्षत, द्वेष, वैरी और रोग।

७—मदन, मद, काम, स्मर, चित्तोत्थ, यामित्र, जामित्र, अस्त, द्यून, पत्नी और स्त्री।

८—आयु, छिद्र, मृत्यु, रन्ध्र, याम्य, निधन और लयस्थान।

९—शुभ, गुरु, धर्म, तप और मार्ग।

१०—व्योम, व्यापार, तात, नभ, गगन, अम्बर, ख, मध्य, आज्ञा, आस्पद, कर्म, मान और मेषूरण।

११—प्राप्ति, आगम, सर्वतोभद्र, लाभ, भव और आय।

१२—व्यय, प्रान्त्य, अन्तिम, रिःफ और रिष्फ।

द्वादशभावनिरीक्षणम्

१—शरीर की दुर्बलता और पुष्टता, शरीर का रंग, शील, आकृति, क्लेश, रूप, शरीर में चिह्न, आयु, आरोग्य, शरीरलक्षण, अवस्था, गुण, सुख, दुःख और ब्राह्मण आदि जाति का विचार लग्न से करे।

२—सुवर्ण, रौप्य, रत्न, धातु, द्रव्य, धन, मुक्ता, मणि, सखा, वस्त्र, अश्व, कार्य और अध्वज्ञान का विचार द्वितीय भाव से करे।

३—भाई, बहिन, भृत्य, मार्ग चलना, पित्र्य, साहस और दास का विचार तृतीय भाव से करे।

४—विधि, पितृवित्त, क्षेत्र, गृह, भूमि, बगीचा, तालाव, महौषधि, विवरादिप्रवेश, मातृसुख, मित्र और बन्धु का विचार चतुर्थभाव से करे।

५—मन्त्र, धनोपाय, गर्भ, विद्या, वाणी, सन्तान और बुद्धि का विचार पञ्चमभाव से करे।

६—खर, उष्ट्र, महिष आदि पशु, चौरभय, संग्राम, मातुल, मान्द्य, रोग, शत्रु, व्रण, क्रूरकर्म, बन्ध, भय और भृत्य इनका विचार छठे स्थान से करे।

७—विवाद, वाणिज्य आदि व्यवहार, स्त्री, कलह, मार्गगमागम, नष्ट और विस्मृत का विचार सप्तमभाव से करे।

८—नदी तैरना, मार्गवैषम्य, परिवारछिद्र, गुदारोग, मृतवित्त, रण, रिपु, दुर्गस्थान, मृति, मनोव्यथा, ऋण और चिरन्तनद्रव्य का विचार अष्टमभाव से करे।

९—धर्म, यात्रा, दीक्षा, देवगृह और वापीकूपादि का विचार नवमभाव से करे।

१०—राज्य, पैतृक धन, वृद्धि, प्रवास, ऋण, वृष्ट्यादिव्योमवृत्तान्त और स्थान लाभालाभ इनका विचार दशमभाव से करे।

११—धान्यादि लाभ, राजा से द्रव्यलाभ, अश्वादि पशुलाभ, विद्यालाभ आदि का विचार एकादशभाव से करें।

१२—व्यय, भोग, विवाद, दान, कृषिकर्म और वैरिनिरोध इनका विचार द्वादशभाव से करे।

लग्नप्रमाणम्

नागेन्दुदस्रा विधुबाणदस्रा
रामाभ्ररामा गुणवेदरामाः।
सप्ताब्धिरामा वसुरामरामाः
क्रमोत्क्रमान्मेषतुलादिमानम् ॥ ११ ॥

मेष का प्रमाण २१८ पल अर्थात् ३ घटी, ३८ पल। वृष का २४१ पल अर्थात् ४ घटी, ४१ पल। मिथुन का ३०३ पल अर्थात् ५ घटी, ३ पल। कर्क का ३४३ पल अर्थात् ५ घटी, ४३ पल। सिंह का ३४७ पल अर्थात् ५ घटी, ३७ पल। कन्या का ३३८ पल अर्थात् ५ घटी, ३८ पल। तुला से मीन पर्यन्त उलटा जानना। यह प्रमाण मध्यदेश का है।

कूर्माचले घटीपलात्मकं मानम्

मे०	वृष	मि०	कर्क	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	रा०
३	४	५	५	५	५	५	५	५	४	३	३	घ०
५०	४०	३१	५५	४७	४२	४६	५३	२०	२५	४१	२७	प०

काश्यां घटीपलात्मकं मानम्

मे०	वृषं	मि०	कर्क	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	रा०
३	४	५	५	५	५	५	५	५	५	४	३	घ०
४४	१४	३	४०	४२	३४	४३	४०	४०	३	१४	४४	प०

अपने-अपने देशों में पलभा के अनुसार भिन्न-भिन्न लग्नप्रमाण जानना चाहिए। इसमें लंकोदय आदि का विचार करने से विस्तृत हो जायगा इसलिये सूक्ष्म विचार लिखा गया है॥ ११॥

लग्नानयनम्

भुक्ताहोभिर्हतं लग्नं मासमानेन भाजितम्।
लब्धं रात्रिगतं विद्याच्छेषं दिनगतं भवेत्॥ १२॥

संक्रान्ति से जितने दिन व्यतीत हुए हों उतने पलात्मक लग्नमान को गुणा करें और जितने दिन का वह महीना हो उस संख्या से भाग देवे, जो लब्धि आवे वह रात्रिगत लग्न है, जो शेष रहे वह दिनगत लग्न जानना चाहिए। जिस राशि पर सूर्य होता है

वही लग्न सूर्योदय समय रहता है। छः लग्न दिन में और छः लग्न रात में होते हैं। प्रत्येक राशि वा लग्न में ३० अंश होते हैं। अपने-अपने प्रमाण से तीसों अंश बीतने पर दूसरे लग्न का प्रवेश होता है। जैसे किसी का १० बजे दिन में जन्म हुआ उस दिन सूर्योदय ६ बजे हुआ है, तो सूर्योदय से जन्मसमय पर्यन्त ४ घंटे व्यतीत हुए। २$\frac{1}{2}$ घड़ी का एक घंटा, २$\frac{1}{2}$ पल का एक मिनट। ४ घंटे की १० घटिकाएँ हुईं अतः इष्टकाल १० घड़ी हुआ। फिर सारिणी से लग्न निकाल लेवे ॥ १२ ॥

सारणीतो लग्नानयनम्

इष्टार्कराश्यंशतले घटीपले
स्वाभीष्टनाडीपलसंयुतं च।
यद्राशिभागस्य तले स्थितं भवे-
त्तदेव लग्नं च कलानुमानतः ॥ १३ ॥

जिस दिन का लग्न निकालना हो उस दिन का सूर्यराशि के गतांश कोष्ठ में जो घटी-पल का अंक होवे उसमें इष्टघटीपल को जोड़ देवे। जोड़ने से जो अंक आवे वह जिस कोष्ठ में समान वा किञ्चित् न्यून या किञ्चित् अधिक मिले वही लग्नादि जानना। ऊपर का अंश जानना चाहिए। यदि जोड़ने पर ६० से अधिक अंक हों, तो ६० उसमें से हटा देना चाहिए ॥ १३ ॥

उदयास्तलग्नम्

उदेति यस्मिन्सवितोदयाख्यं
तस्माच्चतुर्थं खलु मध्यलग्नम्।
तत्सप्तमेऽस्तं रविरेति नित्य-
मस्ताख्यलग्नं कथितं तदेव ॥ १४ ॥

सूर्य जिस राशि (लग्न) में उदित होता है वह उदयलग्न,

उससे चतुर्थ मध्यलग्न, उससे सातवाँ अस्तलग्न होता है। इसी प्रकार रात्रि में भी जानना चाहिए ॥ १४ ॥

ग्रहस्पष्टकरणार्थं चालकप्रकारः

प्रस्तारस्तु यदाग्रे स्यादिष्टं संशोधयेदृणम् ।
इष्टकालो यदाग्रे स्यात्प्रस्तारं शोधयेद्धनम् ॥ १५ ॥

पञ्चाङ्ग में जो ८-८ दिनों का ग्रहस्पष्ट रहता है उसको प्रस्तार या पंक्ति कहते हैं। प्रस्तार यदि जन्मकाल से आगे होवे, तो प्रस्तार के वार घटी पल में इष्ट समय का वारघटीपल घटा देवे। जो शेष रहे वह वारादि ऋणचालक होता है। यदि इष्टकाल आगे और प्रस्तार पीछे होव, तो इष्टकालात्मक वारघटीपल में प्रस्तार का वारघटीपल को जोड़ देवे, तो शेष अंक वारादि धनचालक होता है ॥ १५ ॥

ग्रहाणां स्पष्टीकरणम्

गतैष्यदिवसाद्येन गतिर्निघ्नीखषड्हृता ।
लब्धमंशादिकं शोध्यं योज्यं स्पष्टो भवेद्ग्रहः ॥ १६ ॥

गत और एष्य दिवसादि करके अर्थात् ऋण चालन वा धन-चालन से ग्रह की पञ्चाङ्गस्थ गति को गुणा करे, फिर गोमूत्रिका-रीति से साठ का भाग देवे। भाग देने से जो अंशकला-विकलात्मक लब्ध होवे उसको पञ्चाङ्गस्थ ग्रह में घटा देवे वा युक्त करे अर्थात् ऋणचालन होवे, तो घटावे और धनचालन होवे, तो युक्त करे। युक्त करने या घटाने से वह तात्कालिक स्पष्टग्रह होता है। यदि ग्रह वक्री हो, तो धनचालन या ऋणचालन में विपरीत क्रिया करना अर्थात् ऋणचालन हो, तो युक्त करना, धनचालन हो, तो घटा देना। राहु, केतु सदा वक्री रहते हैं, इन दोनों की गति-विगति सदा एक ही रहती है। राहु से केतु, केतु से राहु सातवीं राशि पर रहता है ॥ १६ ॥

चन्द्रस्पष्टकरणार्थं भयातभभोगौ

गतर्क्षघट्यो वियदङ्कशुद्धा
द्विष्ठा युतास्तिग्मकरोदयाद्यैः ।
इष्टासु नाडीषु भयातसंज्ञा
स्वधिष्ण्ययुक्तश्च भवेद्भभोगः ॥ १७ ॥

चेत्स्वेष्टकालात्प्रागेव ऋक्षं यदि समाप्यते ।
तदेष्टकालाच्च ऋक्षनाड्यः शोध्या गतर्क्षकम् ॥
भभोगः पूर्ववत्कार्यस्ततः साध्यस्तु चन्द्रमाः ॥ १८ ॥

बीते हुए नक्षत्र की घटी आदि को ६० में घटाकर दो जगह रक्खे एक में इष्टघटी आदि जोड़ने से भयात होता है, दूसरे में वर्तमान नक्षत्र की घटीपल जोड़ने से भभोग होता है ।

यदि इष्टकाल से पहले ही नक्षत्र समाप्त हो जावे, तो इष्टकाल घड़ियों में नक्षत्र घटीपल घटा देने से भयात और गतनक्षत्र की घड़ियों को ६० में घटाकर उसी में पर दिनवाले नक्षत्र की घड़ियों को जोड़ने से भभोग होता है ॥ १७-१८ ॥

चन्द्रस्पष्टसाधनम्

खषड्घ्नं भयातं भभोगोद्धृतं तत्
खतर्कघ्नधिष्ण्येषु युक्तं द्विनिघ्नम् ।
नवाप्तः शशीभागपूर्वस्तु भुक्तिः
खखाभ्राष्टवेदा भभोगेन भक्ताः ॥ १९ ॥

भयात की घटियों के पल बनाकर उसमें भयात के पलों को जोड़ दे, फिर भभोग की घटियों के पल बनाकर उसमें भभोग के पलों को जोड़ दे, फिर भयात के सब पलों को ६० से गुणा करे और भभोग के पलों से ३ बार भाग देवे । जो लब्धि होवे उसको ३ जगह अलग-अलग रक्खे । पहले भाग की लब्धि में अश्विनी से जन्मगत नक्षत्र तक गिनकर जो संख्या होवे उसको ६० से गुणा

कर जोड़ देवे, फिर दो से गुणा करके लब्धि में ६ का भाग देवे और दूसरी तीसरी लब्धि को दूना करके आगे के भाग में जोड़ता जाय इस तरह भाग लेने से जो लब्धि आवे उसे क्रमशः अंश, कला, विकलात्मक जानना चाहिए । अंश में ३० का भाग देने से जो लब्धि हो उसे राशि, शेष को अंशादि जानना चाहिए ॥ १६ ॥

उदाहरणम्—

भयात १५ । ४५, पल हुए ९४५, साठ से गुण दिया, तो हुए ५६७००

भभोग ६६ । ३०, पल ३९९०

```
३९९० ) ५६७०० ( १४
       ३९९०
       ------
       १६८००
       १५९६०
       ------
         ८४०
          ६०
       ------
३९९० ) ५०४०० ( १२—२४—२५
       ३९९०          १
       ------
       १०५००
        ७९८०
       ------
        २५२०
          ६०
       ------
३९९० ) १५१२०० ( ३७—७५
       ११९७०        ११९४
       ------
        ३१५००
        २७९३०
       ------
         ३५७०
```

गत नक्षत्र सं० ३×६०=१८०+१४=१६४×२=३८८

```
९ ) ३८८ ( ४३
    ३६
    --
     २८
     २७
     --
      १
     ६०
     --
     ६०+२५=८५

९ ) ८५ ( ९
    ८१
    --
     ४
    ६०
    --
    २४०+१४=२५४

९ ) २५४ ( २८
    १८
    --
     ७४
     ७२
     --
      २

३० ) ४३ ( १
     ३०
     --
     १३
```

रा. अं. क. वि.
१ । १३ । ९ । २८

चन्द्रमा की गति विगति निकालने की रीति

४८००० को साठ से गुणा करके भभोग का भाग देने से गति और विगति जानना चाहिए।

जैसे—४८०००
```
           ६०
३४०४ ) २८८०००० ( ८४६ गति
       २७२३२
        १५६८०
        १३६१६
         २०६४०
         २०४२४
            २१६
             ६०
३४०४ ) १२९६० ( ३ विगति
        १०२१२
         २७४८
```

लग्ननिश्चयार्थमुपसूतिकाज्ञानम्

धनान्त्यबन्धुस्थितखेचरेन्द्रै-
र्वाच्यास्तदानीमुपसूतिकाश्च ॥ २० ॥
चन्द्रलग्नान्तरगतैर्ग्रहैः स्युरुपसूतिका इति केचित् ।
मीने मेषे तथाप्येका चतस्रो वृषकुम्भयोः ।
अन्यलग्ने च तिस्रः स्युर्बाणाश्च धनकर्कयोः ॥ २१ ॥
पापग्रहस्तु विधवा सधवा सौम्यखेचरा ।
बुधशुक्रौ कुमारी स्यात् गुरुसूर्यौ प्रसूतिका ॥
अन्यग्रहेषु वृद्धा स्यादित्याहुः कश्यपादयः ॥ २२ ॥

धन, व्यय तथा चतुर्थ स्थानों में जितने ग्रह हों उतनी ही उपसूतिकाएँ होती हैं।

किसी आचार्य के मत से चन्द्रमा और लग्न के बीच में जितने ग्रह हों उतनी ही उपसूतिकाएँ होती हैं।

मीन या मेष लग्न हो, तो एक की, वृष या कुम्भ हो, तो ४

स्त्रियाँ, धन या कर्क हो, तो ५ स्त्रियाँ, शेष में ३ स्त्रियाँ होती हैं।

यदि पूर्वोक्त स्थानों में पापग्रह हों, तो विधवा, सौम्यग्रह हों, तो सधवा, बुध, शुक्र हों, तो कुमारी, बृहस्पति, सूर्य हों, तो बालबच्चेवाली, अन्य ग्रह हों, तो वृद्धा उपसूतिका होती है ॥२०-२२॥

जननात्पूर्वं मातृभोजनज्ञानम्

चतुर्थेंशवशतो वाच्यं जननात्पूर्वभोजनम् ।
कठिनं मधुरं रुक्षं लेह्यपेयादिकं मृदु ॥
शोषणाम्लगुणं दुग्धं विचित्रं स्वल्पभोजनम् ॥ २३ ॥
वटकाद्यं बहुरसं पेयादिमधुरं हिमम् ।
क्रोधादिना कदन्नं स्यात्सूर्यादेः श्लोकपादतः ॥ २४ ॥

यदि चतुर्थेश सूर्य हो, तो कठोर, मीठा, रूखा भोजन; चन्द्रमा हो तो मीठी पतली चीज़; मंगल हो, तो मीठा या दुग्ध; बुध हो, तो अनेक प्रकार का स्वल्प भोजन; बृहस्पति हो, तो बड़े आदि बहुत रसवाले भोजन; शुक्र हो, तो ठंढी, मीठी, पीनेवाली चीज़; शनैश्चर हो, तो झगड़े के साथ मोटा अन्न कहना चाहिए ॥ २३-२४ ॥

गृहे स्थानज्ञानम्

प्राच्यादिगृहे क्रियादयो द्वौ द्वौ कोणगता द्विमूर्त्तयः ॥ २५ ॥

यदि लग्न में १ । २ हो, तो पूर्वदिशा; ३ हो, तो आग्नेय दिशा; ४ । ५ हो, तो दक्षिण दिशा; कन्या हो, तो नैर्ऋत्य दिशा; तुला और वृश्चिक हो, तो पश्चिम दिशा; धन हो, तो वायव्य दिशा; मकर और कुम्भ हो, तो उत्तर दिशा; मीन हो, तो ईशान दिशा होती है ॥ २५ ॥

सूतिकावर्णम्

अरुणधवलवर्णं पाटलं तोयदाभं
रजनिधवलवर्णं चित्रवर्णं च कृष्णम् ।

कनकरजनिवर्णं कर्बुरं बभ्रु स्वच्छं
क्रियत इह सुवाच्यं चाम्बरं सूतिकायाः ॥ २६ ॥

मेष लग्न हो, तो लाल, वृष हो, तो सफ़ेद, मिथुन हो, तो गुलाबी, कर्क हो, तो बादल के समान रंगवाला, सिंह हो, तो पीला, कन्या हो, तो सफ़ेद, तुला हो, तो चित्र-विचित्र, वृश्चिक हो, तो काला, धन हो, तो पीला, मकर हो, तो काला, कुम्भ हो, तो कबरेला, मीन हो, तो साफ़ वस्त्र जानना चाहिए ॥ २६ ॥

अनने क्लेशादिज्ञानम्

पापैश्चन्द्रात्स्मरसुखगतैः क्लेशमाहुर्जनन्याः ॥
शुभग्रहैः खबन्धुगैः सुखेन संयुतः सवः ।
सुताङ्कसप्तमस्थितैरसद्ग्रहैश्च कष्टतः ॥ २७ ॥

यदि चन्द्रमा से चौथे या सातवें स्थान में पापग्रह हो, तो माता को बच्चे के होने में कष्ट । चौथे या दशम स्थान में शुभग्रह हो, तो सुख से प्रसव जानना चाहिए । पञ्चम, सप्तम और नवम स्थानों में पापग्रह हो, तो कष्ट से प्रसव होता है ॥ २७ ॥

बालकस्य शिरोदिग्ज्ञानम्

मेषे चापमृगेन्द्रयोर्यदि शिशुः प्राचीशिरो जायते
गोकन्यामकरेषु दक्षिणशिरा जातो भवेन्निश्चितम् ।
मीने वृश्चिककर्किणो यदि तदा कौबेरमूर्धा भवेत्
कुम्भाख्ये घटयुग्मके यदि ततः पश्चान्मुखः शोभनः ॥२८॥

मेष, धन और सिंह लग्न में बच्चे का शिर पूर्व । वृष, कन्या और मकर में दक्षिण । मीन, वृश्चिक और कर्क में उत्तर । मिथुन, तुला और कुम्भ में पश्चिम की ओर सिर जानना चाहिए ॥ २८ ॥

रोदनज्ञानम्

मेषत्रिपञ्चाननचापलग्ने
विस्मृत्य सर्वं बहु रोदतिस्म ।

अल्पं घटे स्त्रीवणिजोः परेषु
रुदन्ति नो ज्ञानबलस्य सात्त्वात् ॥ २९ ॥

मेष, मिथुन, सिंह और धन लग्न हो, तो बालक अधिक रोवे। कुम्भ, कन्या और तुला हो, तो रोदन न्यून, शेष लग्नों में रोदन नहीं करता है ॥ २९ ॥

तिथिगण्डान्तविचारः

नन्दातिथीनामादौ च पूर्णानां च तथान्तिमे।
घटिकैका शुभे त्याज्या तिथिगण्डं घटीद्वयम् ॥ ३० ॥

नन्दासंज्ञक तिथियों की आदि की एक घड़ी और पूर्णा तिथियों की अन्त की एक घड़ी तिथिगण्डान्त कहलाती है। यह शुभ कार्यों में वर्जित है ॥ ३० ॥

नक्षत्रगण्डान्तम्

ज्येष्ठाश्लेषारेवतीनामन्ते च घटिकाद्वयम्।
आदौ मूलमघाश्विन्याभगण्डं च चतुर्घटी ॥ ३१ ॥

ज्येष्ठा, आश्लेषा और रेवती की अन्त की दो घड़ियाँ, मूल, मघा और अश्विनी की आदि की २ घड़ियाँ नक्षत्रगण्डान्त हैं ॥ ३१ ॥

लग्नगण्डान्तम्

मीनवृश्चिककर्कान्ते घटिकार्धं परित्यजेत्।
आदौ मेषस्य चापस्य सिंहस्य घटिकार्धकम् ॥ ३२ ॥

मीन, वृश्चिक और कर्क के अन्त की आधी घड़ी, मेष, धन और सिंह की आदि की आधी घड़ी लग्नगण्डान्त है ॥ ३२ ॥

तिथिगण्डे भगण्डे च लग्नगण्डे च जातकः।
न जीवति यदा जातो जीविते च धनी भवेत् ॥ ३३ ॥

इन तीनों गण्डान्तों में उत्पन्न बालक जीवित न रहे। यदि जीवित रहे, तो धनवान् होता है ॥ ३३ ॥

मूलादौ जन्मफलम्

पिता म्रियेत मूलाद्ये पादे पुत्रजनिर्यदि ।
द्वितीये जननीनाशो धननाशस्तृतीयके ॥
चतुर्थे कुलनाशोऽतः शान्तिः कार्या प्रयत्नतः ॥ ३४ ॥

मूल नक्षत्र के प्रथम चरण में पुत्र का जन्म हो, तो पिता का, दूसरे चरण में जन्म हो, तो माता का, तीसरे में जन्म हो, तो धन का, चौथे में जन्म हो, तो वंश का नाश हो जाता है इसलिये शान्ति करना आवश्यक है ॥ ३४ ॥

न कन्या हन्ति मूलर्क्षे पितरं मातरं तथा ।
मूलजा श्वशुरं हन्ति व्यालजा कुलटाङ्गना ॥
विशाखजा देवरघ्नी ज्येष्ठाजा ज्येष्ठनाशिका ॥ ३५ ॥

मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुई कन्या के माता-पिता को दोष नहीं होता, किन्तु कन्या के सास और ससुर का नाश होता है । आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न कन्या व्यभिचारिणी होती है । विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न कन्या का देवर मर जाता है । ज्येष्ठा में उत्पन्न हुई कन्या के स्वामी का बड़ा भाई मरता है ॥ ३५ ॥

ज्येष्ठान्ते घटिका चैव मूलादौ घटिकाद्वयम् ।
अभुक्तमूलमथवा सन्धिनाडीचतुष्टयम् ॥ ३६ ॥

ज्येष्ठा के अन्त की १ घड़ी, मूल के आदि की २ घड़ियों या सन्धि की ४ घड़ियों को अभुक्तमूल कहते हैं ॥ ३६ ॥

नवमासं सार्पदोषो मूलदोषोऽष्टवर्षकम् ।
ज्यैष्ठो मासान्पञ्चदश तावद्दर्शनवर्जनम् ॥ ३७ ॥

आश्लेषा का दोष ९ महीने तक, मूल का दोष ८ वर्ष तक, ज्येष्ठा का दोष १५ महीने तक रहता है इस कारण तबतक पुत्र का मुख न देखना चाहिए ॥ ३७ ॥

ज्येष्ठान्त्यपादजातस्तु पितुः स्वस्य च नाशकः ।

आश्लेषाप्रथमः पादः पादो मूलान्तिमस्तथा ॥
विशाखाज्येष्ठयोराद्यास्त्रयः पादाः शुभावहा ॥ ३८ ॥

ज्येष्ठा के अन्तिम चरण में उत्पन्न बालक पिता का नाश करता है और स्वयं भी नष्ट होता है। आश्लेषा का प्रथम चरण, मूल का अन्तिम चरण, विशाखा तथा ज्येष्ठा के पहले ३ चरण शुभ होते हैं ॥ ३८ ॥

गण्डान्तेन्द्रभशूलपातपरिघव्याघातगण्डावमे
संक्रान्तिव्यतिपातवैधृतिसिनीवालीकुहूदर्शके ।
वज्रे कृष्णचतुर्दशीषु यमघण्टे दग्धयोगे मृतौ
विष्टौ सोदरभे जनिर्न पितृभे शस्ता शुभा शान्तितः ॥ ३९ ॥

गण्डान्त, ज्येष्ठा, शूल, पात, परिघ, व्याघात, गण्ड, अवम तिथि, संक्रान्ति, व्यतीपात, वैधृति, कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, अमावास्या, वज्र, यमघण्ट, दग्ध, मृत्युयोग, भद्रा, सहोदर भाई बहिन के नक्षत्र में, पिता के नक्षत्र में जन्म शुभ नहीं होता है, शान्ति करने से शुभ होता है ॥ ३९ ॥

अमावास्याजन्मफलम्

सिनीवाल्यां प्रसूता स्यादस्य भार्या पशुस्तथा ।
गजोऽश्वो महिषी नैव शक्रस्यापि श्रियं हरेत् ॥ ४० ॥

अमावास्या में स्त्री, पशु, हाथी, घोड़ा और महिषी के बच्चा इन्द्र के घर में भी हो, तो लक्ष्मी का नाश होता है ॥ ४० ॥

कृष्णचतुर्दशीजन्मफलम्

कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां प्रसूतेः षड्विधं फलम् ।
चतुर्दश्यास्तु षड्भागान्कुर्यादाद्ये शुभं फलम् ॥ ४१ ॥
द्वितीये पितरं हन्ति तृतीये मातरं तथा ।
चतुर्थे मातुलं हन्ति पञ्चमे वंशनाशनम् ॥
षष्ठे च धनहानिः स्यादात्मनो वंशनाशनम् ॥ ४२ ॥

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी का ६ भाग करे। प्रथम भाग में उत्पन्न शुभ है। द्वितीय में पिता का, तृतीय में माता का, चतुर्थ में मामा का, पञ्चम में वंश का, छठे में धन तथा वंश का नाश होता है ॥ ४१-४२ ॥

सूर्यकृतारिष्टम्

पापास्त्रिकोणकेन्द्रे सौम्याः षष्ठाष्टमव्ययगाश्च ।
सूर्योदये प्रसूतः सद्यः प्राणांस्त्यजति जन्तुः ॥ ४३ ॥

त्रिकोण तथा केन्द्रों में पापग्रह हों, ६।८।१२ स्थानों में शुभग्रह हों, सूर्योदय के समय जन्म हो, तो शीघ्र मरण जानना चाहिए ॥ ४३ ॥

सूर्यः पापेन संयुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगः ।
सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदा चात्मवधो भवेत् ॥ ४४ ॥

सूर्य पापग्रह से युक्त हो या पापग्रहों के मध्य में हो या सूर्य से सातवें पापग्रह हो, तो शीघ्र मृत्यु हो ॥ ४४ ॥

अष्टमस्थो यदा सूर्यः शुभग्रहविवर्जितः ।
बालकं नियतं हन्ति वर्षे यावत्समाप्यते ॥ ४५ ॥

शुभग्रह से रहित अष्टम स्थान में सूर्य हो, तो शीघ्र मृत्यु होती है ॥ ४५ ॥

चन्द्रारिष्टम्

षष्ठोऽष्टमोऽथवेन्द्रः सद्यो मरणाय पापसंदृष्टः ।
अष्टाभिः शुभदृष्टो वर्षैर्मिश्रैस्तदर्धेन ॥ ४६ ॥

षष्ठ या अष्टम चन्द्रमा पापग्रह से दृष्ट हो, तो तत्काल मृत्यु होती है। यदि शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो ८ वर्ष में मृत्यु हो, यदि शुभग्रह तथा पापग्रह दोनों से दृष्ट हो, तो ४ वर्ष में मृत्यु करता है ॥४६॥

क्षीणे शशिनि विलग्ने
पापैः केन्द्रेषु मृत्युसंस्थैर्वा ।

भवति विपत्तिरवश्यं
यवनाधिपतेर्मतं चैतत् ॥ ४७ ॥

क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो, पापग्रह केन्द्र या अष्टम में हो, तो अवश्य विपत्ति होती है यह यवनाचार्य का मत है ॥ ४७ ॥

चन्द्रः पापेन संयुक्तश्चन्द्रो वा पापमध्यगः ।
चन्द्रात्सप्तमगः पापस्तदा मातृवधो भवेत् ॥ ४८ ॥

जब चन्द्रमा पापग्रह से युक्त हो या पापग्रहों के मध्य में हो या चन्द्रमा से सप्तम पापग्रह हो, तो माता की मृत्यु होती है ॥ ४८ ॥

भौमक्षेत्रे यदा भौमः षष्ठे मृत्यौ च चन्द्रमाः ।
षष्ठाष्टमेऽब्दे मृत्युः स्याद्देवैः संरक्षितोऽपि वा ॥ ४९ ॥

अब मंगल अपने घर में हो, चन्द्रमा ६ । ८ में हो, तो देवता से रक्षित का भी मरण ६ या ८ वर्ष में जानना ॥ ४९ ॥

भौमारिष्टम्

भौमो विलग्ने शुभदैरदृष्टः
षष्ठेऽष्टमे चार्कसुतेन दृष्टः ।
सद्यः शिशुं हन्ति वदेन्मनीषी
स्मरे यमारौ न शुभेक्षितौ तु ॥ ५० ॥

लग्न में मंगल हो, शुभग्रह न देखते हों या मंगल छठे या आठवें स्थान में हो और शनि उसको देखे या सप्तम में शनि, मंगल हो और शुभग्रहों से दृष्ट न हो, तो तत्काल मृत्यु होती है ॥५०॥

बुधारिष्टम्

षष्ठाष्टमे च मूर्त्तौ च जन्मकाले यदा बुधः ।
वर्षे चतुर्थे मृत्युः स्याच्छङ्करोऽपि न रक्षकः ॥ ५१ ॥

१—शनि, राहु, सूर्य से सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो, तो सातवें दिन मृत्यु होती है ।

जन्म के समय १ । ६ । ८ वें स्थान में बुध हो, तो चौथे वर्ष में मृत्यु अवश्य होती है ॥ ५१ ॥

कर्कटसद्मनि सौम्यः
षष्ठाष्टमसंस्थितो विलग्नर्क्षात् ।
चन्द्रेण दृश्यमूर्त्ति-
र्वर्षचतुष्केण मारयति ॥ ५२ ॥

लग्न से ६ या ८ वें स्थान में बुध कर्कराशि का हो, चन्द्रमा की दृष्टि हो, तो ४ वर्ष में मृत्यु होती है ॥ ५२ ॥

गुरुकृतारिष्टम्

सुरगुरू रविशशियुतः शशिजः क्रूरैर्दृष्टोऽपि मारयति ।
एकादशभिर्वर्षैर्देवाङ्केऽपि स्थितं बालम् ॥ ५३ ॥

यदि बृहस्पति सूर्य, चन्द्रमा से युक्त हो और बुध क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो, तो ११ वर्ष में देवता की गोद में बैठे हुए की भी मृत्यु होती है ॥ ५३ ॥

बृहस्पतिर्भौमगृहेऽष्टमस्थः
सूर्येन्दुभौमार्कजदृष्टमूर्त्तिः ।
वर्षैस्त्रिभिर्भार्गवदृष्टिहीनो
लोकान्तरं प्रापयति प्रसूतम् ॥ ५४ ॥

यदि बृहस्पति मंगल के घर का होकर ८ वें स्थान में हो, सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और शनि इनकी दृष्टि हो, शुक्र की दृष्टि न हो, तो ३ वर्ष के भीतर मृत्यु होती है ॥ ५४ ॥

शुक्रारिष्टम्

रविशशिभवने शुक्रो द्वादशरिपुरन्ध्रगोऽशुभैः सर्वैः ।
दृष्टः करोति मरणं षड्भिर्वर्षैः किमिह चित्रम ॥ ५५ ॥

यदि सूर्य चन्द्रमा के घर में १२ । ६ । ८ स्थानों में शुक्र हो, अशुभ ग्रहों की दृष्टि हो, तो ६ वर्ष में मृत्यु होती है ॥ ५५ ॥

शनिकृतारिष्टम

वक्री शनिर्भौमगृहं प्रयात-
शिछद्रेऽथ षष्ठेऽथ चतुष्टये वा ।
कुजेन संप्राप्तबलेन दृष्टो
वर्षद्वयं जीवति तत्र बालः ॥ ५६ ॥

वक्री शनि मंगल के घर में होकर ८ । ६ । १ । ४ । ७ । १० स्थानों में बैठा हो, बलवान् मंगल की दृष्टि हो, तो २ वर्ष में मृत्यु होती है ॥ ५६ ॥

मारयति षोडशाहाच्छनैश्चरः पापवीक्षितो लग्ने ।
सद्युक्तो मासेन तु वर्षाच्छुक्रेण मारयति ॥
उदयाद्दशमे मन्दो नाशयेदचिरात्सुतम् ॥ ५७ ॥

पापग्रह से दृष्ट शनि लग्न में हो, तो १६ दिन के भीतर; यदि शुभग्रह से युक्त हो, तो एक महीने में; शुक्र से युक्त हो, तो १ वर्ष में मृत्यु होती है । लग्न से दशवें शनि हो, तो शीघ्र मृत्यु जानना ॥ ५७ ॥

राहोररिष्टम्

अष्टमस्थो यदा राहुः केन्द्रे भवति चन्द्रमाः ।
सद्य एव भवेन्मृत्युर्बालकस्य न संशयः ॥ ५८ ॥

यदि आठवें स्थान में राहु और केन्द्र में चन्द्रमा हो, तो निःसन्देह तत्काल मृत्यु होती है ॥ ५८ ॥

राहुश्चतुष्टयस्थो निधनाय निरीक्षितः पापैः ।
वर्षैर्वदन्ति षोडशभिर्दशभिः केचिद्राचार्याः ॥ ५९ ॥

राहु केन्द्र में हो और पापग्रह की दृष्टि हो, तो किसी आचार्य

के मत से १६ वर्ष में और किसी के मत से दशवें वर्ष में मृत्यु होती है ॥ ५६ ॥

लग्नारिष्टम्

लग्नं पापेन संयुक्तं लग्नं वा पापमध्यगम् ।
लग्नात्सप्तमगः पापस्तदा चात्मवधो भवेत् ॥ ६० ॥

लग्न पापग्रह से युक्त हो या पापग्रह के मध्य में हो और लग्न से सातवें पापग्रह हो, तो शीघ्र मृत्यु होती है ॥ ६० ॥

लग्नेशराशीशयोररिष्टम्

लग्नाधिपजन्मपती षष्ठाष्टमरिष्फगैः प्रसूतिकाले ।
अस्तमितौ मरणकरौ राशिप्रमितैर्वदेद्वर्षैः ॥ ६१ ॥

यदि लग्न का स्वामी तथा जन्मराशि का स्वामी ६।८।१२ स्थानों में अस्त होकर स्थित हो, तो राशि की संख्या के समान वर्षों में मृत्यु होती है ॥ ६१ ॥

अरिष्टभंगयोगः

यदा यामिनीशो दिनेशं प्रपश्ये-
द्बुधोऽपीह चेद्वीक्ष्यते यामिनीशम् ।
तदा दैववेदी किमर्थं विमृश्ये-
त्सुखी दीर्घजीवी भवेज्जातकश्च ॥ ६२ ॥

यदि चन्द्रमा की दृष्टि सुर्य पर हो, बुध की दृष्टि चन्द्रमा पर हो, तो बालक चिरजीवी और सुखी होता है ॥ ६२ ॥

लग्नेश्वरो राशिपतिस्त्रिकोणे
केन्द्रेऽथवा लाभतृतीयसंस्थः ।
जातोऽपि दीर्घायुररिष्टभंगो
नैरोग्यदेहो नृपतिप्रतिष्ठा ॥ ६३ ॥

लग्नेश या राशि का स्वामी त्रिकोण, केन्द्र, लाभ या तृतीय में हो, तो बालक दीर्घायु, रोगरहित और राजमान्य होता है ॥ ६३ ॥

केन्द्रो शुभो यदैकोऽपि बली विश्वप्रकाशकः ।
सर्वे दोषाः क्षयं यान्ति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ६४ ॥

केन्द्र में एक भी ग्रह बलवान् होकर बैठा हो, तो सब दोषों का नाश निःसन्देह करता है ॥ ६४ ॥

यस्य जन्मनि तुंगस्थाः स्वक्षेत्रस्थास्तथा ग्रहाः ।
चिरायुषं शिशुं यातं कुर्वन्त्यष्टमगा यदि ॥ ६५ ॥

जिसके ग्रह उच्च के हों या अपने घर के हों, तो अष्टम स्थान में भी होकर बालक को दीर्घायु करता है ॥ ६५ ॥

एक एव सुरराजपुरोधाः
केन्द्रगोऽथ नवमपञ्चमगो वा ।
लाभगो भवति यस्य विलग्ने
शेषखेचरबलैरबलैः किम् ॥ ६६ ॥

केवल एक बृहस्पति केन्द्र, नवम, पञ्चम या लाभस्थान में हो, शेष ग्रह बलहीन भी हों, तो कोई हानि नहीं ॥ ६६ ॥

दशमभवननाथे केन्द्रकोणे धनस्थे
बलवति यदि याते जन्मसिंहासनं च ।
मदगलितकपोलैः सद्गजैः सेव्यमानः
स भवति नरनाथो विश्वविख्यातकीर्त्तिः ॥ ६७ ॥

दशमस्थान का स्वामी केन्द्र, कोण और धनस्थान में बलवान् होकर रहे, तो मनुष्य सिंहासन पर बैठनेवाला, अच्छे गजों से युक्त राजा और संसार में कीर्त्तिशाली होता है ॥ ६७ ॥

द्वित्रिचतुर्थे नीचा योगोऽयं राजराजस्य ।
रिपुनिधनव्ययतुंगाद्योगोऽयं दासदासस्य ॥ ६८ ॥

जिसके २ । ३ । ४ घर में नीच ग्रह हों, तो वह राजा के समान होता है । जिसके ६ । ८ । १२ वें स्थान में उच्च ग्रह हों, तो वह राजा का दास होता है ॥ ६८ ॥

त्रिषडेकादशे राहुस्त्रिषडेकादशे शनिः ।
त्रिषडेकादशे भौमः सर्वारिष्टं विनश्यति ॥ ६९ ॥

यदि ३ । ६ । ११ स्थानों में मंगल, शनि और राहु हों, तो सब अरिष्टों का नाश होता है ॥ ६९ ॥

बुधभार्गवजीवानामेकोऽपि यदि केन्द्रगः ।
अपि दासकुले जातो राजमान्यो भवेन्नरः ॥ ७० ॥

बुध, शुक्र और बृहस्पति इनमें एक भी केन्द्र में हो, तो दासकुल में भी उत्पन्न राजा का मान्य और वंश को विख्यात करनेवाला होता है ॥ ७० ॥

सामान्यतोऽरिष्टविचारः

लग्ने माने सप्तमे चाथ बन्धौ
पापाः खेटा जन्मकालेषु सर्वे ।
तिष्ठन्त्येते स्वल्पमायुः प्रदिष्टं
तेषामेको लग्नपो वा यदि स्यात् ॥ ७१ ॥

जन्मकाल में लग्न, दशम, सप्तम और चतुर्थ में सब पापग्रह हों, तो अल्पायु होता है; यदि उनमें से एक लग्नेश भी हो ॥७१॥

लग्नाद्द्वादशधनगैः क्रूरैर्म्रियते च रन्ध्ररिपुसंस्थैः ।
शुभसम्पर्कमयातैर्मासे षष्ठेऽष्टमे द्विद्वादशे वा ॥ ७२ ॥

लग्न से १२ । २ । ८ । ६ स्थान में क्रूरग्रह हों और शुभग्रहों से युक्त न हों, तो ६ । ८ । २ । १२ मास में मृत्यु होती है ॥ ७२ ॥

होराधिपतिः सूर्यः स्वपुत्रसहितोऽष्टमे भवति राशौ ।
वर्षे राशिप्रमितैर्मरणाय सितेन संदृष्टः ॥ ७३ ॥

होरा का स्वामी सूर्य हो और शनि से युक्त अष्टम राशि में हो, शुक्र की दृष्टि हो, तो राशि के समान वर्षों में मृत्यु होती है ॥ ७३ ॥

लग्नाच्च नवमे सूर्यः सप्तमे च शनैश्चरः ।
एकादशे गुरुभृगू त्रिमासं मृत्युमृच्छति ॥ ७४ ॥

लग्न से नवें सूर्य हो, सप्तम में शनि हो, ११ वें स्थान में बृहस्पति और शुक्र हो, तो तीन महीने में मृत्यु होती है ॥ ७४ ॥

अरिजायास्थिते चन्द्रे भृगुपुत्रेण संयुते ।
मार्त्तण्डे दशमस्थे च मासमेकं न जीवति ॥ ७५ ॥

जिसके छठे या सातवें चन्द्रमा शुक्र से युक्त होकर स्थित हो तथा दशम स्थान में सूर्य हो, तो वह महीने भर भी नहीं जीता है ॥७५॥

आयुर्विचारः

आयुषस्त्रिविधो भेदः स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमाः ।
द्वात्रिंशात्पूर्वमल्पायुर्मध्यमायुस्ततो भवेत् ॥ ७६ ॥
चतुःषष्ट्याः पुरस्तात्तु ततो दीर्घमुदाहृताः ।
उत्तमायुः शतादूर्ध्वं ज्ञातव्यं मुनिसत्तम ॥ ७७ ॥

आयु तीन प्रकार की होती है । अल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु । ३२ वर्ष तक अल्पायु, उससे ऊपर ६४ वर्ष तक मध्यायु, इससे ऊपर १०० वर्ष तक दीर्घायु और १०० से ऊपर उत्तमायु कहलाती है ॥ ७६-७७ ॥

अष्टमर्क्षं तृतीयं च लग्नादायुरुदाहृतम् ।
द्वितीयं सप्तमस्थानं मारकस्थानमुच्यते ॥ ७८ ॥

लग्न से अष्टम और तृतीय आयु के स्थान हैं । द्वितीय और सप्तम स्थान को मारकस्थान कहते हैं ॥ ७८ ॥

केन्द्रांकसंख्यां त्रिगुणीविधाय
राह्वारसंख्याङ्कमतोविहीनाम ।
आयुः प्रमाणं कथितं मुनीन्द्रै-
श्चिरन्तनैर्ज्यौतिषिकैः स्मृतं हि ॥ ७९ ॥

केन्द्रों के अंकों की संख्या को तिगुना करे । उसमें राहु और मंगल की संख्या घटा देवे, शेष वर्ष आयु जानना ॥ ७९ ॥

अष्टमं मारकस्थानमष्टमादष्टमं च यत् ।

तयोरपि व्ययस्थानं मारकस्थानमुच्यते ॥ ८० ॥

अष्टम और अष्टम से अष्टम और इन दोनों का व्ययस्थान (८।३।७।२) मारकस्थान कहाते हैं। इन चारों में द्वितीय और सप्तम अधिक बलवान् होते हैं ॥ ८० ॥

मारकेशविचारः

अल्पमध्यमपूर्णायुः प्रमाणमिह योगजम् ।
विज्ञाय प्रथमं पुंसां ततो मारकचिन्तनम् ॥ ८१ ॥

अल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु इन तीनों योगों को पहले जानकर मारकेश का विचार करे ॥ ८१ ॥

महामारकसंज्ञौ तौ मान्दिकेतू इति स्मृतौ ।
जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकावष्टमेश्वरौ ॥ ८२ ॥

शनि और केतु की महामारकसंज्ञा है। सप्तम, द्वितीय और अष्टम स्थान के स्वामी मारकेश होते हैं ॥ ८२ ॥

षष्ठभे पापभूयिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारकः ।
मारकेशदशाकाले मारकस्थस्य पापिनः ॥
पापे पापयुजां पाके सम्भवे निधनं दिशेत् ॥ ८३ ॥

छठे स्थान में यदि पापग्रह बहुत हों, तो षष्ठेश मुख्य मारक होता है। मारकेश की महादशा में मारकस्थान में स्थित क्रूरग्रह की अन्तर्दशा में या पापग्रह की महादशा में जब पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो मृत्यु का सम्भव होता है ॥ ८३ ॥

असम्भवे व्ययाधीशदशायां मरणं नृणाम् ।
तदभावेऽष्टमेशस्य दशायां निधनं पुनः ॥ ८४ ॥

इसके असम्भव में व्ययेश की दशा में या अष्टमेश की दशा में मृत्यु होती है ॥ ८४ ॥

मन्दश्चेत्पापसंयुक्तो मारकग्रहयोगतः
अतांस्य हि ग्रहान्सर्वान्निहन्ता पापकृच्छनिः ॥ ८५ ॥

शनि पापग्रह से युक्त हो, तो सब ग्रहों को दबाकर मृत्युकारक होता है ॥ ८५ ॥

द्वादशे दशमे वापि संस्थिते पुच्छनायके ।
पापदृष्टे दशाप्राप्ते तदन्तरगते मृतिः ॥ ८६ ॥

बारहवें या दशवें स्थान में पापग्रह से दृष्ट केतु अपनी दशा में मृत्युकारक होता है ॥ ८६ ॥

लग्नाद्द्यूनाष्टमेशौ यौ तयोर्मध्ये च यो बली ।
प्राणी रुद्रः स विज्ञेयः सूर्यादिखेचरोऽपि च ॥ ८७ ॥

लग्न से सप्तम और अष्टम के स्वामियों में से जो बलवान् हो वह प्राणी रुद्र कहलाता है ॥ ८७ ॥

भ्रातृषष्ठाष्टमद्यूनधनरिष्फान्तरेष्वपि ।
सर्वेषां बलवान्खेटो मारको ग्रह उच्यते ॥ ८८ ॥

३ । ६ । ८ । ७ । २ । १२ भावों के स्वामियों की अन्तर्दशा में भी मृत्यु जानना चाहिए । इनमें सबसे बलवान् ग्रह को मारकग्रह कहते हैं ॥ ८८ ॥

मरणनिमित्तविचारः

दिनकरप्रमुखैर्निधनस्थितै-
र्भवति मृत्युरिति प्रवदेत्क्रमात् ।
अनलतो जलतः करवालतो
ज्वरभवो गदतः क्षुधया तृषा ॥ ८९ ॥

यदि अष्टम स्थान में सूर्य आदि ग्रह हों तो यथाक्रम अग्नि, जल, तलवार, ज्वररोग, क्षुधा और तृषा से मृत्यु जानना चाहिए॥८९॥

पित्तं कफः पित्तमथ त्रिदोषः
श्लेष्मानिलौ वाय्वनिलः क्रमेण ।
सूर्यादिकेभ्यो मरणस्य हेतुः
प्रकल्पितः प्राक्तनजातकज्ञैः ॥ ९० ॥

सूर्यादि ग्रहों से यथाक्रम पित्त, कफ, पित्त, त्रिदोष, कफ, वायु और वायु के दोषों से मृत्यु जानना चाहिए ॥ ६० ॥

तृतीये चन्द्रमान्दिभ्यां दृष्टे वापि युते द्विज ।
कृमिकुष्ठादिना चैव सत्वरं मरणं दिशेत् ॥ ६१ ॥

तीसरा स्थान चन्द्रमा और शनि से दृष्ट या युक्त हो, तो कृमि (कीड़ा) या कुष्ठ आदि रोगों से मृत्यु होती है ॥ ६१ ॥

सौम्येऽष्टमस्थे शुभदृष्टियुक्ते
धर्मेश्वरे वा शुभखेचरेन्द्रे ।
तीर्थे मृतिः स्याद्यदि योगयुग्मं
तीर्थे हि विष्णुस्मरणेन मृत्युः ॥ ६२ ॥

अष्टम भाव में सौम्यग्रह हो, शुभग्रह से दृष्ट या युक्त हो या धर्मस्थान का स्वामी शुभग्रह हो, तो तीर्थ में मृत्यु जानना चाहिए। यदि दोनों योग पूर्ण हों, तो तीर्थ में विष्णुस्मरण से मृत्यु जानना चाहिए ॥ ६२ ॥

तृतीये भानुना दृष्टे तथा युक्ते बलाढ्यके ।
राजहेतोश्च मरणं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥ ६३ ॥

सूर्य बलवान् होकर तीसरे स्थान को देखे या उसमें रहे, तो राजा के कारण मृत्यु जानना चाहिए ॥ ६३ ॥

तृतीये चेन्दुना दृष्टे युक्ते वा यक्ष्मणा मृतिः ।
कुजेन व्रणशस्त्राग्निदाहाद्यैर्मरणं भवेत् ॥ ६४ ॥
तृतीये शनिराहुभ्यां दृष्टे वापि युतेऽथवा ।
विषार्तिमरणं वाच्यं जलाद्वा वह्निपीडनात् ॥ ६५ ॥

तीसरा स्थान चन्द्रमा से युक्त या दृष्ट हो, तो क्षयरोग से; मंगल से युक्त या दृष्ट हो, तो घाव, हथियार, अग्निदाह आदि से; शनि या राहु से युक्त या दृष्ट हो, तो विष, जल, अग्नि, ऊँचे स्थान और फाँसी से मृत्यु होती है ॥ ६४-६५ ॥

भावानयनविचारः

लग्नं चतुर्थात्परिशोध्य शेषं
षडंशकोऽग्रे मुहुरेव योज्यम् ।
सन्धिर्धनं सन्धिरथ तृतीय-
स्तत्सन्धिरत्र द्वितृतीयभावः ॥ ६६ ॥
वेदद्वियुक्तो रिपुपुत्रभावो
सन्धित्रयं बाणगुणे कुयुक्तम् ।
रिपुश्च सूनोः सुहृदस्य सन्धिः
सर्वे सषड्भावस्वसन्धिभावाः ॥ ६७ ॥

इष्ट-घटी पलादि लिखकर नीचे जन्मकालिक गतांश को घट्यादि लिखे, फिर दोनों को जोड़कर जो अंक आवे वह जिस राशि में किञ्चित् न्यून या किञ्चित् अधिक मिले उसके ऊपर का अंश जानना और वही राशि जानना । कला-विकला जानने की रीति नीचे लिखी गई है ।

जैसे

इष्ट	२१ । २६ । ३०
गतांक	२५ । १० । ३०
	४७ । १० । ०

इसमें कुम्भ लग्न को १५ अंश के कोष्ठ में, सारिणी में अङ्क ४७ । ११ । १२ में उपर्युक्त ४७ । १० । ० को घटाया, तो ० । १ । १२ रहा, इसको ६० से गुणा, तो ६० हुआ, इसमें १२ पल जोड़ा, तो ७२ हुआ । इसमें कोष्टान्तर का भाग देने से कला विकला निकल आवेंगी । क्रम इस प्रकार है—

कुम्भ के १५ अंश के कोष्ट में ४७ । ११ । १२ है । कोष्टान्तर में ४७ । ४ । १० है ।

कोष्टान्तर को कोष्ट में घटाया, तो ० । ७ । २ रहा । इसको ६०

से गुण दिया, तो ४२२ हुआ। उसका उपर्युक्त ७२ में भाग दिया, तो लब्ध ० हुआ। फिर शेष ७२ को ६० से गुण दिया, तो ४३२० हुआ। फिर ४२२ का भाग दिया, तो लब्ध १०, शेष १०० रहा। अब १० राशि, १५ अंश, ० कला, १० विकला प्राप्त हुआ। यह लग्नस्पष्ट साधन की रीति है

उपर्युक्त स्पष्ट लग्न की राशि में ३ जोड़ा, तो १३ हुए। इसमें १२ चला गया, तो १ राशि हुआ। १५ अंश में ४ जोड़ा, तो १९ हुआ ० कला में ८ जोड़ा, तो ८ हुआ। १० विकला में १० जोड़ा, तो २० हुआ। इस तरह १।१९।८।२० यह चतुर्थ हुआ। राशि में केवल ९ जोड़ने से दशम लग्न होती है । दशम में ६ हीन करने से चतुर्थ होता है । इसमें 'दशाष्टवेदा नवराशियोज्या' इत्यादि भास्कराचार्य का प्रमाण है।

चतुर्थ में लग्नस्पष्ट को घटाकर जो राशि अंश, कला, विकला शेष बचे, उसमें राशि को ३० से गुणाकर अंशों को जोड़ देवे, उसमें ६ का भाग देने से जो तीन अंक आवें उनको क्रम से अंश कला, विकला जानना चाहिए।

जैसे १०।१५।०।१० लग्न को १।१९।८।२० चतुर्थ में घटाया, तो १ में १० नहीं घट सकते इसलिये १ राशि में १२ जोड़ दिया, तो १३ हुए । इसमें घटाया, तो ३ राशि, ४ अंश, ८ कला, १० विकला हुआ। इसमें राशि को ३० से गुण दिया, तो ९० हुए। इसमें ४ अंश जोड़ने से ९४ हुए। इसमें ६ का भाग दिया, तो १५ लब्धि, ४ शेष रहा। फिर शेष ४ को ६० से गुण दिया, तो २४० हुआ, इसमें कला ८ को जोड़ दिया, तो २४८ हुआ, फिर ६ का भाग दिया, तो लब्धि ४१, २ शेष रहे, फिर शेष २ को ६० से गुण दिया, तो १२० हुआ, इसमें विकला १० को जोड़ा, तो १३० हुआ, इसमें ६ का भाग दिया, तो २१ लब्धि, ४ शेष बचे,

तो १५ अंश, ४१ कला, २१ विकला यह षडंशक सिद्ध हुआ। शेष ४ पीछे जोड़ा जायगा।

भावचक्रम्

भा.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
१२	१०	११	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९
४१	१५	१६	१७	१८	१७	१६	१५	१६	१७	१८	१७	१६
२१	०	२२	४५	८	४५	२२	०	२२	४५	८	४५	२२
	१०	५२	३४	२०	३४	५२	१०	५२	३४	२०	३४	५२
	११	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
	०	२	३	३	२	०	०	२	३	३	२	०
सं.	४१	४	२६	२६	४	४१	४१	४	२६	२६	४	४१
	३१	१३	५५	५५	१३	३१	३१	१३	५५	५५	१३	३१

भावनिर्माणविधिः

लग्न में षडंशक जोड़ने से लग्न की सन्धि। सन्धि में षडंशक जोड़ने से द्वितीय भाव। द्वितीय भाव में षडंशक जोड़ने से द्वितीय भाव की सन्धि। द्वितीय भाव की सन्धि में षडंशक जोड़ने से तृतीय भाव। तृतीय भाव में षडंशक जोड़ने से तृतीय भाव की सन्धि। तृतीय भाव की सन्धि में षडंशक जोड़ने से चतुर्थ भाव। अन्त में जो शेष बचता है वह चतुर्थ भाव की विकला में जोड़ दिया जाता है।

दूसरे भाव की राशि में ४ जोड़ने से षष्ठ भाव। तीसरे भाव की राशि में २ जोड़ने से पञ्चम भाव। १ में ६ जोड़ने से सप्तम भाव।

दूसरे में ६ जोड़ने से अष्टम भाव। तीसरे में ६ जोड़ने से नवम भाव। चौथे में ६ जोड़ने से दशम भाव। पाँच में ६ जोड़ने से एकादश भाव। छः में ६ जोड़ने से द्वादश भाव होते हैं।

१ सन्धि में ५ जोड़ने से ६ सन्धि। २ में ३ जोड़ने से पञ्चम सन्धि। ३ में १ जोड़ने से चतुर्थ सन्धि। १ सन्धि में ६ जोड़ने से सप्तम सन्धि। २ सन्धि में ६ जोड़ने से अष्टम सन्धि। ३ में ६ जोड़ने से नवम सन्धि। ४ सन्धि में ६ जोड़ने से दशम सन्धि। ५ सन्धि में ६ जोड़ने से एकादश सन्धि। ६ सन्धि में ६ जोड़ने से द्वादश सन्धि होती है। जोड़ना केवल राशि में होता है। नीचे के अंश, कला, विकला, वही रहते हैं जैसे चक्र में लिखा है।

इसी भावचक्र को चलितचक्र कहते हैं। ग्रहस्पष्ट में स्थित ग्रहों का इसमें चलन होने से इसी के अनुसार फलादिक जानना चाहिए। जो ग्रह सन्धि में पड़ जाते हैं उनके दोनों भावों का फल कहना चाहिए। भाव के बनाने में बहुत सावधान रहना चाहिए। भावों के बनाने की रीति इससे सरल कोई नहीं है।

पूर्वोक्त श्लोकों का अर्थ भावों के बनाने की रीति से ही ज्ञात हो जाता है इसलिये पृथक् नहीं लिखा गया है ॥ १६-१७ ॥

बृहत्पाराशरीयमतेन भावेशफलानि

लग्नेशे लग्नगे मर्त्यः सुदेहश्च पराक्रमी।
मनस्वी चातिचाञ्चल्यो द्विभार्यः परगोऽपि वा ॥ १८ ॥

लग्न का स्वामी लग्न में हो, तो मनुष्य सुन्दर देहवाला, पराक्रमी, उदार, अति चञ्चल, दो स्त्रीवाला अथवा परस्त्रीगामी होता है ॥ १८ ॥

लग्नेशे धनगे लाभे सलाभः पीडितो नरः।
सुशीलो धर्मविन्मानी बहुदारगुणैर्युतः ॥ १९ ॥

लग्नेश धनभाव या लाभभाव में हो, तो मनुष्य लाभ करः

वाला, गुह्यरोग से पीड़ित, सुशील, धार्मिक, अभिमानी और श्रेष्ठ गुणों से युक्त होता है ॥ ९९ ॥

लग्नेशे सहजे षष्ठे सिंहतुल्यपराक्रमी ।
सर्वसम्पद्युतो मानी द्विभार्यो मतिमान्सुखी ॥ १०० ॥

लग्नेश तृतीय या षष्ठ में हो, तो सिंह के समान पराक्रमी, सब सम्पत्तियों से युक्त, अभिमानी, दो भार्याओंवाला, बुद्धिमान् और सुखी होता है ॥ १०० ॥

लग्नेशे दशमे तुर्ये पितृमातृसुखान्वितः ।
बहुभ्रातृयुतः कामी गुणसौन्दर्यसंयुतः ॥ १०१ ॥

लग्नेश दशम या चतुर्थ स्थान में हो, तो मनुष्य माता और पिता से सुख प्राप्त करनेवाला, बहुत भाइयों से युक्त, कामी, गुणवान् और सुन्दर होता है ॥ १०१ ॥

लग्नेशे पञ्चमे मानी सुतसौख्यं च मध्यमम् ।
प्रथमापत्यनाशश्च क्रोधी राजप्रवेशकः ॥ १०२ ॥

लग्नेश पंचम भाव में स्थित हो, तो अभिमानी, पुत्र का सुख सामान्य, पहली सन्तति का नाश, क्रोधी और राजदरबार में काम करनेवाला होता है ॥ १०२ ॥

लग्नेशः सप्तमे यस्य भार्या तस्य न जीवति ।
विरक्तो वा प्रवासी वा दरिद्रो वा नृपोऽपि वा ॥ १०३ ॥

लग्नेश सप्तम भाव में स्थित हो, तो स्त्री की मृत्यु तथा विरक्त या विदेशी, दरिद्री या राजा होता है ॥ १०३ ॥

लग्नेशेऽष्टमरिष्फस्थे सिद्धविद्याविशारदः ।
द्यूती चौरो महाक्रोधी परनार्यां च भोगकृत् ॥ १०४ ॥

लग्नेश अष्टम या द्वादश स्थान में हो, तो सिद्धविद्याविशारद, जुआरी, चोर, अति क्रोधी तथा परस्त्री का भोग करनेवाला होता है ॥ १०४ ॥

लग्नेशे नवमे जातो भाग्यवाञ्जनवल्लभः ।
विष्णुभक्तः पटुर्वाग्मी पुत्रदारधनैर्युतः ॥ १०५ ॥

लग्नेश नवम भाव में स्थित हो, तो भाग्यवान्, मनुष्यों का प्रिय, विष्णुभक्त, चतुर, वाक्पटु, पुत्र, धन और स्त्री से युक्त होता है ॥ १०५ ॥

धनेशफलानि

धनेशे धनगे जातो धनवान्गर्वसंयुतः ।
भार्याद्वयं त्रयं चापि सुतहीनः प्रजायते ॥ १०६ ॥

धनेश धन भाव में स्थित हो, तो धनवान्, अभिमानी, दो या तीन भार्यावाला और पुत्र से हीन होता है ॥ १०६ ॥

धनेशे सहजे तुर्ये विक्रमी मतिमान्गुणी ।
परदाराभिगामी च लोभी वा देवनिन्दकः ॥ १०७ ॥

धनेश तीसरे या चौथे स्थान में हो, तो पराक्रमी, बुद्धिमान्, गुणवान्, परस्त्री से भोग करनेवाला, लोभी या देवनिन्दक होता है ॥ १०७ ॥

धनेशे रिपुगे शत्रोर्धनं प्राप्नोति निश्चितम् ।
शत्रुतो धननाशः स्याद्गुदोर्वोश्च भवेच्च रुक् ॥१०८॥

धनेश षष्ठभाव में हो, तो शत्रु से धन की प्राप्ति, तथा धन-नाश, गुदा और ऊरु में रोग होता है ॥ १०८ ॥

धनेशे सप्तमे वैद्यः परजायाभिगामिकः ।
जाया तस्य भवेद्वेश्या माताऽपि व्यभिचारिणी ॥१०९॥

धनेश सप्तम स्थान में हो, तो वैद्य और परस्त्री गमन करने-वाला, स्त्री वेश्या और माता व्यभिचारिणी होती है ॥ १०९ ॥

धनेशे मृत्युगेहस्थे भूमिद्रव्यं लभेद्ध्रुवम् ।
जायासौख्यं भवेत्स्वल्पं ज्येष्ठभ्रातृसुखं नहि ॥ ११० ॥

धनेश अष्टम भाव में हो, तो भूमि से गड़ा हुआ धन मिलता

है, स्त्री से अल्प सुख तथा ज्येष्ठ भ्राता से कभी सुख नहीं मिलता है ॥ ११० ॥

धनेशे नवमे लाभे धनवानुद्यमी पटुः।
बाल्ये रोगी सुखी पश्चाद्यावदायुः समाप्यते ॥ १११ ॥

धनेश नवम या एकादश स्थान में हो, तो धनवान्, उद्यमी, चतुर, बाल्यकाल में रोगी पुनः जीवन पर्यन्त सुखी रहता है ॥ १११ ॥

धनेशे दशमे जातो मानी कामी च पण्डितः।
बहुदारधनैर्युक्तः सुतहीनोऽपि जायते ॥ ११२ ॥

धनेश दशम स्थान में हो, तो अभिमानी, कामी, विद्वान्, बहुत स्त्रियों तथा धन से युक्त और पुत्रहीन होता है ॥ ११२ ॥

धनेशे व्ययगे मानी साहसी धनवर्जितः।
जीविका नृपगेहाच्च ज्येष्ठपुत्रसुखं नहि ॥ ११३ ॥

धनेश द्वादश स्थान में हो, तो अभिमानी, साहसी, धनहीन, राजा के घर से जीविका प्राप्त करनेवाला तथा ज्येष्ठ पुत्र के सुख से हीन होता है ॥ ११३ ॥

धनेशे लग्नगे पुत्रे स्वकुटुम्बस्य कण्टकः।
धनवान्निष्ठुरः कामी परकार्येषु तत्परः ॥ ११४ ॥

धनेश लग्न अथवा पञ्चम स्थान में हो, तो अपने कुटुम्ब में कण्टकरूप, धनी, निष्ठुर, कामी और परोपकार में तत्पर होता है ॥ ११४ ॥

सहजेशफलानि

तृतीयेशे तृतीयस्थे विक्रमी सुतसंयुतः।
धनयुक्तो महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम् ॥ ११५ ॥

तृतीयेश तृतीय स्थान में हो, तो पराक्रमी, पुत्रों से युक्त, धन-

वान्, अति प्रसन्न तथा अद्भुत सुखों का भोग करनेवाला होता है ॥ ११५ ॥

तृतीयेशे कर्मसुखसुतस्थे न सुखी तदा ।
अतिक्रूरा भवेद्भार्या धनाढ्यो मतिमान्भवेत् ॥ ११६ ॥

तृतीयेश दशम, चतुर्थ तथा पञ्चम स्थान में हो, तो सदा सुखहीन, अति क्रूरभार्यावाला, धनाढ्य और बुद्धिमान् होता है ॥ ११६ ॥

तृतीयेशे रिपौ यस्य भ्रातृशत्रुर्महाधनी ।
मातुलानां सुखं न स्यान्मातुल्या भोगमिच्छति ॥ ११७ ॥

तृतीयेश षष्ठ भाव में हो, तो अपने भाई का शत्रु तथा बड़ा धनवान् होता है और मामा के सुख से सर्वदा वञ्चित तथा मातुलानी से भोग चाहनेवाला होता है ॥ ११७ ॥

तृतीयेशे व्यये भाग्ये स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत् ।
पिता तस्य महाचौरः सुखेऽपि दुःखदर्शकः ॥ ११८ ॥

तृतीयेश द्वादश या नवम स्थान में हो, तो स्त्रियों के द्वारा भाग्योदय होता है तथा उसका पिता चोर तथा वह मनुष्य अपने सुख के समय में भी दुःख का अनुभव करता है ॥ ११८ ॥

तृतीयेशेऽष्टमे द्यूने राजद्वारे मृतिर्भवेत् ।
चौरो वा परगामी वा बाल्ये कष्टं दिने दिने ॥ ११९ ॥

तृतीयेश सप्तम या अष्टम स्थान में हो, तो उसकी मृत्यु राजद्वार में होती है । वह मनुष्य या तो चोर होता है या परस्त्रीगमन करनेवाला होता है तथा बाल्यावस्था में दिनोंदिन कष्ट का अनुभव करता है ॥ ११९ ॥

तृतीयेशे तनौ लाभे स्वभुजार्जितवित्तवान् ।
मूर्खश्चैव महारोगी साहसी परसेवकः ॥ १२० ॥

तृतीयेश लग्न या एकादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य अपने

भुजबल से धनोपार्जन करनेवाला, मूर्ख, महारोगी, साहसी और दूसरे की सेवा करनेवाला होता है ॥ १२० ॥

तृतीयेशे धने स्थूलः परभार्याधने रुचिः ।
स्वल्पारम्भी सुखी न स्याद् गुदाभञ्जनिकस्तथा॥१२१॥

जब तृतीयेश द्वितीय (धन) स्थान में हो, तो मनुष्य स्थूल-शरीर, दूसरे की स्त्री और धन में रुचि रखनेवाला, आलसी, सुख न प्राप्त करनेवाला तथा गुदाभञ्जनिक होता है ॥ १२१ ॥

सुखेशफलानि

सुखेशे तुर्यगे मन्त्री भवेत्सर्वधनाधिपः ।
चतुरः शीलवान्मानी धनाढ्यः स्त्रीप्रियः सुखी ॥१२२॥

चतुर्थेश जब चतुर्थ स्थान में हो, तो वह मनुष्य राजा का मन्त्री, ऐश्वर्यशाली, चतुर, शीलवान्, अभिमानी, धनाढ्य, स्त्रियों का प्रिय और सुखी होता है ॥ १२२ ॥

तुर्येशे पञ्चमे भाग्ये सुखी सर्वजनप्रियः ।
विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥ १२३ ॥

चतुर्थेश पञ्चम या नवम स्थान में हो, तो वह मनुष्य सुखी, सब लोगों का प्रिय, विष्णु का भक्त, अभिमानी तथा अपने भुज-बल से धन-सञ्चय करनेवाला होता है ॥ १२३ ॥

तुर्येशे शत्रुगेहस्थे नरः स्याद्बहुमातृकः :
क्रोधी चौरोऽभिचारी च दुष्टचित्तो मनस्यपि ॥१२४ ॥

चतुर्थेश जब षष्ठ स्थान में हो, तो वह मनुष्य बहुत माताओं से लालित पालित, क्रोधी, चोर, अभिचार (मारण)-कर्म करनेवाला और दुष्ट चित्तवाला होता है ॥ १२४ ॥

तुर्येशे सप्तमे लग्ने बहुविद्यासमन्वितः ।
पित्रर्जितधनत्यागी सभायां मूकवद्भवेत् ॥ १२५ ॥

चतुर्थेश लग्न या सप्तम स्थान में हो, तो वह मनुष्य अनेक

विद्याओं का जाननेवाला, पिता के उपार्जित धन को नष्ट करनेवाला और सभा-सुसाइटियों में मूक रहनेवाला होता है ॥ १२५ ॥

तुर्येशे व्ययरन्ध्रस्थे सुखहीनो भवेन्नरः ।
पितृसौख्यं भवेदल्पं क्लीबो वा जारजोऽपि वा ॥१२६॥

चतुर्थेश अष्टम या द्वादश स्थान में हो, तो मनुष्य सुखहीन, पिता से अल्प सुख प्राप्त करनेवाला, नपुंसक या जारजात होता है ॥ १२६ ॥

तुर्येशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः ।
रसायनी महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम् ॥ १२७ ॥

चतुर्थेश दशम स्थान में हो, तो वह मनुष्य राजा से सम्मानित, रसायन-विद्या में चतुर, अति प्रसन्न और अपूर्व सुख भोगनेवाला होता है ॥ १२७ ॥

तुर्येशे सहजे लाभे नित्यरोगी भवेन्नरः ।
उदारो गुणवान्दाता स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥ १२८ ॥

चतुर्थेश तृतीय या एकादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य नित्य रोगी, उदार, गुणवान्, दानी और अपने भुजबल से धन सञ्चय करनेवाला होता है ॥ १२८ ॥

तुर्येशे धनगे मानी सर्वसम्पद्युतो नरः ।
कुटुम्बसंयुतो भोगी साहसी च तथैव च ॥ १२९ ॥

चतुर्थेश जब द्वितीय स्थान में हो, तो वह मनुष्य अभिमानी, सब प्रकार की सम्पत्तियों से युक्त, कुटुम्बवाला, भोगी और साहसी होता है ॥ १२९ ॥

पञ्चमेशफलानि

सुतेशः पञ्चमे यस्य सुतस्तस्य न जीवति ।
क्षणिकः क्रूरभाषी च धार्मिको मतिमान्भवेत् ॥ १३०॥

पञ्चमेश पञ्चम स्थान में हो, तो उस मनुष्य का पुत्र न जीवे,

और वह मनुष्य क्षणिक अर्थात् क्षणमात्र में स्वभाव बदलनेवाला, बोलने में निष्ठुर, धार्मिक और बुद्धिमान् होता है ॥ १३० ॥

सुतेशे षष्ठरिष्फस्थे पुत्रः शत्रुत्वमाप्नुयात् ।
मृतापत्यो ग्राह्यपुत्रो धनपुत्रोऽथवा भवेत् ॥ १३१ ॥

पञ्चमेश षष्ठ या द्वादश स्थान में स्थित हो, तो उसका पुत्र शत्रुवत् हो, या तो उस मनुष्य की सन्तति मर जाती है या वह धर्मपुत्र बनाता है ॥ १३१ ॥

सुतेशे कामगे मानी सर्वधर्मसमन्वितः ।
तुंगलिंगस्तुंगदेहो भक्तियुक्तः प्रसन्नधीः ॥ १३२ ॥

पञ्चमेश जब सप्तम भाव में हो, तो वह मनुष्य अभिमानी, धर्मकर्म में तत्पर, तुंगलिंग, उत्तुंग शरीर, भक्ति करनेवाला और सर्वदा प्रसन्न रहता है ॥ १३२ ॥

सुतेशे चाष्टमे वित्ते बहुपुत्रो न संशयः ।
कासश्वासी सुखी न स्यात्क्रोधयुक्तो धनान्वितः ॥१३३॥

पञ्चमेश जब द्वितीय या अष्टम स्थान में हो, तो बहुत पुत्रों तथा कास और श्वास रोगवाला होता है। वह मनुष्य सुखहीन, क्रोधी और धनवान् होता है ॥ १३३ ॥

सुतेशे नवमे राज्ये पुत्रो भूपसमो भवेत् ।
अथवा ग्रन्थकर्त्ता च विख्यातः कुलदीपकः ॥ १३४ ॥

पञ्चमेश नवम या दशम स्थान में हो, तो वह मनुष्य राजा के समान अथवा ग्रन्थकर्त्ता, प्रसिद्ध और कुलदीपक होता है ॥१३४॥

सुतेशे लाभभवने पण्डितानां च वल्लभः ।
ग्रन्थकर्त्ता महादक्षो बहुपुत्रधनान्वितः ॥ १३५ ॥

पञ्चमेश एकादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य पण्डितों का प्रिय, ग्रन्थकर्त्ता, अति चतुर और बहुत पुत्र तथा धन से युक्त होता है ॥ १३५ ॥

सुतेशे लग्नसहजे मायावी पिशुनो महान् ।
लोष्टं तु दत्तवान्नैव द्रविणस्य तु का कथा ॥ १३६ ॥

जब पञ्चमेश लग्न या तृतीय स्थान में हो, तो वह मनुष्य मायावी और चुगलखोर होता है। किसी को एक मिट्टी का ढेला भी नहीं दे सकता है, धन का तो कहना ही क्या है ॥ १३६ ॥

सुतेशे मातृभवने चिरं मातृसुखं भवेत् ।
लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिवोऽप्यथवा गुरुः ॥ १३७ ॥

पञ्चमेश चतुर्थ स्थान में हो, तो वह मनुष्य माता से चिरकाल तक सुख प्राप्त करता है। तथा वह मनुष्य लक्ष्मीवान्, बुद्धिमान्, मन्त्री या गुरु होता है ॥ १३७ ॥

षष्ठेशफलानि

षष्ठेशे रिपुभावस्थे स्वज्ञातिः शत्रुवद्भवेत् ।
परजातिर्भवेन्मित्रं भूमौ न चलति ध्रुवम् ॥ १३८ ॥

षष्ठेश षष्ठ स्थान में हो, तो उसके जातिवाले लोग भी शत्रु और अन्य जातिवाले मित्र हो जाते हैं तथा वह अकड़कर चलता है ॥ १३८ ॥

षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्ने वा कीर्त्तिमान्भवेत् ।
धनवान्गुणवान्मानी साहसी पुत्रवर्जितः ॥ १३९ ॥

षष्ठेश जब लग्न, सप्तम या एकादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य कीर्तिमान्, धनवान्, गुणवान्, अभिमानी, साहसी और पुत्रहीन होता है ॥ १३९ ॥

षष्ठेशेऽष्टमरिष्फस्थे रोगी शत्रुर्मनीषिणाम् ।
परजायाभिगामी च जीवहिंसासु तत्परः ॥ १४० ॥

षष्ठेश अष्टम या द्वादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य रोगी, विद्वानों का शत्रु, परस्त्रीगामी और जीवों की हिंसा करने में तत्पर होता है ॥ १४० ॥

षष्ठेशे नवमे यस्य काष्ठपाषाणविक्रमी।
व्यवहारे क्वचिद्धानिः क्वचिद्वृद्धिर्भवेत्किल ॥ १४१ ॥

षष्ठेश नवम स्थान में हो, तो वह मनुष्य काष्ठ और पाषाण का बेचनेवाला तथा व्यापार में कभी हानि और कभी लाभ उठानेवाला होता है ॥ १४१ ॥

षष्ठेशे कर्मवित्तस्थे साहसी कुलनिन्दकः।
परदेशसुखी वक्ता स्वकर्मनिष्ठितस्तथा ॥ १४२ ॥

षष्ठेश द्वितीय या दशम स्थान में हो, तो वह मनुष्य साहसी, कुल की निन्दा करनेवाला, परदेश में रहनेवाला, सुखी, वक्ता और अपने कर्म में तत्पर रहता है ॥ १४२ ॥

षष्ठेशे सहजे तुर्ये क्रोधनो रक्तलोचनः।
मनस्वी पिशुनो द्वेषी चलचित्तोऽपि वित्तवान् ॥ १४३ ॥

षष्ठेश तृतीय या चतुर्थ स्थान में हो, तो वह मनुष्य क्रोधी, लाल नेत्रोंवाला, उदार, चुग़लख़ोर, द्वेष करनेवाला, अस्थिरचित्त और धनवान् होता है ॥ १४३ ॥

षष्ठेशे पञ्चमे यस्य चलं मित्रधनादिकम्।
दयायुक्तः सुखी सौम्यः स्वकार्ये चतुरो महान् ॥१४४॥

षष्ठेश पञ्चम स्थान में हो, तो मित्र तथा धन चलायमान और वह मनुष्य दयालु, सुखी, सौम्य स्वभाववाला और अपने कार्य में बड़ा चतुर होता है ॥ १४४ ॥

सप्तमेशफलानि

सप्तमेशे तनौ चास्ते परजायासु लम्पटः।
दुष्टो विचक्षणो धीरो वातरोगान्वितः सदा ॥ १४५ ॥

सप्तमेश लग्न या सप्तम स्थान में हो, तो वह परस्त्रियों में लम्पट, दुष्ट, प्रवीण, धीर और सदा वातरोग से पीड़ित रहता है ॥ १४५ ॥

सप्तमेशेऽष्टमे षष्ठे सरोगः कामिनीप्रियः ।
क्रोधयुक्तो हानियुक्तः सुखं तु लभते क्वचित् ॥ १४६ ॥

सप्तमेश षष्ठ या अष्टम स्थान में हो, तो वह मनुष्य रोगी, स्त्रियों का प्रिय, क्रोधी, हानियुक्त और दैवात् सुख प्राप्त करनेवाला होता है ॥ १४६ ॥

सप्तमेशे धने धर्मे नानास्त्रीभिः समागमः ।
आरम्भी दीर्घसूत्री च स्त्रीषु वित्तव्ययः सदा ॥ १४७ ॥

सप्तमेश द्वितीय या नवम स्थान में हो, तो वह मनुष्य अनेक स्त्रियों के साथ समागम करनेवाला, कार्य को आरम्भ करके बीच में ही छोड़ देनेवाला, आलस्य के साथ कार्य करनेवाला और स्त्रियों के ऊपर धन व्यय करनेवाला होता है ॥ १४७ ॥

सप्तमेशे खे चतुर्थे नास्य जाया पतिव्रता ।
धर्मात्मा सत्यसंयुक्तः केवलं दन्तरोगवान् ॥ १४८ ॥

सप्तमेश चतुर्थ या दशम स्थान में हो, तो स्त्री दुराचारिणी और वह धर्मात्मा, सत्यवादी तथा दन्तरोगी होता है ॥ १४८ ॥

द्यूनेशे सहजे लाभे मृतपुत्रः प्रजायते ।
कदाचिज्जीव्यते कन्या यत्नात्पुत्रोऽपि जायते ॥ १४९ ॥

सप्तमेश चतुर्थ या एकादश स्थान में हो, तो उस मनुष्य के पुत्र नहीं जीते हैं, कदाचित् एक कन्या बच जावे। उपाय करने से पुत्र भी उत्पन्न हो सकता है ॥ १४९ ॥

सप्तमेशे द्वादशस्थे दरिद्रः कृपणो महान् ।
जारकन्या भवेद्भार्या वस्त्राजीवी च निर्धनः ॥ १५० ॥

सप्तमेश द्वादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य दरिद्री और बड़ा कृपण होता है। उसकी स्त्री जारकन्या और वह मनुष्य वस्त्रों का व्यापार करनेवाला तथा निर्धन होता है ॥ १५० ॥

सप्तमेशे सुतस्थे च भवेत्सर्वधनाधिपः ।

सदैव हर्षसंयुक्तो मानी सर्वगुणैर्युतः ॥ १५१ ॥

सप्तमेश पञ्चम स्थान में हो, तो वह मनुष्य विभवसम्पन्न, सदा प्रसन्नचित्त, अभिमानी और सब गुणों से युक्त होता है ॥ १५१ ॥

अष्टमेशफलानि

अष्टमेशेऽष्टमस्थाने भार्या पररता भवेत् ।
द्यूती चौरोऽन्यथावादी गुरुनिन्दासु तत्परः ॥ १५२ ॥

अष्टमेश अष्टम स्थान में हो, तो उसकी स्त्री दूसरे में अनुरक्त होती है तथा वह मनुष्य जुआरी, चोर, झूठ बोलनेवाला और गुरु की निन्दा करने में तत्पर रहता है ॥ १५२ ॥

अष्टमेशे तपःस्थाने महापापी च नास्तिकः ।
सुतहा दारवन्ध्यो वा परभार्याधने रुचिः ॥ १५३ ॥

अष्टमेश नवम स्थान में हो, तो वह मनुष्य महापापी और नास्तिक होता है । उसके पुत्र उत्पन्न होकर मर जाते हैं या उसकी स्त्री बाँझ होती है । तथा वह मनुष्य दूसरे की स्त्री और धन में रुचि रखनेवाला होता है ॥ १५३ ॥

अष्टमेशे कर्मसुखे पिशुनो वन्धुवर्जितः ।
मातापित्रोर्भवेन्मृत्युः स्वल्पकालेन भीतियुक् ॥ १५४ ॥

अष्टमेश चतुर्थ या दशम स्थान में हो, तो वह मनुष्य चुगुलखोर, बन्धुहीन तथा बाल्यावस्था में ही माता-पिता की मृत्यु होती है और वह मनुष्य डरनेवाला होता है ॥ १५४ ॥

अष्टमेशे सुते लाभे तस्य बुद्धिर्न जायते ।
द्रव्यं न स्थीयते गेहे जडबुद्धिर्भवेज्जनः ॥ १५५ ॥

अष्टमेश पञ्चम या एकादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य बुद्धिहीन होता है, उसके घर में द्रव्य नहीं रहता है और वह जडबुद्धि होता है ॥ १५५ ॥

अष्टमेशे व्यये षष्ठे नित्यरोगी च जायते ।

जलसर्पभयश्चैव भवेत्तस्य च शैशवे ॥ १५६ ॥

अष्टमेश षष्ठ या द्वादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य नित्यरोगी तथा बाल्यावस्था में उसको जल और सर्प से भय रहता है ॥ १५६ ॥

अष्टमेशे तनौ कामे द्विभार्यश्च भवेन्नरः ।
विष्णुद्रोहरतो नित्यं व्रणरोगी च जायते ॥ १५७ ॥

अष्टमेश लग्न या सप्तम स्थान में हो, तो वह दो भार्याओंवाला, विष्णु भगवान् से सदा द्रोह करनेवाला और व्रणरोगी होता है ॥ १५७ ॥

अष्टमेशे धने बाहुबलहीनः प्रजायते ।
धनं तस्य भवेदल्पं गतवित्तं न लभ्यते ॥ १५८ ॥

अष्टमेश द्वितीय स्थान में हो, तो वह मनुष्य बाहुबलहीन, धनहीन और गत धन नहीं मिलता है ॥ १५८ ॥

नवमेशफलानि

भाग्येशे भाग्यभावस्थे धनधान्ययुतो नरः ।
बहुभ्रातृसुखं चैव गुणसौन्दर्यसंयुतः ॥ १५९ ॥

नवमेश नवम स्थान में हो, तो वह मनुष्य धन-धान्य से पूर्ण, अपने सब भ्राताओं से सुख प्राप्त करनेवाला, गुणवान् और सुन्दर होता है ॥ १५९ ॥

भाग्येशे दशमे तुर्ये मन्त्री सेनापतिर्भवेत् ।
पुण्यवान्कीर्त्तिमान्वाग्मी साहसी क्रोधसंयुतः ॥ १६० ॥

नवमेश चतुर्थ या दशम स्थान में हो, तो वह मन्त्री, सेनापति, पुण्यवान्, कीर्तिमान्, विचक्षण, साहसी और क्रोधी होता है ॥ १६० ॥

भाग्येशे पञ्चमे लाभे भाग्यवाञ्जनवल्लभः ।
गुरुभक्तिरतो मानी वीरो धीरगुणैर्युतः ॥ १६१ ॥

नवमेश पञ्चम या एकादश स्थान में हो, तो भाग्यशाली, लोकप्रिय, गुरुभक्त, अभिमानी, वीर और धीर होता है ॥ १६१ ॥

भाग्येशेऽरौ लये रिष्फे भाग्यहीनो भवेद्ध्रुवम् ।
मातुलस्य सुखं न स्याज्ज्येष्ठभ्रातृसुखं तथा ॥ १६२ ॥

नवमेश षष्ठ, अष्टम या द्वादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य निश्चय भाग्यहीन होता है तथा मामा और ज्येष्ठ भ्राता से सुख नहीं मिलता है ॥ १६२ ॥

भाग्येशे मदलग्नस्थे गुणवान्कीर्त्तिमान्भवेत् ।
कदाचिन्न भवेत्सिद्धिर्यत्कार्यं कर्त्तुमिच्छति ॥ १६३ ॥

नवमेश लग्न या सप्तम स्थान में हो, तो वह मनुष्य गुणवान् तथा कीर्तिमान् होता है और जिस काम को करना चाहता है उसमें कदापि सिद्धि नहीं प्राप्त होती है ॥ १६३ ॥

भाग्येशे सहजे वित्ते सदा भाग्यानुचिन्तकः ।
धनवान्गुणवान्वाग्मी पण्डितो जनवल्लभः ॥ १६४ ॥

नवमेश द्वितीय या तृतीय स्थान में हो, तो वह मनुष्य सदा भाग्य की चिन्ता करनेवाला, धनवान्, गुणवान्, विचक्षण, विद्वान् और लोकप्रिय होता है ॥ १६४ ॥

दशमेशफलानि

कर्मेशे सुखकर्मस्थे सुखी ज्ञानी च विक्रमी ।
गुरुदेवार्चनरतो धर्मात्मा सत्यसंयुतः ॥ १६५ ॥

दशमेश चतुर्थ या दशम स्थान में हो, तो वह मनुष्य सुखी, ज्ञानी, पराक्रमी, गुरु और देवताओं की पूजा में तत्पर, धर्मात्मा तथा सत्यवादी होता है ॥ १६५ ॥

कर्मेशे सुतलाभस्थे धनवान्पुत्रवान्भवेत् ।
सर्वदा हर्षसंयुक्तः सत्यवादी सुखी नरः ॥ १६६ ॥

दशमेश पञ्चम या एकादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य धनवान्,

पुत्रवान्, सर्वदा प्रसन्नचित्त, सत्यवक्ता और सुखी होता है ॥१६६॥

कर्मेशेऽरिव्ययस्थे तु शत्रुभिः परिपीडितः ।
चातुर्यगुणसम्पन्नः कचिच्च न सुखी नरः ॥ १६७ ॥

दशमेश षष्ठ या द्वादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य शत्रुओं से पीड़ित, चतुरता के गुणों से युक्त और सर्वदा दुःखी रहता है ॥ १६७ ॥

कर्मेशे लग्नसंस्थे तु कवितागुणसंयुतः ।
बाल्ये रोगी सखी पश्चादर्थवृद्धिर्दिनेदिने ॥ १६८ ॥

दशमेश लग्न में स्थित हो, तो वह मनुष्य कविता के गुणों से युक्त, बाल्यावस्था में रोगी रहनेवाला, तत्पश्चात् क्रमशः धन की वृद्धि होती रहती है ॥ १६८ ॥

कर्मेशे धनसंस्थे तु मदे च सहजे तथा ।
मनस्वी गुणवान्वाग्मी सत्यधर्मसमन्वितः ॥ १६९ ॥

दशमेश द्वितीय, तृतीय तथा सप्तम स्थान में हो, तो वह मनुष्य उदारचित्त, गुणवान्, विचक्षण और सत्य तथा धर्म से युक्त होता है ॥ १६९ ॥

लाभेशफलानि

लाभेशे संस्थिते लाभे स वाग्मी जायते ध्रुवम् ।
पाण्डित्यं कविता चैव वर्द्धते च दिनेदिने ॥ १७० ॥

एकादशेश एकादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य वाग्मी, पण्डित और उसकी कविता का विकास दिनोंदिन होता है ॥ १७० ॥

लाभेशे रिष्फसंस्थे तु म्लेच्छसंसर्गकारकः ।
कामुको बहुकान्तश्च क्षणिको लम्पटः सदा ॥ १७१ ॥

एकादशेश द्वादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य म्लेच्छों से

संसर्ग करनेवाला, कामी, बहुत स्त्रियोंवाला, क्षीणबुद्धि और लम्पट होता है ॥ १७१ ॥

लाभेशे संस्थिते लग्ने धनवान्सात्त्विको महान् ।
समदृष्टिर्महावक्ता कौतुकी च भवेत्सदा ॥ १७२ ॥

एकादशेश लग्न में हो, तो धनवान्, सौम्य स्वभाववाला, समदृष्टि, बोलने में चतुर और कौतुकी होता है ॥ १७२ ॥

लाभेशे धनपुत्रस्थे नानासुखसमन्वितः ।
पुत्रवान्धार्मिकश्चैव सर्वसिद्धिसमन्वितः ॥ १७३ ॥

एकादशेश द्वितीय तथा पञ्चम स्थान में हो, तो वह मनुष्य सब प्रकार से सुखी, पुत्रवान्, धार्मिक और सब प्रकार की सिद्धियों से युक्त होता है ॥ १७३ ॥

लाभेशे सहजे वित्ते तीर्थेषु तत्परो महान् ।
कुशलः सर्वकार्येषु केवलं शूलरोगवान् ॥ १७४ ॥

एकादशेश द्वितीय या तृतीय स्थान में हो, तो वह मनुष्य तीर्थों की यात्रा करनेवाला, सब कार्यों में चतुर और शूलरोगी होता है ॥ १७४ ॥

लाभेशे षष्ठभवने नानारोगसमन्वितः ।
स्वल्पं सुखं भवेत्तस्य प्रवासी परसेवकः ॥ १७५ ॥

एकादशेश षष्ठ स्थान में हो, तो वह मनुष्य अनेक रोगों से युक्त, स्वल्प सुखभोक्ता, विदेश में रहनेवाला और नौकरी से जीविका प्राप्त करनेवाला होता है ॥ १७५ ॥

लाभेशे सप्तमे रन्ध्रे भार्या तस्य न जीवति ।
उदारो गुणवान्कामी मूर्खो भवति निश्चितम् ॥ १७६ ॥

एकादशेश सप्तम या अष्टम स्थान में हो, तो उस मनुष्य की भार्या जीवित नहीं रहती तथा वह मनुष्य उदार, गुणवान्, कामी और मूर्ख होता है ॥ १७६ ॥

लाभेशे गगने धर्मे राजपूज्यो धनाधिपः।
चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः ॥ १७७ ॥

एकादशेश नवम या दशम स्थान में हो, तो वह मनुष्य राजपूज्य, ऐश्वर्यवान्, चतुर, सत्यवक्ता और अपने धर्म में तत्पर रहनेवाला होता है॥ १७७ ॥

द्वादशेशफलानि

व्ययेशेऽरिव्यये तुर्ये मातृमृत्युविचिन्तकः।
क्रोधी सन्तानदुःखी च परजायासु लम्पटः ॥ १७८ ॥

द्वादशेश चतुर्थ, षष्ठ या द्वादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य माता की मृत्यु चाहनेवाला, क्रोधी, सन्तान से दुःखित और दूसरे की स्त्रियों में लम्पट होता है ॥ १७८ ॥

व्ययेशे मदने लग्ने जायासौख्यं भवेन्नहि।
दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः ॥ १७९ ॥

द्वादशेश लग्न या सप्तम स्थान में हो, तो उस मनुष्य को स्त्रीसुख कभी न प्राप्त हो, वह मनुष्य दुर्बल, कफरोगी, धन और विद्या से हीन होता है ॥ १७९ ॥

व्ययेशे च धने रन्ध्रे विष्णुभक्तिसमन्वितः।
धार्मिकः प्रियवादी च सम्पूर्णगुणसंयुतः ॥ १८० ॥

द्वादशेश द्वितीय या अष्टम स्थान में हो, तो वह मनुष्य विष्णु का भक्त, धार्मिक, प्रियवादी और समस्त गुणों से युक्त होता है ॥ १८० ॥

व्ययेशे सहजे धर्मे स्वशरीरस्य पोषकः।
भार्याद्वेषी प्रियद्वेषी गुरुद्वेषी भवेन्नरः ॥ १८१ ॥

द्वादशेश तृतीय या नवम स्थान में हो, तो वह मनुष्य अपने शरीर का पोषण करनेवाला, भार्या, प्रियजन तथा गुरुजन से द्वेष रखनेवाला होता है ॥ १८१ ॥

व्ययेशे दशमे लाभे पुत्रसौख्यं भवेन्नहि ।
मणिमाणिक्यमुक्ताभिर्धनं किञ्चित्समालभेत् ॥ १८२ ॥

द्वादशेश दशम या एकादश स्थान में हो, तो वह मनुष्य पुत्र का सुख तो नहीं किन्तु रत्न आदि के द्वारा कुछ धन प्राप्त करता है ॥ १८२ ॥

पाराशरीयविशेषोक्तिः

एतत्ते कथितं विप्र भावानां च फलाफलम् ।
बलाबलविवेकेन सर्वेषां फलमादिशेत् ॥ १८३ ॥

हे ब्राह्मण ! ये भावों के फलाफल कह दिए, सबका बलाबल विचार करके फल कहना चाहिए ॥ १८३ ॥

वक्री चेत्स्वचतुर्थः स्यात्फलं भौमो ददाति च ।
बुधस्तुर्येऽथ देवेज्यः पञ्चमे शशिभार्गवौ ॥ १८४ ॥
सप्तमे तु तमध्वंसी पुत्रस्य नवमस्य च ।
वित्तस्य विषुवत्यर्के ददाति स्वफलं विधुः ॥ १८५ ॥
ग्रहे पूर्णबले प्राप्ते फलं पूर्णं समादिशेत् ।
अर्धमर्धे पादहीने पादोनं पादमंघ्रिणा ॥ १८६ ॥

मंगल वक्री होकर चतुर्थ में, बुध चौथे में, बृहस्पति पञ्चम में, चन्द्रमा और शुक्र सप्तम में, सूर्य पञ्चम, नवम तथा द्वितीय में और विषुवत् सूर्य में चन्द्रमा फल देते हैं। पूर्णबली ग्रह पूर्ण फल, पादहीन बली ग्रह पादहीन फल, अर्धबली ग्रह आधा फल, एकपाद बली ग्रह एक पाद फल देते हैं ॥ १८४-१८६ ॥

मेषादिराशिस्थसूर्यादिग्रहाणां फलानि

प्रथितश्चतुरोऽटनोऽल्पवित्तः
क्रियगे त्वायुधभृद्वितुङ्गभागे ।
गवि वस्त्रसुगन्धपण्यजीवी
वनिताद्विट्कुशलश्च गेयवाद्ये ॥ १८७ ॥

मेषराशि का सूर्य हो, तो मनुष्य ख्यातकीर्ति, चतुर, घूमनेवाला, अल्पधनी और शस्त्र धारण करनेवाला होता है। वृषराशि का हो, तो वस्त्र या सुगन्ध द्रव्य का व्यापारी, स्त्रियों का द्वेषी, गाने और बजाने में चतुर होता है ॥ १८७ ॥

विद्याज्यौतिषवित्तवान्मिथुनगे भानौ कुलीरे स्थिते
तीक्ष्णोऽस्वः परकार्यकृच्छ्रमपथः क्लेशैश्च संयुज्यते ।
सिंहस्थे वनशैलगोकुलरतिर्वीर्यान्वितोऽज्ञः पुमान्
कन्यास्थेलिपिलेख्यकाव्यगणितज्ञानान्वितःस्त्रीवपुः१८८।

मिथुन का सूर्य हो, तो विद्यावान्, ज्योतिषी और धनवान्; कर्क का हो, तो तीक्ष्णस्वभाव, निर्धन, दूसरों का कार्य करनेवाला और मार्गादि क्लेश से युक्त; सिंह का हो, तो वन, पर्वत तथा गोकुल में प्रीति करनेवाला, बलवान् और मूर्ख; कन्या का हो, तो लिखनेवाला, चित्रकारी, काव्य तथा गणितज्ञान से युक्त और स्त्री के समान शरीरवाला होता है ॥ १८८ ॥

जातस्तौलिनि शौण्डिकोऽध्वनिरतो हैरण्यको नीचकृत्
क्रूरः साहसिको विषार्जितधनः शस्त्रान्तगोऽलिस्थिते ।
सत्पूज्यो धनवान्धनुर्द्धरगते तीक्ष्णो भिषक्कारुको
नीचोऽज्ञः कुवणिङ्मृगेऽल्पधनवाल्लुब्धोऽन्यभाग्ये रतः१८९॥

तुला का सूर्य हो, तो मद्य बनानेवाला, मार्ग चलने में तत्पर, सुवर्णकार और नीच कर्म करनेवाला; वृश्चिक का सूर्य हो, तो उग्र स्वभाव, साहसी, विषकर्म से धनी और शस्त्रविद्या में निपुण; धनु का सूर्य हो, तो सज्जनसेवी, धनवान्, तीक्ष्ण स्वभाव, वैद्यविद्या तथा शिल्पविद्या में निपुण; मकर का सूर्य हो, तो नीच मूर्ख, व्यापार में हानि, अल्पधनी, लोभी और परभाग्य का भोग करनेवाला होता है ॥ १८९ ॥

नीचो घटे तनयभाग्यपरिच्युतोऽस्व-

स्तोयोत्थपण्यविभवो वनितादृतोऽन्त्ये ॥ ११० ॥

कुम्भ का सूर्य हो, तो नीच, पुत्रसुख से रहित तथा निर्धन; मीन का हो, तो जल से उत्पन्न मोती आदि के व्यापार से धनवान् और स्त्रियों का पूजनीय होता है ॥ ११० ॥

चन्द्रस्य फलानि

स्थिरधनो रहितः सुजनैर्नरः
सुतयुतः प्रमदाविजितो भवेत् ।
अजगते द्विजराज इतीरितं
विभुतयाद्भुतया स्वसुकीर्त्तिभाक् ॥ १११ ॥

जिसके मेषराशि में चन्द्रमा हो, वह स्थिरधन, श्रेष्ठजनों से विमुख, पुत्रवाला, स्त्रीजित, अद्भुतवैभव और श्रेष्ठ कीर्तिवाला होता है ॥ १११ ॥

स्थिरगतिं सुमतिं कमनीयतां
कुशलतां हि नृणामुपभोगताम् ।
वृषगतो हिमगुर्भृशमादिशे-
त्सुकृतिनः कृतिनश्च सुखानि च ॥ ११२ ॥

वृषराशि में चन्द्रमा हो, तो स्थिरगति, श्रेष्ठ बुद्धिवाला, शोभायुक्त, चतुर, भोगी, श्रेष्ठ कार्य करनेवाला तथा चातुर्य से सौख्ययुक्त होता है ॥ ११२ ॥

प्रियकरः करमत्स्ययुतो नरः
सुरतसौख्यभरो युवतिप्रियः ।
मिथुनराशिगते हिमगौ भवे-
त्सुजनता जनताकृतगौरवः ॥ ११३ ॥

मिथुन में चन्द्रमा हो, तो प्रिय कार्य करनेवाला, हाथ में मछली के आकारवाला, मैथुनसुखी, स्त्रियों का प्यारा, सज्जन और लोकमान्य होता है ॥ ११३ ॥

श्रुतकलावलनिर्मलवृत्तयः
कुसुमगन्धजलाशयकेलयः।
किल नरास्तु कुलीरगते विधौ
वसुमतीसुमतीस्मितलब्धयः॥ १६४॥

कर्क में चन्द्रमा हो, तो शास्त्रकलाओं में निर्मल व्यापारी, पुष्पों के गन्ध को सूँघनेवाला, जल में क्रीडा करनेवाला, भूमि और कामिनियों से अपने सब मनोरथों को पूर्ण करनेवाला होता है॥ १६४॥

अचलकाननयानमनोरथं
गृहकलिं च गलोदरपीडनम्।
द्विजपतिर्मृगराजगतो नृणां
वितनुते तनुतेजविहीनताम्॥ १६५॥

सिंह में चन्द्रमा हो, तो पर्वत और वन में घूमनेवाला, घर में कलह करनेवाला, गला और पेट में पीड़ा से युक्त, शरीर के तेज से रहित होता है॥ १६५॥

युवतिगे शशिनि प्रमदाजन-
प्रबलकेलिविलासकुतूहलैः।
विमलशीलसुताजननोत्सवैः
सुविधिना विधिना सहितः पुमान्॥ १६६॥

कन्या में चन्द्रमा हो, तो स्त्रियों के साथ अधिक विलासी निर्मल आचरणवाला, कन्या सन्तानवाला और भाग्यवान् होता है॥ १६६॥

वृषतुरङ्गमविक्रमविक्रम-
द्विजसुरार्चनदानमनाः पुमान्।
शशिनि तौलिगते बहुदारभा-
ग्विभवसम्भवसञ्चितविक्रमः॥ १६७॥

तुला में चन्द्रमा हो, तो वृष, अश्व, पराक्रम, देवता और ब्राह्मणों में भक्ति, दानी, अनेक स्त्रियों से युक्त, अपने पराक्रम से सम्पत्ति और प्रतिष्ठा होती है ॥ १९७ ॥

शशधरे हि सरीसृपगे नरो
नृपदुरोदरजातधनक्षयः ।
कलिरुचिर्विमलः खलमानसः
कृशमनाः शमनापहतो भवेत् ॥ १९८ ॥

वृश्चिकराशि में चन्द्रमा हो, तो राजा से और जुआ से धन का नाश, कलह में प्रीति, निर्बलता, दुष्टचित्त और शान्तिरहित होता है ॥ १९८ ॥

बहुकलाकुशलः प्रबलो महा-
विमलताकलितः सरलोक्तिभाक् ।
शशधरे तु धनुर्धरगे नरो
धनकरो न करोति बहुव्ययम् ॥ १९९ ॥

धनराशि में चन्द्रमा हो, तो अनेक कलाओं में चतुर, बलवान्, निर्मल, स्वच्छवाणी बोलनेवाला, धनवान् और कृपण होता है ॥१९९॥

कलितशीतभयः किल गीतवि-
चतुरुजा सहितो मदनातुरः ।
निजकुलोत्तमवृत्तिकरः परं
हिमकरे मकरे पुरुषो भवेत् ॥ २०० ॥

मकर में चन्द्रमा हो, तो पानी से डरनेवाला, गायक, रोगी, कामातुर और कुलीन होता है ॥ २०० ॥

अलसतासहितोऽन्यसुतप्रियः
कुशलताकलितोऽतिविचक्षणः ।
कलशगामिनि शीतकरे नरः
प्रशमितः शमितोरुरिपुव्रजः ॥ २०१ ॥

कुम्भ में चन्द्रमा हो, तो आलसी, पराए पुत्र में स्नेही, अत्यन्त चतुर और शत्रु को नाश करनेवाला होता है ॥ २०१ ॥

शशिनि मीनगते विजितेन्द्रियो
बहुगुणः कुशलो जललालसः ।
विमलधीः किल शास्त्रकलादर-
स्त्वबलतावलताकलितो नरः ॥ २०२ ॥

मीन में चन्द्रमा हो, तो जितेन्द्रिय, गुणी, चतुर, जल की लालसावाला, स्वच्छबुद्धि, शास्त्र-कला में प्रवीण और निर्बल होता है ॥ २०२ ॥

भौमस्य फलानि

नरपतिसत्कृतोऽटनश्च भूपवणिक्सधनः
क्षततनुश्चौरभूरिविषयांश्च कुजः स्वगृहे ।
युवतिजितान्सुहृत्सु विषमान्परदाररतान्
कुहकसुवेषभीरुपरुषान्सितभे जनयेत् ॥ २०३ ॥

मंगल अपने घर का हो, तो राजपूजित, घूमनेवाला, श्रेष्ठ व्यापारी, धनवान्, शरीर में चोटवाला, चोर और चञ्चल होता है। शुक्र के घर में हो, तो स्त्रीवश, मित्र का विरोधी, परस्त्री में रत, इन्द्रजाली, श्रृंगारी, डरनेवाला और स्नेहहीन होता है ॥२०३॥

बौधे सहस्तनयवान्विसुहृत्कृतज्ञो
गान्धर्वयुद्धकुशलः कृपणोऽभयोऽर्थी ।
चान्द्रेऽर्थवान्सलिलयानसमर्जितस्वः
प्राज्ञश्च भूमितनये विकलः खलश्च ॥ २०४ ॥

बुध की राशि में मंगल हो, तो सहनशील, पुत्रवान्, मित्र-रहित, कृतज्ञ, गायनविद्या और युद्धविद्या का जाननेवाला, कृपण, निर्भय और माँगनेवाला होता है। मंगल कर्क का हो, तो नौका

आदि से धनवान्, बुद्धिमान्, विकल और दुर्जन होता है ॥२०४॥

निःस्वः क्लेशसहो वनान्तरचरः सिंहेऽल्पदारात्मजो
जैवे नैकरिपुर्नरेन्द्रसचिवः ख्यातोऽभयोऽल्पात्मजः ।
दुःखार्तो विधनोऽटनोऽनृतरतस्तीक्ष्णश्च कुम्भस्थिते
भौमे भूरिधनात्मजो मृगगते भूपोऽथवा तत्समः ॥ २०५ ॥

मंगल सिंह का हो, तो निर्धन, क्लेश सहनेवाला, वन में फिरनेवाला, अल्प स्त्री-पुत्रवाला होता है। धन तथा मीन का मंगल हो, तो बहुत शत्रुओंवाला, राजमन्त्री, विख्यात, निर्भय, अल्प सन्तानवाला होता है। कुम्भ का मंगल हो, तो अनेक दुःखों से पीड़ित, निर्धन, घूमनेवाला, झूठ बोलनेवाला और क्रूर होता है। मकर का मंगल हो, तो बहुत धनी, अनेक सन्तानवाला, राजा या राजा के समान होता है ॥ २०५ ॥

बुधस्य फलानि

द्यूतर्णपानरतनास्तिकचौरनिःस्वाः
कुस्त्रीककूटकृतसत्यरताः कुजर्क्षे ।
आचार्यभूरिसुतदारधनार्जनेष्टाः
शौक्रे वदान्यगुरुभक्तिरताश्च सौम्ये ॥ २०६ ॥

बुध मंगल की राशि में हो, तो जुआरी, ऋणी, मद्यपी, नास्तिक, चोर, धनहीन, निन्दित स्त्रीवाला, प्रपञ्ची और झूठा होता है। शुक्र के घर में बुध हो, तो उपदेश करनेवाला, आचार्य, बहुत स्त्री-पुत्र से युक्त, धन इकट्ठा करने में तत्पर, उदार और गुरुसेवक होता है ॥ २०६ ॥

विकत्थनः शास्त्रकलाविदग्धः
प्रियंवदः सौख्यरतस्तृतीये ।
जलार्जितस्वः स्वजनस्य शत्रुः
शशाङ्कजे शीतकरर्क्षयुक्ते ॥ २०७ ॥

बुध मिथुन का हो, तो अपनी प्रशंसा करनेवाला, शस्त्र-विद्या में चतुर, प्रियवादी और सुखी होता है। कर्क का बुध हो, तो जल-कर्म से धनी और अपने बन्धुओं का शत्रु होता है ॥ २०७ ॥

स्त्रीद्वेष्यो विधनसुखात्मजोऽटनोऽज्ञः
स्त्रीलोलः सुपरिभवोऽर्कराशिगे ज्ञे।
त्यागी ज्ञः प्रचुरगुणः सुखी क्षमावान्
युक्तिज्ञो विगतभयश्च षष्ठराशौ ॥ २०८ ॥

बुध सिंह का हो, तो स्त्रियों का वैरी, धन, सुख और पुत्रों से रहित, घूमनेवाला, मूर्ख, स्त्रियों की बहुत अभिलाषा रखनेवाला और पराजित होता है। कन्या का बुध हो, तो दाता, पण्डित, गुणवान्, सौख्यवान्, क्षमावान्, युक्ति जाननेवाला और निर्भय होता है ॥ २०८ ॥

परकर्मकृदस्वशिल्पबुद्धि-
र्ऋणवान्विष्टिकरो बुधेऽर्कजर्क्षे।
नृपसत्कृतपण्डिताप्तवाक्यो
नवमेऽन्त्ये जितसेवकोऽन्त्यशिल्पः ॥ २०९ ॥

बुध शनि की राशि में हो, तो पराया काम करनेवाला, दरिद्री, शिल्पी, ऋणी और दासकर्म करनेवाला होता है। बुध धनराशि का हो, तो राजपूजित, विद्वान् और आप्तवाक्य (यथार्थ बात कहनेवाला) होता है। मीनराशि में बुध हो, तो परसेवी और शिल्पी होता है ॥ २०९ ॥

गुरोः फलानि

सेनानीर्बहुवित्तदारतनयो दाता सुभृत्यः क्षमी
तेजोदारगुणान्वितः सुरगुरौ ख्यातः पुमान्कौजभे।
कल्पाङ्गः ससुखार्थमित्रतनयस्त्यागी प्रियः शौक्रभे
बौधे भूरिपरिच्छदात्मजसुहृत्साचिव्ययुक्तः सुखी ॥२१०॥

बृहस्पति मंगल की राशि में हो, तो सेनापति, धनाढ्य, बहुत स्त्री-पुत्रों से युक्त, दाता, भृत्यों से युक्त, क्षमावान्, तेजस्वी, गुणवती स्त्री से युक्त और कीर्त्तिमान् होता है। शुक्र की राशि में बृहस्पति हो, तो स्वस्थदेह, सुखी, धन, मित्र, पुत्र और सुख से सदा युक्त, उदार और सर्वप्रिय होता है। बुध की राशि में बृहस्पति हो, तो परिवार, मित्र, पुत्र और मन्त्री से युक्त होता है॥ २१०॥

चान्द्रे रत्नसुतस्वदारविभवप्रज्ञासुखैरन्वितः
सिंहे स्याद्बलनायकः सुरगुरौ प्रोक्तं च यच्चन्द्रभे।
स्वर्क्षे माण्डलिको नरेन्द्रसचिवः सेनापतिर्वा धनी
कुम्भे कर्कटवत्फलानि मकरे नीचोऽल्पवित्तोऽसुखी॥२११॥

बृहस्पति चन्द्रराशि का हो, तो रत्न, पुत्र, धन, स्त्री, ऐश्वर्य, बुद्धि और सुख से युक्त होता है। सिंह का बृहस्पति हो, तो सेनापति तथा पूर्वोक्त चन्द्रराशि के समान फल होता है। स्वराशि का बृहस्पति हो, तो कुछ ग्रामों का स्वामी, राजा का मन्त्री, सेनापति और धनवान् होता है। कुम्भ का बृहस्पति हो, तो चन्द्रराशि के समान फल होता है। मकर का बृहस्पति हो, तो नीच कर्म करनेवाला, अल्प वित्तवान् और दुःखी होता है॥ २११॥

शुक्रस्य फलानि

परयुवतिरतस्तदर्थवादै-
र्हृतविभवः कुलपांसनः कुजर्क्षे।
स्वबलमतिधनो नरेन्द्रपूज्यः
स्वजनविभुः प्रथितोऽभयः सिते स्वे॥ २१२॥

शुक्र मंगल की राशि में हो, तो परस्त्री में आसक्त, परस्त्री में धन का नाशक और कुल में कलंक होता है। अपनी राशि में शुक्र हो, तो बल और बुद्धि से धन कमानेवाला, राजपूज्य, बन्धुओं में प्रधान, कीर्त्तिशाली और निर्भय होता है॥ २१२॥

नृपकृत्यकरोऽर्थवान्कलावि-
न्मिथुने षष्ठगतेऽतिनीचकर्मा।
रविजर्क्षगतेऽमरारिपूज्ये
सुभगः स्त्रीविजितो रतः कुनार्याम् ॥ २१३ ॥

शुक्र मिथुनराशि में हो, तो राजसेवी, धनवान् और कलावान् होता है। कन्या का शुक्र हो, तो बड़ा नीचकर्मी होता है। शनि के घर में शुक्र हो, तो सुन्दर स्त्री के वश और कुत्सित स्त्री में आसक्त होता है ॥ २१३ ॥

द्विभार्योऽर्थी भीरुः प्रबलमदशोकश्च शशिभे
हरौ योषाप्तार्थः प्रवरयुवतिर्मन्दतनयः।
गणैः पूज्यः सस्वस्तुरगसहितो दानवगुरौ
झषे विद्वानाढ्यो नृपजनितपूजो हि सुभगः ॥२१४॥

शुक्र कर्क का हो, तो दो स्त्रियोंवाला, माँगनेवाला, भययुक्त, उन्मत्त और अतिदुःखी होता है। सिंह का शुक्र हो, तो स्त्री द्वारा धनलाभ, सुन्दर स्त्रीवाला और अल्प सन्तानवाला होता है। धन का शुक्र हो, तो बहुपूज्य और धनवान् होता है। मीन का शुक्र हो, तो विद्वान्, सम्पत्तिशाली, राजपूज्य और सर्वप्रिय होता है ॥ २१४ ॥

शनेः फलानि

मूर्खोऽटनः कपटवान्विसुहृद्यमेऽजे
कीटे तु बन्धवधभाक् चपलो घृणश्च।
निर्ह्रीसुखार्थतनयः स्खलितश्च लेख्ये
रक्षापतिर्भवति मुख्यपतिश्च चौधे ॥ २१५ ॥

शनि मेष का हो, तो मूर्ख, घूमनेवाला, कपटी और मित्ररहित होता है। वृश्चिक का शनि हो, तो मारने-बाँधनेवाला, चपल और निर्दयी होता है। मिथुन या कन्या का शनि हो, तो निर्लज्ज,

दु:खी, निर्धन, अपुत्र; लिखने में भूलनेवाला, रक्षास्थान का स्वामी तथा प्रधान होता है ॥ २१५ ॥

वर्ज्यस्त्रीष्टो न बहुविभवो भूरिभार्यो वृषस्थे
ख्यातः स्वोच्चे गणपुरबलग्रामपूज्योऽर्थवांश्च ।
कर्किण्यस्वो विकलदशनो मातृहीनोऽसुतोऽज्ञः
सिंहेऽनार्यो विसुखतनयो विष्टिकृत्सूर्यपुत्रे ॥ २१६ ॥

शनि वृष का हो, तो अगम्य स्त्रियों में गमन करनेवाला, ऐश्वर्य-रहित, बहुत स्त्रियोंवाला होता है । तुला का शनि हो, तो कीर्त्तिमान्, समूह, नगर, सेना, ग्राम से पूज्य और धनवान् होता है । कर्क का शनि हो, तो निर्धन, विकल दाँतोंवाला, मातृरहित, पुत्र-रहित और मूर्ख होता है । सिंह का शनि हो, तो अनार्य, सुख और पुत्र से रहित और दासकर्म करनेवाला होता है ॥ २१६ ॥

स्वन्तः प्रत्ययितो नरेन्द्रभवने सत्पुत्रजायाधनो
जीवक्षेत्रगतेऽर्कजे पुरबलग्रामाग्रनेताऽथवा ।
अल्पस्त्रीधनसंवृतः पुरबलग्रामाग्रणीर्मन्ददृक्
स्वक्षेत्रे मलिनः स्थिरार्थविभवो भोक्ता च जातः पुमान् ॥२१७॥

शनि बृहस्पति के घर में हो, तो शुद्धचित्त, राजमान्य, सुन्दर स्त्री, पुत्र और धन से युक्त, नगर, सेना या ग्राम का नेता होता है । शनि स्वक्षेत्री हो, तो अल्प स्त्री और धन से युक्त, नगर, ग्राम तथा सेना में अग्रणी, मन्दनेत्र, मलिन, स्थिर धनवाला और आनन्दोपभोग करनेवाला होता है ॥ २१७ ॥

अनफादियोगा:

रविवर्ज्यं द्वादशगैरनफा चन्द्राद्द्वितीयगैः सुनफा ।
उभयस्थितैर्दुरुधरा केमद्रुमसंज्ञको योऽन्यः ॥ २१८ ॥

चन्द्रमा से द्वादश स्थान में सूर्य को छोड़कर शेष कोई ग्रह हों, तो अनफा योग होता है । यदि चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में सूर्य

से अन्य कोई ग्रह हो, तो सुनफा योग होता है। चन्द्रमा से द्वितीय तथा द्वादश दोनों स्थानों में ग्रह हों, तो दुरुधरा योग होता है। यदि दोनों स्थानों में कोई ग्रह न हो, तो केमद्रुम योग होता है ॥ २१८ ॥

अनफायोगफलम्

प्रभुर्विनीतः शुभवाग्विलासः
सच्छीलशाली गुणपूर्त्तियुक्तः ।
उदारकीर्त्तिः स्मरतुष्टचित्तो
नित्यं नरः स्यादनफाभिधाने ॥ २१९ ॥

जिसका जन्म अनफा योग में हो, वह मनुष्य प्रभु, नम्र, मधुरभाषी, सुशील, गुणवान्, उदार और भोगविलास से सन्तुष्ट होता है ॥ २१९ ॥

सुनफायोगफलम्

भूमीपतेश्च सचिवः सुकृती कृती च
नूनं भवेन्निजभुजार्जितवित्तयुक्तः ।
ख्यातः सदाखिलजनेषु विशालकीर्त्या
बुद्ध्याधिकश्च मनुजः सुनफाभिधाने ॥ २२० ॥

जिसका जन्म सुनफा योग में होता है, वह मनुष्य राजा का मन्त्री, धर्मात्मा, चतुर, अपने बाहुबल से धनी, प्रसिद्ध और बुद्धिमान् होता है ॥ २२० ॥

दुरुधरायोगफलम्

सद्वित्तसद्वारणवाहधात्री-
सौख्याभियुक्तः सततं हतारिः ।
कान्तासुनेत्राञ्चललालसः स्या-
द्योगे सदा दौरुधरे मनुष्यः ॥ २२१ ॥

जिसका जन्म दुरुधरा योग में होता है, वह मनुष्य धनवान्,

हाथी और घोड़े से युक्त, सुखी, शत्रुनाशी तथा स्त्री के वश में रहनेवाला होता है ॥ २२१ ॥

केमद्रुमयोगफलम्

सद्वित्तसूनुवनितात्मजनैर्विहीनः
प्रेष्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी ।
नित्यं विरुद्धधिषणो मलिनः कुवेषः
केमद्रुमे च मनुजाधिपतेः सुतोऽपि ॥ २२२ ॥

जिसका जन्म केमद्रुम योग में होता है, वह राजपुत्र भी हो, तो धन, सन्तान, स्त्री और मित्रों से रहित, दास, परदेशवासी, विपरीत बुद्धिवाला, मलिन और कुरूप होता है ॥ २२२ ॥

केमद्रुमयोगभंगः

प्रालेयांशुः सूतिकाले यदा वा
सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाणः करोति ।
दीर्घायुष्यं राजयोगं मनुष्यं
सत्कोशाढ्यं हन्ति केमद्रुमं च ॥ २२३ ॥
सर्वे खेटाः केन्द्रतुर्येषु संस्था
दुष्टो योगश्चाधि केमद्रुमोऽयम् ।
दुष्टं सर्वं स्वं फलं संविहाय
कुर्युः पुंसां सत्फलं वै विचित्रम् ॥ २२४ ॥

यदि चन्द्रमा सब ग्रहों से दृष्ट हो, तो मनुष्य दीर्घायु, राजयोगवाला और धनवान् होता है। केमद्रुम का भी नाश होता है। जब सब ग्रह चारों केन्द्रों में स्थित हों, तो केमद्रुम योग का फल नष्ट होता है अर्थात् अच्छा फल होता है ॥ २२३-२२४ ॥

वेश्यादियोगाः

सूर्याद्व्ययगैर्वेशिर्द्वितीयगैः सूर्यवर्जितैर्वेशिः ।
उभयस्थितैर्ग्रहगणैरुभयचरी नामतः प्रोक्ता ॥

तस्य प्रान्ते द्वितीये
न भवति खचरः कर्त्तरी सा न शस्ता ॥ २२५ ॥

यदि सूर्य से बारहवें स्थान में चन्द्रमा से अन्य कोई ग्रह हो, तो वेशियोग होता है। सूर्य से द्वितीय स्थान में चन्द्रमा से अन्य कोई ग्रह हो, तो वेशियोग होता है। इन दोनों स्थानों में ग्रह हों, तो उभयचरी योग होता है। दोनों स्थानों में कोई ग्रह न हो, तो कर्त्तरी योग होता है। उसका फल अच्छा नहीं होता ॥ २२५ ॥

वेश्यादियोगफलानि

किञ्चित्तद्वचनेषु नैव नियमोऽवश्यं नरश्चानृतो
ऽत्यन्तं कष्टकरो नरश्च मृदुदृक् स्याद्वेशियोगोद्भवः॥२२६॥

वेशि योग में जन्म हो, तो उसके वचन में किसी को विश्वास नहीं होता और वह असत्यभाषी, परिश्रमी तथा अच्छे नेत्रोंवाला होता है ॥ २२६ ॥

तिर्यग्दृष्टिः सत्त्वसत्यानुकम्पी
मर्त्योऽत्यर्थं दीर्घकालोऽलसश्च ।
मूर्त्तौ यस्य स्याद्यदा वेशियोग-
स्त्वल्पद्रव्यो वाग्विलासाधिशाली ॥ २२७ ॥

वेशि योग में जन्म हो, तो तिरछी नज़रवाला, सत्यवक्ता, दीर्घसूत्री, आलसी, अल्पधनी और चतुरवक्ता होता है ॥ २२७ ॥

यस्य स्याज्जनने किलोभयचरी योगस्य चेत्सम्भवः
सोऽत्यन्तं समवायवानपि तदा मर्त्यो भवेत्सद्यशाः ।
नात्युच्चः प्रबलामलान्धितनयायुक्तः समृद्धः सदा
ह्यत्यर्थं स्थिरमानसः सरलदृक् सर्वंसहः सन्मतिः ॥२२८॥

उभयचरी योग में जन्म हो, तो वह मनुष्य नेता, यशस्वी, मध्य शरीरवाला, अतिधनी, स्थिरचित्त, समानदृष्टि, सब लोगों की बातें सहन करनेवाला और बुद्धिमान् होता है ॥ २२८ ॥

चन्द्राधियोगः

सौम्यैः स्मरारिनिधनैरधियोग इन्दो-
स्तस्मिंश्च भूपसचिवक्षितिपालजन्म।
सम्पन्नसौख्यविभवा हतशत्रवश्च
दीर्घायुषो विगतरोगभयाश्च जाताः॥ २२९॥

चन्द्रमा से ६। ७। ८ स्थानों में सौम्य ग्रह हों, तो अधियोग होता है। उसमें उत्पन्न पुरुष राजा या राजा का मन्त्री, बहुत सम्पन्न, सुखी, धनवान्, शत्रुहीन, दीर्घायु तथा रोग और भय से रहित होता है॥ २२९॥

चन्द्रोत्कटयोगः

लग्नादतीव वसुमान्वसुमाञ्छशांका-
त्सौम्यग्रहैरुपचयोपगतैः समस्तैः।
द्वाभ्यां समोऽथ वसुमांश्च तदूनितायां-
मन्येष्वसत्स्वपि फलेष्विदमुत्कटेन॥ २३०॥

लग्न या चन्द्रमा से ३। ६। ११ स्थानों में सब सौम्य ग्रह हों, तो वह मनुष्य बड़ा धनी होता है। दो ग्रह हों, तो सम फल होता है। एक ग्रह हो, तो धनवान् होता है। यदि शेष योग अच्छे न भी हों, तो वह योग उत्कट फल देता है॥ २३०॥

भूमिजरविजरवीणामेकस्तूपचयसंस्थो विधोर्लग्नात्।
आढ्यो द्वौ चेन्मन्त्री त्रिभिश्च भूपतिर्भवति॥ २३१॥

चन्द्रमा या लग्न से ६। ३। ११ स्थानों में मंगल, शनि और सूर्य इनमें कोई ग्रह हों, तो धनाढ्य होता है। दो ग्रह हों, तो मन्त्री होता है, तीन ग्रह हों, तो राजा होता है॥ २३१॥

एकावलीयोगः

भाग्याद्व्ययस्थानपर्यन्तमेक एव ग्रहो भवेत्।
एकावलीति विख्याता सर्वसम्पत्करी सदा॥ २३२॥

नवम भाव से बारहवें भावतक स्थानों में एक-एक ग्रह हो, तो एकावली योग होता है। यह योग समस्त सम्पत्तियों का देनेवाला है ॥ २३२ ॥

किञ्च

चतुर्षु केन्द्रेषु यदा एक एव ग्रहो भवेत् ।
एकावलीति विख्याता सर्वसाम्राज्यदायिका ॥ २३३ ॥

किसी-किसी आचार्य के मत से चारों केन्द्रों में एक-एक शुभ ग्रह हो, तो एकावली योग होता है तथा यह योग सर्वसाम्राज्य का देनेवाला है * ॥ २३३ ॥

प्रव्रज्यायोगा.

चतुराद्या एकस्थाश्चैक्यं लग्ने परिव्राट् स्यात् ।
एकस्थाने स्थितैः खेटैः सर्वैश्च वलसंयुतैः ।
निरन्तरं निराहारो योगमार्गपरायणः ॥ २३४ ॥

चार या अधिक ग्रह एक स्थान में हों या लग्न में तीन ग्रह हों, तो वह मनुष्य परिव्राट् (योगी) होता है। बलवान् होकर सब ग्रह एक स्थान में हों, तो निराहारी और योगी होता है ॥ २३४ ॥

ग्रहैश्चतुर्भिर्यदि पञ्चभिर्वा
षड्भिस्तथैकालयसंस्थितैश्च ।
नश्यन्ति सर्वे खलु राजयोगाः
प्रव्राजिकायोग इति प्रदिष्टः ॥ २३५ ॥

एक स्थान में ४, ५ या ६ ग्रह हों, तो सब राजयोग नष्ट होते हैं। इसको प्रव्राजिकायोग कहते हैं ॥ २३५ ॥

---

* आचार्यों ने इसके अतिरिक्त नाभस आदि अनेक योगों का वर्णन अपने-अपने ग्रन्थों में किया है। उनका उल्लेख विशेष उपयोगी न समझकर योगों का विचार समाप्त किया जाता है।

एकालये चेत्खलखेचराणां
त्रयं करोत्येव नरं कुरूपम् ।
दारिद्र्यदुःखैः परितप्तदेहं
कदापि गेहं न समाश्रयेत्सः ॥ २३६ ॥

एक स्थान में तीन पापग्रह हों, तो मनुष्य कुरूप, दरिद्र और कभी घर में नहीं रहता है ॥ २३६ ॥

राजयोगाः खानखानोक्ताः

यदा मुश्तरी (बृ.) कर्कटे वा कमाने (९)
यदा चश्मकोरा (शु.) भवेन्मालखाने (२)
तदा ज्योतिषी क्या लिखेगा पढ़ेगा
हुआ बालका बादशाही करेगा ॥ २३७ ॥
यदा चश्मकोरा (शु.) भवेन्मालखाने (२)
यदा मुश्तरी (बृ.) दोस्तखाने विलग्नात् ।
उतारित् (बु.) तनुस्थो बृहत्साहबी स्यात्
बृहत्सूर्य (१ सू.) मखमलखज़ानाश्वपूर्णः ॥२३८॥
उतारिद् (बु.) विलग्ने व्यये माहताबो (चं.)
रविः खर्चखाने (१२) तमो (रा.) मालखाने(२) ।
जहानस्य धूरी भवेन्नेकबख्तः
खज़ानाह्याढ्यो मुलुक्साहबी स्यात् ॥ २३९ ॥
यदा माहताबो (चं.) भवेन्मालखाने (२)
मिरीखो (मं.)ऽथवा मुश्तरी (बृ.) बख्तखाने(९) ।
उतारिद् (बु.) विलग्ने भवेद्बख्तपूर्णो
भवेच्छानदारोऽथवा बादशाहः ॥ २४० ॥
भवेदाफ़ताबो (सू.) यदा षष्ठखाने
पुनर्दैत्यपीरो (शु.)ऽथ केन्द्रे गुरुर्वा ।
ज़ातः शुतुर्फ़ीलजातीहयाढ्यो

जराजर्जरीवक्र, दाता चिरायुः ॥ २४१ ॥
यदा चश्मकोरा (शु.) भवेद्दोस्तख़ाने
तथा मश्तरी (वृ.) दोस्तख़ाने विलग्नात् ।
उतारिद् (बु.) धनस्थो बृहत्साहबी स्यात्
बृहत्सूर्य (१सू.) मख़मलख़ज़ानाश्वपूर्णः ॥२४२॥
तृतीये भवेदाफ़तावस्य पुत्रो (श.)
यदा माहतावस्य पुत्रो (बु.) विलग्ने ।
भवेन्मुश्तरी (वृ.) केन्द्रख़ाने नराणां
बृहत्साहबी तस्य तालेवरः स्यात् ॥ २४३ ॥
यदा मुश्तरी (वृ.) पञ्चख़ाने (५) मिरीख़ो (मं.)
यदा वख़्तख़ाने (६) रिपावाफ़तावः (सू.)
नरो वाबक़ूफ़ो (बुद्धिमान्) भवेत्कुञ्जरेशो
बृहद्रोशनो वाहिनीवारणाढ्यः ॥ २४४ ॥
उतारिद् (बु.) विलग्ने सुखे माहतावो (चं.)
गुरुः कर्मख़ाने तमो लाभख़ाने ।
जहानस्य धूरी भवेन्नेकवख़्तः
ख़ज़ानाहयाढ्यो मुलकसाहबी स्यात् ॥ २४५ ॥
यदा देवपीरो (बृ.) भवेद्वख़्तख़ाने (६)
पुनर्दैत्यपीरो (शु.) भवेद्धर्मख़ाने ।
उतारिद् (बु.) विलग्ने तृतीये मिरीखः (मं.)
शनिर्लाभख़ाने नरः क़ाविलः स्यात् ॥ २४६ ॥
महल (स्वक्षेत्री) माहतावो (चं.)व्यये चाफ़तावो(सू.)
यदा मुश्तरी (वृ.) केन्द्रख़ाने त्रिकोणे ।
भवेन्मानवो देवतेजस्कराढ्यो
बृहत्साहबी वख़्तख़ूबी कमालः ॥ २४७ ॥
ख़ज़ानागजाढ्यो भवेल्लश्कराढ्यो

जहानप्रियो मुश्तरी (बृ.) जायखाने (७) ।
मिरीखो (मं.)ऽथ लाभे बुधः पञ्जखाने (५)
शनिः शत्रुखाने नरः क़ाबिलः स्यात् ॥ २४८ ॥
क़मर (चं.) केन्द्रख़ाने शनिः शत्रुखाने
त्रिकोणेऽथवा मुश्तरी (बृ.) चश्मकोरा (शु.) ।
स जातो नरः साबिरः सद्गुणज्ञो
भवेच्छायरो (कवि) मालदारोऽथ खू़बी ॥ २४९ ॥
आयुः स्थाने चश्मकोरा (शु.)
मालखाने च मुश्तरी (बृ.) ।
राहुर्जन्म. पैदा वखाने
शाह होवे मुल्क का ॥ २५० ॥
मिरीखो (मं.)ऽथवा कोशसंस्थो (२) लिखाने
गुरुर्मौतराशौ जया (७) माहताबः (मं.) ।
भवेज्जन्मलग्ने यदा चश्मकोरा (शु.)
विपक्षप्रहर्त्ता जहानप्रचण्डः ॥ २५१ ॥
धनस्थः कुमुद्बन्धु (चं.) षष्ठे रविः स्यात्
सुखे चन्द्रजो व्योम्नि विद्वान्कविश्च ।
बृहत् ओहदा शालमखमल्बनातः
शुतुर्फ़ीलफ़ानूसतम्बूक़नातः ॥ २५२ ॥
आफ़ताबो (सू.) मालखाने (२)
यस्य जन्मनि च ध्रुवम् ।
सफलरोज़ी मुश्किलं
पड़े फाँके मुफ़लिसम् (दरिद्री) ॥ २५३ ॥
यदा शत्रुखाने पड़ें उच्च का
करे खाक दौलत फिरे जाबजा ।
आयुःखानें चश्मकोरा (शु.)

मालखाने च मुश्तरी (बृ.) ॥ २५४ ॥
सवाबखाने (६) चन्द्रदीदम् ।
बादशाहं बर्बरी ॥ २५५ ॥
आयुःस्थाने चश्मकोरा (शु.)
मालखाने च मुश्तरी (बृ.) ।
राहु जो पैदाबख़ाने (१)
शाह होवे मुल्क का ॥ २५६ ॥
हमल (१) आफ़ताबो (सू.) वृषे माहताबो (चं.)
यदा मुश्तरी (बृ) कन्द्रखानें त्रिकोणे ।
भवेन्मानवो दौलती लश्कराढ्यो
बृहत्साहबी तस्य ख़ूबी कमालः ॥ २५७ ॥
यदा भाग्यमालिक भले घर पड़े
कमाकर सुदौलत ख़ज़ानें भरे ।
करे गञ्जवख़्शी अमीरी सुफल
वज़ीरी अमीरी करे वेफ़िकर ॥ २५८ ॥

उपर्युक्त श्लोक नवाबख़ानख़ाना को प्रसन्न करने के लिये विद्वानों ने बनाए थे। कुछ लोगों का यह भी मत है कि स्वयं उन्होंने बनाए हैं। इनका अर्थ सरल होने के कारण नहीं लिखा गया है जहाँ पर सन्दिग्ध है वहाँ संकेतमात्र कर दिया गया है ॥ २३७-२५८ ॥

राजयोगाः

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रस्त्रिकोणे जीवभास्करौ ।
कर्मस्थाने भवेद्भौमो राजयोगस्तदा भवेत् ॥ २५९ ॥

यदि लग्न में शनि या चन्द्रमा हो, त्रिकोण में बृहस्पति या सूर्य हो और दशम में मंगल हो, तो राजयोग होता है ॥ २५९ ॥

कर्किणि लग्ने जीवे मृगलाञ्छने तथा लाभे ।

मेषेऽर्के लाभगतौ बुधशुक्रौ जायते भूपः ॥ २६० ॥

लग्न में कर्क राशि का बृहस्पति हो, चन्द्रमा लाभस्थान में हो, मेष का सूर्य हो और लाभ स्थान में बुध या शुक्र हो, तो राजा होता है ॥ २६० ॥

बुधादित्यसमायोगे धार्मिकश्च विचक्षणः ।
धनी बहुसुतो ज्ञेयो भृत्ययुक्तो जितेन्द्रियः ॥ २६१ ॥

बुधादित्य योग में उत्पन्न मनुष्य धर्मात्मा, पण्डित, धनवान्, बहुत पुत्रोंवाला, भृत्यों से युक्त और जितेन्द्रिय होता है ॥ २६१ ॥

लग्नतश्चान्यतो वापि क्रमेण पतिता ग्रहाः ।
एकावली समाख्याता महाराजो भवेन्नरः ॥ २६२ ॥

लग्न से या किसी स्थान से यथाक्रम ग्रह पड़े, तो एकावली योग होता है । इस योग में उत्पन्न पुरुष महाराज होता है ॥ २६२ ॥

चतुर्ग्रहा एकगताः पापाः सौम्या भवन्ति हि ।
भ्रातृधीधर्मलग्नार्थे राजयोगो भवेदयम् ॥ २६३ ॥

तृतीय, पञ्चम, नवम, लग्न तथा धन स्थानों में पाप या शुभ चार ग्रह एक साथ बैठे हों, तो राजयोग होता है ॥ २६३ ॥

त्रिकोणे सप्तमे लग्ने भवन्ति च यदा ग्रहाः ।
हंसयोगं विजानीयात्स्ववंशस्य च पालकः ॥ २६४ ॥

त्रिकोण, सप्तम या लग्न में ग्रह हों, तो हंसयोग होता है । इस योग में उत्पन्न पुरुष अपने कुल का दीपकरूप होता है ॥ २६४ ॥

षष्ठाष्टमे द्वादशे च द्वितीये च यदा ग्रहाः ।
सिंहासनाख्यो योगोऽयं राजसिंहासने भवेत् ॥ २६५ ॥

षष्ठ, अष्टम, द्वादश और द्वितीय स्थान में ग्रह हों, तो सिंहासन

योग होता है। इस योग में उत्पन्न पुरुष राजा होकर सिंहासन पर बैठता है ॥ २६५ ॥

चतु:सागरगे चन्द्रे कोणे चैव दिवाकरे।
अपि दासकुले जातो राजा भवति निश्चितम् ॥ २६६ ॥

जिस पुरुष के केन्द्र में चन्द्रमा हो, त्रिकोण में सूर्य हो, तो वह दासकुल में उत्पन्न होने पर भी अवश्य राजा होता है ॥ २६६ ॥

तुलाकोदण्डमीनस्थो लग्नस्थोऽपि शनैश्चरः।
करोति भूभुजां नाथं मत्तेभपरिपालितम् ॥ २६७ ॥

जिसके लग्न में तुला, धन या मीनराशि का शनि हो, तो वह मनुष्य राजा होता है तथा उसके यहाँ मत्त हाथी बँधे रहते हैं ॥ २६७ ॥

वनेऽपि मित्राणि भवन्ति तेषां
येषां गुरुर्मित्रनिकेतनस्थः।
कामेऽजकन्ये रिपुरन्ध्रसंस्थे
केन्द्रत्रिकोणे व्ययगे च राहुः ॥ २६८ ॥

जिसके बृहस्पति मित्रक्षेत्री हों उसको वन में भी मित्र मिलते हैं। जिसके मिथुन, मेष या कन्या राशि का राहु षष्ठ, अष्टम, केन्द्र, त्रिकोण या द्वादश भाव में हो वह कामी, शूर, बलवान्, भोगी, हाथी, घोड़ा और छत्र तथा बहुत पुत्रोंवाला होता है ॥ २६८ ॥

मृगपतिवृषकन्याकर्कटस्थे च राहु-
र्भवति विपुललक्ष्मी राजराज्याधिपो वा ॥ २६९ ॥

सिंह, वृष, कन्या या कर्क का राहु हो, तो विपुल लक्ष्मी से युक्त अथवा वह राजा होता है ॥ २६९ ॥

गुरुर्निजोच्चे यदि केन्द्रशाली
राज्यालये दानवराजपूज्यः।

प्रसूतिकाले किल तस्य मुद्रा
चतुःसमुद्रावधिगामिनी स्यात् ॥ २७० ॥

जिसके जन्मकाल में उच्च का बृहस्पति केन्द्र में हो, दशमभाव में शुक्र हो, तो उस राजा का सिक्का समुद्रपर्यन्त चलता है ॥ २७० ॥

मीनोदये दानवराजपूज्य-
श्चन्द्रामरेज्यौ भवतः कुलीरे ।
मेषेऽर्कभौमौ नृपतिः किल स्या-
दाखण्डलेनापि तुलां प्रयाति ॥ २७१ ॥

मीन में शुक्र हो, कर्क में चन्द्रमा या बृहस्पति हों, मेष में सूर्य या मंगल हों, तो इन्द्र के समान राजा होता है ॥ २७१ ॥

गुरुः कुलीरोपगतः प्रसूतौ
स्मराम्बुखस्था भृगुमन्दभौमाः ।
तद्यानकाले जलधेर्जलानि
भेरीनिनादोच्छलनं प्रयान्ति ॥ २७२ ॥

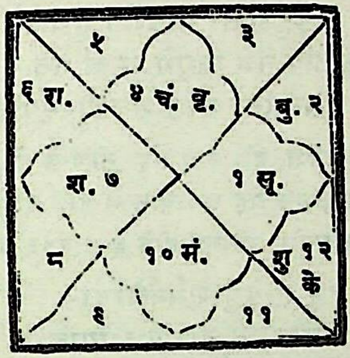
जिसके कर्क में बृहस्पति हो, सप्तम, चतुर्थ तथा दशम इनमें क्रम से शुक्र, शनि तथा मंगल हो, तो वह राजा होता है ॥२७२॥

एक एव ग्रहः स्वर्क्षे वर्गोत्तमगतो यदि ।
बलवान्मित्रसंदृष्टः करोति स महीपतिम् ॥ २७३ ॥

यदि एक ही ग्रह अपने घर का हो या वर्गोत्तम हो, बलवान् तथा मित्रग्रह से दृष्ट हो, तो राजा होता है ॥ २७३ ॥

यदि जिसका एक ग्रह उच्च का हो वह सुखी होता है, दो ग्रह उच्च के हों, तो बड़ा प्रतापी और असाध्य साधन करनेवाला होता है । यदि तीन ग्रह उच्च के हों, तो राजा होता है या राजा के समान (मन्त्री) होता है । यदि चार ग्रह उच्च के हों, तो अवश्य राजा होता है । यदि चार से अधिक ग्रह उच्च के हों, तो दिव्य पुरुष (जैसे रामचन्द्र आदि हुए हैं) होता है ।

रामचन्द्रजन्मकुण्डली



राजयोग के कथन का यह अभिप्राय है कि जिस मनुष्य के जन्मकाल में कोई राजयोग पड़े, तो वह मनुष्य अवश्य भाग्यवान् होता है। यदि राजा के कुल में उत्पन्न हो और उसके राजयोग भी पड़ें, तो वह प्रतापी राजा होगा।

यवनाचार्य का मत है कि दरिद्री के घर में उत्पन्न पुरुष के राजयोग पड़ें, तो वह शीघ्र मर जाय या भाग्यवान् होवे, राजा न हो। बहुधा इतिहासादि में तथा सुनने में भी आता है कि दरिद्री के कुल में उत्पन्न भी प्रबल राजयोग के कारण राजा हुए हैं।

राजयोगभंगः

तुलाया दशमे भागे स्थितः कमलबान्धवः।
सहस्रं राजयोगानां भंगमेव करोत्यसौ॥ २७४॥

तुला के दशम अंश में स्थित सूर्य हो, तो सहस्र राजयोगों का नाश करता है॥ २७४॥

परं नीचगते चन्द्रे क्षीणो योगो महीपतेः।
नाशमायाति राजाख्ययोगो दैवविलोमतः॥ २७५॥

चन्द्रमा परम नीच का हो, तो राजयोग नष्ट होता है॥२७५॥

घटोदये नीचगतैस्त्रिभिर्ग्रहै-
बृहस्पतौ नीचगते तथास्ते ।
एकोऽपि नेत्रे त्वशुभे च खं गते
प्रयान्ति नाशं शतशो नृपोद्भवाः ॥ २७६ ॥

लग्न में कुम्भराशि हो, तीन ग्रह नीच के हों, बृहस्पति नीच तथा अस्त का हो, एक ग्रह धनस्थान में हो, दशम में अशुभ ग्रह हों, तो सैकड़ों राजयोग भी नष्ट होते हैं ॥ २७६ ॥

केन्द्रेषु शून्येषु शुभैर्नचेन्दा-
वस्तंगते नीचमथ प्रयातैः ।
चतुर्ग्रहैर्वापि गृहे रिपूणां
प्रणश्यते राजकरो हि योगः ॥ २७७ ॥

यदि केन्द्र शून्य हो या इनमें शुभग्रह न हों, चन्द्रमा अस्त हो, चार ग्रह नीच या शत्रुक्षेत्री हों, तो राजयोग नष्ट होता है ॥ २७७ ॥

शिशिरकिरणशत्रुर्लग्नगश्चन्द्रदृष्ट-
सहजरिपुभवस्था भानुभूपुत्रमन्दाः ।
शुभविरहितकेन्द्रैरस्तगैर्वापि सौम्यै-
र्नरपतिवरयोगो याति नाशं क्षणेन ॥ २७८ ॥

यदि राहु लग्न में हो, चन्द्रमा की दृष्टि हो, सूर्य, मंगल और शनि ३ । ६ । ११ स्थानों में हों, शुभ ग्रह केन्द्र में न हों या अस्तंगत हों, तो राजयोगभंग होता है ॥ २७८ ॥

अन्य ग्रन्थों में इसका वर्णन विस्तार से है ।

जैमिनीयमतेन योगविचारः

लग्नेशे लाभे लाभपेऽङ्गे सुकर्मा
दीर्घायुर्भूपतिः कोविदो वा ॥ २७९ ॥

लग्नेश लाभस्थान में हो और लाभेश लग्न में हो, तो वह

मनुष्य सदाचारी, दीर्घायु, भूमि का स्वामी अथवा विद्वान् होता है ॥ २७९ ॥

भाग्यपे केन्द्रकोणे शुभयुतदृष्टे
धनविद्याभाग्ययुक्तः ॥ २८० ॥

भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण में हो, शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो वह मनुष्य धन, विद्या और भाग्य से युक्त होता है ॥ २८० ॥

लग्नेशेऽन्त्येऽन्त्येशे लग्ने सर्वशत्रु-
र्बुद्धिहीनः कृपणश्च ॥ २८१ ॥

लग्नेश व्ययस्थान में हो तथा व्ययेश लग्न में हो, तो वह मनुष्य सब लोगों का शत्रु, बुद्धिहीन और कृपण होता है ॥२८१॥

रन्ध्रे लग्नेशे लग्ने रन्ध्रेशे
द्यूतकारी शूरश्चौर्यादिरतश्च ॥ २८२ ॥

लग्नेश अष्टम स्थान में हो तथा अष्टमेश लग्न में हो, तो वह मनुष्य जुआ खेलनेवाला, शूर और चोर होता है ॥ २८२ ॥

लग्ने पापे शुभादृष्टयुते संन्यासी स्त्रीनाशो वा ॥ २८३ ॥

लग्न में पापग्रह शुभग्रह से दृष्ट अथवा युक्त न हो, तो वह मनुष्य संन्यासी हो जाता है या उसकी स्त्री जीवित नहीं रहती है ॥ २८३ ॥

आरेज्ययोगे पुराध्यक्षो नृपः प्राप्तविद्यो द्विजः ॥ २८४ ॥

मंगल तथा बृहस्पति का योग हो, तो वह मनुष्य एक नगर का अध्यक्ष, विद्वान् और द्विज होता है ॥ २८४ ॥

व्ययारी पापयुतौ बालमृतिः ॥ २८५ ॥

बारहवें तथा छठे स्थानों में पापग्रह हों, तो बालकों की मृत्यु होती है ॥ २८५ ॥

केन्द्रस्थाः क्रूरा विकलांगः ॥ २८६ ॥

केन्द्र में क्रूर ग्रह हों, तो मनुष्य विकल अंगवाला होता है ॥ २८६ ॥

केन्द्रगौ पुष्पवन्तौ (चं० सू०) विकलांगः ॥ २८७ ॥

केन्द्र में सूर्य तथा चन्द्रमा हों, तो मनुष्य विकल अंगवाला होता है ॥ २८७ ॥

शुक्रात्षष्ठेऽष्टमे मन्दे षण्ढः ॥ २८८ ॥

शुक्र से छठे या आठवें स्थान में शनि हो, तो मनुष्य नपुंसक होता है ॥ २८८ ॥

सुतेऽङ्गेशे पिशुनः ॥ २८९ ॥

लग्नेश पञ्चम स्थान में हो, तो मनुष्य पिशुन (चुग़लख़ोर) होता है ॥ २८९ ॥

ज्ञेज्यौ त्रिके उपदेशप्रियः ॥ २९० ॥

बुध अथवा बृहस्पति त्रिक स्थान में हों, तो वह मनुष्य परोपदेश करने में कुशल होता है ॥ २९० ॥

मन्दात्तुर्ये सौम्ये षष्ठेशे त्रिके बधिरः ॥ २९१ ॥

शनि से चौथे घर में बुध हों तथा षष्ठेश छठे, आठवें या दशवें स्थानों में हो, तो मनुष्य बधिर (बहिरा) होता है ॥ २९१ ॥

ज्ञारीशौ लग्नगौ मूकः ॥ २९२ ॥

बुध तथा षष्ठेश लग्न में हों, तो मनुष्य गूँगा होता है ॥२९२॥

चन्द्रार्कौ मीनस्थौ प्रहसितमुखः ॥ २९३ ॥

मीन राशि में चन्द्रमा तथा सूर्य हों, तो उस मनुष्य के चेहरे में हँसी रहती है ॥ २९३ ॥

जामित्रे मन्दे चन्द्रे खे वाग्मी ॥ २९४ ॥

सातवें स्थान में शनि तथा दशवें स्थान में चन्द्रमा हो, तो वह मनुष्य विचक्षण होता है ॥ २९४ ॥

षष्ठे सूर्यारमन्दाः पङ्गुः ॥ २९५ ॥

षष्ठ स्थान में सूर्य, मंगल तथा शनि हो, तो वह मनुष्य पंगु (लला) होता है ॥ २९५ ॥

भौमे सबले सेनापतिः ॥ २९६ ॥

मंगल बलवान् हो, तो वह मनुष्य सेनापति होता है ॥ २९६ ॥

सराहुकेतौ दारेशे पापदृष्टे व्यभिचारी ॥ २९७ ॥

सप्तमेश राहु या केतु के सहित हो तथा पापग्रह की उस पर दृष्टि हो, तो वह मनुष्य व्यभिचारी होता है ॥ २९७ ॥

व्यये शुभे सद्व्ययोऽशुभेऽसद्व्ययो मिश्रे मिश्रः ॥२९८॥

व्यय स्थान में शुभग्रह हों, तो शुभ कार्य में तथा पापग्रह हों, तो असत्कर्म में व्यय करनेवाला होता है। यदि शुभग्रह तथा पापग्रह हों, तो अच्छे तथा बुरे कामों में व्यय करनेवाला होता है॥२९८॥

ऋणग्रस्तो धने पापे लग्नेशे व्ययसंयुते ॥ २९९ ॥

धन स्थान में पापग्रह हों तथा लग्नेश व्यय स्थान में हो, तो मनुष्य ऋण से ग्रस्त रहता है ॥ २९९ ॥

द्यूनेशे दशमे तुर्ये नास्य भार्या पतिव्रता ॥ ३०० ॥

सप्तमेश दशम या चतुर्थ स्थान में हो, तो उसकी स्त्री व्यभिचारिणी होती है ॥ ३०० ॥

वाग्भावपे बुधे स्वोच्चे लग्ने देवेन्द्रपूजिते ।
शनावष्टमसंयुक्ते गणितज्ञो भवेन्नरः ॥ ३०१ ॥

पञ्चमेश बुध अपने उच्च का हो, लग्न में बृहस्पति हो, अष्टम स्थान में शनि हो, तो वह मनुष्य गणित शास्त्र का जाननेवाला होता है ॥ ३०१ ॥

वेदान्तपरिशीलः स्यात्केन्द्रकोणे गुरौ सति ।
षट्शास्त्रवल्लभः केन्द्रे जीवे दानवपूजिते ॥ ३०२ ॥

केन्द्र या कोण में बृहस्पति हो, तो वह मनुष्य वेदान्तशास्त्र का जाननेवाला होता है। यदि बृहस्पति या शुक्र केन्द्र में हों, तो मनुष्य षट्शास्त्री होता है ॥ ३०२ ॥

व्ययस्थाने यदा चन्द्रो वामचक्षुर्विनाशकः ।

धने वा व्ययगे शुक्रे काणो वा मन्दलोचनः ॥ ३०३ ॥
तत्रैव शुक्रो यदि भवेदन्धो भवति निश्चितम् ॥३०४॥

जब व्यय स्थान में चन्द्रमा हो, तो वाम नेत्र का विनाश करता है। जब धन स्थान या व्यय स्थान में शुक्र हो, तो वह मनुष्य काना या मन्द दृष्टिवाला होता है। यदि उसी स्थान में शुक्र हो तो अन्धा होता है ॥ ३०३-३०४ ॥

लग्नेशे सार्कशुक्रे त्रिके जन्मान्धः ॥ ३०५ ॥

सूर्य तथा शुक्रयुक्त लग्नेश त्रिक अर्थात् ६, ८, १२ स्थानों में हो, तो वह मनुष्य जन्म से अन्धा होता है ॥ ३०५ ॥

यदा बुधः सूर्यसुतश्च सप्तमे
तदा स बालो भवतीह कुष्ठी ।
तथैव राहुर्गुरुणा समेतो
नपुंसकत्वं विदधाति बालः ॥ ३०६ ॥

सातवें स्थान में बुध तथा शनि हो, तो वह मनुष्य कुष्ठी (कोढ़ी) होता है। इसी प्रकार बृहस्पति के साथ राहु हो, तो मनुष्य नपुंसक होता है ॥ ३०६ ॥

लग्ने क्रूरा व्यये क्रूरा धने क्रूराः समन्विताः ।
सप्तमे भवने क्रूराः परिवारक्षयङ्कराः ॥ ३०७ ॥

लग्न, व्यय या धन स्थान में क्रूरग्रह बैठे हों तथा सप्तम स्थान में भी क्रूरग्रह हों, तो परिवार का नाश होता है ॥ ३०७ ॥

ग्रहाणां दृष्टिविचारः

त्र्याशं त्रिकोणं चतुरस्रसप्तमं
पश्यन्ति खेटाश्चरणाभिवृद्धया ॥ ३०८ ॥

३ । १० स्थानों को एकपाद दृष्टि से, ५ । ९ स्थानों को द्विपाद दृष्टि से, ४ । ८ स्थानों को त्रिपाद दृष्टि से सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से ग्रह देखते हैं ॥ ३०८ ॥

पूर्णं पश्यति रविज-
स्तृतीयदशमे त्रिकोणमपि जीवः ।
चतुरस्रं भूमिसुतः
सितार्कहिमकराः कलत्रं च ॥ ३०६ ॥

शनि ३ । १० स्थानों को, बृहस्पति ५ । ६ स्थानों को, मंगल ४ । ८ स्थानों को, शुक्र, सूर्य और चन्द्रमा सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ॥ ३०६ ॥

पश्यत्यसौ भानुसुतस्तृतीयं
मानं च पूर्णं चतुरस्रमारः ।
जीवस्त्रिकोणं मदनं च सर्वे
पश्यन्ति दृष्ट्या चरणाभिवृद्ध्या ॥ ३१० ॥

किसी के मत से शनि ३ । १० स्थानों को, मंगल ४ । ८ स्थानों को, बृहस्पति ५ । ६ स्थानों को तथा सब ग्रह सप्तम को पूर्ण दृष्टि से चरणवृद्धि द्वारा देखते हैं ॥ ३१० ॥

१ । २ । ६ । ११ । १२ स्थानों में, जातक में दृष्टि नहीं होती है ।

राहुकेत्वोर्विशेषः

सुते सप्तमे पूर्णदृष्टिं तमस्य
तृतीये रिपौ पाददृष्टिर्नितान्तम् ।
धने राज्यगेहेऽर्धदृष्टिं वदन्ति
स्वगेहे त्रिपादं भवेच्चैव केतोः ॥ ३११ ॥

५ । ७ स्थानों में राहु की पूर्ण दृष्टि होती है, ३ । ६ स्थानों में एक चरण दृष्टि, २ । १० स्थानों में आधी दृष्टि, अपने घर में त्रिपाद दृष्टि होती है । ऐसे ही केतु की भी दृष्टि जाननी चाहिए ॥ ३११ ॥

ग्रहाणां दृष्टिवशात्फलानि

सूर्योपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम् ।

शुभैर्दृष्टो रवी राजसेवाफलधनायतिम् ।
शत्रुभिः कलहं दुःखं रुजं जठरनेत्रयोः ॥
मित्रदृष्टौ जयं बन्धुलाभं पापैश्च रोगिताम् ॥ ३१२ ॥

सूर्य के ऊपर शुभ ग्रह की दृष्टि हो, तो राजा की सेवा से धन लाभ, शत्रुग्रह की दृष्टि हो, तो कलह, दुःख, पेट और आँखों में रोग, मित्र ग्रह की दृष्टि हो, तो जय और बान्धवों से लाभ, पाप ग्रहों की दृष्टि हो, तो रोग होता है ॥ ३१२ ॥

चन्द्रस्योपरि ग्रहदृष्टिफलम्

धनहानिं शशी पापैः शिरोनेत्ररुजं तथा ।
शत्रुभिः पापकरणं धननाशं गमागमौ ॥ ३१३ ॥
शुभैररोगितां सौख्यं धनलाभं च बन्धुभिः ।
मित्रैर्लाभं जयं क्षेत्रदेशलाभं करोति च ॥ ३१४ ॥

यदि चन्द्रमा पापदृष्ट हो, तो धनहानि, शिर और नेत्रों में रोग होता है। शत्रु से दृष्ट हो, तो उस मनुष्य की पाप में प्रवृत्ति, धननाश और आना जाना होता है। शुभदृष्ट हो, तो वह मनुष्य सुखी और बन्धुओं से धन लाभ करनेवाला होता है। मित्रदृष्ट हो, तो लाभ, जय, क्षेत्र तथा देश का लाभ होता है ॥ ३१३-३१४ ॥

भौमस्योपरि ग्रहदृष्टिफलम्

पापैर्दृष्टः कुजः क्षेत्रधनधान्यादिनाशकृत् ।
शत्रुभिर्बन्धनं रोगं चाहवं दूरवासनम् ॥ ३१५ ॥
शुभैश्च विजयं देशक्षेत्रलाभं सुहृच्छुभम् ।
मित्रैश्च धनसंसिद्धिं करोति हि न संशयः ॥ ३१६ ॥

मंगल पापदृष्ट हो, तो क्षेत्र, धन, धान्य आदि का नाश होता है। शत्रुदृष्ट हो, तो बन्धन, रोग, युद्ध, दूर देश में निवास होता

है। शुभदृष्ट हो, तो विजय, देश तथा क्षेत्र का लाभ और मित्रों द्वारा शुभ होता है। मित्रदृष्ट हो, तो धन की सिद्धि होती है॥ ३१५-३१६॥

बुधस्योपरि ग्रहदृष्टिफलम्

शुभैर्बुधो लिपिज्ञानं विद्यालाभं च कौशलम्।
मित्रैर्भूषाधनक्षौमरत्नलाभं च शत्रुभिः॥ ३१७॥
अतिसारं च दुर्बुद्धिं प्रतीकेषु सदोद्यमम्।
पापैर्महाविषादं च कुक्षौ शूलं च वर्धते॥ ३१८॥

बुध शुभदृष्ट हो, तो लेखक, विद्यावान् और चतुर हो। मित्रदृष्ट हो, तो आभूषण, धन, रेशमी वस्त्र तथा रत्नों का लाभ हो। शत्रुदृष्ट हो, तो अतीसार रोग, दुर्बुद्धि और विरुद्ध व्यापार करनेवाला होता है। पापदृष्ट हो, तो भयंकर रोग और शूलरोग होता है॥ ३१७-३१८॥

गुरोरुपरि ग्रहदृष्टिफलम्

गुरुः शुभैस्तु संदृष्टो धर्मकार्योद्यमं सुखम्।
जयं धनायतिं मित्रैर्दारक्षेत्रादिसंग्रहम्॥ ३१९॥
शत्रुभिः कुष्ठरोगं च त्वग्दोषकलहं रणम्।
पापैः पराजयं बुद्धेः केदारादिवियोजनम्॥ ३२०॥

बृहस्पति शुभग्रह से दृष्ट हो, तो धर्मकार्य में बुद्धि और सुखी होता है। मित्रदृष्ट हो, तो जय, धन का लाभ, स्त्री, क्षेत्र आदि का संग्रह होता है। शत्रुदृष्ट हो, तो कुष्ठरोग, त्वचा में दोष, कलह और युद्ध होता है। पापदृष्ट हो, तो बुद्धि का नाश और क्षेत्र आदि से वियोग होता है॥ ३१९-३२०॥

शुक्रस्योपरि ग्रहदृष्टिफलम्

शुभैः शुक्रः शुभं योषालाभं भूषा धनायतिम्।
मित्रैस्तु पदवन्धादि देशलाभादि चाखिलम्॥ ३२१॥

पापैः पराजयं योषावियोगं धननाशनम् ।
शत्रुभिर्याप्यरोगं च मूत्रकृच्छ्रादिकं तथा ॥ ३२२ ॥

शुक्र शुभदृष्ट हो, तो शुभ स्त्री का लाभ, भूषण, धन आदि का लाभ होता है। मित्रदृष्ट हो, तो पट्टबन्ध, देशलाभ आदि होता है। पापदृष्ट हो, तो पराजय, स्त्रीवियोग तथा धननाश होता है। शत्रुदृष्ट हो, तो मूत्रकृच्छ्र आदि भयंकर रोग होते हैं ॥ ३२१-३२२ ॥

मन्दः पापैस्तथा कुक्षिरोगं बन्धनकं क्षयम् ।
शत्रुभिः शत्रुबाधां च पराभवमथामयम् ॥
शुभैररोगितां मित्रैर्दृष्टो बन्धुसमागमम् ॥ ३२३ ॥

शनि पापदृष्ट हो, तो उदररोग, बन्धन और क्षय होता है। शत्रुदृष्ट हो, तो शत्रुबाधा, पराभव और रोग होता है। शुभदृष्ट हो, तो आरोग्य होता है। मित्रदृष्ट हो, तो मित्रों और बन्धुओं से मेल होता है ॥ ३२३ ॥

द्विग्रहयोगाः

सूर्यचन्द्रयोगफलम्

पाषाणयन्त्रक्रयविक्रयेषु
कूटक्रियायां च विचक्षणः स्यात् ।
कामी प्रकामी पुरुषः सगर्वः
सर्वौषधीशेन रवौ समेते ॥ ३२४ ॥

जिस बालक के जन्मसमय सूर्य, चन्द्रमा एक घर में हों, तो वह पत्थर और यन्त्रों का बेचनेवाला, मायावी, कामी और अभिमानी होता है ॥ ३२४ ॥

सूर्यभौमयोगफलम्

भवेन्महौजा बलवान्विमूढो
गाढोद्धतः सत्यवचा मनुष्यः ।

सुसाहसः शूरतरोऽतिहिंस्रो
दिवामणौ क्षोणिसुताभ्युपेते ॥ ३२५ ॥

सूर्य और मंगल जिसके एक घर में हों वह बलवान्, बुद्धिहीन, अत्यन्त उद्धत स्वभाव, सत्य बोलनेवाला, साहसी, शूर और हिंसा करनेवाला होता है ॥ ३२५ ॥

सूर्यबुधयोगफलम्

प्रियवचाः सचिवो बहुसेवया-
र्जितधनश्च कलाकुशलो भवेत् ।
श्रुतपटुर्हि नरो नलिनीपतौ
कुमुदिनीपतिसूनुसमन्विते ॥ ३२६ ॥

सूर्य और बुध जिसके एक घर में हों, तो प्रियवक्ता, राजा का मन्त्री सेवावृत्ति से धन इकट्ठा करनेवाला, कलाओं में चतुर और शास्त्र में प्रवीण होता है ॥ ३२६ ॥

सूर्यगुरुयोगफलम्

पुरोहितत्वे निपुणो नृपाणां
मन्त्री च मित्राप्तधनः समृद्धः ।
परोपकारी चतुरो दिनेशे
वाचामधीशेन युते नरः स्यात् ॥ ३२७ ॥

सूर्य और बृहस्पति एक स्थान में हों, तो पुरोहिताई में निपुण, मन्त्री, मित्रता से धनसमृद्धिवाला, परोपकारी और चतुर होता है ॥ ३२७ ॥

सूर्यशुक्रयोगफलम्

सङ्गीतवाद्यायुधचारुवृद्धि-
र्भवेन्नरो नेत्रबलेन हीनः ।
कान्तानिमित्ताप्तसुहृत्समाजः
सिताम्विते जन्मनि पद्मिनीशे ॥ ३२८ ॥

सूर्य और शुक्र एक में हों, तो गाने-बजाने और शस्त्रविद्या में सुन्दर बुद्धिवाला, नेत्रों के बल से हीन और स्त्री के निमित्त मित्रों के समूहवाला होता है ॥ २२८ ॥

सूर्यशनियोगफलम्

धातुक्रियापण्यमतिर्गुणज्ञो
धर्मप्रियः पुत्रकलत्रसौख्यः ।
सदासमृद्धोऽतितरां नरः स्या-
त्प्रद्योतने भानुसुतेन युक्ते ॥ २२९ ॥

सूर्य और शनि एक में हों, तो धातुक्रिया तथा व्यापार में प्रीति रखनेवाला, गुणज्ञ, धर्मात्मा, पुत्र तथा स्त्री के सौख्य से युक्त और अत्यन्त समृद्धियों से सदा युक्त होता है ॥ ३२९ ॥

चन्द्रभौमयोगफलम्

आचारहीनः कुटिलः प्रतापी
पण्यानुजीवी कलहप्रियश्च ।
स्यान्मातृशत्रुर्मनुजो रुजार्तः
शीतद्युतौ भूसुतसंयुते वै ॥ २३० ॥

चन्द्रमा और मंगल एकत्र हों, तो आचार से हीन, कुटिल, प्रतापी, व्यापारी, कलहप्रिय, मातृवैरी और रोग से पीड़ित होता है ॥ २३० ॥

चन्द्रबुधयोगफलम्

सद्वाग्विलासो धनवान्सुरूपः
कृपार्द्रचेताः पुरुषो विनीतः ।
कान्तापरप्रीतिरतीव वक्ता
चन्द्रे सचान्द्रौ बहुधर्मकृत्स्यात् ॥ २३१ ॥

चन्द्रमा और बुध एकत्र हों, तो श्रेष्ठ वाणीवाला, धनवान्,

सुन्दर, दयावान्, नम्र, स्त्री में आसक्त, बहुत बोलनेवाला और धर्मात्मा होता है ॥ ३३१ ॥

चन्द्रगुरुयोगफलम्

सदा विनीतो दृढगूढमन्त्रः
स्वधर्मकर्माभिरतो नरः स्यात् ।
परोपकारादरतैकचित्तः
शीतद्युतौ वाक्पतिना समेते ॥ ३३२ ॥

चन्द्रमा और बृहस्पति एकत्र हों, तो सदा नम्र, दृढ और गुप्त-मन्त्रवाला, स्वधर्म कर्म में तत्पर और परोपकारी होता है ॥ ३३२ ॥

चन्द्रशुक्रयोगफलम्

वस्त्रादिकानां क्रयविक्रयेषु
दक्षो नरः स्याद्व्यसनी विधिज्ञः ।
सुगन्धपुष्पोत्तमवस्त्रचित्तो
द्विजाधिराजे भृगुजेन युक्ते ॥ ३३३ ॥

चन्द्रमा और शुक्र एकत्र हों, तो वस्त्रादि के व्यापार में चतुर, व्यसनी, विधि को जाननेवाला, सुगन्धित पदार्थ तथा उत्तम पुष्प-वस्त्र में चित्त रखनेवाला होता है ॥ ३३३ ॥

चन्द्रशनियोगफलम्

नानाङ्गनानां परिसेवनेच्छो
वैश्यानुवृत्तिर्गतसाधुशीलः ।
परात्मजः स्यात्पुरुषार्थहीन
इन्दौ समन्दे प्रवदन्ति सन्तः ॥ ३३४ ॥

चन्द्रमा और शनि एक राशि में हों, तो अनेक स्त्रीसेवी, वैश्य-वृत्ति, साधुशील से रहित और पुरुषार्थहीन होता है ॥ ३३४ ॥

मंगलबुधयोगफलम्

बाहुयुद्धकुशलो विपुलस्त्री-

लालसो विविधभेषजपण्यः ।
हेमलोहविधिबुद्धिविभावः
सम्भवे यदि कुजेन्दुजयोगः ॥ ३३५ ॥

मंगल और बुध एक में हों, तो मल्लविद्या में चतुर, बहुत स्त्रियों की लालसा करनेवाला, अनेक ओषधियों का व्यापार करनेवाला, सोना तथा लोहे की विधि में चित्तवाला होता है ॥ ३३५ ॥

मंगलगुरुयोगफलम्

मन्त्रार्थशास्त्रार्थकलाकलापे
विवेकशीलो मनुजः किल स्यात् ।
चमूपतिर्वा नृपतिः पुरेशो
ग्रामेश्वरो वा सकुजे सुरेज्ये ॥ ३३६ ॥

मंगल और बृहस्पति एक स्थान में हों, तो मन्त्र तथा शास्त्र-विद्या में निपुण, सेनापति या राजा या नगर या ग्राम का स्वामी होता है ॥ ३३६ ॥

मंगलशुक्रयोगफलम्

नानाङ्गनाभोगविधानचित्तो
द्यूतानृतप्रीतिगतिप्रपञ्चः ।
नरः सगर्वः कृतसर्ववैरो
भृगोः सुते भूसुतसंयुते स्यात् ॥ ३३७ ॥

मंगल और शुक्र एकत्र हों, तो अनेक स्त्रीसेवी, जूआ तथा झूठ में प्रीति करनेवाला, प्रपञ्च में तत्पर, अभिमानी और सबसे वैर करनेवाला होता है ॥ ३३७ ॥

मंगलशनियोगफलम्

शस्त्रास्त्रवित्संगरकर्मकर्त्ता
स्तेयानृतप्रीतिकरः प्रकामम् ।

सौख्येन हीनोऽतितरां नरः स्या-
द्धरासुते मन्दयुतेऽतिनिन्द्यः ॥ ३३८ ॥

मंगल और शनि एक घर में हों, तो अस्त्रशस्त्रों का जाननेवाला, युद्ध करनेवाला, चोरी तथा झूठ में तत्पर, सौख्यहीन और अति निन्दित होता है ॥ ३३८ ॥

बुधगुरुयोगफलम्

सङ्गीतविन्नीतिपतिर्विनीतः
सौख्यान्वितोऽत्यन्तमनोऽभिरामः ।
धीरो नरः स्यात्सुतरामुदारः
सुगन्धभाग्वाक्पतिसौम्ययोगे ॥ ३३९ ॥

बुध और बृहस्पति एक घर में हों, तो गानविद्या का जाननेवाला, नीति में चतुर, नम्र, सौख्य से युक्त, अत्यन्त सुन्दर, बुद्धिमान्, उदार तथा सुगन्धित वस्तुओं में रुचि रखनेवाला होता है ॥ ३३९ ॥

बुधशुक्रयोगफलम्

कुलाधिशाली शुभवाग्विलासः
सदा सहर्षः पुरुषः सुवेषः ।
भर्ता बहूनां गुणवान्विवेकी
सभार्गवे जन्मनि सोमसूनौ ॥ ३४० ॥

बुध तथा शुक्र एकत्र हों, तो कुल का दीपक, सुन्दर बोलनेवाला, सदा प्रसन्न, सुन्दर वेष धारण करनेवाला, बहुत प्राणियों का पालन करनेवाला और विचारशील होता है ॥ ॥ ३४० ॥

बुधशनियोगफलम्

चलस्वभावश्च कलिप्रियोऽपि
कलाकलापे कुशलः सुशीलः ।

पुमान्वहूनां प्रतिपालकश्चे-
द्भवेत्प्रसूतौ मिलनं ज्ञशन्योः ॥ ३४१ ॥

बुध और शनि एक घर में हों, तो चञ्चल, कलहप्रिय, कलाओं में चतुर, सुशील और बहुत प्राणियों का पालन करनेवाला होता है ॥ ३४१ ॥

गुरुशुक्रयोगफलम्

विद्यया भवति पण्डितः सदा
पण्डितैरपि करोति विवादम् ।
पुत्रमित्रधनसौख्यसंयुतो
मानवः सुरगुरौ भृगुयुक्ते ॥ ३४२ ॥

बृहस्पति और शुक्र एक राशि में हों, तो विद्या से युक्त, पण्डितों से विवाद करनेवाला, पुत्र मित्र धन और सौख्य से युक्त होता है ॥ ३४२ ॥

गुरुशनियोगफलम्

शूरोऽर्थवान् ग्रामपुराधिनाथो
भवेद्यशस्वी कुशलः क्रियासु ।
स्त्रीसंश्रयप्राप्तमनोरथश्च
नरः सुरेज्ये रविजेन युक्ते ॥ ३४३ ॥

बृहस्पति और शनि एक स्थान में हों, तो शूर, धनवान्, ग्राम या नगर का स्वामी, यशस्वी, कलाओं में चतुर और स्त्री के आश्रय से मनोरथ प्राप्त करनेवाला होता है ॥ ३४३ ॥

शुक्रशनियोगफलम्

शिल्पलेख्यविधिजातकौतुको
दारुणो रणकरो नरो भवेत् ।
अश्मकर्मकुशलश्च जन्मनि
भार्गवे रविसुतेन संयुते ॥ ३४४ ॥

शुक्र और शनि एक स्थान में हों, तो शिल्प, शास्त्र तथा लेखनविधि में चतुर, भयानक, युद्ध करनेवाला और पत्थर के काम में चतुर होता है ॥ ३४४ ॥

त्रिग्रहयोगफलानि

सूर्यचन्द्रभौमयोगफलम्

शूराश्च यन्त्राश्वविधिप्रवीणा-
त्रपाकृपाभ्यां सुतरां विहीनाः ।
नक्षत्रनाथक्षितिपुत्रमित्रै-
रेकत्रसंस्थैर्मनुजा भवन्ति ॥ ३४५ ॥

सूर्य, चन्द्रमा और मंगल एकत्र स्थित हों, तो शूर, यन्त्र तथा अश्वविद्या का जाननेवाला, लज्जा और कृपा से हीन होता है ॥३४५॥

सूर्यचन्द्रबुधयोगफलम्

भवेन्महौजा नृपकार्यकर्त्ता
वार्त्ताविधौ शास्त्रकलासु दक्षः ।
दिवामणिज्ञामृतरश्मिसंस्थैः
प्राणी भवेदेकगृहप्रयातैः ॥ ३४६ ॥

सूर्य, चन्द्रमा और बुध एकत्र हों, तो बड़ा पराक्रमी, राजा का कार्य करनेवाला, वार्त्तालाप तथा शास्त्रकला में चतुर होता है॥३४६॥

सूर्यचन्द्रगुरुयोगफलम्

सेवाविधिज्ञश्च विदेशगामी
प्राज्ञः प्रवीणश्चपलोऽतिधूर्त्तः ।
नरो भवेच्चन्द्रसुरेन्द्रवन्द्य-
प्रद्योतनानां मिलने प्रसूतौ ॥ ३४७ ॥

सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति जिसके एक घर में हों, तो सेवा में चतुर, विदेश में रहनेवाला, पण्डित, कुशल, चञ्चल और अतिधूर्त्त होता है ॥ ३४७ ॥

सूर्यचन्द्रशुक्रयोगफलम्

परस्वहर्त्ता व्यसनानुरक्तो
विमुक्तसत्कर्मरुचिर्नरः स्यात् ।
मृगाङ्कपङ्केरुहबन्धुशुक्रा-
श्चैकत्रभावे यदि संयुताः स्युः ॥ ३४८ ॥

सूर्य, चन्द्रमा और शुक्र जिसके एक घर में हों, तो वह दूसरे का धन हरनेवाला, व्यसन में आसक्त और सुकर्म से हीन होता है ॥ ३४८ ॥

सूर्यचन्द्रशनियोगफलम्

परेङ्गितज्ञो विधनश्च मन्दो
धातुक्रियायां निरतो नितान्तम् ।
व्यर्थप्रयासप्रकरो नरः स्या-
त्क्षेत्रे यदैकत्र रवीन्दुमन्दाः ॥ ३४९ ॥

जिसके सूर्य, चन्द्रमा और शनि एक घर में हों, तो वह दूसरे की चेष्टा को जाननेवाला, धनरहित, मन्द और धातुक्रिया में अत्यन्त रत होता है ॥ ३४९ ॥

सूर्यमंगलबुधयोगफलम्

ख्यातो भवेन्मन्त्रविधिप्रवीणः
सुसाहसो निष्ठुरचित्तवृत्तिः ।
लज्जार्थजायात्मजमित्रयुक्तो
युक्तैर्बुधार्कक्षितिजैर्नरः स्यात् ॥ ३५० ॥

सूर्य, मंगल और बुध एकत्र हों, तो संसार में विख्यात, मन्त्र-शास्त्र में प्रवीण, साहसी और कठोरचित्त होता है ॥ ३५० ॥

सूर्यमंगलगुरुयोगफलम्

वक्तार्थयुक्तः क्षितिपालमन्त्री
सेनापतिर्नीतिविधानदक्षः ।

महामनाः सत्यवचोविलासः
सूर्यारजीवैः सहितैर्नरः स्यात् ॥ ३५१ ॥

सूर्य, मंगल और बृहस्पति एकत्र हों, तो वक्ता, धनवान्, राजा का मन्त्री, सेनापति, नीति में निपुण, मनस्वी, सत्यवादी और हास-विलासयुक्त होता है ॥ ३५१ ॥

सूर्यमंगलशुक्रयोगफलम्

भाग्यान्वितोऽत्यन्तमतिर्विनीतः
कुलीनवान्शीलविराजमानः ।
स्यादल्पजल्पश्चतुरो नरश्चे-
द्भौमास्फुजित्सूर्ययुतिः प्रसूतौ ॥ ३५२ ॥

सूर्य, मंगल और शुक्र एकत्र हों, तो भाग्यवान्, बुद्धिमान्, नम्र, कुलीन और श्रेष्ठ स्वभाववाला होता है ॥ ३५२ ॥

सूर्यमंगलशनियोगफलम्

धनेन हीनः कलहान्वितश्च
त्यागी वियोगी पितृबन्धुवर्गैः ।
विवेकहीनो मनुजः प्रसूतौ
योगो यदार्कारशनैश्चराणाम् ॥ ३५३ ॥

सूर्य, मंगल और शनि एकत्र हों, तो धनहीन, कलहप्रिय, त्यागी, पिता आदि से वियोगी तथा विवेकहीन होता है ॥ ३५३ ॥

सूर्यबुधगुरुयोगफलम्

विचक्षणः शास्त्रकलाकलापे
सुसंग्रहार्थः प्रबलः सुशीलः ।
दिवाकरज्ञामरपूजितानां
योगे भवेन्ना नयनामयार्त्तः ॥ ३५४ ॥

सूर्य, बुध और बृहस्पति एकत्र हों, तो शास्त्र में चतुर, धन इकट्ठा करनेवाला, बलवान्, सुशील तथा नेत्ररोगी होता है ॥ ३५४ ॥

सूर्यबुधशुक्रयोगफलम्

साधुद्वेषी निन्दितोऽत्यन्ततप्तः
कान्ताहेतोर्मानवः संयुताश्चेत् ।
दैत्यामात्यादित्यसौम्याख्यखेटा
वाचालः स्यादन्यदेशाटनश्च ॥ ३५५ ॥

सूर्य, बुध और शुक्र एकत्र हों, तो साधुद्वेषी, निन्दित, स्त्री में आसक्त, वाचाल तथा अन्य देश में घूमनेवाला होता है ॥ ३५५ ॥

सूर्यबुधशनियोगफलम्

तिरस्कृतः स्वीयजनैश्च हीनो-
ऽप्यन्यैर्महद्द्वेषकरो नरः स्यात् ।
षण्ढाकृतिर्हीनतरानुयात-
श्चादित्यमन्देन्दुसुतैः समेतैः ॥ ३५६ ॥

सूर्य, बुध तथा शनि एकत्र हों, तो तिरस्कार को प्राप्त, अपने जनों से रहित, दूसरे से द्वेष करनेवाला, हिजड़ों की सी आकृतिवाला तथा नीच से संगति करनेवाला होता है ॥ ३५६ ॥

सूर्यगुरुशुक्रयोगफलम्

अप्रगल्भवचनो धनहीनो-
ऽप्याश्रितोऽवनिपतेर्मनुजः स्यात् ।
शूरताप्रियतरः परकार्य-
सोदरोऽर्कगुरुभार्गवयोगे ॥ ३५७ ॥

सूर्य, बृहस्पति और शुक्र एकत्र हों, तो बोलने में अधृष्ट, धनरहित, राजसेवी, शौर्यशाली तथा परोपकारी होता है ॥ ३५७ ॥

सूर्यगुरुशनियोगफलम्

नृपप्रियो मित्रकलत्रपुत्रै-
र्नित्यं युतः कान्तवपुर्नरः स्यात् ।

शनैश्चराचार्यदिवामणीनां
योगे सुनीत्या व्ययकृत्प्रगल्भः ॥ ३५८ ॥

सूर्य, बृहस्पति और शनि एकत्र हों, तो राजा का प्रिय, मित्र तथा स्त्री-पुत्रों से युक्त, सुन्दर, सद्व्यय करनेवाला और प्रौढ़ होता है ॥ ३५८ ॥

सूर्यशुक्रशनियोगफलम्

रिपुभयपरियुक्तः सत्कथाकाव्यमुक्तः
कुचरितरुचिरो वात्यन्तकण्डूयनार्त्तः ।
निजजनधनहीनो मानवः सर्वदा स्या-
त्कविरविरविजानां संयुतिश्चेत्प्रसूतौ ॥ ३५९ ॥

सूर्य, शुक्र और शनि एकत्र हों, तो शत्रुभय से युक्त, सन्मार्ग तथा शास्त्र से रहित, कुत्सित कार्य करनेवाला, कण्डूरोग से पीड़ित. स्वजन और धन से हीन होता है ॥ ३५९ ॥

चन्द्रभौमबुधयोगफलम्

भवन्ति दीना धनधान्यहीना
नानाविधानात्मजनापमानाः ।
स्युर्मानवा हीनजनानुयाता-
श्चेत्संयुताः क्षोणिसुतेन्दुसौम्याः ॥ ३६० ॥

चन्द्र, मंगल और बुध एकत्र हों, तो दीन, धनधान्यहीन, अपने जनों से अपमानित और नीचसेवी होता है ॥ ३६० ॥

चन्द्रभौमगुरुयोगफलम्

व्रणाङ्कितः कोपयुतश्च हर्त्ता
कान्तारतः कान्तवपुर्नरः स्यात् ।
प्रसूतिकाले मिलिता भवन्ति
चेदारनीहारकरारेज्याः ॥ ३६१ ॥

मंगल, चन्द्र और बृहस्पति एकत्र हों, तो व्रणयुक्त, क्रोधी, चौर, स्त्री में आसक्त तथा सुन्दर शरीरवाला होता है ॥ ३६१ ॥

चन्द्रभौमशुक्रयोगफलम्

दुःशीलकान्तापतिरस्थिरः स्या-
दुःशीलकान्तातनुजोऽल्पशीलः ।
नरो भवेज्जन्मनि चैकभावा
भौमास्फुजिच्चन्द्रमसो यदि स्युः ॥ ३६२ ॥

चन्द्र, मंगल और शुक्र एकत्र हों, तो कर्कशा स्त्रीवाला, दुःशीला माता का पुत्र तथा अल्पशील होता है ॥ ३६२ ॥

चन्द्रभौमशनियोगफलम्

शैशवे हि जननीमृतिप्रदः
सर्वदापि कलहान्वितो भवेत् ।
सम्भवे रविभवेन्दुभूसुताः
संयुता यदि नरोऽतिगर्हितः ॥ ३६३ ॥

मंगल, चन्द्र और शनि एकत्र हों, तो बाल्यावस्था में मातृहीन, कलहप्रिय तथा अति निन्दित होता है ॥ ३६३ ॥

चन्द्रबुधगुरुयोगफलम्

विख्यातकीर्त्तिर्मतिमान्महौजा
विचित्रमित्रो बहुभाग्ययुक्तः ।
सद्वृत्तविद्योऽतितरां नरः स्या-
देकत्रसंस्थैर्गुरुसोमसौम्यैः ॥ ३६४ ॥

चन्द्र, बुध और बृहस्पति एकत्र हों, तो विख्यातकीर्त्ति, बुद्धिमान्, प्रतापी, अनेक मित्रोंवाला, भाग्यवान्, सदाचारी तथा अत्यन्त पण्डित होता है ॥ ३६४ ॥

चन्द्रबुधशुक्रयोगफलम्

विद्याप्रवीणोऽपि च नीचवृत्तः

स्पर्धाभिवृद्ध्यां च रुचिर्विशेषात् ।
स्वादर्थलुब्धो हि नरः प्रसूतौ
मृगाङ्कसौम्यास्फुजितां युतिश्चेत् ॥ ३६५ ॥

चन्द्र, बुध और शुक्र एकत्र हों, तो विद्यावान्, नीच आचरण-वाला, स्पर्धा से युक्त तथा धनलोभी होता है ॥ ३६५ ॥

चन्द्रबुधशनियोगफलम्

कलाकलापामलबुद्धिशाली
ख्यातः क्षितीशाभिमतो नितान्तम् ।
नरः पुरग्रामपतिर्विनीतो
बुधेन्दुमन्दाः सहिता यदि स्युः ॥ ३६६ ॥

चन्द्र, बुध तथा शनि एकत्र स्थित हों, तो समस्त कलाओं में अच्छी बुद्धिवाला, विख्यात, राजा का अत्यन्त मान्य, नगर या ग्राम का स्वामी और नम्र स्वभाववाला होता है ॥ ३६६ ॥

चन्द्रगुरुशुक्रयोगफलम्

भाग्यभाग्भवति मानवः सदा
चारुकीर्तिमतिवृत्तिसंयुतः ।
भार्गवेन्दुसुरराजपूजिताः
संयुता यदि भवन्ति सम्भवे ॥ ३६७ ॥

चन्द्र, शुक्र तथा बृहस्पति एकत्र हों, तो सुकीर्त्ति, उत्तम आजी-विकावाला और भाग्यवान् होता है ॥ ३६७ ॥

चन्द्रगुरुशनियोगफलम्

विचक्षणः क्षोणिपतिप्रियश्च
सन्मन्त्रशास्त्राधिकृतो नितान्तम् ।
भवेत्सुवेषो मनुजो महौजाः
संयुक्तमन्देन्दुसुरेज्यपूज्ये ॥ ३६८ ॥

चन्द्र, बृहस्पति तथा शनि एक घर में हों, तो विद्वान्, राजा का प्रिय, मन्त्रशास्त्रवेत्ता और तेजस्वी होता है ॥ ३६८ ॥

चन्द्रशुक्रशनियोगफलम्

पुरोधसो वेदविदां वरेण्याः
स्युः प्राणिनः पुण्यपरायणाश्च ।
सत्पुस्तकालोकनलेखनेच्छाः
कवीन्दुमन्दा मिलिता यदि स्युः ॥ ३६९ ॥

चन्द्र, शुक्र तथा शनि एकत्र हों, तो पुरोहित, वेद जाननेवालों में श्रेष्ठ, पुण्य में तत्पर, पुस्तक देखनेवाला और लेखक होता है ॥ ३६९ ॥

भौमबुधगुरुयोगफलम्

क्ष्मापालकः स्वीयकुले नरः स्या-
त्कवित्वसङ्गीतकलाप्रवीणः ।
परार्थसंसाधकतैकचित्तो
वाचस्पतिज्ञावनिसूनुयोगे ॥ ३७० ॥

मंगल, बुध और बृहस्पति एक में हों, तो अपने कुल में राजा के समान, कविता तथा गान में निपुण तथा परोपकारी होता है ॥ ३७० ॥

भौमबुधशुक्रयोगफलम्

वित्तान्वितः क्षीणकलेवरश्च
वाचालताचञ्चलतासमेतः ।
धृष्टः सदोत्साहपरो नरः स्या-
देकत्र यातैः कविभौमसौम्यैः ॥ ३७१ ॥

मगल, बुध तथा शुक्र एकत्र हों, तो धनवान्, दुर्बल, वाचाल, चञ्चल, धृष्ट और सदा उत्साही होता है ॥ ३७१ ॥

भौमबुधशनियोगफलम्

कुलोचनः क्षीणतनुर्वनस्थः
प्रेष्यः प्रवासी बहुहास्ययुक्तः ।
स्यान्नो सहिष्णुश्च नरोऽपराधी
मन्दारसौम्यैः सहितैः प्रसूतौ ॥ ३७२ ॥

मंगल, बुध तथा शनि एक घर में हों, तो बुरे नेत्रवाला, दुबला, वन में रहनेवाला, नौकर, विदेशी, बहुत हास्य से युक्त, क्रोधी और अपराधी होता है ॥ ३७२ ॥

भौमगुरुशुक्रयोगफलम्

सत्पुत्रदारादिसुखैरुपेतः
क्ष्मापालमान्यः सुजनानुयातः ।
वाचस्पतिक्षोणिसुतास्फुजिद्भिः
क्षेत्रे यदैकत्रगतैर्नरः स्यात् ॥ ३७३ ॥

मंगल, बृहस्पति तथा शुक्र एक घर में हों, तो अच्छे पुत्र और स्त्री-सुख से युक्त, राजमान्य तथा सज्जनप्रिय होता है ॥ ३७३ ॥

भौमगुरुशनियोगफलम्

नृपात्समानं कृपया विहीनं
कृशं कुवृत्तं गतमित्रसख्यम् ।
जन्यां च शन्याङ्गिरसावनीजाः
संयोगभाजो मनुजं प्रकुर्युः ॥ ३७४ ॥

मंगल, बृहस्पति तथा शनि एकत्र हों, तो राजा से मान्य, कृपा से हीन, दुबला, अनाचारी और मैत्री से हीन होता है ॥ ३७४ ॥

भौमशुक्रशनियोगफलम्

वासो विदेशे जननी त्वनार्या
भार्या तथैवोपहतिः सुखानाम् ।

दैत्येन्द्रपूज्यावनिजार्कजानां
योगे भवेज्जन्म नरस्य यस्य ॥ ३७५ ॥

मंगल, शुक्र तथा शनि एक घर में हों, तो विदेश में रहनेवाला, नीच माता, नीच स्त्री से युक्त और सुखहीन होता है ॥३७५॥

बुधगुरुशुक्रयोगफलम्

नृपानुकम्प्यो बहुगीतकीर्त्तिः
प्रसन्नमूर्त्तिर्विजितारिवर्गः ।
सौम्यामरेज्यास्फुजितां प्रसूतौ
चेत्संयुतिः सत्यपरो नरः स्यात् ॥ ३७६ ॥

बुध, बृहस्पति तथा शुक्र एकत्र हों, तो राजसेवी, सुकीर्तिवाला, प्रसन्नमूर्त्ति, शत्रु को जीतनेवाला और सत्य में रत होता है ॥ ३७६ ॥

बुधगुरुशनियोगफलम्

स्थानार्थसद्वैभवसंयुतः स्या-
दनल्पजल्पो धृतिमान्सुवृत्तः ।
शनैश्चराचार्यशशाङ्कपुत्राः
क्षेत्रे यदैकत्रगता भवन्ति ॥ ३७७ ॥

बुध, बृहस्पति तथा शनि एक में हों, तो स्थान और धन, ऐश्वर्य आदि से युक्त, बहुभाषी, धैर्यवान् तथा सदाचारी होता है ॥ ३७७ ॥

बुधशुक्रशनियोगफलम्

साधुशीलरहितोऽनृतवक्ता-
नल्पजल्पनरुचिः खलु धूर्त्तः ।
दूरयाननिरतश्च कलाज्ञोऽ-
भार्गवज्ञशनिसंयुतजन्मा ॥ ३७८ ॥

बुध, शुक्र तथा शनि एक घर में हों, तो साधु स्वभाव से हीन

झूँठ बोलनेवाला, बहुत बोलनेवाला, धूर्त, दूर गमन करनेवाला और कलाओं का वेत्ता होता है ॥ ३७८ ॥

शनिशुक्रगुरुयोगफलम्

नीचान्वये यद्यपि जातजन्मा
नरः सुकीर्तिः पृथिवीपतिः स्यात् ।
सद्वृत्तशाली परिसूतिकाले
मन्देज्यशुक्रा मिलिता यदि स्युः ॥ ३७९ ॥

बृहस्पति, शुक्र तथा शनि एक घर में हों, तो नीच कुल में उत्पन्न भी सुन्दर कीर्तिमान्, पृथिवीपति और सदाचारशील होता है ॥ ३७९ ॥

त्रिपापग्रहयोगफलम्

एकालये चेत्खलखेचराणां
त्रयं करोत्येव नरं कुरूपम् ।
दारिद्र्यदुःखैः परितप्तदेहं
कदापि गेहं न समाश्रयेत्सः ॥ ३८० ॥

एकत्र तीन पापग्रह हों, तो कुरूप, दरिद्रता से दुःखी और कभी घर में नहीं रहनेवाला होता है ॥ ३८० ॥

चतुर्ग्रहयोगाः

सूर्यचन्द्रमंगलबुधयोगफलम्

सूर्येन्दुभौमसौम्यानां योगे लेखकरो नरः ।
मुखरोगयुतश्चौरो मायायां निपुणो भवेत् ॥ ३८१ ॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल तथा बुध एक में हों, तो लेखक, मुखरोगवाला, चोर और माया में निपुण होता है ॥ ३८१ ॥

सूर्यचन्द्रमंगलगुरुयोगफलम्

सूर्यश्चन्द्रः कुजो जीव एकस्थाने धनी नरः ।
शिल्पज्ञो दीर्घनेत्रश्च स्वर्णाभो वीर्यवान्भवेत् ॥ ३८२ ॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल तथा बृहस्पति एक में हों, तो धनी, शिल्पज्ञ, बड़े नेत्रोंवाला, स्वर्णसमान कान्तिवाला और बलवान् होता है ॥ ३८२ ॥

सूर्यचन्द्रमंगलशुक्रयोगफलम्

रवीन्दुभौमशुक्राणां योगे शास्त्रार्थवित्नरः ।
स्त्रीणां सौख्ययुतः पुत्री वाचालो मनुजो भवेत् ॥३८३॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल तथा शुक्र एक में हों, तो शास्त्रवेत्ता, स्त्रियों के सौख्य से युक्त, पुत्रवान् और वाचाल होता है ॥ ३८३ ॥

सूर्यचन्द्रमंगलशनियोगफलम्

सूर्येन्दुभौममन्दानां योगे दारिद्र्यसंयुतः ।
मूर्खो विषमदेहश्च द्रव्यहीनो भवेन्नरः ॥ ३८४ ॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल तथा शनि एक में हों, तो दरिद्री, मूर्ख, खराब देहवाला और द्रव्य से हीन होता है ॥ ३८४ ॥

सूर्यचन्द्रबुधगुरुयोगफलम्

सूर्येन्दुबुधजीवानां योगे बहुधनी भवेत् ।
हीनशोकश्च तेजस्वी नीतिशास्त्रविशारदः ॥ ३८५ ॥

सूर्य, चन्द्र, बुध तथा बृहस्पति एक में हों, तो बहुत धनी, शोकरहित, तेजस्वी और नीतिशास्त्रज्ञ होता है ॥ ३८५ ॥

सूर्यचन्द्रबुधशुक्रयोगफलम्

अर्केन्दुज्ञकवीनां च योगे कान्तियुतो नरः ।
लघुदेहो भूपमान्यो वाचालो विकलो भवेत् ॥ ३८६ ॥

सूर्य, चन्द्र, बुध तथा शुक्र एक में हों, तो कान्तिमान्, लघुदेह, राजसमान, वाचाल और विकल होता है ॥ ३८६ ॥

सूर्यचन्द्रबुधशनियोगफलम्

सूर्यचन्द्रज्ञमन्दानां योगे जातोऽतिनिर्धनः ।
भिक्षाशी नेत्ररोगी च कुटुम्बरहितो नरः ॥ ३८७ ॥

सूर्य, चन्द्र, बुध तथा शनि एकत्र हों, तो निर्धन, भिक्षा माँगकर खानेवाला, नेत्ररोगी और कुटुम्ब से रहित होता है ॥ ३८७ ॥

सूर्यचन्द्रगुरुशुक्रयोगफलम्

रवीन्दुगुरुशुक्राणां संयोगे नृपपूजितः ।
नीरप्रीतिर्मृगेऽरण्ये रतिमान्निर्गुणः सुखी ॥ ३८८ ॥

सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति तथा शुक्र एकत्र हों, तो राजमान्य, जल-सेवी, मृग तथा वन में अनुरागी, निर्गुण और सुखी होता है॥३८८॥

सूर्यचन्द्रगुरुशनियोगफलम्

रवीन्दुगुरुमन्दानां योगे वित्तसुतान्वितः ।
सुनेत्रो लोकमान्यश्च भार्याप्रीतिः प्रतापवान् ॥ ३८९ ॥

सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति तथा शनि एकत्र हों, तो धन तथा पुत्र से युक्त, सुन्दर नेत्रोंवाला, लोकमान्य, स्त्री में आसक्त और प्रतापी होता है ॥ ३८९ ॥

सूर्यचन्द्रशुक्रशनियोगफलम्

सूर्येन्दुभृगुमन्दानां संयोगे ह्यतिदुर्बलः ।
नारीतुल्योऽसदाचारो भयभीतश्च जायते ॥ ३९० ॥

सूर्य, चन्द्र, शुक्र तथा शनि एक में हों, तो दुर्बल, स्त्रीसमान, दुराचारी और डरनेवाला होता है ॥ ३९० ॥

सूर्यमंगलबुधगुरुयोगफलम्

सूर्यभौमज्ञजीवानां संयोगे विजयी भवेत् ।
परदाररतो नित्यं देवताद्विजसेवकः ॥ ३९१ ॥

सूर्य, मंगल, बुध तथा बृहस्पति एक घर में हों, तो विजयी, परस्त्रीरत, देवता तथा ब्राह्मण का सेवक होता है ॥ ३९१ ॥

सूर्यचन्द्रमंगलशुक्रयोगफलम्

सूर्येन्दुभौमशुक्राणां योगे दुर्जनमानसः ।
तस्करः स्त्रीरतो नित्यं निर्लज्जो निर्धनो भवेत् ॥३९२॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल तथा शुक्र एकत्र हों, तो दुष्टचित्त, चोर, लम्पट, निर्लज्ज और निर्धन होता है ॥ ३६२ ॥

सूर्यमंगलबुधशनियोगफलम्

सूर्यभौमज्ञमन्दानां योगे नीचजनान्वितः।
मन्त्री सेनापतिर्वीरः काव्यशास्त्रास्त्रविन्नरः ॥ ३६३ ॥

सूर्य, मंगल, बुध तथा शनि एकत्र हों, तो नीचजनसेवी, मन्त्री, सेनापति, वीर, काव्यशास्त्र और अस्त्र को जाननेवाला होता है ॥ ३६३ ॥

सूर्यमंगलगुरुशुक्रयोगफलम्

हंसभौमेज्यशुक्राणां संयोगे सुभगो नरः।
भूपमान्यो धनी ख्यातो नीतिज्ञो नरपालकः ॥ ३६४ ॥

सूर्य, मंगल, बृहस्पति तथा शुक्र एक घर में हों, तो सुन्दर, राजमान्य, धनी, कीर्तिमान्, नीतिज्ञ और लोकपालक होता है ॥ ३६४ ॥

सूर्यमंगलगुरुशनियोगफलम्

सूर्यभूसुतजीवार्कियोगे सेनापतिर्भवेत्।
मन्त्रज्ञो भूपमान्यश्च धनधान्यदयान्वितः ॥ ३६५ ॥

सूर्य, मंगल, बृहस्पति तथा शनि एकत्र हों, तो सेनापति, मन्त्रवेत्ता, राजमान्य, धन, धान्य और दया से युक्त होता है ॥ ३६५ ॥

सूर्यमंगलशुक्रशनियोगफलम्

रविभौमो भृगुर्मन्दो नीचसङ्गपरो नरः।
बहुद्वेषी दुराचारो मूर्खस्तु पलभक्षकः ॥ ३६६ ॥

सूर्य, मंगल, शुक्र तथा शनि एकत्र हों, तो नीच से मित्रता करनेवाला, विद्वेषी, दुराचारी, मूर्ख और मांसभक्षक होता है ॥ ३६६ ॥

सूर्यबुधगुरुशुक्रयोगफलम्

सूर्यविद्गुरुशुक्राणां संयोगे विनयान्वितः।
धनी मानी भूमिपालः पुत्रदारसुखान्वितः॥ ३९७॥

सूर्य, बुध, बृहस्पति तथा शुक्र एक स्थान में हों, तो विनययुक्त, धनी, अभिमानी, भूमिपाल तथा पुत्र और स्त्री से युक्त होता है॥ ३९७॥

सूर्यबुधगुरुशनियोगफलम्

आदित्यबुधजीवार्किसंयोगे प्रभवो नरः।
नपुंसको महामानी दुराचारो निरुद्यमः॥ ३९८॥

सूर्य, बुध, बृहस्पति तथा शनि एक घर में हों, तो नपुंसक, अत्यन्त अभिमानी, दुराचारी और उद्यमरहित होता है॥ ३९८

सूर्यबुधशुक्रशनियोगफलम्

आदित्यबुधभृग्वार्किसंयोगे सुभगः शुचिः।
बन्धुमान्यो महाप्राज्ञः पुत्रदारसुखान्वितः॥ ३९९॥

सूर्य, बुध, शुक्र तथा शनि एक घर में हों, तो सुन्दर, शुद्धता से युक्त, बन्धुमान्य, बड़ा पण्डित, पुत्र और स्त्री-सुख से युक्त होता है॥ ३९९॥

सूर्यगुरुशुक्रशनियोगफलम्

हंसजीवोशनोमन्दसंयोगे कृपणो महान्।
काव्यकृत्करुणायुक्तो भूपमान्यो भवेन्नरः॥ ४००॥

सूर्य, बृहस्पति, शुक्र तथा शनि एक घर में हों, तो अति कृपण, काव्यकर्त्ता, करुणायुक्त और राजमान्य होता है॥ ४००॥

चन्द्रमंगलबुधशुक्रफलम्

विधुभौमज्ञशुक्राणां संयोगे कलहो भवेत्।
बन्धुद्वेषी नीचसेवी वेदब्राह्मणनिन्दकः॥ ४०१॥

चन्द्र, मंगल, बुध तथा शुक्र एकत्र हों, तो कलह करनेवाला, बन्धुद्वेषी, नीचसेवी, वेद और ब्राह्मण का निन्दक होता है॥४०१॥

चन्द्रमंगलबुधगुरुफलम्

चन्द्रभौमबुधेज्यानां योगे भूपदयान्वितः ।
सर्वशास्त्रार्थकुशलः सत्यवादी सुखी भवेत् ॥ ४०२ ॥

चन्द्र, मंगल, बुध तथा बृहस्पति एक घर में हों, तो राजमान्य, सब शास्त्रों में निपुण, सत्यवादी और सुखी होता है ॥ ४०२ ॥

चन्द्रमंगलशुक्रबुधफलम्

विधुभौमोशनःसौम्यसंयोगे कुलवञ्चकः ।
लोकद्वेषी दरिद्री च नरः शूरकुलोद्भवः ॥ ४०३ ॥

चन्द्र, मंगल, शुक्र तथा बुध एकत्र हों, तो कुलवञ्चक, लोकविद्वेषी, दरिद्री और शूरकुल में उत्पन्न होता है ॥ ४०३ ॥

चन्द्रमंगलगुरुशुक्रयोगफलम्

इन्दुभौमेज्यशुक्राणां संयोगे विकलो नरः ।
धनपुत्रान्वितो मानी नीतिज्ञः साहसी भवेत् ॥ ४०४ ॥

चन्द्र, मंगल, बृहस्पति तथा शुक्र एक घर में हों, तो विकल, धन तथा पुत्र से युक्त, मानी, नीतिज्ञ और साहसी होता है ॥४०४॥

चन्द्रमंगलगुरुशनियोगफलम्

चन्द्रारजीवमन्दानां संयोगे नृपपूजितः ।
सत्यवादी सदानन्दो नीचसेवी दयान्वितः ॥ ४०५ ॥

चन्द्र, मंगल, बृहस्पति तथा शनि एकत्र हों, तो राजमान्य, सत्यवादी, सदा प्रसन्न रहनेवाला, नीचसेवी और दयालु होता है ॥ ४०५ ॥

चन्द्रमंगलशुक्रशनियोगफलम्

विधुभौमोशनोमन्दसंयोगे पुंश्चलीपतिः ।
द्यूतधर्मरतो नित्यं मद्यमांसप्रियः सदा ॥ ४०६ ॥

चन्द्र, मंगल, शुक्र तथा शनि एकत्र हों, तो व्यभिचारिणी का पति, द्यूत (जूआ) में रत, मद्य और मांसप्रिय होता है ॥४०६॥

चन्द्रबुधगुरुशुक्रयोगफलम्

चन्द्रेन्दुजेज्यशुक्राणां योगे दाता दयान्वितः ।
बुद्धिमान्धनसम्पन्नो विद्यावादी विचक्षणः ॥ ४०७ ॥

चन्द्र, बुध, बृहस्पति तथा शुक्र एक घर में हों, तो दाता, दयालु, बुद्धिमान्, धनी, विद्यावान् और चतुर होता है ॥ ४०७ ॥

चन्द्रबुधगुरुशनियोगफलम्

चन्द्रेन्दुजेज्यमन्दानां योगे लोकप्रियो नरः ।
यशस्वी ज्ञानसम्पन्नस्तेजस्वी विजितेन्द्रियः ॥ ४०८ ॥

चन्द्र, बुध बृहस्पति तथा शनि एक घर में हों, तो लोकप्रिय, यशस्वी, ज्ञानी, तेजस्वी और जितेन्द्रिय होता है ॥ ४०८ ॥

चन्द्रबुधशुक्रशनियोगफलम्

चन्द्रविच्छुक्रसौरीणां संयोगे नृपपूजितः ।
नेत्ररोगी पुराधीशो बहुदारयुतो धनी ॥ ४०९ ॥

चन्द्र, बुध, शुक्र तथा शनि एक घर में हों, तो राजमान्य, नेत्र-रोगी, नगर का स्वामी, बहुत स्त्रियों से युक्त और धनी होता है ॥ ४०९ ॥

चन्द्रगुरुशनिशुक्रयोगफलम्

विधुजीवार्किशुक्राणां संयोगे ललनाप्रियः ।
धर्मज्ञो निर्धनः प्राज्ञः स्थूलदेहो विचक्षणः ॥ ४१० ॥

चन्द्र, बृहस्पति, शनि तथा शुक्र एक घर में हों, तो स्त्री का प्रिय, धर्मज्ञ, निर्धन, पण्डित, मोटा देह और चतुर होता है ॥४१०॥

मंगलगुरुबुधशुक्रयोगफलम्

कुजेज्यबुधशुक्राणां संयोगे कलहप्रियः ।
सुशीलो धनसम्पन्नो राजमान्यो दयान्वितः ॥ ४११ ॥

मंगल, बृहस्पति, बुध तथा शुक्र एक स्थान में हों, तो कलहप्रिय, सुशील, धनी, राजमान्य और दयायुक्त होता है ॥ ४११ ॥

मंगलबुधगुरुशनियोगफलम्

भौमविज्जीवमन्दानां संयोगे निर्धनो भवेत् ।
शुचिः सदा सत्ययुक्तः शूरश्च विनयान्वितः ॥ ४१२ ॥

मंगल, बुध, बृहस्पति तथा शनि एक स्थान में हों, तो निर्धन, शुचि, सत्ययुक्त, शूर और विनयी होता है ॥ ४१२ ॥

मंगलगुरुशुक्रशनियोगफलम्

भौमेज्यसितमन्दानां संयोगे सुमुखो धनी ।
विद्याविनयसम्पन्नः साहसी सुजनप्रियः ॥ ४१३ ॥

मंगल, बृहस्पति, शुक्र तथा शनि एक घर में हों, तो प्रसन्नमुख, धनी, विद्या और नम्रता से युक्त, साहसी और सज्जनभक्त होता है ॥ ४१३ ॥

मंगलशुक्रबुधशनियोगफलम्

वित्सितासितभौमानां संयोगे धनवर्जितः ।
पुष्टदेहो मिष्टभाषी मल्लविद्याविशारदः ॥ ४१४ ॥

मंगल, शुक्र, बुध तथा शनि एक घर में हों, तो धनरहित, मोटा देह, मधुर बोलनेवाला और मल्लविद्या में चतुर होता है ॥ ४१४ ॥

बुधगुरुशुक्रशनियोगफलम्

जीवज्ञभृगुसौरीणां योगे कामातुरो जनः ।
शस्त्रविद्यारतो नित्यं वेदवेदाङ्गपारगः ॥ ४१५ ॥

बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा शनि एक स्थान में हों, तो काम से आतुर, शस्त्रविद्या में रत, वेद-वेदाङ्ग का पारगामी होता है ॥ ४१५ ॥

पञ्चग्रहयोगाः

सूर्यचन्द्रमंगलबुधगुरुयोगफलम्

भार्याहीनः सदादुःखी दुष्टः क्रोधी महाछली ।
हंसाद्यैर्गुरुपर्यन्तैः संयोगे पञ्चभिर्ग्रहैः ॥ ४१६ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध और बृहस्पति एक ही भाव में हों, तो वह भार्याविहीन, सदा दुःखी, दुष्ट, क्रोधी और छल-प्रपञ्च करने में रत होता है ॥ ४१६ ॥

सूर्यचन्द्रमंगलबुधशुक्रयोगफलम्

मिथ्यावादी भ्रातृहीनो दयालुः परसेवकः ।
क्लीबाकृतिर्द्वादशात्मचन्द्रभौमज्ञभार्गवैः ॥ ४१७ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध और शुक्र एक स्थान में हों, तो वह झूठ बोलनेवाला, भ्रातृहीन, दयालु, नौकरी करनेवाला और क्लीबों (हिजड़ों) की-सी आकृतिवाला होता है ॥ ४१७ ॥

सूर्यचन्द्रमंगलबुधशनियोगफलम्

अल्पजीवी सदादुःखी भार्यापुत्रविवर्जितः ।
सूर्येन्दुज्ञकुजार्कीणां संयोगे तस्करो भवेत् ॥ ४१८ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध तथा शनि एक ही भाव में हों, तो वह अल्पायु, सदा दुःखी, स्त्री और पुत्र से हीन तथा चोर होता है ॥ ४१८ ॥

सूर्यचन्द्रमंगलगुरुशुक्रयोगफलम्

मातृपितृसुखैर्हीनो नेत्रदोषी च दुःखितः ।
गानविद्यारतो भौमभानुचन्द्रेज्यभार्गवैः ॥ ४१९ ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बृहस्पति और शुक्र का योग हो, तो वह माता-पिता के सुख से वञ्चित,

नेत्ररोगी, दुःखित तथा गायन-विद्या से प्रेम रखनेवाला होता है ॥ ४१९ ॥

सूर्यचन्द्रमंगलगुरुशनियोगफलम्

परस्वहर्ता व्यसनी साधुद्वेषी जडाकृतिः ।
कातरः सूर्यसंयोगे चन्द्रारगुरुसौरिभिः ॥ ४२० ॥

जिस मनुष्य के जन्माङ्ग में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बृहस्पति तथा शनि का योग हो, तो वह दूसरे के धन का हरनेवाला, व्यसनी, सज्जनों का शत्रु, उद्दंडता करनेवाला तथा शीघ्र ही धैर्य छोड़नेवाला होता है ॥ ४२० ॥

सूर्यचन्द्रमंगलशुक्रशनियोगफलम्

परदाररतो द्वेषी धनधर्मविवर्जितः ।
संयोगे जायते भानुचन्द्रारभृगुसौरिभिः ॥ ४२१ ॥

जिस मनुष्य के जन्माङ्ग में सूर्य, चन्द्र, मंगल, शुक्र तथा शनि एक साथ बैठे हों, तो वह मनुष्य परस्त्रीगामी, सबसे वैर रखनेवाला तथा धन और धर्म से हीन होता है ॥ ४२१ ॥

सूर्यचन्द्रबुधगुरुशुक्रयोगफलम्

राजमान्यो धनी मानी न्यायाधीशो विचक्षणः ।
रवीन्दुहेज्यशुक्राणां संयोगे प्रभवो नरः ॥ ४२२ ॥

जिस मनुष्य के जन्माङ्ग में सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु तथा शुक्र एक साथ बैठे हों, तो वह मनुष्य राजमान्य, धनवान्, अभिमानी, न्यायाधीश और विचक्षण होता है ॥ ४२२ ॥

सूर्यचन्द्रबुधगुरुशनियोगफलम्

वेश्यागामी ऋणग्रस्तो दुराचारो भयान्वितः ।
धर्मद्वेषी नरो भानुचन्द्रज्ञगुरुसौरिभिः ॥ ४२३ ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय सूर्य, चन्द्र, बुध गुरु तथा शनि

का योग हो, तो वह मनुष्य वेश्यागामी, ऋणग्रस्त, दुराचारी, भय से युक्त तथा धर्म से द्वेष करनेवाला होता है ॥ ४२३ ॥

सूर्यचन्द्रबुधशुक्रशनियोगफलम्

देहरोगी द्रव्यहीनः पुत्रमित्रविवर्जितः ।
बहुरोगान्वितो भानुचन्द्रज्ञभृगुसौरिभिः ॥ ४२४ ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय सूर्य, चन्द्र, बुध, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य शरीर से रुग्ण, द्रव्य से हीन, पुत्र और मित्रों से रहित तथा बहुत से रोगों से युक्त होता है ॥४२४॥

सूर्यचन्द्रगुरुशुक्रशनियोगफलम्

वाक्यजालरतः पापो चलचित्तोऽङ्गनाप्रियः ।
शत्रुभिस्तप्त आदित्यचन्द्रजीवसितासितैः ॥ ४२५ ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय सूर्य, चन्द्र, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य वाणी का जाल रचनेवाला पापी, चञ्चलचित्त, स्त्री का प्यारा तथा शत्रुओं से सन्तप्त होता है ॥ ४२५ ॥

सूर्यमंगलबुधगुरुशुक्रयोगफलम्

सेनापतिर्नरः कामी यशस्वी बहुसेवकः ।
रव्यारज्ञेज्यशुक्राणां संयोगे नृपपूजितः ॥ ४२६ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय सूर्य, मंगल, बुध, गुरु तथा शुक्र का योग हो, तो वह सेनापति, कामी, कीर्तिमान्, बहुत नौकरों से युक्त तथा राजा का प्रिय होता है ॥ ४२६ ॥

सूर्यमंगलबुधगुरुशनियोगफलम्

भिक्षाशी च नरो रोगी स्वल्पवित्तः सुतान्वितः ।
वृद्धो जडो भानुभौमबुधजीवशनैश्चरैः ॥ ४२७ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय सूर्य, मंगल, बुध, गुरु तथा शनि

का योग हो, तो वह मनुष्य भिक्षा से जीविका करनेवाला, रोगी, थोड़े धन से युक्त, पुत्रों सहित, वृद्ध तथा जड़ होता है ॥ ४२७ ॥

सूर्यमंगलबुधशुक्रशनियोगफलम्

स्थानभ्रष्टो व्याधियुक्तः शत्रुग्रस्तो बुभुक्षितः ।
सूर्यशुक्रज्ञमन्दारसंयोगे विकलो नरः ॥ ४२८ ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय सूर्य, मंगल, बुध, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य स्थानभ्रष्ट, व्याधियों से युक्त, शत्रुओं से ग्रस्त, भूख से दुखी तथा विकल होता है ॥ ४२८ ॥

सूर्यमंगलगुरुशुक्रशनियोगफलम्

प्राज्ञो धनी बन्धुयुक्तो धातुयन्त्रात्मकारकः ।
तपस्वी भानुभौमार्किभृगुजीवान्वितैर्भवेत् ॥ ४२९ ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय सूर्य, मंगल, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह विद्वान्, धनवान्, बान्धवों से युक्त, धातुओं के यन्त्रों का बनानेवाला तथा तपस्वी होता है ॥ ४२९ ॥

सूर्यबुधगुरुशुक्रशनियोगफलम्

दयालुर्धार्मिको वक्ता मित्रयुक्तो धनान्वितः ।
सामन्तः सूर्यविद्देवगुरुशुक्रशनैश्चरैः ॥ ४३० ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो दयावान्, धार्मिक, वक्ता, मित्र और धन से युक्त तथा अधीश्वर होता है ॥ ४३० ॥

चन्द्रमंगलबुधगुरुशुक्रयोगफलम्

सुशीलः पापरहितो मित्रद्रव्यैः सुखान्वितः ।
बहुविद्यायुतश्चन्द्रभौमज्ञगुरुभार्गवैः ॥ ४३१ ॥

जिसके जन्म के समय चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु तथा शुक्र का योग हो, तो शीलवान्, पाप से रहित, मित्र तथा धन से सुखी और अनेक विद्याओं से युक्त होता है ॥ ४३१ ॥

चन्द्रमंगलगुरुशुक्रशनियोगफलम्

परान्नभोगी मलिनः परसेवान्वितः सुधीः ।
योगे भवति चन्द्रारजीवशुक्रशनैश्चरैः ॥ ४३२ ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय चन्द्र, मंगल, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य दूसरे की कमाई से भोजन करनेवाला, मलिन, दूसरों की सेवा करनेवाला और विद्वान होता है ॥ ४३२ ॥

चन्द्रमंगलबुधशुक्रशनियोगफलम्

मित्रद्वेषी दुराचारो निष्ठुरः परनिन्दकः ।
चन्द्रभौमज्ञशुक्रार्किसंयोगे प्रभवो नरः ॥ ४३३ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में चन्द्र, मंगल, बुध, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य मित्रों से द्वेष रखनेवाला, दुराचारी दुर्हृदय तथा पराई निन्दा करनेवाला होता है ॥ ४३३ ॥

चन्द्रबुधगुरुशुक्रशनियोगफलम्

राजतुल्यो राजमान्यो लोकपूज्यो गणाधिपः ।
चन्द्रज्ञगुरुशुक्रार्किसंयोगे जायते नरः ॥ ४३४ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह राजा के सदृश, राजमान्य, लोकपूज्य तथा गणाधीश होता है ॥ ४३४ ॥

मंगलबुधगुरुशुक्रशनियोगफलम्

धनी मानी शुचिर्वक्ता दीर्घायुः स्वजनप्रियः ।
भौमज्ञगुरुशुक्रार्किसंयोगे नृपवल्लभः ॥ ४३५ ॥

जिस मनुष्य के जन्माङ्ग में मंगल, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो धनवान्, अभिमानी, पवित्र, वक्ता, दीर्घायु, अपने जनों का प्यारा तथा राजप्रिय होता है ॥ ४३५ ॥

षड्ग्रहयोगाः

सूर्यचन्द्रभौमबुधगुरुशुक्रयोगफलम्

अल्पभाषी धनैर्युक्तो विद्याधर्मसुखैर्युतः ।
हंसाद्यैर्भृगुपर्यन्तैः संयुक्तैर्जायते नरः ॥ ४३६ ॥

जिस मनुष्य के जन्माङ्ग में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु तथा शुक्र का योग हो, तो थोड़ा बोलनेवाला, धनवान्, विद्या, धर्म तथा सुख से युक्त होता है ॥ ४३६ ॥

सूर्यचन्द्रभौमबुधगुरुशनियोगफलम्

परोपकारी शुद्धात्मा दयालुश्चञ्चलो नरः ।
विपिने रमते नित्यं विना शुक्रं तु षड्ग्रहैः ॥ ४३७ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य परोपकारी, शुद्ध अन्तः-करणवाला, दयावान, चञ्चल तथा वन में विचरनेवाला होता है ॥ ४३७ ॥

सूर्यचन्द्रभौमबुधशुक्रशनियोगफलम्

चिन्तायुक्तो नरो मानी संग्रामे विजयी तथा ।
वनाद्रौ रमते घाती विना जीवं तु षड्ग्रहैः ॥ ४३८ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य चिन्ता से युक्त, अभिमानी, संग्राम में विजय पानेवाला, जंगल और पहाड़ों में विचरण करनेवाला तथा घात करनेवाला होता है ॥ ४३८ ॥

सूर्यचन्द्रभौमगुरुशुक्रशनियोगफलम्

धनाढ्यः कृपणः क्रोधी ग्रामपूज्यः सुखप्रियः ।
भूमिपालकृपापात्रं विना चन्द्रसुतं ग्रहैः ॥ ४३९ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय सूर्य, चन्द्र, मंगल, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य धनवान्, कृपण, क्रोधी,

ग्रामपूज्य, सुख चाहनेवाला तथा राजाओं का कृपापात्र होता है ॥ ४३९ ॥

सूर्यचन्द्रबुधगुरुशुक्रशनियोगफलम्

भार्यापुत्रधनैर्हीनो धर्मज्ञो वेदपारगः ।
भूपमान्यो दयायुक्तो विना भौमेन षड्ग्रहैः ॥ ४४० ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य स्त्री, पुत्र तथा धन से रहित, धर्म का जाननेवाला, वेद का पारगामी, राजा का मान्य तथा दया से युक्त होता है ॥ ४४० ॥

सूर्यभौमबुधगुरुशुक्रशनियोगफलम्

भिक्षाशी च क्षमायुक्तो ब्रह्मविद्यारतो नरः ।
विना चन्द्रं ग्रहैः सर्वैः संयोगे धनवर्जितः ॥ ४४१ ॥

जिस मनुष्य के जन्म के समय सूर्य, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य भिक्षा माँगकर खानेवाला, सहनशील, ब्रह्म-विद्या में निरत तथा धनहीन होता है ॥ ४४१ ॥

चन्द्रभौमबुधगुरुशुक्रशनियोगफलम्

भूपमान्यो धनी ख्यातो बहुभार्यो गुणान्वितः ।
चन्द्राद्यैः शनिपर्यन्तैः संयोगे प्रभवो नरः ॥ ४४२ ॥

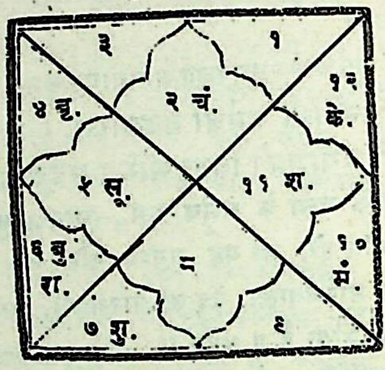
जिस मनुष्य के जन्म के समय चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि का योग हो, तो वह मनुष्य राजमान्य, धनवान्, प्रसिद्ध, बहुत स्त्रियों तथा गुणों से युक्त होता है ॥ ४४२ ॥

सप्तग्रहयोगाः

दिवाकरनिभं तेजो भूपमान्यः शिवप्रियः ।
सूर्याद्यैः शनिपर्यन्तैर्योगे दानी धनान्वितः ॥ ४४३ ॥

सूर्य से शनि पर्यन्त सातों ग्रह एकत्र हों, तो सूर्य के समान तेजस्वी, राजमान्य, शिवभक्त, दानी और धनवान् होता है॥४४३॥

श्रीकृष्णजन्माङ्गम्



गृहादिफलम्

लग्नात्सौख्यमुदाहरन्ति मुनयो होरावलाच्छीलतां
द्रेष्काणात्पदवीं धनस्य निचयं सप्तांशकाच्चिन्तयेत् ।
वर्णं रूपगुणान्सुधीः सुतनयान् प्रायो नवांशेऽखिलं
भावाद्द्वादशकाद्वपुर्वय इति त्रिंशांशकात्स्त्रीफलम् ॥४४४॥

सुख का विचार लग्न से, शील-स्वभाव का होरा से, पदवी का द्रेष्काण से, धनसञ्चय का सप्तांश से, वर्ण, रूप, गुण, बुद्धि तथा पुत्रों का या प्रायः सब बातों का नवांश से, शरीर और आयु का द्वादशांश से तथा स्त्री का विचार त्रिंशांश से करे ॥ ४४४ ॥

मतान्तरम्

लग्ने देहाकारो होरायामर्थसम्पदो विपदः ।
द्रेष्काणे कर्मफलं सप्तांशे बन्धुसंज्ञा च ॥ ४४५ ॥
पुत्रं नवांशभागे द्वादशभागे चिन्तयेत्पत्नीम् ।
त्रिंशांशे निधनफलं शुभाशुभं सर्वजन्तूनाम् ॥ ४४६ ॥

लग्न से शरीर की आकृति, होरा से सम्पत्ति तथा विपत्ति,

'त्रिंशद्भागात्मकं लग्नम्' अर्थात् ३० अंश का एक लग्न होता है ।

द्रेष्काण से कर्मफल, सप्तांश से भाई और बहिन, नवांश से पुत्र, द्वादशांश से स्त्री तथा त्रिंशांश से मृत्यु का विचार करे ॥ ४४२-४४६ ॥

षड्वर्गविचारः

३० अंश का एक लग्न, उसके आधे अर्थात् १५ अंश की एक होरा, लग्न के तीसरे भाग अर्थात् १० अंश का एक द्रेष्काण, लग्न के नवें भाग का एक नवांश, लग्न के बारहवें भाग का एक द्वादशांश और लग्न के तीसवें भाग का एक त्रिंशांश होता है।

'सूर्येन्द्वोर्विषमे लग्ने होरा चन्द्रार्कयोः समे।'

विषम राशि अर्थात् मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ इनमें कोई भी ग्रह हो, तो १५ अंश तक सूर्यहोरा अर्थात् सिंह राशि की होरा, १६ अंश से ३० अंश पर्यन्त चन्द्रहोरा अर्थात् कर्क राशि की होरा होती है। सम राशि अर्थात् वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन इनमें कोई भी ग्रह हो, तो १५ अंश तक चन्द्रमा की होरा अर्थात् कर्क राशि की होरा, १६ अंश से ३० अंश तक सूर्य की होरा अर्थात् सिंह की होरा होती है।

होराचक्रम्

राशि	मे.	वृष	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	स्वामी
१५ अंश	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	देव
३० अंश	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	राक्षस

सूचना—होरा-कुण्डली में ४, ५ यही अंक लिखे जाते हैं।

होराफलम्

शुभः पञ्चदशो भागोह्यशुभोऽतः परं जगुः ।
वहवो धनगाः श्रेष्ठास्तथा नेष्टा व्यये ग्रहाः ॥ ४४७ ॥

होरा १५ अंश पर्यन्त शुभ होती है इसके अनन्तर अशुभ होती है । धन स्थान में बहुत ग्रह श्रेष्ठ होते हैं । व्यय स्थान के ग्रह अच्छे नहीं होते ॥ ४४७ ॥

राशि के तीन भाग करने से दस-दस अंश का एक द्रेष्काण होता है । पहला द्रेष्काण उसी राशि का होता है जो लग्न में हो । उस राशि का स्वामी ही पहले द्रेष्काण का स्वामी होता है । दूसरा द्रेष्काण लग्न से पाँचवीं राशि का होता है तथा उस राशि के स्वामी को ही द्रेष्काण का स्वामी जानना चाहिए। तीसरा द्रेष्काण लग्न से नवीं राशि का होता है तथा उस राशि के स्वामी को ही द्रेष्काणाधिपति समझिए ।

कहा भी है—

'द्रेष्काणपाः प्रथमपञ्चनवाधिपानाम् ।'

द्रेष्काणचक्रम्

राशि	मे.	वृष	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
१ द्रे. १०अं.	मं. १	शु. २	बु. ३	चं. ४	सू. ५	बु. ६	शु. ७	म. ८	वृ. ९	श. १०	श. ११	बृ. १२
२ द्रे. २०अं.	सू. ५	बु. ६	शु. ७	मं. ८	बृ. ९	श. १०	श. ११	बृ. १२	मं. १	शु. २	बु. ३	चं. ४
३ द्रे. ३०अं.	बृ. ९	श. १०	श. ११	बृ. १२	मं. १	शु. २	बु. ३	चं. ४	सू. ५	बु. ६	शु. ७	मं. ८

द्रेष्काणफलम्

द्रेष्काणे केन्द्रगः कुर्यादुच्चस्थो भूपतिं नरम् ।
स्वक्षेत्रगश्च भूनाथं मित्रगश्चापि वाग्मिनम् ॥ ४४८ ॥

द्रेष्काण में यदि उच्च ग्रह केन्द्र में हो, तो वह मनुष्य राजा होता है । अपने क्षेत्र का ग्रह भूमि का स्वामी बनाता है । मित्र-स्थान का ग्रह बोलने में चतुर बनाता है ॥ ४४८ ॥

ससांशचक्रम्

अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
४।१७	मं. १	मं. ८	बु. ३	श. १०	सू. ५	बृ. १२	शु. ७	शु. २	बृ. ९	चं. ४	श. ११	बु. ६
८।३४	शु. २	बृ. ९	चं. ४	श. ११	बु. ६	मं. १	मं. ८	बु. ३	श. १०	सू. ५	बृ. १२	शु. ७
१२।५१	बृ. ३	श. १०	सू. ५	बृ. १२	शु. ७	शु. २	बृ. ९	चं. ४	श. ११	बु. ६	मं. १	मं. ८
१७।८	चं. ४	श. ११	बु. ६	मं. १	मं. ८	बु. ३	श. १०	सू. ५	बृ. १२	शु. ७	शु. २	बृ. ९
२१।२५	सू. ५	बृ. १२	शु. ७	शु. २	बृ. ९	चं. ४	श. ११	बु. ६	मं. १	मं. ८	बु. ३	श. १०
२५।४२	बु. ६	मं. १	मं. ८	बु. ३	श. १०	सू. ५	बृ. १२	शु. ७	शु. २	बृ. ९	चं. ४	श. ११
३०।०	शु. ७	शु. २	बृ. ९	चं. ४	श. ११	बु. ६	मं. १	मं. ८	बु. ३	श. १०	सू. ५	बृ. १२

राशि के सात भाग करने से ससांश होता है । विषम राशि में

सप्तांश के स्वामी अपने निज स्वामी से गिनना चाहिए; परंतु सम राशि में अपने से सातवें स्थान के स्वामी से गिनना चाहिए।

कहा भी है—

'सप्तांशपास्त्वोजगृहे गणनीया निजेशतः।
युग्मराशौ तु विज्ञेयाः सप्तमर्क्षादिनायकात् ॥'

सप्तांशफलम्

सप्तांशलग्नात्सहजाधिनाथः
क्रूरोऽथ सौम्यः शुभपापदृष्टः।
पापैर्निजभ्रातृविहीन एव
सौम्यैर्बहुभ्रातृयुतो नरः स्यात् ॥ ४४६ ॥

सप्तांश लग्न से तृतीयेश क्रूर या शुभ ग्रह क्रूर से या शुभ से दृष्ट हो, तो वह मनुष्य क्रम से भ्रातृहीन या भ्रातृयुक्त होता है ॥ ४४६ ॥

तीस अंश का लग्न होता है, उसका नवांश तीन अंश बीस कला का हुआ इसे पहला नवांश समझना चाहिए।

दूसरा नवांश ६ अंश, ४० कला; तीसरा नवांश १० अंश, शून्य कला; चौथा नवांश १३ अंश, २० कला; पाँचवाँ नवांश १६ अंश, ४० कला; छठा नवांश २० अंश, शून्य कला; सातवाँ नवांश २३ अंश, २० कला; आठवाँ नवांश २६ अंश, ४० कला; नवाँ नवांश ३० अंश, शून्य कला। इस प्रकार एक लग्न में ९ नवांश होते हैं।

मेष, सिंह और धन लग्न में मेष राशि से नवांश की गणना की जाती है; वृष, कन्या और मकर लग्न में मकर राशि से नवांश-गणना होती है; मिथुन, तुला और कुम्भ लग्न में कुम्भ राशि से गणना की जाती है और कर्क, वृश्चिक तथा मीन लग्न में कर्क राशि से गणना होती है। अर्थात् मेष का नवांश मेष से धन राशि तक, वृष का नवांश मकर से कन्या तक, मिथुन का

नवांशचक्रम्

नवांश	अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
१	३।२०	मं.	श.	शु.	चं.	मं.	श.	शु.	चं.	मं.	श.	शु.	चं.
२	६।४०	शु.	श.	मं.	सू.	शु.	श.	मं.	सू.	शु.	श.	मं.	सू.
३	१०।०	बु.	बृ.	बृ.	बु.	बु.	बृ.	बृ.	बु.	बु.	बृ.	बृ.	बु.
४	१३।२०	चं.	मं.	श.	शु.	चं.	मं.	श.	शु.	चं.	मं.	श.	शु.
५	१६।४०	सू.	शु.	श.	मं.	सू.	शु.	श.	मं.	सू.	शु.	श.	मं.
६	२०।०	बु.	बृ.	बृ.	बृ.	बु.	बु.	बृ.	बृ.	बु.	बु.	बृ.	बृ.
७	२३।२०	शु.	चं.	मं.	श.	शु.	चं.	मं.	श.	शु.	चं.	मं.	श.
८	२६।४०	मं.	सू.	शु.	श.	मं.	सू.	शु.	श.	मं.	सू.	शु.	श.
९	३०।०	बृ.	बु.	बु.	बृ.	बृ.	बु.	बु.	बृ.	बृ.	बु.	बु.	बृ.

नवांशस्वामिनः

देवा नृराक्षसाश्चैव चरादिषु गृहेषु च ।

तुला से मिथुन तक, कर्क का कर्क से मीन तक, सिंह का मेष से धन तक, कन्या की मकर से कन्या तक, तुला का तुला से मिथुन तक, वृश्चिक का कर्क से मीन तक, धन का मेष से धन तक, मकर का मकर से कन्या तक, कुम्भ का तुला से मिथुन तक, मीन का कर्क से मीन तक नवांश की गणना होती है।

कहा भी है—

'क्रियैणतौलीन्दुभतो नवांशाः।'

नवांशफलम्

नवांशलग्नात्सुतपश्च सौम्यः
शुभाशुभैर्युक्तविलोकितो वा।
शुभैः सुताः स्युः प्रचुरा नरस्य
क्रूरैर्न सन्तानसुखं सदा भवेत् ॥४५०॥

नवांश लग्न से पञ्चम भाव का स्वामी सौम्य ग्रह हो, शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो बहुत पुत्र होते हैं। यदि क्रूर ग्रह हो, तो सन्तान-सुख नहीं होता है ॥ ४५० ॥

द्वादशांश अपनी ही राशि से आरम्भ होते हैं।

कहा भी है—

'लग्नस्य द्वादशांशास्तु स्वराशेरेव कीर्तिताः।'

दो अंश तीस कलाओं का एक द्वादशांश होता है इसलिये एक लग्न में बारह द्वादशांश होते हैं। जिस राशि में द्वादशांशों का विचार करना है उसी राशि से लेकर क्रम से बारह राशियों के द्वादशांश होते हैं अर्थात् मेष राशि में पहला द्वादशांश मेष का, दूसरा वृष का, तीसरा मिथुन का, चौथा कर्क का, पाँचवाँ सिंह का, छठा कन्या का, सातवाँ तुला का, आठवाँ वृश्चिक का, नवाँ धन का, दसवाँ मकर का, ग्यारहवाँ कुम्भ का, बारहवाँ मीन का द्वादशांश होता है।

द्वादशांशचक्रम्

अंश कला	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	स्वामी
२०।३०	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	गणेश
५	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	अश्विनीकु.
७।३०	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	यम
१०	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	अहि
१२।३०	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	गणेश
१५	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ म.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	अश्विनीकु.
१७।३०	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	यम
२०	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	अहि
२२।३०	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	गणेश
२५	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	अश्विनीकु.
२७।३०	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	यम
३०	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	अहि

द्वादशांशफलम्

स्याद्द्वादशांशादशुभाः शुभा वा
जायाधिपः क्रूरयुतेक्षितो वा ।
भार्या शुभैः पुत्रयुता तथैका
स्त्रीदुःखमेवाप्यपरैर्नरस्य ॥ ४५१ ॥

द्वादशांश लग्न से सप्तमेश शुभयुक्त या शुभदृष्ट हो, तो स्त्री पुत्रयुक्त होती है । पापग्रह हों, तो स्त्री से दुःख होता है ॥ ४५१ ॥

विषम राशियों का प्रथम त्रिंशांश पाँच अंश का होता है, उसका स्वामी मंगल है । तदनन्तर पाँच अंश का स्वामी शनैश्चर, तदनन्तर आठ अंशों का स्वामी बृहस्पति, तदनन्तर सात अंशों का स्वामी बुध, तदनन्तर पाँच अंशों का स्वामी शुक्र होता है ।

सम राशियों में प्रथम पाँच अंशों का स्वामी शुक्र, तदनन्तर सात अंशों का स्वामी बुध, तदनन्तर आठ अंशों का स्वामी बृहस्पति, तदनन्तर पाँच अंशों का स्वामी शनैश्चर, तदनन्तर पाँच अंशों का स्वामी मंगल होता है । कहा भी है—

'शुक्रज्ञजीवशनिभूतनयस्य बाणा-
शैलाष्ट पञ्च विशिखाः समराशिमध्ये ।
त्रिंशांशको विषमभे विपरीतमस्मात् ॥'

त्रिंशांशफलम्

त्रिंशांशलग्नान्निधनाधिपश्च
क्रूरोऽथ सौम्यः शुभपापदृष्टः ।
तीर्थे शुभे क्रूरतरे नरस्य
मृत्युं वदेदग्निजलादितश्च ॥ ४५२ ॥

त्रिंशांश लग्न से अष्टम का स्वामी सौम्यग्रह हो या सौम्यग्रह से दृष्ट हो, तो तीर्थ में मृत्यु, क्रूर ग्रह हो, तो अग्नि, जल आदि से मृत्यु होती है ॥ ४५२ ॥

विषमत्रिंशांशचक्रम्

अंश	मे.	मि.	सिं.	तु.	ध.	कुं.	स्वामिनः
५	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	वह्नि
१०	श.	श.	श.	श.	श.	श.	वायु
१८	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	इन्द्र
२५	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	कुबेर
३०	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	मेघ

समत्रिंशांशचक्रम्

अंश	वृ.	क.	कं.	वृ.	म.	मी.	स्वामिनः
५	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	मेघ
१२	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	कुबेर
२०	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	इन्द्र
२५	श.	श.	श.	श.	श.	श.	वायु
३०	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	वह्नि

वर्गोत्तमनवांशाः

चरभवने चाद्यांशाः स्थिरेषु मध्या द्विमूर्तिषु तथान्त्याः ।
वर्गोत्तमाः प्रदिष्टास्तेष्विह जाताः कुले मुख्याः ॥ ४५३ ॥

चर राशियों में आदि के नवांश, स्थिर राशियों में मध्य के नवांश, द्विस्वभाव राशियों में अन्त के नवांश वर्गोत्तम कहलाते हैं । इनमें जो मनुष्य उत्पन्न होते हैं वे अपने कुल में मुख्य होते हैं ॥ ४५३ ॥

स्वे स्वे गृहेषु स्वनवांशका ये
वर्गोत्तमास्ते मुनिभिर्निरुक्ताः ॥ ४५४ ॥
अन्ते तुच्छफलं लग्नं यदि वर्गोत्तमं न चेत् ॥४५५॥

अपने अपने घरों में जो अपने नवांश हों उनको कोई आचार्य वर्गोत्तम बतलाते हैं ॥ ४५४ ॥

लग्न का अन्तिम नवांश तुच्छ फल देनेवाला होता है यदि वह वर्गोत्तम न हो ॥ ४५५ ॥

लग्नस्यादिमध्यावसानेषु फलम्

आदौ हि सम्पूर्णफलप्रदं स्या-
न्मध्ये पुनर्मध्यफलं विलग्नम् ।
अतीव तुच्छं फलमस्य चान्ते
विनिश्चयोऽयं विदुषा विधेयः ॥ ४५६ ॥

वृषश्च मिथुनं कन्या तुला धन्वी झषस्तथा ।
एते शुभनवांशास्तु ततोऽन्ये कुनवांशकाः ॥ ४५७ ॥

आरम्भ में लग्न पूर्ण फल देता है, मध्य में मध्यम, अन्त में अत्यन्त अशुभ, सौम्यग्रह या मित्रग्रह के नवांश शुभ तथा पापग्रह या शत्रुग्रह के नवांश अशुभ होते हैं। किसी-किसी आचार्य के मत से वृष, मिथुन, कन्या, तुला, धन, मीन, शुभ नवांश हैं, शेष कुनवांश हैं ॥ ४५६-४५७ ॥

जन्माङ्कतो वर्षज्ञानम्

यस्मिन् राशौ भवेत्सौरिस्तस्मात्सार्धं च द्वौ समाः ।
शनिर्यावद् भवेद्वर्ष-तथेज्याश्रितराशितः ॥ ४५८ ॥

जिस राशि में शनि हो उससे २½ बरस शनिपर्यन्त गिने या बृहस्पति के राशि से गिने, तो वर्ष का निर्णय हो जाता है ॥ ४५८ ॥

जन्माङ्कतो मासज्ञानम्

वैशाखे स्थापयेन्मेषं यावद्भानुश्च गच्छते ।
तावन्मासे भवेज्जन्मगर्गस्य वचनं यथा ॥ ४५९ ॥

मेष राशि को वैशाख माने उससे सूर्य जिस राशि में हो उससे जन्ममास का निर्णय करना चाहिए ॥ ४५९ ॥

जन्माङ्कतः पक्षज्ञानम्

यस्मिन् राशौ भवेत्सूर्यस्तस्मात्सप्तगृहान्तरे ।
चन्द्रे शुक्ले भवेज्जन्म त्वन्यथा कृष्णपक्षकः ॥ ४६० ॥

जिस राशि में सूर्य हो वहाँ से ७ घरों के भीतर यदि चन्द्रमा हो, तो शुक्लपक्ष में अन्यथा कृष्णपक्ष में जन्म जानना चाहिए ॥ ४६० ॥

अमाङ्कतः तिथिज्ञानम्

यत्र भानुः कुहूस्तत्र सार्द्धं द्वे च तिथी स्मृते ।
चन्द्रं यावत्समाख्यातं तिथिज्ञानं मनीषिभिः ॥ ४६१ ॥

जिस स्थान पर सूर्य हो उसको अमावास्या माने वहाँ से हरएक घर को २½, २½ तिथि समझना चाहिए । सूर्य से चन्द्रमा तक गिनती करे, तो जन्मतिथि ज्ञात हो जाती है ॥ ४६१ ॥

जन्माङ्कतो दिवारात्रिज्ञानम्

सूर्याक्रान्तस्थभवनाल्लग्नं सप्तगृहान्तरे ।
दिने जन्म वदेत्प्राज्ञस्त्वन्यथा निशि जन्म च ॥४६२॥

जिस राशि में सूर्य हो वहाँ से ७ घर के भीतर यदि लग्न हो तो दिन में अन्यथा रात्रि में जन्म जानना चाहिए ॥ ४६२ ॥

जन्माङ्गतो घटीज्ञानम्

सूर्याक्रान्तस्थभवनात्पञ्च पञ्च च गण्यते ।
लग्नं यावत्समाख्यातं घटीज्ञानं मनीषिभिः ॥ ४६३ ॥

जिस राशि में सूर्य हो वहाँ से लग्न तक गिनती करे और प्रत्येक घर को ५ । ५ घड़ी का माने । इस प्रकार जन्म के समय की घड़ियाँ निकल आती हैं ॥ ४६३ ॥

द्वादशभावेषु ग्रहाणां सामान्यफलम्

शुभैर्लग्नात्स्वायुर्धनमनुजसौख्यं गृहसुखं
सुधियासत्पुत्रां रिपुभयमथ स्त्रीसुखमुदः ।
चिरायुः पुण्यर्द्धिर्निजकुलपता लाभहतयो
विधौ लग्ने छिद्रे जडिमरुजताऽन्यत्र शुभवत् ॥ ४६४ ॥

लग्न आदि स्थानों में शुभग्रह होने से यथाक्रम फल जानने चाहिए—

अच्छी आयु, धन, भ्रातृसुख, गृहसुख, अच्छी विद्या और अच्छे पुत्र, शत्रुभय, स्त्री-सुख, चिरायु, पुण्यकर्म, अपने कुल का पालन, लाभ और हानि ।

चन्द्रमा लग्न में हो, तो जड़ होता है । अष्टम में हो, तो रोगी होता है । शेष स्थानों में पूर्वोक्त फल जानना चाहिए ॥४६४॥

पापैर्लग्नाद्रोगिता निःस्वता स्या-
द्विक्रान्तत्वं सौख्यपुत्राग्निनाशाः ।
स्यत्रींरोगाः पापचित्तं च शौर्यं
लाभो हानिः स्वर्चतुङ्गेऽल्पदोष्यम् ॥ ४६५ ॥

लग्न आदि में पापग्रह होने से यथाक्रम फल जानना चाहिए—

रोग, निर्धनता, पराक्रम, सुख का नाश, पुत्र का नाश, शत्रु का नाश, स्त्री-पीड़ा, रोग, पाप की कमाई, शूरता, लाभ और हानि। यदि ग्रह अपने उच्च का हो, तो दोष न्यून हो जाता है ॥ ४६५ ॥

तुर्याभ्रान्त्येषु पापाः पितुरसुखदा ह्यस्व्ययगान्त्येषु मातु-
र्भ्रातुस्त्रिस्थाः सुतमतिहतिदाः सप्तमे स्त्रीहराः स्युः।
सौम्याः सर्वत्र शस्तास्त्र्यरिभवखला मूर्तिषष्ठाष्टमान्त्ये
क्षीणश्चन्द्रोऽन्त्यतनुमृतिखलारिष्टदा जन्मभेन्द्वोः४६६ ॥

जन्मराशि या जन्मलग्न से ४। १०। १२ में पापग्रह हों, तो पिता को कष्ट, २। ४। ७। १२ में पापग्रह हों, तो माता को कष्ट, तीसरे स्थान में पापग्रह हों, तो भाई को कष्ट, पञ्चम स्थान में हों, तो बुद्धि की हानि, सप्तम स्थान में हों, तो स्त्री का नाश, सौम्यग्रह सब स्थानों में हों, तो शुभ होता है। पापग्रह ३। ६। ११ स्थानों में अच्छे होते हैं, १। ६। ८। १२ स्थानों में क्षीण चन्द्रमा शुभ नहीं होता, १२। १। ८ स्थानों में पापग्रह अनिष्ट करते हैं ॥ ४६६ ॥

ग्रहाणां प्रशस्तस्थानानि

शत्रौ सूर्यः प्रशस्तः सुखभवनगतः पूर्णचन्द्रोऽतिशस्तः
कोणे जीवोऽतिशस्तस्तनुगतभृगुजो विक्रमार्किः प्रशस्तः।
लाभे सर्वे प्रशस्ताः सकलफलहरा नीचगाः पापखेटाः
स्वोच्चा नैव प्रशस्ता विमलफलहरा रन्ध्ररिष्फारियुक्ताः४६७॥

छठे स्थान में सूर्य, चौथे स्थान में पूर्ण चन्द्रमा, त्रिकोण में बृहस्पति, लग्न में शुक्र, पराक्रम में शनि, लाभ में सब ग्रह अच्छे होते हैं। पापग्रह नीच के हों, तो सब फलों का नाश करते हैं। ८।१२।६ स्थानों में उच्च ग्रहों का फल अच्छा नहीं होता है ॥४६७॥

भाववृद्धयादिकराः

यस्मिन्भावे मृत्युषष्ठान्त्यभेशा

वाच्या धीरैस्तस्य तस्यापि हानिः ।
केन्द्रे कोणे रन्ध्ररिष्फेषु पापाः
पुत्रे जीवस्तद्गृहं चात्मजार्थं ॥ ४६८ ॥

मृत्यु, षष्ठ और द्वादश स्थानों के स्वामी जिस भाव में हों उस भाव की हानि करते हैं। केन्द्र, कोण, अष्टम तथा द्वादश स्थानों में पापग्रह भावों को हानि करते हैं। पञ्चम भाव में बृहस्पति हो या पञ्चम स्थान बृहस्पति का घर (९ । १२) हो, तो सन्तान का दुःख होता है ॥ ४६८ ॥

यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा
सौम्यैर्वा स्यात्तस्य तस्यापि वृद्धिः ।
पापैरेवं तस्य तस्यास्ति हानि-
र्निर्देष्टव्या पृच्छतां जन्मकाले ॥ ४६९ ॥

जो भाव अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो या सौम्यग्रह से युक्त या दृष्ट हो उस भाव की वृद्धि होती है । जो भाव पापग्रहों से युक्त या दृष्ट हो उसकी हानि होती है। यह फल जन्म और प्रश्न में सामान्यतः जानना चाहिए ॥ ४६९ ॥

प्रत्यक्षफलदा ग्रहाः

लग्नस्य पूर्वार्धगताः खगेन्द्राः
प्रत्यक्षमेवेह फलं प्रदद्युः ।
परार्धषट्कोपगताश्च नूनं
फलं प्रयच्छन्ति परोक्षमेव ॥ ४७० ॥

लग्न के पूर्वार्ध में जो ग्रह होवें वे प्रत्यक्ष फल देते हैं। जो परार्ध में हों वे परोक्ष फल देते हैं ॥ ४७० ॥

राशिबलम्

नृपशवो लग्नगता वरिष्ठा-
श्चतुर्थसंस्था जलराशयः स्युः ।

अस्तस्थितो वृश्चिकराशिरेवं
नभःस्थलस्थाः पशुराशयस्तु ॥ ४७१ ॥

लग्न में नर और पशुराशि, चतुर्थ स्थान में स्थित जलराशि, सप्तम में स्थित वृश्चिक राशि, दशम में स्थित पशुराशि बलवान् होती हैं ॥ ४७१ ॥

राशयो बलिनः केन्द्रे मध्याः पणफरे स्थिताः ।
आपोक्लिमगता हीनबलाः सर्वेऽपि कीर्तिताः ॥ ४७२ ॥

केन्द्र में राशियाँ बलवान् होती हैं, पणफर में मध्यबली और आपोक्लिम में सब बलहीन होती हैं ॥ ४७२ ॥

अधिपयुतो दृष्टो वा बुधजीवनिरीक्षितश्च यो राशिः ।
स भवति बलवान्न यदा युतोऽवलोकितो वा शेषैः ॥ ४७३ ॥

स्वामी से युक्त या दृष्ट या बुध तथा बृहस्पति से दृष्ट राशि बलवान् होती है । जो राशि शेष ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो बलवान् नहीं होती है ॥ ४७३ ॥

जलचरपशुनरकीटा बन्धौ माने तनौ मदे चापि ।
क्रमशो भवन्ति सवीर्या विनतबलास्तत्सप्तमेऽपि ॥ ४७४ ॥

४ । १० । १ । ७ स्थानों में जलचर, पशु, नर, कीट राशियाँ यथाक्रम बलवान् होती हैं । अपने से सातवें स्थान में वे बलहीन हो जाती हैं ॥ ४७४ ॥

स्थानबलम्

स्वोच्चस्थिताश्चेष्टबला भवन्ति
मूलत्रिकोणे स्वगृहे च मध्याः ॥ ४७५ ॥

ग्रह अपने उच्च के हों, तो इष्टबल पाते हैं । मूलत्रिकोण या अपने घर में मध्यबल पाते हैं ॥ ४७५ ॥

चन्द्रबलम्

मासे तु शुक्लप्रतिपत्प्रवृत्ते

पूर्वं शशी मध्यबली दशाहे ।
श्रेष्ठो द्वितीयेऽल्पबलस्तृतीये
सौम्यैस्तु दृष्टो बलवान्सदैव ॥ ४७६ ॥

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर १० दिन तक चन्द्रमा मध्यबली होता है । द्वितीय भाग में श्रेष्ठ होता है । तृतीय भाग में अल्पबली होता है । सौम्य ग्रहों से दृष्ट हो, तो सदा बलवान् होता है ॥ ४७६ ॥

कृष्णाष्टमीदलादूर्ध्वं यावच्छुक्लाष्टमी भवेत् ।
तावत्क्षीणशशी ज्ञेयः सम्पूर्णस्तदनन्तरम् ॥ ४७७ ॥

कृष्णपक्ष की अष्टमी से लेकर शुक्लपक्ष की अष्टमी तक चन्द्रमा क्षीण होता है । तदनन्तर पूर्ण कहलाता है ॥ ४७७ ॥

लग्नेशस्य धनेशादिभिर्योगे फलम्

लग्नाधीशेऽर्थगे चेद्धनभवनपतौ लग्नयातेऽर्थवान्स्यात्-
बुद्ध्याचारप्रवीणः परमसुकृतकृत्सारभृद्भोगशीलः ।
भ्रातृस्थानेऽङ्गनाथे सहजभवनपे लग्ननाथेऽल्पशक्तिः
सद्बन्धू राजपूज्यः कुलजनसुखदो मातृपक्षेण युक्तः ॥ ४७८ ॥

लग्नेश धनस्थान में हो और धनेश लग्न में हो, तो धनवान्, बुद्धिमान्, आचार में चतुर, पुण्यवान्, बलवान् और भोगी होता है । लग्नेश भ्रातृभाव में हो और तृतीयेश लग्न में हो, तो अल्पबली, अच्छे बन्धुओं से युक्त, राजपूज्य, वंश को सुख देनेवाला और माता से युक्त होता है ॥ ४७८ ॥

तुर्येशे लग्नयाते तदनु तनुपतौ तुर्यगे स्यात्क्षमावां-
स्ताताज्ञाराजकार्यप्रगुणमतियुतः सद्गुरुः स्वीयपक्षः ।
लग्नस्थे सूनुनाथे तनुजपदगते लग्ननाथे मनस्वी
विद्यालङ्कारयुक्तो निजकुलविदितो ज्ञानवान्मानसक्तः ॥ ४७९ ॥

चतुर्थेश लग्न में हो और लग्नेश चतुर्थ में हो, तो मनुष्य

क्षमावान्, पितृभक्त, राजसेवी, गुरुभक्त तथा स्त्रीपक्षवाला होता है। पञ्चमेश लग्न में हो और लग्नेश पञ्चम में हो, तो मनुष्य धनवान्, स्वस्थचित्त, विद्यावान्, कुलदीपक, ज्ञानी और माननीय होता है ॥ ४७९ ॥

षष्ठेशे लग्नयाते तदनु तनुपतौ षष्ठगे व्याधिहीनो
नित्यं द्रोहादिसक्तो वपुपि स बलवान्द्रव्यवान्संग्रही स्यात्
सप्तमेशे कामयाते मदनसदनपे मूर्त्तिगे तातसेवी
लोलस्वान्तोऽङ्गनाथो भवति हि मनुजः सेवकः श्यालकस्य ॥४८०॥

षष्ठेश लग्न में हो और लग्नेश षष्ठस्थान में हो, तो वह मनुष्य व्याधिरहित, द्रोही, बलवान्, धनवान्, संग्रह करनेवाला होता है। लग्नेश सप्तम स्थान में हो और सप्तमेश लग्न में हो, तो पितृभक्त, चञ्चल और साले का सेवक होता है ॥ ४८० ॥

अंगेशे रन्ध्रयाते निधनगृहपतावंगगे द्यूतवृद्धिः
शूरश्चौर्यादिसक्तो निधनपदमियाद्भूपतेर्लोकतो वा।
देहाधीशे शुभस्थे शुभभवनपतौ देहसंस्थे विदेशी
धर्मासक्तो नितान्तं सुरगुरुभजने तत्परो राजमान्यः ॥४८१॥

लग्नेश अष्टम स्थान में हो और अष्टमेश लग्न में हो, तो वह मनुष्य जुआरी, शूर और चोर होता है तथा राजपक्ष से मृत्यु होती है। लग्नेश नवम स्थान में हो और नवमेश लग्न में हो, तो परदेशी, धर्मात्मा, देवताभक्त, गुरुसेवी और राजमान्य होता है ॥ ४८१ ॥

कर्मस्थे लग्ननाथे गगनभवनपे लग्नगे भूपतिः स्यात्
ख्यातो लाभे च रूपे गुरुभजनरतो लोलुपो द्रव्यनाथः।
लाभेशे लग्नयाते तनुभवनपतौ लाभसंस्थे सुकर्मा
दीर्घायुः क्षोणिनाथः शुभविहगयुतः कोविदो मानवः स्यात्॥

जिस मनुष्य का लग्नेश कर्म स्थान में हो और कर्मेश लग्न

में हो, तो वह मनुष्य राजा या राजा के सदृश होता है तथा लाभ और रूप में प्रसिद्ध, गुरुसेवी, लालची और धनवान् होता है । लाभेश लग्न में हो और लग्नेश लाभ में हो, तो कर्मनिष्ठ, दीर्घायु तथा भूमिपति होता है, शुभ ग्रह हो, तो पण्डित होता है ॥४८२॥

लग्नेशे रिष्फयाते व्ययसदनपतौ लग्नगे सर्वशत्रुः
बुद्धया हीनो नितान्तं कृपणतरमतिर्द्रव्यनाशी विलोलः ।
इत्थं तातादिकानामपि जनुषि तदा खेचराणां हि योगा-
द्वाच्यं होरागमज्ञैस्तदनु तनुपयुग् भार्गवे राजपूज्यः ॥४८३॥

लग्नेश द्वादश स्थान में हो और द्वादशेश लग्न में हो, तो वह मनुष्य सबका शत्रु, बुद्धिहीन, कंजूस और चञ्चल होता है । इसी प्रकार जन्म समय में ग्रहों के योग से पिता आदि का भी विचार करे । यदि शुक्र लग्नेश से युक्त हो, तो वह मनुष्य राजपूज्य होता है ॥ ४८३ ॥

विशेषतः पञ्चमभावविचारः

विद्यास्थानाधिपो वा बुधगुरुसहितश्चेत्त्रिके वर्तमानो
विद्याहीनो नरः स्यादथ नवमनिजक्षेत्रकेन्द्रेषु तद्वान् ।
बालत्वं वृद्धता वा यदि गगनसदां जन्मकाले तदा स्या न्
प्रज्ञा मान्द्यं नराणामथ यदि विहगः स्वर्क्षगो दोषहृत्स्यात् ॥

पञ्चमेश अकेला हो या बुध तथा बृहस्पति से युक्त होकर ६ । ८ । १२ स्थानों में हो, तो विद्याहीन होवे । यदि पञ्चमेश ५ । ६ । १ । ४ । ७ । १० स्थानों में हो, तो विद्यावान् होता है । जन्मकाल में बुद्धिकारक ग्रहों की बाल या वृद्ध अवस्था हो, तो मन्दबुद्धि होवे । यदि वही अवस्थावाला स्वक्षेत्री हो, तो मन्द-बुद्धि न होवे ॥ ४८४ ॥

वाक्स्थानेशो गुरुर्वा व्ययरिपुविलयस्थानगो वाग्विहीन-
श्चैवं पित्रादिकानां पतय इह युता मूकता स्याच्च ताभ्याम् ।

वागीशात्पञ्चमेशस्त्रिकभवनगतः पुत्रधर्माङ्गनाथा
रन्ध्रक्लेश्यान्तिमस्था यदि जनुषि नृणामात्मजानामभावः॥४८५॥

पञ्चमेश या बृहस्पति १२। ६। ८ स्थानों में हो, तो गूँगा होता है। एवं दशम भाव आदि के स्वामी पञ्चमेश तथा बृहस्पति से युक्त होकर ६। ८। १२ स्थानों में हों, तो पिता आदि गूँगे होते हैं। बृहस्पति की राशि से ६। ८। १२ स्थानों में पञ्चमेश हो और पाँचवें तथा नवें स्थान में लग्न के पति जन्म लग्न की राशि से ६। ८। १२ राशियों में हों, तो पुत्र का अभाव होता है॥ ४८५॥

किञ्चित्कालं विलम्बः शुभखगसहितास्तेऽथ कर्के सुतर्क्षे
चन्द्रे कन्याप्रजावान् प्रमिततनयवांश्चाथ देवेन्दुपूज्यात्।
क्रूरश्चेत्पञ्चमस्थः सुतभवनगतः स्यात्तदापत्यहीन-
श्छायापुत्रः स्वगेहाद्यदि भवति सुते सूनुरेकस्तदानीम्॥४८६॥

५। ६। १ घर के स्वामी शुभग्रहों से युक्त हों, तो कुछ देर से सन्तान होवे। यदि कर्क राशि का चन्द्रमा पाँचवें घर में हो, तो कन्या या एक ही पुत्र होवे। बृहस्पति से पाँचवें स्थान में क्रूरग्रह हो या लग्न से पाँचवें स्थान में बृहस्पति हो, तो वह मनुष्य सन्तानहीन होता है। यदि अपनी राशि से पाँचवें स्थान में शनैश्चर के स्थित होने से एक पुत्र होता है, तो अपनी राशि से पाँचवें स्थान में सूर्य या मंगल स्थित हो, तो एक पुत्र होने में कहना ही क्या है॥ ४८६॥

कुम्भे चेत्पञ्चपुत्रास्तदनु च मकरे नन्दनेऽप्यात्मजाः स्यु-
स्तिस्रो भौमः सुतानां त्रितयमथ सुतादायको रौहिणेयः।
इत्थं काव्यः शशाङ्को जनुषि च गुरुणा केवलेनैव पुत्राः
पञ्च स्युः केतुराह्वोः क्रियवृषभवने कर्कटे नो विलम्बः॥४८७॥

लग्न से पाँचवें घर में कुम्भ राशि का शनि पड़ा हो, तो पाँच

पुत्र और मकर का शनि हो, तो तीन कन्याएँ होती हैं। यदि मकर का मंगल पाँचवें घर में हो, तो तीन पुत्र होते हैं। यदि पाँचवें स्थान में बुध या शुक्र या चन्द्रमा हो, तो कन्याएँ होती हैं। यदि पाँचवें स्थान में केवल बृहस्पति हो, तो ५ पुत्र होते हैं। जिसके जन्मकाल में मेष, वृष, कर्क इनमें से कोई राशि लग्न से पाँचवें स्थान में हो और उसी में राहु या केतु स्थित हो, तो उस मनुष्य के सन्तान होने में शीघ्रता होती है ॥ ४८७ ॥

पापो वा वासवेज्यः सुखभवनगतः पञ्चमे वाऽष्टमे वा
शीतांशुः सन्ततेः स्यात्खगुणमितसमा तुल्य एवं प्रबन्धः।
यावन्तः पापखेटास्तनयगृहगताः सौम्यदृष्ट्या वियुक्ता-
स्तावद्वर्षप्रमाणो नियतमिह भवेत्सन्ततेर्वा विलम्बः॥४८८॥

पापग्रह या बृहस्पति चतुर्थ में हो या पाँचवें या आठवें स्थान में चन्द्रमा हो, तो ३० वर्ष तक सन्तान हो। एवं जितने पापग्रह पाँचवें स्थान में हों परन्तु शुभदृष्ट न हों, तो उतने वर्षों तक सन्तान होने में बाधा जानना चाहिए ॥ ४८८ ॥

बुध या शुक्र या चन्द्रमा से सन्तान में बाधा हो, तो शिवार्चन। बृहस्पति बाधक हो, तो सन्तानगोपाल के मन्त्र का जप आदि। शनि, मंगल सूर्य, और राहु इनमें से कोई ग्रह बाधक हो, तो कुलदेवता का पूजन करावे।

पुत्रस्थाने तदीशे वा गुरौ वा शुभमीक्षिते।
शुभेन सहिते वापि पुत्रप्राप्तिर्न संशयः॥ ४८९ ॥

पुत्रस्थान या पञ्चमेश या बृहस्पति शुभयुक्त या शुभदृष्ट हों, तो पुत्रप्राप्ति निःसन्देह जानना चाहिए ॥ ४८९ ॥

लग्नेशे पुत्रभावस्थे पुत्रेशे बलसंयुते।
परिपूर्णबले जीवे पुत्रप्राप्तिर्न संशयः॥ ४९० ॥

लग्नेश पञ्चम भाव में हो या पञ्चमेश बलवान् हो या बृहस्पति पूर्ण बली हो, तो पुत्रप्राप्ति अवश्य होती है ॥ ४६० ॥

पुत्रस्थानाधिपे जीवे परिपूर्णबलान्विते ।
लग्नाधिपेन वा दृष्टे पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ॥ ४६१ ॥

पञ्चमेश बृहस्पति पूर्ण बली हो या उसको लग्नेश देखे, तो निःसन्देह पुत्रप्राप्ति होती है ॥ ४६१ ॥

वैशेषिकांशके जीवे पुत्रेशेऽपि तथा स्थिते ।
शुभग्रहेण वा दृष्टे पुत्रप्राप्तिं समादिशेत् ॥ ४६२ ॥

बृहस्पति या पञ्चमेश वैशेषिकांशक में हो या शुभग्रह से दृष्ट हो, तो पुत्रप्राप्ति अवश्य होती है ॥ ४६२ ॥

पुत्रस्थानगते वित्तनाथे पूर्णबलान्विते ।
दृष्टे देवेन्द्रगुरुणा पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ॥ ४६३ ॥

धनभावेश पञ्चम भाव में पूर्ण बली हो या बृहस्पति से दृष्ट हो, तो निःसन्देह पुत्रप्राप्ति होती है ॥ ४६३ ॥

पुत्रलग्नाधिपौ युक्तावन्योन्यं वापि वीक्षितौ ।
क्षेत्रे परस्परस्थौ वा पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ॥ ४६४ ॥

लग्नेश और पञ्चमेश एक स्थान में हों या परस्पर दृष्ट हों या परस्पर एक दूसरे की राशि में बैठे हों, तो पुत्र की प्राप्ति अवश्य होती है ॥ ४६४ ॥

लग्नपुत्राधिपौ केन्द्रे शुभग्रहसमन्वितौ ।
कुटुम्बेशे बलाढ्ये तु पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ॥ ४६५ ॥

लग्नेश और पुत्रेश केन्द्र में शुभग्रह-सहित हों, या द्वितीयेश बलवान् हो, तो निःसन्देह पुत्रप्राप्ति होती है ॥ ४६५ ॥

पुत्रस्थानाधिपस्यांशराशीशे शुभसंयुते ।
शुभेन वीक्षिते वापि पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ॥ ४६६ ॥

पञ्चमेश जिसके नवांशक में हो, उसका स्वामी शुभयुक्त हो या शुभदृष्ट हो, तो निःसन्देह पुत्र होवे ॥ ४९६ ॥

लग्नेशे दारभावस्थे भाग्येशे दारसंयुते ।
द्वितीयेशे विलग्नस्थे पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ॥ ४९७ ॥

लग्नेश या नवमेश सप्तम स्थान में हो, द्वितीयेश लग्न में हो, तो निःसन्देह पुत्र होवे ॥ ४९७ ॥

दारेशग्रहसंयुक्ते नवांशभवनाधिपे ।
भाग्यवित्तविलग्नेशैर्दृष्टे तत्प्राप्तिमादिशेत् ॥ ४९८ ॥

सप्तमेश जिसके नवांशक में हो, उसे नवम, द्वितीय तथा लग्न-भाव के स्वामी देखते हों, तो पुत्र की प्राप्ति अवश्य होती है ॥ ४९८ ॥

पापमध्ये तु यद्भावे तदीशेऽपि तथा स्थिते ।
कारके पापसंयुक्ते पुत्रनाशं वदेत्तदा ॥ ४९९ ॥

जिसका पञ्चम भाव तथा पञ्चमेश पापग्रहों के बीच में हो, सन्तानकारक ग्रह भी पापग्रह से युक्त हों, तो पुत्रनाश कहना चाहिए ॥ ४९९ ॥

भाग्यपुत्रकलत्रेशसंयुक्तनवभागपाः ।
पापांशगाः पापयुताः पुत्रनाशं वदेत्तदा ॥ ५०० ॥

नवम, पञ्चम और सप्तम भावों के स्वामी जिनके नवांशों में हों, वे पापग्रहसहित पापनवांशकों में हों, तो पुत्रनाश कहना चाहिए ॥ ५०० ॥

क्रूरांशे पुत्रभावेशे नीचमूढसमन्विते ।
पापैर्दृष्टेऽथवा दुःस्थे पुत्रनाशं वदेत्तदा ॥ ५०१ ॥

पञ्चमेश क्रूर नवांशक में हो, नीच या अस्तंगत हो, पापग्रह से दृष्ट या त्रिकस्थान में हो, तो पुत्रनाश कहना चाहिए ॥ ५०१ ॥

व्ययेशसंयुतांशेशत्र्यंशनाथसमन्विते ।
दृष्टे पुत्रेश्वरे तेन पुत्रार्तिं कथयन्ति हि ॥ ५०२ ॥

व्ययेश जिसके नवांशक में हो, वह जिसके द्रेष्काण में हो, उससे पञ्चमेश युक्त या दृष्ट हो, तो पुत्रपीड़ा होवे ॥ ५०२ ॥

पुत्रस्थानाधिपे दुःस्थे क्रूरषष्ठ्यंशसंयुते ।
क्रूरग्रहेण वा दृष्टे पुत्रनाशं वदेत्तदा ॥ ५०३ ॥

पञ्चमेश दुष्टस्थान में तथा क्रूरषष्ट्यंशकगत हो या क्रूरग्रह से दृष्ट हो, तो पुत्रनाश कहना चाहिए ॥ ५०३ ॥

रन्ध्रे शशांकात्सहिते तु पापै-
वंशस्य विच्छेदकरोऽत्र जातः ।
पापे विलग्ने सुखगे शशांके
लग्नेश्वरे पञ्चमराशियुक्ते ॥ ५०४ ॥

बलैर्विहीने यदि पुत्रनाथे
वंशस्य विच्छेदकरोऽत्र जातः ।
क्षीणे शशांके तनुभावयुक्ते
मूढान्विते मन्दगृहे सुरेज्ये ॥ ५०५ ॥

चन्द्रमा से अष्टम स्थान में पापग्रह हों, तो वंशच्छेत्ता होवे। लग्न में पापग्रह, चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा, लग्नेश पञ्चम भाव में तथा पञ्चमेश बलहीन हो, तो वंशच्छेदक होवे। क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो, मकर या कुम्भ का बृहस्पति अस्त हो, समस्त पापग्रह त्रिकोण में हों, तो पुत्रसुख नष्ट होवे ॥ ५०४-५०५ ॥

बुद्धिस्थानाधिपे सौम्ये शुभदृष्टिसमन्विते ।
शुभग्रहाणां क्षेत्रे वा बुद्धिमान्नीतिमान्भवेत् ॥ ५०६ ॥

पञ्चमेश शुभग्रह हो या शुभग्रहों से दृष्ट हो या शुभराशि में हो, तो बुद्धिमान् और नीतिमान् होता है ॥ ५०६ ॥

परमोच्चांशके बुद्धिस्थाने नाथेन वीक्षिते ।

शुभग्रहाणां मध्यस्थे तीव्रबुद्धिं समादिशेत् ॥ ५०७ ॥

पञ्चमेश परमोच्चांशक में स्थित हो, पञ्चम भाव को देखता हो तथा शुभग्रहों के मध्य में स्थित हो, तो तीव्रबुद्धि होती है ॥५०७॥

कारके बलसंपूर्णे तदीशे शुभवीक्षिते ।
बुद्धिस्थानेऽथवा सौम्ये तीव्रबुद्धिं समादिशेत् ॥ ५०८ ॥

पञ्चमेश पूर्णबली हो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो या पुत्रभाव में शुभग्रह हो हों, तो वह मनुष्य तीव्रबुद्धि होता है ॥ ५०८ ॥

बुद्धिस्थानाधिपस्यांशराशीशे शुभवीक्षिते ।
वैशेषिकांशके वापि तीव्रबुद्धिं समादिशेत् ॥ ५०९ ॥

पञ्चमेश जिसके नवांशक में हो वह शुभग्रह से दृष्ट हो या वैशेषिकांश में हो, तो तीव्रबुद्धि होती है ॥ ५०९ ॥

कारकस्थितराश्यंशनाथे केन्द्रत्रिकोणगे ।
बुद्धीश्वरेण संदृष्टे तीव्रबुद्धिं समादिशेत् ॥ ५१० ॥

पञ्चमकारक ग्रह जिसके राश्यंशक में हो वह केन्द्र या त्रिकोण में पञ्चमेश से दृष्ट हो, तो तीव्रबुद्धि. पञ्चम राशि शुभग्रहों के बीच में शुभग्रह से युक्त हो अथवा बृहस्पति केन्द्र या त्रिकोण में हो, तो बुद्धिमार्ग में निपुण होवे ॥ ५१० ॥

केन्द्रत्रिकोणपतिसम्बन्धफलम्

केन्द्रत्रिकोणपतयः सम्बन्धेन परस्परम् ।
इतरैरप्रसक्ताश्चेद्विशेषं फलदायकाः ॥ ५११ ॥
लक्ष्मीस्थानं त्रिकोणं च विष्णुस्थानं च केन्द्रकम् ।
तयोः सम्बन्धमात्रेण राजयोगादिकं भवेत् ॥ ५१२ ॥

केन्द्र और त्रिकोण स्थान के स्वामियों का परस्पर सम्बन्ध हो, तो विशेष फल देनेवाले होते हैं। त्रिकोण लक्ष्मी का स्थान है तथा केन्द्र विष्णु का स्थान है। इनके केवल सम्बन्ध से राजयोग आदि होते हैं ॥ ५११-५१२ ॥

धर्मकर्माधिपयोर्व्यत्ययेन सम्बन्धफलम्

धर्मकर्माधिपौ चेति व्यत्यये तावुभौ स्थितौ ।
योगयुक्तस्तदा वाच्यः सर्वसौख्यसमन्वितः ॥ ५१३ ॥

धर्मेश कर्मस्थान में हो और कर्मेश धर्मस्थान में हो, तो सब प्रकार के सुखों से युक्त होता है ॥ ५१३ ॥

ग्रहाणां चतुर्विधसम्बन्धः

प्रथमः स्थानसम्बन्धो दृष्टिजस्तु द्वितीयकः ।
तृतीयस्त्वेकतो दृष्टिश्चतुर्थस्त्वेकतः स्थितिः ॥ ५१४ ॥

स्थानसम्बन्ध, दृष्टिसम्बन्ध, एक ओर से दृष्टिसम्बन्ध और एक स्थान में स्थिति सम्बन्ध ये चार प्रकार के सम्बन्ध होते हैं ॥५१४॥

अन्योन्यगौ तथा स्वे स्वे संयुतावन्यभे स्थितौ ।
पूर्णेक्षितौ मिथो वापि चैकवर्गगतौ यदा ॥ ५१५ ॥

परस्पर एक दूसरे के स्थान में स्थित होने से या एकत्र स्थिति होने से स्थानसम्बन्ध होता है। परस्पर पूर्णदृष्टि होने से या एक वर्ग में होने से दृष्टिसम्बन्ध होता है ॥ ५१५ ॥

रन्ध्रेशो लग्नेशोऽपि चेच्छुभः

भाग्यव्ययाधिपत्वेन रन्ध्रेशो न शुभप्रदः ।
स एव शुभसन्धाता लग्नाधीशोऽपि चेत्स्वयम् ॥ ५१६ ॥

अष्टम स्थान भाग्यस्थान का व्ययस्थान अर्थात् बारहवाँ स्थान है इसलिये अष्टमेश का फल शुभ नहीं होता है। यदि वही अष्टमेश लग्नाधीश भी हो, तो शुभ फल होता है ॥ ५१६ ॥

बृहस्पतिशन्योर्विशेषविचारः

जीवः स्वस्थानहन्ता वदति मुनिवरो दृष्टिरस्य प्रशस्ता ।
सौरिः स्वस्थानपालः परमभयकरी दृष्टिरस्य प्रनष्टा ॥५१७॥

बृहस्पति अपने स्थान की हानि करता है परन्तु उसकी दृष्टि

शुभ होती है। शनि अपने स्थान का पालक होता है परन्तु उसकी दृष्टि परमभयकारक है ॥ ५१७ ॥

केन्द्रात्परतरो जीवः केन्द्रात्परतरः शनिः ।
स्थानहानिकरो जीवः स्थानवृद्धिकरः शनिः ॥ ५१८ ॥

किसी आचार्य के मत से केन्द्र को छोड़कर अन्यत्र स्थित बृहस्पति स्थान की हानि करता है और केन्द्र से अन्यत्र स्थित शनि स्थान की वृद्धि करता है ॥ ५१८ ॥

तातादीनां विचारः

सूर्याच्च नवमे तातो माता चन्द्राच्चतुर्थतः ।
कुजात्तृतीयतो भ्राता मातुलो रिपुभाद्बुधात् ॥ ५१९ ॥
देवेज्यात्पञ्चमात्पुत्रो दैत्येज्याद्द्यूनभात्स्त्रियः ।
मन्दादष्टमतो मृत्युस्तातादीनां विचिन्तयेत् ॥ ५२० ॥

सूर्य से नवें स्थान में पिता का, चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में माता का, मंगल से तृतीय स्थान में भाई का, बुध से छठे स्थान में मामा का, बृहस्पति से पञ्चम स्थान में पुत्र का, शुक्र से सप्तम स्थान में स्त्री का, शनि से अष्टम स्थान में मृत्यु का विचार करना चाहिए ॥ ५१९-५२० ॥

पञ्चमं नवमं चैव विशेषं धनमुच्यते ।
चतुर्थं दशमं चैव विशेषं सुखमुच्यते ॥ ५२१ ॥

धन स्थान का विशेष विचार करना हो, तो पाँचवें और नव स्थान से करे। सुख स्थान का विशेष विचार करना हो, तो चतुर्थ और दशम से करे ॥ ५२१ ॥

नवमेऽपि पितुर्ज्ञानं सूर्याच्च नवमे तथा ॥ ५२२ ॥
तुर्ये तनौ धने लाभे भाग्ये यच्चिन्तनं च तत् ।
चन्द्रात्तुर्ये तनौ लाभे भाग्ये तच्चिन्तयेद् ध्रुवम् ॥ ५२३ ॥

पिता का विचार नवें स्थान से तथा सूर्य से नवें स्थान से करें। जिन बातों का विचार ४। १। २। ११। ९ से करना लिखा है उनका विचार चन्द्रमा से, ४। १। २। ११। ९ स्थानों से भी करे ॥ ५२२-५२३ ॥

भाग्योदयवर्षाणि

द्वाविंशे दिनपे च वर्षकमिते चन्द्रे चतुर्विंशके
अष्टाविंशमितेऽब्दके क्षितिसुते द्वात्रिंशकेऽब्दे बुधे।
जीवे षोडशके भृगौ शरयमे षट्त्रिंशकेऽब्दे शनौ
कर्मेशात्खलु कर्म चैव कथितं भाग्योदयं स्यान्नृणाम्॥५२४॥

सूर्य कर्मेश हो, तो २२वें वर्ष से; चन्द्रमा हो, तो २४वें वर्ष से; मंगल हो, तो २८ वें वर्ष से; बुध हो, तो ३२वें वर्ष से; बृहस्पति हो, तो १६वें वर्ष से; शुक्र हो, तो २५वें वर्ष से; शनि हो, तो ३६वें वर्ष से भाग्योदय जानना चाहिए। ग्रन्थान्तर में उल्लेख है कि राहु हो, तो ४२वें वर्ष से भाग्योदय जानना चाहिए॥ ५२४ ॥

कस्मिन् वयसि सुखम्

उदयात्पञ्चमं यावज्जन्मपत्र्यां शुभग्रहाः।
वयसि प्रथमे सौख्यं प्रब्रुवीच्यं नवं नवम् ॥ ५२५ ॥

जन्मपत्री में लग्न से पञ्चम स्थान पर्यन्त शुभग्रह हों, तो बाल्यावस्था में सुख होता है॥ ५२५ ॥

पञ्चमान्नवमं यावत्तत्र संस्थैः शुभग्रहैः।
तारुण्ये वयसि प्राप्ते सर्वसौख्यं प्रवर्त्तते ॥ ५२६ ॥

जन्मपत्री में पञ्चम स्थान से नवम पर्यन्त शुभग्रह हों, तो युवावस्था में सुख होता है ॥ ५२६ ॥

नवमाद्व्ययभं यावत्स्थितैः सर्वशुभग्रहैः।
वृद्धत्वेऽपि हि सम्प्राप्ते सर्वसौख्यं प्रवर्त्तते ॥ ५२७ ॥

जन्मपत्री में नवम स्थान से व्यय स्थान पर्यन्त शुभग्रह हों, तो वृद्धावस्था में भी सुख होता है ॥ ५२७ ॥

लग्नादातुरीयगाः शुभा आद्ये वयसि सुखम् ।
पञ्चमादष्टमपर्यन्तं शुभा मध्ये वयसि सुखम् ॥
धर्मादारिष्फगाः शुभा अन्त्ये वयसि सुखम् ॥ ५२८ ॥

जैमिनि के मत में लग्न से चौथे स्थान पर्यन्त शुभग्रह हों, तो बाल्यावस्था में सुख मिलता है । पञ्चम स्थान से अष्टम स्थान पर्यन्त शुभग्रह हों, तो मध्यावस्था में सुख मिलता है । नवम स्थान से व्यय स्थान पर्यन्त शुभग्रह हों, तो अन्तावस्था में सुख मिलता है ॥ ५२८ ॥

मीनाद्यं मिथुनान्तकं प्रथमकं प्रोक्तं वयः प्राक्तनैः
कर्काद्यं वणिजान्तकं तरुणतासंज्ञं च मध्यं बुधैः ।
कुम्भान्तं स्थविराह्वयं च बहुभिर्यत्तत्फलैः संयुतं
तत्सौख्यार्थविशेषकं बलयुते नैतद्विशेषाच्छुभम् ५२९॥

किसी-किसी आचार्य के मत में मीन से मिथुन पर्यन्त बाल्यावस्था होती है । कर्क से तुला पर्यन्त तरुण अवस्था होती है । वृश्चिक से कुम्भ पर्यन्त वृद्धावस्था होती है । यदि इन अवस्थाओं में शुभग्रह हों, तो सुख, पापग्रह हों, तो दुःख होते हैं ॥ ५२९ ॥

यस्मिन्वयसि तुंगाश्च मुदिताः स्वगृहे स्थिताः ।
तत्र राज्यं सुखं लक्ष्मीस्तेजो भवति निश्चितम् ॥ ५३० ॥

जिस अवस्था में उच्च, मुदित और स्वगृही ग्रह हों उसमें राज्य, सुख, लक्ष्मी और तेज अवश्य प्राप्त होता है ॥ ५३० ॥

यस्मिन्वयसि मन्दाश्चेत्क्रूरदृष्टा विरश्मिकाः ।
तत्र हानिं रुजं विद्यात्पदभ्रंशः खलागमः ॥ ५३१ ॥

जिस अवस्था में बलहीन, क्रूर से दृष्ट और रश्मि रहित ग्रह हों उसमें हानि, रोग, पदभ्रंश और खलों से मेल होता है ॥ ५३१ ॥

लज्जिताद्यवस्थाफलानि

कर्मस्थाने स्थितो यस्य लज्जि[1]तस्तृषितस्तथा।
क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखभाजनः॥ ५३२॥

जिस मनुष्य के कर्म स्थान में लज्जित, तृषित, क्षुधित अथवा क्षोभित ग्रह हों, तो वह मनुष्य सदा दुःखी रहता है॥ ५३२॥

सुतस्थाने भवेद्यस्य लज्जितो ग्रह एव च।
सुतनाशो भवेत्तस्य एकस्तिष्ठति सर्वदा॥ ५३३॥

जिस मनुष्य के पञ्चम भाव में लज्जित ग्रह हों, तो उसके पुत्र का विनाश होता है और सदा अकेला रहता है॥ ५३३॥

क्षोभितस्तृषितश्चैव सप्तमे यस्य वा भवेत्।
म्रियते तस्य नारी च सत्यमाहुर्द्विजोत्तम॥ ५३४॥

जिस मनुष्य के सप्तम स्थान में क्षोभित अथवा तृषित ग्रह हों, तो निःसन्देह उसकी स्त्री मर जाती है॥ ५३४॥

नवालयारामसुखं नृपत्वं
कलापटुत्वं विदधाति पुंसाम्।
सदार्थलाभं व्यवहारवृद्धिं
फलं विशेषादिह गर्वितस्य॥ ५३५॥

जिसकी जन्मकुण्डली में गर्वित ग्रह हों, तो नवीन मकान, बगीचा, सुख, राज्य, कलाओं में चतुरता, धन तथा व्यापार में लाभ प्राप्त होता है॥ ५३५॥

भवति मुदितयोगे वासशाला विशाला
विमलवसनभूषा भूमियोषासु सौख्यम्।
स्वजनजनविलासो भूमिपागारवासो
रिपुनिवहविनाशो बुद्धिविद्याप्रकाशः॥ ५३६॥

---

[1]—लज्जित आदि अवस्थाओं की परिभाषाएँ पृष्ठ ६७ में दी गई हैं।

मुदित ग्रह हों, तो उत्तम मकान, उत्तम वस्त्र, भूषण, भूमि, स्त्रीसुख, स्वजनविलास, राजगृह में वास, शत्रु का नाश, बुद्धि और विद्या का प्रकाश होता है ॥ ५३६ ॥

संक्षोभितस्यापि फलं विशेषा-
द्दरिद्रजातं कुमतिश्च कष्टम् ।
करोति वित्तक्षयमङ्घ्रिबाधां
धनाप्तिबाधामवनीशकोपात् ॥ ५३७ ॥

क्षोभित ग्रह होने से दारिद्रय, दुर्बुद्धि, कष्ट, धननाश, पाद-पीड़ा और राजा के कोप से धनलाभ में बाधा होती है ॥ ५३७ ॥

क्षुधितखगवशाद्वै शोकमोहादितापः
परिजनपरितापादाधिभीत्या कृशत्वम् ।
कलिरपि रिपुलोकैरर्थबाधा नराणा-
मखिलबलनिरोधो बुद्धिरोधो विषादात् ॥ ५३८ ॥

क्षुधित ग्रह होने से शोक, मोह, ताप, परिवार आदि के लोगों से दुःख, आधिभीति, कृशता, शत्रुओं से विवाद, धन का दुःख, बलहानि तथा बुद्धि का नाश होता है ॥ ५३८ ॥

तृषितखगभवे स्यादंगनासंगमध्ये
भवति मदविकारो दुष्टकार्याधिकारः ।
निजजनपरिवादादर्थहानिः कृशत्वं
खलकृतपरितापो मानहानिः सदैव ॥ ५३९ ॥

तृषित ग्रह होने से व्यभिचार, दुष्ट कार्य का अधिकार, परस्पर के विवादों द्वारा द्रव्यनाश, शरीर में कृशता, दुष्ट जनों से सन्ताप, और मानहानि होती है ॥ ५३९ ॥

स्वबाहुवीर्येण भाग्यवत्तायोगः

मेषे शशांके कलशे शनिश्चे-
च्चान्द्रुर्धनुःस्थश्च भृगुर्मृगस्थः ।

तातस्य वित्तं न कदापि भुंक्ते
स्वबाहुवीर्येण नरो वरेण्यः ॥ ५४० ॥

यदि मेष में चन्द्रमा, कुम्भ में शनि, धन में सूर्य, मकर में शुक्र हो, तो वह मनुष्य पिता के धन को किसी प्रकार से नहीं भोगता है ; किन्तु वह अपनी भुजाओं के बल से श्रेष्ठ होता है ॥ ५४० ॥

चतुर्षु केन्द्रेषु भवन्ति पापा
वित्तस्थिताश्चापि च पापखेटाः ।
नरो दरिद्रोऽतितरां निरुक्तो
भयंकरश्चात्मकुलोद्भवानाम् ॥ ५४१ ॥

चारों केन्द्र में तथा धनभाव में पापग्रह हों, तो अत्यन्त दरिद्री और अपने कुल में भयंकर होता है ॥ ५४१ ॥

राजसीबुद्धियोगः

सुतस्थितो वा यदि मूर्तिवर्त्ती
बृहस्पती राज्यगतः शशांकः ।
नरस्तपस्वी विजितेन्द्रियश्च
स्याद्राजसीबुद्धिविराजमानः ॥ ५४२ ॥

पञ्चमभाव में या लग्न में बृहस्पति हो, दशमभाव में चन्द्रमा हो, तो वह मनुष्य तपस्वी, जितेन्द्रिय और राजसी बुद्धि से शोभायमान होता है ॥ ५४२ ॥

धनवत्तायोगः

कन्यायां च तुलाधरे सुरगुरुर्मेषे वृषे वा भृगुः
सौम्यो वृश्चिकराशिगः शुभखगैर्दृष्टः कुलश्रेष्ठताम् ।
नूनं याति नरो विचारचतुरोऽर्थोदार्थजातादरो
नित्यानन्दमरो गुरौर्वरतरो निष्ठापरो वित्तवान् ॥५४३॥

कन्या या तुला राशि में बृहस्पति, मेष वा वृष राशि में शुक्र, तथा वृश्चिक में बुध हो एवं शुभग्रह से दृष्ट हो, तो कुलकीर्त्ति,

विचार में चतुर, उदार, मान से युक्त, आनन्दयुक्त तथा धनवान् और गुणी होता है ॥ ५४३ ॥

चौर्ययोगः

षष्ठे ससौरौ भवतो बुधारौ
नरो भवेच्चौर्यपरो नितान्तम् ।
स्वकर्मसामर्थ्यविधेर्विशेषा-
त्परांघ्रिपाणीन्कुगुणी छिनत्ति ॥ ५४४ ॥

षष्ठ में बुध, मंगल या शनि हों, तो चोर तथा अपने कर्म-सम्बन्धी सामर्थ्यविधान से पराये हाथ और पैरों का काटनेवाला तथा सर्वथा गुणहीन होता है ॥ ५४४ ॥

वज्रेण मृत्युयोगः

कुम्भे च मीने मिथुनाभिधाने
शरासने स्युर्यदि पापखेटाः ।
कुचेष्टितः स्यात्पुरुषो नितान्तं
वज्रेण नूनं निधनं हि तस्य ॥ ५४५ ॥

यदि कुम्भ, मीन, मिथुन और धन इन राशियों में सब पापग्रह हों, तो वह मनुष्य कुचेष्टा करनेवाला तथा उसकी मृत्यु बिजली के गिरने से होती है ॥ ५४५ ॥

अनेकतीर्थकृद्योगः

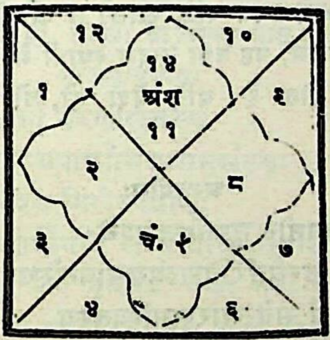
यस्य प्रसूतौ खलु नैधनस्थः
सौम्यग्रहः सौम्यनिरीक्षितश्च ।
तीर्थान्यनेकानि भवन्ति तस्य
नरस्य सम्यङ्मतिसंयुतश्च ॥ ५४६ ॥

अष्टम स्थान में शुभग्रह हों, उनको शुभग्रह देखते हों, तो अनेक तीर्थ करनेवाला और श्रेष्ठ बुद्धियुक्त होता है ॥ ५४६ ॥

नीचकर्मकृद्योगः

बुधत्रिभागेन युते विलग्ने
केन्द्रस्थचन्द्रेण निरीक्षितश्च ।
शिष्टान्वये यद्यपि जातजन्मा
स्यान्नीचकर्मा मनुजः प्रकामम् ॥ ५४७ ॥

बुध के द्रेष्काण में लग्न का उदय हो, केन्द्रस्थ चन्द्रमा द्वारा दृष्ट हो, तो वह मनुष्य उत्तम वंश में उत्पन्न होकर भी नीच कर्म करनेवाला होता है ॥ ५४७ ॥



नेत्रदोषयोगः

धनव्ययस्थानगतश्च शुक्रो
वक्रोऽथवा कर्णरुजं करोति ।
त्रनाथो यदि तत्र संस्थो
दृग्दोपकारी कथितो मुनीन्द्रैः ॥ ५४८ ॥

दूसरे या बारहवें स्थान में शुक्र या मंगल हो, तो कर्णरोग होता है। यदि चन्द्रमा दूसरे या बारहवें स्थान में हो, तो नेत्रदोष होता है ॥ ५४८ ॥

मातृहायोगः

शनिर्धने संयनने यदि स्या-
ल्लग्ने विलग्ने सुरराजमन्त्री ।
सिंहीसुतः सप्तमभावयातो
जातस्य जन्तोर्जननी न जीवेत् ॥ ५४९ ॥

शनि दूसरे स्थान में हो, लग्न में बृहस्पति हो, सातवें स्थान में राहु हो, तो उस पुरुष की माता नहीं जीती है ॥ ५४९ ॥

मृतप्रजायोगः

सन्तानाधिपतेः पञ्च षष्ठरिष्फस्थिते खले ।
पुत्राभावो भवेत्तस्य यदि जातो न जीवति ॥ ५५० ॥

पञ्चमेश से पञ्चम, षष्ठ तथा द्वादश स्थानों में पापग्रह हों, तो पुत्र का अभाव होता है। यदि पैदा हो, तो भी जीवित न रहे ॥ ५५० ॥

अन्धयोगः

मन्दावनीसूनुरवीन्दवश्चे-
द्रन्धारिवित्तव्ययभावसंस्थाः ।
आन्ध्यं भवेत्सारसमन्वितस्य
खेटस्य दोषात्पुरुषस्य नूनम् ॥ ५५१ ॥

शनि, मंगल, सूर्य और चन्द्रमा आठवें, छठे, दूसरे तथा बारहवें स्थान में हों, तो अन्धा होता है ॥ ५५१ ॥

वीर्यविकारयोगः

लग्नस्थिते देवपुरोहितेऽस्ते
शनौ च वाताधिकता नितान्तम् ।
जीवे विलग्नेऽवनिनन्दनेऽस्ते
मदोद्धतः स्यात्पुरुषो विशेषात् ॥ ५५२ ॥

लग्न में बृहस्पति तथा सातवें स्थान में शनि हो, तो मनुष्य

वातरोगी होना है। बृहस्पति लग्न में और सातवें स्थान में मंगल हो, तो वीर्यविकारी होता है ॥ २५२ ॥

स्त्रीसौख्ययोगः

द्यूनेऽर्कजारौ सभृगू शशांका-
दपुत्रभार्यं कुरुतो नरं तौ।
स्यातां नृनार्योश्च खगौ स्मरस्थौ
सौम्येक्षितौ तौ शुभदौ नृनार्योः ॥ ५५३ ॥

चन्द्रमा से सातवें स्थान में सूर्य, मंगल तथा शुक्र हों, तो मनुष्य स्त्री-पुत्र से हीन होता है। यदि सप्तम भाव में पुरुषग्रह बैठे हों और शुभ ग्रहों से दृष्ट हों, तो स्त्री का सौख्य प्राप्त होता है ॥२५३॥

शीघ्रमृत्युयोगः

मेषूरणेऽर्को धरणीसुतस्य
गेहेऽथवार्कात्मजधामसंस्थः।
पापैरनेकैश्च निरीक्ष्यमाणः
प्राणैर्वियोगं स तु याति तूर्णम् ॥ ५५४ ॥

दशम भाव में सूर्य मेष, वृश्चिक, मकर तथा कुम्भ राशि में हो और वह पापग्रह से दृष्ट हो, तो उस मनुष्य की शीघ्र ही मृत्यु होती है ॥ २५४ ॥

ग्रहाणां दानानि

माणिक्यगोधूमसवत्सधेनु-
कौसुम्भवासो गुडहेमताम्रम्।
आरक्तकं चन्दनमम्बुजं च
वदन्ति दानं हि विरोचनाय ॥ ५५५ ॥

माणिक, गेहूँ का आटा, बछड़ा सहित गाय, लाल कपड़ा, गुड़, सोना, ताँबा, लाल चन्दन और कमल ये वस्तुएँ सूर्य के निमित्त दान करना चाहिए ॥ २५५ ॥

सद्वंशपात्रस्थिततण्डुलांश्च
कर्पूरमुक्ताफलशुभ्रवस्त्रम्।
युगोपयुक्तं वृषभं च रौप्यं
चन्द्राय दद्याद्घृतपूर्णकुम्भम् ॥ ५५६ ॥

बाँस की डलिया में चावल, कपूर, मोती, सफ़ेद कपड़ा, बैल या गौ और चाँदी ये वस्तुएँ चन्द्रमा के निमित्त दान करना चाहिए ॥ ५५६ ॥

प्रवालगोधूममसूरिकाश्च
वृषोऽरुणश्चापि गुडः सुवर्णम्।
आरक्तवस्त्रं करवीरपुष्पं
ताम्रं हि भौमाय वदन्ति दानम् ॥ ५५७ ॥

मूँगा, गेहूँ, मसूर, लाल बैल, गुड़, सुवर्ण (सोना), लाल वस्त्र, करवीर का पुष्प और ताँबा ये वस्तुएँ मंगल के निमित्त दान करे ५५७ ॥

चैलं च नीलं कलधौतकांस्यं
मुद्गाज्यगारुत्मकसर्वपुष्पम्।
दासी च दन्तो द्विरदस्य नूनं
वदन्ति दानं विधुनन्दनाय ॥ ५५८ ॥

हरा कपड़ा, सुवर्ण (सोना), कांस्यपात्र, मूँग, घृत, पन्ना, सब तरह के फूल, दासी और हाथी का दाँत ये वस्तुएँ बुध के निमित्त दान करे ॥ ५५८ ॥

शर्करा च रजनी तुरंगमः
पीतधान्यमपि पीतमम्बरम्।
पुष्परागलवणे च काञ्चनं
प्रीतये सुरगुरोः प्रदीयताम् ॥ ५५९ ॥

शक्कर, हल्दी, घोड़ा, चने की दाल, पीला कपड़ा, पुष्पराज-

मणि, नमक और सुवर्ण (सोना) ये वस्तुएँ बृहस्पति के निमित्त दान करे ॥ ५५९ ॥

चित्राम्बरं शुभ्रतरस्तुरंगो
धेनुश्च वज्रं रजतं सुवर्णम् ।
सुतण्डुलाज्योत्तमगन्धयुक्तं
वदन्ति दानं भृगुनन्दनाय ॥ ५६० ॥

चित्र-विचित्र वस्त्र, सफ़ेद घोड़ा, गाय, हीरा, चाँदी, सुवर्ण (सोना), चावल, घी और गन्धयुक्त पुष्प ये वस्तुएँ शुक्र के निमित्त दान करे ॥ ५६० ॥

माषाश्च तैलं विमलेन्दुनील-
स्तिलाः कुलित्था महिषी च लोहम् ।
सदक्षिणं चेति वदन्ति नूनं
दुष्टाय दानं रविनन्दनाय ॥ ५६१ ॥

उड़द, तेल, नीलमणि, तिल, कुल्थी, भैंस, लोहा और दक्षिणा ये वस्तुएँ विरुद्ध शनि के निमित्त दान करे ॥ ५६१ ॥

गोमेदरत्नं च तुरंगमश्च
सुनीलचैलानि च कम्बलानि ।
तिलाश्च तैलं खलु लोहमिश्रं
स्वर्भानवे दानमिदं वदन्ति ॥ ५६२ ॥

गोमेदरत्न, काला घोड़ा, नीला कपड़ा, कम्बल, तिल, तैल और लोहा ये वस्तुएँ राहु के निमित्त दान करे ॥ ५६२ ॥

वैडूर्यरत्नं सतिलं च तैलं
सुकम्बलश्चापि मदो मृगस्य ।
शस्त्रं च केतोः परितोषहेतो-
रुदीरितं दानमिदं मुनीन्द्रैः ॥ ५६३ ॥

वैडूर्य मणि, तिल, तेल, कम्बल, कस्तूरी और तलवार ये वस्तुएँ केतु के निमित्त दान करे ॥ ५६३ ॥

ग्रहाणां जपसंख्या

रवेः सप्त सहस्राणि चन्द्रस्यैकादशैव तु
भौमे दश सहस्राणि बुधे चाष्टसहस्रकम् ॥ ५६४ ॥
एकोनविंशतिर्जीवे शुक्र एकादशैव तु ।
त्रयोविंशच्छनौ चैव राहोरष्टादशैव तु ॥ ५६५ ॥
केतौ सप्त सहस्राणि जपसंख्या प्रकीर्तिता ॥ ५६६ ॥
कलौ संख्या चतुर्गुणा ।

सूर्य का ७०००, चन्द्रमा का ११०००, मंगल का १००००, बुध का ८०००, बृहस्पति का १६०००, शुक्र का ११०००, शनि का २३०००, राहु का १८०००, केतु का ७००० ।

कलियुग में उक्त संख्या से चौगुना करना चाहिए ॥ ५६४-५६६ ॥

ग्रहतुष्टयै धारणीयपदार्थाः

धार्यं तुष्टयै विद्रुमं भौमभान्वो
रूप्यं शुक्रेन्द्वोर्हाटकं चेन्दुजस्य ।
मुक्ता सूरेर्लौहमर्कात्मजस्य
लाजावर्तः कीर्तितः शेषयोश्च ॥ ५६७ ॥

सूर्य और मंगल की सन्तुष्टि के लिये मूँगा, शुक्र और चन्द्रमा के लिये चाँदी, बुध के लिये सुवर्ण, बृहस्पति के लिये मोती, शनि के लिये लोहा, राहु और केतु के लिये लाजावर्त्त, वैदूर्य ये पदार्थ ग्रहों के प्रसन्नतार्थ साधारण मनुष्यों को धारण करना चाहिए ॥ ५६७ ॥

माणिक्यं तरणेः सुजात्यममलं मुक्ताफलं शीतगो-
र्माहेयस्य च विद्रुमं मरकतं सौम्यस्य गारुत्मतम् ।

देवेज्यस्य च पुष्परागमसुराचार्यस्य वज्रं शने-
नीलं निर्मलमन्ययोश्च गदिते गोमेदवैदूर्यके ॥ ५६८ ॥

सूर्य के लिये अच्छी जाति का निर्मल मणि, चन्द्रमा के लिये मोती, मंगल के लिये मूँगा, बुध के लिये मरकत मणि (पन्ना), बृहस्पति के लिये गारुत्मत (पन्ना), शुक्र के लिये पुष्पराज (पुखराज), शनि के लिये हीरा, राहु के लिये गोमेद (पीला रत्न) और केतु के लिये वैदूर्य (लाजावर्त) ये पदार्थ ग्रहों के प्रसन्नतार्थ धनवानों को धारण करना चाहिए ॥ ५६८ ॥

ग्रहदोषशान्त्यर्थं स्नानौषधयः

सिद्धार्थलोध्ररजनीद्वयभद्रमुस्ता
चान्द्रं रजः सफलिनी सुरुमा विमिश्रैः ।
स्नानं कुरुष्व खगदोषनिवारणाय
सर्वे ग्रहा दिनकरप्रमुखाः शुभाः स्युः ॥ ५६९ ॥

सिद्धार्थ (सरसों) लोध (लोधा), दोनों हल्दी, भद्र (देवदारु), मुस्ता (नागरमोथा), कपूर, इन्द्रपुष्पी और सुरमा इन सबको जल में मिलाकर ग्रहों के दोष निवारणार्थ स्नान करना चाहिए। इस प्रकार स्नान करने से सूर्य आदि सब ग्रह शुभ फल देनेवाले होते हैं ॥ ५६९ ॥

ग्रहाणां दक्षिणा

धेनुः शङ्खोऽरुणरुचिवृषः काञ्चनं पीतवस्त्रं
श्वेतश्चाश्वः सुरभिरसिता कृष्णलोहं महाजः ।
सूर्यादीनां मुनिभिरुदिता दक्षिणास्तु ग्रहाणां
स्नानैर्दानैर्हवनबलिभिस्तेऽत्र तुष्यन्ति यस्मात् ॥ ५७० ॥

धेनु, शंख, लाल बैल, सुवर्ण (सोना), पीला वस्त्र, सफ़ेद घोड़ा, काली गौ, लोहा और बड़ा बकरा ये पदार्थ क्रम से सूर्य

आदि ग्रहों की दक्षिणाएँ जानना चाहिए । स्नान, दान, होम और बलि से सूर्य आदि ग्रह प्रसन्न होते हैं ॥ ५७० ॥

ग्रहाणां दानकालः

बुधस्य घटिकाः पञ्च सौरेर्मध्याह्नमेव च ।
राहुकेत्वोश्च रात्रौ च जीवेन्द्वोश्चैव सन्ध्ययोः ॥ ५७१ ॥
उदये भृगुरव्योश्च भौमस्य घटिकाद्वये ।
समे काले न कर्त्तव्यं दातृणां प्राणनाशनम् ॥ ५७२ ॥

प्रातःकाल पाँच घड़ी दिन बीतने पर बुध का दान, मध्याह्न में शनि का दान, रात में राहु तथा केतु का दान, दोनों सन्ध्याओं के समय बृहस्पति तथा चन्द्रमा का दान, सूर्योदय के समय सूर्य तथा शुक्र का दान और दो घड़ी दिन बीतने पर मंगल का दान करना चाहिए । तात्पर्य यह कि सब ग्रहों का दान एक समय न करना चाहिए । एक समय दान करने से दान देनेवाले के प्राणों का नाश होता है ॥ ५७१-५७२ ॥

ग्रहाणां बलसमयः

प्राग्रात्रिभागेऽतिबली शशाङ्कः
शुक्रो निशार्धेऽवनिजो दिनान्ते ।
प्रातर्बुधो मध्यदिने च सूर्यः
सर्वत्र जीवोऽर्कसुतो दिनान्ते ॥ ५७३ ॥

रात्रि के प्रथम भाग में चन्द्रमा, आधी रात के समय शुक्र, दिन के अन्त में मंगल, प्रातःकाल के समय बुध, दोपहर के समय सूर्य, सब समयों में बृहस्पति और दिन के अन्त में शनि बलवान् होते हैं ॥ ५७३ ॥

ग्रहाणां फलपाकसमयः

राशिप्रवेशे सूर्यारौ मध्ये शुक्रबृहस्पती ।
प्रान्त्ये तु शनिशीतांशू फलदः सर्वदा बुधः ॥ ५७४ ॥

राशि में प्रवेश करने के समय सूर्य और मंगल, राशि के मध्य में शुक्र और बृहस्पति, राशि के अन्त में शनि और चन्द्रमा तथा बुध सर्वदा अपना फल देता है ॥ ५७४ ॥

गन्तव्यराशेः पुरा फलदा ग्रहाः

सूर्यारसौम्यास्फुजितोऽक्षनाग-
सप्ताद्रिघस्त्रान् विधुरग्निनाडीः ।
तमोयमेज्यास्त्रिरसाशिवमासान्
गन्तव्यराशेः फलदाः पुरस्तात् ॥ ५७५ ॥

दूसरी राशि में जाने से पाँच दिन पहले सूर्य, आठ दिन पहले मंगल, सात दिन पहले बुध, नव दिन पहले शुक्र, तीन घड़ी पहले चन्द्रमा, तीन महीने पहले राहु, छः महीने पहले शनि तथा दो महीने पहले बृहस्पति फल देते हैं ॥ ५७५ ॥

चौथा अध्याय समाप्त ।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

पाँचवाँ अध्याय

मङ्गलाचरणम्

पादौ च नत्वा गिरिजेशसूनो-
गुरोर्नितान्तं मनसा निगृह्य ।
अनेकग्रन्थानवलोक्य सम्यक्
स्त्रीजातकं वच्मि जनोपकृत्यै ॥ १ ॥
प्रमाणभूतं वचनं च तेषां
ज्योतिर्निबन्धार्णवकारकाणाम् ।
यथाप्रदेशं विनियस्य तत्तद्
भाषानिबद्धं प्रकटीकरोमि ॥ २ ॥

स्त्रीजातकप्रकरणम्

यद्यपि स्त्रीजातक के विषय में आचार्यों का मत है कि स्वामी की कुण्डली के द्वारा ही स्त्रियों के फल ज्ञात हो जाते हैं, तो भी संक्षेप से ज्योतिषशास्त्र के अनुसार स्त्रीकुण्डली का फल नीचे लिखा जाता है।

तनुस्थानगतग्रहफलम्

मूर्च्छां करोति विधवां दिनकृत्कुजश्च
राहुर्विनष्टतनयां रविजो दरिद्राम् ।

शुक्रः शशांकतनयस्तु गुरुश्च साध्वी-
मायुः क्षयं च कुरुतेऽत्र च शर्वरीशः ॥ १ ॥

लग्न में स्थित सूर्य वैधव्य, चन्द्रमा अल्पायु, मंगल वैधव्य, बुध, बृहस्पति और शुक्र पातिव्रत्य, शनि दारिद्र्य, राहु और केतु पुत्र का नाश करते हैं ॥ १ ॥

धनस्थानगतग्रहफलम्

कुर्वन्ति भास्करशनैश्चरराहुभौमा
दारिद्र्यदुःखमतुलं नियतं द्वितीये ।
वित्तेश्वरीमविधवां गुरुशुक्रसौम्या
नारीं प्रभूततनयां कुरुते शशांकः ॥ २ ॥

धनभाव में स्थित सूर्य दारिद्र्य और दुःख, चन्द्रमा बहुपुत्रता, मंगल दारिद्र्य और दुःख, बुध, बृहस्पति तथा शुक्र सौभाग्य, शनि, राहु तथा केतु दुःख और दारिद्र्य करते हैं ॥ २ ॥

सहजस्थानगतग्रहफलम्

सूर्येन्दुभौमगुरुशुक्रबुधास्तृतीये
कुर्युः स्त्रियं बहुसुतां धनभागिनीं च ।
सत्यं दिवाकरसुतः कुरुते धनाढ्यां
लक्ष्मीं ददाति नियतं किल सैंहिकेयः ॥ ३ ॥

तृतीयभाव में स्थित सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु तथा शुक्र धन और पुत्र, शनि, राहु तथा केतु बहुत धन देते हैं ॥ ३ ॥

सुहृत्स्थानगतग्रहफलम्

स्वल्पं पयो भवति सूर्यसुते चतुर्थे
दौर्भाग्यमुष्णकिरणः कुरुते शशी च ।
राहुर्विनष्टतनयां क्षितिजोऽल्पवीजां
सौख्यान्वितां भृगुसुरेज्यबुधाश्च कुर्युः ॥ ४ ॥

चतुर्थभाव में स्थित सूर्य दारिद्र्य, चन्द्रमा तथा भौम रोग, बुध, गुरु तथा शुक्र सर्वसौख्य, शनि अल्प दुग्ध, राहु तथा केतु पुत्रनाश करते हैं ॥ ४ ॥

सुतस्थानगतग्रहफलम्

नष्टात्मजां रविकुजौ खलु पञ्चमस्थौ
चन्द्रात्मजो बहुसुतां गुरुभार्गवौ च ।
राहुर्ददाति मरणं रविजस्तु रोगं
कन्याप्रसूतिनिरतां कुरुते शशाङ्कः ॥ ५ ॥

पञ्चमभाव में स्थित सूर्य पुत्रनाश, चन्द्रमा बहुकन्या, मंगल पुत्रनाश, बुध, बृहस्पति तथा शुक्र बहुपुत्र, शनि रोग, राहु तथा केतु मृत्यु करते हैं ॥ ५ ॥

रिपुस्थानगतग्रहफलम्

षष्ठस्थिताः शनिदिवाकरराहुभौमा
जीवस्तथा बहुसुतां धनभागिनीं च ।
चन्द्रः करोति विधवामुशना दरिद्रां
वेश्यां शशाङ्कतनयः कलहप्रियां च ॥ ६ ॥

षष्ठभाव में स्थित सूर्य, मंगल, बृहस्पति, शनि तथा राहु सुत और धन, चन्द्रमा वैधव्य, शुक्र, बुध कलहयुक्त दरिद्रता या वेश्या करते हैं ॥ ६ ॥

जायास्थानगतग्रहफलम्

सौरारजीवबुधराहुरवीन्दुशुक्रा
दद्यु रसह्य मरणं खलु सप्तमस्थाः ।
वैधव्यबन्धनभयं क्षयवित्तनाशं
व्याधिप्रवासमरणं नियतं क्रमेण ॥ ७ ॥

सप्तमभाव में स्थित सूर्य रोग तथा मृत्यु, चन्द्रमा प्रवासिनी तथा मृत्यु, मंगल विधवा तथा मृत्यु, बुध क्षय तथा मृत्यु, बृहस्पति

भय तथा मृत्यु, शुक्र मृत्यु, शनि वैधव्य तथा मृत्यु, राहु और केतु धननाश तथा मृत्यु करते हैं ॥ ७ ॥

मृत्युस्थानगतग्रहफलम्

स्थानेऽष्टमे गुरुबुधौ नियतं वियोगं
मृत्युं शशी भृगुसुतश्च तथैव राहुः ।
सूर्यः करोति विधवां धनिनीं कुजश्च
सूर्यात्मजो बहुसुतां पतिवल्लभां च ॥ ८ ॥

अष्टमभाव में स्थित सूर्य वैधव्य, चन्द्रमा मरण, मंगल धनयुक्त, बुध स्वजनवियोग, बृहस्पति स्वजनवियोग, शुक्र, राहु तथा केतु मरण और शनि पतिप्रेम तथा बहुपुत्र करते हैं ॥ ८ ॥

धर्मस्थानगतग्रहफलम्

धर्मस्थिता भृगुदिवाकरभूमिपुत्र-
जीवाः सुधर्मनिरतां शशिजः सुभोगाम् ।
राहुश्च सूर्यतनयश्च करोति वन्ध्यां
नारीं प्रसूततनयां कुरुते शशाङ्कः ॥ ९ ॥

नवमभाव में स्थित सूर्य बृहस्पति तथा शुक्र धर्मवृद्धि, चन्द्रमा पुत्र, मंगल धर्मप्रेम, बुध उत्तम भोग, शनि राहु तथा केतु वन्ध्याकारक होते हैं ॥ ९ ॥

कर्मस्थानगतग्रहफलम्

राहुर्नभःस्थलगतो विधवां करोति
पापे परां दिनकरश्च शनैश्चरश्च ।
मृत्युं कुजोऽर्थरहितां कुटिलां च वन्ध्यां
शेषा ग्रहा धनवतीं बहुवल्लभां च ॥ १० ॥

दशम भाव में स्थित सूर्य, चन्द्रमा तथा शनि पापकारक, मंगल मृत्यु, अर्थनाश, कुटिला तथा वन्ध्या, बुध, बृहस्पति तथा शुक्र धन और प्रतिष्ठा, राहु तथा केतु वैधव्यकारक होते हैं ॥ १० ॥

आयस्थानगतग्रहफलम्

आये रविर्बहुसुतां धनिनीं शशाङ्कः
पुत्रान्वितां क्षितिसुतो रविजो धनाढ्याम् ।
आयुष्मतीं सुरगुरुर्भृगुजः सुपुत्रीं
राहुः करोति शुभगां सुखिनीं बुधश्च ॥११॥

ग्यारहवें भाव में स्थित सूर्य, मंगल तथा शुक्र पुत्रप्रद, चन्द्रमा धनप्रद, बुध सौख्यप्रद, बृहस्पति आयुप्रद, शनि धनप्रद, राहु और केतु सौभाग्यप्रद होते हैं ॥ ११ ॥

अन्त्ये धनव्ययवतीं दिनकृद्दरिद्रां
वन्ध्यां कुजः पररतां कुटिलां च राहुः ।
साध्वीं सितेज्यशशिजा बहुपुत्रपौत्र-
युक्तां विधुः प्रकुरुते व्ययगो दिनान्ध्याम्॥१२॥

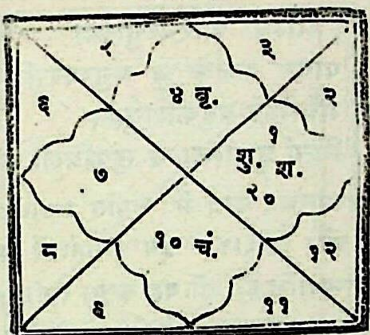
बारहवें भाव में स्थित सूर्य दारिद्रय तथा धनव्यय, चन्द्रमा दिवान्ध, मंगल वन्ध्या तथा पररता (व्यभिचारिणी), बुध पुत्र तथा पौत्रसौख्य और पातिव्रत्य, बृहस्पति तथा शुक्र पातिव्रत्य और पुत्रादि सौख्य, शनि दारिद्रय और राहु तथा केतु कुटिला-कारक होते हैं ॥ १२ ॥

स्त्रीणां राजयोगाः

मूर्त्तौ सुरेज्योऽस्तगतः शशाङ्को-
ऽथवा स्ववर्गे गगने च शुक्रः ।
जातान्त्यजानामपि जातिरत्र
योगे भवेत्पार्थिववल्लभा च ॥ १३ ॥

जिस स्त्री के जन्मकाल के समय लग्न में बृहस्पति, सप्तम भाव में चन्द्रमा, दशम भाव में अपने वर्ग का शुक्र हो, तो अन्त्यज जाति में भी उत्पन्न हुई वह कन्या राजप्रिया होती है ॥ १३ ॥

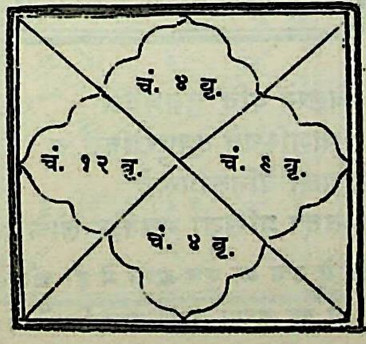
उदाहरणम्



एकोऽपि जीवः षड्वर्गशुद्धः
केन्द्रे यदा चन्द्रनिरीक्षितश्च ।
राज्ञी भवेत्स्त्री सधनात्र जाता
वरेभदानार्द्रनितम्बबिम्बा ॥ १४ ॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में केवल बृहस्पति ही, षड्वर्ग में शुद्ध होकर १।४।७।१० इनमें से किसी भी स्थान में बैठा हो और उसे चन्द्रमा देखता हो, तो वह कन्या रानी, धनवती और श्रेष्ठ हाथी के मद से आर्द्रित नितम्बबिम्बवाली होती है ॥ १४ ॥

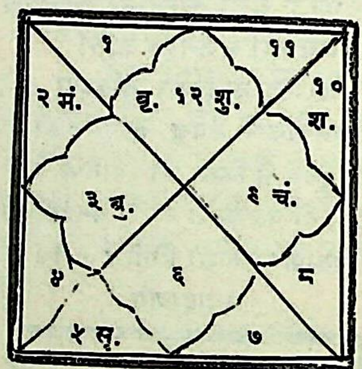
उदाहरणम्



केन्द्रेषु सौम्या अरिबन्धुलाभे
पापाः कलत्रे च मनुष्यराशिः।
राज्ञी भवेत्स्त्री बहुकोशयुक्ता
नित्यं प्रशान्ता च सुपुत्रिणी स्यात् ॥ १५ ॥

जिस स्त्री के जन्मसमय केन्द्र में अर्थात् १।४।७।१० इन स्थानों में शुभग्रह हों और ३।६।११ इन स्थानों में पापग्रह हों तथा सप्तम भाव में मनुष्यराशि हो, तो वह कन्या रानी, बहुत खज़ानों-वाली, शान्तस्वरूप सुन्दर तथा पुत्रोंवाली होती है ॥ १५ ॥

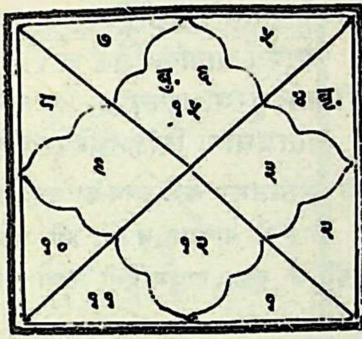
उदाहरणम्



बुधे विलग्ने यदि तुङ्गभाजि
लाभस्थिते देवपुरोहिते च।
नरेन्द्रपत्नी वनिताप्रसक्ते
तदा प्रसिद्धा भवतीह लोके ॥ १६ ॥

जिसके जन्माङ्ग में उच्च का बुध लग्न में हो और ग्यारहवें भाव में बृहस्पति हो, तो वह कन्या रानी तथा स्त्रियों में प्रसिद्ध होती है ॥ १६ ॥

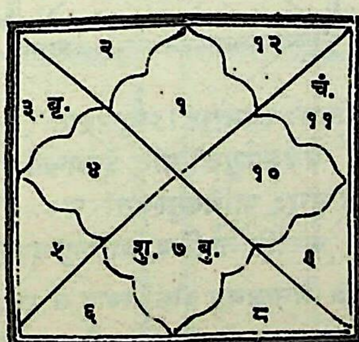
उदाहरणम्



लाभाश्रितः शीतकरो भृगुश्च
कलत्रगः सोमसुतेन युक्तः ।
जीवेन दृष्टः कुरुतेऽत्र राज्ञीं
लोकैः स्तुतां वन्दिवरैः सदैव ॥ १७ ॥

जिस स्त्री के जन्मसमय ग्यारहवें भाव में चन्द्रमा, सप्तम भाव में बुधयुक्त शुक्र बृहस्पति से दृष्ट हो, तो वह स्त्री रानी और संसार में वन्दियों से स्तुति की जानेवाली होती है ॥ १७ ॥

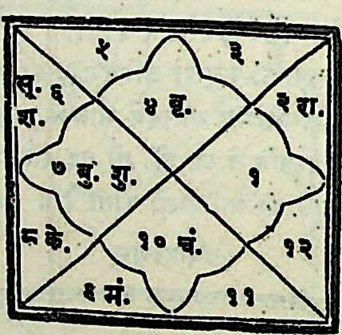
उदाहरणम्



कर्कोदये सप्तमगे शशाङ्के
चतुष्टयं पापविवर्जितं च।
राज्ञी भवेद्भूरिगजाश्वयुक्ता
पतिप्रधाना विजितारिपक्षा ॥ १८ ॥

जिस कन्या के जन्मसमय कर्क लग्न का उदय हो, सप्तम भाव में चन्द्रमा हो, केन्द्र में पापग्रह न हों, तो वह कन्या रानी, बहुत हाथी-घोड़ों से युक्त, शत्रुमर्दिनी तथा पति की प्यारी होती है ॥ १८ ॥

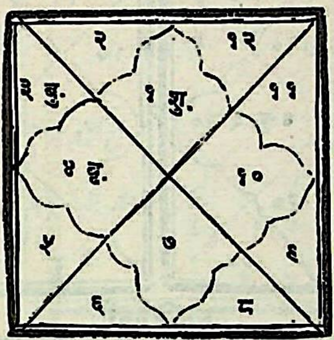
उदाहरणम्



तृतीयगः सोमसुतोऽम्बुसंस्थः
षड्वर्गशुद्धो यदि देवमन्त्री।
लग्ने भृगुः पार्थिवतुल्यतां च
करोति नारीं बहुवाजिवृन्दाम् ॥ १९ ॥

जिस कन्या के जन्मसमय तीसरे स्थान में बुध, चतुर्थ भाव में षड्वर्गशुद्ध बृहस्पति, लग्न में शुक्र हो, तो वह कन्या रानी और चतुरंगिणी सेना से युक्त होती है ॥ १९ ॥

उदाहरणम्

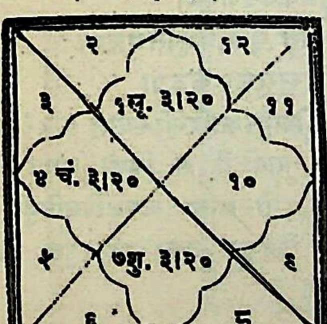


षड्वर्गशुद्धैस्त्रिभिरेवमन्त्री
चतुर्भिरीशस्य तथैव पत्नी।
पञ्चादिभिर्दिव्यविमानभाजा
त्रैलोक्यनाथप्रमदा तदा स्यात् ॥ २० ॥

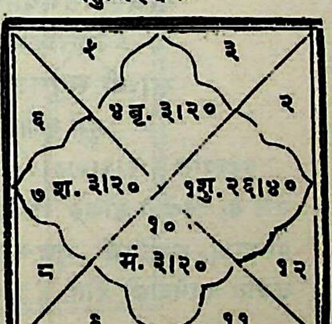
षड्वर्गशुद्ध तीन ग्रह उच्च में हों, तो युवराजपत्नी, चार ग्रह हों, तो राजपत्नी, पाँच ग्रह हों, तो महाराजपत्नी, छः या सात ग्रह हों, तो त्रिलोकीनाथ की पत्नी होती है ॥ २० ॥

उदाहरणानि

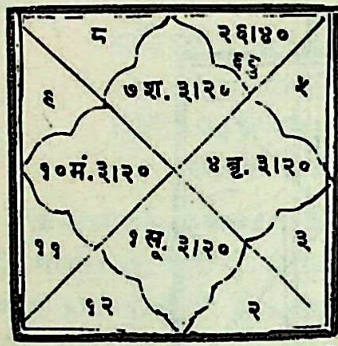
त्रिभिरुच्चगैः



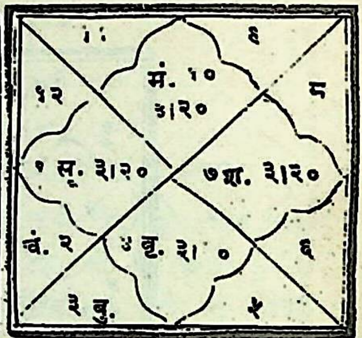
चतुर्भिरुच्चगैः



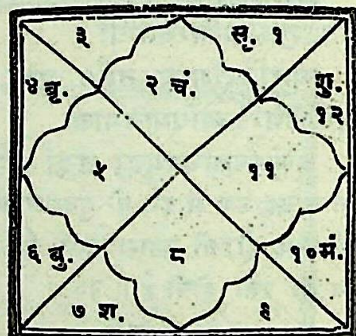
पञ्चभिरुच्चगैः



षड्भिरुच्चगैः



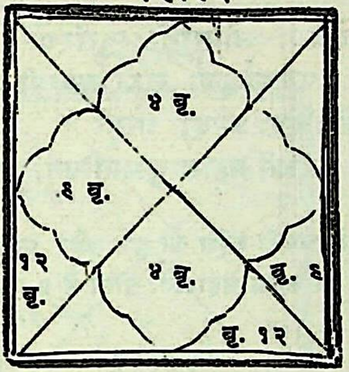
सप्तभिरुच्चगैः



वाचस्पतिर्नवमपञ्चमकण्टकस्थो
जाताङ्गना भवति पूर्णविभूतियुक्ता।
साध्वी सुपुत्रजननी सगुणा सुरूपा
नूनं कुलद्वयमहोन्नतिकारिणी स्यात् ॥ २१ ॥

बृहस्पति ९।५।१।४।७।१० इन स्थानों में से किसी स्थान में उच्च वा स्वक्षेत्री होकर स्थित हो, तो कन्या सकलविभूतियुक्त, पतिव्रता, सत्पुत्रिणी, गुण-रूपयुक्त, पितृकुल तथा श्वशुरकुल की उन्नति करनेवाली होती है ॥ २१ ॥

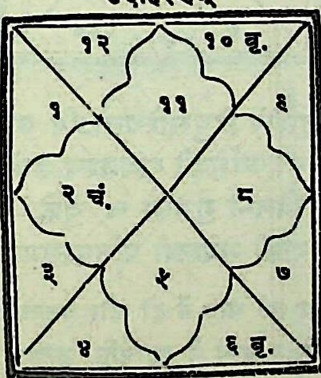
उदाहरणम्



तुङ्गाश्रिते शीतकरे सुखस्थे
जीवेन दृष्टे परिपूर्णदेहे ।
विद्याधरी चात्र भवेत्प्रधाना
राज्ञी जितारिर्बहुपुत्रपौत्रा ॥ २२ ॥

उच्चस्थित परिपूर्ण चतुर्थस्थित चन्द्रमा बृहस्पति से दृष्ट हो, तो कन्या स्त्रियों में प्रधान, विद्यायुक्त, शत्रुरहित, बहुपुत्रपौत्रसम्पन्न तथा रानी होती है ॥ २२ ॥

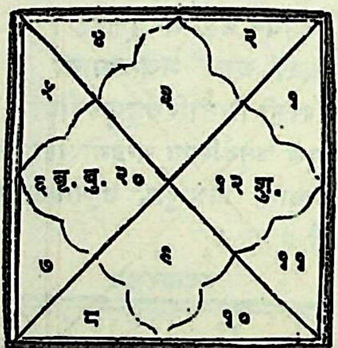
उदाहरणम्



स्वक्षेत्रगः सोमसुतोऽम्बुसंस्थः
षड्वर्गशुद्धः सुरराजमन्त्री ।
शुक्रेण दृष्टः प्रमदां प्रसूते
राज्ञीं महाशब्दसमन्वितां च ॥ २३ ॥

चतुर्थ भाव में अपनी राशि का बुध और षड्वर्गशुद्ध बृहस्पति शुक्र से दृष्ट हो, तो कन्या महारानी होती है ॥ २३ ॥

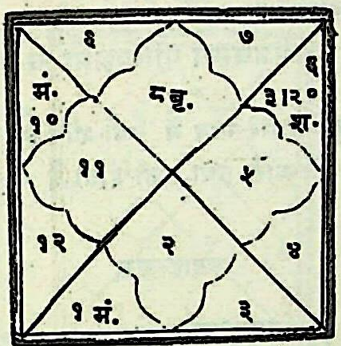
उदाहरणम्



वक्रस्तृतीये रिपुसंस्थितोऽपि वा
षड्वर्गशुद्धो रविजश्च लाभे ।
स्थिरे विलग्ने गुरुणा च युक्ते
राज्ञी भवेत्स्त्री पतिवल्लभा च ॥ २४ ॥

मंगल तृतीय वा छठे भाव में हो और षड्वर्गशुद्ध शनि ग्यारहवें भाव में हो तथा स्थिर लग्न में बृहस्पति जन्मलग्न में स्थित हो, तो कन्या पतिप्यारी तथा रानी होती है ॥ २४ ॥

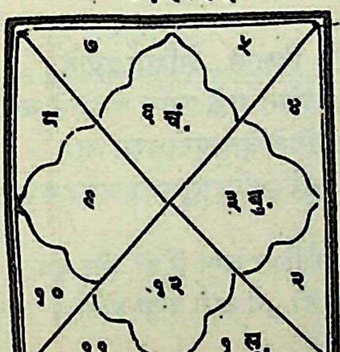
उदाहरणम्



आयुस्थितस्तीक्ष्णकरः स्वतुङ्गे
मूर्त्तौ शशाङ्कः परिपूर्णदेहः ।
सौम्योऽम्बरस्थः कुरुते च राज्ञीं
पतिप्रधानां बहुपुत्रपौत्राम् ॥ २५ ॥

अष्टम भाव में उच्च का सूर्य और पूर्ण चन्द्र लग्न में हो और दशम भाव में बुध हो, तो कन्या पुत्रपौत्रयुक्त, पतिप्यारी तथा रानी होती है ॥ २५ ॥

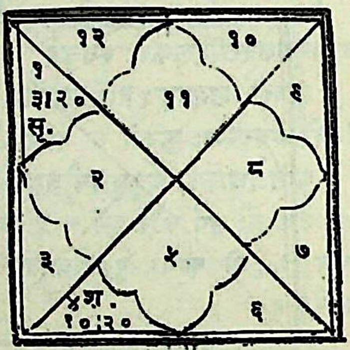
उदाहरणम्



षड्वर्गशुद्धे दिवसाधिनाथे
तृतीयगे सूर्यसुते रिपुस्थे ।
भवेन्नृजाता प्रमदा सुराज्ञी
धर्मप्रधाना पतिवल्लभा च ॥ २६ ॥

षड्वर्गशुद्ध सूर्य तीसरे भाव में तथा शनि छठे भाव में हो, तो स्त्री धर्मशीला, पतिप्यारी तथा रानी होती है ॥ २६ ॥

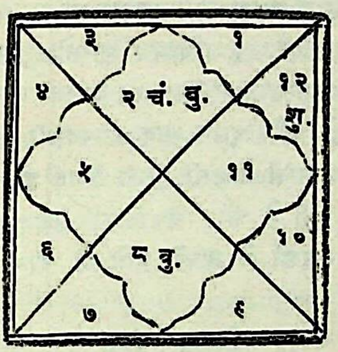
उदाहरणम्



स्थिरे विलग्ने शशितुङ्गपाते
बुधेन युक्तेऽप्यथ वीक्षिते वा ।
लाभस्थिते दैत्यपुरोधसा वा
वरेभवृन्दानुगता तदा स्यात् ॥ २७ ॥

उच्च का चन्द्रमा स्थिर लग्न में हो और बुध से दृष्ट वा युक्त हो तथा लाभ में शुक्र हो, तो नारी रानी होती है ॥ २७ ॥

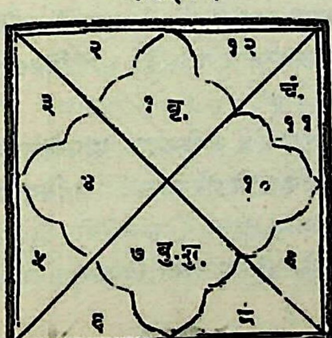
उदाहरणम्



लाभस्थितः शीतकरो भृगुश्च
कलत्रगः सोमसुतेन युक्तः ।
जीवेन दृष्टो भवतीह राज्ञी
ख्याता धरायां सकलैः स्तुता च ॥ २८ ॥

ग्यारहवें भाव में चन्द्रमा और सप्तम में शुक्र बुधसहित तथा बृहस्पति से दृष्ट हो, तो वह कन्या पृथिवी में विख्यात रानी होती है ॥ २८ ॥

उदाहरणम्



जीवो वा भार्गवो वा परमबलयुतः कामभावेषु यासां
कर्मेशो धर्मलाभे तनुसुखतनये कर्मकोशे बलस्थः।
तासां चन्द्राननानां कमलदलदृशां नायिकारूपयुक्ता
राजन्ते राजलक्ष्म्या मणिमयशिविरे दासभावे सदैव२९

जिन स्त्रियों के जन्माङ्ग में बृहस्पति वा शुक्र अत्यन्त बली होकर सातवें भाव में हों और दशम भाव का स्वामी ९। ११। १। ४ ५। १०। २ इन भावों में बली होकर स्थित हों, तो उन स्त्रियों के पति रूपवान् होते हैं और वे स्त्रियाँ सर्वगुणसम्पन्ना रानी होकर बड़े-बड़े महलों में अपने पति को दास बनाकर रहती हैं॥ २९॥

विषाङ्गनायोगः

मन्दाश्लेषाद्वितीया यदि तदनु कुजे सप्तमी वारुणर्क्षे
द्वादश्यां च द्विदैवं दिनमणिदिवसे यज्जनिः सा विषाख्या।
धर्मस्थो भूमिसूनुस्तनुसदनगतः सूर्यसूनुस्तदानीं
मार्त्तण्डः सूनुयातो यदि जनिसमये सा कुमारी विषाख्या३०

१—शनि, आश्लेषा नक्षत्र, द्वितीया तिथि;
२—मंगल, शतभिषा नक्षत्र, सप्तमी तिथि;
३—रविवार, विशाखा नक्षत्र, द्वादशी तिथि;

इन तीनों योगों में उत्पन्न कन्या विषकन्या कहलाती है। एवं जिस कन्या के नवम भाव में मंगल, लग्न में शनि, पञ्चम में सूर्य हों, तो वह भी विषकन्या होती है इन विषकन्याओं के साथ विवाह न करे॥ ३०॥

जनौ लग्ने रिपुक्षेत्रे संस्थितः पापखेचरः।
द्वौ सौम्यावपि योगेऽस्मिन्सञ्जाता विषकन्यका॥ ३१॥

जिस कन्या के जन्म लग्न में शत्रुक्षेत्री दो पापग्रह हों और लग्न में शुभग्रह हो, तो वह कन्या विषकन्या कहलाती है॥ ३१॥

अस्याः परिहारः

लग्नाद्विधोर्वा यदि जन्मकाले
शुभग्रहो वा मदनाधिपश्च ।
द्यूनस्थितो हन्त्यनपत्यदोषं
वैधव्यदोषं च विषाङ्गनाख्यम् ॥ ३२ ॥

लग्न से वा चन्द्रमा से शुभग्रह वा सप्तम का स्वामी सप्तम में स्थित हो, तो विधवा दोष, निःसन्तान दोष और विषाङ्गना दोष को नाश करता है ॥ ३२ ॥

अथवा—

लग्नादिन्दोः शुभो वा यदि मदनपतिर्द्यूनयायी विषाख्या ।
दोषं चैवानपत्यं तदनु च नियतं हन्ति वैधव्यदोषम् ॥३३॥

यदि लग्न से अथवा चन्द्रमा से सातवें स्थान में सातवें स्थान का स्वामी या कोई शुभग्रह स्थित हो, तो विषाख्या दोष (सम्बन्धियों का नाश करनेवाला) अनपत्यता दोष (सन्तान न होना) और वैधव्य दोष इन तीनों दोषों को नाश करता है। यह जातकालङ्कार की उक्ति है ॥ ३३ ॥

परिहारान्तरम्

सावित्र्याश्च व्रतं कृत्वा वैधव्यादिनिवृत्तये ।
अश्वत्थादिभिरुद्वाह्य दद्यात्तां चिरजीविने ॥ ३४ ॥

वैधव्यादि दोष शान्त्यर्थ सावित्री का व्रत (जो विधान मुहूर्त्तचिन्तामणि की टीका में लिखा है) करके विवाह से पहले ही पीपल वृक्ष, शालग्राम या विष्णुमूर्त्ति के साथ विवाह करा करके पीछे वर के लिये कन्या का दान करे। इसका विधान सम्वरा-टीका में विस्तार से लिखा है ॥ ३४ ॥

विधवायोगः

अस्तगाः पापखेटाश्चेत्पापर्क्षे विधवा भवेत् ।

क्रूरेऽष्टमे च विधवा पापद्रेष्के विशेषतः ॥ ३५ ॥

सप्तम भाव में पापग्रह पापराशियों में हों, तो वह कन्या विधवा होती है, या जन्म लग्न से अष्टम स्थान में पापग्रह हो, तो विधवा होती है और वही पापग्रह अष्टम स्थान में स्थित, पापग्रहों की राशि में हों, तो विशेष करके विधवा होती है ॥ ३५ ॥

कलत्रसंस्थैर्विबलैः खलाख्यैः
सौम्यैरदृष्टैर्विधुना विमुक्तैः ॥ ३६ ॥

जिस कन्या के सप्तम भाव में चन्द्रमा से रहित तथा शुभग्रहों से अदृष्ट, बलहीन पापग्रह हों, तो वह कन्या विधवा होती है ॥ ३६ ॥

बालविधवा (अक्षतयोनि)-योगः

सप्तमस्थे धरासूनौ बाल्ये सा विधवा भवेत् ॥ ३७ ॥

जिस कन्या के सप्तम भाव में मंगल हो, तो वह कन्या विधवा होती है ॥ ३७ ॥

रविणा कुजेन विधवा बाल्येऽस्तराशिस्थिते ॥ ३८ ॥

जिस कन्या के सप्तम भाव में सूर्य अथवा मंगल हो, तो वह कन्या बालविधवा होती है ॥ ३८ ॥

बाल्येऽपि भौमे विधवा प्रदिष्टा ॥ ३९ ॥

जिसके सप्तम भाव में मंगल हो, वह बालविधवा होती है ॥ ३९ ॥

क्षोणिजे च विधवा खलु बाल्ये ॥ ४० ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में मंगल हो, वह बालविधवा होती है ॥ ४० ॥

उपर्युक्त पाँच आचार्यों के मतों के देखने से स्पष्ट होता है कि जिस स्त्री के सप्तम स्थान में मंगल या पापग्रह होते हैं, वह शीघ्र बाल-विधवा होती है ।

पुनर्विवाहयोगः

द्यूने शुभाशुभैर्युक्ते पुनर्भूः सा भविष्यति ॥ ४१ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में शुभग्रह और पापग्रह दोनों होते हैं उस स्त्री का पुनर्विवाह होता है ॥ ४१ ॥

मिश्रैः पुनर्भूर्भवेत् ॥ ४२ ॥

सप्तम में शुभाशुभ ग्रह होने से पुनर्भू होती है ॥ ४२ ॥

मदनगृहगतैर्विमिश्रैः स्यात्पुनर्भूः ॥ ४३ ॥

सप्तम में शुभाशुभ ग्रह होने से पुनर्भू होती है ॥ ४३ ॥

कान्ताधिमिश्रैश्च भवेत्पुनर्भूः ॥ ४४ ॥

सप्तम में शुभाशुभ ग्रह होने से पुनर्भू होती है ॥ ४४ ॥

उपर्युक्त चार आचार्यों के मतों के देखने से स्पष्ट ज्ञात होता है कि जिस स्त्री के सप्तम स्थान में शुभग्रह और पापग्रह हों, वह दो बार विवाह करनेवाली होती है ।

पतिवियोगयोगः

बलहीनेऽस्तगे पापे सौम्यग्रहनिरीक्षिते :
भर्त्रा वियुज्यते नारी नीचारिस्थे च स्वैरिणी ॥ ४५ ॥
पापे सौवीर्ययुक्ते भवति परिहृता प्रेयसा सौम्यदृष्टे ४६॥
क्रूरे हीनबलेऽस्तगे स्वपतिना सौम्येक्षिते प्रोज्झिता ४७॥
कलत्रसंस्थे विबले खलाख्ये
सौम्येन दृष्टे पतिना विमुक्ता ॥ ४८ ॥

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि जिस स्त्री के सप्तम स्थान में बलरहित पापग्रह स्थित हो और शुभग्रह की दृष्टि हो, तो उस स्त्री को पति त्याग देता है । तथा वही पापग्रह सप्तम भाव में नीचराशिस्थित या शत्रु राशिस्थित हो, तो वह स्त्री व्यभिचारिणी होती है ॥ ४५-४८ ॥

परपुरुषगामिनीयोगः

अन्योन्यांशौ सितारौ चेज्जारसक्ता भवेद्वधूः ॥ ४९ ॥
अन्योन्यांशस्थयोश्च क्षितिसुत-
सितयोर्बन्धकी योषिदुक्ता ॥ ५० ॥
अन्योन्यांशगयोः सितावनिजयोरन्यप्रसक्ताङ्गना ॥ ५१ ॥
अन्योन्यांशावस्थितौ भौमशुक्रौ
स्यातां कान्तासङ्गताऽन्येन नूनम् ॥ ५२ ॥

उपर्युक्त वचनों से स्पष्ट सिद्ध होता है कि जिस कन्या के जन्माङ्ग में शुक्र के नवांश में मंगल और मंगल के नवांश में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री परपुरुषगामिनी होती है ॥ ४९-५२ ॥

पत्याज्ञया दुश्चरीयोगः

तथैव सप्तमे चन्द्रे दुश्चरी पत्युराज्ञया ॥ ५३ ॥
चन्द्रोपेतौ शुक्रवक्रौ स्मरस्था-
वाज्ञयैव स्वामिनश्चामनन्ति ॥ ५४ ॥
चन्द्रोर्वीसूनुशुक्रौ यदि मदनगृहे प्रेयसोऽनुज्ञया तु ॥ ५५ ॥
द्यूने वा यदि शीतरश्मिसहितौ
भर्तुस्तदानुज्ञया ॥ ५६ ॥

उपर्युक्त वचनों से स्पष्ट सिद्ध होता है कि जिस कन्या के जन्माङ्ग में सप्तम स्थान में शुक्र, चन्द्रमा और मंगल हो, तो वह स्त्री पति की आज्ञा से परपुरुष में आसक्त रहती है ॥५३-५६॥

वृद्धादिपतियोगः

मन्देऽस्ते स्वांशके क्षेत्रे वृद्धो मूर्खो भवेत्पतिः ।
एवं सप्तमराशिस्थैर्ग्रहैर्नॄणां वदेत्फलम् ॥ ५७ ॥

सप्तम स्थान में शनैश्चर की राशिनवांश का उदय हो, तो उस स्त्री का पति बूढ़ा और मूर्ख होता है ॥ ५७ ॥

सामान्ययोगः

शुक्रेन्दू स्मरगौ स्त्रियं प्रकुरुतः सेर्ष्यां सुखेनान्वितां
सौम्येन्दू च कलासु खोत्तमगुणां शुक्रेन्दुपुत्रावथ।
चञ्चद्भाग्यकलाशताभिरुचिरां सौम्यग्रहेन्द्रास्तनौ
नानाभूषणसद्गुणाऽम्बरसुखां पापग्रहैस्त्वन्यथा ॥ ५८ ॥

सातवें स्थान में स्थित शुक्र और चन्द्रमा स्त्री को ईर्ष्यासहित तथा गुणवती करते हैं और बुध तथा चन्द्रमा उत्तम कलासहित और श्रेष्ठ गुणवती करते हैं। शुक्र और बुध प्रकाशमान, भाग्य, चतुरता, कलाकौशल आदि करते हैं। शुभग्रह जन्मलग्न में हो, तो वह स्त्री भूषण तथा वस्त्रादिसम्पन्न होती है। लग्न में पापग्रह हो, तो विपरीत फल देता है ॥ ५८ ॥

दीर्घायुर्योगः

भाग्यस्थाने सिते सौम्ये सपापे चाष्टमेऽपि वा।
भर्तृपुत्रिसुतैः सार्धं बहुकालं च जीयति ॥ ५९ ॥

भाग्यस्थान में शुक्र और अष्टम में पापग्रहसहित बुध हो, तो वह स्त्री पति पुत्र और कन्याओं से युक्त तथा बहुत काल तक जीती है ॥ ५९ ॥

अल्पपुत्रायोगः

धनुः कर्कयमे लग्ने भर्तृपुत्रादिदुःखदा ॥ ६० ॥
सिंहालिवृषकन्यासु चन्द्रे तिष्ठति पञ्चने।
अल्पापत्यं विजानीयात्......... ॥ ६१ ॥
कन्यासिंहालिगोषुस्थितवति शशिनि स्वल्पपुत्रा प्रदिष्टा ॥ ६२ ॥
कन्यालिगोहरिषु चाल्पसुतत्वमिन्दोः ॥ ६३ ॥
कन्यालिगे सिंहगते शशाङ्के पङ्केरुहाक्षी खलु साल्पपुत्रा ॥ ६४ ॥

इन उपर्युक्त वचनों से स्पष्ट ज्ञात होता है कि जिस कन्या के जन्माङ्ग में धन, कर्क, मकर और कुम्भ लग्न हो, तो वह कन्या

भर्ता और पुत्रादिकों को दुःख देती है या स्वयं उनसे दुःख पाती है। सिंह, वृश्चिक, वृष तथा कन्या राशि में चन्द्रमा पञ्चम स्थान में हो, तो वह स्त्री अल्प पुत्रवती होती है ॥ ६०-६४ ॥

बहुपुत्रवतीयोगः

पुत्रालयं चेच्छुभखेचरेन्द्रै-
र्दृष्टं युतं वा बहुपुत्रता स्यात् ॥ ६५ ॥

जिस स्त्री के जन्म समय पञ्चम स्थान में शुभग्रह स्थित हों या पञ्चम भवन को देखता हो, तो वह स्त्री बहुपुत्रवती होती है ॥६५॥

सौम्यग्रहैः सुतगतैर्बहुप्रसवमादिशेत्।
कन्याप्रदानकाले तु प्रोक्तमार्गं विचिन्तयेत् ॥ ६६ ॥

जिस कन्या के जन्मसमय पञ्चम भवन में शुभग्रह स्थित हों उस कन्या को बहुत पुत्रवाली जानना चाहिए। इस कारण विवाह के पूर्व इन बातों का विचार कर लेना आवश्यक है ॥ ६६ ॥

वन्ध्याकाकवन्ध्यायोगः

रन्ध्रगौ सूर्यचन्द्रौ चेद्विलग्नान्निजराशिगे।
वन्ध्याऽथ चन्द्रमाः सौम्यः काकवन्ध्या तदा भवेत्॥६७॥
शनिभौमगृहे लग्ने चन्द्रे च सितसंयुते।
पापदृष्टेऽथ सा नारी वन्ध्यत्वमुपगच्छति ॥ ६८ ॥

जिस कन्या के जन्मसमय अष्टम स्थान में सूर्य और चन्द्रमा अपनी राशि में स्थित हों, तो वह कन्या बाँझ होती है। अष्टम स्थान में चन्द्रमा और बुध अपनी राशि में स्थित हों, तो वह नारी काकवन्ध्या होती है। १०। ११। १। ८ इन राशियों में शुक्र के सहित चन्द्रमा हो और पापग्रहों से दृष्ट हो, तो वह स्त्री बाँझ होती है ॥ ६७-६८ ॥

मृतप्रजायोगः

रवौ राहौ मदस्थे शनिदृष्टे मृतप्रजा।

रवौ मृतप्रजा प्रोक्ता राहुणापि तथैव च ॥ ६९॥

जिस स्त्री के जन्मसमय सप्तम स्थान में सूर्य वा राहु शनि से दृष्ट हों, तो वह स्त्री मृतप्रजा होती है। किसी-किसी का मत यह भी है कि सप्तम स्थान में और पञ्चम स्थान में पापग्रह शनिदृष्ट हो, तो वह स्त्री मृतप्रजा होती है ॥ ६९ ॥

मृतापत्या च शुक्रेज्यौ सारौ गर्भस्रवा भवेत् ।
सप्तमस्थः कुजश्चैव दृष्टः सौरेण सोऽपि चेत् ॥ ७० ॥
गलद्गर्भा तु सा ज्ञेया शनौ रोगयुतप्रजा ।
चन्द्रे बुधे तु सा नारी कन्याजन्मवती भवेत् ॥ ७१ ॥

जिस स्त्री के अष्टम स्थान में शुक्र और बृहस्पति स्थित हों, वह स्त्री मृतवत्सा होती है। यदि शुक्र, बृहस्पति और मंगल ये अष्टम स्थान में हों, तो वह स्त्री गर्भस्रवा होती है । या सप्तम स्थान में शनि से दृष्ट मंगल हो, तो वह स्त्री गर्भस्रवा होती है। अथवा सप्तम स्थान में शनियुक्त मंगल हो, तो रोगयुक्त सन्तान होती है। या शनि से दृष्ट चन्द्रमा और बुध सप्तम स्थान में हों, तो वह स्त्री केवल कन्या को उत्पन्न करती है ॥ ७०-७१ ॥

मतान्तरे रण्डायोगः

व्ययाष्टमे कुजे क्रूरयुते राहौ सलग्नगे ।
रण्डाथ लग्नगे सूर्ये सभौमे दुर्भगा शनौ ॥ ७२ ॥
मूर्त्तौ राह्वर्कभौमेषु रण्डा भवति कामिनी ।
एषु शुक्रे द्वितीयस्थे पतिमन्यं चिकीर्षति ॥ ७३ ॥

जिस स्त्री के बारहवें या आठवें स्थान में पापग्रहयुक्त मंगल हो और पापग्रहयुक्त राहु लग्न में हो, तो वह स्त्री रण्डा होती है । अथवा मंगल और सूर्य लग्न में हों, तो वह स्त्री रण्डा होती है। या पूर्वोक्त योग में शनि हो, तो वह स्त्री विधवा होती है । या लग्न में राहु, सूर्य और मंगल हों, तो वह स्त्री विधवा होती है ।

एवं पूर्वोक्त योग होने पर द्वितीय स्थान में शुक्र हो, तो विवाह के बाद दूसरे पति की इच्छा करती है ॥ ७२-७३ ॥

स्थिते भर्तरि मृत्युयोगः

तथाष्टगाः क्रूरखला विलग्ना
द्वितीयगाः शोभनखेचरास्तु ।
सा भर्त्तुरग्रे म्रियते च नारी
गोसिंहकौर्पेन्दुगतेऽल्पपुत्रा ॥ ७४ ॥

जिस स्त्री के अष्टम स्थान में पापग्रह हों और द्वितीय भवन में शुभग्रह हों, तो वह स्वामी के आगे मरती है और सिंह, वृप और वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा पञ्चम स्थान में हो, तो वह स्त्री अल्पपुत्रा होती है ॥ ७४ ॥

शुभयोग:

यदि शुभकरदृष्टा शिल्पिनी शुद्धचित्ता
सततमिह सलज्जा चारुमूर्त्तिः सुपुत्रा ।
बहुधनसुखयुक्ता वल्लभे वल्लभत्व
व्रजति शुभशतानां भाजनत्वं च नारी ॥ ७५ ॥

जिस कन्या के जन्मलग्न को सम्पूर्ण शुभग्रह देखते हों वह कन्या चित्रकारिणी, शुद्धचित्त, सलज्जा, सुन्दर रूपवाली, सुन्दर पुत्रयुक्त, धनवती, पति की प्यारी और शुभ कर्मों की पात्र होती है ॥ ७५ ॥

राजपूज्यपतियोग:

समराशिगते तत्र सप्तमे शुभसंयुते ।
शुभग्रहैस्तथा दृष्टे राजपूज्यः पतिर्भवेत् ॥ ७६ ॥

जिस कन्या के सातवें स्थान में शुभग्रह की सम राशि हो और शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो, तो उसका पति राजपूज्य होता है ॥ ७६ ॥

अनुभूतबहुपुत्रवतीयोगः

नारीणां जन्मकाले कुजशनितमसः केन्द्रकोणेषु शस्ता
चन्द्रोऽस्तेषु प्रशस्तो बुधसितगुरवः सर्वभावेषु शस्ताः।
लग्नेशः कामभावे मदनगृहपतिर्लग्नभावे बलस्थो
लाभेशः पुत्रभावे वदति मुनिवरो बह्वपत्या भवन्ति ॥ ७७ ॥

जिस स्त्री के मंगल, शनि और राहु १।४।७।१०।५।६ इन स्थानों में हों वह भाग्यवती होती है। एवं इन स्थानों में चन्द्रमा भी शुभ होता है। तथा बुध, शुक्र और बृहस्पति सब भावों में श्रेष्ठ होते हैं। लग्नेश बलवान् होकर सप्तम स्थान में हो और सप्तम स्थान का स्वामी बलवान् होकर लग्न में हो तथा लाभेश पुत्रभाव में हो, तो वह स्त्री बहुपुत्रवती होती है ऐसा मुनिवरों ने कहा है ॥ ७७ ॥

पितृश्वशुरकुलहन्तृयोगः

पापद्वयमध्यगते चन्द्रे लग्ने च कन्यका जाता।
निजपितृकुलं समस्तं श्वशुरकुलं हन्ति निःशेषात् ॥७८॥

जिस स्त्री के पापग्रहों के बीच में चन्द्रमा हो और कन्या लग्न हो, तो वह स्त्री पितृकुल और श्वशुरकुल को निःशेष नाश करती है ॥ ७८ ॥

मेषादिलग्नफलम्

मेषोदये सत्यपरा नृशंसा
नारी भवेत्क्रोधपरा सदैव।
श्लेष्माधिका निष्ठुरवाक्ययुक्ता
सदा विरक्ता निजबन्धुवर्गे ॥ ७९ ॥

मेष लग्न में उत्पन्न कन्या सत्य में तत्पर, निर्भय, सदा क्रोध-युक्त, कफप्रकृति, कठोर वाक्य बोलनेवाली और बन्धुओं से विरक्त होती है ॥ ७९ ॥

वृषोदये सत्यरता मनोज्ञा
विनीतवेषा पतिवल्लभा च।
नारी भवेत्सर्वकलासु दक्षा
स्वर्गानुरक्ता द्विजदेवभक्ता ॥ ८० ॥

वृष लग्न में उत्पन्न कन्या सत्य में तत्पर, सुन्दरी, विनीत, पतिप्यारी, सब कलाओं से युक्त, बन्धुप्रेमी और देवता तथा ब्राह्मणों की भक्ति करनेवाली होती है ॥ ८० ॥

लग्ने तृतीयेऽतिकठोरवाक्या
स्त्री कामहीना गुणवर्जिता च।
सदा नृशंसा कफवातयुक्ता
महाव्यया क्रूरविचेष्टिता च ॥ ८१ ॥

मिथुन लग्न में उत्पन्न कन्या कठोर वाक्य बोलनेवाली, काम से रहित, गुणहीन, निर्भय, कफ-वातयुक्त, बहुत खर्च करनेवाली और भयंकर चेष्टा करनेवाली होती है ॥ ८१ ॥

कुलीरलग्ने च भवेत्प्रसूता
नारी प्रभूता विनयैः समेता।
बन्धुप्रिया साधुसुशीलदक्षा
प्रजान्विता सर्वसुखैः समेता ॥ ८२ ॥

कर्क लग्न में उत्पन्न कन्या नम्रता से युक्त, बन्धुप्रिया, अच्छे स्वभाववाली, सन्तानयुक्त और सर्वसुखसम्पन्न होती है ॥ ८२ ॥

सिंहे विलग्ने वनिताऽतितीक्ष्णा
भवेत्कफाढ्या कलहप्रिया वा।
नानागदैर्युक्तशरीरशोभा
परोपकारे निरता सदैव ॥ ८३ ॥

सिंह लग्न में उत्पन्न स्त्री अत्यन्त क्रूरा, कफप्रकृति, कलह-कारिणी, नाना रोगग्रस्त और परोपकार करनेवाली होती है ॥ ८३ ॥

कन्याविलग्ने वनिताभिजाता
सौभाग्यसौख्यैः सहिता हिता च।
भवेत्स्ववर्गे बहुधर्मयुक्ता
जितेन्द्रिया सर्वकलासु दक्षा॥ ८४॥

कन्या लग्न में उत्पन्न कन्या भाग्यवती, सबका हित करनेवाली, अपने वर्ग में धर्मनिष्ठ, इन्द्रियों को जीतनेवाली और चतुर होती है॥ ८४॥

लग्ने तुलाख्ये चिरकालकृत्या
भवेत्सुमन्दा प्रणयेन हीना।
सुगर्विता कान्तिविवर्जिता च
तृष्णाधिका नीतिविहीनगात्रा॥ ८५॥

तुला लग्न में उत्पन्न स्त्री दीर्घसूत्री, मन्दबुद्धि, नम्रता से हीन, गर्वीली, शोभारहित, अधिक तृष्णावाली और नीतिरहित होती है॥ ८५॥

नारी भवेद्वृश्चिकलग्नजाता
सुरूपगात्रा नयनाभिरामा।
सुपुण्यशीला च पतिव्रता च
गुणाधिका सत्यपरा सदैव॥ ८६॥

वृश्चिक लग्न में उत्पन्न स्त्री सुन्दरी, सबसे प्रेम रखने तथा सुन्दर नेत्रोंवाली, धर्मात्मा, पतिव्रता, गुण और सत्य से युक्त होती है॥ ८६॥

चापोदये या वनिताऽभिजाता
सा बुद्धिशूरा पुरुषानुकारा।
सामैकसाध्या विधिना कठोरा
निःस्नेहयुक्ता प्रणयेन हीना॥ ८७॥

धनुर्लग्न में उत्पन्न स्त्री बुद्धिमती, पुरुषाकृतिवाली, शान्ति से

कार्य करनेवाली, कठोरचित्त, स्नेह और नम्रता से रहित होती है ॥ ८७ ॥

मृगोदये स्त्री सुभगा सुसत्या
तीर्थानुरक्ता हतशत्रुपक्षा ।
प्रधानकृत्या प्रथिता च लोके
गुणान्विता पुत्रवती सदैव ॥ ८८ ॥

मकर लग्न में उत्पन्न स्त्री भाग्यवती, सत्य में तत्पर, तीर्थों में आसक्त, शत्रुजित्, अच्छा काम करनेवाली, ख्यात, गुणी और पुत्रवती होती है ॥ ८८ ॥

कुम्भे च लग्ने वनिता सुजाता
आजन्मदक्षा क्षतजार्दिता च ।
नित्यं गुरूणां सुविरुद्धचेष्टा
व्ययाधिका पुण्यपरा कृतघ्ना ॥ ८९ ॥

कुम्भ लग्न में उत्पन्न स्त्री जन्म से ही चतुर, व्रण आदि से पीड़ित, बड़ों से विरोध रखनेवाली, अधिक खर्च करनेवाली, पुण्य करनेवाली और अहसान न माननेवाली होती है ॥ ८९ ॥

मीनोदये स्त्री बहुपुत्रपौत्रा
पतिव्रता बान्धवलोकमान्या ।
सुनेत्रकेशा सुरविप्रभक्ता
नयान्विता प्रीतिपरा गुरूणाम् ॥ ९० ॥

मीन लग्न में उत्पन्न स्त्री बहुत पुत्र-पौत्रोंवाली, पतिप्यारी, बान्धवादि से मान्य, सुन्दर नेत्रों तथा केशोंवाली, देवता और ब्राह्मणों की भक्ति करनेवाली, नम्रता से युक्त और गुरुजनों से प्रीति करनेवाली होती है ॥ ९० ॥

तिथीनां फलानि

नारी यदा त्वग्नितिथौ सुजाता

सौभाग्ययुक्ता पतिवल्लभा च ।
सुपुण्यशीला बहुपुत्रपौत्रा
परागमज्ञानविराजमाना ॥ ९१ ॥

जिस कन्या का जन्म प्रतिपदा तिथि को हो, वह कन्या सौभाग्यवती, पतिप्रिया, पुण्य-दान करनेवाली, अनेक पुत्र-पौत्रों से युक्त और सोच-समझकर काम करनेवाली होती है ॥ ९१ ॥

नारी सुवेषा बहुकान्तियुक्ता
दयान्विता पार्थिववल्लभा च ।
सुनेत्रकेशा बहुधर्मरक्ता
सदा द्वितीयाप्रभवा मनोज्ञा ॥ ९२ ॥

जिस कन्या का जन्म द्वितीया तिथि में हो, वह कन्या सुन्दर वेष धारण करनेवाली, सुन्दर, दयायुक्त, राज-दरबार में सम्मान प्राप्त करनेवाली, सुन्दर नेत्रों तथा केशोंवाली और अपने धर्म में तत्पर रहती है ॥ ९२ ॥

सौम्या तृतीयाप्रभवा सुसत्या
भवेत्सुमन्दाचिरकालकृत्या ।
तीर्थानुरक्ता वनिताभिजाता
गुणान्विता पुत्रवती सुपौत्रा ॥ ९३ ॥

जिस कन्या का जन्म तृतीया तिथि में हो, वह कन्या सत्य बोलनेवाली, सरल तथा गम्भीर स्वभाववाली, दीर्घसूत्रताहीन, गुणों, पुत्रों तथा पौत्रों से युक्त और तीर्थों में अनुरक्त रहनेवाली होती है ॥ ९३ ॥

सदा नृशंसा वनिताऽतितीक्ष्णा
सा स्त्री सकामा व्यभिचारशीला ।
द्यूते रता धर्मविवेकहीना
नारी चतुर्थीतिथिषु प्रजाता ॥ ९४ ॥

जिस कन्या का जन्म चतुर्थी तिथि में हो, वह कन्या क्रूर, लोलुप, अतितीक्ष्ण स्वभाववाली, व्यभिचारिणी, जुआरिन, धर्म और विवेक से हीन होती है ॥ ९४ ॥

इष्टैर्युता बन्धुप्रिया सुशीला
दक्षा सुकार्ये सुखसंयुता च ।
परोपकारे निरता विरक्ता
यस्याः प्रसूतौ किल पञ्चमी स्यात् ॥ ९५ ॥

जिस कन्या का जन्म पञ्चमी तिथि में हो, वह कन्या इष्ट जनों से युक्त, बन्धुप्रिय, सुशील, कार्यदक्ष, सुखसम्पन्न, परोपकार में निरत और विरक्त होती है ॥ ९५ ॥

षष्ठ्यां प्रजाता वनिता सुसत्या
नारीप्रधाना जनवल्लभा च ।
श्लेष्माधिका क्रोधपरा कठोरा
महाव्यया नीतिविहीनगात्रा ॥ ९६ ॥

जिस कन्या का जन्म षष्ठी तिथि में हो, वह कन्या सत्यभाषिणी, स्त्रियों में प्रधान, जनप्रिय, कफप्रकृति, क्रोध करनेवाली, कठोर-हृदया, व्यय अधिक करनेवाली और नीति से विहीन होती है॥९६॥

विशालनेत्रा प्रमदा मनोज्ञा
नयान्विता देवगुरुप्रसक्ता ।
सुदानशीला निगमैः समेता
तिथ्यर्कजाता विगताभिमाना ॥ ९७ ॥

जिस कन्या का जन्म सप्तमी तिथि में हो, वह कन्या बड़े नेत्रों-वाली, सुन्दर, नीतिज्ञ, देवता और गुरुजनों में प्रीति रखनेवाली, दानशील, शास्त्रों में श्रद्धा रखनेवाली और निरभिमान होती है ॥९७॥

प्रियामिषा पानरता कुरूपा
दुष्टस्वभावा सुतवित्तहीना ।

दयाविहीना विकृतानुकारा
गौरीपतेर्यत्प्रसवे तिथिः स्यात् ॥ ९८ ॥

जिस कन्या का जन्म अष्टमी तिथि में हो, वह कन्या मांस-भक्षण करनेवाली, मद्यप, कुरूप, दुष्टस्वभाव, पुत्र एवं वित्तविहीन, दयारहित और नीचों के संसर्ग में रहनेवाली होती है ॥ ९८ ॥

कुटुम्बहीना ललना कठोरा
पराङ्मुखी सर्वगृहस्य कार्यैः
कन्यैव दुष्टा व्यसनैः प्रयुक्ता
यस्याः प्रसूतौ नवमीतिथिः स्यात् ॥ ९९ ॥

जिस कन्या का जन्म नवमी तिथि में हो, वह कन्या कुटुम्ब-विहीन, कठोरचित्त, घर के काम-काज न करनेवाली, दुष्टस्वभाव और व्यसनों में आसक्त रहनेवाली होती है ॥ ९९ ॥

नारी भवेद्धर्मपरा सुहर्म्या
प्रलम्बकण्ठा धनधान्ययुक्ता ।
देवार्चने प्रीतिकरा सुपुत्रा
यस्या जनौ स्याद्दशमीतिथिस्तु ॥ १०० ॥

जिस कन्या का जन्म दशमी तिथि में हो, वह कन्या धर्म-परायण, महलों में रहनेवाली, लंबी गर्दनवाली, धन और धान्य से युक्त, देवपूजक और सुन्दर पुत्रोंवाली होती है ॥ १०० ॥

देवद्विजार्चाव्रतदानशीला
पुण्यैकचित्तोत्तमकर्मदक्षा ।
नानार्थविज्ञाश्रपरागमज्ञा
चैकादशी जन्मतिथिर्भवेत्सा ॥ १०१ ॥

जिस कन्या का जन्म एकादशी तिथि में हो, वह कन्या देवता और द्विजों की पूजा, सत्कार तथा व्रत करनेवाली एवं दानशील

पुण्य-दान करनेवाली, सत्कार्यों के सम्पादन में चतुर, कुशाग्रबुद्धि, शास्त्र तथा लोक-व्यवहार में कुशल होती है ॥ १०१ ॥

जलाश्रये प्रीतिकरा सुशीला
निजालये वासविलासयुक्ता ।
सुरेन्द्रभावापररन्ध्रपक्षा
या द्वादशीजा वनिता प्रधाना ॥ १०२ ॥

जिस कन्या का जन्म द्वादशी तिथि में हो, वह कन्या जलीय प्रदेशों में रुचि रखनेवाली, सुशील, अपने वासस्थान को सुसज्जित रखनेवाली, देवभक्त, दूसरे के अवगुणों की छानबीन करनेवाली तथा चतुर होती है ॥ १०२ ॥

रूपान्विता धर्मपरा सुसत्या
सच्छास्त्रवेत्री सुरवप्रवीणा ।
क्षमान्विता सर्वजितारिपक्षा
या कामिनी कामतिथौ प्रसूता ॥ १०३ ॥

जिस कन्या का जन्म त्रयोदशी तिथि में हो, वह कन्या सुन्दर, धर्मपरायण, सत्यवादिनी, शास्त्र-पथ पर चलनेवाली, गानविद्या में निपुण, क्षमाशील और शत्रुदमनकारिणी होती है ॥ १०३ ॥

कन्दर्पलीलारतकार्यदक्षा
विरुद्धचेष्टा पतिपुत्रहीना ।
स्याद्रूपयीजा मलिना कुशीला
चतुर्दशीजाऽतिविचित्रचित्ता ॥ १०४ ॥

जिस कन्या का जन्म चतुर्दशी तिथि में हो, वह कन्या काम-शास्त्र में प्रेम रखनेवाली, कार्यचतुर, विरुद्ध व्यापार करनेवाली, पति-पुत्रविहीन, रूपवती, मलिन, दुःशीला और विचित्र मति-गति रखनेवाली होती है ॥ १०४ ॥

सुचारुवक्त्रा द्विजदेवभक्ता
पतिप्रिया साधुसुशीलदक्षा ।
गृहस्थकार्ये सुविधिप्रवीणा
यदुद्भवो दर्शतिथौ सुपुण्यः ॥ १०५ ॥

जिस कन्या का जन्म अमावास्या तिथि में हो, वह कन्या सुमुखी, द्विज और देवताओं की भक्ति में तत्पर, पतिवल्लभा, सच्चरित्रा, सुशीला और गृहकार्यचतुरा होती है ॥ १०५ ॥

सुचारुमूर्त्तिः सुगुणा सलज्जा
साध्वी सुपुत्रा सुखिनी कलाज्ञा ।
विशालनेत्रा विधुवन्मुखी स्या-
द्यदुद्भवश्चान्द्रतिथौ सुकान्ता ॥ १०६ ॥

जिस कन्या का जन्म पूर्णा तिथि में हो, वह कन्या सुन्दर, गुणवती, लज्जायुक्त, पतिव्रता, पुत्रवती, सुखसम्पन्न, कला-कुशल, विशाल नेत्रोंवाली, चन्द्रमुखी और सुन्दर पतिवाली होती है ॥ १०६ ॥

वारफलम्

तीक्ष्णा च सुभगा चैव प्रचण्डा तेजसान्विता ।
षड्रसास्वादिनी कन्या जायते रविवासरे ॥ १०७ ॥

जिस कन्या का जन्म रविवार के दिन हो, वह कन्या तीक्ष्ण स्वभाव, सुन्दर, प्रचण्ड, कान्तियुक्त और षट्रस के भोजन में प्रीति रखनेवाली होती है ॥ १०७ ॥

सुस्निग्धा सुभगा चैव सुस्मिता चारुभूषणा ।
जलकेलिकरा नित्यं जायते चन्द्रवासरे ॥ १०८ ॥

जिस कन्या का जन्म चन्द्रवार के दिन हो, वह कन्या दयावती, सुन्दर, हँसमुख, अलंकारों से परिष्कृत होनेवाली और जल-क्रीडा द्वारा आनन्दोपभोग करनेवाली होती है ॥ १०८ ॥

प्रचण्डा तेजसा नित्यं कृतघ्ना क्रोधसंयुता ।
कौसुम्भवस्त्रनिरता जायते भौमवासरे ॥ १०६ ॥

जिस कन्या का जन्म भौमवार के दिन हो, वह कन्या प्रचण्ड, कृतघ्न, क्रोधिनी और कौसुम्भ वस्त्र धारण करनेवाली होती है ॥ १०६ ॥

शुभानिष्टेषु वाक्येषु रञ्जते मिष्टभाषिणी ।
धर्मकर्मरता नित्यं जायते बुधवासरे ॥ ११० ॥

जिस कन्या का जन्म बुधवार के दिन हो, वह कन्या सुन्दर, अनिष्ट, चिन्तन करनेवाली, मधुरभाषिणी और धर्म-कर्म में निरत होती है ॥ ११० ॥

पापकर्मविहीना च धनधान्यसमन्विता ।
देवद्विजार्चिता नारी या जाता गुरुवासरे ॥ १११ ॥

जिस कन्या का जन्म गुरुवार के दिन हो, वह कन्या पापाचरण न करनेवाली, धन-धान्य से युक्त और देवताओं तथा ब्राह्मणों का सन्मान करनेवाली होती है ॥ १११ ॥

वस्त्राभरणसम्पन्ना गजवाजिसमन्विता ।
साध्वी पुत्रयुता कन्या या जाता भृगुवासरे ॥ ११२ ॥

जिस कन्या का जन्म शुक्रवार के दिन हो, वह कन्या वस्त्रों और आभूषणों से युक्त, घोड़े, हाथियों से सम्पन्न, सदाचारिणी और पुत्रोंवाली होती है ॥ ११२ ॥

मलिना च कुवेषा च प्रगल्भा वैरकारिणी ।
अल्पपुत्रा दयाहीना कन्या जाता शनेर्दिने ॥ ११३ ॥

जिस कन्या का जन्म शनि के दिन हो, वह कन्या मलिन, कुवेष, ढीठ, विरोधिनी, अल्पपुत्रोंवाली और दयाहीन होती है ॥ ११३ ॥

नक्षत्रफलानि

अश्विनीफलम्

जाताश्विनीषु प्रमदा मनोज्ञा
प्रभूतकोशा प्रियदर्शना च।
प्रियंवदा सर्वसहाभिरामा
बुद्ध्यन्विता देवगुरुप्रसक्ता ॥ ११४ ॥

जिस कन्या का जन्म अश्विनी नक्षत्र में हो, वह कन्या सुन्दर, धनाढ्य, प्रियदर्शन, प्रिय बात कहनेवाली, सुख-दुःख सहन करनेवाली, मनोहारिणी, बुद्धियुक्त, देवता और गुरुजन में श्रद्धा करनेवाली होती है ॥ ११४ ॥

भरणीफलम्

स्त्रीवर्गमुख्या भरणीषु जाता
भवेन्नृशंसा कलहप्रिया च।
सुदुष्टचित्ता विभवैर्विहीना
हतप्रतापा सततं कुचैला ॥ ११५ ॥

जिस कन्या का जन्म भरणी नक्षत्र में हो, वह कन्या स्त्रियों में प्रधान, निर्भय, कलहकारिणी, दुष्ट स्वभाव, विभवहीन, तेजरहित और मलिन वेष धारण करनेवाली होती है ॥ ११५ ॥

कृत्तिकाफलम्

जाता भवेत्स्त्री यदि कृत्तिकासु
क्रोधाधिका युद्धपरा विरक्ता।
प्रद्वेषिणी बन्धुजनेन हीना
श्लेष्माधिका क्षामतनुः सदैव ॥ ११६ ॥

जिस कन्या का जन्म कृत्तिका नक्षत्र में हो, वह कन्या क्रोधिनी, झगड़ालू, विरक्त, द्वेष रखनेवाली, बन्धुविहीन, कफप्रकृति और शरीर से कृश होती है ॥ ११६ ॥

रोहिणीफलम्

जाता भवेत्स्त्री यदि रोहिणीषु
प्रसन्नगात्रा शुचिरप्रमत्ता ।
पतिप्रधाना पितृमातृभक्ता
सुपुत्रकन्याविभवैः समेता ॥ ११७ ॥

जिस कन्या का जन्म रोहिणी नक्षत्र में हो, वह कन्या सुन्दर शरीरवाली, पवित्र, सावधानचित्त, पति की आज्ञा में रहनेवाली, माता और पिता में भक्ति रखनेवाली, पुत्र, कन्या और ऐश्वर्य से युक्त होती है ॥ ११७ ॥

मृगशिरसः फलम्

मातुः पितुः प्रशस्ता च कन्यका धनभागिनी ।
कृपणा चान्यसक्ता हि मृगभे जायते ध्रुवम् ॥ ११८ ॥

जिस कन्या का जन्म मृगशिर नक्षत्र में हो, वह माता और पिता की आज्ञा में रहनेवाली, धनयुक्त, कृपण और दूसरे में आसक्ति रखनेवाली होती है ॥ ११८ ॥

आर्द्राफलम्

पापकर्मप्रसक्ता च कुरूपा कलहप्रिया ।
आर्द्राजाता भवेत्कन्या दृढवैरा सदैव हि ॥ ११९ ॥

जिस कन्या का जन्म आर्द्रा नक्षत्र में हो, वह कन्या पापाचरण करनेवाली, कुरूप, कलहकारिणी और पुष्ट विरोध रखनेवाली होती है ॥ ११९ ॥

पुनर्वसुफलम्

क्षमाशीलप्रसक्ता च कन्यका बान्धवप्रिया ।
अवैरा परलोकार्थी पुनर्वसुभवा भवेत् ॥ १२० ॥

जिस कन्या का जन्म पुनर्वसु नक्षत्र में हो, वह कन्या सहन-

शील, सुशील, बन्धु-वर्ग में प्रेम रखनेवाली, मेलजोल रखनेवाली और परलोक का ध्यान रखनेवाली होती है ॥ १२० ॥

पुष्यफलम्

धर्मबुद्धिसदारूढा सर्वकार्यकरी सदा।
प्रशस्ता कन्यका चैव जायते पुष्यसंज्ञके ॥ १२१ ॥

जिस कन्या का जन्म पुष्य नक्षत्र में हो, वह कन्या धर्मबुद्धि रखनेवाली, समस्त कार्यों की करनेवाली और विशालहृदया होती है ॥ १२१ ॥

आश्लेषाफलम्

प्रचण्डा च कृतघ्ना च कुरूपा कलहप्रिया।
कन्यका प्रेमसक्ता चाश्लेषा जाता सुनिश्चिता ॥ १२२॥

जिस कन्या का जन्म आश्लेषा नक्षत्र में हो, वह कन्या प्रचण्ड, कृतघ्न, कुरूप, कलहकारिणी और प्रेमी के प्रेम को निबाहनेवाली होती है ॥ १२२ ॥

मघाफलम्

महार्हभोजने सक्ता कन्या भोगवती तु सा।
पितृदेवार्चने रक्ता मघायां जायते तु या ॥ १२३ ॥

जिस कन्या का जन्म मघा नक्षत्र में हो, वह कन्या बहुमूल्य भोजन करनेवाली, भोगिनी, माता-पिता और देवताओं में भक्ति रखनेवाली होती है ॥ १२३ ॥

पूर्वाफाल्गुनीफलम्

त्यागशीलविहीना च लोभक्रोधविवर्धिनी।
कन्यका दृढकामा च जायते नागदैवते ॥ १२४ ॥

जिस कन्या का जन्म पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में हो, वह कन्या दान और शील से हीन, लोभ और क्रोध बढ़ानेवाली तथा दृढ़ मनोरथोंवाली होती है ॥ १२४ ॥

उत्तराफाल्गुनीफलम्

अर्थसञ्चयसंयुक्ता कन्यका छिद्रकारिणी।
उत्तराफाल्गुनीजाता किञ्चिद्धर्मवती भवेत् ॥ १२५ ॥

जिस कन्या का जन्म उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में हो, वह कन्या धन-सञ्चय करनेवाली, छिद्रान्वेषण में तत्पर और धर्म में थोड़ी श्रद्धावाली होती है ॥ १२५ ॥

हस्तफलम्

तीक्ष्णा च दृढकामा च परद्रव्यापहारिणी।
स्वकर्मकुशला कन्या जायते चार्कदैवते ॥ १२६ ॥

जिस कन्या का जन्म हस्त नक्षत्र में हो, वह कन्या तीक्ष्ण स्वभाव, पुष्ट मनोरथोंवाली, परद्रव्य के अपहरण में प्रवीण और अपने कार्य में कुशल होती है ॥ १२६ ॥

चित्राफलम्

शुक्लाम्बरधरा कन्या हास्यकामिजनप्रिया।
पितृदेवार्चने सक्ता जायते त्वाष्ट्रदैवते ॥ १२७ ॥

जिस कन्या का जन्म चित्रा नक्षत्र में हो, वह कन्या श्वेत वस्त्र पहननेवाली, हास्यप्रिय तथा कामिजनप्रिय और माता-पिता तथा देवताओं की भक्ति में तत्पर रहनेवाली होती है ॥ १२७ ॥

स्वातीफलम्

निरालस्या निरूपा च कुत्सिता च जयान्विता।
कन्यका चाप्रमादी च जायते वायुदैवते ॥ १२८ ॥

जिस कन्या का जन्म स्वाती नक्षत्र में हो, वह कन्या आलस्यहीन, रूपहीन, कुत्सित कर्म करनेवाली, सफल मनोरथोंवाली और प्रमाद न करनेवाली होती है ॥ १२८ ॥

विशाखाफलम्

धर्ममूलविनीता च प्रज्ञाधनसमन्विता।

द्विदैवते तु सञ्जाता कन्यका सत्यवादिनी ॥ १२९ ॥

जिस कन्या का जन्म विशाखा नक्षत्र में हो, वह कन्या धर्म-कर्म करनेवाली, नम्र, विदुषी, धनसम्पन्न और सत्यवादिनी होती है ॥ १२९ ॥

अनुराधाफलम्

बहुभुग्लोभसम्पन्ना मद्यमांसरता सदा ।
कन्यका चान्यसंसक्ता जायते मित्रदैवते ॥ १३० ॥

जिस कन्या का जन्म अनुराधा नक्षत्र में हो, वह कन्या अधिक भोजन करनेवाली, लोभसम्पन्न, मद्य और मांस सेवन करनेवाली और अन्यासक्त होती है ॥ १३० ॥

ज्येष्ठाफलम्

शस्त्रोपघातिनी चैव महाकलहकारिणी ।
कन्यका चातितीक्ष्णा च जायते इन्द्रदैवते ॥ १३१ ॥

जिस कन्या का जन्म ज्येष्ठा नक्षत्र में हो, वह कन्या शस्त्र-प्रहार करनेवाली, झगड़ालू और तीक्ष्ण स्वभाववाली होती है ॥ १३१ ॥

मूलफलम्

पापकर्मा प्रचण्डा च कुकार्यनिरता सदा ।
कुलक्षयकरी कन्या जायते मूलभे च या ॥ १३२ ॥

जिस कन्या का जन्म मूल नक्षत्र में हो, वह कन्या पापाचरण करनेवाली, महाप्रचण्ड, कुत्सित कार्य में निरत और वंशविच्छेद करनेवाली होती है ॥ १३२ ॥

पूर्वाषाढाफलम्

धर्मशीला विनीता च कन्यका सत्यवादिनी ।
पुण्यकर्मरता चैव जायते जलदैवते ॥ १३३ ॥

जिस कन्या का जन्म पूर्वाषाढा नक्षत्र में हो, वह कन्या धर्म-

शील, अत्यन्त नम्र, सत्यवादिनी और पुण्यकर्म करनेवाली होती है ॥ १३३ ॥

उत्तराषाढाफलम्

सती प्रियवचाश्चैव नित्यं चातिथिसेविनी ।
कन्यका जायते या तु वैश्वदेवे सुतान्विता ॥ १३४ ॥

जिस कन्या का जन्म उत्तराषाढा नक्षत्र में हो, वह कन्या पतिव्रता, मधुरभाषिणी, अतिथियों की सेवा करनेवाली और पुत्रों से युक्त होती है ॥ १३४ ॥

श्रवणफलम्

विनीता श्रद्धधाना च कथालापप्रिया सती ।
कन्यका स्वकुले पूज्या जायते विष्णुदैवते ॥ १३५ ॥

जिस कन्या का जन्म श्रवण नक्षत्र में हो, वह कन्या विनम्र, श्रद्धासम्पन्न, कथावार्ता में निरत, सदाचारिणी और अपने कुल में पूजा के योग्य होती है ॥ १३५ ॥

धनिष्ठाफलम्

अर्थार्थिनी च लुब्धा च पुष्पमाल्याम्बरप्रिया ।
कन्यका ह्यन्यसक्ता च जायते वसुदैवते ॥ १३६ ॥

जिस कन्या का जन्म धनिष्ठा नक्षत्र में हो, वह कन्या धनहीन, लोभी, फूल, माला, वस्त्र आदि में विशेष रुचि रखनेवाली और अन्यासक्त होती है ॥ १३६ ॥

शतभिषाफलम्

पापकर्मप्रचण्डा च नित्यमुद्वेगकारिणी ।
परोपकारिणी कन्या जाता वरुणदैवते ॥ १३७ ॥

जिस कन्या का जन्म शतभिषा नक्षत्र में हो, वह कन्या पापकर्मासक्त, उद्धत, चिन्तित तथा परोपकार करनेवाली होती है ॥ १३७ ॥

पूर्वाभाद्रपदफलम्

पापकर्मरता नित्यं कन्यका सर्वभक्षिणी।
मायाविनी देवभक्ता जायते चैकपादभे ॥ १३८ ॥

जिस कन्या का जन्म पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में हो, वह कन्या पाप-कर्म में निरत, भक्ष्याभक्ष्य का सेवन करनेवाली, मायाविनी और देवभक्त होती है ॥ १३८ ॥

उत्तराभाद्रपदफलम्

सुबुद्धिधर्मसक्ता च गुणशीलसमन्विता।
अहिर्बुध्न्यदैवते तु कन्यका जायते हि या ॥ १३९ ॥

जिस कन्या का जन्म उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में हो, वह कन्या बुद्धिमती, धर्मासक्त और गुण और शील से युक्त होती है ॥ १३९ ॥

रेवतीफलम्

मातृपित्रग्रजश्वश्रूणां देवब्राह्मणसेविनी।
अनुकूला हि कन्याऽथ जायते पौष्णदैवते ॥ १४० ॥

माता-पिता, घर के बड़े लोगों, सास-ससुर, देवता और ब्राह्मणों को भक्त और शास्त्रानुसार व्यवहार करनेवाली होती है ॥ १४० ॥

योगफलम्

विष्कुम्भयोगफलम्

विष्कुम्भयोगे वनिता सुजाता
पुत्रादिसौख्या पतिवल्लभा च।
स्वातन्त्र्यकार्ये गृहकर्मदक्षा
उदारचेताः सततं विनीता ॥ १४१ ॥

जिस कन्या का जन्म विष्कुम्भयोग में हुआ हो, वह कन्या

पुत्र, पौत्र आदि से सुखी, पति की प्रिया, निर्भय कार्य करनेवाली, गृहकार्यकुशल, उदारचित्त और विनम्र होती है ॥ १४१ ॥

प्रीतियोगफलम्

या प्रीतियोगप्रभवा पुरन्ध्री
सच्छास्त्रविज्ञा धनधान्ययुक्ता ।
रूपान्विता दानकरा प्रवीणा
प्रसन्नगात्रा जनवल्लभा च ॥ १४२ ॥

जिस कन्या का जन्म प्रीतियोग में हो, वह कन्या शास्त्रानुसार कार्य करनेवाली, धन-धान्य-सम्पन्न, रूपवती, दान देनेवाली, चतुर, हँसमुख और जनवल्लभा होती है ॥ १४२ ॥

आयुष्मद्योगफलम्

आयुष्मति स्याच्चिरजीविनी वै
जाताङ्गना कान्तिभराकरा सा ।
वनाद्रिदुर्गेषु नदीषु सक्ता
विनीतवेषा बहुधर्मशीला ॥ १४३ ॥

जिस कन्या का जन्म आयुष्मान् योग में हो, वह कन्या चिरजीविनी, तेजस्विनी, वन, पर्वत, क़िला और नदी आदि में विहार करने की इच्छावाली, समयोचित वस्त्र धारण करनेवाली और धर्मनिष्ठ होती है ॥ १४३ ॥

सौभाग्ययोगफलम्

सौभाग्ययोगे सुभगा सुकन्या
प्रज्ञायुता सत्यपरा धनाढ्या ।
सुमन्दहास्या प्रियवादिनी च
सुगर्विता रूपबलेन नित्यम् ॥ १४४ ॥

जिस कन्या का जन्म सौभाग्य योग में हो, वह कन्या सुन्दर,

बुद्धिमती, सत्यवादिनी, धनाढ्य, हँसमुख, प्रियवादिनी और रूप-गर्विता होती है ॥ १४४ ॥

शोभनयोगफलम्

नारी भवेच्छोभनयोगजाता
शोभान्विता सत्पटुवादिनी सा ।
बुद्ध्यन्विता दम्भविहीनगात्रा
पुत्रान्विता सद्व्यवहारदक्षा ॥ १४५ ॥

जिस कन्या का जन्म शोभन योग में हो, वह कन्या रूपवती, मधुरभाषिणी, बुद्धिमती, आडम्बरविहीन, पुत्रवती और व्यवहारकुशल होती है ॥ १४५ ॥

अतिगण्डयोगफलम्

जाताऽऽतिगण्डे प्रमदा मनोज्ञा
विशालवक्त्रा बहुगर्वरोषा ।
कलिप्रिया क्रोधयुता कुरूपा
विवेकहीना व्यसनाभिभूता ॥ १४६ ॥

जिस कन्या का जन्म अतिगण्ड योग में हो, वह कन्या सुन्दर, विकरालमुखी, मानिनी, कलहकारिणी, क्रोधयुक्त, कुरूप, विवेकहीन और अनेक व्यसनोंवाली होती है ॥ १४६ ॥

सुकर्मयोगफलम्

सुकर्मयोगे प्रमदा प्रसूता
प्रज्ञाधिका सर्वकलाप्रवीणा ।
सत्साहसा दानरता कृतज्ञा
परोपकारे निरता सदैव ॥ १४७ ॥

जिस कन्या का जन्म सुकर्मा योग में हो, वह कन्या बुद्धिमती, गृहकार्य में निपुण, धैर्यवाली, दान देनेवाली, कृतज्ञ और परोपकारिणी होती है ॥ १४७ ॥

धृतियोगफलम्

धृत्याख्ययोगे वनिता विधिज्ञा
प्रज्ञाधिका सत्यपरायणा च ।
दयान्विता सा विनयेन युक्ता
प्रशान्तगर्वा बहुपुत्रपौत्रा ॥ १४८ ॥

जिस कन्या का जन्म धृति योग में हो, वह कन्या विधि-विधान में निपुण, बुद्धिमती, सत्यवादिनी, दयावती, विनम्र, सौम्य प्रकृति और अनेक पुत्र-पौत्रों से सम्पन्न होती है ॥ १४८ ॥

शूलयोगफलम्

शूले कुरूपा शुभबुद्धिहीना
सत्कर्मविद्याविनयैर्विहीना ।
शूलस्य रुक् तज्जठरे नितान्तं
दम्भान्विता पानपरा कृतघ्ना ॥ १४९ ॥

जिस कन्या का जन्म शूलयोग में हो, वह कन्या कुरूप, सद्बुद्धि-विहीन, सत्कर्म, विद्या और विनयहीन, शूलरोगिणी, पाखण्डिनी, मद्यप और कृतघ्न होती है ॥ १४९ ॥

गण्डयोगफलम्

दुष्टा सुहृत्कार्यपराङ्मुखी सा
क्रोधान्विता बन्धुजनेन हीना ।
या गण्डयोगे प्रमदा सुजाता
प्रचण्डगण्डा पुरुषस्वभावा ॥ १५० ॥

जिस कन्या का जन्म गण्ड योग में हो, वह कन्या दुष्ट स्वभाव, मित्रों का कार्य न करनेवाली, क्रोधिनी, बन्धुविहीन, विकराल कपोलोंवाली और पुरुषों का-सा स्वभाववाली होती है ॥ १५० ॥

वृद्धियोगफलम्

जाता सुनारी किल वृद्धियोगे

धनान्विता दम्भविहीनगात्रा ।
सुसङ्ग्रहे प्रीतिकरा सुदक्षा
सुपूजिता पुण्यवती सुशीला ॥ १५१ ॥

जिसका जन्म वृद्धि योग में हो, वह कन्या धनवती, दम्भविहीन, सञ्चय करनेवाली, चतुर, सम्मानपात्र, पुण्यवती और सुशील होती है ॥ १५१ ॥

ध्रुवयोगफलम्

ध्रुवे सुमान्या सुभगा सुपुत्रा
क्षमान्विता सद्व्यवहारदक्षा ।
प्रसन्नवाक्या धनधान्ययुक्ता
शास्त्रानुरक्ता जनवल्लभा च ॥ १५२ ॥

जिस कन्या का जन्म ध्रुव योग में हो, वह कन्या सुन्दर, सुन्दर पुत्रोंवाली, क्षमाशील, व्यवहार-कुशल, मधुरभाषिणी, धन-धान्य सम्पन्न, शास्त्रानुरक्त और जनप्रिय होती है ॥ १५२ ॥

व्याघातयोगफलम्

व्याघातजाता खलु घातकर्त्री
ह्यसत्यगा प्रीतिविहीनगात्रा ।
दयाविहीना कृपणा कृतघ्ना
दम्भान्विता युद्धपरा विरक्ता ॥ १५३ ॥

जिस कन्या का ज व्याघात योग में हो, वह कन्या घात करनेवाली, असत्य . ीति-विहीन, दयाहीन, कृपण, कृतघ्न, पाखण्ड करनेवाली, झगड़ालू और विरक्त रहनेवाली होती है ॥ १५३ ॥

हर्षणयोगफलम्

जाताऽबला हर्षणनाम्नि योगे
प्रसिद्धकृत्या सुभगा कृतज्ञा ।

रक्ताम्बरा हेमविभूषणाढ्या
सुस्निग्धगात्रा सुखकीर्तियुक्ता ॥ १५४ ॥

जिस कन्या का जन्म हर्षण योग में हो, वह कन्या कार्यचतुर, सुन्दर, कृतज्ञ, लाल वस्त्रों से प्रीति रखनेवाली, सुवर्ण के आभूषण धारण करनेवाली, सुन्दर शरीर, सुख और कीर्ति से युक्त होती है॥ १५४ ॥

वज्रयोगफलम्

या वज्रयोगे प्रमदाऽभिजाता
सा वज्रयुक्ता शुभभूषणाढ्या ।
प्रज्ञाधिका बन्धुजनेषु सक्ता
सत्यान्विता दानपरा सुदक्षा ॥ १५५ ॥

जिस कन्या का जन्म वज्र योग में हो, वह कन्या वज्राङ्कित, अलङ्कारपूर्ण, बुद्धिमती, बन्धु-बान्धवों से प्रेम रखनेवाली, सत्यवादिनी, दान देनेवाली और सुचतुर होती है ॥ १५५ ॥

सिद्धियोगफलम्

या सिद्धियोगे वनिता प्रसूता
ह्युदारचित्ता सुभगा सुकृत्या ।
सच्छास्त्रयुक्ता प्रणता द्विजानां
नारी भवेद्रोगविवर्जिता च ॥ १५६ ॥

जिस कन्या का जन्म सिद्धि योग में हो, वह कन्या उदारचित्त, सुन्दर, कार्यचतुर, शास्त्रानुसार कार्य करनेवाली, द्विज आदिकों से विनम्र रहनेवाली और रोगविहीन होती है ॥ १५६ ॥

व्यतिपातयोगफलम्

जाताङ्गना या व्यतिपातयोगे
वदा कुरूपा कलहप्रिया च ।

रोगान्विता पापरता प्रगल्भा
जनैर्विहीना विकृतानुकारा ॥ १५७ ॥

जिस कन्या का जन्म व्यतिपात योग में हो, वह कन्या कुरूप, कलहकारिणी, रोगिणी, पापपरायण, धृष्ट, मनुष्यविहीन और विकराल आकृतिवाली होती है ॥ १५७ ॥

वरीयसः फलम्

वरीयसि स्यात्प्रमदा सुजाता
नयान्विता प्रीतिकरा गुरूणाम् ।
सा सर्वदा दानरता सुदक्षा
नारी भवेत्कीर्तियुता सुरूपा ॥ १५८ ॥

जिस कन्या का जन्म वरीयान् योग में हो, वह कन्या नीति-निपुण, गुरुजनों की प्रेमपात्र, दानशीला, चतुर, कीर्तिशालिनी और सुन्दर स्वरूपवाली होती है ॥ १५८ ॥

परिघयोगफलम्

जाता भवेत्स्त्री परिघाभिधाने
ह्यसत्यरक्ता क्षमया विहीना ।
सदाल्पभाषी विजितारिपक्षा
महाव्यया पानपरा सदैव ॥ १५९ ॥

जिस कन्या का जन्म परिघ योग में हो, वह कन्या झूठ बोलने-वाली, क्षमाहीन, अल्पभाषिणी, शत्रुदमनकारिणी, ख़र्च अधिक करनेवाली और मद्यप होती है ॥ १५९ ॥

शिवयोगफलम्

सन्मन्त्रशास्त्राभिरता नितान्तं
जितेन्द्रिया चारुवचाः सुशीला ।
शिवे सुयोगे प्रमदाभिजाता
तस्याः शिवं स्याच्छिवसुप्रसादात् ॥ १६० ॥

जिस कन्या का जन्म शिव योग में हो, वह कन्या मन्त्र-तन्त्र में रुचि रखनेवाली, इन्द्रियजित्, मधुरभाषिणी, सुशील और शङ्करजी के प्रसाद से सफलमनोरथ होती है ॥ १६० ॥

सिद्धियोगफलम्

या सिद्धियोगे प्रमदाऽभिजाता
सुखान्विता सत्यपरा सुगौरा ।
प्रज्ञाधिका दानदयानुरक्ता
सिद्ध्यन्ति कार्याणि कृतानि तस्याः ॥१६१॥

जिस कन्या का जन्म सिद्धि योग में हो, वह कन्या सुखसम्पन्न, सत्यवादिनी, गौर वर्णवाली, बुद्धिमती, दानदात्री, दयावती तथा सफल मनोरथोंवाली होती है ॥ १६१ ॥

साध्ययोगफलम्

या साध्ययोगे वनिता सुरूपा
नूनं विनीता धनधान्ययुक्ता ।
सन्मन्त्रविद्याविधिनैव सर्वं
संसाधयेत्स्त्री जनवल्लभा च ॥ १६२ ॥

जिस कन्या का जन्म साध्य योग में हो, वह कन्या सुन्दर, विनम्र, धन-धान्यसम्पन्न, मन्त्र-तन्त्र में रुचि रखनेवाली और जनप्रिय होती है ॥ १६२ ॥

शुभयोगफलम्

शुभे सुयोगे प्रमदा प्रमत्ता
विशालनेत्रा शुभवाग्विलासा ।
शुभोपदेशं प्रकरोति सर्वं
शुभस्य कर्त्री शुभलक्षणा च ॥ १६३ ॥

जिस कन्या का जन्म शुभ योग में हो, वह कन्या अनवधान-

चित्त, बड़े-बड़े नेत्रोंवाली, मधुरभाषिणी, शुभोपदेश करनेवाली, सत्कार्यकर्त्री और शुभ लक्षणोंवाली होती है ॥ १६३ ॥

शुक्लयोगफलम्

शुक्लोद्भवा वै वनिता कृतज्ञा
सन्मानशुक्लाम्बरधारिणी च ।
जितेन्द्रिया सत्यरता सुसाध्वी
भवेद्विनीता विजिताद्विपक्षा ॥ १६४ ॥

जिस कन्या का जन्म शुक्ल योग में हो, वह कन्या कृतज्ञ, माननीय, श्वेत वस्त्र धारण करनेवाली, इन्द्रियजित्, सत्यवादिनी, पतिव्रता, विनम्र और शत्रुदमनकारिणी होती है ॥ १६४ ॥

ब्रह्मयोगफलम्

या ब्रह्मयोगे विधिवत्सुविज्ञा
सत्यान्विता दानरता सुहर्म्या ।
शास्त्रानुरक्ता प्रचुरप्रभावा
सुपण्डिता वादविवादशीला ॥ १६५ ॥

जिस कन्या का जन्म ब्रह्मयोग में हो, वह कन्या विचारशील, सत्यवादिनी, दान देनेवाली, महल में निवास करनेवाली, शास्त्रानुरक्त, प्रभावशालिनी, वाद-विवादशील और सुपण्डित होती है ॥ १६५ ॥

ऐन्द्रयोगफलम्

या चैन्द्रयोगे प्रमदाऽभिजाता
नरेन्द्रपत्नी प्रथिता च लोके ।
श्लेष्माधिका दानरता सुदक्षा
बन्धुप्रिया सत्यसमन्विता च ॥ १६६ ॥

जिस कन्या का जन्म ऐन्द्र योग में हो, वह कन्या राजा की

पत्नी, लोकप्रसिद्ध, कफप्रकृति, दान करनेवाली, सुचतुर, बन्धुप्रिय और सत्यवादिनी होती है ॥ १६६ ॥

वैधृतियोगफलम्

या वैधृतीयोगभवा पुरन्ध्री
कठोरचित्ता कुटिलस्वभावा ।
दम्भान्विता दुष्टजनेऽनुरक्ता
दयाभयाभ्यां रहिता सदैव ॥ १६७ ॥

जिस कन्या का जन्म वैधृति योग में हो, वह कन्या कठोरचित्त, कुटिलस्वभाव, पाखण्डिनी, दुष्ट जनों में संसक्त, दयाहीन और निर्भय होती है ॥ १६७ ॥

चरकरणफलानि

ववफलम्

ववाभिधाने वनिताऽभिजाता
सुकान्तिरूपा सुभगा सुशीला ।
तस्या गृहं सर्वसमृद्धियुक्तं
स्वप्राप्तिपुण्या हि भवेत्कृतज्ञा ॥ १६८ ॥

जिस कन्या का जन्म बव-नामक करण में हो, वह कन्या तेजस्विनी, ऐश्वर्यशालिनी, सुशील, समस्त समृद्धियों से युक्त घरवाली, पुण्यवती और कृतज्ञ होती है ॥ १६८ ॥

बालवफलम्

या बालवे स्याद्वनिताऽभिजाता
प्रज्ञान्विता चारुविलासयुक्ता ।
बलाधिका धर्मपरा मनोज्ञा
गुणान्विता युद्धपरा सुमध्या ॥ १६९ ॥

जिस कन्या का जन्म बालव-नामक करण में हो, वह कन्या

बुद्धिमती, विलासिनी, बलवती, धर्मनिष्ठ, सुन्दर, गुणवती, कलह-कारिणी और सूक्ष्ममध्या होती है ॥ १६९ ॥

कौलवफलम्

जाता यदा कौलवनाम्नि करणे
नूनं स्वतन्त्रा बहुमित्रपुत्रा ।
दयान्विता सत्यरता प्रगल्भा
सुकोमलाङ्गी प्रियवादिनी च ॥ १७० ॥

जिस कन्या का जन्म कौलव-नामक करण में हो, वह कन्या स्वतन्त्र, अनेक मित्र और पुत्रों से युक्त, दयावती, सत्यवादिनी, धृष्ट, कोमलाङ्गी और प्रियवादिनी होती है ॥ १७० ॥

तैतिलफलम्

या तैतिले स्याद्वनिता सुमध्या
प्रज्ञायुता चारुवचाः कलाज्ञा ।
सकान्तियुक्ता गृहकर्मदक्षा
विनीतवेषाभरणा सुशीला ॥ १७१ ॥

जिस कन्या का जन्म तैतिल-नामक करण में हो, वह कन्या सूक्ष्ममध्या, प्रज्ञायुक्त, चारुभाषिणी, अनेक कलाओं से युक्त, तेजस्विनी, गृहकार्यचतुर, विनीत वेष और आभरण धारण करनेवाली तथा सुशील होती है ॥ १७१ ॥

गरफलम्

रामा गराख्ये करणेऽभिजाता
शूराऽतिधीराऽतितरामुदारा ।
सच्छास्त्रयुक्ता विजितारिपक्षा
परोपकारे निरता सुदेहा ॥ १७२ ॥

जिस कन्या का जन्म गर-नामक करण में हो, वह कन्या बल-

वती, धैर्यशालिनी, उदार, शास्त्रानुसार कार्य करनेवाली, शत्रुदमन-कारिणी, परोपकारिणी और सुन्दर होती है ॥ १७२ ॥

वणिजफलम्

यस्याः प्रसूतिर्वणिजे प्रवीणा
वाणिज्यकार्ये कुशला कलाढ्या ।
प्रज्ञायुता मानविभूषणाढ्या
सुमन्दहास्या धनधान्ययुक्ता ॥ १७३ ॥

जिस कन्या का जन्म वणिज-नामक करण में हो, वह कन्या प्रवीण, वाणिज्य कार्य में चतुर, कलासम्पन्न, बुद्धिमती, मानिनी, हँसमुख और धन-धान्यसम्पन्न होती है ॥ १७३ ॥

विष्टिफलम्

भद्रासु जाता वनिता कुरूपा
कठोरवाक्या पुरुषानुकारा ।
प्रियाविहीना सततं कुचैला
दुष्टा कुमित्रा व्यभिचारशीला ॥ १७४ ॥

जिस कन्या का जन्म विष्टि-नामक करण में हो, वह कन्या कुरूप, कटुभाषिणी, पुरुषों की-सी आकृतिवाली, प्रियविहीन, सदा मलिन वस्त्र धारण करनेवाली, दुष्ट, कुत्सित मित्रोंवाली और व्यभिचारिणी होती है ॥ १७४ ॥

स्थिरकरणफलानि

शकुनिफलम्

यदि शकुनिषु जाता शाकुनज्ञानशीला
अतिसुललितदेहा मन्त्रविद्याप्रवीणा ।
बहुयुवतिसुसख्या चारुसौभाग्ययुक्ता
गुणगणपरियुक्ता सर्वदा सावधाना ॥१७५॥

जिस कन्या का जन्म शकुनि-नामक करण में हो, वह कन्या

शकुन विचारनेवाली, सुन्दर और सुडौल देहवाली, मन्त्रशास्त्र में विश्वास रखनेवाली, अनेक सहेलियों से युक्त, सौभाग्यवती, गुण-हीन और सर्वदा सावधान रहनेवाली होती है ॥ १७५ ॥

चतुष्पदफलम्

चतुष्पदे स्याद्वनिता विनीता
चतुष्पदात्सत्त्वयुता सुशीला ।
असंग्रहा क्षीणशरीरबन्धा
स्वाचारहीना विकृताऽऽकारा ॥ १७६ ॥

जिस कन्या का जन्म चतुष्पद-नामक करण में हो, वह कन्या चौपायों से प्रीति करनेवाली, सुशील, सञ्चय न करनेवाली, दुबली-पतली, आचारहीन और विकराल आकारवाली होती है ॥ १७६ ॥

नागफलम्

नागेषु जाता प्रमदा प्रमत्ता
दम्भान्विता दुष्टवचाः कुशीला ।
कलिप्रिया द्रोहरता कठोरा
असत्यरक्ता कुलघातिनी सा ॥ १७७ ॥

जिस कन्या का जन्म नाग-नामक करण में हो, वह कन्या प्रमा-दिनी, दम्भयुक्त, दुर्वादिनी, कुशील, कलहकारिणी, द्रोहिणी, कठोरचित्त, असत्यवादिनी और कुलघातिनी होती है ॥ १७७ ॥

किंस्तुघ्नफलम्

किंस्तुघ्नजाता वनिता प्रगल्भा
धर्मेऽप्यधर्मे समता मतिश्च ।
मैत्र्याममैत्र्यां स्थिरता न किञ्चि-
दङ्गेऽप्यनङ्गे विबला सदैव ॥ १७८ ॥

जिस कन्या का जन्म किंस्तुघ्न-नामक करण में हो, वह कन्या

धृष्ट, धर्म और अधर्म तथा मैत्री और अमैत्री में समानबुद्धि रखनेवाली और लापरवाह तथा कामातुर होती है ॥ १७८ ॥

सूर्यादिग्रहाणां द्वादशभावफलानि

लग्नस्थितसूर्यफलम्

मूर्त्तौ रविस्तीव्रमुखां प्रसूते
नारीं तथा तीव्ररुजा समेताम् ।
दुष्टस्वभावां सुकृशां कृतघ्नां
परान्नरक्तां प्रभया विहीनाम् ॥ १७९ ॥

जिस नारी के जन्मलग्न में सूर्य हो, तो वह स्त्री तीव्र मुखवाली तथा रोगयुक्त, दुष्टस्वभाव और कृश शरीर, अहसान न माननेवाली, पराये अन्न में रत और भयरहित होती है ॥ १७९ ॥

द्वितीयभावस्थितसूर्यफलम्

धनस्थितोऽर्को धनधान्यहीनां
कठोरवाक्यां गतभक्तिभावाम् ।
युद्धप्रियां द्वेषरतां खलां च
नारीं प्रसूते गतसौहृदां च ॥ १८० ॥

जिस स्त्री के धन भाव में सूर्य स्थित हो, तो वह स्त्री धनधान्यरहित और कठोर वाक्य बोलनेवाली, भक्तिभावरहित तथा कलह में तत्पर, निरन्तर वैर रखनेवाली और दुष्टप्रकृति होती है ॥ १८० ॥

तृतीयभावस्थितसूर्यफलम्

तृतीयगस्तीक्ष्णकरः प्रसूते
सौख्येन हीनां वनितां सदैव ।
निरोगदेहां च सुरूपवक्त्रां
विशालवक्षोजनतां नितान्तम् ॥ १८१ ॥

तीसरे घर में जिस स्त्री के सूर्य हो, तो उस स्त्री को सुखरहित,

निरोग शरीर, अच्छे शरीर एवं मुखवाली तथा स्तनभार से नम्र करती है ॥ १८१ ॥

चतुर्थभावस्थितसूर्यफलम्

चतुर्थगस्तीक्ष्णकरः प्रसूते
सौख्येन हीनां वनितां सदैव ।
सरोगदेहां विकरालदंष्ट्रां
प्रभाविहीनां जनताविरुद्धाम् ॥ १८२ ॥

जिस स्त्री के चतुर्थ भाव में सूर्य हो, तो वह स्त्री सुख से हीन, सदा रोगयुक्त देहवाली, भयंकर दाँतोंवाली, कान्ति से हीन तथा सर्वजनों से विरोध रखनेवाली होती है ॥ १८२ ॥

पञ्चमभावस्थितसूर्यफलम्

सुताश्रितः स्वल्पसुतां प्रसूते
नारीप्रधानां व्रतसंयुतां च ।
स्थूलास्यदन्तां पितृमातृभक्तां
प्रियंवदां ब्राह्मणसम्मतां च ॥ १८३ ॥

जिस स्त्री के पञ्चम भाव में सूर्य हो, तो वह स्त्री थोड़ी सन्तानवाली, स्त्रियों में प्रधान तथा व्रतनियमयुक्त, चौड़े मुख तथा बड़े दाँतोंवाली, निज पिता-माता में भक्ति रखनेवाली तथा प्रिय बोलनेवाली और ब्राह्मणों से सत्कार पानेवाली होती है ॥ १८३ ॥

षष्ठभावस्थितसूर्यफलम्

षष्ठे दिनेशः कुरुते प्रगल्भां
हतारिपक्षां वनितां विदग्धाम् ।
प्रशान्तचर्यां प्रियधर्मकृत्यां
धर्मानुरक्तां सुभगां सुरूपाम् ॥ १८४ ॥

जिस स्त्री के षष्ठभाव में सूर्य स्थित हो, तो वह स्त्री अतिशय ढीठ, शत्रुपक्ष को नाश करनेवाली तथा चतुरतायुक्त, शान्त व्यवहार-

वाली, धर्म-कार्य में अभिरुचिवाली, धर्म में प्रीति रखनेवाली, सौभाग्ययुक्त और सुन्दर रूपवाली होती है ॥ १८४ ॥

सप्तमभावस्थितसूर्यफलम्

सूर्येऽस्तसंस्थे पतिभावयुक्ता
नारी भवेत्सर्वसुखाद्विमुक्ता ।
सदैव रौद्रा प्रणयेन हीना
कफाश्रया किल्बिषिणी कुरूपा ॥ १८५ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में सूर्य स्थित हो, तो वह स्त्री पति-व्रता, धर्मरहित, सदा सब सुखों से हीन, हमेशा क्रोधित रहने-वाली, प्रेम से रहित, कफप्रकृति से युक्त, पाप-कर्म करनेवाली और कुरूपा होती है ॥ १८५ ॥

अष्टमभावस्थितसूर्यफलम्

सूर्योऽष्टमस्थानगतः प्रसूते
दारिद्र्यदुःखान्वितबन्धुगोत्राम् ।
नारीकुधर्मान्वितसर्वकृत्यां
विषादयुक्तां क्षतजार्दिताङ्गीम् ॥ १८६ ॥

जिस स्त्री के अष्टमभाव में सूर्य हो, तो वह स्त्री दारिद्र्यदुःख से पीड़ित, अपने गोत्र के भाइयों से युक्त, पाप में तत्पर, खोटे कर्म करनेवाली, विषादसहित और घावयुक्त शरीरवाली होती है ॥१८६॥

धर्मभावस्थितसूर्यफलम्

धर्मस्थितो वासरपः प्रसूते
नारीं कुधर्मां प्रियसाहसां च ।
भाग्यैर्विहीनां बहुशत्रुपक्षां
प्रभूतरोगां विभवैर्विहीनाम् ॥ १८७ ॥

जिस स्त्री के नवम भाव में सूर्य हो, तो वह स्त्री कुधर्मिणी,

साहसी, भाग्यहीन, बहुत शत्रुओं से युक्त, रोगयुक्त और धनहीन होती है ॥ १८७ ॥

दशमभावस्थितसूर्यफलम्

कर्माश्रितो वासरपः प्रसूते
कुकर्मरक्तां वनितां सदैव ।
प्रभावहीनां शिथिलां स्वकृत्ये
स्वभावकृच्छ्राभ्यधिकां नितान्तम् ॥ १८८ ॥

जिस स्त्री के दशम भाव में सूर्य हो, तो वह स्त्री कुकर्मिणी, कान्ति-हीन, कार्य में शिथिल और स्वभावदुष्ट होती है ॥ १८८ ॥

लाभस्थानस्थितसूर्यफलम्

लाभाश्रितः संकुरुते दिनेशो
नारीं सलाभां बहुपुत्रपौत्राम् ।
जितेन्द्रियां सर्वकलासु दक्षां
क्षमान्वितां बान्धवपूजितां च ॥ १८९ ॥

जिस स्त्री के ग्यारहवें भाव में सूर्य हो, तो वह स्त्री लाभसहित, बहुत पुत्र-पौत्रों से सम्पन्न, जितेन्द्रिय, सब कार्यों में चतुर, क्षमा-युक्त और बान्धवप्रिया होती है ॥ १८९ ॥

व्ययभावस्थितसूर्यफलम्

असद्व्ययया द्वादशगे दिनेशे
नारी प्रसूता विनयेन हीना ।
बहुव्यया पानरता नृशंसा
सर्वाशया शौचविवर्जिताङ्गी ॥ १९० ॥

जिस स्त्री के बारहवें भाव में सूर्य हो, तो वह स्त्री खोटे कर्मों में धन व्यय करनेवाली, नम्रता से रहित, बहुत खर्च करनेवाली, मद्यपान में तत्पर, क्रूरस्वभाव, भक्ष्याभक्ष्य खानेवाली और पवित्रतारहित होती है ॥ १९० ॥

लग्नस्थितचन्द्रफलम्

चन्द्रो विलग्ने यदि शुक्लपक्षे
नारीं प्रसूतेऽतिसुरूपगात्राम् ।
कृष्णे कृशां दीनतरां सरोगां
विवादशीलां सततं कुचैलाम् ॥ १६१ ॥

जिस स्त्री के लग्न में शुक्लपक्ष का चन्द्रमा हो, वह स्त्री सुन्दरी होती है और कृष्णपक्ष का चन्द्रमा लग्न में हो, तो वह स्त्री दीन, रोगयुक्त, विवाद करनेवाली और मलिन वस्त्रोंवाली होती है ॥१६१॥

द्वितीयभावस्थितचन्द्रफलम्

धनाश्रितः शीतकरः प्रसूते
प्रभूतवित्तां प्रणयप्रधानाम् ।
धर्मानुकूलां पतिकृत्यदक्षां
नयाधिकां ब्राह्मणदेवभक्ताम् ॥ १६२ ॥

जिस स्त्री के धनभाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री बहुत धनवाली, नम्रता से युक्त, धर्मात्मा, पति की सेवा करनेवाली, नीतियुक्त तथा ब्राह्मण और देवताओं में भक्ति करनेवाली होती है ॥१६२॥

तृतीयभावस्थितचन्द्रफलम्

चन्द्रस्तृतीये कफवातसारां
नारीं प्रसूतेऽतिकठोरवाक्याम् ।
क्रुत्संस्थितां नीतिविवर्जितां च
स्वभावदुष्टां कृपणां कृतघ्नाम् ॥ १६३ ॥

जिस स्त्री के तीसरे भाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री कफवातादियुक्त, कठोर वचन बोलनेवाली, क्रोधयुक्त, नीतिरहित, दुष्टस्वभाव, कृपण और कृतघ्न होती है ॥ १६३ ॥

चतुर्थभावस्थितचन्द्रफलम्

चन्द्रः सुखस्थो बहुसौख्ययुक्तां

नारीं प्रसूतेऽद्भुतभूषणां च ।
स्थिरस्वभावां श्रुतधर्मकृत्यां
भोगाधिकां देवगुरुप्रसक्ताम् ॥ १६४ ॥

जिस स्त्री के चतुर्थ भाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री सुखसौख्य-संपन्न, अद्भुत भूषणों से युक्त, स्थिर स्वभाव, वेद-धर्म माननेवाली, अधिक भोगयुक्त तथा देवता और ब्राह्मणों में आसक्त होती है ॥१६४॥

पञ्चमभावस्थितचन्द्रफलम्

सुताश्रितः शीतकरः सुपुत्रां
करोति नारीं गुणगौरवाढ्याम् ।
प्रभूतभृत्यां सुतसौख्ययुक्तां
धनान्वितां सद्व्यवहारशीलाम् ॥ १६५ ॥

जिस स्त्री के पञ्चम भाव में चन्द्रमा हो, तो वह अच्छे पुत्रों से युक्त, गुण-गौरवयुक्त, नौकर-चाकरोंवाली, पुत्र-सुखसम्पन्न और धनवती तथा व्यवहार में चातुर्ययुक्त होती है ॥ १६५ ॥

षष्ठभावस्थितचन्द्रफलम्

चन्द्रोऽरिसंस्थः कुरुतेऽल्पवित्तां
प्रभूतवैरां विनयेन हीनाम् ।
चलस्वभावां क्षतसर्वगात्रां
पतिप्रयुक्तामनिशं सुरूपाम् ॥ १६६ ॥

जिस स्त्री के षष्ठभाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री थोड़े धनवाली, बहुत शत्रुओंवाली, नम्रतारहित, चञ्चलस्वभाव, व्रणयुक्त, सुन्दर रूपवाली और पतिसहित होती है ॥ १६६ ॥

सप्तमभावस्थितचन्द्रफलम्

चन्द्रोऽस्तसंस्थः कुरुते विदग्धां
पतिप्रियां धर्मविवेकयुक्ताम् ।
सुचारुवाचं विभवैः समेतां

तेजोऽन्वितां पुण्यपरां सुसत्याम् ॥ १९७ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री चतुर, पति को प्यारी, धर्म तथा विवेकयुक्त, मधुर वचन बोलनेवाली, वैभव-सम्पन्न, तेज, पुण्य और सत्य से युक्त होती है ॥ १९७ ॥

अष्टमभावस्थितचन्द्रफलम्

चन्द्रोऽष्टमस्थः कुरुते नृशंसां
नारीं कुनेत्रां कुकुचां कुयोनिम् ।
विहीनवेषाभरणां सरोगां
नितान्तमत्यद्भुतगर्हणां च ॥ १९८ ॥

जिस स्त्री के अष्टम भाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री क्रूरस्वभाव, बुरे नेत्र, बुरे कुच तथा बुरी योनिवाली, रूप और आभूषणों से रहित, रोगसहित और अति निन्दित कर्मसम्पन्न होती है ॥ १९८ ॥

नवमभावस्थितचन्द्रफलम्

धर्माश्रितः शीतकरः प्रसूते
प्रभूतधर्मां वनितां विदग्धाम् ।
भाग्याधिकां कल्पतमां मनोज्ञां
सुभृत्यपुत्रां च सुभूरिसौख्याम् ॥ १९९ ॥

जिस स्त्री के नवम भाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री धर्मशील, सर्वकार्यचतुर, भाग्यवती, मनोहर कान्तिशालिनी, भृत्य तथा पुत्र-सुखसम्पन्न होती है ॥ १९९ ॥

दशमभावस्थितचन्द्रफलम्

कर्माश्रितः शीतकरः प्रसूते
प्रभूतहेमद्रविणां प्रसिद्धाम् ।
नारीं निरीहां कुलसर्वमुख्यां
त्यागान्वितां पुण्यपरां सुसत्याम् ॥ २०० ॥

जिस स्त्री के दशम भाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री बहुत सुवर्ण

तथा धन से युक्त, लोक में विख्यात, इच्छारहित, कुल में मुख्य, दानशील, पुण्य और सत्य से युक्त होती है ॥ २०० ॥

एकादशभावस्थित चन्द्रफलम्

लाभाश्रितः शीतकरः सलाभां
भव्यां विधिज्ञां कुरुते सुदात्रीम् ।
नारीं प्रसन्नां प्रणयेन युक्तां
दानान्वितां रोगविवर्जिताङ्गीम् ॥ २०१ ॥

जिस स्त्री के ग्यारहवें भाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री लाभसहित, सुन्दर कान्तियुक्त, विधियों की जाननेवाली, दात्री, प्रसन्नमूर्त्ति, नम्रता से युक्त और रोगरहित होती है ॥ २०१ ॥

द्वादशभावस्थित चन्द्रफलम्

करोति चन्द्रो व्ययगो व्ययाढ्यां
गतप्रभावां वनितां सुतीव्राम् ।
दीनां नतां नीतिविवर्जितां च
क्षमाविहीनां सरुजां सदैव ॥ २०२ ॥

जिस स्त्री के बारहवें भाव में चन्द्रमा हो, तो वह स्त्री खर्चीली, स्वभावहीन, कठोरचित्त, दीन, नीति तथा क्षमा से रहित और सदैव रोगयुक्त रहती है ॥ २०२ ॥

लग्नस्थितभौमफलम्

लग्नाश्रितो भूतनयः प्रसूते
नारीं महारक्तसुदुःखिताङ्गीम् ।
गतप्रभावां पतिना निरस्तां
सुदुर्भगां गर्वसमन्वितां च ॥ २०३ ॥

जिस स्त्री के लग्न में मंगल हो, तो वह स्त्री रक्तविकारवाली, पीड़ित अङ्गोंवाली, प्रभावहीन, पति से परित्यक्त, ऐश्वर्यहीन और अहङ्कारसम्पन्न होती है ॥ २०३ ॥

धनभावस्थितभौमफलम्

धनाश्रितो भूतनयो विशालां
धनेन हीनां कुरुते कुकान्ताम् ।
पराधिकां कामपरां सरोगां
क्लेशाधिकां केशविवाजतां च ॥ २०४ ॥

जिस स्त्री के धनभाव में मंगल हो, तो वह स्त्री साधारण धनवती, दुष्टस्वभाव, दूसरे के आश्रय पर रहनेवाली, कामासक्त, रोगयुक्त, क्लेश सहन करनेवाली और केशविहीन होती है ॥ २०४ ॥

तृतीयभावस्थितभौमफलम्

तृतीयसंस्थः कुरुते कुपुत्रां
नारीं नितान्तं सुभगां सुशीलाम् ।
बन्धुप्रियां साधुरतां प्रशस्तां
विहीनरोगां प्रथितप्रभावाम् ॥ २०५ ॥

जिस स्त्री के तृतीय भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री कुत्सित पुत्रोंवाली, सौभाग्यवती, सुशील, बन्धुजन से प्रेम रखनेवाली, सज्जनों में अनुरक्त, उदारप्रकृति, रोगविहीन और प्रभावसम्पन्न होती है ॥ २०५ ॥

चतुर्थभावस्थितभौमफलम्

चतुर्थगो भूतनयः प्रसूते
नारीं हताशां हृतकर्मकृत्याम् ।
सौख्येन हीनामधनां विशीलां
जनैर्निरस्तां सततं सरोगाम् ॥ २०६ ॥

जिस स्त्री के चतुर्थ भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री असफल मनोरथोंवाली, धर्म-कर्म-विहीन, सुखरहित, निर्धन, दुःशील, लोगों से बहिष्कृत और सदा रोगयुक्त होती है ॥ २०६ ॥

पञ्चमभावस्थितभौमफलम्

सुताश्रितो भूतनयः प्रसूते

नारीं कुपुत्रां कृपया विहीनाम् ।
कुसङ्गतिं पापविधानरक्तां
श्रुतेन हीनां हतबन्धुवर्गाम् ॥ २०७ ॥

जिस स्त्री के पञ्चम भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री कुत्सित पुत्रोंवाली, दयारहित, दु:संगिनी, पाप कर्म करनेवाली, शास्त्र-विरुद्ध कार्य करनेवाली और बान्धवों से विहीन होती है ॥ २०७ ॥

षष्ठभावस्थितभौमफलम्

रिपुस्थितो भूतनयः प्रसूते
नारीं सनाथां हतशत्रुपक्षाम् ।
प्रभूतकेशां सुजनानुरक्तां
विद्याधिकां रोगविवर्जितां च ॥ २०८ ॥

जिस स्त्री के षष्ठ भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री स्वामी से युक्त, शत्रुओं का दमन करनेवाली, सघन केशोंवाली, सज्जनों से प्रेम रखनेवाली, ज्ञानसम्पन्न और रोगविहीन होती है ॥ २०८ ॥

सप्तमभावस्थितभौमफलम्

अस्ते स्थिते वै धरणीसुतस्तु
बाल्ये प्रसूते विधवां च नारीम् ।
दुष्टस्वभावां विभवेन हीनां
सुकुत्सिताङ्गीं गुणवर्जितां च ॥ २०९ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री बाल्यकाल में ही विधवा होनेवाली, दुष्टस्वभाव, विभवविहीन, टेढ़े-मेढ़े अङ्गोंवाली और गुणविहीन होती है ॥ २०९ ॥

अष्टमभावस्थितभौमफलम्

मृतिस्थितो भूमिसुतः प्रसूते
प्रभूतरोगां सुकृशां विनाथाम् ।
दारिद्र्यदुःखां कृतशोकभाजां

हिंसाधिकां कान्तिविवर्जितां च ॥ २१० ॥

जिस स्त्री के अष्टम भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री रोगिणी, दुर्बलाङ्गी, स्वामिविहीन, दारिद्र्ययुक्त, दुःखिनी, शोकसन्तप्त, हिंसा करनेवाली और कान्तिविहीन होती है ॥ २१० ॥

नवमभावस्थितभौमफलम्

धर्माश्रितो भूतनयो विधर्मां
करोति नारीं सुमुखां सरोगाम्।
भाग्यैर्विहीनां स्वजनैर्निरस्तां
प्रियामिषां पानरतां सदैव ॥ २११ ॥

जिस स्त्री के नवम भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री विधर्मिणी, सुमुखी, रोगिणी, भाग्यहीन, स्वजनों से परित्यक्त, मद्य और मांस का सेवन करनेवाली होती है ॥ २११ ॥

दशमभावस्थितभौमफलम्

कर्माश्रितो भूतनयः प्रसूते
नारीं कुकर्मश्रवणां कुभावाम्।
शीलेन हीनां नितरां विधर्मां
लज्जाविहीनां मतिवर्जितां च ॥ २१२ ॥

जिस स्त्री के दशम भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री कुकर्म करनेवाली, श्रवणविहीन, कुत्सित भावोंवाली, वहाना न करनेवाली, विधर्मिणी, लज्जाहीन और बुद्धिविहीन होती है ॥ २१२ ॥

लाभभावस्थितभौमफलम्

लाभाश्रितः सङ्कुरुते महीजः
प्रभूतलाभां वनितां निरीहाम्।
शुभस्वभावां विविधोपचारा-
मस्वारतां प्रीतिपरां च धर्मे ॥ २१३ ॥

जिस स्त्री के एकादश भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री कार्य में

साफल्य प्राप्त करनेवाली, शान्त और स्वच्छ स्वभाववाली, आवश्यक सामग्रियों से सम्पन्न और धर्म में अभिरुचि रखनेवाली होती है २१३॥

व्ययभावस्थितभौमफलम्

व्ययस्थितो भूतनयः प्रसूते
नारीं कृतघ्नां गुणवर्जिताङ्गीम्।
असद्व्ययां पानपरां नृशंसां
सदातुरां प्रीतिविवर्जितां च॥ २१४ ॥

जिस स्त्री के द्वादश भाव में मंगल हो, तो वह स्त्री कृतघ्न, गुण-हीन, फ़िज़ूलख़र्च, मद्यप, निर्दय, सदा आतुर रहनेवाली और प्रीति-विहीन होती है ॥ २१४ ॥

तनुभावस्थितबुधफलम्

करोति सौम्यस्तनुगः सुरूपां
प्रीतिप्रधानां नयधर्मयुक्ताम्।
विशालनेत्रां प्रचुरान्नपानां
प्रियंवदां सत्यसमन्वितां च॥ २१५॥

जिस स्त्री के लग्न में बुध हो, तो वह स्त्री सुन्दर, प्रेम-रस से पूरित, नीतिनिपुण, बड़े-बड़े नेत्रोंवाली, धन-धान्य आदि से युक्त, प्रिय तथा सत्य वचन बोलनेवाली होती है ॥ २१५ ॥

धनभावस्थितबुधफलम्

धनस्थितः सोमसुतः प्रसूते
धनान्वितां शुद्धियुतां सुरूपाम्।
नारीं द्विजाराधनतत्परां च
क्रतुप्रियां श्रीसहितां गुणाढ्याम्॥ २१६॥

जिस स्त्री के धनभाव में बुध हो, तो वह स्त्री धनवती, पवित्र, सुन्दर, ब्राह्मणों में प्रीति करनेवाली, पूजा-पाठ में संलग्न, लक्ष्मी-सम्पन्न और गुणों से युक्त होती है ॥ २१६ ॥

तृतीयभावस्थितबुधफलम्

तृतीयगः सोमसुतो धनाढ्यां
नारीं प्रसूते सुतमानभाजम्।
जनानुकूलां प्रभुतासमेतां
बन्धुप्रियां त्राणयुतां सुभासम्॥ २१७॥

जिस स्त्री के तृतीय भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री धनवती, मानिनी, पुत्रवती, सर्वमान्य, हुकूमत करनेवाली, बन्धुजन से प्रेम रखनेवाली, दीनों की दीनता के दूर करने का प्रयत्न करनेवाली और सुन्दर होती है॥ २१७॥

चतुर्थभावस्थितबुधफलम्

सौम्यः सुखस्थः सुसुखां प्रसूते
नतां प्रसूतैः सुजनैः सुभृत्यैः।
देवद्विजाराधनतत्परां च
प्रख्यातवंशां प्रियधर्मवर्णाम्॥ २१८॥

जिस स्त्री के चतुर्थभाव में बुध हो, तो वह स्त्री सुखी, अपने जनों और नौकरों को प्रसन्न रखनेवाली, देव-ब्राह्मणों की सेवा में तत्पर, प्रसिद्ध कुल में उत्पन्न, धर्मवती और रूपवती होती है॥२१८॥

पञ्चमभावस्थितबुधफलम्

सुतस्थितः सोमसुतोऽल्पपुत्रां
स्वल्पान्नवित्तां कलहप्रियां च।
वृथाटनां गर्हितसर्वकृत्यां
लक्ष्म्या विहीनां हतसाधुपक्षाम्॥ २१९॥

जिस स्त्री के पञ्चम भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री अल्प पुत्रोंवाली, स्वल्प अन्न और विभववाली, कलहकारिणी, व्यर्थ पर्यटन करनेवाली, निन्दित कार्यों की करनेवाली, लक्ष्मीविहीन और साधुजन से द्वेष रखनेवाली होती है॥ २१९॥

षष्ठभावस्थितबुधफलम्

सौम्यो रिपुस्थो हतशत्रुपक्षां
नारीं प्रभूतैर्विभवैः समेताम् ।
गतायुषं तीव्रकरां सुकामां
परोपकारव्यसनाभिसक्ताम् ॥ २२० ॥

जिस स्त्री के षष्ठ भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री शत्रुओं की पराजय करनेवाली, विभवसम्पन्न, अल्प आयुपवाली, तीव्रस्वभाव, सुन्दर मनोरथोंवाली, परोपकारिणी और व्यसनासक्त होती है॥२२०॥

सप्तमभावस्थितबुधफलम्

सौम्यः कलत्रे प्रवरां विदग्धां
शास्त्रानुरक्तां शुभभर्तृकां च ।
करोति नारीं नियमैरुपेतां
शुभप्रभावां प्रणयान्वितां च ॥ २२१ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री श्रेष्ठस्वभाव, चतुर, शास्त्रानुसार चलनेवाली, सुन्दर पतिवाली, नियम के अनुसार कार्य करनेवाली, प्रभाववाली और प्रणययुक्त होती है ॥२२१॥

अष्टमभावस्थितबुधफलम्

मृत्युस्थितः सोमसुतः कृतघ्नां
नारीं प्रसूते विगताभिमानाम् ।
निरस्तधर्मां जनसंविरुद्धां
सदातुरां भीतिसमन्वितां च ॥ २२२ ॥

जिस स्त्री के अष्टम भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री कृतघ्न, अभिमानहीन, धर्महीन, आपस के लोगों से विरोध रखनेवाली, आतुर रहनेवाली और भयभीत होनेवाली होती है ॥ २२२ ॥

नवमभावस्थितबुधफलम्

धर्माश्रितः सोमसुतः सुकर्मा

पतिप्रधानां वनितां प्रसूते ।
प्रभूतकोशां विनयान्वितां च
सुवर्णभूषां व्रतदानयुक्ताम् ॥ २२३ ॥

जिस स्त्री के नवम भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री सत्कर्म करनेवाली, पतिप्रिया, ऐश्वर्यशालिनी, विनम्र, सुवर्ण के आभूषण पहननेवाली, व्रत और दान से युक्त होती है ॥ २२३ ॥

दशमभावस्थितबुधफलम्

कर्मास्थितः सोमसुतः सुधर्मां
धन्यां प्रसूते वनितां विनीताम् ।
भाग्याधिकां कीर्त्तिपरां सुदक्षां
क्षमाधिकां सत्यसमन्वितां च ॥ २२४ ॥

जिस स्त्री के दशम भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री धर्मचारिणी, माननीय, नम्र, भाग्यशालिनी, कीर्तियुक्त, सुचतुर, सहनशील और सत्यवादिनी होती है ॥ २२४ ॥

लाभभावस्थितबुधफलम्

लाभाश्रितः सोमसुतः प्रसूते
नारीं प्रभूतप्रियपुष्टचित्ताम् ।
सुलाभयुक्तां शुभशीलभाजं
पतिव्रतां बान्धवसम्मतां च ॥ २२५ ॥

जिस स्त्री के एकादश भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री घर के लोगों की प्रिय, पुष्ट विचारोंवाली, लाभयुक्त, शीलवती, पतिव्रता और घर में आदर की दृष्टि से देखी जाती है ॥ २२५ ॥

व्ययभावस्थितबुधफलम्

व्ययाश्रितः सोमसुतः प्रसूते
नारीमलक्ष्मीं विगतप्रतापाम् ।
विवादशीलां विकलां कृशाङ्गीं

गुरोर्वियुक्तां सुजनैर्निरस्ताम् ॥ २२६ ॥

जिस स्त्री के द्वादश भाव में बुध स्थित हो, तो वह स्त्री लक्ष्मी-विहीन, प्रतापरहित, झगड़ालू, अल्पाङ्गी, कृशाङ्गी, गुरुजनों से पृथक् रहनेवाली और आत्मीय जनों से परित्यक्त होती है ॥ २२६ ॥

लग्नभावस्थितगुरुफलम्

लग्नाश्रितो देवगुरुः प्रसूते
सुसत्ययुक्तां सुमनोज्ञभोगाम् ।
गम्भीरवाक्यां प्रियसाधुपक्षां
सुरूपगात्रां प्रमदोत्तमां च ॥ २२७ ॥

जिस स्त्री के लग्न में बृहस्पति हो, तो वह स्त्री सत्यवादिनी, ऐश्वर्यशालिनी, गम्भीर वचन बोलनेवाली, साधुभक्त, सुन्दर और सुडौल शरीरवाली तथा वराङ्गना होती है ॥ २२७ ॥

धनभावस्थितगुरुफलम्

धनस्थितो देवगुरुः प्रसूते
प्रभूतवित्तां सुभगां मनोज्ञाम् ।
सुधर्मिणीं नीतिपरां प्रधानां
गतस्पृहां स्वर्णविभूषणाढ्याम् ॥ २२८ ॥

जिस स्त्री के द्वितीय भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री ऐश्वर्यवती, भाग्यशालिनी, मनोहारिणी, धर्मनिष्ठ, न्यायप्रिय, नारियों में प्रधान और सुवर्ण के आभूषणों से सुसज्जित रहनेवाली होती है ॥ २२८ ॥

तृतीयभावस्थितगुरुफलम्

तृतीयसंस्थः कुरुते सुरेज्यो
नारीं नितान्तं विहतप्रभावाम् ।
सुदोषयुक्तां गुरुताविहीनां
विवर्जिताङ्गीं निधनैः सदैव ॥ २२९ ॥

जिस स्त्री के तृतीय भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री प्रभावहीन, दोषयुक्त, गौरवविहीन, अङ्गहीन और निर्धन होती है ॥ २२९ ॥

चतुर्थभावस्थितगुरुफलम्

चतुर्थसंस्थः कुरुते सुरेज्यो
नारीं प्रसन्नां सुखवित्तयुक्ताम् ।
प्रभूतविद्याभरणां प्रसिद्धां
सुपूजिताङ्गीं गुणगौरवां च ॥ २३० ॥

जिस स्त्री के चतुर्थ भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री प्रसन्नमुख, सुख और धन से युक्त, विद्या और आभूषणोंवाली, प्रसिद्ध, माननीय और गुणगरिमा से सम्पन्न होती है ॥ २३० ॥

पञ्चमभावस्थितगुरुफलम्

सुतस्थितो देवगुरुः सुपुत्रां
नारीं प्रसूते हतपापकृत्याम् ।
सदानुकूलां व्रतधर्मदक्षां
सत्यात्मिकां रम्यसभासु भव्याम् ॥ २३१ ॥

जिस स्त्री के पञ्चम भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री पुत्रवती, पुण्यशालिनी, आत्मीय जनों को प्रिय, व्रत और धर्मकार्य में संलग्न, सत्यवादिनी और सभा-सोसाइटियों में बोलनेवाली होती है ॥ २३१ ॥

षष्ठभावस्थितगुरुफलम्

जीवोऽरिसंस्थो बहुशत्रुपक्षां
नारीं सुधत्ते नयसंयुतां च ।
वहापदं त्रासंसमन्विताङ्गीं
प्रधानदर्पां कृतकोपबाणाम् ॥ २३२ ॥

जिस स्त्री के षष्ठ भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री अनेक

शत्रुओंवाली, नीतिप्रिय, आपत्तिग्रस्त, भयभीत रहनेवाली, दर्पयुक्त और कोपिनी होती है ॥ २३२ ॥

सप्तमभावस्थितगुरुफलम्

कलत्रगो देवगुरुः प्रसूते
स्वभावयुक्तां प्रमदां सुपुण्याम् ।
जनानुरक्तां बहुशास्त्रभाजं
पतिप्रियां कीर्तिसमन्वितां च ॥ २३३ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री उत्तम प्रकृति, पुण्यकार्य करनेवाली, आत्मीय जनों से प्रेम करनेवाली, शास्त्रानुसार चलनेवाली, पतिप्रिया और कीर्तिशालिनी होती है ॥ २३३ ॥

अष्टमभावस्थितगुरुफलम्

जीवोऽष्टमस्थः कुरुतेऽल्पसत्यां
नारीं विशीलां पतिना विमुक्ताम् ।
स्थूलाङ्घ्रिहस्तां व्यसनप्रधानां
बह्वाशनां रोगसमन्वितां च ॥ २३४ ॥

जिस स्त्री के अष्टम भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री असत्यवादिनी, शीलरहित, पति से विमुक्त, मोटे चरण और हाथोंवाली, व्यसनयुक्त, बहुत भोजन करनेवाली और रोगिणी होती है ॥ २३४ ॥

नवमभावस्थितगुरुफलम्

जीवे तपःस्थेऽमररूपयुक्ता
तडागवृक्षोच्चयधर्मकृत्या ।
रम्या प्रशस्ता द्विजभक्तियुक्ता
महाधनानां च निधिः कृतज्ञा ॥ २३५ ॥

जिस स्त्री के नवम भाव में बृहस्पति हो, तो वह स्त्री देवस्वरूपा,

तालाव खोदवानें, बाग़ लगवानें आदि धार्मिक कार्यों को करनेवाली, सुन्दर, उदार ब्राह्मणों की भक्ति में तत्पर, ऐश्वर्यशालिनी और कृतज्ञ होती है ॥ २३५ ॥

दशमभावस्थितगुरुफलम्

कर्माश्रितो देवगुरुः प्रसूते
प्रख्यातकर्माप्तगुणां गुणज्ञाम् ।
प्रभूतदासीविनयप्रगल्भां
नारीं तथैवाद्भुतचेष्टितां च ॥ २३६ ॥

जिस स्त्री के दशम भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री अपने कार्यों द्वारा प्रसिद्ध होनेवाली, शिष्ट, गुणग्राहिका, दासियों से युक्त, विनम्र, निर्भय और अद्भुत व्यापार करनेवाली होती है॥२३६॥

लाभभावस्थितगुरुफलम्

लाभाश्रितो देवगुरुः प्रसूते
नारीं सुदात्रीं बहुकीर्तियुक्ताम् ।
श्रेयोऽन्वितां शिल्पपरां सुसत्यां
सदानुरक्तां गुणकीर्तनेन ॥ २३७ ॥

जिस स्त्री के एकादश भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री दानशील, कीर्तिशालिनी, कल्याणवती, शिल्पकार्य करनेवाली, सत्यवादिनी और स्नेहवती होती है ॥ २३७ ॥

व्ययभावस्थितगुरुफलम्

व्ययाश्रितो देवगुरुः प्रसूते
साधुव्ययां रोगसमन्वितांगीम् ।
लाभाभिभूतां कुलधर्महीनां
निसर्गदुष्टां परधर्मपत्नाम् ॥ २३८ ॥

जिस स्त्री के द्वादश भाव में बृहस्पति स्थित हो, तो वह स्त्री सद्व्यय करनेवाली, रोगिणी, आय प्राप्त करनेवाली, कुलधर्मविहीन,

स्वभावतः दुष्ट और दूसरे का पक्ष तथा धर्म ग्रहण करनेवाली होती है ॥ २३८ ॥

तनुभावस्थितशुक्रफलम्

लग्नाश्रितो दैत्यगुरुः प्रसूते
नारीं सुकान्तां सुभगां विदग्धाम् ।
वित्ताधिकां दोषविवर्जिताङ्गीं
हतारिपक्षां सततं सुशीलाम् ॥ २३९ ॥

जिस स्त्री के लग्न में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री सुन्दर पतिवाली, ऐश्वर्यशालिनी, चतुर, धनवती, दोषहीन अंगोंवाली, शत्रु सम्मर्दिनी और सुशील होती है ॥ २३९ ॥

धनभावस्थितशुक्रफलम्

शुक्रो धनस्थः सधनां प्रसूते
विदग्धचेष्टां प्रमदां सुरूपाम् ।
धर्मध्वजां धर्मपरां सुधन्यां
विख्यातकृत्यां मृदुभाषिणीं च ॥ २४० ॥

जिस स्त्री के द्वितीय भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री धनवती, चतुर, सुन्दर, धर्मप्राण, माननीय, अपने कार्यों द्वारा प्रसन्न रहनेवाली और मृदुभाषिणी होती है ॥ २४० ॥

तृतीयभावस्थितशुक्रफलम्

तृतीयगो दैत्यगुरुः प्रसूते
नारीं सुकृत्यां विनयैः समेताम् ।
युक्तामनेकैः सुसहोदरैश्च
सहोदरीभिश्च तथोत्तमाभिः ॥ २४१ ॥

जिस स्त्री के तृतीय भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री सत्कार्य में तत्पर, विनम्र और अनेक भाइयों तथा उत्तम बहनोंवाली होती है ॥ २४१ ॥

चतुर्थभावस्थितशुक्रफलम्

चतुर्थगो दैत्यगुरुः प्रसूते
प्रभूतसौख्यां वनितां धनाढ्याम् ।
विलासशीलां परधर्मकृत्यां
जितेन्द्रियां वंशविभूषणां च ॥ २४२ ॥

जिस स्त्री के चतुर्थ भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री सुख-सम्पन्न, धनाढ्य, विलासवती, परोपकारिणी, धर्मचारिणी, जितेन्द्रिय और कुल में विख्यात होती है ॥ २४२ ॥

पञ्चमभावस्थितशुक्रफलम्

शुक्रः सुतस्थः प्रकरोति नारीं
साध्वीं समृद्धां बहुकन्यकाढ्याम् ।
रम्यानुकारां खलु सङ्गहीनां
नित्यं प्रधानां निजवंशमध्ये ॥ २४३ ॥

जिस स्त्री के पञ्चम भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री सदाचारिणी, सम्पत्तिशालिनी, कन्याओंवाली, मनोहारिणी, संगहीन और अपने कुल में प्रधान होती है ॥ २४३ ॥

षष्ठभावस्थितशुक्रफलम्

शुक्रोऽरिसंस्थः प्रकरोति नारी-
मीर्ष्याप्रधानां बहुकोपयुक्ताम् ।
तीव्रस्वभावां विजितारिपक्षां
सदा निरस्तां पतिपुत्रवर्गैः ॥ २४४ ॥

जिस स्त्री के षष्ठभाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री ईर्षालु, क्रोधिनी, उग्रस्वभाव, शत्रुमानमर्दिनी और पति, पुत्र आदि से तिरस्कृत होती है ॥ २४४ ॥

सप्तमभावस्थितशुक्रफलम्

कलत्रगो दैत्यगुरुः प्रसूते

नारीं प्रभूतां द्रविणप्रभावाम् ।
पतिप्रियां शास्त्ररतां प्रगल्भां
ह्रितां द्विजानां जनवल्लभां च ॥ २४५ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री ऐश्वर्यशालिनी, पतिप्रिया, शास्त्रानुसार चलनेवाली, धृष्ट, ब्राह्मणभक्त और जनों को प्रिय होती है ॥ २४५ ॥

अष्टमभावस्थितशुक्रफलम्

शुक्रोऽष्टमस्थः कुरुते प्रमत्तां
विषादभाजां विभवैर्वियुक्ताम् ।
दयाविहीनां परवञ्चनार्तां
कुचैलिनीं धर्मविवर्जितां च ॥ २४६ ॥

जिस स्त्री के अष्टम भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री प्रमादिनी, विषादयुक्त, वैभवहीन, दयाहीन, वञ्चक, मलिन वस्त्र धारण करनेवाली और धर्मविहीन होती है ॥ २४६ ॥

नवमभावस्थितशुक्रफलम्

धर्माश्रितो धर्मपरां प्रसूते
शुक्रः सुमुख्यां वनितां च लोके ।
नानार्थवस्त्राश्रयभोजनाढ्यां
सुपुष्टचित्तां पुरुषानुकाराम् ॥ २४७ ॥

जिस स्त्री के नवम भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री धर्माचरण करनेवाली, प्रधान, सम्पन्न, आश्रयदात्री, सुन्दर भोजन करनेवाली, उदारचित्त और पुरुषों के-से अंगोंवाली होती है ॥ २४७ ॥

दशमभावस्थितशुक्रफलम्

कर्माश्रितो दैत्यगुरुः प्रसूते
नारीं सुशस्यां सुधनैः समेताम् ।
प्रसिद्धकर्मप्रतिपूजिताङ्गीं

रूपाधिकां कल्पतरां सुसत्याम् ॥ २४८ ॥

जिस स्त्री के दशम भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री धन-धान्य-सम्पन्न, अपने कार्यों द्वारा प्रसिद्ध होनेवाली, सम्मानयोग्य, सुन्दर और सत्यवादिनी होती है ॥ २४८ ॥

लाभभावस्थितशुक्रफलम्

लाभाश्रितो दैत्यगुरुः प्रसूते
प्रभूतलाभां वनितां सदैव ।
विमुक्तदोषां वहुशास्त्ररक्तां
महाप्रभावां विविधालयां च ॥ २४६ ॥

जिस स्त्री के एकादश भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री आय प्राप्त करनेवाली, दोषविहीन, शास्त्रों में अनुरक्त, प्रभावयुक्त और अनेक गृहोंवाली होती है ॥ २४९ ॥

व्ययभावस्थितशुक्रफलम्

व्ययाश्रितोऽसद्व्ययदुःखभाजं
नारीं प्रसूते भृगुजः सगर्वाम् ।
क्रोधाधिकां कृत्रिमवाक्यरक्तां
रोगान्वितां बुद्धिविहीनदुष्टाम् ॥ २५० ॥

जिस स्त्री के द्वादश भाव में शुक्र स्थित हो, तो वह स्त्री फ़िज़ूल ख़र्ची से दुःख भोगनेवाली, घमंड करनेवाली, कोपिनी, बातें बनानेवाली, रोगिणी, बुद्धिविहीन और दुष्टप्रकृति होती है ॥२५०॥

लग्नभावस्थितशनिफलम्

करोति सौरः खलु लग्नसंस्थो
विरूपदेहां वनितां नितान्तम् ।
आमाधिकां कीर्त्तिविवर्जिताङ्गीं
स्थूलास्थिदन्तां नयनैर्विहीनाम् ॥ २५१ ॥

जिस स्त्री के लग्न में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री बेढंगे शरीर-

वाली, आमरोगिणी, कीर्त्तिविहीन, स्थूल अस्थि तथा दाँतोंवाली और नेत्ररोगिणी होती है ॥ २५१ ॥

धनभावस्थितशनिफलम्

धनाश्रितः सूर्यसुतः प्रसूते
धनेन हीनां वनितां निरस्ताम् ।
सदाभिभूतां प्रणयेन हीनां
नृशंसभावामयसङ्कुलां च ॥ २५२ ॥

जिस स्त्री के द्वितीय भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री धन-हीन, कुटुम्ब के लोगों से परित्यक्त, आलसी, प्रणय-व्यापारविहीन, हिंसक और रोगिणी होती है ॥ २५२ ॥

तृतीयभावस्थितशनिफलम्

तृतीयसंस्थो रविजः प्रसूते
दक्षां प्रधानां वनितां सुधन्याम् ।
बहुप्रजां त्राणविधानसक्तां
प्रशंसितां साधुजनेन नित्यम् ॥ २५३ ॥

जिस स्त्री के तृतीय भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री चतुर, प्रधान, माननीय, अनेक सन्तानोंवाली, अभयदात्री और साधुजनों से प्रशंसित होती है ॥ २५३ ॥

चतुर्थभावस्थितशनिफलम्

करोति मन्दः सुखगोऽल्पसौख्यां
प्रहीणबुद्धिं वनितां कृतघ्नाम् ।
चलस्वभावां विभवैर्विहीनां
सदाऽहितां नीचसमागमां च ॥ २५४ ॥

जिस स्त्री के चतुर्थ भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री अल्प सुख प्राप्त करनेवाली, बुद्धिहीन, कृतघ्न, चञ्चल प्रकृति, विभव-

विहीन, दूसरों का अहित करनेवाली और नीच मनुष्यों से संसर्ग रखनेवाली होती है ॥ २५४ ॥

पञ्चमभावस्थितशनिफलम्

सुताश्रितो भास्करजो विपुत्रां
नारीं प्रसूते घृणया विहीनाम् ।
प्रभूतदर्पां गणिकानुकारां
विवर्जितां साधुसमागमेन ॥ २५५ ॥

जिस स्त्री के पञ्चम भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री पुत्रहीन, घृणाविहीन, दर्प करनेवाली, वेश्याओं का-सा वेष धारण करनेवाली और साधुसमागम से विहीन होती है ॥ २५५ ॥

षष्ठभावस्थितशनिफलम्

मन्दो रिपुस्थः कुरुते विमन्दां
नारीप्रधानां तनयैः समेताम् ।
प्रभूतवस्त्राभरणैः समेतां
गुणानुरक्तां पतिवल्लभां च ॥ २५६ ॥

जिस स्त्री के षष्ठ भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री मन्दमति, नारियों में प्रधान, पुत्रोंवाली, वस्त्र, आभूषण आदि से परिष्कृत, गुणी और पतिवल्लभा होती है ॥ २५६ ॥

सप्तमभावस्थितशनिफलम्

सौरोऽस्तसंस्थो विधवां प्रसूते
विवर्जितां वा पतिना सदैव ।
रोगाधिकां पानरतां कुमित्रां
प्रभूतदोषां बहुपापभाजम् ॥ २५७ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री पति से वियुक्त रहनेवाली या पति को नष्ट करनेवाली, रोगिणी, मद्यप, कुत्सित मित्रोंवाली और दोष तथा पापों से भरपूर होती है ॥२५७॥

अष्टमभावस्थितशनिफलम्

स्थानेऽष्टमे सूर्यसुतः प्रसूते
स्निग्धां च नारीं निजकर्मदुष्टाम् ।
दुष्टस्वभावां गतकर्मसत्यां
मलिम्लुचां वञ्चनतत्परां च ॥ २५८ ॥

जिस स्त्री के अष्टम भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री सरल, दुश्चरित्र, दुष्टस्वभाव, निन्दित कर्म करनेवाली, चौर्य कर्म में दक्ष और प्रतारणा करनेवाली होती है ॥ २५८ ॥

नवमभावस्थितशनिफलम्

धर्माश्रितः सूर्यसुतः प्रसूते
कुकर्मरक्तां वनितां सदैव ।
व्ययाधिकां लुब्धसुहृत्समेतां
निसर्गदुष्टां धनवर्जितां च ॥ २५९ ॥

जिस स्त्री के नवम भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री कुकर्म करनेवाली, अपव्यय करनेवाली, लोभी मित्रोंवाली, स्वभावतः दुष्टप्रकृति और धनविहीन होती है ॥ २५९ ॥

दशमभावस्थितशनिफलम्

कर्माश्रितः सूर्यसुतः प्रसूते
कुकर्मरक्तां विकृतानुकाराम् ।
कुशास्त्रसंगव्यसनाभिभूतां
निसर्गदुष्टां धनवर्जितां च ॥ २६० ॥

जिस स्त्री के दशम भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री कुकर्मिणी, विकृताङ्गी, शास्त्रविरुद्ध आचरण करनेवाली, दुष्टसंगिनी, व्यसनासक्त, स्वभावतः दुष्टप्रकृति और धन से विहीन होती है ॥ २६० ॥

लाभभावस्थितशनिफलम्

लाभाश्रितो भास्करजः प्रसूते

रक्ताधिकां वातकफप्रगल्भाम् ।
विवेकहीनां कुटिलस्वभावां
सदानिरस्तां व्यसनाकुलां च ॥ २६१ ॥

जिस स्त्री के एकादश भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री रक्त-विकारवाली, वायु और कफ की अधिकता रखनेवाली, विचारहीन, कुटिल स्वभाव, आत्मीय जनों से तिरस्कृत और व्यसनों में आसक्त रहनेवाली होती है ॥ २६१ ॥

व्ययभावस्थितशनिफलम्

व्ययाश्रितो भास्करजः प्रसूते
व्ययेन युक्तां कृपणस्वभावाम् ।
असद्व्ययां पापरतां निरस्तां
निसर्गदुष्टां धनवर्जितां च ॥ २६२ ॥

जिस स्त्री के द्वादश भाव में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री ख़र्चीली, कृपण, फ़िज़ूल ख़र्च करनेवाली, पापरत, आत्मीय जनों से तिरस्कृत, स्वभावतः दुष्टप्रकृति और धन से हीन होती है ॥ २६२ ॥

लग्नस्थितराहुफलम्

करोति राहुर्यदि लग्नसंस्थो
विरूपदेहां वनितां विशीलाम् ।
रोगाधिकां मानविवर्जिताङ्गीं
क्रोधान्वितां सर्वजनैर्निरस्ताम् ॥ २६३ ॥

जिस स्त्री के लग्न में शनि स्थित हो, तो वह स्त्री विकलाङ्गी, शीलहीन, रोगिणी, मानविहीन, क्रोधिनी और सर्व जनों से तिरस्कृत होती है ॥ २६३ ॥

धनभावस्थितराहुफलम्

द्वितीयभावे यदि सैंहिकेयो
वित्तैर्विहीनां कुरुते कुकान्ताम् ।

सौख्यैर्विहीनां विधवां सरोगां
दारिद्र्यदुःखान्वितपापभाजम् ॥ २६४ ॥

जिस स्त्री के द्वितीय भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री धनहीन, दुष्ट पतिवाली, सुखों से वञ्चित, पतिहन्त्री, रोगिणी, दुखी और पापिनी होती है ॥ २६४ ॥

तृतीयभावस्थितराहुफलम्

तमस्तृतीयो वनितां प्रसूते
विहीनबन्धुं भगिनीविहीनाम् ।
सुपुष्टदेहां विजितारिवृन्दां
क्षमान्वितां रोगविवर्जितां च ॥ २६५ ॥

जिस स्त्री के तृतीय भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री बन्धु-हीन, भगिनीरहित, पुष्टशरीर, शत्रुमानमर्दिनी, क्षमाशील और रोगहीन होती है ॥ २६५ ॥

चतुर्थभावस्थितराहुफलम्

करोति राहुः सुखगोऽल्पवित्तां
जनैर्विहीनां प्रमदां कृतघ्नाम् ।
चतुष्पदप्रीतिसरोगदेहां
विवर्जितां मातृसुखैर्नितान्तम् ॥ २६६ ॥

जिस स्त्री के चतुर्थ भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री अल्प धनवाली, जनहीन, कृतघ्न, पशुओं में प्रीति रखनेवाली, रोगिणी और सर्वथा मातृसुख से वञ्चित होती है ॥ २६६ ॥

पञ्चमभावस्थितराहुफलम्

सुताभिधाने भवने तमो वै
नारीं प्रमत्तां प्रभुताविहीनाम् ।
स्थूलास्यदन्तां गणिकानुकारां
प्रभाविहीनां स्वजनैर्विमुक्ताम् ॥ २६७ ॥

जिस स्त्री के पञ्चम भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री प्रमादिनी, प्रभुत्वहीन, स्थूल ओष्ठ और दाँतोंवाली, वेश्याओं का-सा वेष धारण करनेवाली प्रभाहीन और आत्मीय जनों से परित्यक्त होती है ॥२६७॥

षष्ठभावस्थितराहुफलम्

तमो रिपुस्थः कुरुते प्रगल्भां
दयान्वितां सर्वजितारिपक्षाम् ।
प्रभूतविद्यां धनधान्ययुक्तां
सदासुभाषीं पतिवल्लभां च ॥ २६८ ॥

जिस स्त्री के षष्ठ भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री धृष्टस्वभाव, दयायुक्त, शत्रुमानमर्दिनी, विद्याव्यसनी, धन-धान्ययुक्त, मिष्टभाषिणी और पतिवल्लभा होती है ॥ २६८ ॥

सप्तमभावस्थितराहुफलम्

तमः कलत्रे पतिभावहीनां
नारीं प्रसूते कुरुते कुरूपाम् ।
सुदुष्टचित्तां कृपणां कृतघ्नां
सदा निरस्तां निजबन्धुवर्गैः ॥ २६९ ॥

जिस स्त्री के सप्तम भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री पति-विद्वेषिणी, कुरूप, दुष्टप्रकृति, कृपण, कृतघ्न और अपने बन्धुजनों से तिरस्कार पानेवाली होती है ॥ २६९ ॥

अष्टमभावस्थितराहुफलम्

यदाष्टमस्थो दिननाथशत्रुः
सरोगदेहां विधवां कुरूपाम् ।
कठोरचित्तां व्यभिचारशीलां
महागदैः पीडितलोकहीनाम् ॥ २७० ॥

जिस स्त्री के अष्टम भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री रोगिणी, पति को नष्ट करनेवाली, कुरूप, कठोरचित्त, व्यभिचारिणी, अनेक

रोगों से पीड़ित और लोगों की दृष्टि में हीन होती है ॥ २७० ॥

नवमभावस्थितराहुफलम्

यदा तपःस्थो रजनीशशत्रु-
र्नारीं विधर्मां परधर्मपक्षाम् ।
प्रियामिषां पानरतां नृशंसां
वृथाटनां कीर्तिविवर्जितां च ॥ २७१ ॥

जिस स्त्री के नवम भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री विधर्मिणी, अपने विपक्षी का पक्ष ग्रहण करनेवाली, आमिषसेविनी, मद्यप, निर्दय, व्यर्थ भ्रमण करनेवाली और कीर्ति से हीन होती है ॥२७१॥

दशमभावस्थितराहुफलम्

सिंहीसुतश्चेद्दशमे स्थितः स्या-
न्नारीं प्रसूते पितृमातृहीनाम् ।
पत्या निरस्तां स्वजनैर्विरुद्धां
क्रोधान्वितां सर्वहतारिपक्षाम् ॥ २७२ ॥

जिस स्त्री के दशम भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री माता और पिता से हीन, पति द्वारा निष्काशित, स्वजनों से विरोध रखनेवाली, कोपिनी और शत्रुमर्दिनी होती है ॥ २७२ ॥

लाभभावस्थितराहुफलम्

लाभे तमोऽतीव सुरूपयुक्तां
सदाविनीतां पतिवल्लभां च ।
तुरङ्गनागैः सहितां प्रसन्नां
सुभृत्यपुत्रैर्वजितां समेताम् ॥ २७३ ॥

जिस स्त्री के एकादश भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री रूपवती, अत्यंत नम्र, पतिप्रिया, हाथी-घोड़े की सवारी रखनेवाली, हँसमुख, पुत्र और नौकरों से युक्त होती है ॥ २७३ ॥

व्ययभावस्थितराहुफलम्

राहुर्व्ययस्थः कुरुते कुकर्मा-
मसद्व्ययां दुःखदरिद्रभाजम् ।
जनैर्निरस्तां पतिपुत्रहीनां
व्ययाधिकां नेत्ररुजा समेताम् ॥ २७४ ॥

जिस स्त्री के द्वादश भाव में राहु स्थित हो, तो वह स्त्री कुकर्मिणी, फ़िजूलख़र्च, दुखी, दरिद्र, लोगों द्वारा तिरस्कृत, पति तथा पुत्र से हीन, बहुत ज़्यादा ख़र्च करनेवाली और नेत्ररोगिणी होती है ॥ २७४ ॥

केतोर्द्वादशभावानां फलानि

राहुवत्तु फलं सर्वं केतोरपि सदैव हि ।
न पृथङ्मुनिभिः प्रोक्तमतो नात्र विवेचितम् ॥ २७५ ॥

राहु के बारह भावों के जो फल कहे गए हैं, वे ही फल केतु के भी समझ लेने चाहिए। इसीलिये प्राचीन मुनियों ने केतु का पृथक् फल नहीं लिखा है ॥ २७५ ॥

ग्रहाणां फलविषये फलितार्थकथनम्

प्रदिष्टं यत्फलं पूर्वं ग्रहाणां मुनिभाषितम् ।
कुलानुसारतः प्रोच्यं बलाबलविवेचनात् ॥ २७६ ॥

अनेक मुनियों के मत के अनुसार जो फल पहले लिखे जा चुके हैं वे फल कुल के अनुसार बलाबल का विचार करके कहने चाहिए ॥ २७६ ॥

सकलं तु फलं नैव कासामपि विनिर्दिशेत् ।
स्वस्वकर्मानुसारेण ग्रहाः फलकरा हि वै ॥ २७७ ॥

ज्योतिषियों को यह जान लेना उचित है कि किसी भी प्राणी का समस्त फल नहीं घटित होता है। कारण, ग्रह प्रत्येक प्राणियों के कर्मानुसार फलदायक होते हैं ॥ २७७ ॥

न मुनीनां मते शङ्का भेदप्रत्ययकारिणी ।
कार्या बुधवरैस्ते हि दृष्टतत्त्वार्थभाषिणः ॥ २७८ ॥

मुनि लोग राग-द्वेष से रहित और भविष्य के जाननेवाले होते हैं, इस कारण उनके फलाफल के विषय में अविश्वास का कर लेना बुद्धिमानों को उचित नहीं है ॥ २७८ ॥

कालदेशकुलाचारसङ्गकर्मानुसारतः ।
दिशन्ति फलमेते हि ग्रहाः सूक्ष्मप्रमाणतः ॥ २७९ ॥

ग्रहगण देश, काल, कुलाचार, कर्म, सत्संग या कुसंग के अनुसार समयानुकूल फलदायक होते हैं ॥ २७९ ॥

देवतागुरुसेवातो विमुखा दम्भलम्पटाः ।
ग्रहाणां फलमाख्यातुं नैव शक्ताः कथञ्चन ॥ २८० ॥

आजकल के ज्योतिर्वित् प्रायः देवता और गुरुजनों की सेवा से विमुख, दम्भी और लम्पट होते हैं इस कारण ग्रहों का समग्र फल कहने में असमर्थता होती है ॥ २८० ॥

स्त्रीजातके फलविचारः

प्राहुस्तुल्यं नरवनितयोर्जन्मह्योत्थविधिज्ञाः
किन्तु स्त्रीणां फलमनुचितं तत्पतौ तत्प्रकल्प्यम् ।
द्यूनाद्वाच्यः पतिशुभगते रन्ध्रगे भर्तृमृत्यु-
र्नीहारांशोरुदयगृहतस्तद्वपुश्चिन्तनीयम् ॥ २८१ ॥

ज्योतिर्वित् मुनियों ने जन्मकाल में जो फल पुरुषों के कहे हैं, वे ही फल स्त्रियों के भी कहने चाहिए । जो राजयोगादि फल स्त्रियों में घटित नहीं हो सकते वे फल उनके पतियों में घटित होते हैं । लग्न से वा चन्द्रमा से तथा सप्तम स्थान से पति के शुभ फलों का विचार करे । अष्टम भाव से भर्त्ता की मृत्यु का विचार किया जाता है । लग्न का चन्द्रमा जिस स्थान में होता है उस स्थान से स्त्री के शरीर का विचार करे ॥ २८१ ॥

वैधव्यादेर्विचारः

वैधव्यं निधनगृहे पतिसौभाग्यं सुखं च यामित्रे ।
सौन्दर्यादिलग्नगृहे विचिन्तयेत्पुत्रसम्पदं नवमे ॥ २८२ ॥

अष्टम स्थान से विधवादिक अनिष्ट फल, सप्तम स्थान से पति-सौभाग्यादिक शुभ फल, लग्न से शरीरसौन्दर्यादिक, नवम स्थान से पुत्रसम्पत्त्यादि का विचार करे ॥ २८२ ॥

स्थानविशेषेण शुभाशुभफलम्

एषु स्थानेषु युताः सौम्याः शुभदा बलान्विता ज्ञेयाः ।
क्रूरास्तु नेष्टफलदा भवनेशविवर्जिताः सदा चिन्त्याः॥२८३॥

जन्मकाल के समय इन स्थानों में शुभग्रह हों, तो शुभफल और पापग्रह हों, तो अनिष्ट फल होता है । यदि पूर्वोक्त स्थानों के स्वामी पापग्रह भी हों और अपने स्थान में स्थित हों, तो श्रेष्ठ फल को देते हैं, अनिष्टफलदायक नहीं होते ॥ २८३ ॥

त्रिशांशवशात्फलनिरूपणम्

लग्नेन्द्वोर्यो बलवाँस्तस्य त्रिंशांशकैः फलं वाच्यम् ।
त्रिंशांशे बलवाँस्तत्प्रोक्तफलानि निसर्गतो यान्ति ॥२८४॥

जन्मलग्न वा चन्द्रमा इनमें जो अधिक बली हो उसी के त्रिंशांश से फल कहना चाहिए ॥ २८४ ॥

लग्नेऽथवेन्दौ कुजराशियाते
त्रिंशांशकस्थे कुजपूर्वकाणाम् ।
कन्यैव दुष्टा सुशठा च साध्वी
दुर्वृत्तियुक्ता भवतीह दासी ॥ २८५ ॥

लग्न या चन्द्रमा मंगल की राशि में स्थित होकर मंगल के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह स्त्री विवाह से पूर्व ही व्यभिचारिणी, उसी राशि में स्थित लग्न वा चन्द्रमा बुध के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह स्त्री मायाविनी, बृहस्पति के त्रिंशांश में स्थित हो,

तो वह स्त्री पतिव्रता, शुक्र के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह स्त्री दुर्वृत्ता और शनि के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह स्त्री दासी होती है ॥ २८५ ॥

तारानायकपुत्रभेऽवनिसुते त्रिंशल्लवे कापटा
शौक्रे हीनमनोभवे शशिसुतस्यातीव युक्ता गुणैः ।
देवाधीशपुरोहितस्य हि भवेत्साध्वी नितान्तं तथा
खाग्न्यंशेऽर्कसुतस्यसानिगदिताक्लीबस्यभार्याबुधैः ॥२८६॥

लग्न वा चन्द्रमा बुध की राशि में स्थित होकर मंगल के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या छल करनेवाली, शुक्र के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या रतिक्रीडा से हीन, बुध के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या बहुत गुणोंवाली, बृहस्पति के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या पतिव्रता और शनि के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या नपुंसक की स्त्री होती है ॥ २८६ ॥

देवाचार्यगृहेऽमृतांशुरथवा लग्नं खवह्न्यंशके
भूसूनोर्गुणशालिनी सुरगुरोः ख्याता गुणानां गणैः ।
तारास्वामिसुतस्य चारुविभवा शुक्रस्य साध्वी भवे-
न्नूनं भानुसुतस्य चाल्पसुरता कान्ता बुधैः कीर्तिता ॥२८७॥

लग्न वा चन्द्रमा बृहस्पति की राशि में स्थित होकर मंगल के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या गुणवती, बृहस्पति के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या अनेक गुणों से ख्यात होनेवाली, बुध के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या, विपुल धनवती, शुक्र के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या पतिव्रता और शनि के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह अल्परति करनेवाली होती है ॥ २८७ ॥

दैत्याचार्यगृहे सुरेन्द्रसचिवस्याकाशवह्न्यंशके
लग्ने वाप्युडुनायके गुणवती भौमस्य दौष्ट्याधिका ।
सौम्यस्यातिकलाकलापकुशला शुक्रस्य चञ्चद्गुणै-

युंक्ताद्यैर्निपुणैर्दिवामणिसुतस्यांशे पुनर्भूरिति ॥ २८८ ॥

लग्न वा चन्द्रमा शुक्र की राशि में स्थित होकर बृहस्पति के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या गुणवती, मंगल के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या दुष्टा, बुध के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या सकल कलाओं में चतुर, शुक्र के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या सकल सद्गुणों से युक्त और शनि के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या दो पतियोंवाली होती है ॥ २८८ ॥

मन्दालये खाग्निलवे कुजस्य
दासी च सौम्यस्य खला हि बाला ।
बृहस्पतेः स्यात्पतिदेवता सा
वन्ध्या भृगोर्नीचरतार्कसूनोः ॥ २८९ ॥

लग्न वा चन्द्रमा शनि की राशि में स्थित होकर मंगल के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या दासी, बुध के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या दुष्टा, बृहस्पति के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या पतिव्रता, शुक्र के त्रिंशांश में,स्थित हो, तो वह कन्या बन्ध्या और शनि के त्रिंशांश में स्थित हो, तो वह कन्या नीच पुरुष से संग करनेवाली होती है ॥ २८९ ॥

सामुद्रिकरेखाविचारः

चक्रस्वस्तिकशंखाब्जध्वजमीनातपत्रवत् ।
यस्याः पादतले रेखा सा भवेत्क्षितिपाङ्गना ॥ २९० ॥

जिस कन्या के पादतल में चक्र, स्वस्तिक, शंख, कमल, ध्वजा, मीन और छत्र के समान रेखाएँ हों, तो वह कन्या रानी होती है ॥ २९० ॥

भवेदखण्डभोगायोर्ध्वमध्यांगुलिसंयुता ।
रेखाऽऽखुसर्पकाकाभा दुःखदारिद्र्यसूचिका ॥ २९१ ॥

जिस कन्या के बीच की अंगुली तक अखण्डित रेखा ऊर्ध्वगामी

हो, तो वह कन्या सौभाग्यवती और जिसके पैर में चूहे, सर्प और कौवा के समान रेखाएँ हों, वह कन्या दुःखदारिद्र्य से युक्त होती है ॥ २६१ ॥

उन्नतो मांसलोऽङ्गुष्ठो वर्त्तुलोऽतुलभोगदः ।
वक्रो ह्रस्वश्च चिपटः सुखसौभाग्यभञ्जकः ॥
विधवा विपुलेन स्याद्दीर्घाङ्गुष्ठेन दुर्भगा ॥ २६२ ॥

जिस कन्या के पैरों के अँगूठे ऊँचे, मांससहित और गोल हों, तो वह कन्या सुख भोगनेवाली, जिसके अँगूठे टेढ़े, छोटे और चिपटे हों, तो वह कन्या सौभाग्यहीन, जिसके अँगूठे बहुत बड़े हों, तो वह कन्या विधवा और जिस कन्या के अँगूठे लम्बे हों, तो वह कन्या दुर्भगा होती है ॥ २६२ ॥

दीर्घाङ्गुलीभिः कुलटा कृशाभिरतिनिर्धना ।
ह्रस्वायुष्या च ह्रस्वाभिर्भुग्नाभिर्भुग्नवर्त्तिनी ॥ २६३ ॥
चिपटाभिर्भवेद्दासी विरलाभिर्दरिद्रिणी ।
परस्परं समारूढाः पादाङ्गुल्यो भवन्ति हि ॥
हत्वा बहूनपि पतीन्परप्रेष्या तदा भवेत् ॥ २६४ ॥

जिस कन्या की अँगुलियाँ अधिक लम्बी हों, तो वह कन्या कुलटा, पतली हों, तो धनहीन, बहुत छोटी हों, तो अल्पायु, छोटी-बड़ी हों, तो कपटी, चपटी हों, तो दासी, छिदरी हों, तो दरिद्री, एक के ऊपर एक चढ़ी हों, तो अनेक पति के मारने के बाद कुटिनी हो जाती है ॥ २६३-२६४ ॥

यस्याः पथि समायान्त्या रजो भूमेः समुच्छलेत् ।
सा पांसुला प्रजायेत कुलत्रयविनाशिनी ॥ २६५ ॥

जिस स्त्री के चलने से अधिक धूलि उड़े, वह स्त्री कुलटा और तीनों कुलों का नाश करनेवाली होती है ॥ २६५ ॥

यस्याः कनिष्ठिका भूमिं न गच्छन्त्याः परिस्पृशेत् ।

सा निहत्य पतिं योषा द्वितीयं कुरुते पतिम् ॥ २६६ ॥

जिस स्त्री की कनिष्ठिका पृथिवी का स्पर्श न करे, तो वह स्त्री पति को मारकर दूसरे को पति बनानेवाली होती है ॥ २६६ ॥

अनामिका च मध्या च यस्या भूमिं न संस्पृशेत् ।
पतिद्वयं निहन्त्याद्या द्वितीया च पतित्रयम् ॥ २६७ ॥

जिस स्त्री की अनामिका और मध्यमा पृथिवी का स्पर्श न करे, इनमें पहली दो पतियों को और दूसरी तीन पतियों को मारकर व्यभिचारिणी होती है ॥ २६७ ॥

पतिहीनत्वकारिण्यौ हीने ते द्वे इमे यदि ।
प्रदेशिनी भवेद्यस्या अंगुष्ठाद्व्यतिरेकिणी ॥ २६८ ॥
कन्यैव कुलटा सा स्याद्दोष एवं विनिश्चितः ।
मृदवोऽङ्गुलयः शस्ता घनावृत्ताः समुन्नताः ॥ २६९ ॥

जिस कन्या की कनिष्ठिका और अनामिका छोटी हो, वह कन्या पतिहीन हो जाती है । जिस स्त्री की अँगूठे के पास की अँगुली बड़ी हो, वह कुमारी व्यभिचारिणी, और जिसकी अँगुलियाँ कोमल, घनी और ऊँची हों वह कन्या श्रेष्ठ है ॥ २६८-२६९ ॥

पादनखलक्षणम्

स्निग्धाः समुन्नतास्ताम्रावृत्ताः पादनखाः शुभाः ॥३००॥

जिस कन्या के नख चिकने, ऊँचे, लाल और गोल हों, वे शुभ होते हैं ॥ ३०० ॥

योनिलक्षणम्

शुभः कमठपृष्ठाभो गजस्कन्धोपमो भगः ।
वामोन्नतस्तु कन्याजः पुत्रजो दक्षिणोन्नतः ॥ ३०१ ॥

जिस कन्या की योनि कछुए की पीठ की तरह या हाथी के स्कन्धों के समान हो, तो शुभ होती है । बाईं तरफ कुछ ऊँची

हो, तो वह कन्या सन्तानवाली और दक्षिण तरफ़ कुछ ऊँची हो, तो पुत्र सन्तानवाली होती है ॥ ३०१ ॥

नाभिलक्षणम्

गम्भीरदक्षिणावर्त्ता नाभिः स्यात्सुखसम्पदे ।
वामावर्त्ता समुत्ताना व्यक्तग्रन्थिर्न शोभना ॥ ३०२ ॥

जिस कन्या की नाभि गहरी और दक्षिणावर्त्त हो, तो सुख संपत्तिकारक, एवं ऊपर को उठी, वामावर्त्त तथा ग्रंथियोंवाली हो, तो अशुभकारक होती है ॥ ३०२ ॥

कुक्षिलक्षणम्

सूते सुतान्बहून्नारी पृथुकुक्षिः सुखास्पदम् ।
क्षितीशं जनयेत्पुत्रं मण्डूकाभेन कुक्षिका ॥ ३०३ ॥
उन्नतेन वलीभाजा सावर्त्तेनापि कुक्षिणा ।
वन्ध्या प्रव्रजिता दासी क्रमाद्योषा भवेदिह ॥ ३०४ ॥

भारी कुक्षि (कोखि)-वाली स्त्री बहुपुत्रवती और सुखोपभोग करनेवाली, मण्डूक के समान कुक्षिवाली स्त्री राजा को उत्पन्न करने-वाली, ऊँची कमरवाली स्त्री बाँझ, बलवान् कुक्षिवाली स्त्री संन्या-सिनी और घूमी हुई कुक्षिवाली स्त्री दासी होती है ॥३०३-३०४॥

उदरलक्षणम्

उदरेणातितुच्छेन विशिरेण मृदुत्वचा ।
योषिद्भवति भोगाढ्या नित्यं मिष्टान्नसेविनी ॥ ३०५ ॥

जिस स्त्री का उदर (पेट) छोटा, नाड़ियों से रहित, कोमल और त्वचायुक्त हो, वह भोग करने योग्य और मिष्टान्नप्रिय होती है ॥ ३०५ ॥

सुविशालोदरी नारी निरपत्या च दुर्भगा ।
प्रलम्बजठरा हन्ति श्वशुरं चापि देवरम् ॥ ३०६ ॥

बड़े पेटवाली स्त्री सन्तानरहित और दुर्भगा, लम्बे-चौड़े पेट-

वाली स्त्री श्वशुर और देवर का नाश करनेवाली होती है ॥३०६॥

मध्यक्षामा च सुभगा भोगाढ्या सवलित्रया ।
ऋज्वी तन्वी च रोमाली यस्याः सा शर्मनर्मभूः ॥३०७॥

जिस स्त्री का मध्य भाग सूक्ष्म और तीन वलियों से युक्त हो, वह श्रेष्ठ. जिस स्त्री का उदर सीधी और बारीक रोम की रेखाओं से युक्त हो, वह स्त्री कल्याणवती होती है ॥ ३०७ ॥

कपिला कुटिला स्थूला विच्छिन्ना रोमराजिका ।
चौरवैधव्यदौर्भाग्यं विदध्यादिह योषिताम् ॥ ३०८ ॥

जिसका उदर पीला, तिरछी और छेदयुक्त रोमपंक्तियों से युक्त हो, वह स्त्री चोरी करनेवाली, विधवा और दुष्टा होती है ॥३०८॥

कुचाग्रलक्षणम्

सुदृशां चूचुकयुगं शस्तं श्यामं सुवर्त्तुलम् ।
अन्तर्भग्नं च दीर्घं च कृशं क्लेशाय जायते ॥ ३०९ ॥

जिस स्त्री के कुचों का अग्रभाग श्याम वर्ण और गोल हो, तो कल्याणकारक और जिसके कुच भीतर को छिदे हुए, दुर्बल तथा लम्बे हों, तो वे कुच क्लेशदायक होते हैं ॥ ३०९ ॥

पाणितललक्षणम्

मृदुमध्योन्नतं रक्तं तलं पाण्योररन्ध्रकम् ।
प्रशस्तं शस्तरेखाढ्यमल्परेखं शुभश्रियम् ॥ ३१० ॥

जिस स्त्री की हथेली कोमल, बीच से ऊँची, छेदरहित, श्रेष्ठ रेखाओं से युक्त और थोड़ी रेखाओंवाली हो, वह श्रेष्ठ कही गई है ॥ ३१० ॥

विधवा बहुरेखेण विरेखेण दरिद्रता ।
भिक्षुकी तु शिराढ्येन नारी करतलेन वै ॥ ३११ ॥

जो स्त्री बहुत रेखाओंवाली हो, वह विधवा, रेखाओं से हीन

हाथवाली दरिद्री और नसों से व्याप्त हथेलीवाली स्त्री भिखारिन होती है ॥ ३११ ॥

हस्तरेखालक्षणम्

रक्ता व्यक्ता गभीरा च स्निग्धा पूर्णा च वर्तुला ।
कररेखाङ्गनायाः स्याच्छुभा भाग्यानुसारतः ॥ ३१२ ॥

जिस स्त्री के हाथ में लालवर्ण, प्रकट, गहरी, चिकनी, पूरी और गोल रेखाएँ हों, वह स्त्री भाग्यवती होती है ॥ ३१२ ॥

मत्स्येन सुभगा नारी स्वस्तिकेन वसुप्रदा ।
पद्मेन भूपतेर्नारी जनयेद्भूपतिं सुतम् ॥ ३१३ ॥

जिस स्त्री की रेखा मछली के समान हो, वह स्त्री सुभगा, जिसके तिरकटी रेखा हो, वह धनवती, और जिसके कमल के समान रेखा हो, वह रानी होती है ॥ ३१३ ॥

चक्रवर्तिस्त्रियाः पाणौ नद्यावर्तः प्रदक्षिणः ।
शंखातपत्रकमठा नृपमातृत्वसूचकाः ॥ ३१४ ॥

जिस स्त्री के नदी के समान दक्षिणावर्त रेखा हो, वह चक्रवर्ती की पत्नी, जिसके शंख, छत्र और कछुए के समान रेखाएँ हों, वह स्त्री राजमाता होती है ॥ ३१४ ॥

तुलामानाकृती रेखा वणिक्पत्नी तु सा भवेत् ।
गजवाजिवृषाकाराः करे वामे मृगीदृशाम् ॥ ३१५ ॥

जिस स्त्री की रेखा तराजू की डंडी के समान हो, वह वैश्य की स्त्री और धनवती, जिसके बाएँ हाथ में हाथी, घोड़ा और बैल के समान रेखाएँ हों, वह स्त्री रानी होती है ॥ ३१५ ॥

अंगुष्ठमूलान्निर्गत्य रेखा याति कनिष्ठिकाम् ।
यदि सा पतिहन्त्री स्याद्दूरतस्तां त्यजेत्सुधीः ॥ ३१६ ॥

जिस स्त्री के अँगूठे के मूल जड़ से चलकर कनिष्ठिकापर्यन्त रेखा चली जाय, वह स्त्री पति को मारनेवाली होती है इस कारण

बुद्धिमान् को चाहिए कि वह उस स्त्री का त्याग कर देवे ॥ ३१६ ॥

अंगुलिलक्षणम्

अंगुल्यश्च सुपर्वाणो दीर्घावृत्ताः क्रमात्कृशाः ।
चिपिटाः स्थपुटा रुक्षाः पृष्ठरोमयुजोऽशुभाः ॥ ३१७ ॥

जिस स्त्री की अँगुलियाँ सुन्दर पोरोंवाली, गोल और क्रम से दुर्बलता लिए हुए हों, तो शुभदायक, जिसकी चिपटी, कुबड़ी, रूखी और पृष्ठप्रदेश में रोमयुक्त हों, तो अशुभ फलकारक होती हैं ॥ ३१७ ॥

अतिह्रस्वाः कृशा वक्रा विरला रोमहेतुकाः ।
दुःखयाङ्गुलयः स्त्रीणां बहुपर्वसमन्विताः ॥ ३१८ ॥

जिस स्त्री की अँगुलियाँ बहुत छोटी, पतली, टेढ़ी, बिरली, रोमयुक्त और बहुत गाँठोंवाली होती हैं, वे दुःखद हैं ॥ ३१८ ॥

अंगुलीनखलक्षणम्

अरुणाः सशिखास्तुंगाः करजाः सुदृशां शुभाः ।
निम्ना विवर्णाः शुक्त्याभाः पीता दारिद्र्यसूचकाः ॥ ३१९ ॥

जिस स्त्री के अँगुलियों के नख लालवर्ण, चोटीदार और ऊँचे हों, तो वह स्त्री सौभाग्ययुक्त, जिसके नख मुलायम, फैले हुए, सीप के समान और पीत वर्ण के हों, वह स्त्री दरिद्रिणी होती है ॥३१९॥

नखेषु बिन्दवः श्वेताः प्रायः स्युः स्वैरिणी स्त्रियाः ।
पुरुषा अपि जायन्ते दुःखिमः पुष्पितैर्नखैः ॥ ३२० ॥

जिस स्त्री के नख सफ़ेद बिंदुओं से युक्त हों, वह व्यभिचारिणी और सफ़ेद बिन्दुओं से युक्त नखवाले पुरुष भी दुखी रहते हैं ॥३२०॥

पृष्ठलक्षणम्

अन्तर्निमग्नवंशास्थिः पृष्ठिः स्यान्मांसला शुभा ।
पृष्ठेन रोमयुक्तेन वैधव्यं लभते ध्रुवम् ॥
भुग्नेन विततेनापि सशिरेणापि दुःखिता ॥ ३२१ ॥

जिस स्त्री की पीठ भीतर को नीची, बाँस के समान टेढ़ी और हाड़ से युक्त हो, तो वह स्त्री सौभाग्यशालिनी, जो स्त्री रोमयुक्त पीठवाली हो, तो वह विधवा और जिसकी पीठ टेढ़ी, नीची तथा नसों से युक्त हो, तो वह स्त्री दुःख भोगनेवाली होती है ॥ ३२१ ॥

कण्ठलक्षणम्

मांसलो वर्त्तुलः कण्ठः प्रशस्तश्चतुरङ्गुलः ।
शस्ता ग्रीवा त्रिरेखाङ्का त्वव्यक्तास्थिः सुसंहता ॥३२२॥

जिस स्त्री का कण्ठ मांसयुक्त, गोल और चार अंगुल प्रमाणवाला हो, तो वह स्त्री सौभाग्यशालिनी, जिसका कण्ठ तीन रेखाओं से तथा छिपी हुई हड्डियों से युक्त हो, तो वह कण्ठ शुभदायक होता है ॥ ३२२ ॥

निर्मांसा चिपिटा दीर्घाः स्थपुटा न शुभप्रदा ।
स्थूलग्रीवा च विधवा वक्रग्रीवा च किंकरी ॥
वन्ध्या हि चिपिटग्रीवा ह्रस्वग्रीवा च निःसुता ॥३२३॥

जिस स्त्री का कण्ठ मांसरहित, चिपटा, बड़ा लंबा और नीचा हो, तो वह कण्ठ अच्छा नहीं होता। एवं मोटी गर्दनवाली स्त्री विधवा, टेढ़ी गर्दनवाली स्त्री दासी, चिपटी गर्दनवाली स्त्री बाँझ और छोटी गर्दनवाली स्त्री सन्तानहीन होती है ॥ ३२३ ॥

कपोललक्षणम्

शस्तौ कपोलौ वामाक्ष्याः पीनवृत्तौ समुन्नतौ ।
रोमशौ पुरुषौ निम्नौ निर्मांसौ परिवर्जयेत् ॥ ३२४ ॥

जिस स्त्री के कपोल मोटे, गोल और ऊँचे होते हैं, वे शुभ तथा जिसके कपोल रोमयुक्त, कठोर, नीचे और मांसरहित होते हैं, वे कपोल अशुभ हैं ॥ ३२४ ॥

मुखलक्षणम्

समं समांसं सुस्निग्धं स्वामोदं वर्त्तुलं मुखम् ।

जनितृवदनच्छायं धन्यानामिह जायते ॥ ३२५ ॥

किसी-किसी अति सौभाग्यवती स्त्री का मुख मांसयुक्त, चिकना, सुगन्धित, गोलाकार, सम और पिता के मुख के समान होता है ॥ ३२५ ॥

अधरोष्ठलक्षणम्

पाटलो वर्त्तुलः स्निग्धो रेखाभूषितमध्यभूः ।
सीमन्तिनीनामधरो धराजानिप्रिया भवेत् ॥ ३२६ ॥

जिस स्त्री का अधरोष्ठ (नीचे का ओष्ठ) लालवर्ण, चिकना, गोल और रेखाओं से शोभित हो, तो वह स्त्री रानी होती है ॥३२६॥

कृशः प्रलम्बः स्फुटितो रुक्षो दौर्भाग्यसूचकः ।
श्यावः स्थूलोऽधरोष्ठः स्याद्वैधव्यकलहप्रियः ॥ ३२७ ॥

जिस स्त्री का अधरोष्ठ दुर्बल, लम्बा, फटा और रूखा हो, तो वह ओष्ठ अनिष्टसूचक, जिसका ओष्ठ पीलापन से युक्त और मोटा हो, तो वह स्त्री विधवा और कलहप्रिया होती है ॥ ३२७ ॥

दन्तलक्षणम्

गोक्षीरसन्निभाः स्निग्धा द्वात्रिंशद्दशनाः शुभाः ।
अधस्तादुपरिष्टाच्च समास्तोकसमुन्नताः ॥ ३२८ ॥

जिस स्त्री के दाँत गोदुग्ध के समान स्वच्छ, चिकने, नीचे-ऊपर समान, कुछ ऊँचे-नीचे हों, तो वे दाँत शुभकारक होते हैं ॥ ३२८ ॥

पीताः श्यावाश्च दशनाः स्थूला दीर्घा द्विपंक्तयः ।
शुक्त्याकाराश्च विरला दुःखदौर्भाग्यकारकाः ॥ ३२९ ॥

जिस स्त्री के दाँत पीले, कपिलवर्ण, मोटे, लम्बे, दो पंक्तिवाले, सीपी के समान तथा छिदरे हों, तो वे दाँत दुःख और दौर्भाग्य के सूचक होते हैं ॥ ३२९ ॥

अधस्तादधिकैर्दन्तैर्मातरं भक्षयेत्स्फुटम् ।
पतिहीना च विकटैः कुलटा विरलैर्भवेत् ॥ ३३० ॥

जिस स्त्री के दाँत नीचे से ऊपर अधिक हों, तो माता का नाश, जिसके दाँत फटे और विकराल हों, तो पति का नाश और जिसके छिद्दरे दाँत हों, तो वह स्त्री कुलटा होती है ॥ ३३० ॥

जिह्वालक्षणम्

जिह्वेष्टमिष्टभोक्त्री स्याच्छोणा मृद्वी तथा सिता ।
दुःखाय मध्यसंकीर्णा पुरोभागसविस्तरा ॥ ३३१ ॥
सितया तोयमरणं श्यामया कलहप्रिया ।
दरिद्रिणी मांसलया लम्बयाऽभक्ष्यभक्षिणी ॥
विशालया रसनया प्रमदातिप्रमादभाक् ॥ ३३२ ॥

जिस स्त्री की जीभ सुर्ख और मुलायम हो, तो वह स्त्री अपने इष्ट और मिष्ट पदार्थ के भोजन करनेवाली, जिसकी जीभ सफ़ेद, बीच में संकुचित और अग्रभाग विस्तृत हो, तो वह जीभ दुःख-दायक, सफ़ेद जीभवाली स्त्री जल में डूबकर मरनेवाली, काली जीभवाली स्त्री कलहप्रिय, मोटी जीभवाली स्त्री दरिद्री, लम्बी जीभवाली स्त्री अभक्ष्य पदार्थ खानेवाली और अति विस्तृत जीभ-वाली स्त्री बहुत झूठ बोलनेवाली होती है ॥ ३३१-३३२ ॥

हसनलक्षणम्

अलक्षितद्विज किञ्चित्किञ्चित्फुल्लकपोलकम् ।
स्मितं प्रशस्तं सुदृशामनिमीलितलोचनम् ॥ ३३३ ॥

जिस स्त्री के हँसने के समय दाँत न दिखाई पड़ें, कपोल कुछ ऊँचे उठें और आँखें बंद न हों, तो वह हँसना श्रेष्ठ है ॥ ३३३ ॥

नासिकालक्षणम्

समवृत्तपुटा नासा लघुच्छिद्रा शुभावहा ।
स्थूलाग्रा मध्यनिम्ना च न प्रशस्ता समुन्नता ॥३३४॥

जिस स्त्री की नाक बराबर और गोल, दोनों नथुने छोटे और छेदयुक्त हों, तो वह नासिका शुभ फलदायक, जिसकी नाक आगे से

मोटी बीच में नीची और ऊँची हो, तो वह नासिका शुभफल-दायक नहीं होती है ॥ ३३४ ॥

आकुञ्चितारुणाग्रा च वैधव्यक्लेशदायिनी ।
परप्रेष्या च चिपटा ह्रस्वा दीर्घा कलिप्रिया ॥ ३३५ ॥

जिस स्त्री की नासिका अग्रभाग में संकुचित और रक्तवर्ण हो, तो वह स्त्री विधवा और क्लेश भोगनेवाली, जिसकी नासिका चिपटी हो, तो वह दूती एवं जिसकी नासिका बहुत छोटी या बहुत बड़ी हो, तो वह स्त्री कलहकारिणी होती है ॥ ३३५ ॥

चक्षुर्लक्षणम्

ललनालोचने शस्ते रक्तेऽन्ते कृष्णतारके ।
गोक्षीरवर्णविशदे सुस्निग्धे कृष्णपक्ष्मणी ॥ ३३६ ॥

जिस स्त्री के नेत्र अन्त में लाल, काली पुतलीवाले, गोदुग्ध के समान सफ़ेद, विशाल, चिकनें और काली पलकवाले हों, तो वह स्त्री शुभफलभोक्त्री होती है ॥ ३३६ ॥

उन्नताक्षी न दीर्घायुर्वृत्ताक्षी कुलटा भवेत् ।
मेषाक्षी महिषाक्षी च केकराक्षी न शोभना ॥ ३३७ ॥

जो स्त्री ऊँचे नेत्रोंवाली हो, तो वह स्त्री अल्पायु, गोल नेत्रों-वाली स्त्री कुलटा और जो स्त्री मेढ़ा, भैंसा वा केकड़ा के समान नेत्रोंवाली हो, तो वह स्त्री अशुभफलभोक्त्री होती है ॥ ३३७ ॥

कामगृहीता नितरां गोपिंगाक्षी सुदुर्वृत्ता ।
पारावताक्षी दुःशीला रक्ताक्षी भर्तृघातिनी ॥ ३३८ ॥

जो स्त्री गौ के समान पिंगल नेत्रोंवाली हो, तो वह स्त्री काम में चतुर, जो स्त्री कबूतर के समान नेत्रोंवाली हो, तो वह स्त्री खोटे स्वभाववाली और लाल नेत्रोंवाली स्त्री अपने स्वामी का नाश करने-वाली होती है ॥ ३३८ ॥

कोटरानयना दुष्टा गजनेत्रा न शोभना।
पुंश्चली वामकाणाक्षी वन्ध्या दक्षिणकाणिका॥
मधुपिंगाक्षी रमणी धनधान्यसमृद्धिभाक्॥ ३३६॥

जो स्त्री कोटराक्षी (गड़ी हुई आँखोंवाली) हो, तो वह स्त्री दुष्टा, हाथी के समान नेत्रोंवाली स्त्री अशुभफलभोक्त्री, वाम नेत्र से कानी स्त्री वेश्या, दक्षिण नेत्र से कानी स्त्री वांझ और शहद के समान नेत्रोंवाली स्त्री सर्वसंपत्तिशालिनी होती है॥ ३३६॥

पक्ष्मलक्षणम्

पक्ष्मभिः सुघनैः स्निग्धैः कृष्णैः सूक्ष्मैः सुभाग्ययुक्।
कपिलैर्विरलैः स्थूलैर्निन्द्या भवति भामिनी॥ ३४०॥

जिस स्त्री के पलक घने, चिकने, काले और सूक्ष्म हों, तो वह स्त्री सौभाग्यशालिनी तथा जो स्त्री कपिल, विरले और मोटे पलकोंवाली हो, तो वह स्त्री निन्द्या होती है॥ ३४०॥

भ्रूलक्षणम्

भ्रुवौ सुवर्त्तुले तन्व्याः स्निग्धे कृष्णे असंहते।
प्रशस्ते मृदुरोमाणौ सुभ्रुवः कार्मुकाकृती॥ ३४१॥

जिस स्त्री की भौंहें चिकनी, काली, अलग-अलग, कोमल रोमयुक्त, गोल और धनुषाकार हों, तो वह स्त्री शुभफलभोक्त्री होती है॥ ३४१॥

खररोमा च पृथुला विकीर्णा सरला स्त्रियाः।
न भ्रूः प्रशस्ता मिलिता दीर्घरोमा च पिंगला॥ ३४२॥

जिस स्त्री की भौंहें कठोर रोमयुक्त या गधे के समान रोमयुक्त मोटी, फैली हुई, सीधी, आपस में मिली हुई, बहुत लम्बी और पिंगल वर्णवाली हों, तो वह स्त्री अशुभफलभोक्त्री होती है॥३४२॥

कर्णलक्षणम्

लम्बौ कर्णौ शुभावृत्तौ सुखदौ च शुभप्रदौ।

शष्कुलीरहितौ निन्द्यौ शिरालौ कुटिलौ कृशौ ॥ ३४३ ॥

जिस स्त्री के कान लम्बे और गोलाकार हों, तो वह स्त्री सुख और शुभ फल भोगनेवाली और जिसके कान छिद्ररहित, नसोंवाले, कुटिल और दुर्बल हों, तो वह स्त्री अशुभ फल भोगनेवाली होती है ॥ ३४३ ॥

भाललक्षणम्

भालः शिराविरहितो निर्लोमोऽर्धेन्दुसन्निभः ।
अनिम्नस्त्र्यङ्गुलो नार्याः सौभाग्यारोग्यकारणम् ॥३४४॥

जिस स्त्री का कपाल नसों से रहित, रोमहीन, अर्धचन्द्राकार, ऊँचा और तीन अंगुल प्रमाणवाला हो, तो वह स्त्री शुभफल भोक्त्री और रोगहीन होती है ॥ ३४४ ॥

व्यक्तस्वस्तिकरेखं च ललाटं राज्यसम्पदे ।
प्रलम्बं मस्तकं यस्या देवरं हन्ति सा ध्रुवम् ॥
रोमशीन शिरालेन प्रांशुना रोगिणी मता ॥ ३४५ ॥

जिस स्त्री का कपाल स्पष्ट और कल्याणकारिणी रेखाओं से युक्त हो, तो वह स्त्री राज्यसम्पत्तिभोक्त्री, जिसका कपाल लंबा हो, तो वह स्त्री देवर को नाश करनेवाली तथा जिसका कपाल रोमों और शिराओंयुक्त एवं लम्बा हो, तो वह स्त्री रोगिणी होती है ॥३४५॥

केशलक्षणम्

केशा अलिकुलच्छायाः सूक्ष्माः स्निग्धाः सुकोमलाः ।
किञ्चिदाकुञ्चिताग्राश्च कुटिलाश्चातिशोभनाः ॥ ३४६ ॥

जिस स्त्री के केश भौंरे के समान काले, पतले, चिकने, कोमल, अग्रभाग में कुछ मुड़े हुए और कुटिल हों, तो वह स्त्री सौभाग्यशालिनी होती है ॥ ३४६ ॥

परुषाः कुटिलाग्राश्च विरलाश्च शिरोरुहाः ।
पिंगला लघवो रुक्षा दुःखदारिद्र्यबन्धनाः ॥ ३४७ ॥

जिस स्त्री के केश कड़े, कुटिल, बिरले, पीले, छोटे और रूखे हों, तो वह स्त्री दुःख-दारिद्र्य भोगनेवाली और बन्धन में पड़नेवाली होती है ॥ ३४७ ॥

एवं परीक्ष्य मतिमान्कन्यां लक्षणसंयुताम् ।
विवाहयेत यथा न स्यात्सर्वथानर्थभाजनम् ॥ ३४८ ॥

बुद्धिमानों को चाहिए कि विवाह होने के पूर्व ही सामुद्रिक शास्त्र द्वारा कन्या के गुण-दोषों का विचार करके सर्व शुभ लक्षणों से सम्पन्न कन्या के साथ विवाह किया करें । इससे फल यह होगा कि बुद्धिमान् लोग अपने को नारकीय जीवन से बचा सकेंगे ॥३४८॥

तिलमशकादिविचारः

भ्रूमध्ये तिलादिलक्षणम्

भ्रुवोरन्तर्ललाटे वा मशको राज्यसूचकः ॥ ३४९ ॥

जिस स्त्री के दोनों भौहों के बीच में या मस्तक में तिल, मस्सा या लहसन हो, तो वह स्त्री रानी या सुखोपभोग करनेवाली होती है ॥ ३४९ ॥

वामे कपोले मशकः शोणो मिष्टान्नदः स्मृतः ॥ ३५० ॥

जिस स्त्री के बाएँ कपोल में लाल मस्से का चिह्न हो, तो वह स्त्री मिष्टान्न भोजन करनेवाली होती है ॥ ३५० ॥

तिलकं लाञ्छनं वापि हृदि सौभाग्यकारणम् ॥ ३५१ ॥

जिस स्त्री के हृदय में तिल का चिह्न हो, तो वह स्त्री सौभाग्यशालिनी होती है ॥ ३५१ ॥

यस्या दक्षिणवक्षोजे शोणे तिलकलाञ्छने ।
कन्याचतुष्टयं सूते सूते सा च सुतत्रयम् ॥ ३५२ ॥

जिस स्त्री के दाहिने स्तन में लाल तिल वा मस्सा का चिह्न हो, तो वह स्त्री चार कन्याएँ और तीन पुत्र पैदा करनेवाली होती है ॥ ३५२ ॥

तिलकं लाञ्छनं शोणं यस्या वामस्तने भवेत् ।
एकं पुत्रं प्रसूयादौ ततः सा विधवा भवेत् ॥ ३५३ ॥

जिस स्त्री के बाएँ स्तन में तिल वा मस्से का लाल चिह्न हो, तो वह स्त्री एक पुत्र पैदा करके विधवा होती है ॥ ३५३ ॥

गुह्यस्य दक्षिणे भागे तिलकं यदि योषितः ।
तदा क्षितिपतेः पत्नी सूते वा क्षितिपं सुतम् ॥३५४॥

जिस स्त्री के योनि के दक्षिण भाग में तिल का चिह्न हो, तो वह स्त्री रानी या राजमाता या सुखोपभोग करनेवाली होती है ॥ ३५४ ॥

नासाग्रे मशकः शोणो महिष्या एव जायते ।
कृष्णः स एव भर्तृघ्न्याः पुंश्चल्याश्च प्रकीर्तितः॥३५५

जिस स्त्री के नाक के अग्रभाग में लाल मस्से का चिह्न हो, तो वह स्त्री रानी या सुखोपभोग करनेवाली होती है । यदि कृष्ण वर्ण का मस्सा हो, तो वह स्त्री पति को नाश करनेवाली या व्यभिचारिणी होती है ॥ ३५५ ॥

नाभेरधस्तात्तिलकं मशको लाञ्छनं शुभम् ।
मशकस्तिलकं चिह्नं गुह्यदेशे दरिद्रकृत् ॥ ३५६ ॥

जिस स्त्री को नाभि के नीचे तिल, मस्सा या लहसन कुछ भी हो, तो वह स्त्री शुभफलभोक्त्री तथा जिस स्त्री के गुह्यप्रदेश में ये चिह्न हों, तो वह स्त्री दारिद्र्योपभोग करनेवाली होती है ॥३५६॥

भालगेन त्रिशूलेन निर्मितेन स्वयम्भुवा ।
नितम्बिनी सहस्राणां स्वामित्वं योषिदाप्नुयात् ॥३५७॥

जिस स्त्री के मस्तक में ब्रह्मनिर्मित त्रिशूल का चिह्न हो, तो वह स्त्री हज़ार स्त्रियों की स्वामिनी होती है ॥ ३५७ ॥

सुप्ता परस्परं यातु दन्तान् किटकिटायते ।
सुलक्षणाप्यशस्ता सा या किञ्चित्प्रलपेत्तथा ॥ ३५८ ॥

जो स्त्री सोते समय दाँतों को किटकिटावे या कुछ बोले या दाँतों को घिसे, तो वह स्त्री अच्छे लक्षणों से युक्त होने पर भी अशुभफलभोक्त्री होती है ॥ ३५८ ॥

सुलक्षणापि दुःशीला कुलक्षणशिरोमणिः ।
अलक्षणापि या साध्वी सर्वलक्षणसंयुता ॥ ३५९ ॥

जो स्त्री सर्व शुभ लक्षणों से युक्त होते हुए व्यभिचारिणी हो, तो वह स्त्री कुलक्षणवती स्त्रियों में शिरोमणि होते हुए भी सर्वथा त्याज्य और जो स्त्री समस्त कुलक्षणों से युक्त होते हुए भी पतिव्रता हो, तो वह स्त्री समस्त सुलक्षणवती स्त्रियों में अग्रणी होती है ॥ ३५९ ॥

सुलक्षणा सुचारित्रा स्वाधीना पतिदेवता ।
विश्वेशानुग्रहादेव गृहे योषिदवाप्यते ॥ ३६० ॥

किसी-किसी पुण्यवान् पुरुष को ही समस्त शुभ लक्षणों तथा शुभ चरित्रों से युक्त, अपने पति के अधीन रहनेवाली पतिव्रता स्त्री श्रीशङ्करजी की कृपा से प्राप्त होती है ॥ ३६० ॥

अलंकृताः सुवासिन्यो याभिः प्राक्तनजन्मनि ।
नानाविधैरलंकारैस्ताः सुरूपा भवन्ति हि ॥ ३६१ ॥

जिस स्त्री ने पूर्वजन्म में सुन्दर-सुन्दर अनेक वस्त्र, अलंकारादिकों द्वारा ब्राह्मण कन्या या सधवा स्त्रियों की पूजा की है वही स्त्री इस जन्म में सुन्दर रूपवाली होती है ॥ ३६१ ॥

सुतीर्थेषु वपुर्याभिः क्षालितं वा विहाय तत् ।
ता लावण्यतरंगिण्यो भवन्तीह सुलक्षणाः ॥ ३६२ ॥

जिस स्त्री ने पूर्वजन्म में अच्छे-अच्छे तीर्थों में शरीर को स्नान कराया या शरीर को छोड़ा, वही स्त्री श्रेष्ठ रूपवती और सर्व शुभ लक्षणों से सम्पन्न होती है ॥ ३६२ ॥

अर्चिता जगतां माता याभिर्मृडवधूरिह ।
ता भवन्ति सुचरित्रा योषाः स्वाधीनभर्तृकाः ॥३६३॥

जिस स्त्री ने इस जन्म में जगन्माता गौरी भवानी का पूजन किया है, वही स्त्री सर्व शुभ लक्षणों से सम्पन्न, सुन्दर चरित्रवाली और पति को वश में करनेवाली होती है ॥ ३६३ ॥

स्वाधीनपतिकानां च सुशीलानां मृगीदृशाम् ।
स्वर्गापवर्गावत्रैव सुलक्षणफलं हि तत् ॥ ३६४ ॥

जो स्त्रियाँ पति को अपने वश में रखनेवाली और सुन्दर स्वभाव-वाली होती हैं उन स्त्रियों के लिये स्वर्ग और मोक्ष इसी संसार में वर्तमान है। यही श्रेष्ठ लक्षणोंवाली स्त्रियों का सर्वार्थसाधक निश्चित फल समझना चाहिए ॥ ३६४ ॥

सुलक्षणैः सुचरितैरपि मन्दायुषं पतिम् ।
दीर्घायुषं प्रकुर्वन्ति प्रमदाः प्रमदास्पदम् ॥ ३६५ ॥

संसार की सभी स्त्रियाँ अपने शुभ लक्षणों और उत्तम चरित्रों द्वारा थोड़े आयुष्यवाले पति को भी आनन्दपात्र और दीर्घायु कर देती हैं ॥ ३६५ ॥

अतः सुलक्षणा योषाः परिणेया विचक्षणैः ।
लक्षणानि परीक्ष्यादौ हित्वा दुर्लक्षणान्यपि ॥ ३६६ ॥

बुद्धिमान् पुरुषों को चाहिए कि विवाह होने के पहले ही कन्याओं के शुभ लक्षणों की परीक्षा कर लेने के बाद विवाह किया करें ॥ ३६६ ॥

स्त्रीजातिकादिप्रकरणं समाप्तम् ।

पाँचवाँ अध्याय समाप्त ।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

छठा अध्याय

साधारणमुहूर्तप्रकरणम् *

भूकर्षणादिमुहूर्तः

मूलद्वीशमघाचरध्रुवमृदुक्षिप्रैर्विनार्कं शनिं
पापैर्हीनबलैर्विधौ जलगृहे शुक्रे विधौ मांसले ।
लग्ने देवगुरौ हलप्रवहणं शस्तं न सिंहे घटे
कर्काजैणघटे तनौ क्षयकरं रिक्तासु षष्ठ्यां तथा ॥ १ ॥

मूल, विशाखा, मघा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुष्य और हस्त ये नक्षत्र हों, शनि तथा रवि को छोड़कर अन्य वार † हों, पापग्रह बलहीन हों और चन्द्रमा जलराशि (मकर,

---

* यत्र नोक्ता तिथिस्तत्र ग्राह्या रिक्तामर्मा विना ।
वारोऽपि यत्र न प्रोक्तस्तत्रार्कार्किकुजान् विना ॥

इस साधारण मुहूर्तप्रकरण में जहाँ तिथि न कही गई हो वहाँ रिक्ता और अमावास्या को छोड़कर शेष तिथियाँ ग्रहण करनी चाहिएँ । जहाँ दिन न कहा गया हो वहाँ रवि, मंगल और शनि को छोड़कर शेष वार ग्रहण करना चाहिए ।

† हलप्रवाह में मंगलवार का भी ग्रहण है ।

कुम्भ, मीन और कर्क) में स्थित हो तथा शुक्र का उदय हो एवं लग्न में पूर्ण चन्द्रमा व बृहस्पति स्थित हो, तो हल चलाना शुभदायक होता है, परन्तु सिंह, कुम्भ, कर्क, मेष, मकर और तुला इन लग्नों तथा चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, षष्ठी (छठ) और अष्टमी इन तिथियों में हल जोतना क्षयकारक होता है ॥ १ ॥

हलमुहूर्तः

..................................हलेऽर्कोज्झिता-
द्भाद्रामाष्टनवाष्टभानि मुनिभिः प्रोक्तान्यसत्सन्ति च ॥ २॥

जिस नक्षत्र में सूर्य वर्तमान हो उस नक्षत्र के पूर्व नक्षत्र से तीन नक्षत्र अशुभ, पुनः आठ नक्षत्र शुभ, पुनः नव नक्षत्र अशुभ और पुनः आठ * नक्षत्र हल चलाने में शुभ होते हैं ॥ २ ॥

सूर्यनक्षत्रोज्झिताद्धलचक्रन्यासः

३	८	९	८	नक्षत्र
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	फल

बीजोप्तिमुहूर्तः

एतेषु श्रुतिवारुणादितिविशाखोडूनि भौमं विना
बीजोप्तिर्गदिता ....॥ ३ ॥

श्रवण, शतभिष, पुनर्वसु और विशाखा इन नक्षत्रों तथा मंगल दिन को छोड़ पूर्वोक्त भूकर्षण मुहूर्त में बीज बोना शुभदायक होता है ॥३॥

सस्यरोपणमुहूर्तः

हस्तत्रयोत्तरामूले धनिष्ठारोहिणीमृगे ।

---

* यहाँ पर अभिजित् समेत २८ नक्षत्रों का ग्रहण किया गया है ।

पुष्याश्विन्यनुराधायां मघायां शुभवासरे ॥
त्यक्त्वा रिक्तां शनिं भौमं सस्यस्याङ्कुररोपणम् ॥ ४ ॥

हस्त, चित्रा, स्वाती, तीनों उत्तरा, मूल, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, अश्विनी, अनुराधा और मघा इन नक्षत्रों तथा शुभ वारों में सस्यारोपण करना शुभ होता है; परन्तु रिक्ता तिथि, शनि और मंगलवार न होना चाहिए ॥ ४ ॥

धान्यच्छेदनमुहूर्तः

पूर्वोत्तरामघाश्लेषाज्येष्ठार्द्राश्रवणद्वये ।
भरणीद्वितये मूले मृगे पुष्ये करत्रये ॥
धान्यच्छेदः शुभो रिक्तां हित्वा भौमशनैश्चरौ ॥ ५ ॥

तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, मघा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, आर्द्रा, श्रवण, धनिष्ठा, भरणी, कृत्तिका, मूल, मृगशिरा, पुष्य, हस्त, चित्रा और स्वाती इन नक्षत्रों में धान्यच्छेदन शुभदायक होता है; परन्तु रिक्ता तिथि (४ । ९ । १४) तथा मंगल और शनैश्चरवार न होना चाहिए ॥ ५ ॥

धान्यमर्दनमुहूर्तः

अनुराधाश्रवे मूले रेवत्यां च मघात्रिभे ।
ज्येष्ठायां चैव रोहिण्यां शुभं स्यात्कणमर्दनम् ॥ ६ ॥

अनुराधा, श्रवण, मूल, रेवती, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, ज्येष्ठा और रोहिणी इन नक्षत्रों में धान्यमर्दन शुभ होता है ॥ ६ ॥

धान्यसंग्रहमुहूर्तः

पुनर्भे मृगशीर्षेऽन्त्येऽनुराधाश्रवणत्रये ।
हस्तत्रयेऽश्विनीपुष्ये रोहिण्यामुत्तरात्रये ॥
गुरौ शुक्रे रवीन्द्वोः स्तत्कोष्ठादौ धान्यरक्षणम् ॥ ७ ॥

पुनर्वसु, मृगशिरा, रेवती, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, हस्त, चित्रा, स्वाती, अश्विनी, पुष्य, रोहिणी और तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों तथा गुरु, शुक्र, रवि और सोम (ग्रन्थान्तर से बुधवार तथा चरभिन्न लग्न) इन दिनों में धान्य का संग्रह करना शुभदायक होता है ॥ ७ ॥

नवान्नं स्याच्चरक्षिप्रमृदुभे सत्तनौ शुभम् ।
विना नन्दाविषघटीमधुपौषार्किभूमिजान् ॥ ८ ॥

श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती इन नक्षत्रों तथा शुभग्रहों करके युक्त व दृष्ट शुभ ग्रहों के लग्न में, एवं छठि, एकादशी तिथि व विषघटी (पृ० ३०) व पूस तथा चैत्रमास मंगल व शनैश्चर दिन इन सबको छोड़ अन्य तिथि, वार, मासों में नवान्न भक्षण करना शुभ होता है ॥ ८ ॥

वस्त्र-भूषणधारणमुहूर्तः

पौष्णध्रुवाश्विकरपञ्चकवासवेज्या-
दित्ये प्रवालरदशङ्खसुवर्णवस्त्रम् ।
धार्यं विरिक्तशनिचन्द्रकुजेऽह्नि रक्तं
भौमे ध्रुवादितियुगे शुभगा न दध्यात् ॥ ९ ॥

रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा; पुष्य और पुनर्वसु इन नक्षत्रों तथा रिक्तासंज्ञक तिथियों को छोड़कर अन्य तिथियों एवं सोम, मंगल और शनैश्चर को छोड़कर अन्य दिनों में आभूषण व वस्त्र धारण करना शुभ होता है । भौमवार के दिन लाल वस्त्र का धारण करना शुभदायक होता है । तीनों उत्तरा पुनर्वसु और पुष्य इन नक्षत्रों में सधवा स्त्री मूँगा, वस्त्र, आभूषण आदि धारण न करे । किसी आचार्य का मत है कि सधवा स्त्री शतभिष नक्षत्र में भी वस्त्र,

आभूषण, स्नान आदि न करे। यदि प्रमादवश आभूषण आदि धारण कर ले, तो पतिपूजन द्वारा इस दोष की शान्ति होती है ॥ ९ ॥

निन्द्यकाले वस्त्रधारणमुहूर्तः

विप्राज्ञया तथोद्वाहे राज्ञा प्रीत्यार्पितं च यत्।
निन्द्येऽपि धिष्ण्ये वारादौ धार्यं वस्त्रं जगुर्बुधाः ॥१०॥

किसी ब्राह्मण के स्वयं कहने से, विवाह या उत्सव में और प्रीतिपूर्वक राजा के दिए हुए वस्त्र के धारण करने में निन्द्य वारादि का विचार न करना चाहिए ॥ १० ॥

सूचीकर्ममुहूर्तः

पुनर्वसौ मित्रद्वये धनिष्ठा-
चित्रासु सौम्येऽह्नि कर्मसूच्याः ॥ ११ ॥

पुनर्वसु, अनुराधा, अश्विनी, धनिष्ठा और चित्रा इन नक्षत्रों तथा शुभ दिनों में सूचीकर्म (सोने का काम) शुभ होता है ॥११॥

वस्त्रप्रक्षालनमुहूर्तः

पुनर्वसुद्वयेऽश्विन्यां धनिष्ठाहस्तपञ्चके।
हित्वार्कार्किबुधान् रिक्तां षष्ठीं श्राद्धदिनं तथा ॥
व्रतं पर्व च वस्त्राणि क्षालयेद्रजकादिना ॥ १२ ॥

पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी, धनिष्ठा, हस्त, चित्रा, स्वाती विशाखा और अनुराधा इन नक्षत्रों में वस्त्रों का धुलाना शुभ होता है; परन्तु रवि, शनि और बुध दिन, रिक्ता तिथि, छठ तथा श्राद्ध और व्रत का दिन एवं अन्य शास्त्रीय पर्व वस्त्रप्रक्षालन में निषिद्ध होते हैं ॥ १२ ॥

आभरणघटनमुहूर्तः

त्रिपुष्कराभिधे योगे त्र्युत्तरे रेवतीद्वये।
श्रुतित्रये मृगे पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥

हस्तत्रयेऽथ रोहिण्यां भूषा कार्या शुभेऽहनि ॥ १३ ॥

त्रिपुष्कर योग का दिन, तीनों उत्तरा, रेवती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, मृगशिरा, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, हस्त, चित्रा, स्वाती और रोहिणी इन नक्षत्रों तथा शुभ दिनों में आभूषण * अर्थात् ज़ेवर बनवाना शुभ होता है ॥ १३ ॥

नवीनपात्रे भोजनमुहूर्तः

रोहिणीयुगले हस्तत्रितये रेवतीद्वये ।
श्रवणत्रितये पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ १४ ॥
त्र्युत्तरे बुधशुक्रेज्यवारे चामृतयोगके ।
सुवर्णादिषु पात्रेषु भोजनादि शुभप्रदम् ॥ १५ ॥

रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाती, रेवती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा और तीनों उत्तरा ये नक्षत्र तथा बुध, शुक्र और गुरुवार एवं अमृतयोग में सोने, चाँदी, काँसे आदि के बने हुए पात्रों में भोजन करना शुभदायक होता है ॥ १४-१५ ॥

सेवामुहूर्तः

हस्तद्वयेऽनुराधायां रेवतीयुगले मृगे ।
पुष्ये बुधे गुरौ शुक्रे सत्तिथौ रविवासरे ॥ १६ ॥
योनिराशिपयोर्मैत्र्यां स्वामी सेव्योऽनुजीविभिः ॥ १७ ॥

हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिरा और पुष्य इन नक्षत्रों तथा बुध, गुरु, शुक्र और रविवार इन दिनों तथा शुभ तिथियों में सेवा-कार्य करना शुभदायक होता है; परन्तु योनि व राशीश से परस्पर मित्रता का देख लेना आवश्यक है। किसी

* रत्नजटित आभूषण हो, तो मिश्र नक्षत्र तथा रवि या मंगलवार को भी शुभ है।

आचार्य का मत है कि सेवक का नक्षत्र स्वामी के नक्षत्र से द्वितीय न हो ॥ १६-१७ ॥

राजदर्शनमुहूर्तः

त्र्युत्तरे श्रवणद्वन्द्वे मृगे पुष्यानुराधयोः ।
रोहिण्यां रेवतीयुग्मे चित्राहस्ते शुभेऽहनि ॥
बलिन्यर्केऽर्कवारेऽपि राजदर्शनमीरितम् ॥ १८ ॥

तीनों उत्तरा, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, अश्विनी, चित्रा और हस्त इन नक्षत्रों में तथा रविवार-सहित शुभ दिनों में राजदर्शन करना शुभदायक होता है; परन्तु गोचर के अनुसार सूर्य बली होना चाहिए ॥ १८ ॥

पण्यमुहूर्तः

अनुराधोत्तरापुष्ये रेवतीरोहिणीमृगे ।
हस्तचित्राश्विभे कुर्याद्वाणिज्यं दिवसे शुभे ॥ १९ ॥

अनुराधा, तीनों उत्तरा, पुष्य, रेवती, रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा और अश्विनी इन नक्षत्रों तथा मंगल को छोड़कर शुभ वारों में वाणिज्यक्रिया (दूकान का काम) करना शुभ होता है; परन्तु रिक्तासंज्ञक तिथियों को छोड़ देना चाहिए ॥ १९ ॥

क्रयविक्रयमुहूर्तः

पुष्यो भाद्रपदायुग्मं स्वाती च श्रवणोऽश्विनी ।
हस्तोत्तरा मृगो मैत्रं तथाऽऽश्लेषा च रेवती ॥ २० ॥
ग्राह्याणि भानि चैतानि क्रयविक्रयणे बुधैः ।
चन्द्रभार्गवजीवाश्च वाराः शकुनमुत्तमम् ॥ २१ ॥

पुष्य, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, स्वाती, श्रवण, अश्विनी, हस्त, उत्तरा, मृगशिरा, अनुराधा, आश्लेषा और रेवती इन नक्षत्रों तथा चन्द्र, शुक्र और गुरु इन दिनों में क्रय-विक्रय अर्थात् वस्तुओं के ख़रीदने-बेचने का कार्य करना शुभदायक होता है;

परन्तु शकुनाशकुन का ध्यान रखना आवश्यक होता है। किसी-किसी आचार्य ने अश्विनी, स्वाती, श्रवण, चित्रा, शतभिषा और रेवती इन नक्षत्रों को क्रय-कार्य में तथा भरणी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, आश्लेषा और मिश्रसंज्ञक नक्षत्रों को विक्रय-कार्य में ग्रहण करना लिखा है॥ २०-२१ ॥

पशूनां क्रयविक्रयमुहूर्तः

नानापशुक्रिया हस्तपुष्यार्द्रामृगमिश्रभे ।
पुनर्वसौ धनिष्ठाश्विपूर्वाज्येष्ठाशतान्त्यभे ॥ २२ ॥
त्यक्त्वा भौमेन्दुशनीन् श्रुतिचित्राध्रुवाणि च ।
अमारिक्ताष्टमीश्चापि गतिक्रयमुखाः शुभाः ॥ २३ ॥

हस्त, पुष्य, आर्द्रा मृगशिर, मिश्रसंज्ञक, पुनर्वसु, धनिष्ठा, अश्विनी, तीनों पूर्वा, ज्येष्ठा, शतभिषा और रेवती इन नक्षत्रों में मंगल, चन्द्र और शनि इन दिनों तथा श्रवण, चित्रा और ध्रुवसंज्ञक नक्षत्रों एवं अमावास्या, रिक्तातिथि और अष्टमी इन तिथियों को छोड़कर अन्यत्र पशुओं का गमन अथवा क्रय-विक्रय आदि शुभदायक होता है ॥ २२-२३ ॥

रूप्यकादिसंग्रहमुहूर्तः

द्रव्यं लघुचरैर्योज्यं वृद्ध्यर्थं चरलग्नके ॥ २४ ॥

लघुसंज्ञक (हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित्), चरसंज्ञक (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा) नक्षत्रों तथा चरलग्न में रुपया जमा करना और सूद पर रुपए देना शुभदायक होता है ॥ २४ ॥

ऋणग्रहणमुहूर्तः

ऋणं भौमे न गृह्णीयाद् वृद्धियोगेऽर्कसंक्रमे ।
धनिष्ठापञ्चके हस्तद्विपुष्करत्रिपुष्करे ॥ २५ ॥

मंगलवार के दिन वृद्धियोग में, सूर्यसंक्रान्ति के दिन, धनिष्ठा

आदि पाँच नक्षत्रों में, हस्त, द्विपुष्कर तथा त्रिपुष्कर-नामक योगों (पृ० २४) में ऋण लेना शुभदायक नहीं होता है ॥ २५ ॥

धनसंग्रहमुहूर्तः ऋणच्छेदमुहूर्तश्च

भौमादिषु ऋणच्छेदं कुर्याच्च धनसंग्रहम् ।
बुधे धनं न प्रदेयं संग्रहस्तु बुधे शुभः ॥ २६ ॥

मंगलवार आदि में ऋणच्छेद (कर्ज़ बेबाकी) करना शुभ होता है । बुधवार के दिन किसी को भी धन नहीं देना चाहिए; परन्तु बुधवार के दिन धन का संग्रह करना शुभदायक होता है ॥ २६ ॥

ऋणच्छेदमुहूर्तः

वारे गृह्यमृणं तु संक्रमदिने वृद्धौ करेऽर्केऽह्नि य-
त्तद्वंशे तु भवेदृणं न च बुधे देयं कदाचिद्धनम् ॥२७॥

मंगलवार, संक्रान्तिदिन और सूर्यवार इन दिनों में लिया हुआ कर्ज़ वंश-परम्परा में संक्रान्त होता रहता है । बुधवार के दिन कभी किसी को धन न देना चाहिए ॥ २७ ॥

धनाप्राप्तिमुहूर्तः

मिश्रक्रूरेषु तीक्ष्णेषु स्वात्यां द्रव्यं न लभ्यते ।
दत्तं प्रयुक्तं निक्षिप्तं नष्टं चेत्याह नारदः ॥ २८ ॥

मिश्रसंज्ञक (विशाखा और कृत्तिका), क्रूरसंज्ञक (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वभाद्रपद, भरणी और मघा), तीक्ष्णसंज्ञक (मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा) और स्वाती इन नक्षत्रों में दिया हुआ या जमा किया हुआ या चोरी गया हुआ या खोया हुआ द्रव्य नहीं मिलता है ॥ २८ ॥

कूपादेर्निर्माणमुहूर्त.

जलाशयानां खननं मघापुष्यध्रुवे मृगे ।
पूर्वाषाढानुराधान्त्यधनिष्ठाशतहस्तभे ॥
जलराशिगते चन्द्रे लग्नस्थे च बुधे गुरौ ॥ २९ ॥

मघा, पुष्य, ध्रुव (उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढ़ उत्तरभाद्रपद और रोहिणी), मृगशिरा, पूर्वाषाढ़, अनुराधा, रेवती, धनिष्ठा, शतभिषा और हस्त इन नक्षत्रों में, चन्द्रमा जलचर राशि का हो तथा लग्न में बुध या बृहस्पति हो, तो कूप (कुआँ) आदि का निर्माण (बनवाना) शुभदायक होता है ॥ २९ ॥

क्षौरमुहूर्तः

क्षौरं चौलोक्तनक्षत्रवारादिषु शुभं जगुः ।
श्मश्रुकर्म भवेन्नैव नवमे दिवसे क्वचित् ॥ ३० ॥

जो नक्षत्र, वार आदि चूड़ाकरण मुहूर्त में कह आए हैं उन नक्षत्र, वार आदिकों में क्षौरकर्म (हजामत बनवाना) शुभदायक होता है; परन्तु नवें दिन हजामत बनवाना अशुभकारक होता है ॥ ३० ॥

क्षौरं भूते रतं दर्शे वर्जयेच्च जिजीविषुः ।
क्षौरं न कुर्युरभ्यक्तभुक्तस्नातविभूषिताः ॥ ३१ ॥

जो मनुष्य संसार में जीवित रहना चाहे वह मनुष्य चतुर्दशी के दिन क्षौर और अमावास्या के दिन स्त्री-संग वर्जित करे; परन्तु तेल लगाकर या भोजन करने के उपरान्त या स्नान करके या भूषण आदि पहनकर क्षौरकर्म * न करे ॥ ३१ ॥

प्रयाणसमरारम्भे न रात्रौ न च सन्ध्ययोः ।
श्राद्धाहे प्रतिपद्रिक्ताव्रताह्नि च न वैधृतौ ॥ ३२ ॥

यात्रा के समय, युद्ध के आरम्भ में, रात्रि में, दोनों सन्ध्याओं (प्रातः और सायम्) में, श्राद्ध के दिन, प्रतिपदा तथा रिक्ता तिथि के दिन, व्रत के दिन या अनुष्ठान के मध्य में तथा वैधृति योग में क्षौरकर्म करना अशुभ फलदायक होता है ॥ ३२ ॥

* शनि तथा मंगलवार भी क्षौरकर्म में वर्जित है ।

प्रशस्तं जन्मनक्षत्रं सर्वकर्मसु शोभनम् ।
क्षौरप्रयाणभैषज्यविवादेषु न शोभनम् ॥ ३३ ॥

यद्यपि जन्म का नक्षत्र समस्त कार्यों में शुभदायक होता है; परन्तु क्षौरकर्म, यात्रा, औषधिसेवन और विवाद (मुबाहसा) ये कार्य जन्मनक्षत्र के दिन न करे ॥ ३३ ॥

षष्ठीममां पूर्णिमां च चतुर्दशीं तथाष्टमीम् ।
तैलाभ्यङ्गे मैथुने च वर्जयेत्क्षौरकर्मणि ॥ ३४ ॥

छठ, अमावास्या, पूर्णिमा, चतुर्दशी और अष्टमी के दिन तैल लगाना, स्त्री-प्रसंग करना और बाल बनवाना वर्जित करे ॥ ३४ ॥

क्षौरं नैमित्तिके कार्ये निषेधे सत्यपि क्वचित् ।
यज्ञे मृतौ बन्धमोक्षे नृपविप्राज्ञयापि च ॥ ३५ ॥

यज्ञ में, माता, पिता आदि की मृत्यु होने पर, बन्धमोक्ष में, राजा या ब्राह्मण की आज्ञा होने पर निषिद्ध तिथि, वारादिकों में भी क्षौरकर्म करना अनुचित नहीं होता है ॥ ३५ ॥

राजकार्यनियुक्तानां नराणां रूपजीविनाम् ।
श्मश्रुलोमनखच्छेदे नास्ति कालविशोधनम् ॥ ३६ ॥

राजकर्मचारियों और रूपजीवियों (भाँड, नट आदि) को दाढ़ी-मोंछ आदि बनवाने तथा नाखून कटवाने आदि में काल-शुद्धि का विचार न करना चाहिए ॥ ३६ ॥

प्राग्वयस्कैः सपितृकैर्न कार्यं मुण्डनं सदा ।
मुण्डनस्य निषेधेऽपि कर्तनं तु विधीयते ॥ ३७ ॥

जीवितपितृकों को मुण्डन कराना निषिद्ध होता है । मुण्डन के निषेध होने पर भी बाल कटवाने का निषेध नहीं है ॥ ३७ ॥

उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा वपनं कारयेत्सुधीः ।
मुण्डनं पिण्डदानं च प्रेतकर्म च सर्वशः ॥
न जीवत्पितृकः कुर्याद्गुर्विणीपतिरेव च ॥ ३८ ॥

उत्तराभिमुख या पूर्वाभिमुख होकर बाल बनवाना चाहिए; परन्तु जीवितपितृक और गर्भवती स्त्रीवाला पुरुष मुण्डन, पिण्ड-दान (पार्वण श्राद्ध) तथा सब प्रकार के प्रेतकर्म (माता-पिता को छोड़कर) न करने चाहिए ॥ ३८ ॥

शान्तिकपौष्टिकमुहूर्तः

क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु शस्तं
स्याच्छान्तिकं च मङ्गलपौष्टिकाभ्याम् ।
खेऽर्के विधौ सुखगते तनुगे गुरौ नो
मौढ्यादिदुष्टसमये शुभदं निमित्ते ॥ ३९ ॥

अश्विनी, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, रोहिणी, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, अनुराधा और मघा इन नक्षत्रों में, रिक्ता तिथि, अष्टमी, पूर्णमासी, अमावस, सूर्यसंक्रान्ति, रवि-वार, मंगल और शनैश्चर इन नक्षत्रों और तिथियों को छोड़ अन्य तिथि या दिवसों में, लग्न से दशवें स्थान में सूर्य, चौथे स्थान में चन्द्रमा और लग्न में बृहस्पति के रहते मंगल अर्थात् गणेश आदि की पूजा व पौष्टिक अर्थात् पुष्टिकामना से कोई पुरश्चरण आदि, इन दोनों के सहित शान्तिक अर्थात् मूलशान्ति आदि करना शुभ-कारक होता है; परन्तु बृहस्पति या शुक्रास्त आदि के समय व केतूदय आदि उत्पात होने के समय को छोड़कर ही उक्त मुहूर्त मिले, तो उस मुहूर्त में शान्ति आदि करना शुभदायक होता है। यदि ऐसा मुहूर्त न मिले, तो शुक्रास्तादि समय में भी शान्ति आदि कर्म कर लेने चाहिए ॥ ३९ ॥

होमाहुतिमुहूर्तः

सूर्यभात्त्रित्रिभे चान्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः ।
चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टा होमाहुतिः खले ॥ ४० ॥

जिस नक्षत्र में सूर्य स्थित हो, तो उससे लेकर तीन-तीन नक्षत्रों

का एक त्रिक, इस प्रकार सत्ताइस नक्षत्रों के नौ त्रिक होते हैं। उनमें पहला सूर्य का, दूसरा बुध का, तीसरा शुक्र का, चौथा शनैश्चर का, पाँचवाँ चन्द्रमा का, छठा मंगल का, सातवाँ बृहस्पति का, आठवाँ राहु का और नवाँ केतु का त्रिक होता है। इनमें चान्द्र अर्थात् होम के दिन का नक्षत्र जिसके त्रिक में पड़े, उसी ग्रह के मुख में होमाहुति पड़ती है। खलग्रह के मुख में पड़ती हुई होमाहुति शुभदायक नहीं होती है ॥ ४० ॥

वह्निवासमुहूर्तः

सैका तिथिर्वारयुता कृताप्ता
शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः।
सौख्याय होमे शशियुग्मशेषे
प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च ॥ ४१ ॥

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर इष्ट तिथि पर्यन्त गिनने से जितनी संख्या हो, उसमें एक और जोड़े। रविवार से लेकर इष्ट वार पर्यन्त गिनने से जितनी संख्या हो, उसको भी पूर्व जोड़े हुए अंकों में जोड़ दे। इस जुड़े हुए अंकों में चार का भाग दे। यदि तीन अथवा शून्य शेष रहे, तो अग्नि का वास भूमि में होता है और वह सौख्यकारक; यदि दो शेष रहें, तो अग्नि का वास आकाश में होता है और वह होता के प्राणों का नाशक और एक शेष रहे, तो अग्नि का वास पाताल में जानिए और वह धन की हानि करनेवाला होता है ॥ ४१ ॥

अग्निचक्रविचारमुहूर्तः

ग्रहणोद्वाहगण्डान्ते तथा दुर्गोत्सवेऽपि च।
तद्वाग्निचक्रं नालोक्यं ग्रहशान्तौ विचारयेत् ॥ ४२ ॥

ग्रहण, विवाह, गण्डान्त और दुर्गोत्सव के समय में अग्निचक्र

के विचार करने की आवश्यकता नहीं होती; परन्तु ग्रहशान्ति में अग्निचक्र का विचार अवश्य करे ॥ ४२ ॥

व्रतबन्धे विवाहे च नवरात्रे च नित्यके ।
कुलदेवार्चने धीमान्नो कुर्यादग्निचिन्तनम् ॥ ४३ ॥

व्रतबन्ध, विवाह, नवरात्र, नित्यकर्म और कुलदेवता के पूजन में अग्निचक्र का विचार न करे ॥ ४३ ॥

विवाहचूडाव्रतबन्धगोचरे उत्पातशान्तिग्रहणे युगादौ ।
दुर्गाविधाने सततं प्रसूतौ नैवाग्निचक्रं परिशोधनीयम् ॥ ४४ ॥

विवाह, चूड़ाकर्म, व्रतबन्ध, गोचर, उत्पात, शान्ति, ग्रहण, युगादि, दुर्गाविधान और जन्मकाल में अग्निचक्र का विचार न करे ॥ ४४ ॥

विवाहे व्रतबन्धे च यजने मधुसूदने ।
दुर्गायां पुत्रजन्मादौ अग्निचक्रं न दृश्यते ॥ ४५ ॥

विवाह, व्रतबन्ध, यज्ञ, विष्णु की पूजा, दुर्गा की पूजा और पुत्र-जन्म आदि में अग्निचक्र का विचार न करे ॥ ४५ ॥

आवश्यके अग्निचक्रविचारः

दुर्गभङ्गे गृहे वापि विवादे शत्रुविग्रहे ।
शान्तिके च नृपक्रोधे चक्रं तत्र निरीक्षयेत् ॥ ४६ ॥

दुर्गभंग, गृह, विवाद, शत्रुविग्रह, शान्तिकर्म तथा राजा के क्रोध में अग्निचक्र का विचार अवश्य करे ॥ ४६ ॥

रोगनिर्मुक्तस्नानमुहूर्तः

वयन्त्यादितिध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये
रिक्ते तिथौ चरतनौ विकवीन्दुवारे ।
स्नानं रुजाविरहितस्य जनस्य शस्तं
हीने विधौ खलखगैर्भवकेन्द्रकोणे ॥ ४७ ॥

रेवती, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मघा, स्वाती और

आश्लेषा इन नक्षत्रों को छोड़कर अन्य नक्षत्रों में, रिक्तासंज्ञक तिथियों में, शुक्र और सोम को छोड़कर अन्य दिनों में, मेष, कर्क, तुला और मकर इन राशियों में से किसी के लग्न में रहते, निषिद्ध स्थान में चन्द्रमा के रहते और ग्यारहवें, पहले, चौथे, सातवें, दशवें, पाँचवें और नवें इन स्थानों में पापग्रहों के रहते रोग से छूटे हुए पुरुष का स्नान करना शुभदायक होता है ॥ ४७ ॥

सर्वारम्भमुहूर्तः

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते ।
चन्द्रे त्रिषट्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥ ४८ ॥

लग्न से बारहवाँ व आठवाँ स्थान शुद्ध हो अर्थात् किसी शुभाशुभ ग्रह करके युक्त न हो एवं कार्यकर्ता के जन्मराशि व जन्मलग्न से तीसरा, छठा, ग्यारहवाँ और दशवाँ इनमें से कोई लग्न में होकर शुभग्रहों करके युक्त अथवा दृष्ट हो और चन्द्रमा लग्न से तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें इनमें से किसी स्थान में स्थित हो, तो समस्त शुभ कार्यों* का आरम्भ शुभदायक होता है ॥ ४८ ॥

तैलाभ्यङ्गादिमुहूर्तः

पूर्णिमादर्शसंक्रान्तिचतुर्दश्यष्टमीषु च ।
नरश्चाण्डालयोनौ स्यात्तैलस्त्रीमांससेवनात् ॥ ४९ ॥

पूर्णिमा, अमावास्या, संक्रान्तिदिन, चतुर्दशी या अष्टमी के दिन मनुष्य तेल†, स्त्री तथा मांस का सेवन करे, तो वह मनुष्य चाण्डालयोनि में उत्पन्न होता है ॥ ४९ ॥

---

* षष्ठी, प्रतिपदा, अमावास्या, अष्टमी, व्रतदिन, श्राद्धदिन, पर्वविशेष (संक्रान्ति आदि में) तथा रविवार को दन्तधावन करना वर्जित है ।

† सप्तमी तिथि तथा रविवार दिन भी तेल लगाने में वर्जित है ।

तैलाभ्यङ्गमुहूर्तफलम्

तैलाभ्यङ्गे रवौ तापः सोमे शोभा कुजे मृतिः ।
बुधे धनं गुरौ हानिः शुक्रे दुःखं शनौ सुखम् ॥ ५० ॥

रवि के दिन तेल लगावे, तो ज्वर; चन्द्र के दिन शोभा; मंगल के दिन मृत्यु; बुध के दिन धनप्राप्ति; बृहस्पति के दिन धनहानि; शुक्र के दिन दुःख और शनैश्चर के दिन सुख होता है ॥ ५० ॥

तैलाभ्यङ्गपरिहारः

रवौ पुष्पं गुरौ दूर्वा भौमवारे च मृत्तिका ।
शुक्रे तु गोमयं क्षिप्त्वा तैलदोषो न विद्यते ॥ ५१ ॥

रवि के दिन पुष्पयुक्त तेल, मंगल के दिन मृत्तिकायुक्त तेल, बृहस्पति के दिन दूर्बायुक्त तेल और शुक्र के दिन गोमययुक्त तेल लगावे, तो दोष नहीं होता है ॥ ५१ ॥

रोगोत्पत्तौ नक्षत्रफलम्

अश्विन्यां रोगोत्पत्तौ दिनैकं, नवदिनपर्यन्तं, पञ्चविंशतिदिवसपर्यन्तं वा पीडा ।

भरण्यां रोगोत्पत्तौ एकादशदिनपर्यन्तम्, एकविंशतिदिवसपर्यन्तं, मासपर्यन्तं वा पीडा, मृत्युर्वा ।

कृत्तिकायां रोगोत्पत्तौ दशदिनपर्यन्तं, नवदिनपर्यन्तम्, एकविंशतिदिवसपर्यन्तं वा पीडा ।

रोहिण्यां रोगोत्पत्तौ दशदिनपर्यन्तं, नवदिवसपर्यन्तं, मासैकं वा पीडा ।

मृगशिरसि रोगोत्पत्तौ पञ्चदिनपर्यन्तं, नवदिवसपर्यन्तं, मासैकं वा पीडा ।

आर्द्रायां रोगोत्पत्तौ दशदिनपर्यन्तं, मासैकं वा पीडा, मृत्युर्वा ।

पुनर्वसौ रोगोत्पत्तौ सप्तदिनपर्यन्तं, नवदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

पुष्ये रोगोत्पत्तौ सप्तदिवसपर्यन्तं पीडा।

आश्लेषायां रोगोत्पत्तौ नवदिनपर्यन्तं, विंशतिदिवसपर्यन्तं, मासैकं वा पीडा।

मघायां रोगोत्पत्तौ विंशतिदिवसपर्यन्तं, मासैकं, सार्धमासैकं वा पीडा।

पूर्वाफाल्गुन्यां रोगोत्पत्तौ पञ्चदशदिवसपर्यन्तं, मासैकं, मासद्वयं वा पीडा।

उत्तराफाल्गुन्यां रोगोत्पत्तौ सप्तदिनपर्यन्तं, पञ्चदशदिनपर्यन्तं, सप्तविंशतिदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

हस्ते रोगोत्पत्तौ सप्तदिनपर्यन्तम्, अष्टदिनपर्यन्तं, नवदिनपर्यन्तं, पञ्चदशदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

चित्रायां रोगोत्पत्तौ अष्टदिनपर्यन्तं, दशदिनपर्यन्तम्, एकादशदिनपर्यन्तं, पञ्चदशदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

स्वात्यां रोगोत्पत्तौ दशदिवसपर्यन्तं, मासैकात्पञ्चमासपर्यन्तं वा पीडा।

विशाखायां रोगोत्पत्तौ अष्टदिनपर्यन्तं, पञ्चदशदिनपर्यन्तं, विंशतिदिवसपर्यन्तं, मासैकं वा पीडा।

अनुराधायां रोगोत्पत्तौ दशदिनपर्यन्तम्, अष्टाविंशतिदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

ज्येष्ठायां रोगोत्पत्तौ पञ्चदशदिनपर्यन्तम्, एकविंशतिदिवसपर्यन्तं, मासैकं वा पीडा।

मूले रोगोत्पत्तौ नवदिनपर्यन्तं, पञ्चदशदिनपर्यन्तं, विंशतिदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

पूर्वाषाढे रोगोत्पत्तौ पञ्चदशदिनपर्यन्तं, विंशतिदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

उत्तराषाढे रोगोत्पत्तौ विंशतिदिवसपर्यन्तं, मासैकं, सार्धमासैकं वा पीडा।

श्रवणे रोगोत्पत्तौ दशदिनपर्यन्तम्, एकादशदिनपर्यन्तं, पञ्चविंशतिदिवसपर्यन्तं, मासद्वयं वा पीडा।

धनिष्ठायां रोगोत्पत्तौ दशदिनपर्यन्तं, त्रयोदशदिनपर्यन्तं, पञ्चदशदिवसपर्यन्तं, मासैकं वा पीडा।

शतभिषायां रोगोत्पत्तौ एकादशदिनपर्यन्तं, द्वादशदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

पूर्वाभाद्रपदे रोगोत्पत्तौ दशदिवसपर्यन्तं, मासद्वयं, मासत्रयं वा पीडा।

उत्तराभाद्रपदे रोगोत्पत्तौ सप्तदिनपर्यन्तं, दशदिनपर्यन्तं, पञ्चदशदिवसपर्यन्तं, सार्धमासैकं वा पीडा।

रेवत्यां रोगोत्पत्तौ दशदिनपर्यन्तम्, अष्टाविंशतिदिवसपर्यन्तं वा पीडा।

अश्विनी नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो एक दिन, नव दिन या पचीस दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

भरणी नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो ग्यारह दिन, इक्कीस दिन या महीने भर पर्यन्त पीड़ा रहती है।

कृत्तिका नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन, नव दिन या इक्कीस दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

रोहिणी नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन, नव दिन या महीने भर पर्यन्त पीड़ा रहती है।

मृगशिरा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो पाँच दिन, नव दिन या महीने भर पर्यन्त पीड़ा रहती है।

आर्द्रा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन या महीने भर पर्यन्त पीड़ा रहती है।

पुनर्वसु नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो सात दिन या नव दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

पुष्य नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो सात दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

आश्लेषा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो नव दिन, बीस दिन या महीने भर पर्यन्त पीड़ा रहती है।

मघा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो बीस दिन, एक मास या डेढ़ महीने पर्यन्त पीड़ा रहती है।

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो पन्द्रह दिन, एक मास या दो मास पर्यन्त पीड़ा रहती है।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो सात दिन, पन्द्रह दिन या सत्ताइस दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

हस्त नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो सात दिन, आठ दिन, नव दिन या पन्द्रह दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

चित्रा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो आठ दिन, दश दिन, ग्यारह दिन या पन्द्रह दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

स्वाती नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन, एक मास, दो मास, तीन मास, चार मास या पाँच मास पर्यन्त पीड़ा रहती है।

विशाखा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो आठ दिन, पन्द्रह दिन, बीस दिन या एक मास पर्यन्त पीड़ा रहती है।

अनुराधा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन या अट्ठाइस दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

ज्येष्ठा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो पन्द्रह दिन, इक्कीस दिन या एक मास पर्यन्त पीड़ा रहती है।

मूल नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो नव दिन, पन्द्रह दिन या बीस दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

पूर्वाषाढ़ नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो पन्द्रह दिन या बीस दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

उत्तराषाढ़ नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो बीस दिन, एक मास या डेढ़ महीने पर्यन्त पीड़ा रहती है।

श्रवण नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन, ग्यारह दिन, पचीस दिन या दो मास पर्यन्त पीड़ा रहती है।

धनिष्ठा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन, तेरह दिन, पन्द्रह दिन या एक मास पर्यन्त पीड़ा रहती है।

शतभिषा नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो ग्यारह दिन या बारह दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन, दो मास या तीन मास पर्यन्त पीड़ा रहती है।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो सात दिन, दश दिन, पन्द्रह दिन या डेढ़ महीने पर्यन्त पीड़ा रहती है।

रेवती नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, तो दश दिन या अट्ठाइस दिन पर्यन्त पीड़ा रहती है।

रोगोत्पत्तौ मृत्युयोगः

आर्द्रा हि शक्राम्बुपयाम्यपूर्वा
द्विदैववस्वग्निषु पापवारे।

रिक्ताहरिस्कन्ददिने च रोगे
शीघ्रं भवेद्रोगिजनस्य मृत्युः ॥ ५२ ॥

आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़, भरणी, तीनों पूर्वा, विशाखा, धनिष्ठा और कृत्तिका इन नक्षत्रों में, पाप वारों में, रिक्ता, द्वादशी और षष्ठी तिथि के दिन रोग उत्पन्न हो, तो उस रोगी की मृत्यु शीघ्र होती है ॥ ५२ ॥

वास्तुप्रकरणम्

गृहारम्भे पञ्चाङ्गशुद्धिः

भौमार्करिक्तामाद्यूने चरोनेऽङ्के विपञ्चके।
व्यष्टान्त्यस्थैः शुभैर्गेहारम्भस्त्र्यायारिगैः खलैः ॥ ५३ ॥

रवि और मंगल को छोड़कर अन्य वारों में, चौथि, नवमी, चतुर्दशी, अमावास्या और परीवा इनको छोड़कर अन्य तिथियों में, धनिष्ठा, शतभिष, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती इनको छोड़कर अन्य नक्षत्रों में, मेष, कर्क, तुला और मकर इनको छोड़कर अन्य राशियों के लग्न में, बारहवें और आठवें स्थान को छोड़कर अन्य स्थानों में शुभग्रहों की स्थिति रहने पर तथा तीसरे छठे और ग्यारहवें स्थान में पापग्रहों की स्थिति होने पर घर बनाने का प्रारम्भ करना शुभदायक होता है ॥ ५३ ॥

गृहारम्भे शुभसूचकः कालः

पुष्यध्रुवेन्दुहरिसर्पजलैः सजीवै-
स्तद्वासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात्।
द्वीशाश्वितक्षवसुपाशिशिवैः सशुक्रै-
र्वारे सितस्य च गृहं धनधान्यदं स्यात् ॥५४॥

बृहस्पतियुक्त पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, श्रवण, आश्लेषा और पूर्वाषाढ़ इन नक्षत्रों तथा बृहस्पति के दिन बनाया हुआ घर पुत्र और राज्य का देनेवाला तथा शुक्रयुक्त विशाखा,

अश्विनी, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा और आर्द्रा इन नक्षत्रों में तथा शुक्र के दिन बनाया हुआ घर धनधान्य का देनेवाला होता है ॥ ५४ ॥

सारैः करेज्यान्त्यमघाम्बुमूलैः
कौजेऽह्नि वेश्माग्निसुतार्तिदं स्यात् ।
सज्ञैः कदास्नार्यमतक्षहस्तै-
र्ज्ञस्यैव वारे सुखपुत्रदं स्यात् ॥ ५५ ॥

मंगलयुक्त हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, पूर्वाषाढ़ और मूल इन नक्षत्रों में तथा मंगल के दिन बनाया हुआ घर अग्नि, भय और पुत्रों को क्लेश देनेवाला तथा बुधयुक्त रोहिणी, अश्विनी, पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा और हस्त इन नक्षत्रों में तथा बुध के दिन बनाया हुआ घर सुख और पुत्रों का देनेवाला होता है ॥ ५५ ॥

अजैकपादहिर्बुध्न्यशक्रमित्रानिलान्तकैः ।
समन्दैर्मन्दवारे स्याद्रक्षोभूतयुतं गृहम् ॥ ५६ ॥

शनैश्चरयुक्त पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, ज्येष्ठा, अनुराधा, स्वाती और भरणी इन नक्षत्रों में तथा शनैश्चर के दिन बनाया हुआ घर राक्षसों और भूतों से युक्त रहता है ॥ ५६ ॥

गृहारम्भे निषिद्धकालः

गृहेशतत्स्त्रीसुखवित्तनाशो-
ऽर्केन्दुजीज्यशुक्रे विबलेऽस्तनीचे ।
कर्तुः स्थितिर्नो विधुवास्तुनोर्भे
पुरस्थिते पृष्ठगते खनिः स्यात् ॥ ५७ ॥

गृहारम्भ में सूर्य निर्बल या अस्त या नीच स्थान में हो, तो घर के स्वामी का मरण, चन्द्रमा निर्बल या अस्त या नीच स्थान में हो, तो गृहनिर्मापक की स्त्री का मरण तथा बृहस्पति निर्बल या

अस्त या नीच स्थान में हो, तो धन का नाश होता है। यदि गृहारम्भकाल में चन्द्रमा का नक्षत्र * या वास्तु का नक्षत्र घर के आगे पड़ता हो, तो उस घर में स्वामी की स्थिति नहीं होती है और घर के पीछे पड़ता हो, तो उस घर में चोरी होती है ॥ ५७ ॥

गृहस्थितिवशाद्गृहायुर्दाययोग:

जीवार्कविच्छुक्रशनैश्चरेषु
लग्नारिजामित्रसुखत्रिगेषु ।
स्थितिः शतं स्याच्छरदां सितार्का-
रेज्ये तनुत्र्यङ्गसुतं शते द्वे ॥ ५८ ॥

जिस घर के प्रारम्भ करने के समय लग्न में बृहस्पति, छठे स्थान में सूर्य, सातवें स्थान में बुध, चौथे स्थान में शुक्र तथा तीसरे स्थान में शनैश्चर स्थित हों, तो उस घर की आयु सौ वर्ष की, एवं जिस घर के आरम्भ करने के समय लग्न में शुक्र, तीसरे स्थान में सूर्य, छठे स्थान में मंगल और पाँचवें स्थान में बृहस्पति स्थित हो, तो उस घर की आयु दो सौ वर्ष की होती है ॥ ५८ ॥

---

* जिस नक्षत्र में चन्द्रमा स्थित हो, तो वह चन्द्रनक्षत्र कहा जाता है। गृहपिण्ड को आठ से गुणकर सत्ताइस का भाग देने से जो शेष हो वहाँ अश्विन्यादि गणना से वास्तुनक्षत्र होगा। चन्द्रमा व वास्तुनक्षत्रों की घर के आगे-पीछे स्थिति जानने की यह रीति है कि कृत्तिका आदि सात-सात नक्षत्रों का पूर्व आदि चारों दिशाओं में न्यास करने पर जिस दिशा में ये दोनों नक्षत्र पड़ें वह दिशा यदि घर के दरवाजे के सामने हो, तो उक्त नक्षत्र घर के आगे होंगे और पीछे हो, तो उक्त नक्षत्र भी घर के पीछे होंगे। आचार्य लग्न द्वारा चन्द्रमा की स्थिति कहते हैं। जैसे लग्न में स्थित चन्द्रमा पूर्व द्वारवाले घर के आगे, दक्षिण द्वारवाले घर के बाएँ, पश्चिम द्वारवाले घर के पीछे और उत्तर द्वारवाले घर के दाहिने होगा।

लग्नाम्बरायेषु भृगुज्ञभानुभिः
केन्द्रे गुरौ वर्षशतायुरालयम् ।
बन्धौ गुरुर्व्योम्नि शशी कुजार्कजौ
लाभे तदाशीतिसमायुरालयम् ॥ ५९ ॥

जिस घर के प्रारम्भ करने के समय लग्न में शुक्र, दशवें स्थान में बुध, ग्यारहवें स्थान में सूर्य और केन्द्र में बृहस्पति स्थित हो, तो वह घर सौ वर्ष की आयुवाला होता है एवं जिस घर के बनवाने के समय चौथे स्थान में बृहस्पति, दशवें स्थान में चन्द्रमा तथा ग्यारहवें स्थान में मंगल और शनैश्चर स्थित हों, तो वह घर अस्सी वर्ष की आयुवाला होता है ॥ ५९ ॥

लक्ष्मीयुक्तगृहयोगः

स्वोच्चे शुक्रे लग्नगे वा गुरौ वेश्मगतेऽथवा ।
शनौ स्वोच्चे लाभगे वा लक्ष्म्या युक्तं चिरं गृहम् ॥६०॥

जिसके घर बनवाने के समय उच्चस्थ अर्थात् मीनराशि में स्थित शुक्र लग्न में स्थित हो या कर्कराशि में स्थित बृहस्पति चौथे स्थान में स्थित हो या तुलाराशि में स्थित शनैश्चर ग्यारहवें स्थान में स्थित हो, तो वह घर बहुत दिनों तक लक्ष्मी से युक्त रहता है ॥६०॥

गृहारम्भमुहूर्त्तः

गुरुः शुक्रार्कचन्द्रेषु स्वोच्चादिबलशालिषु ।
गुर्वर्केन्दुबलं लब्ध्वा गृहारम्भः प्रशस्यते ॥ ६१ ॥

जब गुरु, शुक्र, सूर्य तथा चन्द्रमा अपने उच्च स्थान आदि में बलवान् हों, तो गुरु, सूर्य तथा चन्द्रमा का बल लेकर गृहारम्भ का करना शुभदायक होता है ॥ ६१ ॥

निवाहोक्तान्महादोषानृते यामित्रशुद्धितः ।
रिक्ताकुजार्कवारौ च चरलग्नं चरांशकम् ॥
त्यक्त्वा कुजार्कयोश्चांशं कुर्याद्गेहं शुभाप्तये ॥ ६२ ॥

यामित्र को छोड़कर अन्य विवाहोक्त महादोषों तथा रिक्तातिथि, रविवार तथा मंगलवार, चर लग्न या चर लग्न का नवांशक, या सूर्य तथा मंगल के नवांशक को छोड़कर घर का बनवाना शुभदायक होता है ॥ ६२ ॥

दक्षे दुःखं तृतीयर्क्षे पञ्चमर्क्षे यशःक्षयम् ।
आयुःक्षयं सप्तमर्क्षे कर्तृभाद्गृहभावधि ॥ ६३ ॥

घर बनानेवाले के नक्षत्र से गृहारम्भ के नक्षत्र तक गिनने पर तीसरा नक्षत्र दुःखदायक, पाँचवाँ नक्षत्र कीर्तिनाशक और सातवाँ नक्षत्र आयुःक्षयकारक होता है ॥ ६३ ॥

गृहारम्भे मेषादिगतसूर्यफलम्

गृहसंस्थापनं सूर्ये मेषस्थे शुभदं भवेत् ।
वृषस्थे धनवृद्धिः स्यान्मिथुने मरणं ध्रुवम् ॥ ६४ ॥
कर्कटे शुभदं प्रोक्तं सिंहे भृत्यविवर्धनम् ।
कन्या रोगं तुला सौख्यं वृश्चिके धनवर्धनम् ॥ ६५ ॥
कार्मुके च महाहानिर्मकरे स्याद्धनागमः ।
कुम्भे तु रत्नलाभः स्यान्मीने सद्मभयावहम् ॥ ६६ ॥

मेष का सूर्य हो, तो घर का स्थापन करना शुभदायक, वृष का सूर्य हो, तो धन की वृद्धि, मिथुन का सूर्य हो, तो मृत्यु, कर्क का सूर्य हो, तो शुभ, सिंह का सूर्य हो, तो भृत्यों की वृद्धि, कन्या का सूर्य हो, तो रोग, तुला का सूर्य हो, तो सुख, वृश्चिक का सूर्य हो, तो धन की वृद्धि, धन का सूर्य हो, तो बड़ी हानि, मकर का सूर्य हो, तो धन की प्राप्ति, कुम्भ का सूर्य हो, तो रत्न का लाभ तथा मीन का सूर्य हो, तो भय होता है ॥ ६४-६६ ॥

गृहारम्भे मीनादिसूर्यवर्जनम्

मीनचापमिथुनाङ्गनागते कारयेन्न गृहमेव भास्करे ॥६७॥

मीन, धन, मिथुन तथा कन्या के सूर्यों में नवीन गृह का निर्माण (बनवाना) न करे ॥ ६७ ॥

गृहारम्भे शुभनक्षत्राणि

चित्रानुराधामृगरेवतीषु
स्वातौ च पुष्ये च तथोत्तरासु ।
ब्राह्मे धनिष्ठाशततारकासु
गेहादिकारम्भणमामनन्ति ॥ ६८ ॥

चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, स्वाती, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, धनिष्ठा तथा शतभिषा इन नक्षत्रों में घर आदि का बनवाना शुभदायक होता है ॥ ६८ ॥

वास्तौपराशरोक्तं नक्षत्रफलम्

चित्रा शतभिषा स्वाती हस्तः पुष्यपुनर्वसू ।
रोहिणी रेवती मूलं श्रवणोत्तरफाल्गुनी ॥ ६९ ॥
धनिष्ठा चोत्तराषाढा तथा भाद्रोत्तरान्विता ।
अश्विनी मृगशीर्षं च अनुराधा तथैव च ॥ ७० ॥
वास्तुपूजनमेतेषु नक्षत्रेषु करोति यः ।
समाप्नोति नरो लक्ष्मीमिति प्राह पराशरः ॥ ७१ ॥

चित्रा, शतभिषा, स्वाती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी, रेवती, मूल, श्रवण, उत्तराफाल्गुनी, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, अश्विनी, मृगशिरा और अनुराधा इन नक्षत्रों में जो मनुष्य वास्तु-पूजन करता है उसको लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ऐसा पराशरजी कहते हैं ॥ ६९–७१ ॥

गृहारम्भे नक्षत्राणि

त्र्युत्तरेऽपि च रोहिण्यां पुष्ये मैत्रे करद्वये ।
धनिष्ठाद्वितये पौष्णे गृहारम्भः प्रशस्यते ॥ ७२ ॥

तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, चित्रा, धनिष्ठा,

शतभिषा और रेवती इन नक्षत्रों में घर बनवाना शुभदायक होता है ॥ ७२ ॥

गृहारम्भे लग्नविचारः

द्व्यङ्गे वा स्थिरभे च सौम्यसहिते लग्ने शुभैर्वीक्षिते ॥७३॥
सिंहलग्नस्य वर्ज्यता ।

गृहारम्भ में स्थिर या द्विस्वभाव लग्न होना चाहिए जिसमें शुभग्रह बैठे हों या जिस लग्न पर शुभग्रहों की दृष्टि पड़ती हो । गृहारम्भ में सिंहलग्न वर्जित है ॥ ७३ ॥

गृहारम्भे वृषवास्तुचक्रविचारः

गेहाद्यारम्भेऽर्कभाद्वत्सशीर्षे
रामैर्दाहो वेदभैरग्रपादे ।
शून्यं वेदैः पृष्ठपादे स्थिरत्वं
रामैः पृष्ठे श्रीर्युगैर्दक्षकुक्षौ ॥ ७४ ॥
लाभो रामैः पुच्छगैः स्वामिनाशो
वेदैर्नैःस्व्यं वामकुक्षौ मुखस्थैः ।
रामैः पीडा सन्ततं वार्कधिष्ण्या-
द्वत्सै रुद्रैर्दिग्भिरुक्षं ह्यसत्सत् ॥ ७५ ॥

सूर्य के नक्षत्र से लेकर तीन नक्षत्र बैल के समान बने हुए चक्र के शिर में स्थापित करे । इन तीन नक्षत्रों में गृहारम्भ का फल गृहदाह । पुनः चार नक्षत्र चक्र के अगले पैरों पर, इन चार नक्षत्रों का फल शून्य । पुनः चार नक्षत्र पिछले पैरों पर, इन चार नक्षत्रों का फल घर की स्थिरता । पुनः तीन नक्षत्र पीठ पर, इनका फल लक्ष्मीप्राप्ति । पुनः चार नक्षत्र दक्षिण कुक्षि पर, इनका फल लाभ। पुनः तीन नक्षत्र पुच्छ पर, इनका फल स्वामी का नाश । पुनः चार नक्षत्र वामकुक्षि पर, इनका फल दरिद्रता । पुनः तीन नक्षत्र मुख पर, इनका फल पीड़ा का होना है ॥ ७४-७५ ॥

वृषवास्तुचक्रं सूर्यभात्

अंग	शिर	अग्र-पाद	पृष्ठ-पाद	पृष्ठ	दक्षिण कुक्षि	पुच्छ	वाम-कुक्षि	मुख
नक्षत्र	३	४	४	३	४	३	४	३
फल	दाह	शून्य	स्थि-रता	श्रीः	लाभ	स्वामि नाश	दरि-द्रता	सदा पीड़ा

गृहारम्भ में सूर्य के नक्षत्र से सात नक्षत्र अशुभ, पुनः ग्यारह नक्षत्र शुभ, पुनः दश नक्षत्र अशुभ कहे गए हैं।

ग्रामस्य ऋणधनविचारः

स्ववर्गं द्विगुणीकृत्य परवर्गेण संयुतम्।
अष्टभिस्तु हरेद्भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत् ॥ ७८ ॥

अपने नाम का वर्ग* दूना करे, फिर ग्राम के वर्गाङ्क में जोड़कर आठ का भाग दे जो शेष बचे उसे पृथक् रक्खे। ग्राम के वर्गाङ्क को दूना करके अपने वर्गाङ्क में जोड़ दे, उसमें आठ का भाग दे, जो शेष बचे उसे पृथक् रक्खे। दोनों अंकों में जो अधिक हो वह ऋणी और जो कम हो वह धनी होता है। जैसे ग्राम का नाम लखनऊ है और नाम है नवलकिशोर साहब, तो लखनऊ का वर्ग सातवाँ अङ्क हुआ और नवलकिशोर साहब का वर्गाङ्क पाँचवाँ हुआ। पहले ग्राम के अङ्क को दूना किया तो हुए चौदह, इनमें नाम का वर्गाङ्क जोड़ने से उन्नीस हुए, आठ का भाग देने पर शेष रहे तीन, ये ग्राम के अङ्क हुए। नाम के वर्गाङ्क को दूना करने पर

* वर्गों का विचार पृष्ठ १११ में देखिए।

दस हुए, ग्राम का वर्गाङ्क जोड़ दिया, तो सत्रह हुए। आठ का भाग देने पर शेषाङ्क एक रहा। दोनों अंकों में ग्राम का अङ्क अधिक रहा और मुंशी नवलकिशोर साहब का न्यून, इससे यह सिद्ध हुआ कि मुंशीजी साहब धनी और लखनऊ ऋणी हुआ ॥ ७६ ॥

गृहारम्भे भूमिदण्डप्रमाणं फलं च

दीर्घविस्तारसंयुक्तं कर्णदण्डप्रमाणतः।
मुन्दिना गुणितं पिण्डं वसुभिर्भागमाहरेत् ॥ ७७ ॥
चाण्डालः प्रथमो ज्ञेयः सर्वसौख्यफलप्रदः।
द्वितीये चर्मकारस्तु क्षुधापीडाभयङ्करः ॥ ७८ ॥
तृतीये विप्रविख्यातो भ्रामितोद्वेगकारकः।
शूद्रकश्च चतुर्थः स्यात्सर्वसौख्यफलप्रदः ॥ ७९ ॥
पञ्चमे म्लेच्छकश्चैव कुरुते राजवल्लभम्।
षष्ठे योगी भवेत् ख्यातो भ्रामितोद्वेगकारकः ॥ ८० ॥
सप्तमे गोपविख्यातो गोपसौख्यकरो भवेत्।
क्षत्रियश्चाष्टमे प्रोक्तो व्यथायुद्धभयङ्करः ॥ ८१ ॥

कर्णदण्डप्रमाण से गृह की लंबाई-चौड़ाई को माप कर सात से गुणा करे। उसमें आठ का भाग देने से जो अंक शेष बचें उनकी चाण्डाल आदि संज्ञाएँ होती हैं। प्रथम चाण्डाल समस्त सुख-सम्पत्तियों का देनेवाला, द्वितीय चर्मकार क्षुधा, पीड़ा और भयावह, तृतीय विप्र भ्रान्त और उद्विग्न करनेवाला, चतुर्थ शूद्र समस्त सुखसम्पत्तियों का देनेवाला, पञ्चम म्लेच्छ राजा का प्रिय बनानेवाला, षष्ठ योगी भ्रान्त और उद्विग्न करनेवाला, सप्तम गोप गोपों को सुख देनेवाला और अष्टम क्षत्रिय पीड़ा, युद्ध तथा भयकारी होता है ॥ ७७-८१ ॥

गृहारम्भे वारविचारः

रवावग्निः कुजे नाशः शशिन्यस्वं शनौ भयम्।

सुरेज्ये भार्गवे सौम्ये गृहारम्भः प्रशस्यते ॥ ८२ ॥

गृहारम्भ में रवि अग्निभयकारक, मंगल नाशकारक, चन्द्र निर्धनकारक और शनि भयकारक तथा गुरु, शुक्र और बुध शुभदायक होता है ॥ ८२ ॥

गृहकरणार्थं वास्तुविचारः

यदुक्तं भवनारम्भे शुभं वाप्यशुभं बुधैः ।
तदेव तिथिमासाद्यं विज्ञेयं वास्तुकर्मणि ॥ ८३ ॥

जो तिथि, नक्षत्र, मास आदि गृहारम्भ में कहे गए हैं वे ही तिथि, मास आदि वास्तुकर्म में शुभदायक होते हैं ॥ ८३ ॥

वास्तुविचारे विशेषः

विशेषाच्छ्रवणात्षट्कं शनिवासरमेव च ।
गृहीत्वा पूजयेद्भूमिं शकुनं च विचारयेत् ॥ ८४ ॥

श्रवण आदि छः नक्षत्र तथा शनि का दिन ये भूमिपूजन में विशेष कहे गए हैं । शकुन का विचार भी कर लेना चाहिए ॥ ८४ ॥

वास्तुकार्ये लग्नशुद्धिः

मेषे भूयो भवेद्यात्रा कर्कटे नाशमाप्नुयात् ।
तुलोदये भवेद्व्याधिर्धान्यनाशो मृगोदये ॥ ८५ ॥
अन्ये ये राशयश्चाष्टौ वास्तुकार्ये शुभावहाः ।
तेषां नवांशकाद्यास्तु भागास्तत्तुल्यपाकदाः ॥ ८६ ॥

मेष लग्न में वास्तुकार्य करनेवाला यात्राकारक, कर्क लग्न नाशकारक, तुला लग्न व्याधिकारक और मकर लग्न धान्यनाशक तथा शेष लग्न शुभफलदायक और लग्नों के नवांश भाग लग्न के अनुसार फल देनेवाले होते हैं ॥ ८५-८६ ॥

गृहप्रवेशे ग्रहशुद्धिविचारः

त्रिषट्दशायसंस्थाश्च सर्वे खेटाः शुभावहाः ।
त्रिकोणेऽप्यथवा केन्द्रे शुभा एव शुभप्रदाः ॥ ८७ ॥

तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थान में समस्त ग्रह शुभफलदायक तथा त्रिकोण (९ । ५) या केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०) में स्थित शुभग्रह ही शुभफलदायक होते हैं ॥ ८७ ॥

गृहे शिल्पादिक्रियाविचारः

ध्रुवे मैत्रे चरे क्षिप्रे जीवे सौम्ये खलग्नगे ।
चन्द्रे गुरुज्ञवर्गस्थे शिल्पारम्भः प्रशस्यते ॥ ८८ ॥

ध्रुवसंज्ञक (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तरभाद्रपद और रोहिणी), अनुराधा, चरसंज्ञक (स्वाती पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष), क्षिप्रसंज्ञक (हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित्), नक्षत्रों में तथा बृहस्पति और बुध के दशवें स्थान में होने पर तथा चन्द्रमा के बृहस्पति और बुध की राशि में स्थित होने पर शिल्पारंभ करना श्रेष्ठ होता है ॥ ८८ ॥

गृहशिल्पे चित्रादीनां वर्ज्यता

उलूककाकगृध्राश्च व्याघ्रसिंहवराहकाः ।
पिशाचा राक्षसाः क्रूराः संग्रामो रोदनं तथा ॥ ८९ ॥
इन्द्रजालवदन्यानि प्रपञ्चचरितानि च ।
भीषणानि च सर्वाणि गृहचित्रे विवर्जयेत् ॥ ९० ॥

घर में उल्लू, कौआ, गीध, बाघ, सिंह, शूकर, पिशाच, राक्षस, क्रूर, संग्राम, भीषण, प्रपञ्च भरे हुए और इन्द्रजाल तथा इन्द्रजाल के सदृश अन्य चित्र न अङ्कित कराने चाहिए ॥ ८९-९० ॥

गृहारम्भे वास्तुभूमिज्ञानम्

पूर्वोत्तरप्लवा भूमिः सुप्रसन्ना समापि च ।
ईषत्प्लवा निरुच्छिष्टा प्रशस्ता वासकर्मणि ॥ ९१ ॥
दक्षिणापरनीचा भूः सोषरा विषमापि वा ।
वृक्षच्छायासमायुक्ता वर्जनीयाः प्रयत्नतः ॥ ९२ ॥
उक्तादन्यस्वरूपा तु निषिद्धविहितेतरा ।

तत्स्थामपि वसेच्छान्त्याऽथवा देवद्विजाज्ञया ॥ ९३ ॥

जो भूमि पूर्व और उत्तर की ओर ढालू हो शेष सम हो, तो वह भूमि चित्त को प्रसन्न करनेवाली तथा थोड़ी ढालू और श्मशान आदि से हीन भूमि निवास करने में शुभ कही गई है। जो भूमि दक्षिण ओर पश्चिम की ओर ढालू हो, ऊसर हो, नीची-ऊँची हो और वृक्षों की छाया से युक्त हो वह भूमि निवास करने में त्याज्य है। जिस भूमि में पूर्वकथित लक्षण न घटित होते हों और निषिद्ध भी न हो, तो उस भूमि में शान्तिपूर्वक निवास करे अथवा देवताओं को यज्ञ द्वारा प्रसन्न कर या ब्राह्मणों की आज्ञानुसार आदिष्ट स्थान में घर बनाने से शुभ होता है ॥ ९१-९३ ॥

गृहारम्भे भूमिफलम्

श्वेता च ब्राह्मणी भूमिः क्षत्रियारुणविग्रहा ।
वैश्या पीततरा ख्याता कृष्णा शूद्राभिधीयते ॥ ९४ ॥
ब्राह्मणी ब्राह्मणस्योक्ता क्षत्रिया क्षत्रियस्य च ।
वैश्या वैश्यस्य निर्दिष्टा शूद्रा शूद्रस्य शस्यते ॥ ९५ ॥

श्वेत भूमि ब्राह्मणी, रक्तवर्ण भूमि क्षत्रिया, पीतवर्ण भूमि वैश्या और कृष्णवर्ण भूमि शूद्रा कही जाती है। ब्राह्मणजाति के लिये ब्राह्मणी भूमि, क्षत्रियजाति के लिये क्षत्रिया, वैश्यजाति के लिये वैश्या और शूद्रजाति के लिये शूद्रा भूमि उत्तम होती है ॥९४-९५॥

गृहारम्भे भूमिपरीक्षा

हस्तमात्रं खनेत्खातं जलेनैव प्रपूरयेत् ।
पूरिते वास्तुकर्ता च गच्छेत्पदशतं पुनः ॥ ९६ ॥
समागत्याम्भसो वृद्धिं दृष्ट्वा वृद्धिरनुत्तमा ।
समेऽपि स्यान्महावृद्धिः क्षये क्षयमथादिशेत् ॥ ९७ ॥

एक हाथ का नीचा गड्ढा खोदकर जलपूर्ण करे और वास्तु-पूजन करनेवाला पुरुष सौ पैर तक चले। खोदने के बाद जल की

वृद्धि देखने में आवे, तो वह गृह उन्नतिकारक, जब सम रहे, तो वास्तुकर्त्ता की अत्युन्नति और जब न्यून हो आवे, तो वह गृह नाश-कारक होता है ॥ ९६-९७ ॥

ग्रामवासे धारोपधारमाह

अक्षरं द्विगुणं कृत्वा मात्रां कृत्वा चतुर्गुणाम् ।
ग्रामस्य च तथा पुंसो गणयेन्नामवर्णकम् ॥ ९८ ॥
सप्तभिश्च हरेद्भागं शेषाद्वाच्यं फलाफलम् ।
एकशेषेण शून्येन चतुर्भिश्चैव क्लेशदः ॥ ९९ ॥
षट्द्विशेषे च बहुशो धनलाभ उदाहृतः ।
पञ्चकेन त्रयेणापि न लाभो न च वा क्षतिः ॥ १०० ॥

ग्राम तथा ग्राम में निवास करने की इच्छावाले पुरुष के नामाक्षरों को द्विगुणित और मात्राओं को चतुर्गुणित करे तथा सात का भाग देवे। शून्य, एक या चार शेष रहें, तो क्लेशदायक; दो और छः शेष बचें, तो धनलाभकारक और तीन तथा पाँच शेष बचें, तो सामान्य फल होता है ॥ ९८-१०० ॥

गृहविचारे नामराशितो ग्रामराशिविचारः

नामभाद्ग्रामराशिः स्याद् द्व्यङ्कपञ्चेशदिङ्मितः ।
तदैव मुनिभिः प्रोक्तो निवासः शुभदायकः ॥ १०१ ॥

अपने नाम की राशि से ग्राम की राशि दूसरी, नवीं, पाँचवीं, ग्यारहवीं या दशवीं हो, तो ग्राम का निवास शुभफलदायक होता है ॥ १०१ ॥

गृहारम्भे पञ्चकदोषज्ञानम्

रविक्रान्तियातांशयुक्ताश्च तिथ्यो
रविर्दिग्गजाः सिन्धवः खेटभक्ताः ।
भवेत्पञ्चकं रोगवह्नीशचौर-
मृतिर्दोपमेनं प्रजह्याद्विवाहे ॥ १०२ ॥

सूर्य के गतांश तथा पन्द्रह या बारह या दश या आठ या चार इनको अलग-अलग रखकर जोड़ लेना चाहिए। उन अंकों में नव का भाग देने पर पाँच शेष बचें, तो क्रम से पाँचों स्थान में पाँच पञ्चक होते हैं। १ रोगपञ्चक, २ अग्निपञ्चक*, ३ राजपञ्चक, ४ चौरपञ्चक और पाँचवाँ मृत्युपञ्चक ॥ १०२ ॥

गृहसमीपे शुभाशुभवृक्षाः

यत्र तत्र स्थिता वृक्षा विल्वदाडिम्बकेशराः।
पनसो नारिकेलश्च शुभं कुर्वन्ति नित्यशः ॥ १०३ ॥
जम्बीरश्च रसालश्च रम्भा शेफालिकास्तथा।
यवाशोकशिरीषाश्च मल्लिकाद्याः शुभप्रदाः ॥ १०४ ॥
मालतीं चैव चम्पां च केतकीं कुन्दमेव च।
मुनिवृक्षं ब्रह्मवृक्षं वर्जयेद्गृहसन्निधौ ॥ १०५ ॥
तिन्तिडीको वटः प्लक्षः पिप्पलश्च सकोटरः।
क्षीरी च कण्टकी चैव निषिद्धास्ते महीरुहाः ॥ १०६ ॥
खर्जूरी दाडिमी रम्भा कर्कन्धू बीजपूरिका।
उत्पद्यन्ते गृहे यत्र तस्मिन् कृन्तति मूलतः ॥ १०७ ॥
वृक्षप्रसादिनी छायासंच्छन्नं यदि मन्दिरम्।
अचिरेणैव कालेन उद्वसनं जायते ध्रुवम् ॥ १०८ ॥
यामादूर्ध्वं तु या छाया वृक्षप्रासादसम्भवा।
वर्जयेत्तां प्रयत्नेन यावद्वै प्रहरद्वयम् ॥ १०९ ॥
प्रथमान्तयामवर्जं द्वित्रिप्रहरसम्भवा।
छाया वृक्षध्वजादीनां सदा दुःखप्रदायिनी ॥ ११० ॥

घर के समीप में बेल, अनार, नागकेशर, कटहल और नारियल के वृक्ष शुभकारी होते हैं। जँभीरी नींबू, आम्र, केला, निर्गुंडी,

* अग्निपञ्चक गृहारम्भ में वर्जित है।

जौ, अशोक, शिरसा और चमेली आदि के वृक्ष शुभफलकारी होते हैं। मोतिया, चम्पा, केवड़ा, कुन्द, मुनिवृक्ष (पतंग) और आँवले का वृक्ष गृह के समीप में अशुभफलकारी होता है। इमली, बरगद, पकरिया, कोटरयुक्त पीपल (खोखलदार पीपल), दूधवाले तथा काँटेवाले वृक्ष यदि घर के समीप में हों, तो अशुभफलकारी होते हैं। खजूरी, दाडिमी, केला, वदरी (बेर) और बिजौरा नींबू जिस घर में स्वयं उत्पन्न हो जायँ तो उस घर का सर्वनाश कर डालते हैं। वृक्षों की सघन छाया जिस घर में बराबर रहती हो, तो वह घर उजड़ जाता है। जिस घर में वृक्षों की छाया प्रहर भर से ऊपर और दो प्रहर के अन्दर ठहरती हो, तो उस छाया की निवृत्ति शीघ्र कर देनी चाहिए अर्थात् वृक्षों की शाखाएँ छाँटकर छाया की निवृत्ति अवश्य कर लिया करे। जिस घर में वृक्षों तथा पताकाओं की छाया प्रथम और अन्तिम प्रहर को छोड़कर, दो-तीन प्रहरों तक बराबर रहती हो, तो सदा दुःख देनेवाली होती है ॥१०३–११०॥

गृहप्रवेशमुहूर्तः

सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे
यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे।
स्याद्वेशनं द्वाःस्थमृदुध्रुवोडुभि-
र्जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे ॥ १११ ॥

उत्तरायण में; ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन तथा वैशाख इन महीनों में; कृत्तिका आदि सात-सात नक्षत्र पूर्व आदि चारों दिशाओं में कल्पित करने पर जो नक्षत्र दरवाज़े के सामने पड़ते हों उन नक्षत्रों में; चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, तीनों उत्तरा और रोहिणी इन नक्षत्रों में; कृष्णपक्ष में दशमी तिथि पर्यन्त तथा शुक्लपक्ष में; जन्मराशि व जन्मलग्न इन दोनों से तीसरी, छठी, दशवीं तथा ग्यारहवीं राशि के लग्न में रहते अथवा वृष, सिंह, वृश्चिक तथा

कुम्भ इनमें से किसी राशि के लग्न में रहते विदेश से लौटने पर पुराने घर में या नए घर में राजा * का गृहप्रवेश करना शुभदायक होता है ॥ १११ ॥

वास्तुपूजामुहूर्तः

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे
वास्त्वर्चनं भूतबलिं च कारयेत् ।
त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः शुभै-
र्लग्नत्रिषष्ठायगतैश्च पापकैः ॥ ११२ ॥
शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ
व्यर्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे ।
अग्रेऽम्बुपूर्णं कलशं द्विजांश्च
कृत्वा विशेद्वेश्म भकूटशुद्धम् ॥ ११३ ॥

चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा तथा मूल इन नक्षत्रों में पुरोहित को चाहिए कि गृहस्वामी से वास्तुपूजा † तथा भूतबलि करावे। जिस गृहस्वामी के पाँचवें, नवें, पहले, चौथे, सातवें, दशवें, ग्यारहवें, दूसरे और तीसरे स्थानों में शुभग्रह स्थित हों तथा तीसरे, छठे और ग्यारहवें स्थानों में पापग्रह स्थित हों एवं चौथे, आठवें स्थान में कोई ग्रह स्थित न

* मनुष्यों में प्रधान होने के कारण यहाँ पर राजा का नाम गृहीत हुआ है इस कारण उक्त विचार सर्वसाधारण के लिये भी है।

† जो व्यक्ति वास्तुपूजा आदि विना किए हुए नए घर में प्रवेश करता है वह समस्त विपत्तियों का भोगनेवाला होता है। वास्तुपूजा तथा भूतबलि का प्रकार वसिष्ठसंहिता और प्रयोगरत्न आदि ग्रन्थों में शाखाभेद से कहा

हो तथा गृहस्वामी की जन्मलग्न जन्मराशि से आठवें न हो उस लग्न में, रवि और मंगल को छोड़ अन्य वारों में, चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी और अमावास्या को छोड़ अन्य तिथियों में, चैत्र को छोड़ अन्य महीनों में, मेष, कर्क, तुला और मकर को छोड़ अन्य राशियों के लग्न में रहते घर के स्वामी को चाहिए कि जल से भरा हुआ, पल्लवयुक्त कलश व ब्राह्मणों को अपने आगे करके गृहप्रवेश * करे ॥ ११२-११३ ॥

गृहप्रवेशे नक्षत्राणि

षष्ठ्यष्टमीविष्णुदिनानि रिक्तां
विहाय चित्रोत्तररोहिणीं च ।
मृगान्त्यमैत्रे शनिवित्सितेज्ये
निवृत्य गेहं प्रविशेत्प्रयाणात् ॥ ११४ ॥

षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी और रिक्ता तिथियों को छोड़कर चित्रा तीनों उत्तरा तथा रोहिणी इन नक्षत्रों को छोड़कर मृगशिर, रेवती और अनुराधा इन नक्षत्रों में, शनि, बुध, शुक्र और बृहस्पति इन वारों में गृहप्रवेश का करना शुभदायक होता है ॥ ११४ ॥

गृहप्रवेशे लग्नविचारः

स्थिरेऽङ्गेशे शुभैरर्थकोणकेन्द्रत्रिलाभगैः ।
पापैर्लाभत्रिषट्संस्थैः शुद्धे तुर्ये तथाष्टमे ॥ ११५ ॥

स्थिर लग्न में लग्नेश हो, धन, कोण, केन्द्र, पराक्रम तथा लाभ इन स्थानों में शुभग्रह हों, तीसरे, छठे और ग्यारहवें स्थानों में पापग्रह हों, चतुर्थ तथा अष्टम स्थान शुद्ध हों, तो ऐसे मुहूर्त में गृहप्रवेश का करना शुभदायक होता है ॥ ११५ ॥

---

* गृहप्रवेश के समय षष्ठाष्टकादि भकूट अथवा विवाहप्रकरणोक्त वर्ण, वश्य, तारा आदि दश कूट शुद्ध होने चाहिए ।

गृहप्रवेशे नक्षत्रवेधविचारः

क्रूरग्रहाधिष्ठितविद्धभं च ।
विवर्जनीयं त्रिविधप्रवेशे ॥ ११६ ॥

क्रूरग्रह से नक्षत्र विद्ध हो, तो तीनों प्रकार का गृहप्रवेश (नवीन या प्राचीन या मरम्मत किया हुआ) वर्जित है ॥ ११६ ॥

गृहप्रवेशे शुक्रादिविचारः

कृत्वा शुक्रं पृष्ठतो वामतोऽर्कम् ॥ ११७ ॥

शुक्र पृष्ठप्रदेश में तथा सूर्य वाम होना चाहिए ॥ ११७ ॥

गृहप्रवेशे सूर्यविचारः

रन्ध्रात्पुत्राद्धनाद्दारात्पञ्चस्वर्के स्थिते क्रमात् ।
पूर्वाशादिमुखं गेहं विशेद्वामो भवेद्यतः ॥ ११८ ॥

जब आठवें, पाँचवें, दूसरे और सातवें स्थानों से पञ्चम स्थान में सूर्य हो, तो पूर्व आदि दिशाओं की ओर द्वारवाले घर में प्रवेश करना चाहिए। इस प्रकार सूर्य पूर्व आदि दिशाओं में क्रमशः वाम हो जाता है ॥ ११८ ॥

गृहप्रवेशे कुम्भचक्रम्

सूर्यभाद्दिनभं यावद् गणयेत्सुविचक्षणः ।
गृहप्रवेशे च फलं कुम्भचक्रस्य निम्नतः ॥ ११९ ॥

सूर्य के नक्षत्र से दिननक्षत्र तक गिनकर निम्नलिखित फल जानना चाहिए ॥ ११९ ॥

मुखे	१	अग्निदाहः
पूर्वे	४	वासशून्यम्
दक्षिणे	४	बहुलाभः
पश्चिमे	४	लक्ष्मीप्राप्तिः
उत्तरे	४	कलहः
गर्भे	४	नाशः

गुदे ३ स्थिरता
कण्ठे ३ स्थिरता

गृहप्रवेशे विशेषः

वास्तौ वापि गृहारम्भे यदुक्तं च शुभाशुभम् ।
तदेवात्रापि विज्ञेयं प्रवेशे नव्यवेश्मनः ॥ १२० ॥

वास्तुपूजा तथा गृहारम्भ में जो शुभाशुभ नक्षत्र आदि कहे गए हैं उन्हीं नक्षत्रादिकों में नवीन घर में प्रवेश करना शुभफलदायक होता है ॥ १२० ॥

चुल्ली*स्थापनमुहूर्तः

सूर्यभाद्वेदनाशाय वेदसंख्या सुखाय च ।
रससंख्या च दारिद्र्यं वेदसंख्या पुनः सुखम् ॥१२१॥
बाणसंख्या स्त्रिया नाशः पुत्रलाभश्च शेषके ।
चुल्लिचक्रं प्रवक्ष्यामि यथोक्तं गर्गभाषितम् ॥ १२२ ॥

सूर्य के नक्षत्र से दिन के नक्षत्र तक गणना करे। पहले चार नक्षत्र नाशप्रद, फिर चार नक्षत्र सुखप्रद, फिर छः नक्षत्र दारिद्र्य-प्रद, फिर चार सुखप्रद, फिर पाँच नक्षत्र स्त्रीनाशक और शेष चार नक्षत्र पुत्रलाभकारक होते हैं ॥ १२१-१२२ ॥

वृक्षारोपणमुहूर्तः

शुक्लपक्षे तिथौ शस्ते शुक्रे चन्द्रे गुरावपि ।
तरूणां रोपणं शस्तं ध्रुवक्षिप्रमृदूडुभिः ॥ १२३ ॥

* रवि, शनि तथा भौम चूल्हे के स्थापन में शुभ कहे गए हैं। ग्रन्थान्तर में कहा भी है ।

सुरगयमविशाखाब्राह्मवसौम्योत्तरेषु
ज्वलनजलधनिष्ठामूलशूलायुधेषु ।
रविशनिकुजवारे चुल्लिका स्थापनीया
ज्वलनशुचितधीरन्यअनस्वादुकर्त्री ॥

शुक्लपक्ष में, शुभ तिथियों में, शुक्र, चन्द्र तथा गुरु इन दिनों में, ध्रुव (तीनों उत्तरा रोहिणी और शतभिषा), क्षिप्र (अश्विनी, पुष्य और अभिजित्), मृदु (चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती) इन नक्षत्रों में वृक्षों का आरोपण करना शुभदायक होता है ॥ १२३ ॥

कदल्याद्यारोपणमुहूर्त्तः

शीत्यन्तास्तिथयः कुजार्कशनयो वाराश्च षष्ठीयुता
मासः प्रौष्ठपदस्त्रिविक्रममुखं नक्षत्रषट्कं तथा ।
त्यक्त्वैतान् वृषसिंहवृश्चिकघटेष्वङ्गेषु भद्रां विना
गर्गाद्याः कदलीक्षुरोपणविधिः शस्तं जगुः सर्वदा ॥१२४॥

'शी' अक्षर जिन तिथियों के अन्त में हो अर्थात् एकादशी आदि तथा षष्ठी, इन तिथियों, में शनि, सूर्य और भौम इन दिनों में, भाद्रपद मास तथा श्रवण, धनिष्ठा आदि छः नक्षत्रों को छोड़कर अन्य तिथि, वार आदिकों में, वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ इन लग्नों में गर्ग आदि मुनियों ने कदली (केला), और इक्षु (ईख) के रोपण का शुभदायक मुहूर्त कहा है ॥ १२४ ॥

राहुवासज्ञानम्

देवालये गेहविधौ जलाशये
राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः ।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे
खाते मुखात्पृष्ठविदिक्शुभा भवेत् ॥ १२५ ॥

देवालय, गृहारम्भ तथा जलाशय में राहु के मुख का विचार ईशान दिशा से क्रमशः विलोमपूर्वक होता है । देवालय में मीन के सूर्यों से तीन-तीन राशियों में ईशान, वायव्य, नैर्ऋत्य तथा आग्नेय इन विदिशाओं के क्रम से राहु का मुख होता है । गृहारम्भ में सिंह के सूर्यों से तीन-तीन राशियों में चारों विदिशाओं

के क्रम से राहु का मुख होता है। जलाशय में मकर के सूर्य से तीन-तीन राशियों में चारों विदिशाओं के क्रम से राहु का मुख होता है। जिस दिशा में राहु का मुख हो उसके पीछेवाली दिशा में खात होता है। उसी दिशा में जलाशय आदि का खनन प्रारम्भ करे। जैसे ईशान में राहु का मुख हो, तो आग्नेय विदिशा में, वायव्य में राहु का मुख हो, तो ईशान में, नैर्ऋत्य में मुख हो, तो वायव्य में तथा आग्नेय में मुख हो, तो नैर्ऋत्य में पृष्ठ होता है॥१२५॥

देवालये राहुमुखचक्रम्

ईशान	वायव्य	नैर्ऋत्य	आग्नेय
मीन, मेष, वृष	मिथुन, कर्क, सिंह	कन्या, तुला, वृश्चिक	धन, मकर, कुम्भ

गृहारम्भे राहुमुखचक्रम्

ईशान	वायव्य	नैर्ऋत्य	आग्नेय
सिंह, कन्या, तुला	वृश्चिक, धन, मकर	कुम्भ, मीन, मेष	वृष, मिथुन, कर्क

जलाशये राहुमुखचक्रम्

ईशान	वायव्य	नैर्ऋत्य	आग्नेय
मकर, कुम्भ, मीन	मेष, वृष, मिथुन	कर्क, सिंह, कन्या	तुला, वृश्चिक, धन

द्वारस्थापनमुहूर्तः

अश्विन्यामुत्तराहस्तपुष्यश्रुतिमृगेषु च।
स्वातौ पौष्णे च रोहिण्यां द्वारशाखावरोपणम् ॥१२६॥

अश्विनी, तीनों उत्तरा, हस्त, पुष्य, श्रवण, मृगशिरा, स्वाती, रेवती और रोहिणी इन नक्षत्रों में द्वारस्थापन शुभ होता है ॥१२६॥

सूर्यभाद्वेदभैः शीर्षे संस्थितैर्धनसम्पदः ।
गृहस्योद्वसनं तस्मादष्टभिः कोणसंस्थितैः ॥ १२७ ॥
शाखास्वष्टमितैस्तस्माद्धनं सौख्यं भवेद्गृहे ।
देहल्यां तु त्रिभिर्धिष्ण्यैर्मृत्युर्गृहपतेर्भवेत् ॥ १२८ ॥
चतुर्भिर्मध्यगैस्तस्माद्द्रव्यलाभं सुखं भवेत् ।
एतच्चक्रं विचार्यादौ द्वारं कुर्यात्स्वमन्दिरे ॥ १२९ ॥

जिस नक्षत्र में सूर्य स्थित हो उससे लेकर चार नक्षत्र द्वार के शिर अर्थात् उतरंग में देवे, इसका फल लक्ष्मीदायक, आठ नक्षत्र चारों कोणों में, फल उजाड़ होना; आठ नक्षत्र शाखा (बाजू) में, फल, धन और सुखदायक; तीन नक्षत्र देहली (चौखट) में, फल गृहेश की मृत्यु और चार नक्षत्र मध्य में, फल द्रव्य-लाभ तथा सुख होता है। गृहद्वार के स्थापन में इसका विचार कर लेना चाहिए ॥ १२७-१२९ ॥

राशितो द्वारविचारः

द्विजो वैश्यस्तथा शूद्रः क्षत्रियो राशिजो नरः ।
द्वारं च पूर्वतः कुर्याद्दिशानां च चतुष्टयम् ॥ १३० ॥

मीन, वृश्चिक और कर्क राशिवालों को पूर्वमुख, कन्या, वृष और मकर राशिवालों को दक्षिणमुख, मिथुन, तुला और कुम्भ राशिवालों को पश्चिममुख तथा मेष, सिंह और धन राशिवालों को उत्तरमुख द्वार * शुभ होता है ॥ १३० ॥

---

* ग्रन्थान्तर में सम्मुख राहु का विचार करना भी लिखा है—
त्रिभिस्त्रिभिश्च मार्गाद्यैराहुस्तिष्ठति पूर्वतः ।
विपरीतक्रमेणैव द्वारं सम्मुखतस्त्यजेत् ॥

गृहारम्भे दारुविचारः

अन्यवेश्मस्थितं दारु नैवान्यस्मिन् प्रयोजयेत् ।
न तत्र वसते कर्ता वसन्नपि न जीवनम् ॥ १३१ ॥

दूसरे घर में लगी हुई कड़ी आदि लकड़ियाँ दूसरे घर में न लगानी चाहिए। यदि घर में लगा दी जायँ, तो गृहस्वामी निवास न कर सके। यदि निवास भी करे, तो जीवित न रहे ॥ १३१ ॥

दारुविचारे विशेषः

नूतने नूतमं काष्ठं जीर्णे जीर्णं प्रशस्यते ।
न जीर्णे नूतनं श्रेष्ठं नो जीर्णं नूतने तथा ॥ १३२ ॥

नवीन गृह में नवीन काष्ठ तथा पुराने घर में प्राचीन काष्ठ लगवाना श्रेष्ठ कहा गया है। प्राचीन घर में नूतन काष्ठ तथा नवीन घर में प्राचीन काष्ठ लगवाना सर्वथा अहितकर होता है ॥ १३२ ॥

द्वारविचारे विशेषः

द्वारस्य सन्मुखे द्वारं द्वारं द्वारोपरि स्थितम् ।
नैव कुर्याद्धनाकांक्षी पुत्राकांक्षी विशेषतः ॥ १३३ ॥

एक घर के द्वार के सम्मुख दूसरे घर का द्वार रखना तथा द्वार के ऊपर द्वार रखना धनाकांक्षियों विशेषकर पुत्राकांक्षियों के लिये सर्वथा वर्जित हैं ॥ १३३ ॥

जलाशयारामदेवप्रतिष्ठामुहूर्ताः

जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा
सौम्यायने जीवशशाङ्कशुक्रे ।
दृश्ये मृदुक्षिप्रचरध्रुवे स्या-
त्पक्षे सिते स्वर्क्षतिथिक्षणे वा ॥ १३४ ॥
रिक्ताऽऽरवर्जे दिवसेऽतिशस्ता
शशाङ्कपापैस्त्रिभवाङ्गसंस्थैः ।
व्यन्त्याष्टगैः सत्खचरैर्मृगेन्द्रे

सूर्यो घटे को युवतौ च विष्णुः ॥ १३५ ॥
शिवो नृयुग्मे द्वितनौ च देव्यः
क्षुद्राश्चरे सर्व इमे स्थिरर्क्षे ।
पुष्ये ग्रहा विघ्नपयक्षसर्प-
भूतादयोऽन्त्ये श्रवणे जिनश्च ॥ १३६ ॥

उत्तरायण में; गुरु, चन्द्र और शुक्र दृश्य हों अर्थात् उदित हों; मृदु (मृगशिरा, रेवती, चित्रा और अनुराधा), क्षिप्र (हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित्), चर (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष) और ध्रुवसंज्ञक (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तरभाद्रपद और रोहिणी) इन नक्षत्रों में; शुक्लपक्ष में; जिस देवता की प्रतिष्ठा आदि करना हो उसी के नक्षत्र व तिथि व मुहूर्त में; रिक्ता तिथि व मंगल दिन को छोड़ अन्य दिनों में तड़ाग आदि जलाशयों का उत्सर्ग व बग़ीचे आदि का उत्सर्ग व देवताओं की स्थापना अति शुभ होती है। लग्न से तीसरे व ग्यारहवें व छठे स्थान में चन्द्रमा व पापग्रहों के रहते तथा आठवें व बारहवें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में शुभ ग्रहों के रहते एवं स्थिर व द्विस्वभाव लग्नों में साधारणतया सब देवताओं की प्रतिष्ठा शुभ होती है; परन्तु विशेष बात ध्यान देने योग्य यह है कि सिंहलग्न में सूर्य, कुम्भलग्न में ब्रह्मा, कन्यालग्न में विष्णु, मिथुनलग्न में शिव, द्विस्वभावलग्नों में देवी, चरलग्नों में क्षुद्रा अर्थात् योगिनी आदि देवियों, स्थिर लग्नों में उक्तानुक्त सब देवताओं, पुष्य नक्षत्र में चन्द्र आदि आठ ग्रहों, हस्त नक्षत्र में सूर्य, रेवती नक्षत्र में गणेश, यक्ष, सर्प, भूत आदिकों तथा श्रवण नक्षत्र में बुद्ध की स्थापना शुभ होती है ॥ १३४-१३६ ॥

देवादिप्रतिष्ठायामयनमासाः।

श्रीप्रदं सर्वगीर्वाणस्थापनं चोत्तरायणे ।

विचैत्रेष्वेव मासेषु मघादिषु च पञ्चसु ॥ १३७ ॥

उत्तरायण में समस्त देवताओं का स्थापन लक्ष्मीप्रद तथा चैत्र को छोड़ माघ आदि पाँच महीनों में समस्त देवताओं का स्थापन करना लक्ष्मीप्रद होता है ॥ १३७ ॥

देवादिप्रतिष्ठायां शुक्लपक्षादिविचारः

वलक्षपक्षः शुभदः समस्तः
सदैव तत्राद्यदिनं विहाय ।
अन्त्यं द्विभागं परिहृत्य कृष्ण-
पक्षेऽपि शस्तः शुभवासरश्च ॥ १३८ ॥

प्रतिपदा को छोड़कर शेष समस्त शुक्लपक्ष तथा कृष्णपक्ष में भी द्वितीया आदि चार तिथियाँ शुभवार युक्त हों, तो समस्त देवताओं का स्थापन करना शुभदायक होता है ॥ १३८ ॥

नवरात्रिषु देवस्थापनम्

याम्यायनेऽपि देवीनां स्थापनं नवरात्रिषु ।
प्रशस्तं कार्त्तिके विष्णोर्भाद्रे कलशजन्मनः ॥ १३९ ॥

देवियों का स्थापन नवरात्र में दक्षिणायन होने पर भी शुभदायक होता है। विष्णु का स्थापन कार्त्तिक मास में तथा भाद्रपद मास में अगस्त्य का स्थापन करना शुभदायक होता है ॥१३९ ॥

योगापन्ने शनौ विशेषः

रिक्तावमकुयोगाद्यं वर्जयित्वा प्रयत्नतः ।
सुराणां स्थापनं कुर्याद्योगापन्ने शनावपि ॥ १४० ॥

रिक्ता तिथि, अवम तिथि तथा कुयोग आदि को छोड़कर शनि के दिन जब कोई शुभ योग आ पड़े, तो उस दिन समस्त देवताओं का स्थापन करना शुभदायक होता है॥ १४० ॥

देवस्थापने नक्षत्राणि

हस्तत्रये मित्रहरित्रये च
पौष्णद्वयादित्यसुरेज्यभेषु ।
तिस्रोत्तराधातृशशाङ्कधिष्ण्ये
सर्वामरस्थापनमुत्तमं स्यात् ॥ १४१ ॥

हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, रेवती, अश्विनी, हस्त, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी और मृगशिरा इन नक्षत्रों में समस्त देवताओं का स्थापन करना शुभदायक होता है १४१॥

देवस्थापने लग्नकथनम्

स्थाप्यो हरिर्दिनकरो मिथुने महेशो
नारायणश्च युवतौ घटभे विधाता ।
देव्यो द्विमूर्त्तभवनेषु निवेशनीया-
श्क्षुद्राश्चरे स्थिरगृहे निखिलाश्च देवाः ॥ १४२ ॥

मिथुन लग्न में विष्णुजी, शङ्करजी और सूर्यदेव की, कन्यालग्न में कृष्ण आदि की, कुम्भ लग्न में ब्रह्मा की, द्विस्वभाव लग्नों में देवियों को, चरसंज्ञक लग्ना में योगिनी आदिकों की तथा स्थिर लग्नों में शेप समस्त देवताओं का स्थापन करना शुभदायक होता है ॥१४२॥

धान्यादिमर्दनस्थानम्

प्रसन्नभूमौ पुरसन्निधाने
प्रोत्तुंगदेशेषु खलं विदध्यात् ।
वन्ध्याप्रदेशे च पथे च निम्ने
भीरुप्रदेशे खलको न कार्यः ॥ १४३ ॥

खल (खरिहान) का स्थान ग्राम के निकट श्मशानादि से दूर, मनोहर तथा उन्नत प्रदेश में होना चाहिए । निम्नस्थान, मार्ग, भयावने तथा बाँझ भूमि में खरिहान का स्थान रहना शुभ नहीं होता है ॥ १४३ ॥

धान्यादिमर्दनस्तम्भविधिः

वटोदुम्बरनीपानां शाखोटवदरस्य च ।
शाल्मल्या मुशलेनैव मेधिं कुर्याद्विचक्षणः ॥ १४४ ॥

बरगद, गूलर, कदंब, सिहोर, बेरि और सेमर की लकड़ी की ही मेधि (धान्य पीटने का डंडा) रखनी चाहिए ॥ १४४ ॥

धान्यादिमर्दनस्तम्भे नक्षत्रादयः

कपित्थविल्ववंशानां न च मेधिं कदाचन ।
न पौषे न च रिक्तायां न कुजार्किदिने तथा ॥ १४५ ॥
मृदुक्षिप्रचरर्क्षेषु खाते द्रव्यं नियुज्य च ।
सम्पूज्य धान्यवद्धाग्रों मेधिं संस्थापयेद्बुधः ॥ १४६ ॥

कैथा, विल्व और बाँस की मेधि कभी न बनावे। पौष मास, रिक्ता तिथि, भौम दिन तथा शनैश्चर को छोड़कर अन्य मास, तिथि, वारों में; मृदु (मृगशिरा, रेवती, चित्रा और अनुराधा), क्षिप्र (हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित्), चर (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष) इन नक्षत्रों में किसी खात (गड्ढे आदि) में कुछ द्रव्य रख तथा कुछ धान्य पोटली में बाँधकर मेधि के अग्रभाग में बाँध देवे और उन मेधियों को एकान्त स्थान में पहले से रख लेना चाहिए ॥ १४५-१४६ ॥

धान्यादिस्थापनम्

रोहिण्युत्तरपुष्येषु भरणीशक्रनिर्ऋते ।
पौष्णार्काश्विविशाखासु हरिमित्रपुनर्वसौ ॥ १४७ ॥
चित्रावसुमघायां च जीवार्केन्दुभृगोर्दिने ।
तथा तिथावरिक्तायां शस्यानां स्थापनं हितम् ॥ १४८ ॥

रोहिणी, तीनों उत्तरा, पुष्य, भरणी, विशाखा, रेवती, हस्त, अश्विनी, विशाखा, श्रवण, अनुराधा, पुनर्वसु, चित्रा, धनिष्ठा और

मघा इन नक्षत्रों में; गुरु, सूर्य, चन्द्र और शुक्र इन दिनों में; रिक्ता तिथियों को छोड़ अन्य तिथियों में शस्य का स्थापन करना शुभदायक होता है ॥ १४७-१४८ ॥

धान्यनिष्काशनम्

उत्तराम्बुपविशाखवासवे
चन्द्रभौमगुरुशुक्रवासरे।
गेहतो बहुतरायवृद्धये
धान्यनिष्क्रमणमाह पण्डितः ॥ १४९ ॥

तीनों उत्तरा, शतभिष, विशाखा और धनिष्ठा इन नक्षत्रों में तथा चन्द्र, भौम, गुरु और शुक्र इन दिनों में धान्य का देन-लेन करना शुभदायक होता है ॥ १४९ ॥

नक्षत्राणां जघन्यबृहत्समसंज्ञाः

रौद्राहियाम्यानिलवारुणेन्द्रा-
ण्याहुर्जघन्यानि तथा बृहन्ति।
ध्रुवद्विदैवादितिभानि नूनं
समानि शेषाणि पुनर्मुनीन्द्राः ॥ १५० ॥

आश्लेषा, शतभिष, आर्द्रा, स्वाती, ज्येष्ठा और भरणी ये नक्षत्र जघन्यसंज्ञक; रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, विशाखा और पुनर्वसु ये नक्षत्र बृहत्संज्ञक और मृगशिरा, रेवती, अनुराधा, चित्रा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, धनिष्ठा, श्रवण, कृत्तिका, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद और मूल ये नक्षत्र समसंज्ञक होते हैं ॥ १५० ॥

सूर्यसंक्रान्तितो धान्यादेर्महर्घतादिज्ञानम्

जघन्ये यदि संक्रान्तिर्ज्ञेयान्नस्य महार्घता।
बृहत्संज्ञे समर्घत्वं समत्वं समसंज्ञके ॥ १५१ ॥

जघन्यसंज्ञक * नक्षत्रों में संक्रान्ति हो, तो अन्न की महर्घता; बृहत्संज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो, तो अन्न का सस्ता होना तथा समसंज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो, तो अन्न का भाव सम रहता है ॥ १५१ ॥

वारादितः सूर्यसंक्रान्तिफलम्

सूर्यारशनिवारेषु यदा संक्रमते रविः ।
तदा क्रमाद्भयं विद्याद्राजपावकतस्करैः ॥ १५२ ॥

रवि के दिन सूर्य की संक्रान्ति हो, तो राजभय, भौम के दिन सूर्य की संक्रान्ति हो, तो अग्निभय तथा शनि के दिन सूर्य की संक्रान्ति हो, तो चौरभय होता है ॥ १५२ ॥

सुभिक्षं क्षेममारोग्यं वारे च बुधसोमयोः ।
शस्यानां जायते वृद्धिर्गुरुभार्गववासरे ॥ १५३ ॥

बुध और सोम के दिन सूर्य की संक्रान्ति हो, तो सुकाल, मंगल

---

* 'मुहूर्तचिन्तामणि' में ज्योतिर्विदोद्धारक रामदैवज्ञ ने कहा है—

जघन्यसंज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो, तो उसमें १५ मुहूर्त्त, बृहत्संज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो, तो उसमें पैंतालीस मुहूर्त तथा समसंज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो, तो उसमें तीस मुहूर्त होते हैं। एक मुहूर्त्त दो दण्ड का होता है।

जिस महीने की संक्रान्ति में १५ मुहूर्त्त होते हैं उस महीने में अन्न महँगा, जिस महीने की संक्रान्ति/में ४५ मुहूर्त्त होते हैं उस महीने में अन्न सस्ता तथा जिस महीने की संक्रान्ति में ३० मुहूर्त्त होते हैं उस महीने में अन्न का भाव सम रहता है।

जघन्यसंज्ञक नक्षत्रों में प्रथम चन्द्रमा का उदय हो, तो उस महीने भर अन्न महँगा, बृहत्संज्ञक नक्षत्रों में चन्द्रमा का उदय हो, तो उस महीने में अन्न सस्ता तथा समसंज्ञक नक्षत्रों में चन्द्रमा का उदय हो, तो उस महीने में अन्न समभाव बिकता है ॥

तथा नीरोगता होती है। गुरु तथा शुक्र के दिन सूर्य की संक्रान्ति हो, तो शस्य की वृद्धि होती है॥ १५३॥

यामतः संक्रान्तिफलम्

नृपाः पीडन्ति पूर्वाह्णे मध्याह्ने तु द्विजोत्तमाः।
अपराह्णे तु वैश्याश्च शूद्राश्चास्तमिते रवौ॥ १५४॥

दिन के पहले पहर में सूर्य की संक्रान्ति हो, तो राजाओं को क्लेश, मध्याह्न में सूर्य की संक्रान्ति हो, तो ब्राह्मणों को क्लेश, तीसरे पहर में सूर्य की संक्रान्ति हो, तो वैश्यों को क्लेश तथा सूर्य की अस्तमनवेला में सूर्य की संक्रान्ति हो, तो शूद्रों को क्लेश होता है॥ १५४॥

पिशाचाद्याः प्रदोषेषु अर्धरात्रे तु राक्षसाः।
रात्रेस्तृतीयभागेषु पीड्यन्ते नटनर्त्तकाः॥ १५५॥
उषःकाले तु संक्रान्तौ हताः पाखण्डकारकाः।
हन्ति प्रव्रजितान् सर्वान् सन्ध्याकाले न संशयः॥१५६॥

प्रदोषकाल में सूर्य की संक्रान्ति हो, तो पिशाचों को क्लेश, अर्धरात्रि के समय सूर्य की संक्रान्ति हो, तो राक्षसों को क्लेश, रात के तीसरे पहर सूर्य की संक्रान्ति हो, तो नटों और नर्त्तकों को क्लेश, उषःकाल में सूर्य की संक्रान्ति हो, तो पाखण्डियों को क्लेश तथा संध्याकाल के समय सूर्य की संक्रान्ति हो, तो संन्यासियों को क्लेश मिलता है॥ १५५-१५६॥

सूतिकागृहनिर्माणप्रवेशौ

प्रसवार्थं गृहं कुर्याददित्यां शुभवासरे।
रोहिण्यां श्रवणायां च प्रवेशस्तत्र कीर्तितः॥ १५७॥

जिस दिन पुनर्वसु नक्षत्र तथा कोई शुभवार हो, तो उस दिन सूतिकागृह का निर्माण करना तथा रोहिणी और श्रवण नक्षत्र के दिन सूतिकागृह में प्रवेश करना शुभदायक होता है॥ १५७॥

प्रसूतास्नानमुहूर्तः

मैत्राश्विध्रुवहस्तेषु स्वात्यां पौष्णाभिधेऽपि च।
कुजार्केज्यदिनेष्वेव सूतीस्नानं शुभं स्मृतम् ॥ १५८ ॥

अनुराधा, अश्विनी, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, स्वाती और रेवती इन नक्षत्रों में तथा भौम, सूर्य, गुरु इन दिनों में प्रसूता का स्नान करना शुभदायक होता है ॥ १५८ ॥

प्रसूतास्नाने निषिद्धास्तिथ्यादयः

मिश्रार्द्रात्रितये मूले तक्षश्रुतिमघान्तके।
वसुषड्द्विरिक्तायां सूतीस्नानं विवर्जयेत् ॥ १५९ ॥

विशाखा, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, मूल, चित्रा, श्रवण, मघा और भरणी इन नक्षत्रों तथा अष्टमी, छठ, द्वादशी और रिक्ता इन तिथियों को प्रसूतास्नान में वर्जित कर देना चाहिए ॥ १५९ ॥

शिशोर्मातुः स्तनपानमुहूर्तः

रिक्तां भौमं परित्यज्य विष्टिं पातं सवैधृतिम्।
मृदुध्रुवक्षिप्रभेषु स्तनपानं हितं शिशोः ॥ १६० ॥

रिक्ता तिथि, भौम दिन, भद्रा, व्यतीपात तथा वैधृति योग को छोड़कर अन्य तिथि, वारों में; मृदुसंज्ञक (मृगशिरा, रेवती, चित्रा और अनुराधा), ध्रुवसंज्ञक (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तरभाद्रपद और रोहिणी) और क्षिप्रसंज्ञक (हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित्) इन नक्षत्रों में शिशु को माता के दुग्ध का पान करना शुभदायक होता है ॥ १६० ॥

मासपूर्तौ सूतीजलपूजनमुहूर्तः

नन्दासु पूर्णासु जयासु चन्द्र-
जीवे च हस्ते श्रवणे मृगे च।
दितिद्वये स्त्रीजलपूजनं च
कुर्याच्छिशूनां चिरजीवनाय ॥ १६१ ॥

नन्दा (१ । ६ । ११), पूर्णा (५ । १० । १५) और जया (३ । ८ । १३) इन तिथियों में; बुध, चन्द्र और गुरु इन दिनों में; हस्त, श्रवण, मृगशिरा, पुनर्वसु और पुष्य इन नक्षत्रों में बालकों के चिरजीवनार्थ स्त्रीजलपूजन करना शुभदायक होता है ॥ १६१ ॥

प्रथमादिमासोत्पन्नदन्तफलम्

मासे चेत्प्रथमे भवेत्सदशनो बालो विनश्येत्स्वयं
हन्यात्सक्रमतोऽनुजातभगिनीमात्रग्रजान्द्व्यादिके ।
षष्ठादौ लभते हि भोगमतुलं तातात्सुखं पुष्टतां
लक्ष्मीं सौख्यमथो जनः सदशनो वोर्ध्वं स्वपुत्रादिहा ॥ १६२॥

प्रथम मास में दन्तोद्गम होने से बालक स्वयं नष्ट होता है। द्वितीय मास में दन्तोद्गम होने से छोटा भाई, तृतीय मास में दन्तोद्गम होने से बहन, चतुर्थ मास में दन्तोद्गम होने से माता तथा पञ्चम मास में दन्तोद्गम होने से बड़ा भाई नष्ट होता है। छठे मास में दन्तोद्गम होने से उत्तम भोग, सप्तम मास में दन्तोद्गम होने से पितृ-सुख, अष्टम मास में दन्तोद्गम होने से पुष्टि, नवम मास में दन्तोद्गम होने से लक्ष्मी तथा दशम मास में दन्तोद्गम होने से सुख प्राप्त होता है। दश महीने के बाद दन्तोद्गम होने से वह बालक अपने पिता का नाश करनेवाला होता है ॥ १६२ ॥

पुत्रपुत्र्योर्जन्मनि ज्येष्ठामूलादिविचारः

यो ज्येष्ठामूलयोरन्तरालप्रहरजः शिशुः ।
अभुक्तमूलयोः सार्पमघानक्षत्रयोरपि ॥ १६३ ॥

जो सन्तान ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्त की पौने चार घड़ी, मूल नक्षत्र के आदि की पौने चार घड़ी, आश्लेषा नक्षत्र के अन्त की पौने चार घड़ी और मघा नक्षत्र के आदि की पौने चार घड़ी इनमें पैदा हो, तो वह बालक अभुक्तमूलक होता है ॥ १६३ ॥

मूलविचारे वसिष्ठशौनकयोरुक्तिः

भुजं पौरन्दरपौष्णभानां
तदग्रभानां च यदन्तरालम् ।
अभुक्तमूलं प्रहरप्रमाणं
त्यजेत्सुतां तत्र भवां सदैव ॥ १६४ ॥
सार्पं च पैत्र्यं त्वथ शाक्रमूल-
पौष्णाश्विनीनां च यदन्तरालम् ।
अभुक्तमूलं प्रहरप्रमाणं
तदुत्थकन्यां न विलोकयेत्पिता ॥ १६५ ॥

आश्लेषा और मघा, ज्येष्ठा और मूल तथा रेवती और अश्विनी के मध्य का जो एक प्रहर होता है वह अभुक्तमूल कहा जाता है। इस अभुक्तमूल में उत्पन्न हुए पुत्र या कन्या को त्याग देवे या न देखे ॥ १६४-१६५ ॥

अभुक्तमूलजं पुत्रं पुत्रीमपि परित्यजेत् ॥ १६६ ॥
इति यवनाचार्यः ।

यवनाचार्य का मत है कि यदि पुत्र या कन्या अभुक्तमूल में उत्पन्न हो, तो उसको त्याग देवे ॥ १६६ ॥

मूलविचारे विशेषः

अथवाब्दाष्टकं तातस्तन्मुखं नावलोकयेत् ।
स्वशाखोक्तविधानेन शान्ति कृत्वाऽवलोकयेत् ॥ १६७ ॥

किसी आचार्य का मत है कि अभुक्तमूल में उत्पन्न हुई कन्या या पुत्र का पिता आठ वर्ष पर्यन्त उस पुत्र या पुत्री का मुख न देखे या अपनी शाखा के अनुसार मूल-शान्ति करके पुत्र या पुत्री का मुख देखे ॥ १६७ ॥

चरणवशेन मूलजातफलम्

मूलाद्यंशे पितुर्नाशो द्वितीये मातुरेव च ।

तृतीये धनधान्यानां नाशस्तुर्ये धनागमः ॥ १६८ ॥

मूल के प्रथम चरण में उत्पन्न पुत्र या कन्या पिता का नाश, मूल के द्वितीय चरण में उत्पन्न पुत्र या कन्या माता का नाश, मूल के तृतीय चरण में उत्पन्न पुत्र या कन्या धन का नाश तथा मूल के चतुर्थ चरण में उत्पन्न पुत्र या कन्या शुभफलकारक होती है ॥ १६८ ॥

आश्लेषाजातफलम्

फलं तदेव सार्पर्क्षे प्रतीपं चान्त्यपादतः
तदन्त्यपादयोर्नैव तथाश्लेषाद्यपादजा ॥ १६९ ॥

आश्लेषा के प्रथम चरण में पुत्र या कन्या उत्पन्न हो, तो धनागम, आश्लेषा के द्वितीय चरण में पुत्र या कन्या उत्पन्न हो, तो धननाश, आश्लेषा के तृतीय चरण में पुत्र या कन्या उत्पन्न हो, तो माता का नाश तथा आश्लेषा के चतुर्थ चरण में पुत्र या कन्या का जन्म हो, तो पिता का नाश होता है; परन्तु मूल के अन्तिम चरण में या आश्लेषा के प्रथम चरण में पुत्र या कन्या उत्पन्न हो, तो कोई दोष नहीं होता किन्तु शुभ फलदायक होता है ॥ १६९ ॥

अभुक्तमूलविषये पुनः फलविचारः

मूलस्य प्रथमे पादे पशुपीडा प्रजायते ।
द्वितीये चरणे जाता सर्वसौख्यप्रदा भवेत् ॥ १७० ॥
तृतीयांशे तु मूलस्य पितृपक्षविनाशिनी ।
चतुर्थांघ्रिप्रजाता स्त्री मातृपक्षक्षयंकरी ॥ १७१ ॥

किसी आचार्य का मत है कि यदि मूल के प्रथम चरण में पुत्र या कन्या उत्पन्न हो, तो पशुपीड़ा, द्वितीय चरण में जन्म हो, तो सर्वसुखदायक, तृतीय चरण में जन्म हो, तो पितृपक्षविनाशक तथा चतुर्थ चरण में जन्म हो, तो मातृपक्षनाशक होती है ॥१७०-१७१॥

मूलफलविचारे विशेषः

मूलजा श्वशुरं हन्ति व्यालजा कुलटाङ्गना ।
ऐन्द्री तदग्रजं हन्ति देवरं तु द्विदैवजा ॥ १७२ ॥
जननीं जनकं हन्ति भर्तुर्मूलाहिधिष्ण्यजा ।
द्वीशान्त्यपादजौ दुष्टौ तद्वज्ज्येष्ठान्त्यपादजा ॥ १७३ ॥

मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुई कन्या का ससुर मर जाता है। आश्लेपा नक्षत्र में उत्पन्न हुई कन्या बदचलन, ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न हुई कन्या का जेठ (पति का बड़ा भाई) तथा विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न हुई कन्या का देवर मर जाता है। किसी आचार्य का मत है कि मूल तथा आश्लेपा नक्षत्र में उत्पन्न हुई कन्या के माता-पिता नष्ट नहीं होते हैं किन्तु उसके सास-ससुर नष्ट होते हैं। विशाखा तथा ज्येष्ठा के अन्तिम चरण में उत्पन्न हुई कन्या के भी सास-ससुर नष्ट हो जाते हैं ॥ १७२-१७३ ॥

मूलफलविचारे चरणवशेन फलविचारः

आश्लेषाप्रथमः पादः पादो मूलान्तिमस्तथा ।
विशाखाज्येष्ठयोराद्यास्त्रयः पादाः शुभावहाः ॥ १७४ ॥

आश्लेपा नक्षत्र का प्रथम चरण, मूल नक्षत्र का अन्तिम चरण, विशाखा तथा ज्येष्ठा के आदि के तीन चरण शुभफलदायक होते हैं ॥ १७४ ॥

गण्डान्तविचारे * फलविशेषः

दिवाजातस्तु पितरं रात्रौ च जननीं तथा ।
सन्ध्ययोर्हन्ति चात्मानं नास्ति गण्डे निरामयः ॥ १७५ ॥

तिथि, नक्षत्र या लग्नगण्डान्त दोष दिन में हो तथा उस काल

---

* इस पुस्तक के पृष्ठ १२३ तथा १५४ में तिथि, नक्षत्र तथा लग्न-गण्डान्त का वर्णन कर चुके हैं।

में पुत्र या कन्या उत्पन्न हो, तो वह पितृनाशक, रात्रिगत गण्डान्त में पुत्र या पुत्री का जन्म हो, तो वह मातृनाशक तथा प्रातःकालिक सन्धिगत और सायंकालिक सन्धिगत गण्डान्त में जन्म हो, तो वह आत्मनाशक होता है। तात्पर्य यह है कि गण्डान्त में जन्म होने पर सर्वथा कुशल होना असम्भव है ॥ १७५ ॥

गण्डान्तफलविचारे विशेषः

वत्सरात्पितरं हन्ति मातरं तु त्रिवर्षतः ।
स्वात्मानं मासमेकं तु हन्ति गण्डो बुधैः स्मृतः ॥१७६॥

गण्डान्त में उत्पन्न सन्तान एक वर्ष में पिता का नाश, तीन वर्ष में माता का नाश तथा एक मास में अपना विनाश करता है ॥१७६॥

गण्डान्तफलविचारे फलितार्थः

सर्वेषां गण्डजातानां परित्यागो विधीयते ।
वर्जयेद्दर्शनं तावद्यावत्षाण्मासिको भवेत् ॥ १७७ ॥

गण्डान्त में उत्पन्न हुए बालक का पिता छः महीने पर्यन्त उस बालक का मुख न देखे ॥ १७७ ॥

गण्डान्तदोषपरिहारः

मूलसार्पादिजं पौष्णं स्यादपश्यति लग्नपे ।
सक्रूरेऽब्जे च विबले शुभदृष्टिविवर्जिते ॥
तदा गण्डान्तजातानां न दोषो मुनिभिः स्मृतः॥ १७८॥

यदि पापग्रहों से युक्त, निर्बल, शुभग्रहों की दृष्टि से रहित और लग्न का स्वामी चन्द्रमा लग्न को न देखता हो, तो मूल, आश्लेषा और रेवती इन नक्षत्रों में उत्पन्न हुए बालक को गण्डान्त दोष नहीं होता है ॥ १७८ ॥

पुनर्गण्डान्तपरिहारः

मूलाद्यपादे यदि रात्रिभागे
तदात्मजान्नास्ति पितुर्विनाशः ।

द्वितीयपादो दिनगो यदि स्या-
न्न मातुरल्पोऽपि तदास्ति दोषः ॥ १७९ ॥

रात्रि के समय मूल के पहले चरण में बालक उत्पन्न हो, तो उस पुत्र से पिता का नाश नहीं होता है। यदि दिन के समय मूल के द्वितीय चरण में बालक का जन्म हो, तो उस बालक की माता को कुछ भी दोष नहीं होता है ॥ १७९ ॥

पुनर्गण्डान्तपरिहारः

नक्षत्रतिथिगण्डान्तं नास्ति दौर्बल्यभाजिनि।
तथैव लग्नगण्डान्तं नास्ति जीवे बलाधिके ॥ १८० ॥

यदि चन्द्रमा बलहीन हो, तो नक्षत्र तथा तिथिगण्डान्त दोष तथा बृहस्पति बलवान् हो, तो लग्नगण्डान्त दोष नहीं होता है ॥ १८० ॥

पुनर्गण्डान्तपरिहारः

गण्डान्तदोषमखिलं मुहूर्त्तोऽभिजिदाह्वयः।
हन्ति तद्वन्मृगं व्याधः पक्षिसंघमिवाखिलम् ॥ १८१ ॥

जैसे व्याध मृग तथा पक्षिसमूह को नष्ट करता है वैसे जन्म के समय में अभिजित् मुहूर्त्त हो, तो वह सब प्रकार के गण्डान्त-दोषों को नष्ट कर देता है ॥ १८१ ॥

मूलजनने विशेषः

कृष्णे तृतीया दशमी वलक्षे
भूतो महीजार्किबुधैः समेतः।
चेज्जन्मकाले किल तत्र मूल-
मुन्मूलनं तत्कुरुते कुलस्य ॥ १८२ ॥

कृष्णपक्ष, तृतीया तिथि, मंगलवार तथा आश्लेषा नक्षत्र, शुक्ल-पक्ष, दशमी तिथि, शनिवार तथा ज्येष्ठा नक्षत्र, शुक्लपक्ष, चतुर्दशी

तिथि, बुधवार तथा मूल नक्षत्र इन योगों में उत्पन्न बालक कुल को जड़ से नाश करता है ॥ १८२ ॥

मूलवृक्षः

मूलं स्तम्भस्त्वचा शाखा पत्रं पुष्पं फलं शिखा ।
मुनयोऽष्टौ दिशो रुद्राः सूर्याः पञ्चाब्धयोऽग्नयः ॥१८३॥

मूल में उत्पन्न हुए बालक का मूलवृक्ष में विचार करे। पहले सफ़ेद चावल का एक वृक्षाकार चक्र बनावे। उस वृक्ष की जड़ में ७, स्तम्भ में ८, त्वचा में १०, शाखा में ११, पत्रों में १२, फूलों में ५, फलों में ४ तथा शिर में ३ इस प्रकार नक्षत्र की ६० घड़ियों को स्थापित करे ॥ १८३ ॥

मूलवृक्षफलम्

मूले तु मूलनाशः स्यात्स्तम्भे वंशविनाशनम् ।
त्वचि मातुर्भवेत्क्लेशः शाखायामखिलस्य च ॥ १८४ ॥
पत्रे राज्यं विजानीयात्पुष्पे मन्त्रिपदं स्मृतम् ।
फले तु विपुला लक्ष्मीः शाखायामल्पजीवनम् ॥ १८५ ॥

जन्मसमय की घड़ी जड़ में हो, तो मूलनाश, स्तम्भ में हो, तो वंश का नाश, त्वचा में हो, तो माता को क्लेश, शाखा में हो, तो सर्वसौख्य, पत्र में हो, तो राज्यलाभ, फूल में हो, तो वज़ीर, फल में हो, तो लक्ष्मीप्राप्ति तथा शिखा में हो, तो अल्पायु होती है। ये फल बालक-बालिका आदि में समझ लेने चाहिए॥ १८४-१८५॥

मूले समयफलम्

दिवा सायं निशि प्रातः तातस्य मातुलस्य च ।
पशूनां प्रियवर्गस्य क्रमान्मूलमनिष्टदम् ॥ १८६ ॥

मूल में दिन के समय जन्म हो, तो पिता का नाश, रात्रि के समय जन्म हो, तो पशु का नाश, सायंकाल के समय जन्म हो,

तो मामा का नाश तथा प्रातःकाल के समय जन्म हो, तो मित्रों का नाश होता है ॥ १८६ ॥

मूलजनने कालपुरुषाकृतिः

मूर्ध्नि पञ्च मुखे पञ्च स्कन्धयोर्घटिकाष्टकम् ।
गजाश्वौ भुजयोर्युग्मं हस्तयोर्हृदयेऽष्टकम् ॥ १८७ ॥
युग्मं नाभौ दिशो गुह्ये षट् जान्वोः षट् च पादयोः ।
विन्यस्य पुरुषाकारे सार्पस्य फलमादिशेत् ॥ १८८ ॥

आश्लेषा में जन्म हो, तो चावल से पुरुषाकार चक्र बनाकर उसमें मूल नक्षत्र की ६० घड़ियों को स्थापित करे। क्रमशः शिर में ५, मुख में ५, स्कन्धों में ८, भुजा में ८, हाथों में २, हृदय में ८, नाभि में २, गुह्यों में १०, जंघा में ६ तथा पाद में ६ घड़ियाँ स्थापित हों ॥ १८७-१८८ ॥

कालपुरुषाकृतिफलम्

छत्रलाभः शिरोदेशे वदने पितृकान्तकम् ।
स्कन्धयोर्धनहन्त्वं च बाहुयुग्मे त्वकर्मकृत् ॥ १८९ ॥
हत्याकरं करद्वन्द्वे राज्यासिद्धिर्हृदये भवेत् ।
अल्पायुर्नाभिदेशे च गुह्ये च सुखमद्भुतम् ॥ १९० ॥
जङ्घायां भ्रमणप्रीतिः पादयोर्जीविताल्पता ।
घटीफलं किल प्रोक्तं मूलस्य मुनिपुङ्गवैः ॥ १९१ ॥
विज्ञेयं विबुधैः सर्वं सार्पे तच्च विपर्ययात् ॥ १९२ ॥

जिसके जन्म के समय की घड़ी शिर में हो, तो छत्रलाभ, मुख में हो, तो पितृनाश, कन्धे में हो, तो धननाश, बाहु में हो, तो कुकर्मी, हाथ में हो, तो हत्यारा, हृदय में हो, तो राज्यलाभ, नाभि में हो, तो अल्पायु, कमर में हो, तो अद्भुत सुख, जंघा में हो, तो भ्रमण तथा पैर में हो, तो अल्पायु होती है। मूल की घड़ियों का यह फल मुनियों ने कहा है। आश्लेषा नक्षत्र की घड़ियों में अन्त से

विपरीत (उलटा) फल जानना चाहिए । जैसे शिर पर हो, तो अल्पायु, मुख पर हो, तो भ्रमण इत्यादि फल विपरीत क्रम से होते हैं ॥ १८६-१६२ ॥

मूलचक्रविचारः

मूलस्य घटिकान्यासो मूर्ध्नि पञ्च नृपो भवेत् ।
मुखे सप्त मृतिः पित्रोः स्कन्धे वेदा महाबलः ॥ १६३ ॥
बाह्वोरष्टौ बली कण्ठे तिस्रा हर्म्यान्वितो भवेत् ।
हृदि खेटा भूपमन्त्री नाभौ द्वौ बलविद्भवेत् ॥ १६४ ॥
गुह्ये दशातिकामी स्याज्जानुनोः षण्महामतिः ।
पादयोः षण्मृतिस्तस्य चैतदुक्तं स्वयम्भुवा ॥ १६५ ॥

सन्तान का आकार बनाकर मूल की घड़ियों को स्थापित करें । मूलचक्र के मस्तक में पाँच घड़ियाँ, मुख में सात, कन्धे में चार, बाहु में आठ, कण्ठ में तीन, हृदय में नव, नाभि में दो, गुह्य में दश, जंघा में छः तथा पाद में छः घड़ियाँ स्थापित करें । मस्तक की पाँच घड़ियों का फल राजा होना या नृपसदृश होना, मुख की सात घड़ियों का फल माता-पिता की मृत्यु, कन्धे की चार घड़ियों का फल महाबली होना, बाहु की आठ घड़ियों का फल बली होना, कण्ठ की तीन घड़ियों का फल स्थानलाभ, हृदय की नव घड़ियों का फल राजमन्त्री होना, नाभि की दो घड़ियों का फल बल होना, गुह्य की दश घड़ियों का फल अति कामी होना, जंघा की छः घड़ियों का फल बुद्धि होना तथा पाद की छः घड़ियों का फल मृत्यु है ऐसा ब्रह्माजी ने कहा है ॥ १६३-१६५ ॥

मूलवासः

मार्गफाल्गुनवैशाखज्येष्ठे मूलं रसातले ।
श्रावणे कार्त्तिके चैत्रे पौषे मूलं च भूतले ॥
आषाढे चाश्विने भाद्रे माघे मूलं दिवि स्थितम् ॥ १६६॥

अगहन, फाल्गुन, वैशाख और ज्येष्ठ के महीनों में मूल का वास रसातल में, श्रावण, कार्त्तिक, चैत्र और पौष इन महीनों में मूल का वास भूतल में तथा आषाढ़, आश्विन, भाद्र और माघ के महीनों में मूल का वास स्वर्गलोक में होता है ॥ १९६ ॥ ॥

मूलवासफलम्

स्वर्गे मूले भवेद्राज्यं पाताले च धनागमः ।
मृत्युलोके यदा मूलं तदा विघ्नं विनिर्दिशेत् ॥ १९७ ॥

स्वर्गगत मूल राज्यप्रद, पातालगत मूल धनप्रद तथा मृत्युलोकगत मूल सब प्रकार के विघ्नों का करनेवाला होता है ॥ १९७ ॥

मूलशान्तिकालः *

उक्तगण्डे सुते जाते सूतकान्ते विचक्षणः ।
कुर्याच्छान्तिं तदृक्षे वा तद्दोषस्यापनुत्तये ॥ १९८ ॥
जातस्य द्वादशाहे तु जन्मर्क्षे वा शुभे दिने ।
समाष्टके वा मतिमान्कुर्याच्छान्तिं विधानतः ॥ १९९ ॥

अब बालक की उत्पत्ति तिथि, नक्षत्र तथा लग्नगण्डान्त में या मूलसंज्ञक नक्षत्रों में हो, तो बुद्धिमान् पुरुष को चाहिए कि सूतक के दिनों के बीत जाने पर मूल आदि की शान्ति के लिये अनुष्ठान करें या उस जन्मनक्षत्र के आने पर शान्ति करे या बालक की उत्पत्ति के बारहवें दिन या समाष्टक में शान्ति अवश्य करे ॥ १९८-१९९ ॥

गोधूलिकालस्य प्रशंसा

नास्यामृक्षं न च तिथिकरणं नैव लग्नस्य चिन्ता
नो वा वारो न च लवविधिर्नो मुहूर्तस्य चर्चा ।

---

* स्वस्वदेशानुसारिणी मूलशान्तिविधेः पद्धतिः सर्वत्र प्रचलितैवास्ति, अतो नात्र तल्लेख इति शिवम् ।

नो वा योगो न च मृतिभवनं नैव जामित्रदोषो
गोधूलिः सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्येषु शस्ता ॥ २०० ॥

समस्त लौकिक कार्यों में गोधूलिकाल को मुनियों ने अति श्रेष्ठ कहा है। इसमें नक्षत्र, तिथि, करण, वार, नवांशविधान, योग, आठवें स्थान की शुद्धाशुद्धि, तथा जामित्र दोष इन सबका विचार नहीं किया जाता। लग्न का विचार भी आवश्यक नहीं है। मुहूर्त के विचार की चर्चा करना भी अनपेक्षित है। तात्पर्य यह कि बहुत से सुयोगों के रहते कोई एक कुयोग भी हो, तो गोधूलिकाल में विवाह आदि मांगलिक कार्य शुभ होते हैं। अन्य काल के लग्न में सब सुयोग हों और गोधूलिकाल के लग्न में कुछ दोष भी हो, तो गोधूलिकाल ही श्रेष्ठ होता है। अथवा पूर्व देशों में तथा कलिंग देश में गोधूलिकाल मुख्य माना गया है। अथवा गान्धर्व विवाह तथा वैश्य आदि के विवाह में गोधूलिकाल श्रेष्ठ होता है। अथवा कोई शुभ लग्न न हो और कन्या युवती हो गई हो, तो विधवा आदि भयंकर दोषों को छोड़कर गोधूलिकाल में विवाह श्रेष्ठ कहा गया है ॥ २०० ॥

समयभेदेभ्यो गोधूलिकालः

पिण्डीभूते दिनकृति हेमन्तर्तौ स्या-
दर्धास्ते तपसमये गोधूलिः।
सम्पूर्णास्ते जलधरमालाकाले
त्रेधा योज्या सकलशुभे कार्यादौ ॥ २०१ ॥

हेमन्त ऋतु में अर्थात् अगहन आदि जाड़े के चार महीनों में कुहिरा आदि से आच्छादित हो सायंकाल में जब सूर्य भात के गोले के समान स्वच्छ अर्थात् तेजरहित देख पड़ें, तब और तपस् समय अर्थात् चैत्र आदि गरमी के चार महीनों में सूर्य के आधे अस्त हो जाने पर, वर्षाकाल अर्थात् श्रावण आदि चार महीनों में सूर्य के

सम्पूर्ण अस्त हो जाने पर गोधूलिकाल कहा गया है। इन तीनों प्रकार के गोधूलिकाल * में समस्त शुभ कार्यों का करना शुभ-दायक होता है ॥ २०१ ॥

यात्राप्रकरणम्

यात्रायां चन्द्रविचारः

मेषे च सिंहे धनुपीन्द्रभागे
तथोक्षकन्यामकरेषु याम्याम् ।
द्वन्द्वे तुलायां घटभे प्रतीच्यां
तथोत्तरे कर्कझषालिगोऽब्जः ॥ २०२ ॥

मेष, सिंह तथा धन राशि में चन्द्रमा हो, तो चन्द्रमा पूर्व दिशा में; वृष, कन्या तथा मकर में चन्द्रमा हो, तो चन्द्रमा दक्षिण दिशा में; मिथुन, तुला तथा कुंभ में चन्द्रमा हो, तो चन्द्रमा पश्चिम दिशा में; कर्क, वृश्चिक तथा मीन राशि में चन्द्रमा हो, तो चन्द्रमा उत्तर दिशा में रहता है ॥ २०२ ॥

चन्द्रफलम्

पृष्ठे चन्द्रे भवेन्मृत्युर्वामे चन्द्रे धनक्षयः ।
दक्षिणे चार्थलाभः स्यात्सम्मुखे सुखसम्पदः ॥ २०३ ॥

पृष्ठ चन्द्र में यात्रा करने से मृत्युसम शोक तथा सन्ताप, वाम चन्द्रमा में यात्रा करने से धनव्यय, दक्षिण चन्द्रमा में यात्रा करने से धनलाभ तथा सम्मुख चन्द्रमा में यात्रा करने से सुख तथा सम्पत्ति होती है ॥ २०३ ॥

---

* जब सायंकाल के समय एकत्र हो वन से घर की तरफ़ चली हुई गौओं के खुरों से उठी हुई पृथ्वी की धूलि से आकाश भर जाता है, तो उस समय को गोधूलिकाल कहते हैं ।

चन्द्रसंख्याप्रकारः

जन्मराशिं समारभ्य दिनभं गणयेद्बुधः ।
यावन्मिता भवेत्संख्या तावदेव हि चन्द्रमाः ॥ २०४ ॥

जन्मराशि से दिनराशि पर्यन्त गिनने पर जितनी संख्या हो उतनी चन्द्रसंख्या जानना चाहिए ॥ २०४ ॥

शुभाशुभचन्द्रविचारः

रिष्फाष्टतुर्यगं हित्वा सर्वे चन्द्राः शुभप्रदाः ।
सर्वेषु शुभकार्येषु विज्ञेयाः सूरिभिः सदा ॥ २०५ ॥

चौथे, आठवें और बारहवें चन्द्रमा को छोड़कर सब चन्द्रमा शुभकार्य में शुभप्रद होते हैं ॥ २०५ ॥

अशुभचन्द्रे शान्तिः

शंखं दद्याद्द्विजातिभ्यो हिमांशौ विफले सति ।
शंखाभावे महत्स्वच्छं तण्डुलं वा नवं दधि-॥ २०६ ॥

अशुभ चन्द्रमा के शान्त्यर्थ ब्राह्मणों को शंख देवे । उसके अभाव में श्वेत चावल या नूतन दधि देवे ॥ २०६ ॥

द्वादशचन्द्रस्य शुभत्वम्

अभिषेके निषेके च प्राशने व्रतबन्धने ।
तीर्थयात्राविवाहे च चन्द्रो द्वादशगः शुभः ॥ २०७ ॥

अभिषेक, निषेक (गर्भधारण), अन्नप्राशन, यज्ञोपवीत, तीर्थयात्रा तथा विवाह में द्वादशभावस्थ चन्द्र शुभ होता है ॥ २०७ ॥

घातचन्द्रः

भूपञ्चाङ्कद्व्यङ्गदिग्वह्निसप्त
वेदाष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्रः ।
मेषादीनां राजसेवाविवादे
यात्रायुद्धाद्ये च नान्यत्र वर्ज्यः ॥ २०८ ॥

मेष राशिवालों का पहला, वृष राशिवालों का पाँचवाँ, मिथुन

का नवाँ, कर्क का दूसरा, सिंह का छठा, कन्या का दसवाँ, तुला का तीसरा, वृश्चिक का सातवाँ, धन का चौथा, मकर का आठवाँ, कुम्भ का ग्यारहवाँ तथा मीन राशि का बारहवाँ चन्द्रमा घातक होता है। यह घातचन्द्र राजसेवा, विवाद, यात्रा, युद्ध तथा शिकार खेलने आदि में वर्जित है, अन्यत्र वर्जित नहीं है ॥ २०८ ॥

तीर्थयात्रादिषु घातचन्द्राविचारः

तीर्थयात्राविवाहान्नप्राशनोपनयनादिषु ।
मांगल्यं सर्वकार्येषु घातचन्द्रं न चिन्तयेत् ॥ २०९ ॥

तीर्थयात्रा, विवाह, अन्नप्राशन, उपनयन आदि समस्त मंगल कार्यों में घातचन्द्र का विचार न करे ॥ २०९ ॥

यात्रायामेव घातचन्द्रविचारः

घातं तिथिं घातवारं घातनक्षत्रमेव च ।
यात्रायां वर्जयेत्प्राज्ञो ह्यन्यकर्मसु शोभनम् ॥ २१० ॥

घाततिथि, घातवार, घातनक्षत्र का त्याग केवल यात्रा में करना चाहिए, अन्य कार्यों में शुभ होता है ॥ २१० ॥

दिशाशूलविचारः

चन्द्रे मन्दे न च प्राचीं न गच्छेद्दक्षिणां गुरौ ।
न प्रतीचीं रवौ शुक्रे बुधे भौमे नचोत्तराम् ॥ २११ ॥

चन्द्रवार तथा शनिवार को पूर्व दिशा की यात्रा, बृहस्पति को दक्षिण दिशा की यात्रा, रविवार तथा शुक्रवार को पश्चिम दिशा की यात्रा, बुधवार तथा मंगलवार को उत्तर दिशा की यात्रा न करे। इसी को दिशाशूल कहते हैं ॥ २११ ॥

नाग्निकोणे गुरौ चन्द्रे नैर्ऋत्ये नार्कशुक्रयोः ।
मारुते न कुजे गच्छेदीशाने च कुजार्कजे ॥ २१२ ॥

बृहस्पति तथा चन्द्रवार को आग्नेय कोण की यात्रा, रविवार तथा शुक्रवार को नैर्ऋत्य कोण की यात्रा, मंगलवार को वायव्य

कोण की यात्रा, मंगल तथा शनिवार को ईशान कोण की यात्रा न करे ॥ २१२ ॥

न वारदोषाः प्रभवन्ति रात्रौ *
देवेज्यदैत्येज्यदिवाकराणाम् ।
दिवाशशाङ्कार्कजभूसुतानां
सर्वत्र निन्द्यो बुधवारदोषः ॥ २१३ ॥

बृहस्पति, शुक्र तथा सूर्य का वारगत दोष रात्रि की यात्रा में नहीं होता है। चन्द्रमा, शनि तथा मंगल का वारगत दोष दिन में नहीं होता है तथा बुधवार का वारगत दोष रात-दिन दोनों में वर्जित है ॥२१३॥

योगिनोविचारः

प्रतिपत्सु नवम्यां च पूर्वस्यां दिशि योगिनी ।
अग्निकोणे तृतीयायामेकादश्यां तु सा स्मृता ॥२१४॥
त्रयोदश्यां तु पञ्चम्यां दक्षिणस्यां शिवप्रिया ।
द्वादश्यां तु चतुर्थ्यां च नैर्ऋत्यकोणगामिनी ॥ २१५ ॥
चतुर्दश्यां तु षष्ठ्यां च पश्चिमायां च योगिनी ।
पूर्णिमायां च सप्तम्यां वायुकोणे तु पार्वती ॥ २१६ ॥
दशम्यां च द्वितीयायामुत्तरस्यां शिवा वसेत् ।
ईशान्यां दर्शे चाष्टम्यां योगिनी समुदाहृता ॥ २१७ ॥

प्रतिपदा और नवमी के दिन योगिनी पूर्व दिशा में, तृतीया और एकादशी के दिन योगिनी आग्नेय दिशा में, पञ्चमी और त्रयोदशी के दिन योगिनी दक्षिण दिशा में, चतुर्थी और द्वादशी के दिन योगिनी नैर्ऋत्य दिशा में, षष्ठी और चतुर्दशी के दिन योगिनी पश्चिम दिशा में, सप्तमी और पूर्णिमा के दिन योगिनी

---

* यह वचन आवश्यक कार्यों के लिये है। वास्तव में वारदोष रात-दिन दोनों में वर्जित है।

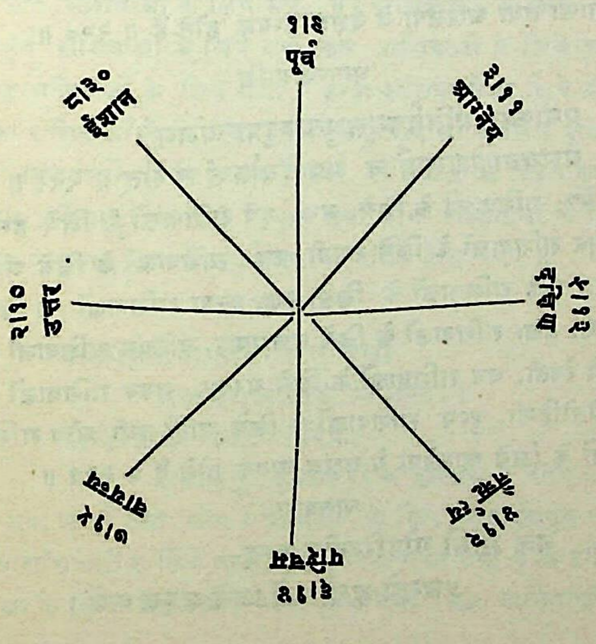
वायव्य दिशा में, द्वितीया और दशमी के दिन योगिनी उत्तर दिशा में तथा अष्टमी और अमावास्या के दिन योगिनी ईशान दिशा में निवास करती है ॥ २१४-२१७ ॥

योगिन्याः शुभाशुभफलम्

योगिनी सुखदा वामे पृष्ठे वाञ्छितदायिनी ।
दक्षिणे धनहन्त्री च सम्मुखे मरणप्रदा ॥ २१८ ॥

यदि योगिनी वाम में हो, तो सुख, पृष्ठ में योगिनी हो, तो अभीष्ट कार्यों की सिद्धि, दक्षिण में योगिनी हो, तो धन का नाश तथा सम्मुख योगिनी हो, तो मृत्यु होती है ॥ २१८ ॥

योगिनीचक्रम्



योगिनीवर्ज्यता

योगिनी सम्मुखे त्याज्या द्यूते वादे रणे गमे ॥ २१६ ॥

जुआ खेलने में, विवाद में, संग्राम में तथा यात्रा में सम्मुख योगिनी वर्जित है ॥ २१६ ॥

यात्रायां नक्षत्रविचारः

अनुराधात्रयं हस्तो मृगाश्वौ चादितिद्वयम् ।
यात्रायां रेवती शस्ता निन्द्यार्द्रा भरणीद्वयम् ॥
मघोत्तरा विशाखा च सर्पश्चान्ये च मध्यमाः ॥ २२० ॥

अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य तथा रेवती ये नक्षत्र यात्रा में शुभफलदायक होते हैं। आर्द्रा, भरणी तथा कृत्तिका ये नक्षत्र निन्द्य होते हैं। मघा, तीनों उत्तरा, विशाखा तथा आश्लेषा ये नक्षत्र मध्यम होते हैं ॥ २२० ॥

घातनक्षत्राणि

मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यम्बुपान्त्यभम् ।
याम्यब्राह्मेशसार्पं च मेषादेर्घातकं न सत् ॥ २२१ ॥

मेष राशिवालों के लिये मघा, वृष राशिवालों के लिये हस्त, मिथुन राशिवालों के लिये स्वाती, कर्क राशिवालों के लिये अनुराधा, सिंह राशिवालों के लिये मूल, कन्या राशिवालों के लिये श्रवण, तुला राशिवालों के लिये उत्तराषाढ़, वृश्चिक राशिवालों के लिये रेवती, धन राशिवालों के लिये भरणी, मकर राशिवालों के लिये रोहिणी, कुम्भ राशिवालों के लिये आर्द्रा तथा मीन राशिवालों के लिये आश्लेषा ये नक्षत्र घातक होते हैं ॥ २२१ ॥

घातवाराः

नक्रे भौमो गोहरिस्त्रीषु मन्द-
श्चन्द्रो द्वन्द्वेऽर्कोऽजभे ज्ञश्च कर्के ।

शुक्रः कोदण्डालिमीनेषु कुम्भे
जूके जीवो घातवारा न शस्ताः ॥ २२२ ॥

मकर राशिवालों के लिये मंगल, वृष, सिंह तथा कन्या राशिवालों के लिये शनि, मिथुन राशिवालों के लिये चन्द्रवार, मेष राशिवालों के लिये सूर्य, कर्क राशिवालों के लिये बुध, धन, वृश्चिक तथा मीन राशिवालों के लिये शुक्र, कुम्भ तथा तुला राशिवालों के लिये बृहस्पति ये घातवार कहे गए हैं। इसमें यात्रा करना वर्जित है ॥ २२२ ॥

घातलग्नानि

भूमिद्व्यब्ध्यद्रिदिक्सूर्याङ्काष्टाङ्केशाग्निसायकाः ।
मेषादिघातलग्नानि यात्रायां वर्जयेत्सुधीः ॥ २२३ ॥

मेष राशिवालों के लिये मेष, वृष राशिवालों के लिये वृष, मिथुन राशिवालों के लिये कर्क, कर्क राशिवालों के लिये तुला, सिंह राशिवालों के लिये मकर, कन्या राशिवालों के लिये मीन, तुला राशिवालों के लिये धन, वृश्चिक राशिवालों के लिये वृश्चिक, धन राशिवालों के लिये धन, मकर राशिवालों के लिये कुम्भ, कुम्भ राशिवालों के लिये मिथुन तथा मीन राशिवालों के लिये सिंह ये घातक लग्न हैं तथा यात्रा में वर्जित हैं ॥ २२३ ॥

घाततिथयः

गोस्त्रीझषे घाततिथिस्तु पूर्णा
भद्रानृयुक्कर्कटकेऽथ नन्दा ।
कौर्प्याजयोर्नक्रघटे च रिक्ता
जयाधनुः कुम्भहरौ न शस्ताः ॥ २२४ ॥

वृष, कन्या तथा मीन राशिवालों के लिये पूर्णा, मिथुन तथा कर्क राशिवालों के लिये नन्दा, तुला, मेष, मकर तथा कुम्भ राशिवालों के लिये रिक्ता और धन, कुम्भ तथा सिंह राशिवालों के

लिये जयासंज्ञक तिथियाँ घातक होती हैं तथा ये घातक तिथियाँ यात्रा में वर्जित हैं ॥ २२४ ॥

भद्रा

भद्रा यात्रायां परित्याज्या ।

यात्रा में भद्रा सर्वथा वर्जित है ।

तारा

जन्मसप्तपञ्चत्रितारा यात्रायामपि नेष्टाः ।

पहली, सातवीं, पाँचवीं तथा तीसरी ये ताराएँ यात्रा में भी वर्जित हैं ।

यात्रातिथयः

मासस्य प्रतिपच्छ्रेष्ठा द्वितीया कामकारिणी ।
आरोग्यदा तृतीया च चतुर्थी कलहप्रदा ॥ २२५ ॥
पञ्चमी च श्रियायुक्ता षष्ठी कलहकारिणी ।
भक्ष्यपानसमायुक्ता सप्तमी सुखदा सदा ॥ २२६ ॥
अष्टमी व्याधिदा नित्यं नवमी मृत्युदा सदा ।
दशमी बहुलाभा स्यादेकादशी च हेमदा ॥ २२७ ॥
द्वादशी प्राणसंहर्त्री सर्वसिद्धा त्रयोदशी ।
शुक्ला वा यदि वा कृष्णा वर्जनीया चतुर्दशी ॥ २२८ ॥

प्रत्येक मास की प्रतिपदा तिथि श्रेष्ठ, द्वितीया तिथि मनोरथों की पूर्ण करनेवाली, तृतीया तिथि आरोग्यप्रद, चतुर्थी तिथि कलह-कारिणी, पञ्चमी तिथि सम्पत्तिदात्री, सप्तमी तिथि सुखदात्री, अष्टमी तिथि व्याधिकारिणी, नवमी तिथि मृत्युप्रद, दशमी तिथि लाभकारिणी, एकादशी तिथि सुवर्णदात्री, द्वादशी तिथि प्राणहर्त्री, त्रयोदशी तिथि समस्त मनोरथों की पूर्ण करनेवाली और शुक्ल-पक्ष तथा कृष्णपक्ष दोनों पक्षों की चतुर्दशी तिथि सर्वथा वर्जनीय होती है ॥ २२५-२२८ ॥

यात्रातिथिविचारे विशेषः

पौर्णिमायाममायां च प्रस्थानं नैव कारयेत् ।
तिथिक्षये च मासान्ते ग्रहणान्ते दिनत्रयम् ॥
मासादौ संक्रमदिने यात्रा नैव शुभावहा ॥ २२९ ॥

पूर्णिमा, अमा, तिथिक्षय, मास के अन्त की तिथि ग्रहण के अन्त के तीन दिन, मास के आदि का दिन तथा संक्रान्ति का दिन यात्रा में सर्वथा छोड़ देना चाहिए ॥ २२९ ॥

वर्ज्यास्तिथयः

न षष्ठी न च द्वादशी नाष्टमी नो
सिताद्या तिथिः पूर्णिमामा न रिक्ता ॥ २३० ॥

षष्ठी, द्वादशी, अष्टमी, शुक्लपक्ष की प्रतिपदा, पौर्णमासी, अमावास्या, रिक्ता तिथि तथा पर्वदिन, कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, मासादि, मासान्त तथा संक्रमण दिन ये तिथियाँ यात्रा में सर्वथा वर्जित हैं ॥ २३० ॥

पर्वपरिभाषा

चतुर्दश्यष्टमी कृष्णा अमावास्या च पूर्णिमा ।
एतानि पञ्च पर्वाणि रविसंक्रान्तिगं दिनम् ॥ २३१ ॥

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तथा अष्टमी, अमावास्या, पौर्णमासी तथा सूर्यसंक्रान्तिदिन ये पाँच पर्व कहलाते हैं ॥ २३१ ॥

यात्रायां वर्ज्यनक्षत्राणि

नेष्टं प्रयाणमादिष्टं रोहिण्यामुत्तरात्रये ।
ज्येष्ठाशतभिषङ्मूले पूर्वासु त्रिविधासु च ॥
कृतं प्रयाणमष्टासु न कदाचिन्निवर्त्तते ॥ २३२ ॥
चित्रात्रयं मघाश्लेषे तथार्द्रा भरणीद्वयम् ।
जन्मनक्षत्रमेतानि वर्जनीयानि यत्नतः ॥ २३३ ॥

रोहिणी, तीनों उत्तरा, ज्येष्ठा, शतभिषा, मूल तथा तीनों पूर्वा

इनमें यात्रा करे, तो कभी लौटकर न आवे। चित्रा, स्वाती, विशाखा, मघा, आश्लेषा, आर्द्रा, भरणी, कृत्तिका तथा जन्मनक्षत्र ये नक्षत्र यात्रा में सर्वथा वर्जित हैं ॥ २३२-२३३ ॥

यात्रानक्षत्रेषु विशेषविचारः

मोदन्ते न निवर्त्तन्ते चित्रास्वातीगता नराः ॥ २३४ ॥

चित्रा तथा स्वाती नक्षत्र में गये हुए मनुष्य प्रसन्न तो रहते हैं परन्तु लौटकर नहीं आते ॥ २३४ ॥

शुभनक्षत्राणि

हयादित्यमित्रेन्दुजीवान्त्यहस्त-
श्रवोवासवैरेव यात्रा प्रशस्ता ॥ २३५ ॥

अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण तथा धनिष्टा इन नक्षत्रों में यात्रा शुभफलदायक होती है ॥ २३५ ॥

सर्वदिग्द्वारनक्षत्राणि

मैत्रार्कपुष्याश्विभिर्निरुक्ता
यात्रा शुभा सर्वदिशासु तज्ज्ञैः ॥ २३६ ॥

अनुराधा, हस्त, पुष्य तथा अश्विनी ये नक्षत्र सर्वदिग्द्वारिक कहे जाते हैं। इन नक्षत्रों में सब दिशाओं की यात्रा शुभफलदायक होती है ॥ २३६ ॥

मतान्तरेण वर्ज्यनक्षत्रवाराः

न पूर्वदिशि शाक्रभे न विधुसौरिवारे तथा
न चाजपादभे गुरौ यमदिशीनदैत्येज्ययोः ।
न पाशिदिशि धातृभे कुजबुधे यमर्क्षे तथा
न सौम्यककुभि व्रजेत्स्वजयजीवितार्थी बुधः ॥२३७॥
गुरुवारे पश्चके च दिशं यामीं च वर्जयेत् ॥ २३८ ॥

विजय तथा जीवन चाहनेवाला मनुष्य ज्येष्टा नक्षत्र, चन्द्र तथा

शनिवार के दिन पूर्व दिशा की यात्रा, पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र तथा बृहस्पतिवार के दिन दक्षिण दिशा की यात्रा, रोहिणी नक्षत्र शुक्र तथा रविवार के दिन पश्चिम दिशा की यात्रा और भरणी नक्षत्र, मंगल तथा बुधवार के दिन उत्तर दिशा की यात्रा न करे। बृहस्पतिवार और पञ्चकों में दक्षिण दिशा की यात्रा वर्जित है ॥ २३७-२३८ ॥

पूर्वादिगमनकालः

उषः कालो विना पूर्वां गोधूलिः पश्चिमां विना।
विनोत्तरां निशीथः सद्याने याम्यां विनाभिजित् ॥ २३९ ॥

पूर्व दिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं की यात्रा के लिये उषःकाल, पश्चिम को छोड़कर अन्य दिशाओं की यात्रा के लिये गोधूलिकाल, उत्तर को छोड़कर अन्य दिशाओं की यात्रा के लिये अर्धरात्रि के समय तथा दक्षिण को छोड़कर अन्य दिशाओं के लिये अभिजित् मुहूर्त में यात्रा करना शुभफलदायक होता है ॥ २३९ ॥

दग्धतिथिर्मतान्तरे

द्वितीया च धनुर्मीने चतुर्थी वृषकुम्भयोः।
मेषकर्कटयोः षष्ठी कन्यायां मिथुनेऽष्टमी ॥ २४० ॥
दशमी वृश्चिके सिंहे द्वादशी मकरे तुले।
एतास्तु तिथयो दग्धाः शुभे कर्मणि वर्जिताः ॥ २४१ ॥

धन और मीन के सूर्यों में द्वितीया, वृष तथा कुम्भ के सूर्यों में चतुर्थी, मेष तथा कर्क के सूर्यों में षष्ठी, कन्या तथा मिथुन के सूर्यों में अष्टमी, वृश्चिक तथा सिंह के सूर्यों में दशमी और मकर तथा तुला के सूर्यों में द्वादशी ये दग्धसंज्ञक तिथियाँ कही गई हैं। इन तिथियों में समस्त शुभ कार्यों के साथ-साथ यात्रा भी वर्जित है ॥ २४०-२४१ ॥

सिद्धियोगाः

नन्दा तिथिः शुक्रवारे बुधे भद्रा कुजे जया ।
शनौ रिक्ता गुरौ पूर्णा सिद्धियोगा उदाहृताः ॥ २४२ ॥
शनिभौमगता रिक्ता सर्वसाम्राज्यदायिनी ॥ २४३ ॥

शुक्रवार के दिन नन्दा तिथि, बुधवार के दिन भद्रा तिथि, मंगल के दिन जया तिथि, शनिवार के दिन रिक्ता तिथि और बृहस्पति के दिन पूर्णा तिथि हो, तो ये सिद्धयोग कहे जाते हैं। इन सिद्धि-योगों में यात्रा आदि कार्य शुभफलदायक होते हैं। शनि तथा मंगल के दिन रिक्ता तिथि हो, तो वह सर्वसाम्राज्य की देनेवाली होती है ॥ २४२-२४३ ॥

तिथीनां नन्दादिसंज्ञाः

प्रतिपत्षष्ठी एकादशी नन्दा ।
द्वितीया सप्तमी द्वादशी भद्रा ।
तृतीया अष्टमी त्रयोदशी जया ।
चतुर्थी नवमी चतुर्दशी रिक्ता ।
पञ्चमी दशमी पूर्णिमा पूर्णा ।
अमावास्यापि पूर्णैव ।

मृत्युयोगाः

आदित्यभौमयोर्नन्दा भद्रा भार्गवचन्द्रयोः ।
बुधे जया गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा च मृत्युदा ॥ २४४ ॥

रवि तथा मंगल के दिन नन्दा, शुक्र तथा सोमवार के दिन भद्रा, बुध के दिन जया, बृहस्पति के दिन रिक्ता और शनि के दिन पूर्णासंज्ञक तिथि हो, तो मृत्युयोग होता है ॥ २४४ ॥

मतान्तरेण मृत्युयोगः

त्यज रविमनुराधां वैश्वदेवं च सोमे
शतभिषमपि भौमे चन्द्रजे चाश्विनीं च ।

मृगशिरसि सुरेज्यं सर्वदेवं च शुक्रे
रविसुतमपि हस्ते मृत्युयोगं वदन्ति ॥ २४५ ॥

रविवार के दिन अनुराधा, सोमवार के दिन उत्तराषाढ़, मंगल के दिन शतभिषा, बुध के दिन अश्विनी, बृहस्पति के दिन मृगशिरा, शुक्र के दिन सर्वदेव तथा शनि के दिन हस्त नक्षत्र हो, तो मृत्युयोग होता है ॥ २४५ ॥

दिशाशूले शान्तिः

सूर्यवारे घृतं प्राश्य सोमवारे पयस्तथा ।
गुडमङ्गारके प्राश्य बुधवारे तिलानपि ॥ २४६ ॥
गुरुवारे दधि प्राश्य शुक्रवारे यवानपि ।
माषान्भुक्त्वा शनेर्वारे गच्छञ्छूले न दोषभाक् ॥ २४७ ॥

रविवार के दिन घृत खाकर, सोमवार के दिन जल पीकर, मंगल के दिन गुड़ खाकर, बुध के दिन तिल-गुड़ खाकर, गुरुवार के दिन दही खाकर, शुक्रवार के दिन जौ-दही खाकर तथा शनिवार के दिन उर्द खाकर यात्रा करने से दिशाशूल का दोष नहीं होता है ॥ २४६-२४७ ॥

नक्षत्रसिद्धियोगाः

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं
चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रम् ।
भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं
ज्ञे ब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम् ॥ २४८ ॥
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं
शुक्रेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभम् ।
शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि
सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः ॥ २४९ ॥

रविवार के दिन हस्त, मूल, तीनों उत्तरा, पुष्य तथा अश्विनी;

चन्द्रवार के दिन श्रवण, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य तथा अनुराधा; मंगल के दिन अश्विनी, आश्लेषा, उत्तराभाद्रपद, कृत्तिका; बुधवार के दिन रोहिणी, अनुराधा, हस्त, कृत्तिका तथा मृगशिरा; बृहस्पति के दिन रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु तथा पुष्य; शुक्र के दिन रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु तथा श्रवण; शनि के दिन श्रवण, रोहिणी तथा स्वाती नक्षत्र हो, तो उस दिन पूर्वाचार्य लोग सर्वार्थसिद्धियोग कहते हैं ॥ २४८-२४९ ॥

अर्धप्रहराः

रवौ वर्ज्यं चतुः पञ्च सोमे सप्तद्वयं तथा ।
कुजे षष्ठद्वयं चैव बुधे बाणतृतीयकम् ॥ २५० ॥
गुरौ सप्ताष्टकं चैव वेदा रामाश्च भार्गवे ।
शनावाद्यन्तषष्ठं च वर्ज्योऽर्धप्रहरो बुधैः ॥ २५१ ॥

रविवार के दिन चौथा, पाँचवाँ; सोमवार के दिन दूसरा, सातवाँ; मंगल के दिन दूसरा, छठा; बुध के दिन तीसरा, पाँचवाँ; गुरुवार के दिन सातवाँ, आठवाँ; शुक्र के दिन तीसरा, चौथा तथा शनि के दिन पहला, छठा और आठवाँ अर्धप्रहर सर्वकार्यों में वर्जित है ॥ २५०-२५१

राज्यर्धप्रहराः

रवौ रसाब्धी हिमगौ हयाब्धी
द्वयं महीजे शशिजे तृतीयम् ।
गुरौ शराष्टौ भृगुजे तृतीयं
शनौ रसाद्यन्तमिति क्षपायाम् ॥ २५२ ॥

रविवार की रात्रि में ६ । ४; सोम की रात्रि में ७ । ४; मंगल की रात्रि में २; बुध की रात्रि में ३; बृहस्पति की रात्रि में ५ । ८; शुक्र की रात्रि में ३; शनि की रात्रि में १ । ८ । ६ अर्धप्रहर सर्व कार्यों में वर्जित है ॥ २५२ ॥

ताराज्ञानम्

जन्मभाद्गणयेदादौ दिनधिष्ण्यावधि क्रमात् ।
नवभिश्च हरेद्भागं शेषं तारा विनिर्दिशेत् ॥ २५३ ॥

जन्मनक्षत्र से लेकर दिननक्षत्र पर्यन्त गिनकर नव का भाग देने से जो शेष रहे उसको तारा समझना चाहिए ॥ २५३ ॥

ताराणां संज्ञाः

जन्मसम्पद्विपत्क्षेम प्रत्यरिः साधको वधः ।
मित्रातिमित्राः प्रख्यातास्तारा नामसदृक्फलाः ॥२५४॥

जन्म, सम्पत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मित्र तथा अतिमित्र ये नव ताराएँ नाम के सदृश फल देनेवाली होती हैं॥२५४॥

दुष्टताराशान्तिः

प्रत्यरौ लवणं दद्याच्छाकं दद्यात्त्रिजन्मसु ।
गुडं विपत्तितारायां वधे हेमं तिलैः सह ॥ २५५ ॥

प्रत्यरि तारा के शान्त्यर्थ लवण; तीसरी और जन्मतारा के शान्त्यर्थ शाक (साग); विपत्ति-नामक तारा के शान्त्यर्थ गुड़ तथा वध-नामक तारा के शान्त्यर्थ तिल और सोना दान करे ॥ २५५ ॥

राहुवासः

अष्टसु प्रहरार्धेषु प्रथमाद्येष्वहर्निशम् ।
पूर्वस्यां वामतो राहुस्तुर्यांत्तुर्यं दिशं व्रजेत् ॥ २५६ ॥
राहुः प्राच्यां ततो वायुर्दक्षिणेशानपश्चिमे ।
अग्नावुत्तरनैर्ऋत्ये प्रहरार्धे च तिष्ठति ॥ २५७ ॥

दिन में राहु ३$\frac{३}{४}$ घड़ी पूर्व में; फिर ३$\frac{३}{४}$ घड़ी वायव्य में; फिर ३$\frac{३}{४}$ घड़ी दक्षिण में; फिर ३$\frac{३}{४}$ घड़ी ईशान में; फिर ३$\frac{३}{४}$ घड़ी पश्चिम में; फिर ३$\frac{३}{४}$ घड़ी आग्नेय में; फिर ३$\frac{३}{४}$ घड़ी उत्तर में तथा फिर ३$\frac{३}{४}$ घड़ी नैर्ऋत्य में रहता है। इस प्रकार राहु ३० घड़ी दिन में तथा ३० घड़ी रात में रहता है ॥ २५६-२५७ ॥

यात्रायां विशेषविचारः

यात्रायां दक्षिणे राहुर्योगिनी वामतः शुभा ।
पृष्ठतो द्वयमाख्यातं चन्द्रमाः सम्मुखः शुभः ॥ २५८ ॥

यात्रा में दक्षिण राहु, वाम योगिनी तथा पृष्ठ में दोनों शुभ होते हैं। सम्मुख और दक्षिण चन्द्रमा शुभ होता है ॥ २५८ ॥

सूर्यवासः

यामयुग्मेषु रात्रौ च वाले पूर्वादिगो रविः ।
यात्रायां दक्षिणे वामे प्रवेशे पृष्ठके द्वयम् ॥ २५६ ॥

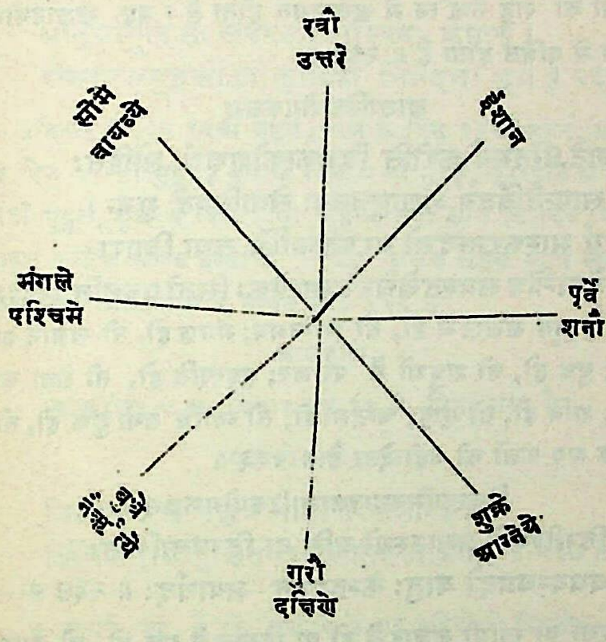
एक प्रहर रात्रि से एक प्रहर दिन तक सूर्य पूर्व में, फिर दो प्रहर दक्षिण में, फिर दो प्रहर पश्चिम में, फिर दो प्रहर उत्तर में रहते हैं। यात्रा में दक्षिण तथा वाम सूर्य शुभ होता है और प्रवेश में पृष्ठ, सम्मुख तथा वाम सूर्य शुभ कहा गया है ॥ २५६ ॥

कालपाशः (कालराहुः)

कौबेरीतो वैपरीत्येन कालो
वारेऽर्काद्ये सम्मुखे तस्य पाशः ।
रात्रावेतौ वैपरीत्येन गण्यौ
यात्रायुद्धे सम्मुखे वर्जनीयौ ॥ २६० ॥
दक्षिणस्थः शुभः कालः पाशो वामदिशि स्थितः ॥२६१

सूर्य आदि वारों को उत्तर आदि दिशाओं में बाईं ओर गिनने से क्रमशः काल जानना चाहिए। उसी काल के सामने अर्थात् उससे पाँचवाँ पाश होता है। रात्रि में विपरीत गणना होती है ! अर्थात् काल के स्थान में पाश, पाश के स्थान में काल होता है। यात्रा तथा युद्ध में सम्मुख काल या पाश वर्जित होता है तथा दक्षिण काल और बाईं ओर का पाश शुभफलदायक होता है ॥ २६०-२६१ ॥

कालपाशचक्रम्



लालाटिकयोगः

प्राच्यां लग्नगतो ललाटग इनश्चन्द्रोऽरिपुत्रोपगो
वायव्यां यमदिश्यसृग्दशमगो ज्ञोऽप्युत्तरस्यां सुखे ।
ऐशान्यां त्रिधने गुरुर्दहनदिश्यायव्ययस्थो भृगु-
र्वारुण्यां मदगोऽर्कजोऽष्टनवगो राहुस्त्यजेन्नैर्ऋतिम् २६२॥

लग्न का सूर्य पूर्व दिशा में, ५ । ६ स्थानों का चन्द्रमा वायव्य में, दशम स्थान का मंगल दक्षिण में, सुख स्थान का बुध उत्तर में, २ । ३ स्थानों का बृहस्पति ईशान में, ११ । १२ स्थानों का

शुक्र आग्नेय में, सप्तम स्थान का शनि पश्चिम में तथा ८।९ स्थानों का राहु नैर्ऋत्य में ललाटगत होता है। यह ललाटयोग यात्रा में वर्जित होता है ॥ २६२ ॥

लालाटिकयोगफलम्

ललाटेऽग्निभयं करोति दिनकृत्कोशक्षयं लोहितः
सापत्नैर्विजयं शशाङ्कतनयः सेवाविमर्दं गुरुः ।
मृत्युं भास्करनन्दनो नरपतेर्व्याधिं तथा विप्रा-
डेतान्येव समस्तखेचरफलान्येकः सितो यच्छति॥२६३॥

यदि सूर्य ललाट में हो, तो अग्निभय; मंगल हो, तो खज़ाने का नाश; बुध हो, तो शत्रुओं में पराजय; बृहस्पति हो, तो सेवा का नाश; शनि हो, तो मृत्यु; चन्द्रमा हो, तो व्याधि तथा शुक्र हो, तो पूर्वोक्त सब फलों को वही देता है ॥ २६३ ॥

दिक्स्वामिवशाल्लालाटिकयोगफलम्

दिगीश्वरो ललाटस्थो यदि वा दिग्बलान्वितः ।
वधबन्धप्रदो यातुः केन्द्रगस्तु जयार्थदः ॥ २६४ ॥

दिशा का स्वामी ललाट में हो या दिग्बल से युक्त हो, तो यात्रा करनेवालों का वध तथा बन्धन होता है। यदि केन्द्र में दिगीश हो, तो जय तथा धन का देनेवाला होता है ॥ २६४ ॥

दिक्स्वामिनस्तेषां फलं च

दिगीशाः सूर्यशुक्रारराह्वर्कीन्दुज्ञसूरयः ।
दिगीश्वरे ललाटस्थे यातुर्न पुनरागमः ॥ २६५ ॥

सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनि, चन्द्रमा, बुध तथा बृहस्पति क्रम से पूर्व आदि दिशाओं के स्वामी होते हैं। यदि यात्रा के समय दिशा का स्वामी ललाट में हो, तो यात्रा करनेवाला मनुष्य फिर लौटकर नहीं आता है ॥ २६५ ॥

कुलिकयोगः

भानुर्भानुदिशः सर्परसवेदाश्विनः क्रमात् ।
रविवारान्मुहूर्त्तोऽयं कुलिको निन्दितः शुभे ॥ २६६ ॥

रविवार के दिन १४वाँ मुहूर्त, सोम के दिन १२वाँ मुहूर्त, मंगल के दिन १० वाँ मुहूर्त, बुध के दिन ८ वाँ मुहूर्त, बृहस्पति के दिन ६ठाँ मुहूर्त, शुक्र के दिन ४ था मुहूर्त, तथा शनि के दिन २ रा मुहूर्त कुलिक संज्ञक होता है । यह कुलिक संज्ञक मुहूर्त समस्त शुभकार्यों तथा यात्रा में वर्जित है ॥ २६६ ॥

कालहोरा

कालहोरा * का विचार पृष्ठ १७ में दिया गया है ।

युद्धादौ सर्वाङ्कचक्रम्

तिथिवारं च नक्षत्रं नामाक्षरसमन्वितम् ।
द्वित्रिचतुर्भिर्गुणितं रससप्ताष्टभाजितम् ॥ २६७ ॥

---

* तात्पर्य यह है कि सूर्योदय से गत घड़ियों को द्विगुणित करके पाँच का भाग देवे जो लब्ध हो उसमें शेष को घटाकर एक-एक बढ़ा देवे । फिर उसमें ७ का भाग देवे जो शेष बचे उसे होराकाल जानिए । एक बचे, तो रवि; दो बचें, तो चन्द्र; तीन बचें, तो मंगल; चार बचें, तो बुध; पाँच बचें, तो बृहस्पति; छः बचें, तो शुक्र तथा सात बचें, तो शनि का होराकाल होता है । वह क्रम से शुक्र, सूर्य, बुध, चन्द्र, शनि, गुरु और मंगल का होराकाल समझना चाहिए। इस प्रकार प्रथम होरादिवस लेना चाहिए । सूर्य से गिने । २ घड़ी २९ पल प्रथम दिन को, ४।५८ दूसरे, ७।२७ तीसरे, ९।५६ चौथे, १२।२५ पाँचवें, १४।५४ छठे, १७।२३ सातवें होराकाल होता है । यह किसी-किसी ग्रन्थ में प्रसिद्ध विचार पाया जाता है ।

आदिशून्ये भवेद्धानिर्मध्यशून्ये रिपोर्भयम्।
अन्त्यशून्ये भवेन्मृत्युः सर्वाङ्के विजयी भवेत् ॥ २६८ ॥

। तिथि, वार, नक्षत्र और नामाक्षर को जोड़कर पिंड बनावे। इसको दूना करे, उसमें ६ का भाग देवे। फिर उसी पिंड को त्रिगुणित करके ७ का भाग देवे। फिर उसी पिंड को चतुर्गुण करके ८ का भाग देवे। यदि प्रथम शून्य बचे, तो हानि; मध्य में शून्य बचे, तो शत्रुभय; अन्त्य शून्य बचे, तो मृत्यु; तीनों में शेष अंक बचें, तो विजय होता है ॥ २६७-२६८ ॥

स्वरविचारः

शशिप्रवाहे गमनं न शस्तं
सूर्यप्रवाहे नहि किञ्चनोऽपि।
प्रष्टुर्जयः स्याद्बहुमानभागे
रिक्ते च भागे विफलं समस्तम् ॥ २६९ ॥

चन्द्रस्वर अर्थात् बाईं श्वास चले, तो यात्रा न करे। सूर्यस्वर अर्थात् दाहिनी श्वास चले, तो यात्रा विफल नहीं होती। यदि गणक तथा पृच्छक दोनों का एक स्वर हो, तो सब कार्यों की सिद्धि होती है। यदि सुषुम्णा नाड़ी चले, तो समस्त कार्य निष्फल होते हैं ॥ २६९ ॥

सम्मुखादिशुक्रः

दक्षिणे दुःखदः शुक्रः सम्मुखे हन्ति लोचनम्।
वामे पृष्ठे शुभो नित्यं रोधयेच्चास्तगः शुभम् ॥ २७० ॥

यात्रा में दक्षिण शुक्र दुःखदायी, सम्मुख नेत्र को पीड़ा देनेवाला, वाम और पृष्ठ शुक्र सर्वदा शुभकारी तथा अस्त शुक्र शुभकार्य को रोकनेवाला होता है ॥ २७० ॥

योगादिसिद्धिः

योगात्सिद्धिर्धरणिपतीना-
मृक्षगणैरपि भूदेवानाम् ।
चौराणामपि शुभशकुनै-
रुक्तमुहूर्त्तैरन्यमनुजानाम् ॥ २७१ ॥

राजाओं को योग से, ब्राह्मणों को नक्षत्र से, चोरों को शकुन से तथा शेष मनुष्यों को मुहूर्त्तों से यात्रा में सिद्धि प्राप्त होती है ॥२७१॥

सहगमनविचारः

पितापुत्रौ न गच्छेतां न गच्छेत्सोदरद्वयम् ।
नव स्त्रीभिर्न गन्तव्यं न गच्छेद्ब्राह्मणत्रयम् ॥ २७२ ॥

पिता तथा पुत्र एक कार्य के लिये एक साथ यात्रा न करें। दो सहोदर भाई भी एक साथ यात्रा न करें। नव स्त्रियों के साथ या नूतन स्त्रियों के साथ तथा तीन ब्राह्मण एक साथ यात्रा न करें॥२७२॥

विजयादशमी

इषमासि सिता दशमी विजया
शुभकर्मसु सिद्धिकरी कथिता ॥ २७३ ॥

आश्विन शुक्ला दशमी सब शुभकार्यों में सिद्धि देनेवाली होती है ॥ २७३ ॥

विजयादशमीविचारे विशेषः

श्रवणर्क्षयुता सुतरां शुभदा
नृपतेस्तु गमे जयसन्धिकरी ॥ २७४ ॥

यदि श्रवण नक्षत्र से युक्त हो, तो अधिक शुभदात्री है। उस दिन राजा यात्रा करे; तो विजय या सन्धि लाभ करे। उस दिन चन्द्रमा आदि का विचार नहीं करना चाहिए॥ २७४ ॥

स्थिरलग्नस्य निषेधः

चरलग्ने प्रयातव्यं द्विस्वभावे तथा नरैः ।

लग्ने स्थिरे न गन्तव्यं यात्रायां शुभमीप्सुभिः ॥ २७५ ॥

चर या द्विस्वभाव लग्न में यात्रा करनी चाहिए; परन्तु कल्याण चाहनेवाला मनुष्य स्थिर लग्न में कभी यात्रा न करे ॥ २७५ ॥

यात्रायां कुम्भमीनयोर्निषेधः

कुम्भकुम्भांशकौ त्याज्यौ सर्वदा गमने बुधैः ।
मीनेऽपि च न कर्त्तव्या सा हि यात्रातिदुःखदा ॥२७६॥

कुम्भलग्न तथा कुम्भलग्न का नवांश यात्रा में सदा वर्जित है। एवं मीन लग्न में यात्रा अति दुःखदात्री होती है ॥ २७६ ॥

यात्रायां लग्नस्थितिः

केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः शुभाः स्यु-
र्याने पापास्त्र्यायषट्केषु चन्द्रः ।
नेष्टो लग्नान्त्यारिरन्ध्रे शनिः खे-
ऽस्ते शुक्रो लग्नेट्नगान्त्यारिरन्ध्रे ॥ २७७ ॥

यात्राकाल में केन्द्र तथा कोण में शुभग्रह शुभ होते हैं, ३। ११ ६। १० स्थानों में पापग्रह शुभ होते हैं। लग्न, १२। ६। ८ स्थानों में चन्द्रमा शुभ नहीं होता है। दशम स्थान में शनि, सप्तम स्थान में शुक्र तथा ७। १२। ६। ८ स्थानों में लग्नेश ये शुभ नहीं होते हैं ॥ २७७ ॥

शुभशकुनानि

विप्राश्वेभफलान्नदुग्धदधिगोसिद्धार्थपद्माम्बरं
वेश्यावाद्यमयूरचाषनकुलाबद्धैकपश्वामिषम् ।
सद्वाक्यं कुसुमेक्षुपूर्णकलशच्छत्राणि मृत्कन्यका-
रत्नोष्णीषसितोक्षमद्यससुतस्त्रीदीप्तवैश्वानराः ॥२७८॥
आदर्शाञ्जनधौतवस्त्ररजका मीनाज्यसिंहासनं
शावं रोदनवर्जितं ध्वजमधुच्छागास्त्रगोरोचनम् ।

भारद्वाजनृयानवेदनिनदा मांगल्यगीतांकुशा
दृष्टाः सत्फलदाः प्रयाणसमये रिक्तो घटः स्वानुगः ॥२७६॥

ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दुग्ध, दही, गऊ, सरसों, कमल, वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर, नीलकंठ, नेउला, बँधा हुआ एक पशु, मांस, अच्छा वचन, पुष्प, ईख, पानी से भरा हुआ घड़ा, छत्र, मृत्तिका, कन्या, रत्न, पगड़ी, सफ़ेद बैल, शराब, पुत्रसहित स्त्री, जली हुई अग्नि, दर्पण (सीसा), अञ्जन, धुला हुआ वस्त्र, धोबी, मछली, घृत, सिंहासन, मुर्दा (यदि उसके साथ रोनेवाले मनुष्य न हों), ध्वजा, शहद, बकरा का रक्त, गोरोचन, भारद्वाज पक्षी, पालकी, वेदपाठ की ध्वनि, मांगलिक गीत, अंकुश, ख़ाली घड़ा (यदि पीछे आता हो), ये पदार्थ यात्रा के समय दृष्ट होने से शुभ फलदायक होते हैं ॥ २७८-२७६ ॥

अशुभशकुनानि

वन्ध्याचर्मतुषास्थिसर्पलवणाङ्गारेन्धनक्लीबविट्-
तैलोन्मत्तवसौषधारिजटिलप्रव्राट्तृणव्याधिताः ।
नग्नाभ्यक्तविमुक्तकेशपतिता व्यंगक्षुधार्त्ता असृक्
स्त्रीपुष्पं सरटः स्वगेहदहनं मार्जारयुद्धं क्षुतम् ॥२८०॥
काषायी गुडतक्रपङ्कविधवाकुब्जाः कुटुम्बे कलि-
र्वस्त्रादेः स्खलनं लुलायसमरं कृष्णानि धान्यानि च ।
कार्पासं वमनं च गर्दभरवो दक्षेऽतिरुट् गर्भिणी
मुण्डार्द्राम्बरदुर्वचोऽन्धबधिरोदक्यो न दृष्टाःशुभाः॥२८१॥

वन्ध्या स्त्री, चमड़ा, भूसी, हड्डी, सर्प, नमक, आग का कोयला, लकड़ी, हिजड़ा, विष्ठा, तेल, पागल, चर्बी, औषध, शत्रु, जटाधारी पुरुष, संन्यासी, घास, बीमार मनुष्य, नंगा, तेल लगाया हुआ, बाल बिखरा हुआ, जाति से पतित, अंगहीन, भूखा आदमी, रक्त, रजोवती स्त्री का रुधिर, छिपकली, घर का जलना, बिल्लियों

का युद्ध, छींक, गेरुआ वस्त्र पहिने हुए योगी, गुड़, मट्ठा, कीचड़, विधवा स्त्री, कुबड़ा आदमी, कौटुम्बिक कलह, वस्त्र आदि का गिरना, भैंसों का युद्ध, काले रंग का अनाज, कपास, वमन होना, दाहिनी ओर गधे का शब्द होना, अति क्रोधी, गर्भिणी स्त्री, शिर मुँड़ा हुआ मनुष्य, गीला कपड़ा, दुष्ट वाक्य, अन्धा, बधिर (बहिरा) तथा रजोवती स्त्री ये पदार्थ आदि यात्रा के समय में दृष्ट होने से अशुभ फलदायक होते हैं ॥ २८०-२८१ ॥

अशुभशकुनपरिहारः

आद्येऽपशकुने स्थित्वा प्राणानेकादश व्रजेत् ।
द्वितीये षोडश प्राणांस्तृतीये न कचिद्व्रजेत् ॥ २८२ ॥

पहला अपशकुन देखने पर ११ श्वास लेकर, दूसरा अपशकुन देखने पर १६ श्वास लेकर तथा तीसरा अपशकुन देखने पर कभी न चले ॥ २८२ ॥

क्रोशादूर्ध्वं शकुनादीनां निष्फलत्वम्

क्रोशादूर्ध्वं च शकुनं शुभं वा यदि वाऽशुभम् ।
निष्फलं तद्विजानीयादिति प्रोक्तं मनीषिभिः ॥ २८३ ॥

अनेक आचार्यों का मत है कि एक कोस जाने पर शुभ या अशुभ शकुनों का फल नहीं होता है ॥ २८३ ॥

यात्रायां विपत्तिकराः शब्दाः

क्व यासि तिष्ठ आगच्छ किं ते तत्र गतस्य तु ।
अन्यशब्दाश्च येऽनिष्टास्ते विपत्तिकराः स्मृताः॥२८४॥

यात्रा के समय में कहाँ जाता है, ठहर जा, यहाँ आ, वहाँ जाकर क्या करेगा इत्यादि अनिष्ट शब्द विपत्तिकारक होते हैं ॥२८४॥

उत्सवादौ गमनागमनविचारः

उद्वाहे व्रतबन्धे च प्रतिष्ठायां महोत्सवे ।
असमाप्ते न गन्तव्यं मृतके सूतकेऽपि वा ॥ २८५ ॥

विवाह, व्रतबन्ध, प्रतिष्ठा, महोत्सव तथा जनन-मरण का आशौच जब तक समाप्त न हो, तब तक यात्रा न करे ॥ २८५ ॥

सम्मुखचन्द्रमाहात्म्यम्

करणभगणदोषं वारसंक्रान्तिदोषं
कुलिकतिथिजदोषं यामयामार्धदोषम् ।
शनिगुरुबुधदोषं राहुकेत्वादिदोषं
हरति सकलदोषं चन्द्रमाः सम्मुखस्थः ॥ २८६ ॥

करण, भगण, वार, संक्रान्ति, कुलिक, तिथि, याम, यामार्ध, शनि, गुरु, बुध, राहु, केतु इत्यादि सकल दोषों को सम्मुख चन्द्रमा नाश करता है ॥ २८६ ॥

प्रस्थानम्

सुमुहूर्ते स्वयं गन्तुमशक्तः पुरुषो यदा ।
ब्रह्मसूत्रादिभिः कुर्यात्प्रस्थानं देववन्दनात् ॥ २८७ ॥

अच्छे मुहूर्त्त में स्वयं यात्रा न कर सके, तो यज्ञोपवीत, हल्दी, फल आदि द्वारा इष्टदेवता को प्रणाम करके तीन, पाँच या सात दिन तक प्रस्थान रखकर यात्रा कर सकता है ॥ २८७ ॥

प्रस्थानदिनप्रमाणम्

गेहाद्गेहान्तरं गर्गः सीम्नः सीमान्तरं भृगुः ।
बाणक्षेपं भरद्वाजो वसिष्ठो नगराद्बहिः ॥ २८८ ॥

गर्गमुनि के मत से एक घर से दूसरे घर, भृगुमुनि के मत से अपने ग्राम की सीमा से बाहर, भरद्वाज मुनि के मत से जहाँ तक बाण पहुँच सके तथा वसिष्ठ के मत के अनुसार नगर से बाहर प्रस्थान रखना चाहिए ॥ २८८ ॥

प्रस्थाने कृतेऽपि सदोषदिने विशेषः

प्रस्थानेऽपि कृते नेयान्महादोषान्विते दिने ।

जन्मर्क्षे चाष्टमे चन्द्रे वारे भौमे शनैश्चरे ॥ २८६ ॥
प्रस्थितेऽपि न गन्तव्यमत्यन्तगर्हिते दिने ॥ २६० ॥

प्रस्थान रखने पर भी बड़े दोषों से युक्त दिन में यात्रा न करे तथा जन्मनक्षत्र, अष्टम चन्द्रमा, मंगल, शनिवार तथा अत्यन्त निन्दित दिन में प्रस्थान रखने पर भी यात्रा न करनी चाहिए ॥ २८६-२६० ॥

प्रस्थानदिनप्रमाणे विशेषः

सप्ताहमेव पूर्वस्यां प्रस्थानं पञ्च दक्षिणे ।
पश्चिमे त्रीणि शस्तानि सौम्यायां तु दिनद्वयम् ॥२६१॥

पूर्व दिशा की यात्रा में ७ दिन, दक्षिण दिशा की यात्रा में ५ दिन, पश्चिम दिशा की यात्रा में ३ दिन तथा उत्तर दिशा की यात्रा में २ दिन तक प्रस्थान की अवधि होती है ॥ २६१ ॥

आवश्यके मुहूर्त्तादयः

अष्टमो योऽभिजित्संज्ञः स एव कुतपः स्मृतः ।
तस्मिन्काले शुभा यात्रा विना याम्यां स्मृता बुधैः ॥२६२॥

दिन का अष्टम मुहूर्त्त जिसको अभिजित् मुहूर्त्त या कुतुप कहते हैं उसमें दक्षिण दिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं की यात्रा शुभदायक होती है ॥ २६२ ॥

विष्टिव्यतीपातकृतान्दोषानुत्पातखचरभवान् ।
मध्याह्नकृतो दिनकृत्सर्वानपनीय शुभकृत्स्यात् ॥२६३॥

जब मध्याह्न अर्थात् अभिजित् मुहूर्त्त में सूर्य होता है, तब भद्रा, व्यतीपात तथा दुष्ट ग्रहों के दोष को शान्त कर यात्रा में शुभ फल देता है ॥ २६३ ॥

ईषत्सन्ध्यामतिक्रान्तः किञ्चिदुद्भिन्नतारकः ।
विजयो नाम योगोऽयं सर्वकार्यार्थसाधकः ॥ २६४ ॥

जब कुछ सन्ध्याकाल हो जाय तथा कुछ तारे दिखलाई देने

लगें, तो विजय नामक मुहूर्त्त होता है। इस मुहूर्त्त में यात्रा आदि समस्त कार्यों की सिद्धि होती है ॥ २१४ ॥

नक्षत्रलग्नादिबलं न चेत्स्या-
सदा मुहूर्त्तं परिकल्पनीयम्।
प्रत्यूषकालस्त्वभिजिन्मुहूर्त्तो
गोधूलिकोऽमंगलकृत्सदैव ॥ २१५ ॥

जब नक्षत्र, जन्म-लग्न आदि का बल न मिले, तो उषःकालिक अभिजित् मुहूर्त्त तथा गोधूलिकाल दोनों शुभफलदायक होते हैं। उषःकाल में पूर्व दिशा की यात्रा, गोधूलिकाल में पश्चिम दिशा की यात्रा तथा अभिजित् मुहूर्त्त में दक्षिण दिशा की यात्रा वर्जित है ॥ २१५ ॥

शंकुतो दिनघटीपलात्मकं मानम्

परमदिनं दिनमानविहीनं
सप्तभिराहतमर्कविभक्तम्।
आर्यभटेन विनिर्मितमाया-
मध्यगतस्य दिवाकरछाया ॥ २१६ ॥
या यत्र काले भवतीह छाया
मध्याह्नहीना रवियुक्हरः स्यात्।
दिनप्रमाणं च षडाहतं च
विभक्तशंकुर्घटिका भवन्ति ॥ २१७ ॥

अपने इष्ट देश के परम दिन में अपना इष्ट दिनमान घटाकर शेष घटी-पलों को सात से गुणाकर पाँच का भाग देवे जो लब्ध हो उसे अंगुल, शेष को साठ से गुणे, फिर पाँच का भाग देने से व्यंगुल होता है। यही इष्टदिन की मध्याह्नच्छाया होती है। इस मध्याह्नच्छाया को अपनी इष्टकालिक शंकुच्छाया में घटा देने से जो शेष रहे उसके ऊपरवाले अंक में बारह जोड़ देने पर जो संख्या

हो उसे हर कहते हैं। हर को साठ से गुणाकर नीचे का अंक जोड़-कर पिण्ड बना लेवे। फिर इष्टदिनमान को छः से गुणे, फिर साठ से गुणाकर पिण्ड बना लेवे। फिर ऊपर लिखे हुए हर का भाग देकर लब्धियों को मध्याह्न से पहले की दिनगत घटियाँ होंगी। फिर शेष को साठ से गुणाकर हर का भाग दे देने से पल निकल आते हैं। फिर शेष को ६० से गुणाकर हर का भाग देने से जो लब्धि हो उसे विकलाएँ जानना चाहिए। मध्याह्न-काल के उपरान्त शेष दिन घट्यादि समझना चाहिए॥२१६-२१७॥

उदाहरण

परमदिन ३४ । ४४, इष्टदिन ३१ । ६, इसका अन्तर ३ । ३८, इसको ७ से गुण दिया, तो २१ । २६६ हुए। नीचे के अंक में ६० का भाग दिया, लब्धि ४ मिले, २१ में जोड़ दिया २५ । २६ हुआ। इसमें ५ का भाग दिया, तो ५ । ५ हुए। यह इष्टदिन की मध्याह्नच्छाया हुई। इसको इष्टच्छाया २३ । ० में घटाया, तो १७ । ५५ रहा। इसमें १२ जोड़ दिया, तो २९ । ५५ हुआ। इसको ६० से गुण दिया, तो १७९५ हुआ। फिर इष्टदिनमान ३१।६ को ६ से गुण दिया, तो १८६ । ३६ हुआ। इसको ६० से गुण दिया, तो ११६० हुआ। इसमें ३६ जोड़ दिया, तो १११६६ हुआ। इसमें हर के पिण्ड १७९५ का भाग दिया, तो लब्धि ६ घड़ी, शेष ४२६ को ६० से गुण दिया, तो २५५६० हुआ। इसमें हर का भाग दिया, तो लब्धि १४ पल मिले। यही ६ घड़ी १४ पल दिन शेष रहा।

छठा अध्याय समाप्त।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

सातवाँ अध्याय

सूर्यादिग्रहाणां फलानि

तत्रादौ सूर्यफलम्

लग्ने सूर्येऽतितीव्रश्च चञ्चलात्मा स्मरातुरः।
नेत्ररोगी पीडिताङ्गो जायते चारुणाकृतिः॥ १॥

जिस मनुष्य के लग्न में सूर्य हो वह मनुष्य अति तीव्र, चञ्चल आत्मावाला, काम से व्याकुल, नेत्ररोगी, पीड़ायुक्त अंगों तथा रक्तवर्ण की आकृतिवाला होता है॥ १॥

सूर्ये धने विवादी च बहुशत्रुश्च निर्धनः।
परापवादी सेर्ष्यश्च कृतघ्नश्च भवेन्नरः॥ २॥

जिसके दूसरे स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य विवाद करनेवाला, बहुत शत्रुओंवाला, निर्धन, दूसरों का अपवाद करनेवाला, ईर्षा-युक्त और कृतघ्न होता है॥ २॥

तृतीयस्थे दिवानाथे प्रसिद्धो रोगवर्जितः।
भूपतिश्च सुशीलश्च दयालुश्च भवेन्नरः॥ ३॥

जिसके तीसरे स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य प्रसिद्ध, रोगरहित, राजा, सुशील और दयालु होता है॥ ३॥

सूर्ये चतुर्थे दुर्बुद्धिः कृशाङ्गः सुखवर्जितः ।
अप्रभावो निर्गुणश्च दुष्टसंगी भवेन्नरः ॥ ४ ॥

जिसके चौथे स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य दुर्बुद्धि, दुर्बल अंगों-वाला, सुखरहित, प्रभावरहित, निठुर और दुष्टसंगी होता है ॥ ४ ॥

पञ्चमेऽर्के कोपयुक्तः कुरूपः शीलवर्जितः ।
कुसंगलब्धवृत्तिश्च गतमानश्च जायते ॥ ५ ॥

जिसके पाँचवें स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य क्रोधी, कुरूप, शीलविहीन, कुसंग से वृत्ति प्राप्त करनेवाला और मानरहित होता है ॥ ५ ॥

षष्ठे सूर्ये गतारिश्च ख्यातमानः सुखी शुचिः ।
शूरोऽनुरागी भूपालसम्मतश्च भवेन्नरः ॥ ६ ॥

जिसके छठे स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य शत्रुरहित, प्रसिद्ध, माननीय, सुखी, पवित्र, वीर, अनुरागी और राजा का मन्त्री होता है ॥६॥

सप्तमेऽर्के कुदारश्च दुष्टप्रीतोऽल्पपुत्रकः ।
गुह्यरोगी सपापश्च जातको हि प्रजायते ॥ ७ ॥

जिसके सातवें स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य दुष्ट स्त्रीवाला, दुष्टों से प्रीति करनेवाला, अल्प पुत्रोंवाला, गुह्यरोगी और पापयुक्त होता है ॥ ७ ॥

अष्टमस्थे दिवानाथे कृतघ्नो हीनमानसः ।
शत्रुदग्धो वृथागामी बन्धुहीनश्च जायते ॥ ८ ॥

जिसके आठवें स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य कृतघ्न, हीनमानस, शत्रुओं से पीड़ित, वृथा घूमनेवाला और बन्धुहीन होता है ॥ ८ ॥

नवमस्थे रवौ जातः कुकर्मा भाग्यवर्जितः ।
विद्याविवेकहीनश्च कुशीलश्च प्रजायते ॥ ९ ॥

जिसके नवें स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य कुकर्मी, भाग्यरहित, विद्या तथा ज्ञानहीन एवं कुशीलवाला होता है ॥ ९ ॥

दशमेऽर्के बन्धुहीनः कुकर्मा शीलवर्जितः।
स्त्रीचञ्चलो हीनतेजा हीनकोशश्च जायते ॥ १० ॥

जिसके दशवें स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य बन्धुविहीन, कुकर्मी, शीलरहित, चञ्चल स्त्रियोंवाला, तेजहीन और कोशविहीन होता है ॥ १० ॥

लाभे सूर्ये समुत्पन्नो नानालाभसमन्वितः।
सात्त्विको धार्मिको ज्ञानी रूपवानपि जायते ॥ ११ ॥

जिसके ग्यारहवें स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य अनेक लाभों से युक्त, सात्त्विक, धर्मवान्, ज्ञानी और रूपवान् होता है ॥ ११ ॥

व्यये सूर्ये नरो रोगी सत्त्वहीनो वृथाटनः।
असद्व्ययी पुत्रदारभक्तिहीनश्च जायते ॥ १२ ॥

जिसके बारहवें स्थान में सूर्य हो वह मनुष्य रोगी, सत्त्वहीन, वृथा पर्यटन करनेवाला, असत्कार्य में व्यय करनेवाला, पुत्र, स्त्री और भक्ति से हीन होता है ॥ १२ ॥

चन्द्रफलम्

लग्ने चन्द्रे जडः शुद्धः प्रसन्नो धनपूरितः।
स्त्रीवल्लभो धार्मिकश्च कृतघ्नश्च नरो भवेत् ॥ १३ ॥

जिसके लग्न में चन्द्रमा हो वह मनुष्य जड़, शुद्ध, प्रसन्न, धनी, स्त्री का प्यारा, धर्मवान् और कृतघ्न होता है ॥ १३ ॥

धने चन्द्रे धनैः पूर्णो नृपपूज्यो गुणान्वितः।
शास्त्रानुरागी सुभगो जनप्रीतश्च जायते ॥ १४ ॥

जिसके दूसरे स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य धनी, राजाओं में पूज्य, गुणी, शास्त्रों में प्रेम करनेवाला, सौभाग्यवान् और मनुष्यों से प्रीति करनेवाला होता है ॥ १४ ॥

तृतीये च निशानाथे धनविद्यादिभिर्युतः।
कफाधिकः कामुकश्च वंशमुख्योऽपि जायते ॥ १५ ॥

जिसके तीसरे स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य धन और विद्यादिकों करके युक्त, कफयुक्त, कामुक और वंश में मुख्य होता है ॥ १५ ॥

चतुर्थे च निशानाथे पुत्रदारसमन्वितः ।
धनी सुखी यशस्वी च विद्यावानपि जायते ॥ १६ ॥

जिसके चौथे स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य पुत्र और स्त्री से युक्त, धनी, सुखी, यशस्वी और विद्यावान् होता है ॥ १६ ॥

सुते चन्द्रे सुताढ्यश्च रोगी कामी भयानकः ।
कृषिमयै रसैर्युक्तो विनयी च भवेन्नरः ॥ १७ ॥

जिसके पाँचवें स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य पुत्रों से युक्त, रोगी, कामी, भयानक, खेती के रसों से युक्त और विनयी होता है ॥ १७ ॥

षष्ठे चन्द्रे वित्तहीनो मृदुकायोऽतिलालसः ।
मन्दाग्निस्तीक्ष्णदृष्टिश्च शूरोऽपि मनुजो भवेत् ॥१८॥

जिसके छठे स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य द्रव्यहीन, कोमल देहवाला, जिज्ञासु, मन्दाग्नि रोग से पीड़ित, तीक्ष्ण दृष्टिवाला और वीर होता है ॥ १८ ॥

चन्द्रे तु सप्तमे जातो दुःखी कुष्ठी च वञ्चकः ।
कृपणो बहुवैरी च जायते परदारकः ॥ १९ ॥

जिसके सातवें स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य दुःखी, कुष्ठ-रोगी, ठग, कृपण, बहुत शत्रुओंवाला और पराई स्त्रियों से प्रीति करनेवाला होता है ॥ १९ ॥

अष्टमे तारकानाथे क्षीणोऽल्पायुः सकष्टकः ।
अगल्भश्च कृशाङ्गश्च पापबुद्धिर्भवेन्नरः ॥ २० ॥

जिसके आठवें स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य दुःखी, थोड़ी आयुवाला, कष्टभोगनेवाला, ढीठ, दुर्बल अंगोंवाला और पापबुद्धि-वाला होता है ॥ २० ॥

धर्मे चन्द्रे चारुकान्तिः स्वधर्मनिरतः सदा।
वीतरोगः सतां श्लाघ्यः पापहीनश्च जायते ॥ २१ ॥

जिसके नवें स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य उत्तम कान्तिवाला, सदा अपने धर्म में निरत, रोगरहित, सज्जनों में निपुण और पापविहीन होता है ॥ २१ ॥

कर्मस्थाने सुधारश्मौ बहुभाग्यो महाधनी।
मनस्वी च मनोज्ञश्च राजमान्यश्च जायते ॥ २२ ॥

जिसके दशवें स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य बहुत भाग्यवाला, अति धनी, मनस्वी, मनोहर और राजाओं में पूज्य होता है ॥२२॥

लाभे चन्द्रे लाभयुक्तः प्रगल्भः सुभगो नरः।
सुमार्गगामी लज्जालुः प्रतापी भाग्यवान् भवेत् ॥ २३ ॥

जिसके ग्यारहवें स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य लाभयुक्त, ढीठ, ऐश्वर्यवान्, सुमार्गगामी, लज्जायुक्त, प्रतापी और भाग्यवान् होता है ॥ २३ ॥

व्यये चन्द्रे पापबुद्धिर्बहुभक्षी पराजितः।
कुलाधमो मद्यपो च विकारी जातको भवेत् ॥ २४ ॥

जिसके बारहवें स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य पापबुद्धिवाला, बहुत खानेवाला, हारनेवाला, कुल में अधम, मदिरा पीनेवाला और विकारी होता है ॥ २४ ॥

मङ्गलफलम्

भौमे लग्ने कुरूपश्च रोगी बन्धुविवर्जितः।
असत्यवादी निर्द्रव्यो जायते पारदारिकः ॥ २५ ॥

जिसके लग्न में मंगल हो वह मनुष्य कुरूप, रोगी, बंधुरहित, झूठ बोलनेवाला, द्रव्यहीन और परस्त्रीगामी होता है ॥ २५ ॥

धने कुजे धनैर्हीनः क्रियाहीनश्च जायते।
दीर्घसूत्री सत्यवादी पुत्रवानपि मानवः ॥ २६ ॥

जिसके धनस्थान में मंगल हो वह मनुष्य धनहीन, क्रियाहीन, दीर्घसूत्री, सत्यवादी और पुत्रवान् होता है ॥ २६ ॥

तृतीये भूसुते जातः प्रतापी शीलसंयुतः ।
रणे शूरो राजमान्यो भुवि ख्यातश्च जायते ॥ २७ ॥

जिसके तीसरे स्थान में मंगल हो वह मनुष्य प्रतापी, सुशील, रणशूर, राजाओं में पूज्य और संसार में प्रसिद्धि प्राप्त करनेवाला होता है ॥ २७ ॥

चतुर्थे भूसुते कृष्णः पित्ताधिक्योऽरिनिर्जितः ।
वृथाटनो हीनपुत्रो महाकामी च जायते ॥ २८ ॥

जिसके चौथे स्थान में मंगल हो वह मनुष्य श्यामवर्ण, अधिक पित्तवाला, शत्रुओं से हारनेवाला, वृथा घूमनेवाला, पुत्ररहित और महाकामी होता है ॥ २८ ॥

पञ्चमे च धरापुत्रे कुसन्तानः सदा रुजः ।
बन्धुवर्गे विरक्तश्च नरो बुद्धिविवर्जितः ॥ २६ ॥

जिसके पाँचवें स्थान में मंगल हो वह मनुष्य कुत्सित पुत्रोंवाला, सदा रोगी, भाइयों से विरक्त रहनेवाला और बुद्धिहीन होता है २६॥

षष्ठे भौमे शत्रुहीनो नानार्थः परिपूरितः ।
स्त्रीलालसः पुष्टदेहः शुद्धचित्तश्च जायते ॥ ३० ॥

जिसके छठे स्थान में मंगल हो वह मनुष्य शत्रुहीन, अनेक पदार्थों से युक्त, स्त्री में लालसा रखनेवाला, पुष्ट देहवाला और शुद्धचित्त होता है ॥ ३० ॥

सप्तमे भूमिपुत्रे च रुधिराक्तोऽपि कोपवान् ।
नीचसेवी वञ्चकश्च निष्ठुरोऽपि भवेन्नरः ॥ ३१ ॥

जिसके सातवें स्थान में मंगल हो वह मनुष्य रुधिर से परिपूर्ण, क्रोधी, नीचों की सेवा करनेवाला, ठग और निठुर होता है ॥ ३१ ॥

अष्टमे मङ्गले कुष्ठी स्वल्पायुः शत्रुपीडितः ।

अल्पद्रव्यः सरोगश्च निर्गुणोऽपि भवेन्नरः ॥ ३२ ॥

जिसके आठवें स्थान में मंगल हो वह मनुष्य कुष्ठरोगी, थोड़ी आयुवाला, शत्रुओं से पीड़ित, थोड़े द्रव्यवाला, रोगयुक्त और निर्गुणी होता है ॥ ३२ ॥

धर्मस्थे धरणीपुत्रे कुकर्मा गतपौरुषः ।
नीचानुरागी क्रूरश्च संकष्टश्च प्रजायते ॥ ३३ ॥

जिसके नवें स्थान में मंगल हो वह मनुष्य कुकर्मी, पौरुषहीन, नीचों से प्रीति करनेवाला, क्रूर और कष्टयुक्त होता है ॥ ३३ ॥

कर्मस्थाने महीपुत्रे शुभकर्मा शुभान्वितः ।
सुपुत्री स्यात्सुखी शूरो गर्विष्ठोऽपि भवेन्नरः ॥ ३४ ॥

जिसके दशवें स्थान में मंगल हो वह मनुष्य शुभकर्म करनेवाला, आनंदयुक्त, अच्छे पुत्रोंवाला, सुखी, शूर-वीर और अभिमानी होता है ॥ ३४ ॥

लाभे भौमे भूरिलाभो नानापकान्नभक्षकः ।
नीरोगो नृपमान्यश्च देवद्विजरतो भवेत् ॥ ३५ ॥

जिसके ग्यारहवें स्थान में मंगल हो वह मनुष्य अधिक लाभयुक्त, अनेक प्रकार के पकान्नों का भोजन करनेवाला, नीरोगी, राजाओं में पूज्य तथा देवता और ब्राह्मणों की भक्ति करनेवाला होता है ॥३५॥

असद्व्ययी व्यये भौमे नास्तिको निष्ठुरः शठः ।
बहुवादी विदेशे च सदा गच्छति मानवः ॥ ३६ ॥

जिसके बारहवें स्थान में मंगल हो वह मनुष्य बुरे कामों में द्रव्य ख़र्च करनेवाला, नास्तिक, कठोर, मूर्ख, बकवादी और सदा परदेश में रहनेवाला होता है ॥ ३६ ॥

बुधफलम्

लग्ने बुधे च गीतज्ञो निष्पापो भूपपूजितः ।
रूपज्ञानयशोयुक्तः प्रगल्भो,मानवो भवेत ॥ ३७ ॥

जिसके लग्न में बुध हो वह मनुष्य गान-विद्या का जाननेवाला, पापरहित, राजाओं में पूज्य, रूप, ज्ञान और यश करके युक्त और ढीठ होता है ॥ ३७ ॥

चन्द्रपुत्रे धनस्थाने धनधान्यादिपूरितः ।
शुभकर्मा सुखी नित्यं राजपूज्यश्च जायते ॥ ३८ ॥

जिसके दूसरे स्थान में बुध हो वह मनुष्य धन-धान्य से युक्त, शुभकर्म करनेवाला, सदा सुखी और राजाओं में पूज्य होता है ॥३८॥

तृतीये च बुधे जातः प्रशस्तो बन्धुमानितः ।
धर्मध्वजी यशस्वी च गुरुदेवार्चको भवेत् ॥ ३९ ॥

जिसके तीसरे स्थान में बुध हो वह मनुष्य श्रेष्ठ, बन्धुओं में पूज्य, धर्मध्वज, यशस्वी और गुरु तथा देवता का पूजक होता है ॥ ३९ ॥

चतुर्थे चन्द्रपुत्रे च बहुभृत्ययशोऽन्वितः ।
बहुवाक्यो भाग्ययुक्तः सत्यवादी च जायते ॥ ४० ॥

जिसके चौथे स्थान में बुध हो वह मनुष्य बहुत नौकरोंवाला यशस्वी, स्पष्टवक्ता, भाग्यवान् और सत्यवादी होता है ॥ ४० ॥

पञ्चमे रोहिणीपुत्रे पुत्रपौत्रसमन्वितः ।
सुबुद्धिः सत्त्वसम्पन्नः सुखी भवति मानवः ॥ ४१ ॥

जिसके पाँचवें स्थान में बुध हो वह मनुष्य पुत्र और पौत्रों से युक्त, सुंदर बुद्धिवाला और सुखी होता है ॥ ४१ ॥

षष्ठे बुधे नृशंसश्च विरोधी सर्वबन्धुषु ।
ईर्ष्याधिकः कामपरो विद्वानपि भवेन्नरः ॥ ४२ ॥

जिसके छठे स्थान में बुध हो वह मनुष्य क्रूर, सब भाइयों से विरोध रखनेवाला, अधिक ईर्षा करनेवाला, कामुक और विद्वान् होता है ॥ ४२ ॥

सप्तमे सोमपुत्रे च रूपविद्याधिको नरः ।
सुशीलः कामशास्त्रज्ञो नारीमान्यश्च जायते ॥ ४३ ॥

जिसके सातवें स्थान में बुध हो वह मनुष्य सुन्दर, विद्वान्, सुशील, काम-शास्त्र का जाननेवाला और स्त्रियों में पूज्य होता है ॥ ४३ ॥

बुधेऽष्टमे कृतघ्नश्च कुबुद्धिः पारदारिकः ।
कामातुरोऽसत्यवादी रोगयुक्तो भवेन्नरः ॥ ४४ ॥

जिसके आठवें स्थान में बुध हो वह मनुष्य कृतघ्न, कुबुद्धि, पराई स्त्री से भोग करनेवाला, कामातुर, असत्यवादी और रोगी होता है ४४॥

धर्मे बुधे धार्मिकश्च कूपारामादिकारकः ।
सत्यवादी च दान्तश्च जायते पितृवत्सलः ॥ ४५ ॥

जिसके नवें स्थान में बुध हो वह मनुष्य धर्मवान्, कुआँ और बग़ीचा आदि का बनानेवाला, सत्य बोलनेवाला, जितेन्द्रिय और पिता का प्यारा होता है ॥ ४५ ॥

दशमे च बुधे जातो धनधान्यसमन्वितः ।
बहुभाग्यश्च विजयी कान्तियुक्तश्च मानवः ॥ ४६ ॥

जिसके दशवें स्थान में बुध हो वह मनुष्य धनधान्यसम्पन्न, बहुत भाग्यवाला, विजयी तथा कान्तियुक्त होता है ॥ ४६ ॥

लाभे सौम्ये नित्यलाभो नीरोगश्च सदा सुखी ।
जनानुरागवृत्तिश्च कीर्त्तिमानपि जायते ॥ ४७ ॥

जिसके ग्यारहवें स्थान में बुध हो वह मनुष्य सदा लाभ उठानेवाला, रोगहीन, सदा सुखी, मनुष्यों से प्रीति करनेवाला और यशस्वी होता है ॥ ४७ ॥

बुधे व्यये व्ययी लोके रोगी बन्धुसमन्वितः ।
पापासक्तः पराधीनः परपक्षी च जायते ॥ ४८ ॥

जिसके बारहवें स्थान में बुध हो वह मनुष्य संसार में द्रव्य ख़र्च करनेवाला, रोगी, भाइयोंवाला, पाप में रत, पराधीन और शत्रुपक्ष का समर्थन करनेवाला होता है ॥ ४८ ॥

गुरुफलम्

लग्ने गुरौ सुशीलश्च प्रगल्भो रूपवानपि ।
नृपाभीष्टश्च नीरोगी ज्ञानी सौम्यश्च जायते ॥ ४९ ॥

जिसके लग्न में बृहस्पति हो वह मनुष्य सुशील, प्रगल्भ, रूपवान्, राजा से मान्य, रोगहीन, ज्ञानी और सौम्य होता है ॥ ४९ ॥

धने जीवे धनी लोकः कृतज्ञो बन्धुसंयुतः ।
गजाश्वमहिषीयुक्तः कान्तिमानपि जायते ॥ ५० ॥

जिसके दूसरे स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य धनी, कृतज्ञ, भाइयोंवाला, हाथी, घोड़ा और भैंसियोंवाला और कान्तियुक्त होता है ॥ ५० ॥

जीवे तृतीये तेजस्वी कर्मदक्षो जितेन्द्रियः ।
मित्राप्तसुखसम्पन्नस्तीर्थवार्त्ताप्रियो भवेत् ॥ ५१ ॥

जिसके तीसरे स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य तेजस्वी, कार्यकुशल, इन्द्रियों को जीतनेवाला, मित्रों से सुख प्राप्त करनेवाला तथा तीर्थों की वार्ता सुनकर प्रसन्न होनेवाला होता है ॥ ५१ ॥

सुखे जीवे सुखी लोके सुभगो राजपूजितः ।
विजितारिः कुलाध्यक्षो गुरुभक्तश्च जायते ॥ ५२ ॥

जिसके चौथे स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य संसार में सुखी, सौभाग्ययुक्त, राजाओं से पूजित, शत्रुओं का जीतनेवाला, कुल में मुख्य और गुरु का भक्त होता है ॥ ५२ ॥

सुते जीवे सुतैर्युक्तो धार्मिकः पण्डितः सुखी ।
शुद्धचेता दयायुक्तो विनयी च भवेन्नरः ॥ ५३ ॥

जिसके पाँचवें स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य पुत्रोंवाला, धर्मवान्, पण्डित, सुखी, शुद्ध चित्तवाला, दयायुक्त और नम्रतायुक्त होता है ॥ ५३ ॥

षष्ठे गुरौ विघ्नयुक्तो बहुशत्रुश्च निष्ठुरः।
उद्वेगी मतिहीनश्च कामुको जायते नरः ॥ ५४ ॥

जिसके छठे स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य विघ्नयुक्त, बहुत शत्रुओंवाला, निठुर, उद्वेगवाला, बुद्धिहीन और कामुक होता है ॥ ५४ ॥

सप्तमस्थे सुराचार्ये कामचित्तो महाबलः।
धनो दाता प्रगल्भश्च चित्रकर्मा च जायते ॥ ५५ ॥

जिसके सातवें स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य कामुक, महाबली, धनी, दाता, प्रगल्भ और चित्रकर्म करनेवाला होता है ॥ ५५ ॥

जीवेऽष्टमे सदा रोगी कृपणः शोकसंयुतः।
बहुवैरी कुकर्मा च कुरूपश्च भवेन्नरः ॥ ५६ ॥

जिसके आठवें स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य सदा रोगी, कृपण, शोकसंयुक्त, बहुत शत्रुओंवाला, कुकर्मी और कुरूप होता है ॥ ५६ ॥

धर्मे जीवे धर्मकर्त्ता साधुसङ्गी च शास्त्रवित्।
निरीहस्तीर्थसेवी च ब्रह्मज्ञश्च प्रजायते ॥ ५७ ॥

जिसके नवें स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य धर्मकार्य करनेवाला, साधुओं का संग करनेवाला, शास्त्र का जाननेवाला, चेष्टारहित, तीर्थ की सेवा करनेवाला और ब्रह्म का भी जाननेवाला होता है ॥ ५७ ॥

कर्मस्थिते सुराचार्ये पुण्यकीर्त्तिसुखान्वितः।
राजतुल्यः सुरूपश्च दयालुर्जायते नरः ॥ ५८ ॥

जिसके दशवें स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य पुण्य, यश और सुख से युक्त, राजाओं के समान, सुन्दर और दयावान् होता है ॥ ५८ ॥

लाभे गुरौ विवेकी स्याद्धस्त्यश्वादिधनैर्युतः ।
चञ्चलोऽपि सुरूपश्च गुणवानपि जायते ॥ ५९ ॥

जिसके ग्यारहवें स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य विवेकी, हाथी, घोड़ा आदि धन से युक्त, चञ्चल, सुन्दर और गुणवान् होता है ॥ ५९ ॥

व्यये बृहस्पतौ रोगी व्यसनी परकर्मकृत् ।
बन्धुवैरी नीचसेवी गुरुद्वेषी च जायते ॥ ६० ॥

जिसके बारहवें स्थान में बृहस्पति हो वह मनुष्य रोगी, परिश्रमी, परोपकारी, बन्धुओं से वैर रखनेवाला, नीचों की सेवा करनेवाला और गुरु से वैर करनेवाला होता है ॥ ६० ॥

शुक्रफलम्

लग्ने शुक्रे सुशीलश्च वित्तवानपि सुन्दरः ।
शुचिर्विद्वान् मनोज्ञश्च कृतज्ञश्च भवेन्नरः ॥ ६१ ॥

जिसके लग्न में शुक्र हो वह मनुष्य सुशील, द्रव्यवान्, सुन्दर, पवित्र, विद्वान्, मनोज्ञ और कृतज्ञ होता है ॥ ६१ ॥

धने शुक्रे धनी विद्वान् बन्धुमान्यो नृपार्चितः ।
यशस्वी गुरुभक्तश्च कृतज्ञश्च भवेन्नरः ॥ ६२ ॥

जिसके दूसरे स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य धनी, विद्वान्, भाइयों में पूज्य, राजाओं से पूजित, यशस्वी, गुरु का भक्त और कृतज्ञ होता है ॥ ६२ ॥

भार्गवे सहजे जातो धनधान्यसुतान्वितः ।
नीरोगी राजमान्यश्च प्रतापी चापि जायते ॥ ६३ ॥

जिसके तीसरे स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य धन, धान्य और पुत्रों करके युक्त, नीरोग, राजाओं में पूज्य और प्रतापी होता है ॥६३॥

सुखे शुक्रे सुखी विज्ञो बहुभार्यो धनान्वितः ।
ग्रामाधिपो यशस्वी स्याद्विवेकी च भवेन्नरः ॥ ६४ ॥

जिसके चौथे स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य सुखी, विद्वान्, बहुत स्त्रियोंवाला, बहुत धनी, गाँवों का स्वामी, यशस्वी और विवेकी होता है ॥ ६४ ॥

सुते शुक्रे समृद्धश्च सुरूपश्च सदोन्नतः ।
पुत्रकन्यापौत्रयुतः सुभगोऽपि भवेन्नरः ॥ ६५ ॥

जिसके पाँचवें स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य समृद्ध, सुरूप, सदा उन्नत, पुत्र, कन्या और पौत्रों करके युक्त और सौभाग्यवाला होता है ॥ ६५ ॥

षष्ठे शुक्रे भवेद्दम्भी जाड्यहानिभयान्वितः ।
दुःसङ्गी कलही तात द्वेषी चैव सदा नरः ॥ ६६ ॥

जिसके छठे स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य दम्भी, जड़, हानि और भय करके युक्त, दुष्ट संगवाला, लड़ाई करनेवाला और पिता का वैरी होता है ॥ ६६ ॥

सप्तमे भृगुपुत्रे च धनी दिव्याङ्गनायुतः ।
नीरोगः सुखसम्पन्नो बहुभाग्यः प्रजायते ॥ ६७ ॥

जिसके सातवें स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य धनी, सुन्दर, स्त्री-युक्त, नीरोग, सुखी और भाग्यवान् होता है ॥ ६७ ॥

अष्टमस्थे दैत्यपूज्ये सरोगः कलहप्रियः ।
वृथाटनी कार्यहीनो जनानां च प्रियो भवेत् ॥ ६८ ॥

जिसके आठवें स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य रोगी, लड़ाई-झगड़ों में प्रीति करनेवाला, वृथा घूमनेवाला, कार्यहीन और मनुष्यों में प्रिय होता है ॥ ६८ ॥

धर्मे शुक्रे धर्मपूर्णो ज्ञानवृद्धः सुखी धनी ।
नरेन्द्रमान्यो विनयी नराणां च प्रियः सदा ॥ ६९ ॥

जिसके नवें स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य धर्म से परिपूर्ण, ज्ञानी,

सुखी, धनी, राजाओं में पूज्य, नम्रतावाला और सदैव मनुष्यों में प्रिय होता है ॥ ६९ ॥

कर्मस्थिते भृगोः पुत्रे कर्मवान्निधिरत्नवान् ।
राजसेवी धार्मिकश्च जायते दयिताप्रियः ॥ ७० ॥

जिसके दशवें स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य कर्मवान्, निधि और रत्नों से युक्त, राजा की सेवा करनेवाला, धर्मवान् और स्त्री का प्यारा होता है ॥ ७० ॥

लाभे शुक्रे सदा लाभो यशस्वी च गुणान्वितः ।
धनी भोगी क्रियाशुद्धो जायते मानवोत्तमः ॥ ७१ ॥

जिसके ग्यारहवें स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य सदा लाभवाला, यशस्वी, गुणी, धनी, भोगी, क्रिया में शुद्ध और मनुष्यों में उत्तम होता है ॥ ७१ ॥

व्यये शुक्रे व्ययाढ्यश्च गुरुमित्रविरोधवान् ।
मिथ्यावादी बन्धुवर्गे गुणहीनोऽपि जायते ॥ ७२ ॥

जिसके बारहवें स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य अधिक व्यय करनेवाला, गुरुओं और मित्रों से विरोध रखनेवाला, भाइयों से झूठ बोलनेवाला और गुणहीन होता है ॥ ७२ ॥

शनिफलम्

लग्ने शनौ सदा रोगी कुरूपः कृपणो नरः ।
कुशीलः पापबुद्धिश्च शठश्च भवति ध्रुवम् ॥ ७३ ॥

जिसके लग्न में शनैश्चर हो वह मनुष्य सदा रोगी, कुरूप, कृपण, कुशील, पापबुद्धि और मूर्ख होता है ॥ ७३ ॥

धने मन्दे धनैर्हीनो वातपित्तकफातुरः ।
देहास्थिपित्तरोगश्च गुणैः स्वल्पोऽपि जायते ॥ ७४ ॥

जिसके दूसरे स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य धनहीन, वात,

पित्त और कफ से आतुर, देह में हाड़ और पित्त रोगवाला तथा थोड़े गुणोंवाला होता है ॥ ७४ ॥

छायात्मजे तृतीयस्थे प्रसन्नो गुणवत्सलः ।
शत्रुमर्दी नृणां मान्यो धनी शूरश्च जायते ॥ ७५ ॥

जिसके तीसरे स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य सदा प्रसन्न रहनेवाला, गुणवत्सल, शत्रुओं का मानमर्दन करनेवाला, मनुष्यों में पूज्य, धनी और वीर होता है ॥ ७५ ॥

सुखे मन्दे सुखैर्हीनो हृतार्थो बान्धवैर्नरः ।
गुणस्वभावो दुःसंगी कुजनैश्चावृतः शठः ॥ ७६ ॥

जिसके चौथे स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य सुखहीन, भाइयों द्वारा द्रव्यहीन होनेवाला, गुणी, कुसंगी, दुर्जनों से युक्त और मूर्ख होता है ॥ ७६ ॥

पुत्रे मन्दे पुत्रहीनः क्रियाकीर्त्तिविवर्जितः ।
हीनकोशो विरूपश्च मानवो भवति ध्रुवम् ॥ ७७ ॥

जिसके पाँचवें स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य पुत्रहीन, क्रिया और यश से विहीन, द्रव्यहीन और कुरूप होता है ॥ ७७ ॥

शत्रुभावस्थिते मन्दे शत्रुहीनो महाधनी ।
पशुपुत्रयशोयुक्तो नीरोगी जायते नरः ॥ ७८ ॥

जिसके छठे स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य शत्रुहीन, महाधनी, पशु, पुत्र, यश आदि से युक्त और नीरोग होता है ॥ ७८ ॥

कलत्रस्थे मित्रपुत्रे सकलत्रो रुजान्वितः ।
बहुशत्रुर्विवर्णश्च कृशश्च मलिनो भवेत् ॥ ७९ ॥

जिसके सातवें स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य स्त्रीसहित, रोगी, बहुत शत्रुओंवाला, कुरूप, दुर्बल और मलिन होता है ॥ ७९ ॥

क्रोधातुरोऽष्टमे मन्दे दरिद्रो बहुरोगवान् ।
मिथ्याविवादकर्त्ता स्याद्वातरोगी भवेन्नरः ॥ ८० ॥

जिसके आठवें स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य क्रोधातुर, दरिद्र, बहुत रोगों से युक्त, मिथ्या विवाद करनेवाला और वात-रोगी होता है ॥ ८० ॥

धर्मे मन्दे धर्महीनो विवेकी च रिपोर्वशः ।
नृशंसो जायते लोकः परदाररतः सदा ॥ ८१ ॥

जिसके नवें स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य धर्महीन, विवेकी, शत्रुओं के वश में रहनेवाला, झूठा और सदा पराई स्त्री में रत रहनेवाला होता है ॥ ८१ ॥

कर्मस्थाने सूर्यपुत्रे कुकर्मा धनवर्जितः ।
दयासत्यगुणैर्हीनश्चञ्चलोऽपि भवेन्नरः ॥ ८२ ॥

जिसके दशवें स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य कुकर्मी, धनहीन, दया, सत्य आदि गुणों से हीन और चञ्चल होता है ॥ ८२ ॥

छायात्मजे च लाभस्थे सर्वविद्याविशारदः ।
उष्ट्रगोमहिषैः पूर्णो राजमान्यः शुचिर्भवेत् ॥ ८३ ॥

जिसके ग्यारहवें स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य समस्त विद्याओं में निपुण, ऊँट, गौ और भैंसियों से परिपूर्ण, राजाओं से पूज्य और पवित्र होता है ॥ ८३ ॥

असद्व्ययी व्यये मन्दे कृतघ्नो वित्तवर्जितः ।
बन्धुवैरः कुवेषः स्याच्चञ्चलोऽपि नरः सदा ॥ ८४ ॥

जिसके बारहवें स्थान में शनैश्चर हो वह मनुष्य असत् कार्यों में ख़र्च करनेवाला, कृतघ्न, द्रव्यहीन, भाइयों से वैर रखनेवाला, कुवेष धारण करनेवाला और चञ्चल होता है ॥ ८४ ॥

सातवाँ अध्याय समाप्त ।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

आठवाँ अध्याय

विंशोत्तरीदशाप्रकारः *

अग्निभाज्जन्मभं यावद्गणयेन्नवभिर्भजेत् ।
शेषे दशा रचंभौराजीवार्किज्ञाः शिखी भृगुः ॥ १ ॥
रसाशास्वरधृत्यब्दाः षोडशैकोनविंशतिः ।
सूर्यादिवत्सराः प्रोक्ताः सप्तचन्द्रो मुनिर्नखाः ॥ २ ॥

कृत्तिका नक्षत्र से जन्मनक्षत्र पर्यन्त गिनकर ९ का भाग देने से जो शेष रहे वही आदि दशा होती है तथा क्रम से सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, राहु, बृहस्पति, शनि, बुध, केतु तथा शुक्र की

---

* बृहत्पाराशरी ग्रन्थ में चालीस प्रकार की महादशाओं का उल्लेख किया गया है । उनमें गौरी माहेश्वरी अथवा परमायुषी दशा का प्रचार कूर्माचल में देखा जाता है । अन्यत्र विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी तथा योगिनी दशाओं का प्रचार है । तदनुसार इस ग्रन्थ में इन्हीं चार दशाओं का विवरण मुख्यतया दिया गया है ।

दशा समझना चाहिए। दशावर्ष-संख्या क्रमशः सूर्य की ६ वर्ष, चन्द्रमा की १० वर्ष, मंगल की ७ वर्ष, राहु की १८ वर्ष, बृहस्पति की १६ वर्ष, शनि की १९ वर्ष, बुध की १७ वर्ष, केतु की ७ वर्ष तथा शुक्र की महादशा २० वर्ष की होती है ॥ १-२ ॥

भुक्तदशानयनम्

निजजन्मनि आदिमा दशा
जनिभस्येष्टघटीसमाहता।
सकलर्क्षघटीविभाजिता
जनिभुक्तादिदशा मता ततः ॥ ३ ॥

जन्मकालिक दशा की संख्या को जन्मनक्षत्र की इष्ट-घड़ी अर्थात् पलात्मक भयात से गुणन करे तथा सकलर्क्ष अर्थात् पलात्मक भभोग से भाग दे, तो भुक्त दशा निकल आती है ॥ ३ ॥

अन्तर्दशानयनम्

दशा दशाहता कार्या दशभिर्भागमाहरेत्।
लब्धाङ्काश्च मासाः स्युस्त्रिंशघ्ने च दिनानि च ॥ ४ ॥

दशा को दशा से गुणा करें, १० का भाग दे, जो लब्धि के अंक निकलें वे महीने होते हैं। शेष को ३० से गुणा करे तथा १० का भाग देने से जो लब्धि के अंक निकलें वे दिन होते हैं ॥ ४ ॥

उदाहरण

सूर्य की महादशा ६ वर्ष है, ६ को ६ से गुणा किया, तो ३६ हुए, उसमें १० का भाग देने से ३ लब्धि आई, वह महीने हैं। शेष ६ को ३० से गुणन किया, तो १८० हुए, उसमें १० का भाग देने से १८ लब्धि हुई, वह दिन हैं। इस प्रकार सूर्य की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा ३ महीने, १८ दिन हुई। इसी प्रकार चन्द्र आदि सब ग्रहों की अन्तर्दशा निकाल लेनी चाहिए।

विंशोत्तरीमहादशाचक्रम्

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्रह
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
कृ. उ.फा. उ.षा	रो. ह. श्र.	मृ. चि. ध.	आ. स्वा. श.	पुन. वि. पू.भा.	पुष्य अनु. उ.भा.	आश्ले. ज्ये. रे.	म. मू. अ.	पू.फा. पू.षा. भ.	नक्षत्र

विंशोत्तरीदशामध्ये सूर्यान्तराणि

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	मास
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	दिन

चन्द्रान्तराणि

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ग्रह
०	०	१	१	१	१	०	१	०	वर्ष
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भौमान्तरांश

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ग्रह
०	१	०	१	०	०	१	०	०	वर्ष
४	०	११	१	११	४	२	४	७	मास
२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०	दिन

राह्वन्तरांश

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	ग्रह
२	२	२	२	१	३	०	१	१	वर्ष
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	मास
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८	दिन

गुर्वन्तरांश

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ग्रह
२	२	२	०	२	०	१	०	२	वर्ष
१	६	३	११	८	९	४	११	४	मास
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	दिन

शनैश्चरान्तर्दशा

श.	बु०	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ग्रह
३	२	१	३	०	१	१	२	२	वर्ष
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	मास
३	९	९	०	१२	०	९	१६	१२	दिन

बुधान्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	ग्रह
२	०	२	०	१	०	२	२	२	वर्ष
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	मास
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	दिन

केत्वन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्रह
०	१	०	०	०	१	०	१	०	वर्ष
४	२	४	७	४	०	११	१	११	मास
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७	दिन

शुक्रान्तरदशा

शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्रह
३	१	१	१	३	२	३	२	१	वर्ष
४	०	८	२	०	८	२	१०	२	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

परमायुषीदशाप्रकारः

(अस्या विंशोत्तरीदशावद्वर्षसंख्या भवति)

प्रथमांशादिजातानां परमायुः प्रकीर्त्तितम् ।
द्वितीयस्यांशकस्यादौ शतमायुरुदाहृतम् ॥
समाशीतिस्तृतीयस्य षष्टिस्तुर्यस्य च स्मृतम् ॥ ५ ॥

जिसका जन्म नक्षत्र के प्रथम चरण में हो, तो उसकी परमायु १२० वर्ष की, दूसरे चरण में जन्म हो, तो उसकी परमायु १०० वर्ष की, तीसरे चरण में जन्म हो, तो उसकी परमायु ८० वर्ष की, चौथे चरण में जन्म हो, तो उसकी परमायु ६० वर्ष की होती है ॥ ५ ॥

दशाभुक्तभोग्यविचारः

नक्षत्रस्य गता नाड्यो वेदघ्नाश्च त्रिभाजिताः ।
लब्धं तु खार्कतः शोध्यं शेषमायुः स्फुटं भवेत् ॥ ६ ॥

नक्षत्र की गत नाड़ियों को ४ से गुणा करे, तीन से भाग दे, जो लब्धि हो उसको १२० में से घटा दे, शेष स्पष्ट आयु होती है ॥ ६ ॥

अन्तर्दशाप्रकारः

दशाब्दाः स्वायुषा गुण्याः सार्कभक्तात्समादिकम्।
दशामानं भवेदेवं दशान्तर्विदशादिकम् ॥ ७ ॥

दशा के वर्षों को स्पष्ट आयु से गुणा करे, उसमें १२० का भाग देने से वर्ष आदि निकल आते हैं। इस प्रकार महादशा निकल आती है। ऐसे ही अन्तर्दशा, विदशा आदि भी निकाल लेना चाहिए ॥ ७ ॥

अष्टोत्तरीदशाप्रकारः

आर्द्रा पुनर्वसुः पुष्य आश्लेषा च रवेर्दशा।
मघा पूर्वोत्तरा चैव चन्द्रस्य च दशा तथा ॥ ८ ॥
हस्तो विशाखा चित्रा च स्वाती भौमदशा स्मृता।
ज्येष्ठानुराधामूले च सौम्यस्य च दशा बुधैः ॥ ९ ॥
अभिजिच्छ्रवणः पूषा उषा चैव शनेर्दशा।
धनिष्ठा शततारा च पूर्वाभाद्रपदा गुरोः ॥ १० ॥
उभा पूषाश्विनी कालो राहोश्चैव दशा स्मृता।
कृत्तिका रोहिणी चोक्ता मृगः शुक्रदशा बुधैः ॥ ११ ॥
एषां भानां क्रमेणैव ज्ञेयाः सूर्यादिका दशाः।
क्रूरजा अशुभा प्रोक्ता शुभा स्यात्सौम्यखेटजा ॥ १२ ॥
सूर्यस्य रसवर्षाणि इन्दोः पञ्चदशैव च।
भौमस्य वसुवर्षाणि ऋषिचन्द्रौ बुधस्य च ॥ १३ ॥
मन्दस्य दश वर्षाणि गुरोश्चैकोनविंशतिः।
राहोर्द्वादश वर्षाणि शुक्रस्य चैकविंशतिः ॥ १४ ॥

जिस मनुष्य का जन्म आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा इन नक्षत्रों में हो, तो सूर्य की महादशा छः वर्ष की; मघा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी इन नक्षत्रों में जन्म हो, तो चन्द्रमा की महादशा पन्द्रह वर्ष की; हस्त, विशाखा, चित्रा और स्वाती इन नक्षत्रों

में जन्म हो, तो मंगल की महादशा आठ वर्ष की; ज्येष्ठा, अनुराधा और मूल इन नक्षत्रों में जन्म हो, तो बुध की महादशा सत्रह वर्ष की; अभिजित्, श्रवण, पूर्वाषाढ़ और उत्तराषाढ़ इन नक्षत्रों में जन्म हो, तो शनि की महादशा दश वर्ष की; धनिष्ठा, शतभिषा और पूर्वभाद्रपद इन नक्षत्रों में जन्म हो, तो बृहस्पति की महादशा उन्नीस वर्ष की; उत्तरभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी इन नक्षत्रों में जन्म हो, तो राहु की महादशा बारह वर्ष की तथा कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिर नक्षत्र में जन्म हो, तो शुक्र की महादशा इक्कीस वर्ष की होती है। क्रूर ग्रहों की महादशा में अशुभ फल तथा सौम्य ग्रहों की दशा में शुभ फल होता है * ॥ ८-१४ ॥

अष्टोत्तरीमहादशाचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	श.	बृ.	रा.	शु.	ग्रह
६	१५	८	१७	१०	१९	१२	२१	वर्ष
आर्द्रा	मघा	हस्त	अनु.	पू. षा.	ध.	उ.भा.	कृ.	नक्षत्र
पुन.	पू. फा.	चित्रा	ज्ये.	उ.षा.	श.	रे.	रो.	
पुष्य	उ.फा.	स्वा.	मू.	अभि.	पू.भा.	अश्वि.	मृ.	
आश्ले.	×	वि.	×	श्र.	×	भ.	×	

* भुक्त-भोग्य दशा निकालने की प्रक्रिया विंशोत्तरी दशा के अनुसार ही समझ लेना चाहिए।

अन्तर्दशानयनम्

महादशा स्वस्वदशाब्दनिघ्ना
भक्ता वसुव्योमकुभिः समाद्याः।
अन्तर्दशाः स्युर्गगनेचराणां
तद्देकभावो हि महादशा स्यात् ॥ १५ ॥

महादशा को ग्रह के वर्षों से गुणा करें, उसमें १०८ का भाग दें, तो वर्षमासदिनघट्यात्मक अन्तर्दशा निकल आती है ॥ १५ ॥

अष्टोत्तरीमहादशामध्ये सूर्यान्तराणि

सू०	चं०	मं०	बु०	श०	बृ०	रा०	शु०	ग्रह
०	०	०	०	०	१	०	१	वर्ष
४	१०	५	११	६	०	८	२	मास
०	०	१०	१०	२०	२०	०	०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

चन्द्रान्तराणि

चं०	मं०	बु०	श०	बृ०	रा०	शु०	सू०	ग्रह
२	१	२	१	२	१	२	०	वर्ष
१	१	४	४	७	८	११	१०	मास
०	१०	१०	२०	२०	०	०	०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

भौमान्तरदशा

मं०	बु०	श०	बृ०	रा०	शु०	सू०	चं०	ग्रह
०	१	०	१	०	१	०	१	वर्ष
७	३	८	४	१०	६	५	१	मास
३	३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	दिन
२०	२०	४०	४०	०	०	०	०	घटी

बुधान्तरदशा

बु०	श०	बृ०	रा०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रह
२	१	२	१	३	०	२	१	वर्ष
८	६	११	१०	३	११	४	३	मास
३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	३	दिन
२०	४०	४०	०	०	०	०	२०	घटी

शनैश्चरान्तरदशा

श०	बृ०	रा०	शु०	सू०	चं०	मं०	बु०	ग्रह
०	१	१	१	०	१	०	१	वर्ष
११	६	१	११	६	४	८	६	मास
३	३	१०	१०	२०	२०	२६	२६	दिन
२०	२०	०	०	०	०	४०	४०	घटी

गुर्वन्तराणि

बृ०	रा०	शु०	सू०	चं०	मं०	बु०	श०	ग्रह
३	२	३	१	२	१	२	१	वर्ष
४	१	८	०	७	४	११	६	मास
२	१०	१०	२०	२०	२६	२६	३	दिन
२०	०	०	०	०	४०	४०	२०	घटी

शन्यन्तराणि

रा०	शु०	सू०	चं०	मं०	बु०	श०	बृ०	ग्रह
१	२	०	१	०	१	१	२	वर्ष
४	४	८	८	१०	१०	१	१	मास
०	०	०	०	२०	२०	१०	१०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

शुक्रान्तराणि

शु०	सू०	चं०	मं०	बु०	श०	बृ०	रा०	ग्रह
४	१	२	१	३	१	३	२	वर्ष
१	२	११	६	३	११	८	४	मास
०	०	०	२०	२०	१०	१०	०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

अष्टोत्तरीदशाविचारे विशेषः

गुर्जरे कच्छसौराष्ट्रे पाञ्चाले सिन्धुपर्वते ।
देशेष्वष्टोत्तरी ज्ञेया प्रत्यक्षफलदायिनी ॥ १६ ॥

गुजरात, कच्छ, बिहार, पंजाब और सिन्धु इन देशों में अष्टोत्तरी दशा प्रत्यक्ष फल देनेवाली होती है ॥ १६ ॥

योगिनीदशाप्रकारः

मंगला पिङ्गला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ।
उल्का सिद्धा सङ्कटा च योगिन्योऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥
एकाभिवृद्ध्या वर्षाणि मङ्गलाप्रमुखासु च ॥ १७ ॥

मंगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा तथा संकटा ये आठ योगिनी कही गई हैं। मंगला आदि दशाओं में क्रमशः एक-एक वर्ष दशा बढ़ती जाती है। तात्पर्य यह कि मंगला का एक वर्ष, पिंगला के दो वर्ष, धान्या के तीन वर्ष, भ्रामरी के चार वर्ष, भद्रिका के पाँच वर्ष, उल्का के छः वर्ष, सिद्धा के सात वर्ष तथा संकटा दशा के आठ वर्ष होते हैं ॥ १७ ॥

मंगलादीनां स्वामिनः

चन्द्रः सूर्यो गुरुर्भौमो बुधो मन्दः कविस्तमः ॥ १८ ॥

मंगला के स्वामी चन्द्रमा, पिंगला के स्वामी सूर्य, धान्या के स्वामी बृहस्पति, भ्रामरी के स्वामी मंगल, भद्रिका के स्वामी बुध, उल्का के स्वामी शनैश्चर, सिद्धा के स्वामी शुक्र तथा संकटा दशा के स्वामी राहु होते हैं ॥ १८ ॥

योगिनीदशानयनम्

स्वर्क्षे पिनाकिनयनैः संयोज्यं वसुभिर्हरेत् ।
शेषेण योगिनी ज्ञेया शून्यपातेन संकटा ॥ १९ ॥

जन्म के नक्षत्र में ३ जोड़कर ८ का भाग देने से जो लब्धि मिले उसको छोड़ दे, जो शेष रहे वही पहली दशा होती है।

एक शेष रहे, तो मंगला, दो शेष रहे, तो पिंगला इत्यादि। यदि शून्य शेष रहे, तो संकटा की दशा होती है ॥ १९ ॥

योगिनीमहादशाचक्रम्

दशा	मंग०	पिं०	धा०	भ्राम०	भद्रि०	उल्का	सि०	सं०
वर्ष	१	२	३	४	५	६	७	८
स्वामी	चं०	सू०	बृ०	मं०	बु०	श०	शु०	रा०

योगिनीदशायामन्तर्दशाचक्राणि

मंगलान्तराणि		पिंगलान्तराणि		धान्यान्तराणि		भ्रामर्यन्तराणि	
दशा	दिन	दशा	दिन	दशा	दिन	दशा	दिन
मं०	१०	पिं०	४०	धा०	९०	भ्रा०	१६०
पिं०	२०	धा०	६०	भ्रा०	१२०	भ०	२००
धा०	३०	भ्रा०	८०	भ०	१५०	उ०	२४०
भ्रा०	४०	भ०	१००	उ०	१८०	सि०	२८०
भ०	५०	उ०	१२०	सि०	२१०	सं०	३२०
उ०	६०	सि०	१४०	सं०	२४०	मं०	४०
सि०	७०	सं०	१६०	मं०	३०	पिं०	८०
सं०	८०	मं०	२०	पिं०	६०	धा०	१२०

योगिन्यन्तराणि

भ्रामर्यन्तराणि		उल्कान्तराणि		सिद्धान्तराणि		संकटान्तराणि	
दशा	दिन	दशा	दिन	दशा	दिन	दशा	दिन
भ्रा०	२५०	उ०	३६०	सि०	४६०	सं०	६४०
उ०	३००	सि०	४२०	सं०	५६०	मं०	८०
सि०	३५०	सं०	४८०	मं०	७०	पिं०	१६०
सं०	४००	मं०	६०	पिं०	१४०	धा०	२४०
मं०	५०	पिं०	१२०	धा०	२१०	भ्रा०	३२०
पिं०	१००	धा०	१८०	भ्रा०	२८०	भ्र०	४००
धा०	१५०	भ्रा०	२४०	भ्र०	३५०	उ०	४८०
भ्रा०	२००	भ्र०	३०	उ०	४२०	सि०	५६०

योगिनीदशाफलानि

मंगलापिंगलयोः फलम्

मंगला मंगलानन्दयशोद्रविणदायिनी ।
पिंगला तनुते व्याधिं मनसो दुःखसम्भ्रमौ ॥ २० ॥

मंगला की दशा में मंगलकार्य, आनन्द, कीर्ति तथा धनलाभ होता है। पिंगला की दशा में व्याधि, मानसिक दुःख तथा चञ्चल-चित्त होता है ॥ २० ॥

धान्याभ्रामर्योः फलम्

धान्या धनसुहृद्बन्धुरुपसीमन्तिनीकरी ।
भ्रामरी जन्मभूमिघ्नी भ्रामयेत्सर्वतो दिशम् ॥ २१ ॥

धान्या की दशा में धन, मित्र, बान्धव तथा स्त्रियों का लाभ होता है। भ्रामरी की दशा में जन्मभूमि का हरण तथा सर्वदा विदेश में भ्रमण होता है ॥ २१ ॥

भद्रिकोल्कयोः फलम्

भद्रिका सुखसम्पत्तिविलासवशदायिनी ।
उल्का राज्यधनारोग्यहारिणी दुःखकारिणी ॥ २२ ॥

भद्रिका की दशा में सुख-सम्पत्ति तथा विलास होता है। उल्का की दशा में रोज़गार का नाश, धननाश, आरोग्यतानाश तथा गुप्तरोग होता है ॥ २२ ॥

सिद्धासंकटयोः फलम्

सिद्धा साधयसे कार्यं नृणां वै सुखदा भवेत् ।
संकटा संकटव्याधिमरणक्लेशकारिणी ॥ २३ ॥

सिद्धा की दशा में समस्त कार्य सिद्ध होते हैं तथा विशिष्ट सुख-भोग एवं ऐश्वर्य मिलता है। संकटा की दशा में विशेष कष्ट, मरण के समान क्लेश तथा धनादि का नाश होता है ॥ २३ ॥

महादशान्तर्दशाफलानि

सूर्यदशाफलम्

देशान्तरं च निजबन्धुवियोगदुःख-
मुद्वेगरोगभयचौरभवा च पीडा ।
पूर्वस्थितस्य निखिलस्य धनस्य नाशो
भानोर्दशागमनकाल इमे भवन्ति ॥ २४ ॥

जब सूर्य की दशा आती है, तो देशाटन, बन्धुवियोगजन्य दुःख,

चित्त में भ्रान्ति, रोग, चोरी तथा सञ्चित धन का नाश हो जाता है ॥ २४ ॥

चन्द्रदशाफलम्

हेमादिभूतिवरवाहनयानलाभाः
शत्रौ प्रतापबलवृद्धिपरम्परा च ।
इष्टान्नदानशयनासनभोजनानि
नूनं सदा शशिदशागमने भवन्ति ॥ २५ ॥

जब चन्द्रमा की दशा आती है, तो सुवर्ण आदि सम्पत्ति, उत्तम सवारी, शत्रुओं का पराजय, बलवत्ता, अन्नदान, उत्तम शय्या तथा अभीष्ट भोजन की प्राप्ति होती है ॥ २५ ॥

भौमदशाफलम्

भूपालचोरभयवह्निकृता च पीडा
सर्वाङ्गरोगभयदुःखसुदुःखता च ।
चिन्ताज्वरश्च बहुकष्टदरिद्रता च
नूनं सदा कुजदशागमने भवन्ति ॥ २६ ॥

जब मंगल की दशा आती है, तो राजा तथा चोर से भय, अग्नि से पीड़ा, समस्त शरीर में रोग, दुःख की अधिकता, मानसी चिन्ता, ज्वरपीड़ा तथा दरिद्रता होती है ॥ २६ ॥

राहुदशाफलम्

दीनो नरो भवति बुद्धिविहीनचिन्ता
सर्वाङ्गरोगभयदुःखसुदुःखता च ।
पापानि बन्धबहुकष्टदरिद्रयुक्तो
राहोर्दशागमनकाल इमे भवन्ति ॥ २७ ॥

जब राहु की दशा आती है, तो दुःख, बुद्धिभ्रम, मानसी चिन्ता, सर्वाङ्गरोग, भय, अनेक प्रकार के दुःख, पापवृद्धि, बन्धन, बहुत से कष्ट तथा दरिद्रता होती है ॥ २७ ॥

गुरुदशाफलम्

राज्याधिकारपरिवर्तितचित्तवृत्ति-
धर्माधिकारपरिपालनसिद्धिवृद्धिः ।
सद्विग्रहोऽपि धनधान्यसमृद्धता च
नूनं सदा गुरुदशागमने भवन्ति ॥ २८ ॥

जब बृहस्पति की दशा आती है, तो उस मनुष्य को राजा से अधिकार की प्राप्ति, धर्म के कार्य में वृद्धि, शरीर आरोग्य तथा धन-धान्य की वृद्धि होती है ॥ २८ ॥

शनिदशाफलम्

मिथ्यापवादवधबन्धनमर्थहानि-
र्मित्रे च बन्धुवचनेषु च युद्धबुद्धिः ।
सिद्धं च कार्यमपि यत्र सदा विनष्टं
नूनं सदा शनिदशागमने भवन्ति ॥ २९ ॥

जब शनि की दशा आती है, तो लोकापवाद, वध, बन्धन, धनहानि, मित्र तथा बन्धु के वचनों द्वारा युद्ध करने की बुद्धि और सिद्धकार्य का भी नाश हो जाता है ॥ २९ ॥

बुधदशाफलम्

दिव्याङ्गनामदनसंगमकेलिसौख्यं
नानाविलासमभिरागमनोभिरामम् ।
हेमादिरत्नविभवागमईशभक्ति-
र्नूनं भवेद्बुधदशागमने नराणाम् ॥ ३० ॥

जब बुध की दशा आती है, तो उस मनुष्य को उत्तम स्त्रियों के साथ संगम करने से सुख की प्राप्ति, अनेक प्रकार के विलास, प्रसन्नचित्तता, सुवर्ण, रत्न आदि का लाभ तथा ईश्वर में भक्ति होती है ॥ ३० ॥

केतुदशाफलम्

भार्यावियोगजनितं च शरीरदुःखं
द्रव्यस्य हानिरतिकष्टपरम्परा च।
रोगाश्च बन्धुकलहश्च विदेशिता च
केतोर्दशागमनकाल इमे भवन्ति ॥ ३१ ॥

जब केतु की दशा आती है, तो उस मनुष्य को स्त्रीवियोग-जन्य दुःख, द्रव्यहानि, कष्ट पर कष्ट, अनेक प्रकार के रोग, बन्धु-जनों से विरोध तथा परदेश में निवास होता है ॥ ३१ ॥

शुक्रदशाफलम्

आरामवृद्धिरपि सर्वशरीरवृद्धिः
श्वेतातपत्रधनधान्यसमाकुलं च।
आयुःशरीरसुतपौत्रसुखं नराणां
द्रव्यं च भार्गवदशागमने भवन्ति ॥ ३२ ॥

जब शुक्र की दशा आती है, तो उद्यान (बग़ीचा आदि) बनाना, शरीरसुख, छत्र, धन तथा धान्य की वृद्धि, पुत्र और पौत्रों से सुख तथा द्रव्य का लाभ होता है ॥ ३२ ॥

सूर्यादिमहादशासु शुभाशुभफलानि

सूर्यमहादशायां शुभाशुभफलम्

सूर्योत्कृष्टदशा करोति सुतधीप्रज्ञाधिकारोच्छ्रय-
ज्ञानार्थागमकीर्तिपौरुषसुखप्राप्तीश्वरानुग्रहान्।
भानोः पापदशा करोति विफलोद्योगार्थहान्यामयान्
राजक्षोभमहीशकोपजनकारिष्टाग्निबाधोदयान् ॥ ३३ ॥

जब सूर्य की अच्छी दशा होती है, तो पुत्रोत्पत्ति, अच्छे कार्यों में बुद्धि, ऊँचा अधिकार, ज्ञान, धन, कीर्त्ति, पराक्रम तथा सुख की प्राप्ति और उसके ऊपर ईश्वर का अनुग्रह होता है। जब सूर्य की पापदशा होती है, तो व्यापार में हानि, द्रव्य की हानि, रोग,

राजा से भय, पिता को अरिष्ट तथा अग्नि से पीड़ा होती है ॥३३॥

चन्द्रमहादशायां शुभाशुभफलम्

चन्द्रोत्कृष्टदशा करोति जननीश्रेयस्तडागादिकं
क्षेत्रारामगृहासनद्विजवरश्रीशोभनान्दोलिकाम् ।
इन्दोः पापदशान्नहीनकृपणानन्तार्थनाशामय-
प्रज्ञाहीनजुगुप्समातृमरणक्षोभातिशीतज्वरान् ॥ ३४ ॥

जब चन्द्रमा की श्रेष्ठ दशा आती है, तो जननीसुख, तालाब, खेत, बागीचा, मकान आदि का लाभ तथा धन की प्राप्ति होती है। जब चन्द्रमा की पापदशा आती है, तो भोजन में क्लेश, धननाश, रोग, बुद्धिभ्रम, माता की मृत्यु तथा शीतज्वर होता है ॥ ३४ ॥

भौममहादशायां शुभाशुभफलम्

भौमोत्कृष्टदशा करोति वसुधाप्राप्तिं धनस्यागमं
प्रज्ञास्वच्छमनःपराक्रमदधत्पारिक्षयान्वानुजान् ।
पापो भौम उतार्तिरुश्च कलहं चौराग्निबन्धव्रण-
मित्रक्षोणमहीशपीडनरुजः क्षोभदर्ति दास्यति ॥ ३५ ॥

जब मंगल की श्रेष्ठ दशा होती है, तो भूमि का लाभ, धन की प्राप्ति, स्वच्छचित्तता तथा पराक्रम होता है। जब मंगल की पाप-दशा होती है, तो दुःख, लोगों से कलह, चौरभय, अग्निभय, बन्धन, चोट, मित्रों में पीड़ा तथा राजा से भय होता है ॥ ३५ ॥

राहुमहादशायां शुभाशुभफलम्

राहूत्कृष्टदशा करोति सकलश्रेयोमहद्राज्यकृ-
द्धर्मार्थागमपुण्यतीर्थचलनज्ञानप्रभावोच्छ्रयान् ।
राहोः पापदशाहिभीतिविषभीसर्वाङ्गरोगार्तिकृ-
च्छस्त्राघातविरोधवृक्षपतनंनारातिपीडोदयान् ॥३६॥

जब राहु की श्रेष्ठ दशा होती है, तो कल्याण, राज्यलाभ, धर्म तथा धन की वृद्धि, तीर्थयात्रा, ज्ञान और पराक्रम होता है। जब

राहु की पापदशा होती है, तो सर्पभय, विषभय, भयंकर रोग, शस्त्र से चोट, विरोध, वृक्ष से गिरना तथा शत्रुओं की वृद्धि होती है ॥ ३६ ॥

गुरुमहादशायां शुभाशुभफलम्

जीवोत्कृष्टदशा करोति विपुलग्रामाधिकारात्मज-
श्रीसौभाग्यगुणाकराश्रितजनाद्यानन्दोलिकावैभवान् ।
जैव्या पापदशा महीश्वरभयाद्व्याधिं च धैर्यच्युतिं
धान्यानर्थमहीसुतार्तिजनकक्षोभाशनार्तिक्षयान् ॥३७॥

जब बृहस्पति की श्रेष्ठ दशा होती है, तो अनेक ग्रामों पर अधिकार, लक्ष्मी की प्राप्ति, आश्रित जनों का उपकार तथा वैभव होता है। जब बृहस्पति की पापदशा होती है, तो राजा से भय, व्याधि, चित्तभ्रम, भूमि तथा धन का नाश, पुत्र को रोग और भोजन मिलने में भी क्लेश होता है ॥ ३७ ॥

शनिमहादशायां शुभाशुभफलम्

मन्दोत्कृष्टदशा करोति विभवप्रज्ञानयज्ञादिक-
क्षेत्रग्रामपुरादिनायकबहुव्यापारदक्षोत्सुकान् ।
मन्दः पापविषप्रयोगधनहृद्देहार्तिव्यर्थोदयान्
राजक्रोधविरुद्धकार्यविफलोद्योगाङ्गपीडोदयान् ॥ ३८ ॥

जब शनि की श्रेष्ठ दशा होती है, तो विभव, ज्ञान, यज्ञ आदि होते हैं तथा क्षेत्र, ग्राम, नगर आदि का स्वामित्व और अनेक प्रकार के व्यापार होते हैं। जब शनि की पापदशा होती है, तो विष का प्रयोग, धनहानि, शरीर में पीड़ा, व्यापारहानि, राजपक्ष से हानि तथा विरुद्ध व्यापार होता है ॥ ३८ ॥

बुधमहादशायां शुभाशुभफलम्

सौम्योत्कृष्टदशा करोति वसनानन्दादिधान्योच्छ्रयान्
श्रेयः सौख्यगृहस्वबन्धुविजयप्राप्तीष्टवस्त्वागमान् ।

बौधी पापदशा विदेशगमनं क्षोभं स्वबन्धुक्षयं
प्रज्ञाहीनमतिं धनार्तिकलहक्षेत्रार्थनाशापदः ॥ ३९ ॥

जब बुध की श्रेष्ठ दशा होती है, तो वस्त्र आदि का लाभ, धान्य-प्राप्ति, कल्याण, आनन्द, घर का सुख, अपने बान्धुवों से विजय की प्राप्ति तथा अभीष्ट पदार्थों का लाभ होता है। जब बुध की पापदशा होती है, तो दूरदेश में गमन, चित्त की व्याकुलता, बन्धुओं का नाश, बुद्धि की हानि, धननाश, रोग, विरोध, क्षेत्र और धन का नाश तथा आपत्तियाँ होती हैं ॥ ३९ ॥

केतुमहादशायां शुभाशुभफलम्

केतूत्कृष्टदशा करोति विजयं क्रूरक्रियार्थागमं
म्लेच्छक्ष्मापतिलब्धभाग्यविभवप्रारम्भशत्रुक्षयान् ।
केतोः पापदशातिकष्टविफलानर्थक्रियायोगह-
च्छूलास्थिज्वरकम्पनद्विजजनद्वेषातिमूर्खक्रियाम् ॥४०॥

जब केतु की श्रेष्ठ दशा होती है, तो विजय, क्रूर कार्यों से धन की प्राप्ति, म्लेच्छ राजाओं से धनलाभ तथा शत्रुओं का नाश होता है। जब केतु की पापदशा आती है, तो अतिकष्ट, व्यापार में हानि, शूलरोग, हड्डियों में ज्वर, कम्प, ब्राह्मणों से द्वेष तथा मूर्खों का-सा व्यापार होता है ॥ ४० ॥

शुक्रमहादशायां शुभाशुभफलम्

शौक्री श्रेष्ठदशा करोति सुखसौभाग्योच्छ्रयान्दोलिका-
ऽष्टैश्वर्ययुतधर्मबुद्धिकनकारामाश्वगीतोत्सवान् ।
शौक्री पापदशा कलत्रभयकृन्नीचार्थहानिप्रदा
तिर्यग्जन्तुसमुत्थदोषविपुलस्त्रीवर्गरोगोद्भवान् ॥ ४१ ॥

जब शुक्र की श्रेष्ठ दशा होती है, तो सुख, विशिष्ट भाग्य, आठ प्रकार का ऐश्वर्य, धर्मबुद्धि, सुवर्ण, बाग़ीचा तथा घोड़ों का लाभ और गायन आदि उत्सव होते हैं। जब शुक्र की पापदशा होती है,

तो स्त्री को भय, नीच मनुष्यों द्वारा धनहानि, नीच मनुष्यों से दुःख तथा स्त्री को रोग होता है ॥ ४१ ॥

लग्नेशादिदशाफलम्

लग्नेशस्य दशाबलं बहुधनं वित्तेशितुः पञ्चतां
कष्टं वेति सहोदरालयपतेः पापं फलं प्रायशः ।
तुर्यस्वामिन आलयं किल सुताधीशस्य विद्या सुखं
रोगागारपतेररातिजभयं जायापतेः शोकताम् ॥४२॥

जब लग्नेश की दशा आती है, तो शरीर में बल तथा बहुत धन मिलता है। जब धनेश को दशा आती है, तो मृत्यु या कष्ट होता है। जब तृतीयेश की दशा आती है, तो प्रायः अशुभफल होता है। जब चतुर्थेश की दशा आती है, तो गृह का लाभ होता है। जब पञ्चमेश की दशा आती है, तो विद्या द्वारा सुख की प्राप्ति होती है। जब षष्ठेश की दशा आती है, तो शत्रुओं से भय होता है तथा जब सप्तमेश की दशा आती है, तो अनेक प्रकार के शोक होते हैं ॥ ४२ ॥

मृत्युं मृत्युपतेः करोति नियतं धर्मेशितुः सत्क्रियां
वित्तं राजपतेर्नृपाश्रयमथो लाभं हि लाभेशितुः ।
रोगं द्रव्यविनाशनं च बहुधा कष्टं व्ययेशस्य वै
पूर्वैरङ्गभृतामुदीरितमिदं तन्वादिभावेशजम् ॥४३॥

जब अष्टमेश की दशा आती है, तो मृत्यु होती है, जब धर्मेश की दशा आती है, तो अच्छे-अच्छे कार्य होते हैं, जब दशमेश की दशा आती है, तो राजपक्ष से लाभ होता है, जब लाभेश की दशा आती है, तो लाभ होता है तथा जब व्ययेश की दशा आती है, तो द्रव्य का नाश और बहुत कष्ट होता है ॥ ४३ ॥

केन्द्राधीश्वरकोणनायकदशाश्चान्तर्दशाः शोभनाः
सामान्याश्च धनत्रिलाभभवनाधीशग्रहाणां दशा ।

षष्ठाष्टव्ययभावनायकदशाः कष्टा भवेयुः सदा
नेतुर्लग्नमवेक्ष्य तत्तदधिपात्तत्तद्दशाभुक्तिषु ॥४४॥

केन्द्र या कोण के स्वामी की दशा या अन्तर्दशा उत्तम होती है, २।३।११ स्थानों के स्वामियों की दशा सामान्य होती है, ६।८।१२ स्थानों के स्वामियों की दशा सदा कष्टदायिनी होती है। तथा जातक के लग्न को देखकर पूर्वोक्त स्थानों के स्वामियों की दशा के भोग में पूर्वोक्त फल कहने चाहिए ॥ ४४ ॥

भ्रष्टस्य तुङ्गादवरोहि संज्ञा
मध्या भवेत्सा सुहृदुच्चभांशे।
आरोहिणी निम्नपरिच्युतस्य
नीचारिभांशेष्वधमा भवेत्सा ॥ ४५ ॥

जो ग्रह अपने उच्च स्थान से उतर जावे, तो उसकी दशा को अवरोहिणी कहते हैं तथा उसका फल मध्यम होता है। जो ग्रह अपने नीच स्थान से छूट जावे, तो उसकी दशा को आरोहिणी कहते हैं, उसका फल अधम होता है ॥ ४५ ॥

भाग्यव्ययाधिपत्वेन रन्ध्रेशो न शुभप्रदः।
स एव शुभसन्धाता लग्नाधीशोऽपि चेत्स्वयम्॥ ४६ ॥

भाग्य स्थान से बारहवें स्थान के स्वामी होने के कारण अष्टमेश का फल अच्छा नहीं होता है, परन्तु यदि वही लग्नेश भी हो, तो उसका फल शुभ होता है ॥ ४६ ॥

दशान्तर्दशाफलानि

धनाधिपः पापखगो यदि स्या-
च्छुन्यारभोगीन्द्रदिनेश्वराणाम् ।
अन्तर्दशायां धननाशमाहुः
पापान्विते तद्भवने तथैव ॥ ४७ ॥

यदि धनेश पापग्रह हो, उसकी महादशा हो, उसमें शनि,

मंगल, राहु अथवा सूर्य की अन्तर्दशा हो, तो धन का नाश होता है। यदि धनस्थान पापग्रह से युक्त हो, तब भी यही फल होता है ॥ ४७ ॥

पापग्रहाणामपहारकाले
पापग्रहस्यैव दशान्तराले।
भुक्त्यर्थमानात्मजसोदराणां
नाशं समायाति शुभैर्न दोषः ॥ ४८ ॥

यदि पापग्रह की महादशा में पापग्रह की अन्तर्दशा भी हो, तो भोग, धन, आदर, पुत्र तथा सहोदरों का नाश अर्थात् विशेष क्लेश होता है। यदि शुभग्रह हों, तो दोष नहीं होता है ॥ ४८ ॥

वित्ते शुभे शोभनखेचरेशे
तत्पाककाले धनलाभमेति।
शुभग्रहाणामपहारकाले
तथा भवेदात्मजवाग्विलासः ॥ ४९ ॥

यदि धनस्थान में शुभग्रह हो या धन स्थान का स्वामी शुभग्रह हो, तो उसकी दशा में धन का लाभ होता है। यदि उसमें शुभग्रह की अन्तर्दशा हो, तो पुत्र तथा वाणी का विलास होता है ॥ ४९ ॥

पापग्रहे विक्रमभावनाथे
पापान्विते पापवियच्चराणाम्।
अन्तर्दशायामनलास्त्रचौरै-
र्दुःखं समायाति शुभप्रदेऽपि ॥ ५० ॥

यदि तृतीय स्थान का स्वामी पापग्रह हो या तृतीय स्थान पापग्रह से युक्त हो, उसकी महादशा में पाप या शुभग्रह की अन्तर्दशा हो, तो अग्नि, अस्त्र या चोर से दुःख मिलता है ॥ ५० ॥

कलिप्रकोपानलचौरभूपै-
दुःखं मनोजाड्यमतीव कष्टम्।
सोत्थेशपापग्रहदायकाले
शुभेक्षिते तादृशमत्र नास्ति ॥ ५१ ॥

यदि तृतीयेश पापग्रह हो, तो उसकी दशा में कलह तथा क्रोध और अग्नि, चोर तथा राजा से दुःख मिलता है। एवं चित्त में व्याकुलता तथा अत्यन्त कष्ट मिलता है; परन्तु यदि शुभग्रह की दृष्टि हो, तो पूर्वोक्त दुष्ट फल नहीं होते हैं ॥ ५१ ॥

दुश्चिक्यभावाधिपदायकाले
सौम्येतराणामपहारकाले।
नाशं वदेत्तत्र सहोदराणां
भवेद्विरोधः सहजैर्विशेषात् ॥ ५२ ॥

यदि तृतीयेश की महादशा हो, पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो सहोदरों का नाश तथा विशेषतया भाइयों से विरोध होता है ॥५२॥

क्षेत्राधिपस्यैव शुभेतरस्य
पापग्रहाणामपहारकाले।
स्थानच्युतिं बन्धुविनाशमेति
नीचास्तमानामपहारकेऽपि ॥ ५३ ॥

यदि चतुर्थेश पापग्रह हो, उसकी महादशा हो, उसमें पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो स्थान का नाश तथा बान्धवों का नाश होता है। एवं नीचग्रह या अस्तंगत ग्रहों की अन्तर्दशा में भी यही फल होता है ॥ ५३ ॥

बुद्धिभ्रमं कुत्सितभोजनं च
पापग्रहाणां हि सुतेशकाले।
अन्तर्दशायां प्रवदेन्नराणां
शुभग्रहश्चेन्न तथा भवेत्तु ॥ ५४ ॥

यदि पञ्चमेश पापग्रह हो, उसकी महादशा हो, पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो बुद्धि में भ्रम तथा भोजन मिलने में भी क्लेश होता है; परन्तु जब शुभग्रह हों, तो पूर्वोक्त फल नहीं होता है ॥ ५४ ॥

राजाग्निचौरैर्व्यसनं व्रणेश-
दशाविपाके तु शुभेतराणाम् ।
अन्तर्दशायामपि कष्टमेति
प्रमेहगुल्मक्षयपित्तरोगैः ॥ ५५ ॥

यदि षष्ठेश की महादशा हो, उसमें पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो राजा, अग्नि तथा चोरों से दुःख एवं प्रमेह, फोड़ा, क्षय तथा पित्तरोगों से कष्ट प्राप्त होता है ॥ ५५ ॥

दारेशपापग्रहदायकाले
स्त्रिया विरोधो मरणं च वध्वाः ।
विदेशयानं च पुरीषमूत्र-
कृच्छ्रं भवेद्भूपतिकोपनं च ॥ ५६ ॥

यदि सप्तमेश पापग्रह हो, तो उसकी दशा में स्त्री से विरोध या स्त्री की मृत्यु, परदेश में गमन, मूत्रकृच्छ्र रोग तथा राजा का कोप होता है ॥ ५६ ॥

रन्ध्रेशकाले फणिनाथभौम-
शनैश्चराणामपहारकाले ।
आयुर्यशोवित्तविनाशनं च
दारात्मबन्धिवष्टसहोदराणाम् ॥ ५७ ॥

यदि अष्टमेश की महादशा हो, उसमें राहु या मंगल या शनि की अन्तर्दशा हो, तो आयु, यश, धन, स्त्री, मित्र, बान्धव तथा सहोदरों का नाश होता है ॥ ५७ ॥

स्थानच्युतिर्बन्धुविरोधता च
विदेशयानं सहजैर्विरोधः ।

भवेच्छुभेशस्य दशाविपाके
शनैश्चराराहिदिनाधिपानाम् ॥ ५८ ॥

यदि शुभग्रह की महादशा हो, उसमें शनि या मंगल या राहु या सूर्य की अन्तर्दशा हो, तो स्थानहानि, बन्धुविरोध, परदेशगमन तथा भाइयों से विरोध होता है ॥ ५८ ॥

कारागृहप्राप्तिरनेकदुःखं
दुःस्वप्नशोकानलदग्धदेहम् ।
कर्मेश्वरस्योत्तरभुक्तिकाले
पापग्रहाणामपकीर्तिमेति ॥ ५९ ॥

यदि कर्मेश की महादशा हो, उसमें पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो कारागृहप्राप्ति (जेल में जाना), अनेक प्रकार के दुःख, दुःस्वप्न तथा शोक से देह में ज्वाला उत्पन्न होती है ॥ ५९ ॥

दशाविशेषे त्वथ लाभपस्य
भुक्त्यन्तरे द्रव्यविनाशनं च ।
रव्यारभोगीन्द्रशनैश्चराणां
कार्यार्थकृच्छ्रं क्षितिपालकोपात् ॥ ६० ॥

यदि लाभेश की महादशा हो, उसमें सूर्य या मंगल या राहु या शनि की अन्तर्दशा हो, तो द्रव्य का नाश, व्यापार में क्लेश तथा राजा का प्रकोप होता है ॥ ६० ॥

व्ययेशदाये रविसूनुभुक्तौ
दिनेशभूम्यात्मजयोर्विरोधः ।
कलिक्षयौ मानधनक्षयौ च
राहोस्तु भुक्तावरिसर्पपीडा ॥ ६१ ॥

यदि व्ययेश की महादशा हो, उसमें शनि या सूर्य या मंगल की अन्तर्दशा हो, तो लोगों से विरोध, कलह तथा क्षय एवं धन और

मान की हानि होती है। यदि राहु की अन्तर्दशा हो, तो शत्रु या सर्प से भय होता है ॥ ६१ ॥

अन्योन्यषष्ठाष्टमदायकाले
स्थानच्युतिर्वा मरणं विशेषात् ॥ ६२ ॥

षष्ठेश या अष्टमेश की परस्पर महादशा या अन्तर्दशा हो, तो स्थानच्युति या मरण होता है ॥ ६२ ॥

षष्ठाष्टमव्ययेशानां दशा कष्टप्रदायिनी।
एषां भुक्तिर्हि कष्टा स्यान्मारकस्य दशा यदि ॥ ६३ ॥

यदि ६ । ८ । १२ स्थानों के स्वामियों की दशा आवे, तो कष्ट मिलता है। यदि मारकेश ग्रह की महादशा हो, पूर्वोक्त स्थानों के स्वामियों की अन्तर्दशा हो, तब भी कष्ट मिलता है ॥ ६३ ॥

यस्माद्व्ययगतो यस्तु तद्दशायां धनक्षयः।
यस्मात्त्रिकोणगाः पापास्तत्रात्मसमनाशनम् ॥ ६४ ॥

यदि महादशा या अन्तर्दशावाले ग्रह से व्यय तथा त्रिकोण में स्थित पापग्रह की महादशा या अन्तर्दशा हो, तो धन का नाश होता है या आत्मीय जन का विनाश हो जाता है ॥ ६४ ॥

जैमिन्यादिमतेन संक्षेपतो दशातत्त्वम्

राहुयुतस्य दशा नेष्टदा ॥ ६५ ॥

यदि राहु के साथ बैठे हुए ग्रह की दशा होती है, तो वह दशा अत्यन्त अनिष्टकारिणी होती है ॥ ६५ ॥

रन्ध्रगाङ्गेशस्य पाकेऽतिपीडा ॥ ६६ ॥

यदि लग्नेश अष्टमस्थान में हो, तो उसकी दशा में बहुत दुःख होता है ॥ ६६ ॥

दिग्बलोपेतस्य पाके महाप्रतिष्ठा स्वदिग्भागे ॥ ६७ ॥

यदि ग्रह दिग्बल से युक्त हो, तो उसकी दशा में बड़ी प्रतिष्ठा उसी दिशा में होती है जिस दिशा का वह स्वामी हो ॥ ६७ ॥

अन्योन्यषष्ठाष्टमगयोरन्तरे महाभयम् ॥ ६८ ॥

यदि दो ग्रह, परस्पर एक दूसरे से छठे या आठवें स्थान में स्थित हों, तो उनके दशान्तर में अति भय होता है ॥ ६८ ॥

पापपाके शुभान्तरे आदौ कष्टं ततः सुखम् ॥ ६६ ॥

यदि पापग्रह की महादशा हो, उसमें शुभग्रह की अन्तर्दशा हो, तो आदि में कष्ट तथा अन्त में सुख मिलता है ॥ ६९ ॥

शुभपाके पापान्तरे आदौ सुखं ततो भयम् ॥ ७० ॥

यदि शुभग्रह की महादशा हो, पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो आदि में सुख तथा अन्त में भय होता है ॥ ७० ॥

क्रूरग्रहदशायां च क्रूरस्यान्तर्दशा यदा ।
शत्रुयोगे भवेन्मृत्युर्मित्रयोगे च संशयः ॥ ७१ ॥

यदि क्रूरग्रह की महादशा हो, उसमें क्रूरग्रह की अन्तर्दशा हो, तो वे दोनों आपस में शत्रु हों, तो मृत्यु तथा परस्पर मित्र हों, तो जीवन में सन्देह होता है ॥ ७१ ॥

मंगलस्य दशायां च शनेरन्तर्दशा यदा ।
म्रियतेऽत्र चिरञ्जीवी का कथा स्वल्पजीविनाम् ॥ ७२ ॥

यदि मंगल की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो, तो चिरञ्जीवी की भी मृत्यु होती है, अल्पजीवी की तो कथा ही क्या है ॥ ७२ ॥

शस्ता शुभस्य निजभोच्चसुहृद्गृहांशे
कर्माङ्गलाभसहजाम्बुत्रिकोणगस्य ।
नेष्टा खलस्य रिपुनीचखलास्तगस्य
मृत्यन्तशत्रुमदवित्तगमृत्युपस्य ॥ ७३ ॥

यदि कर्म, लग्न, लाभ, पराक्रम, सुख तथा त्रिकोण में स्थित शुभग्रह हो और वह स्वगृही हो या उच्च का हो या मित्रक्षेत्री या

मित्र के नवांश का हो, तो उस ग्रह की दशा शुभ होती है; परन्तु जो ग्रह २। ८। १२। ६। ७ स्थानों में हो या अष्टमेश हो या शत्रु के घर का पापग्रह हो या नीच का हो या अस्तंगत हो, तो उस ग्रह की दशा शुभ नहीं होती है ॥ ७३ ॥

सुहृद्दशायां सुहृदन्तरस्था
शुभाशुभे वापि शुभस्य शस्ता।
रिपौ रिपोः पापखगे खलस्य
नेष्टान्यमिश्रा च पुरोक्तमूह्यम् ॥ ७४ ॥

यदि मित्रग्रह की महादशा में मित्रग्रह की अन्तर्दशा हो या शुभग्रह की महादशा में शुभग्रह की अन्तर्दशा हो, तो वह शुभ होती है; परन्तु जब शत्रुग्रह की महादशा में शत्रुग्रह की अन्तर्दशा हो या पापग्रह की महादशा में पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो शुभ नहीं होता है। यदि शुभ तथा पापग्रह या शत्रु तथा मित्रग्रहों की दशा तथा अन्तर्दशा मिश्रित हो, तो मिश्रित फल होता है ॥ ७४ ॥

लग्नस्याधिपतेः शत्रुर्लग्नस्यान्तर्दशागमः।
करोत्यकस्मान्मरणं सत्याचार्येण भाषितम् ॥ ७५ ॥

यदि लग्नेश की दशा में लग्नेश के शत्रु की अन्तर्दशा हो, तो अकस्मात् मृत्यु हो जाती है, यह सत्याचार्य का कथन है ॥ ७५ ॥

शुभफलदशायां तादृगेवान्तरात्मा
बहुजनयति पुंसां सौख्यमर्थागमं च।
कथितफलविपाकैस्तर्कयेद्वर्तमानां
परिणमति फलाप्तिः स्वप्नचिन्ता स्ववीर्यैः॥७६॥

यदि शुभग्रह की दशा हो, तो अन्तरात्मा प्रसन्न रहता है, अनेक प्रकार के सुख मिलते हैं एवं धन की प्राप्ति होती है। अशुभ दशा में विपत्ति होती है। इस प्रकार सुख-दुःख तथा स्वप्न आदि का

विचार कर लेने के बाद दशा का फल कहना चाहिए* ॥ ७६ ॥

अन्तर्दशाफलानि

रवेरन्तरे देवपूज्यो यदैव तथा चन्द्रभौमौ शुभाः स्युस्तथैव।
रिपोर्भीतिमर्थस्य हानिं सदैव प्रकुर्वन्ति चान्ये वियोगं तथैव ७७

सूर्य की महादशा में बृहस्पति या चन्द्रमा या मंगल की अन्तर्दशा शुभ होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में शत्रुभय, द्रव्यहानि तथा बन्धुवियोग होता है ॥ ७७ ॥

रजनिनाथदशान्तरगा यदा रविजराहुमहीसुतकेतवः।
भवति नैव सुखं दधते ग्रहा विजयलाभसुखानि तथेतरे ॥७८॥

चन्द्रमा की महादशा में शनि या राहु या मंगल या केतु की अन्तर्दशा हो, तो सुख नहीं मिलता है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में विजय-लाभ तथा सुख होता है ॥ ७८ ॥

---

* जिस ग्रह की दशा या अन्तर्दशा हो, तो वह ग्रह जिस भाव में बैठा हो या उस पर जिस ग्रह की दृष्टि हो, उस ग्रह का जैसा द्रव्य तथा धातु हो, जैसी प्रकृति हो इन सब बातों का विचार दशाफल कहने के पूर्व कर लेना चाहिए।

यदि पापग्रह की महादशा में पापग्रह की अन्तर्दशा हो, तो बड़ी विपत्ति होती है ; परन्तु उस समय यदि कोई बलवान् शुभग्रह मित्र के घर में बैठा हो या मित्रग्रह उसको देखे, तो पूर्वोक्त विपत्ति का नाश हो जाता है।

जिस ग्रह की महादशा हो उससे छठे, आठवें, बारहवें स्थानों में स्थित ग्रह की अन्तर्दशा शुभ नहीं होती है। अन्य स्थानों में स्थित शुभ ग्रह की महादशा तथा पापग्रह की अन्तर्दशा कष्टदायक होती है।

यदि पापग्रह क्रूर राशि में स्थित होकर छठे या आठवें स्थान में हो, शुक्र या सूर्य की उस पर दृष्टि हो, तो अपनी दशा में मृत्यु करता है।

दिवाकरश्चाथ निशाकरश्च
जीवोऽपि शं भूमिसुतान्तरस्थः ।
कुर्वन्ति शेषा बहुकष्टहानिं
रिपोर्भयं वित्तविनाशनं च ॥ ७९ ॥

मंगल की महादशा में सूर्य, चन्द्रमा तथा बृहस्पति की अन्तर्दशा शुभ होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में अनेक कष्ट, धनहानि, शत्रुभय तथा व्यापार में हानि होती है ॥ ७९ ॥

राहोरन्तर्दशायां यदि भवति गुरुर्भार्गवो वा बुधश्च
नित्यं सौख्यं धनाप्तिं वितरति बहुधा राजमानं तथैव ।
भौमो राहुश्च केतुर्विधुरथ रविर्मन्दगामी तथैव
सर्वे दुःखं वियोगं मरणमथ भयं द्रव्यहानिं च दद्युः ॥८०॥

राहु की महादशा में बृहस्पति या शुक्र या बुध की अन्तर्दशा हो, तो नित्य-सुख, धनलाभ तथा राजा से सम्मान प्राप्त होता है। यदि मंगल या राहु या केतु या चन्द्रमा या सूर्य या शनि का अन्तर हो, तो दुःख, वियोग, मृत्यु, भय तथा द्रव्यनाश होता है ॥ ८० ॥

वाचस्पतेरन्तरगो गुरुश्चे-
द्बुधोरविर्भूमिसुतस्तथेन्दुः ।
कुर्वन्ति सौख्यं धनधान्यवृद्धिं
दद्युःसदा दुःखमतः परे ये ॥ ८१ ॥

बृहस्पति की महादशा में बृहस्पति या बुध या सूर्य या मंगल या चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो, तो सुख तथा धनधान्य की वृद्धि होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में विपरीत फल होता है ॥ ८१ ॥

शनैश्चरस्यान्तरगो बुधश्च
गुरुः कविश्चैव शुभं प्रदद्युः ।
शेषास्तु सर्वे बहुदेहपीडां
रिपोर्भयं वित्तविनाशनं च ॥ ८२ ॥

शनि की महादशा में बुध या बृहस्पति या शुक्र की अन्तर्दशा शुभ होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में शरीरपीड़ा, शत्रुभय तथा धननाश होता है ॥ ८२ ॥

चन्द्रात्मजस्यान्तरगा हि भौम
इन्दुश्च केतुश्च मसैंहिकेयः ।
शुभप्रदा नैव शुभप्रदः शनी
रविर्गुरुर्दैत्यगुरुर्बुधश्च ॥ ८३ ॥

बुध की महादशा में मंगल या चन्द्रमा या केतु या राहु की अन्तर्दशा हो, तो अशुभ होती है। शनि या सूर्य या बृहस्पति या शुक्र या बुध की अन्तर्दशा में शुभ फल होता है ॥ ८३ ॥

केतोरन्तर्दशायां भवति च शुभदो देवपूज्यः सदैकः
केतुः शुक्रोऽर्कसूनू रविरथ च कुजः सैंहिकेयो बुधश्च ।
एते दुखं च शोकं नृपतिभयमथो द्रव्यहानिं विदेशं
नित्यङ्कुर्वन्ति चन्द्रो जनयति च सुखं दुःखसम्मिश्रितं च ८४॥

केतु का महादशा में केवल बृहस्पति की अन्तर्दशा सर्वदा शुभ फलदायिनी होती है। केतु, शुक्र, शनि, सूर्य, मंगल, राहु तथा बुध को अन्तर्दशा में दुःख, शोक, राजभय, द्रव्यहानि तथा विदेश-गमन आदि फल होते हैं। चन्द्रमा की अन्तर्दशा में सुख तथा दुःख दोनों होते हैं ॥ ८४ ॥

यदान्तरे दैत्यगुरोर्गुरुर्भवे-
च्छुभं तथा शुक्रबुधार्किमिस्तथा ।
अर्थस्य हानिं कलहं च रोगं
कुर्वन्ति चान्ये नृपतेर्भयं च ॥ ८५ ॥

शुक्र की महादशा में बृहस्पति या शुक्र या बुध या शनि की अन्तर्दशा अतिशुभफलकर्त्री होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में धनहानि, कलह, रोग तथा राजभय होता है ॥ ८५ ॥

दशाफलज्ञानार्थं दीप्ताद्यवस्थाः

दीप्तः स्वस्थश्च मुदितः शान्तो हीनोऽतिदुःखितः ।
विकलश्च खलः कोपी नवधा खेचरो भवेत् ॥ ८६ ॥
उच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वस्थः स्वे चातिमित्रभे ।
मुदितो मित्रभे शान्तः समभे हीन उच्यते ॥ ८७ ॥
शत्रुभे दुःखसंयुक्तो विकलः पापसंयुतः ।
खलः पराजितो ज्ञेयः कोपी स्यादर्कसंयुतः ॥ ८८ ॥

ग्रह उच्च का हो, तो दीप्त, स्वक्षेत्री हो, तो स्वस्थ, अतिमित्र के घर का हो, तो मुदित, मित्र के घर में हो, तो शान्त, सम के घर में हो, तो हीन, शत्रु के घर में हो, तो दुःखित, पापग्रह से युक्त हो, तो विकल, युद्ध में पराजित हो, तो खल तथा सूर्ययुक्त ग्रह हो, तो वे ग्रह कोपी कहलाते हैं ॥ ८६-८८ ॥

दीप्तादिग्रहदशाफलानि

दीप्तग्रहदशाफलम्

पाके प्रदीप्तस्य धराधिपत्य-
मुत्साहशौर्यं धनवाहनं च ।
स्त्रीपुत्रलाभं सुखबन्धुपूजां
क्षितीश्वरान्मानमुपैति विद्याम् ॥ ८९ ॥

जब दीप्त ग्रह की दशा होती है, तो वह मनुष्य भूमि का स्वामी होता है तथा उत्साह, शूरता, धन एवं वाहन का लाभ तथा स्त्री एवं पुत्र का लाभ और सुख की प्राप्ति तथा बन्धुओं से और राजा से सम्मान की प्राप्ति एवं विद्या का लाभ होता है ॥ ८९ ॥

१—दीप्त आदि अवस्थाओं का विवरण पृष्ठ ६६ में लिखा जा चुका है, तो भी यहाँ पर दशाफल के ज्ञानार्थ पुनः विशेष स्पष्टता की जा रही है ।

स्वस्थग्रहदशाफलम्

स्वस्थस्य खेटस्य दशाविपाके
स्वस्थो नृपाल्लब्धधनादिसौख्यम् ।
विद्यायशःप्रीतिमहत्त्वतां च
दारार्थभूम्यात्मजधर्ममेति ॥ ६० ॥

जब स्वस्थ ग्रह की दशा हो, तो स्वस्थचित्तता, राजा से धन आदि का लाभ, सुखप्राप्ति, विद्यालाभ, यश में प्रीति, बड़े अधिकार की प्राप्ति, स्त्री, धन, भूमि, पुत्र तथा धर्म का लाभ होता है ॥ ६० ॥

मुदितग्रहदशाफलम्

मुदान्वितस्यापि दशाविपाके
वस्त्रादिभूगन्धसुतार्थधैर्यम् ।
पुराणधर्मश्रवणादिगान-
दानादिनानाम्बरभूषणाप्तिम् ॥ ६१ ॥

जब मुदित ग्रह की दशा हो, तो वस्त्र, भूमि, सुगन्धित वस्तु, पुत्र, धन, धैर्य पुराणश्रवण, गायन तथा भूषण का लाभ होता है ॥६१॥

शान्तग्रहदशाफलम्

दशाविपाके सुखधैर्यमेति शान्तस्य भूपुत्रकलत्रमानम् ।
विद्याविनोदान्वितधर्मशास्त्रं बह्वर्थदेशाधिपपूज्यतां च ॥६२॥

जब शान्तग्रह की दशा आती है, तो सुख, धैर्य, भूमि, पुत्र तथा स्त्री से मान, विद्या के पढ़ने में और धर्मशास्त्र के विचार में दत्तचित्त-ता, बहुत धन की प्राप्ति तथा कीर्ति का प्रसार होता है ॥ ६२ ॥

हीनग्रहदशाफलम्

स्थानच्युतिर्बन्धुविरोधता च
हीनस्य खेटस्य दशाविपाके ।
जीवत्यसौ कुत्सितहीनवृत्त्या
त्यक्तो जनै रोगनिपीडितः स्यात् ॥ ६३ ॥

जब हीनग्रह की दशा आती है, तो स्थान का नाश, बन्धुओं से विरोध, कुत्सित तथा नीचवृत्ति से जीवन, लोगों द्वारा अपमानित होना तथा रोग होता है ॥ ९३ ॥

दुःखितग्रहदशाफलम्

दुःखान्वितस्यापि दशाविपाके
नानाविधं दुःखमुपैति नित्यम् ।
विदेशगो बन्धुजनैर्विहीन-
श्चौरादिभूपैर्भयमभ्युपन्नः ॥ ९४ ॥

जब दुःखित ग्रह की दशा आती है, तो अनेक प्रकार के दुःख, विदेश में निवास, बन्धुवियोग, चोर तथा राजा आदि से भय होता है ॥ ९४ ॥

विकलग्रहदशाफलम्

वैकल्यखेटस्य दशाविपाके
वैकल्यतां याति मनोविकारम् ।
पित्रादिकानां मरणं विशेषा-
त्स्त्रीपुत्रयानाम्बरचौरपीडाम् ॥ ९५ ॥

जब विकल ग्रह की दशा आती है, तो चित्त विकल, पिता आदि की मृत्यु, स्त्री, पुत्र तथा वाहनों को पीड़ा होती है ॥ ९५ ॥

दशाविपाके कलहं वियोगं
खलस्य खेटस्य पितुर्वियोगम् ।
शत्रु जनानां धनभूमिनाश-
मुपैति नित्यं स्वजनैश्च निन्द्यः ॥ ९६ ॥

जब खलग्रह की दशा आती है, तो लोगों से कलह, पिता से वियोग, लोगों से शत्रुता, धन तथा भूमि का नाश तथा इष्ट-मित्रों से निन्दा होती है ॥ ९६ ॥

कोपिग्रहदशाफलम्

कोपान्वितस्यापि दशाविपाके
पापाः समायान्ति बहुप्रकारैः।
विद्यायशःस्त्रीधनभूमिनाशं
मूत्रादिकृच्छ्रं त्वथ नेत्ररोगम् ॥ ९७ ॥

अब कोपीग्रह की दशा हो, तो अनेक प्रकार के दुःख, विद्या यश, स्त्री, धन तथा भूमि का नाश, मूत्रकृच्छ्र तथा नेत्ररोग होता है ॥९७॥

दशाफलकथनरीतिः

यवनो ग्रहचक्रस्य जन्मलग्नस्य नारदः।
गोचरस्य भृगुर्ब्रूते फलं गर्गो दशादिभिः ॥ ९८ ॥

यवनाचार्य के मत से ग्रहचक्र का फल बलवान् होता है। नारद के मत से जन्मलग्न का फल बलवान् होता है। शुक्राचार्य के मत से गोचर का फल बलवान् होता है। गर्गाचार्य के मत से दशाओं का फल बलवान् होता है ॥ ९८ ॥

उच्चादिग्रहस्य दशाफलम्

मित्रातिमित्रे धनपुत्रलाभः
स्वोच्चे स्वभे राज्यपदादिलाभः।
त्रिकोणगे वस्त्रवराङ्गनाप्ति-
र्बन्धो वधः स्यात्त्वधिशत्रुपाके ॥ ९९ ॥

मित्र या अतिमित्र की दशा हो, तो धन तथा पुत्र का लाभ, ग्रह उच्च का या अपने घर का हो, तो राज्यपदवी आदि का लाभ, ग्रह त्रिकोण में हो, तो उसकी दशा में वस्त्र तथा सुन्दर स्त्री का लाभ, अधिशत्रु की दशा में बन्धन तथा वध होता है ॥ ९९ ॥

मरणयोगः

रवितनयस्य दशायां क्षितिगस्यान्तर्दशा यदा स्यात्।
बहुकालजीविनामपि मरणं निःसंशयं वाच्यम् ॥ १०० ॥

शनि की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा हो, तो बहुत काल तक जीवित रहनेवाले की भी मृत्यु या मृत्यु के समान कष्ट होता है ॥१००॥

दशाफलसमयः

राशित्रिभागे यतमे ग्रहः स्या-
द्दशात्रिभागेऽपि फलं तु तस्मिन् ॥ १०१ ॥

राशि के तीन भाग दश-दश अंश के करे। उन तीन भागों में जिस भाग में ग्रह स्थित हो उसी भाग में दशा का फल भी होता है ॥ १०१ ॥

दशारिष्टभंगः

दशायां बलवान्खेटः शुभैर्वा संनिरीक्षितः ।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो ऽरिष्टभंगो भवेत्तदा ॥ १०२ ॥

दशा में जो बलवान् ग्रह हो, शुभग्रहों से दृष्ट हो, सौम्य या अधिमित्र ग्रह के वर्ग में हो, तो अरिष्ट का भंग करता है ॥ १०२ ॥

अष्टकवर्गाङ्कप्रकरणम् *

सूर्यस्याष्टकवर्गाङ्काः ४८

स्वादर्कः प्रथमायबन्धुनिधनद्व्याज्ञातपोद्यूनगो
वक्रात्स्वादिव तद्वदेव रविजाच्छुक्रात्स्मरान्त्यारिगः ।
जीवाद्धर्मसुतायशत्रुषु दशत्र्यायारिगः शीतगो-
स्तेष्वेवान्त्यतपःसुतेषु च बुधाल्लग्नात्सबन्ध्वन्त्यगः॥१०३॥

---

* संसार में असंख्य मनुष्य एक ही राशि में उत्पन्न होते हैं और भिन्न-भिन्न प्रकार के फल भोगते हुए देखे जाते हैं। यद्यपि ज्योतिर्विदोद्धारकों ने जन्मराशि से प्रत्येक राशि में गोचर के अनुसार ही फल का निर्देश किया है, तो भी ज्योतिःसंसार में शुभाशुभ फल का सूक्ष्म विचार अष्टकवर्ग द्वारा ही किया जाता है। अष्टकवर्ग की उपपत्ति के विषय में कहा गया है कि जन्म के समय जिस राशि में चन्द्रमा होता है वह राशि जन्मराशि कहलाती है। विचारणीय बात यह है कि जैसे चन्द्रमा एक ग्रह

सूर्य अपने अष्टकवर्गाङ्क में अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, नवें, दशवें तथा ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है, इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। चन्द्रमा अपने स्थान से तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। मंगल अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बुध अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे, नवें, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बृहस्पति अपने स्थान से पाँचवें, छठे, नवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शुक्र अपने स्थान से छठे, सातवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शनि अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है तथा इनसे अतिरिक्त

है वैसे ही लग्न को मिलाकर और भी तो सात ग्रह हैं। जिस प्रकार चन्द्रमा से जन्मराशि मानी जाती है उसी प्रकार अन्य ग्रहों की राशि से भी जन्मराशि मानी जानी चाहिए। इस प्रकार मनुष्य की आठ जन्म-राशियाँ मानी जाती हैं और उन्हीं के अनुसार शुभाशुभ फल का निर्देश भी किया जाता है। इन आठों राशियों के फल जोड़ लेने से अष्टकवर्ग-फल निकल आता है। अष्टकवर्ग में जो शुभाशुभ स्थान रक्खे गए हैं उन दोनों को परस्पर घटा देने से जिसका फल अधिक शेष रहता है, वही फल ग्रह का अपनी राशि से जान लेना चाहिए। यह टिप्पणी 'जातकाभरण' के अष्टकवर्ग के आधार पर लिखी गई है।

स्थानों में अशुभ रेखा देता है। तथा लग्न अपने स्थान से तीसरे, चौथे, छठे, दशवें ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है ॥१०३॥

सूर्यशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

सू०	च०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११	०	७	१०
८	०	८	१०	०	०	८	११
९	०	९	११	०	०	९	१२
१०	०	१०	१२	०	०	१०	०
११	०	११	०	०	०	११	०

सूर्यानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न
३	१	३	१	१	१	३	१
५	२	५	२	२	२	५	२
६	४	६	४	३	३	६	५
१२	५	१२	७	४	४	१२	७
०	७	१	८	७	५	०	८
०	८	०	०	८	८	०	९
०	९	०	०	१०	९	०	०
०	१२	०	०	१२	१०	०	०
०	०	०	०	०	११	०	०

चन्द्रस्याष्टकवर्गाङ्कचक्रम् ४१

लग्नात्षट्त्रिदशायगः सधनधीधर्मेषु चाराच्छशी
स्वात्सास्तादिषु साष्टसप्तसु रवेः षट्त्र्यायधीस्थो यमात्।
धीत्र्याथाष्टमकण्टकेषु शशिजाज्जीवाद्व्ययायाष्टगः
केन्द्रस्थश्च सितात्तु धर्मसुखधीत्र्यायास्पदानङ्गगः ॥१०४॥

चन्द्रमा अपने अष्टकवर्गाङ्क में अपने स्थान से पहले, तीसरे, छठे, सातवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है, इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। मंगल अपने स्थान से दूसरे, तीसरे, पाँचवें, छठे, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है, इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बुध अपने स्थान से पहले, तीसरे, चौथे, पाँचवें, सातवें आठवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है, इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बृहस्पति अपने स्थान से पहले, चौथे, सातवें, आठवें, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है, इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शुक्र अपने स्थान से तीसरे, चौथे, पाँचवें, सातवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है, इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शनि अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। लग्न अपने स्थान से तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। सूर्य अपने स्थान से तीसरे, छठे, सातवें, आठवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु देता है, इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है ॥ १०४ ॥

चन्द्रशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०
१	२	१	१	३	३	३	३
३	३	३	४	४	५	६	६
६	५	४	७	५	६	१०	७
७	६	५	८	७	११	११	८
१०	९	७	१०	९	०	०	१०
११	१०	८	११	१०	०	०	११
०	११	१०	१२	११	०	०	०
०	०	११	०	०	०	०	०

चन्द्रानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०
२	१	२	२	१	१	१	१
४	४	६	३	२	२	२	२
५	७	९	५	६	४	४	४
८	८	१२	६	८	७	५	५
९	१२	०	९	१२	८	७	९
१२	०	०	०	०	९	८	१२
०	०	०	०	०	१०	९	०
०	०	०	०	०	१२	१२	०

यथोदये चन्द्रमसः प्रकाशो दिगङ्गनानां मुखकैरवस्य ;
तथाष्टवर्गग्रहलग्नशुद्धौ कार्यस्य पुंसां भवतीह सिद्धिः ।

* जैसे चन्द्रोदय हो जाने से दिशाएँ प्रकाशित हो जाती हैं वैसे ही अष्टकवर्ग की शुद्धि होने से समस्त कार्यों की सिद्धि होती है ।

भौमस्याष्टकवर्गाङ्काः ३१

वक्रस्तूपचयेष्विनात्सतनयेष्वाद्याधिकेषूदया-
च्चन्द्राद्दिग्विफलेषु केन्द्रनिधनप्राप्त्यर्थगः स्वाच्छुभः ।
धर्मायाष्टमकेन्द्रगोऽर्कतनयाज्ज्ञात्षट्त्रिधीलाभगः
शुक्रात्षड्व्ययलाभमृत्युषु गुरोः कर्मान्त्यलाभारिषु ॥१०५॥

मंगल अपने अष्टकवर्गाङ्क में अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बुध अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बृहस्पति अपने स्थान से छठे, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शुक्र अपने स्थान से छठे, आठवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शनि अपने स्थान से पहले, चौथे, सातवें, आठवें नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। लग्न अपने स्थान से पहले, तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। सूर्य अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। चन्द्र अपने स्थान से तीसरे, छठे और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है ॥ १०५ ॥

मंगलशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०	चं०
१	३	६	६	१	१	३	३
२	५	१०	८	४	३	५	६
४	६	११	११	७	६	६	११
७	११	१२	१२	८	१०	१०	०
८	०	०	०	९	११	११	०
१०	०	०	०	१०	०	०	०
११	०	०	०	११	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

मंगलानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०	चं०
३	१	१	१	२	२	१	१
५	२	२	२	३	४	२	२
६	४	३	३	५	५	४	४
९	७	४	४	६	७	७	५
१२	८	५	५	१२	८	८	७
०	९	७	७	०	९	९	८
०	१०	८	९	०	१२	१२	९
०	१२	९	१०	०	०	०	१०
०	०	०	०	०	०	०	१२

* इसी ग्रन्थ के पृष्ट ५९० में उदाहरणार्थ एक कुण्डली 'बृहज्जातक' ग्रन्थ से उद्धृत की गई है। उसमें लग्नसहित प्रत्येक ग्रहों के स्थानों से गोचरकालिक मेष आदि प्रत्येक स्थानों में रहते हुए मंगल का शुभाशुभ

बुधस्याष्टकवर्गाङ्काः ४४

द्व्याद्यायाष्टतपःसुखेषु भृगुजात्सत्र्यात्मजेष्विन्दुजः
स्वाङ्गास्तेषुयमारयोर्व्ययरिपुप्राप्त्यष्टगो वाक्पतेः ।
धर्मायारिसुतव्ययेषु सवितुः स्वात्साद्यकर्मत्रिगः
षट्स्वायाष्टसुखास्पदेषु हिमगोः साद्येषु लग्नाच्छुभः ॥१०६॥

बुध अपने अष्टकवर्गाङ्क में अपने स्थान से पहले, तीसरे, पाँचवें, छठे, नवें, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बृहस्पति अपने स्थान से छठे, आठवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शुक्र अपने स्थान से पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शनि अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। लग्न अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। सूर्य अपने स्थान से पाँचवें, छठे, नवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। चन्द्र अपने स्थान से चौथे, पाँचवें, छठे, आठवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। मंगल अपने स्थान से

फल ज्ञात हो जायगा। मेष राशि में पाँच रेखाएँ और तीन बिन्दु हैं। पाँच में तीन घटा देने से दो रेखाएँ शेष रहेंगी। ऐसे योग में उत्पन्न पुरुष के लिये मेष का मङ्गल चौथाई अशुभ होगा।

पहले, दूसरे, चौथे, सातव, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है ॥ १०६ ॥

बुधशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०	चं०	मं०
१	६	१	१	१	५	४	१
३	८	२	२	२	६	५	२
५	११	३	४	४	९	६	४
६	१२	४	७	६	११	८	७
९	०	५	८	८	१२	१०	८
१०	०	८	९	१०	०	११	९
११	०	९	१०	११	०	०	१०
१२	०	११	११	०	०	०	११

बुधानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०	चं०	मं०
२	१	६	३	३	१	१	३
४	२	७	५	५	२	३	५
७	३	१०	६	७	३	५	६
८	४	१२	१२	९	४	७	१२
०	५	०	०	१२	७	९	०
०	७	०	०	०	८	१२	०
०	९	०	०	०	१०	०	०
०	१०	०	०	०	०	०	०

गुरोरष्टकवर्गाङ्का: ४६

दिक्स्वाद्याष्टमदायबन्धुषु कुजात्स्वांत्सप्तत्रिकेऽप्यङ्गिरा:
सूर्यात्सत्रिनवेषु धीस्वनवदिग्लाभारिगो भार्गवात् ।
जायायार्थनवात्मजेषु हिमगोर्मन्दात्त्रिषड्धीव्यये
दिग्धीषट्स्वसुखायपूर्वनवगो ज्ञात्सस्मरश्चोदयात् ॥१०७॥

बृहस्पति अपने अष्टकवर्गाङ्क में अपने स्थान से पहले, दूसर, तीसरे, चौथे. सातवें, आठवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनमे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शुक्र अपने स्थान से दूसरे, पाँचवें, छठे, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शनैश्चर अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। लग्न अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, पाँचवें, छठे, सातवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है सूर्य अपने स्थान से पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, सातवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। चन्द्रमा अपने स्थान से दूसरे, पाँचवें, सातवें, नवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। मंगल अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठव, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बुध अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, पाँचवें, छठे. नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है ॥ १०७ ॥

बृहस्पतेः शुभाष्टकवर्गाङ्कचक्रम् *

बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०	चं०	मं०	बु०
१	२	३	१	१	२	१	१
२	५	५	२	२	५	२	२
३	६	६	४	३	७	४	४
४	९	१२	५	४	९	७	५
७	१०	०	६	७	११	८	६
८	११	०	७	८	०	१०	९
१०	०	०	९	९	०	११	१०
११	०	०	१०	१०	०	०	११
०	०	०	११	११	०	०	०

बृहस्पतेरनिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०	चं०	मं०	बु०
५	१	१	३	५	१	३	३
६	३	२	८	६	३	५	७
९	४	४	१२	१२	४	६	८
१२	७	७	०	०	६	९	१२
०	८	८	०	०	८	१२	०
०	१२	९	०	०	१०	०	०
०	०	१०	०	०	१२	०	०
०	०	११	०	०	०	०	०

* गोचर में यदि गुरु, सूर्य आदि ग्रह दुष्ट स्थानों में स्थित हों, तो व्रतबन्ध, विवाहसंस्कार तथा अन्य अनेक संस्कार आदि के कार्य वर्जित होते हैं; परन्तु अष्टकवर्ग के अनुसार गुरु, सूर्य आदि के शुद्ध होने पर व्रतबन्ध, विवाह आदि संस्कार कर लेने में कोई विप्रतिपत्ति नहीं होती है।

शुक्रस्याष्टकवर्गाङ्काः ५२

लग्नादासुतलाभरन्ध्रनवगः सान्त्यः शशाङ्कात्सितः
स्वात्साङ्गेषुसुखत्रिधीनवदशा छिद्रास्तिगः सूर्यजात् ।
रन्ध्रारिव्ययगो रवेर्नवदशप्राप्त्यष्टधीस्थो गुरो-
र्ज्ञाद्धीत्र्यायनवारिगास्त्रिनवषट्पुत्रायसान्त्यः कुजात् १०८

शुक्र अपने अष्टकवर्गाङ्क में अपने स्थान से पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शनि अपने स्थान से तीसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। लग्न अपने स्थान से पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। सूर्य अपने स्थान से आठवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। चन्द्रमा अपने स्थान से पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। मंगल अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे, नवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बुध अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे, नवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बृहस्पति अपने स्थान से पाँचवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है॥ १०८॥

शुक्रशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्रम् *

शु०	श०	लग्न	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०
१	३	१	८	१	३	३	५
२	४	२	११	२	५	५	८
३	५	३	१२	३	६	६	९
४	८	४	०	४	९	९	१०
५	९	५	०	५	११	११	११
८	१०	८	०	८	१२	०	०
९	११	९	०	९	०	०	०
१०	०	११	०	११	०	०	०
११	०	०	०	१२	०	०	०

शुक्रानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

शु०	श०	लग्न	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०
६	१	६	१	६	१	१	१
७	२	७	२	७	२	२	२
१२	६	१०	३	१०	४	४	३
०	७	१२	४	०	७	७	४
०	१२	०	५	०	८	८	६
०	०	०	६	०	१०	१०	७
०	०	०	७	०	०	१२	१२
०	०	०	९	०	०	०	०
०	०	०	१०	०	०	०	०

* अष्टकवर्ग में सूर्य की बिन्दु-संख्या ४८, चन्द्र की ४९, मङ्गल की ३९, बुध की ५४, बृहस्पति की ५६, शुक्र की ५२ तथा शनैश्चर की बिन्दु-संख्या ३९ होती है। जिस राशि में लग्न का स्वामी बैठा हो

शनेरष्टकवर्गाङ्काः ३१

मन्दः स्वात्त्रिसुतायशत्रुषु शुभः साज्ञान्त्यगो भूमिजात्
केन्द्रायाष्टधनेष्विनादुपचयेष्वाद्ये सुखे चोदयात् ।
धर्मायारिदशान्त्यमृत्युषु बुधाच्चन्द्रात्त्रिषड्लाभगः
षष्ठायान्त्यगतः सितात्सुरगुरोः प्राप्त्यन्तधीशत्रुषु ॥१०६॥

शनि अपने अष्टक वर्गाङ्क में अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। लग्न अपने स्थान से पहले, तीसरे, चौथे, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है । सूर्य अपने स्थान से पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। चन्द्रमा अपने स्थान से तीसरे, छठे और ग्यारहवें स्थानो में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। मंगल अपने स्थान से तीसरे, पाँचवें, छठे, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बुध अपने स्थान से छठे, आठवें, नवें, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। बृहस्पति अपने स्थान से पाँचवें, छठे, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है। शुक्र अपने स्थान से छठे, ग्यारहवें और बारहवें स्थानों में शुभ बिन्दु तथा इनसे अतिरिक्त स्थानों में अशुभ रेखा देता है ॥ १०६ ॥

उससे बिन्दु गिने जाते हैं, और भिन्न-भिन्न राशियों में क्रम से रक्खे जाते हैं।

शनिशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

श०	लग्न	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०
३	१	१	३	३	६	५	६
५	३	२	६	५	८	६	११
६	४	४	११	६	९	११	१२
११	६	७	०	१०	१०	१२	०
०	१०	८	०	११	११	०	०
०	११	१०	०	१२	१२	०	०
०	०	११	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

शन्यनिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्रम्

श०	लग्न	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०
१	२	३	१	१	१	१	१
२	५	५	२	२	२	२	२
४	७	६	४	४	३	३	३
७	८	९	५	७	४	४	४
८	९	१२	७	८	५	७	५
९	१२	०	८	९	७	८	७
१०	०	०	९	०	०	९	८
१२	०	०	१०	०	०	१०	९
०	०	०	१२	०	०	०	१०

लग्न अपने स्थान से ३।६।१०।११ स्थानों में शुभ बिन्दु देता है। जन्मलग्न में सूर्य अपने स्थान से ३।४।६।१०।११।१२ स्थानों में शुभ बिन्दु देता है इत्यादि चक्र द्वारा स्पष्ट ज्ञात हो जायगा।

लग्नस्याष्टकवर्गाङ्काः ४९

ल०	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०
३	३	३	१	१	१	१	१
६	४	६	३	२	२	२	३
११	६	१०	६	४	४	३	४
१२	१०	११	१०	६	५	४	६
	११		११	८	६	५	१०
	१२			१०	७	८	११
				११	९	९	
					१०	११	
					११		

अष्टकवर्गविचारे विशेषः *

स्थानानि यानि प्रतिपादितानि
शुभानि चान्यान्यशुभानि नूनम्।
तयोर्वियोगादधिकं फलं य-
त्स्वराशितो यच्छति तद्ग्रहेन्द्रः ॥ ११० ॥

* 'बृहज्जातक' के नवें अध्याय में कहा भी है—

इति निगदितमिष्टं नेष्टमन्यद्विशेषा-
दधिकफलविपाकं जन्मभात्तत्र दद्युः।
उपचयगृहमित्रस्वोच्चगैः पुष्टमिष्टं
त्वपचयगृहनीचारातिगैर्नेष्टसम्पत् ॥

इस प्रकार जन्मकालिक सलग्न ग्रहस्थानों से गोचरकालिक प्रत्येक ग्रहों के कहे हुए स्थान शुभ और अशुभ होते हैं। उन्हीं शुभ या अशुभ स्थानों के अन्तर करने से जो विशेष अर्थात् शेष रहे उसी के अनुसार सब ग्रह शुभ या अशुभ फल देते हैं। अन्तर करने की रीति यह है कि शुभ स्थानों

अष्टकवर्ग के प्रकरण में कहे हुए उक्त श्लोकों द्वारा शुभ अङ्क गिना दिए गए हैं (अशुभ अंकों को भी चक्रों द्वारा स्पष्ट कर दिया गया है)। इनसे जो इतर स्थान हैं वे अशुभ होते हैं। शुभ और अशुभ के अन्तर से जो अधिक फल है उसको अपनी राशि से गृह का स्वामी देता है ॥ ११० ॥

अष्टकवर्गे बिन्दुरेखयोः संख्यानम्

(जातकाभरणे)

भुजङ्गवेदा नवसागराश्च नवाग्नयः सागरसायकाश्च ।
रसेषवो युग्मशरा नवत्रितुल्याः क्रमेणाष्टकवर्गलेखाः ॥१११॥

सूर्य की रेखाएँ ४८, चन्द्रमा की रेखाएँ ४९, मंगल की रेखाएँ ३९, बुध की रेखाएँ ५४, बृहस्पति की रेखाएँ ५६, शुक्र की रेखाएँ ५२, और शनैश्चर की रेखाएँ ३९ होती हैं। इनका उल्लेख अष्टकवर्ग में क्रमशः होता है ॥ १११ ॥

में बिन्दुओं का चिह्न और अशुभ स्थानों में रेखाओं का चिह्न लिखा जाता है। उन बिन्दुओं और रेखाओं को पृथक्-पृथक् जोड़कर उनका अन्तर करे, और आठों स्थानों में बिन्दु ही हों, तो पूर्ण शुभ फल और रेखा ही हों, तो पूर्ण अशुभ फल तथा न्यूनाधिक बिन्दु और रेखाओं के होने से न्यूनाधिक शुभ या अशुभ फल होता है। जो गोचरकालिक ग्रह जन्मकाल में लग्न या चन्द्रमा से उपचय अर्थात् तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थानों में हो या मित्र के स्थान में या स्वस्थान में या स्वोच्चस्थान में स्थित हो, तब जो शुभ फल देता है वह पूर्ण ही देता है और जो अपचय अर्थात् उपचय को छोड़ कहीं अन्यत्र स्थित हो या अपने नीचस्थान में या शत्रु के स्थान में स्थित हो, तब जो शुभ फल देता है वह पूर्ण नहीं देता है। तात्पर्य यह है कि शुभ स्थान में स्थित ग्रह अल्प अशुभ फल तथा अशुभ स्थान में स्थित ग्रह अल्प शुभ फल देता है।

अष्टकवर्गरेखानां संस्थापनम्

विलग्ननाथाश्रितराशितोऽत्र
भवन्ति रेखाः खलु यत्र यत्र ।
विलग्नतस्तत्र च तत्र राशौ
संस्थापनीयाः सुधिया क्रमेण ॥ ११२ ॥

लग्न का स्वामी जिस राशि में बैठा हो उससे बिन्दु गिने जाते हैं और भिन्न-भिन्न राशियों में क्रम से रक्खे जाते हैं ॥ ११२ ॥

प्रत्येकरेखाफलम्

क्लेशोऽर्थहानिर्व्यसनं समत्वं
शश्वत्सुखं नित्यधनागमश्च ।
सम्पत्प्रवृद्धिर्विपुलामलश्रीः
प्रत्येकरेखाफलमामनन्ति ॥ ११३ ॥

यदि एक बिन्दु हो, तो क्लेश ; दो बिन्दु हों, तो द्रव्य की हानि ; तीन बिन्दु हों, तो व्यसन (दुःख) ; चार बिन्दु हों, तो सम ; पाँच बिन्दु हों, तो निरन्तर सुख ; छः बिन्दु हों, तो धन-लाभ ; सात बिन्दु हों, तो सम्पत्ति की वृद्धि और आठ बिन्दु हों, तो विशेष धनलाभ होता है ॥ ११३ ॥

रेखाफलविचारे विशेषः

इत्येकखेटस्य हि संप्रदिष्टा
रेखायुतिश्चाखिलखेटरेखाः ।
अष्टद्विसंख्यास्तु समास्ततोऽपि
यथाधिकोनाः सदसत्फलास्ताः ॥ ११४ ॥

पूर्वोक्त श्लोक द्वारा एक ग्रह के बिन्दुओं का फल कहा गया है । इसी प्रकार समस्त ग्रहों के बिन्दुओं का योग करना चाहिए । यदि २८ बिन्दु हों, तो समफल ; २८ बिन्दुओं से न्यून बिन्दु हों, तो अशुभ फल तथा २८ बिन्दुओं से जितने अधिक बिन्दु होते

जाते हैं, उतना ही अधिक शुभ फल बढ़ता जाता है ॥ ११४ ॥

बिन्दुरेखान्यासचक्रम्

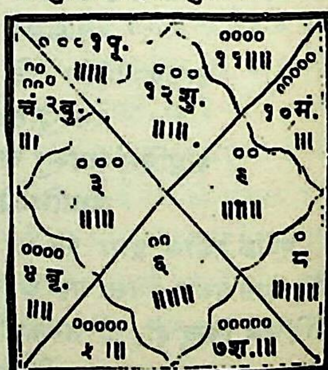
	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	लग्न	सू०	चं०	बिंदुयो०	रेखायो०
मे०	०	।	०	।	०	।	।	।	३	५
वृ०	।	।	०	।	०	०	।	।	३	५
मि०	।	।	०	।	०	।	०	।	३	५
क०	०	०	।	।	०	।	।	०	४	४
सिं०	०	।	।	०	०	०	०	।	५	३
कं०	।	०	।	।	।	।	०	।	२	६
तु०	०	०	।	०	०	।	।	०	५	३
वृ०	०	।	।	।	।	।	।	।	१	७
ध०	।	।	०	।	।	०	।	।	२	६
म०	०	।	।	०	०	०	०	।	५	३
कुं०	०	०	।	०	।	।	०	।	४	४
मी०	।	०	।	।	।	०	।	०	३	५

बृहज्जातकोक्तमुदाहरणम्

बिन्दुरेखारहिता कुण्डली



बिन्दुरेखासहिता कुण्डली



इस जन्मकालिक कुण्डली में स्थित सलग्न प्रत्येक ग्रहों के स्थानों से गोचरकालिक मेषादि प्रत्येक स्थानों में रहते हुए मंगल का शुभाशुभ फल नीचे लिखे हुए चक्र द्वारा स्पष्ट हो जाता है * ॥

* सूर्य आदि सात ग्रह प्रसिद्ध ही हैं उनमें लग्न को जोड़ देने से आठ हो जाते हैं। उनमें से भिन्न-भिन्न राशि में जाने से प्रत्येक ग्रह का जो शुभ या अशुभ फल होता है उसी का विचार अष्टकवर्ग द्वारा किया जाता है। मनुष्य के जन्म के समय जो ग्रह जिस राशि में स्थित हो उसका वही स्थान होता है। जो शुभ स्थान हों उनमें बिन्दु लिखे जाते हैं। जो अशुभ स्थान हों उनमें रेखाएँ लिखी जाती हैं। रेखाओं और बिन्दुओं को आपस में घटाकर जो अधिक शेष रहे उसी से फल का विचार करना चाहिए। जहाँ ८ बिन्दु हों वहाँ संपूर्ण फल शुभ, जहाँ ६ बिन्दु हों वहाँ शुभ फल चौथाई कम, जहाँ ४ बिन्दु हों वहाँ आधा शुभ फल, जहाँ दो बिन्दु हों वहाँ चौथाई शुभ फल, जहाँ ४ रेखाएँ और ४ बिन्दु हों वहाँ सम फल तथा जहाँ ८ रेखाएँ हों वहाँ अत्यन्त अशुभ फल होता है।

जन्मकाल में जो ग्रह जिस राशि में हो, तो उसी के अनुसार सब ग्रहों का अष्टकवर्ग बनाना चाहिए। तदनुसार बृहस्पति तथा सूर्य भी जिस राशि में होते हैं उसके अनुसार शुभाशुभ फल देते हैं। बृहस्पति से वर्षबिन्दु तथा सूर्य से मासबिन्दु होते हैं। यदि वर्ष का विचार करना हो, तो बृहस्पति के अष्टकवर्ग से करना चाहिए। यदि मास का विचार करना हो, तो सूर्य के अष्टकवर्ग से करना चाहिए। यदि दिनदशा का विचार करना हो, तो चन्द्रमा के अष्टकवर्ग से करना चाहिए।

लग्न या चन्द्रमा से ३।६।१०।११ स्थानों में या अपने घर में या उच्च में या मित्र के घर में या अपने त्रिकोण में जो ग्रह स्थित हो वह अष्टकवर्ग में पूर्ण फल देता है। जो ग्रह अपचय अर्थात् १।२।४।५।७।८।९।१२ स्थानों में स्थित हो या अपने नीच या शत्रु के स्थान में स्थित हो, तो पूर्ण शुभ फल नहीं देता है।

गोचरफलम्

तृतीये दशमे षष्ठे सदा सूर्यः शुभावहः ।
प्रथमे दशमे षष्ठे तृतीये सप्तमे शशी ॥ ११५ ॥
शुक्लपक्षे द्वितीयश्च पञ्चमो नवमः शुभः ।
त्रिषष्ठे दशमे भौमो राहुः केतुः शनिः शुभाः ॥ ११६ ॥
षष्ठेऽष्टमे द्वितीये च चतुर्थे दशमे बुधः ।
द्वितीये पञ्चमे जीवः सप्तमे नवमे शुभः ॥ ११७ ॥
विहाय शुक्रो दशमं षष्ठं च सप्तमं शुभः ।
एकादशे ग्रहाः सर्वे सर्वकार्येषु शोभनाः ॥ ११८ ॥
ग्रहाणां गोचरं ज्ञेयं फलं विज्ञैः शुभाशुभम् ॥ ११९ ॥

सूर्य ३।६।१० स्थानों में तथा चन्द्रमा १।३।६।७।१० स्थानों में शुभ होता है । शुक्लपक्ष में चन्द्रमा २।५।९ स्थानों में भी शुभ होता है । मंगल, राहु, केतु तथा शनि ३।६।१० स्थानों में, बुध २।४।६।८।१० स्थानों में, बृहस्पति २।५।७।९ स्थानों में तथा शुक्र ६।७।१० को छोड़कर अन्य स्थानों में शुभ होता है । ग्यारहवें स्थान में सब ग्रह सब कार्यों में शुभफलदायक होते हैं ॥ ११५-११९ ॥

सर्वे लाभगृहस्थितास्त्रिखरिपुस्वर्कौ मृगार्की त्रिषट्
प्राप्तौ त्र्यायखमन्मथारिषु शशी खास्तारिवर्ज्यं भृगुः ।
धीधर्मास्तधनेषु वाक्पतिररिस्वाष्टाम्बुखस्थो बुधः
श्रेष्ठो जन्मगृहादिगोचरविधौ विद्धो न चेत्स्याद्ग्रहैः॥१२०॥

यदि सूर्य आदि ग्रह अन्य ग्रहों से विद्ध न हों, तो ३।६।१० स्थानों में सूर्य एवं ३।६।११ स्थानों में मंगल तथा शनि और ३।६।७।१०।११ स्थानों में चन्द्रमा तथा ६।७।१० स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों में शुक्र एवं २।५।७।९ स्थानों में बृहस्पति तथा २।४।६।८।१० स्थानों में बुध शुभ होता है । लाभस्थान में सब ग्रह शुभ होते हैं ॥ १२० ॥

गोचरे प्रत्येकग्रहस्य फलम्

गोचरे सूर्यफलम्

गतिर्भयं श्रीर्व्यसनं च दैन्यं
शत्रुक्षयो यानमतीव पीडा ।
कान्तिक्षयोऽभीष्टवरिष्ठसिद्धि-
र्लाभो व्ययोऽर्कस्य फलं क्रमेण ॥ १२१ ॥

यदि गोचर में सूर्य पहले स्थान में हो, तो गति, दूसरे स्थान में हो, तो भय, तीसरे स्थान में हो, तो श्री, चौथे स्थान में हो, तो दुःख, पाँचवें स्थान में हो, तो दैन्य, छठे स्थान में हो, तो शत्रुनाश, सातवें स्थान में हो, तो गमन, आठवें स्थान में हो, तो अतिपीड़ा, नवें स्थान में हो, तो कान्तिक्षय, दशवें स्थान में हो, तो अभीष्टसिद्धि, ग्यारहवें स्थान में हो, तो लाभ तथा बारहवें स्थान में हो, तो व्ययरूप फल होता है ॥ १२१ ॥

गोचरे चन्द्रफलम्

सदन्नमर्थक्षयमर्थलाभं
कुक्षिव्यथां कार्यविघातलाभौ ।
वित्तं रुजं राजभयं सुखं च
लाभं च शोकं कुरुते मृगाङ्कः ॥ १२२ ॥

गोचर में चन्द्रमा पहले स्थान में हो, तो अच्छा अन्न, दूसरे स्थान में हो, तो धननाश, तीसरे स्थान में हो, तो धनलाभ, चौथे स्थान में हो, तो कुक्षिपीड़ा, पाँचवें स्थान में हो, तो कार्य में विघ्न, छठे स्थान में हो, तो लाभ, सातवें स्थान में हो, तो धन, आठवें स्थान में हो, तो रोग, नवें स्थान में हो, तो राजभय, दशवें स्थान में हो, तो सुख, ग्यारहवें स्थान में हो, तो लाभ तथा बारहवें स्थान में हो, तो शोकरूप फल होता है ॥ १२२ ॥

गोचरस्थचन्द्रफलविचारे विशेषः

पुत्रधर्मधनस्थस्य चन्द्रस्योक्तमसत्फलम् ।
कालक्षये परिज्ञेयं कलावृद्धौ तु साधु तत् ॥ १२३ ॥

यदि क्षीण चन्द्रमा हो, तो २।८।६ स्थानों में अशुभ फल तथा पूर्ण चन्द्रमा हो, तो अशुभ फल नहीं होता है अर्थात् २।८।६ स्थानों में भी शुभ फल होता है ॥ १२३ ॥

गोचरे मंगलफलम्

भीतिं क्षतिं वित्तमरिप्रवृद्धि-
मर्थप्रणाशं धनमर्थनाशम् ।
शस्त्रोपघातं च रुजं च रोगं
लाभं व्ययं भूतनयः करोति ॥ १२४ ॥

गोचर में मंगल पहले स्थान में हो, तो भय, दूसरे स्थान में हो, तो चोट, तीसरे स्थान में हो, तो धन, चौथे स्थान में हो, तो शत्रुवृद्धि, पाँचवें स्थान में हो, तो धननाश, छठे स्थान में हो, तो धनलाभ, सातवें स्थान में हो, तो धननाश, आठवें स्थान में हो, तो शस्त्र से चोट, नवें स्थान में हो, तो रोग, दसवें स्थान में हो, तो रोग, ग्यारहवें स्थान में हो, तो लाभ तथा बारहवें स्थान में हो, तो व्ययरूप फल होता है ॥ १२४ ॥

गोचरे बुधफलम्

बन्धं धनं वैरिभयं धनाप्तिं
पीडां स्थितिं पीडनमर्थलाभम् ।
खेदं सुखं लाभमथार्थनाशं
क्रमात्फलं यच्छति सोमसूनुः ॥ १२५ ॥

गोचर में बुध पहले स्थान में हो, तो बन्धन, दूसरे स्थान में हो, तो धनलाभ, तीसरे स्थान में हो, तो शत्रुभय, चौथे स्थान में हो, तो धनलाभ, पाँचवें स्थान में हो, तो पीड़ा, छठे स्थान में

हो, तो स्थिति, सातवें स्थान में हो, तो पीड़ा, आठवें स्थान में हो, तो धनलाभ, नवें स्थान में हो, तो खेद, दशवें स्थान में हो, तो सुख, ग्यारहवें स्थान में हो, तो लाभ, बारहवें स्थान में हो, तो धननाश होता है ॥ १२५ ॥

गोचरे गुरुफलम्

भीतिं वित्तं पीडनं वैरिवृद्धिं
सौख्यं शोकं राजमानं च रोगम् ।
सौख्यं दैन्यं मानवृद्धिं च पीडां
दत्ते जीवो जन्मराशेः सकाशात् ॥ १२६ ॥

गोचर में बृहस्पति पहले स्थान में हो, तो भय, दूसरे स्थान में हो, तो धन, तीसरे स्थान में हो, तो पीड़ा, चौथे स्थान में हो, तो शत्रुवृद्धि, पाँचवें स्थान में हो, तो सुख, छठे स्थान में हो, तो शोक, सातवें स्थान में हो, तो राजमान, आठवें स्थान में हो, तो रोग, नवें स्थान में हो, तो सुख, दशवें स्थान में हो, तो दुःख, ग्यारहवें स्थान में हो, तो मानवृद्धि तथा बारहवें स्थान में हो, तो पीड़ा होती है ॥ १२६ ॥

गोचरे शुक्रफलम्

रिपुक्षयं वित्तमतीव सौख्यं
वित्तं सुतप्रीतिमरातिवृद्धिम् ।
शोकं धनाप्तिं वरवस्त्रलाभं
पीडां स्वमर्थं च ददाति शुक्रः ॥ १२७ ॥

गोचर में शुक्र पहले स्थान में हो, तो शत्रुनाश, दूसरे स्थान में हो, तो धनलाभ, तीसरे स्थान में हो, तो, अत्यन्त सुख, चौथे स्थान में हो, तो धनप्राप्ति, पाँचवें स्थान में हो, तो पुत्र-प्रीति, छठे स्थान में हो, तो शत्रुवृद्धि, सातवें स्थान में हो, तो शोक, आठवें स्थान में हो, तो धन की प्राप्ति, नवें स्थान में हो,

तो वस्त्रलाभ, दशवें स्थान में हो, तो पीड़ा, ग्यारहवें तथा बारहवें स्थान में हो, तो धन की प्राप्ति होती है ॥ १२७ ॥

गोचरे शनिफलम्

भ्रंशं क्लेशं शं च शत्रुप्रवृद्धिं
पुत्रासौख्यं सौख्यवृद्धिं च दोषम्।
पीडां सौख्यं निर्धनत्वं धनाप्तिं
नानानर्थं भानुसूनुस्तनोति ॥ १२८ ॥

गोचर में शनि पहले स्थान में हो, तो स्थानहानि, दूसरे स्थान में हो, तो क्लेश, तीसरे स्थान में हो, तो सुख, चौथे स्थान में हो, तो शत्रुवृद्धि, पाँचवें स्थान में हो, तो पुत्रदुःख, छठे स्थान में हो, तो सुखवृद्धि, सातवें स्थान में हो, तो दोष, आठवें स्थान में हो, तो पीड़ा, नवें स्थान में हो, तो सुख, दशवें स्थान में हो, तो धनहानि, ग्यारहवें स्थान में, हो, तो धनलाभ तथा बारहवें स्थान में हो, तो अनेक प्रकार के अनर्थ होते हैं ॥ १२८ ॥

गोचरे राहुफलम्

हानिं नैःस्वं स्वं च वैरं च शोकं
वित्तं वादं पीडनं चापि पापम्।
वैरं सौख्यं द्रव्यहानिं प्रकुर्या-
द्राहुः पुंसां गोचरे केतुरेवम् ॥ १२९ ॥

गोचर में राहु पहले स्थान में हो, तो हानि, दूसरे स्थान में हो, तो निर्धनता, तीसरे स्थान में हो, तो धनलाभ, चौथे स्थान में हो, तो वैर, पाँचवें स्थान में हो, तो शोक, छठे स्थान में हो, तो धन, सातवें स्थान में हो, तो विवाद, आठवें स्थान में हो, तो पीड़ा, नवें स्थान में हो, तो पाप, दशवें स्थान में हो, तो वैर, ग्यारहवें स्थान में हो, तो सुख तथा बारहवें स्थान में हो, तो

द्रव्यहानि होती है। केतु का भी यही फल जान लेना चाहिए ॥ १२९ ॥

गोचरे वेधः

सूर्यो रसान्त्ये खयुगेऽग्निनन्दे
शिवाद्वयोर्भौमशनी तमश्च।
रसांकयोर्लाभशरे गुणान्त्ये
चन्द्रोऽम्बराब्धौ गुणनन्दयोश्च ॥ १३० ॥
लाभाष्टमे चाद्यशरे रसान्त्ये
नगद्वये ज्ञो द्विशरेऽब्धिरामे।
रसांकयोर्नागविधौ स्वभागे
लाभव्यये देवगुरुः शराब्धौ ॥ १३१ ॥
द्व्यन्त्ये नवांशेऽद्रिगुणे शिवाह्नौ
शुक्रः कुनागे द्विनगेऽग्निरूपे।
वेदाम्बरे पञ्चनिधौ गजेषौ
नन्देशयोर्भानुरसे शिवाग्नौ ॥ १३२ ॥
क्रमाच्छुभो विद्ध इति ग्रहः स्या-
त्पितुः सुतस्यात्र न वेधमाहुः ॥ १३३ ॥

सूर्य आदि ग्रह छठे, बारहवें आदि स्थानों में क्रम से शुभ तथा विद्ध होते हैं। जन्मराशि से छठी राशि में स्थित सूर्य शुभ होता है; परन्तु जन्मराशि से बारहवें स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो वह विद्ध हो जाता है। दशवें स्थान में स्थित सूर्य शुभ होता है; परन्तु चौथे स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो वह विद्ध हो जाता है। तीसरे स्थान में स्थित सूर्य शुभ होता है; परन्तु नवें स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो वह विद्ध हो जाता है। ग्यारहवें स्थान में स्थित सूर्य शुभ होता है; परन्तु पाँचवें स्थान में

शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। मंगल, शनैश्चर, राहु और केतु जन्मराशि से छठे स्थान में शुभ होते हैं; परन्तु नवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाते हैं। इसी प्रकार ये ग्रह ग्यारहवें स्थान में शुभ होते हैं; परन्तु यदि पाँचवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाते हैं तथा तीसरे स्थान में भी शुभ होते हैं; परन्तु यदि बारहवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाते हैं। "पितुः सुतस्यात्र न वेधमाहुः" इस गोचरप्रकरणोक्त नियम के अनुसार सूर्य और शनि का, चन्द्रमा और बुध का तथा शनि और सूर्य का एवं बुध और चन्द्र का वेध नहीं होता है। जन्मराशि से दशवें स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ होता है; परन्तु चौथे स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। तीसरे स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ होता है; परन्तु नवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। ग्यारहवें स्थान में चन्द्रमा शुभ होता है; परन्तु आठवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। पहले स्थान में चन्द्रमा शुभ होता है; परन्तु पाँचवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। छठे स्थान में चन्द्रमा शुभ होता है; परन्तु बारहवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। सातवें स्थान में चन्द्रमा शुभ होता है; परन्तु दूसरे स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। जन्मराशि से दूसरे स्थान में स्थित बुध शुभ होता है; परन्तु पाँचवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। चौथे स्थान में स्थित बुध शुभ होता है; परन्तु तीसरे स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है।

छठे स्थान में स्थित बुध शुभ होता है; परन्तु नवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। आठवें स्थान में स्थित बुध शुभ होता है; परन्तु पहले स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। दशवें स्थान में स्थित बुध शुभ होता है; परन्तु आठवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। ग्यारहवें स्थान में स्थित बुध शुभ होता है; परन्तु बारहवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। जन्मराशि से पाँचवें स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ होता है; परन्तु चौथे स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। दूसरे स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ होता है; परन्तु बारहवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। नवें स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ होता है; परन्तु दशवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। दूसरे स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ होता है; परन्तु तीसरे स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। ग्यारहवें स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ होता है; परन्तु तीसरे स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। जन्मराशि से पहले स्थान में स्थित शुक्र शुभ होता है; परन्तु आठवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। दूसरे स्थान में स्थित शुक्र शुभ होता है; परन्तु सातवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। तीसरे स्थान में स्थित शुक्र शुभ होता है; परन्तु पहले स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। चौथे स्थान में स्थित शुक्र शुभ होता है; परन्तु दशवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। पाँचवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ होता है; परन्तु नवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। आठवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ

होता है; परन्तु पाँचवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। नवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ होता है; परन्तु ग्यारहवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है। बारहवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ होता है; परन्तु छठे स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है तथा ग्यारहवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ होता है; परन्तु तीसरे स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध हो जाता है ॥ १३०-१३३ ॥

वामवेधेन ग्रहाणां शुभत्वम्

दुष्टोऽपि खेटो विपरीतवेधा-
च्छुभो द्विकोणे शुभदः सितेऽब्जः ॥ १३४ ॥

अशुभ ग्रह विपरीत वेध से शुभ हो जाता है अर्थात् जन्मराशि से चौथे, पाँचवें, नवें तथा बारहवें स्थान में स्थित सूर्य अशुभ होता है; परन्तु वही सूर्य तीसरे, छठे, दशवें तथा ग्यारहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से विद्ध होने पर शुभ हो जाता है। पाँचवें, नवें और बारहवें स्थान में स्थित मंगल, शनैश्चर, राहु तथा केतु अशुभ होते हैं; परन्तु ये ही ग्रह तीसरे, छठे और ग्यारहवें स्थान में स्थित ग्रहों से विद्ध होने पर शुभ हो जाते हैं। दूसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें और बारहवें स्थान में स्थित चन्द्रमा अशुभ होता है; परन्तु यही चन्द्रमा पहले, तीसरे, छठे, सातवें, दशवें तथा ग्यारहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से विद्ध होने पर शुभ हो जाता है। पहले, तीसरे, पाँचवें, आठवें, नवें और बारहवें स्थान में स्थित बुध अशुभ होता है; परन्तु वही बुध दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दशवें तथा ग्यारहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से विद्ध होने पर शुभ हो जाता है। तीसरे, चौथे, दशवें और बारहवें स्थान में स्थित बृहस्पति अशुभ होता है; परन्तु वही बृहस्पति दूसरे, पाँचवें, नवें और ग्यारहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से

विद्ध होने पर शुभ हो जाता है । पहले, तीसरे, पाँचवें छठे, सातवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें स्थान में स्थित शुक्र अशुभ होता है ; परन्तु वही शुक्र पहले, दूसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से विद्ध होने पर शुभ हो जाता है । शुक्लपक्ष में चन्द्रमा चौथे, छठे तथा आठवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध न हो, तो दूसरे, पाँचवें तथा नवें स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ हो जाता है । इस वामवेध में भी पिता-पुत्र का वेध नहीं किया जाता है ॥१३४॥

क्रमवेधविपरीतवेधयोर्मतद्वयम्

स्वजन्मराशेरिह वेधमाहु-
रन्ये ग्रहाधिष्ठितराशितः सः ।
हिमाद्रिविन्ध्यान्तर एव वेधो
न सर्वदेशेष्विति काश्यपोक्तिः ॥ १३५ ॥

अन्य अर्थात् नारद आदि आचार्यों ने अपनी जन्मराशि से ही उक्त दोनों वेध कहे हैं तथा कश्यप आदि आचार्यों ने ग्रह जिस राशि में स्थित हो उस राशि से उक्त दोनों वेध कहे हैं । जैसे जन्मराशि से छठे स्थान में स्थित सूर्य शुभ होता है ; परन्तु वही सूर्य जिस राशि में स्थित हो उस राशि से बारहवीं राशि में शनि को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों, तो विद्ध अर्थात् शुभ भी अशुभ हो जाता है । जन्मराशि से बारहवे स्थान में स्थित सूर्य अशुभ होता है; परन्तु वही सूर्य जिस राशि में स्थित हो उस राशि से छठी राशि में स्थित शनि को छोड़ अन्य ग्रहों से यदि विद्ध हो, तो शुभ हो जाता है । इसी प्रकार चन्द्र आदि ग्रहों के दोनों प्रकार के वेध समझ लेना चाहिए । हिमालय और विन्ध्य के मध्यवर्ती देशों में इन दोनों वेधों का दोष होता है, अन्य देशों में नहीं, ऐसा कश्यपजी

कहते हैं ; परन्तु बृहस्पतिजी क्रमवेध जन्मराशि से तथा विपरीत-वेध ग्रहस्थान से मानते हैं* ॥ १३५ ॥

गोचरे चन्द्रविशेषफलम्

आद्ये चन्द्रः श्रियं कुर्यान्मनस्तोषं द्वितीयके ।
तृतीये धनसम्पत्ति चतुर्थे कलहागमम् ॥ १३६ ॥
पञ्चमे ज्ञानवृद्धिं च षष्ठे सम्पत्तिमुत्तमाम् ।
सप्तमे राजसम्मानं मरणं चाष्टमे तथा ॥ १३७ ॥
नवमे धर्मलाभं च दशमे मानसेप्सितम् ।
एकादशे सर्वलाभ द्वादशे हानिमेव च ॥ १३८ ॥
यात्रायां गोचरे चैव चन्द्रस्य फलमादिशेत् ॥ १३९ ॥

जन्मराशि या नामराशि का चन्द्रमा लक्ष्मीकारक, दूसरा चन्द्रमा मन को सन्तोषकारक, तीसरा चन्द्रमा धनसम्पत्तिकारक, चौथा चन्द्रमा कलहकारक, पाँचवाँ चन्द्रमा ज्ञानवृद्धिकारक, छठा चन्द्रमा सम्पत्तिदायक, सातवाँ चन्द्रमा राजसन्मानदायक, आठवाँ चन्द्रमा मरणप्रद, नवाँ चन्द्रमा धर्मलाभदायक, दशवाँ चन्द्रमा मनवाञ्छित सिद्धिकारक, ग्यारहवाँ चन्द्रमा सर्व-लाभदायक तथा बारहवाँ चन्द्रमा हानिकारक होता है ॥ १३६-१३९ ॥

शनिचरणविचारः

जन्मांगरुद्रेषु सुवर्णपादं
द्विपञ्चनन्दे रजतस्य पादम् ।
त्रिसप्तदिक्ताम्रपदं वदन्ति
वेदार्कसाष्टेष्विह लौहपादम् ॥ १४० ॥

जन्म के समय शनि १।६।११ स्थानों में हो, तो सुवर्णपाद, २।५।९ स्थानों में हो, तो रजतपाद, ३।७।१० स्थानों में

---

* अधिकांश में सब लोग बृहस्पतिजी का मत मानते हैं ।

हो, तो ताम्रपाद तथा ४ । ८ । १२ स्थानों में हो, तो लोहपाद कहलाता है ॥ १४० ॥

सुवर्णादिपादफलम्

लौहे धनविनाशः स्यात्सर्वसौख्यं च काञ्चने ।
ताम्रे च समता ज्ञेया सौभाग्यं रजते भवेत् ॥ १४१ ॥

लोहपाद धन का नाश, सुवर्णपाद सर्वसुखदायक, ताम्रपाद सामान्य फलदायक तथा रजतपाद सौभाग्यप्रद होता है ॥ १४१ ॥

शनेः सार्धसप्तवर्ष दशा

द्वादशे जन्मगे राशौ द्वितीये च शनैश्चरः ।
सार्धानि सप्त वर्षाणि तदा दुःखैर्युतो भवेत् ॥ १४२ ॥

रिष्फरूपधनभेषु भास्करिः
संस्थितो भवति यस्य जन्मभात् ।
लोचनोदरपदेषु संस्थितिः
कथ्यते रविजलोकजैर्जनैः ॥ १४३ ॥

जन्मराशि से १२ । १ । २ स्थानों में शनि हो, तो साढ़ेसाती कहलाता है और उसमें दुःख होता है । प्रत्येक राशि में शनि २½ वर्ष रहता है इसलिये तीन राशियों में ७½ वर्ष रहेगा । शनि बारहवें स्थान में हो, तो २½ वर्ष तक उसकी दृष्टि कहलाती है । जन्मराशि में हो, तो २½ वर्ष तक भोग कहलाता है । द्वितीय स्थान में हो, तो लात कहलाती है अर्थात् नेत्र, उदर तथा पाद में शनि रहता है ॥ १४२-१४३ ॥

गोचरे पापग्रहाणां फलानि

द्विजन्मनि पञ्चमसप्तमगा-
श्चतुरष्टमद्वादशधर्मयुताः ।
धनधान्यप्राणहिरण्यहरा
रविराहुशनैश्चरभूमिसुताः ॥ १४४ ॥

जन्मलग्न से ५। ७। ८। १२। ६ स्थानों में सूर्य, राहु, शनि या मंगल हो, तो धन-धान्य, प्राण तथा सुवर्ण का नाश होता है ॥१४४॥

दिनदशाज्ञानम्

जन्मतारा चतुर्गुण्या तिथिवारसमन्विता।
नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं दिनदशोच्यते ॥ १४५ ॥

जन्मनक्षत्र के अङ्क को चौगुना करके उसमें तिथि* तथा वार के अङ्क मिलावे, ६ का भाग देने से जो शेष रहे वह दिनदशा होती है ॥ १४५ ॥

रविणा शोकसन्तापौ शशाङ्के क्षेमलाभकौ।
भूमिपुत्रे तु मृत्युः स्याद्बुधे प्रज्ञाविवर्धनम् ॥ १४६ ॥
गुरौ वित्तं भृगौ सौख्यं शनौ पीडा न संशयः।
राहुणा घातपातौ च केतौ मृत्युर्दशाफलम् ॥ १४७ ॥

सूर्य की दशा में शोक तथा सन्ताप, चन्द्रमा की दशा में कुशल तथा लाभ, मंगल की दशा में मृत्यु † बुध की दशा में बुद्धि की वृद्धि, बृहस्पति की दशा में धन की प्राप्ति, शुक्र की दशा में सुख, शनि की दशा में पीड़ा, राहु की दशा में चोट तथा केतु की दशा में मृत्यु होती है ॥ १४६-१४७ ॥

मृत्युशब्दार्थः

व्यथा दुःखं भयं लज्जा रोगः शोकस्तथैव च।
मरणं चापमानं च मृत्युरष्टविधः स्मृतः ॥ १४८ ॥

ज्योतिषशास्त्र में मृत्यु शब्द के आठ अर्थ कहे गए हैं। १—व्यथा, २—दुःख, ३—भय, ४—लज्जा, ५—रोग, ६—शोक, ७—मरण तथा आठवाँ अपमान है ॥ १४८ ॥

---

* तिथि शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से गिननी चाहिए।

† मृत्यु शब्द का अर्थ ज्योतिषशास्त्र में इसी अध्याय के १४८वें श्लोक के अनुसार ग्रहण किया जाता है।

दशावाहनप्रकारः

जन्मभाद्दिनभं यावद्गणनीयमनुक्रमात् ।
नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं वाहनमुच्यते ॥ १४९ ॥

अपने जन्मनक्षत्र से दिननक्षत्र तक गिने, उसमें नव का भाग दे, जो शेष बचे वही वाहन होता है ॥ १४९ ॥

दशावाहननामानि

खरोऽश्वो दन्तिमहिषौ जम्बुकः सिंहवायसौ ।
मयूरश्च तथा हंसो वाहनं नवधा मतम् ॥ १५० ॥

१ गधा, २ घोड़ा, ३ हाथी, ४ महिष, ५ श्रृगाल, ६ सिंह, ७ कौआ, ८ मयूर तथा ९ वाँ हंस ये नव वाहन कहे गए हैं ॥१५०॥

दशावाहनफलानि

खरे च कलहं विद्यादश्वे बुद्धिर्विदेशके ।
गजे लाभं विजानीयान्महिषे व्याधिजं भयम् ॥ १५१ ॥
जम्बूके च भयं घोरं सिंहे च विजयं स्मृतम् ।
काके चिन्ता विनिर्दिष्टा मयूरे सुखसम्पदः ॥ १५२ ॥
हंसे जयं विजानीयाद्यात्राकाले विशेषतः ॥ १५३ ॥

जब गधा वाहन हो, तो झगड़ा ; घोड़ा वाहन हो, तो परदेश में जाने की बुद्धि ; हाथी वाहन हो, तो लाभ ; महिष वाहन हो, तो व्याधिभय ; श्रृगाल वाहन हो, तो बड़ा भय; सिंह वाहन हो, तो विजय ; कौआ वाहन हो, तो चिन्ता ; मयूर वाहन हो, तो सुख तथा सम्पत्ति और हंस वाहन हो, तो विजय होता है । वाहन का विचार विशेषतया यात्रा के समय में करना चाहिए १५१-१५३

सूर्यकालानलचक्ररीतिः

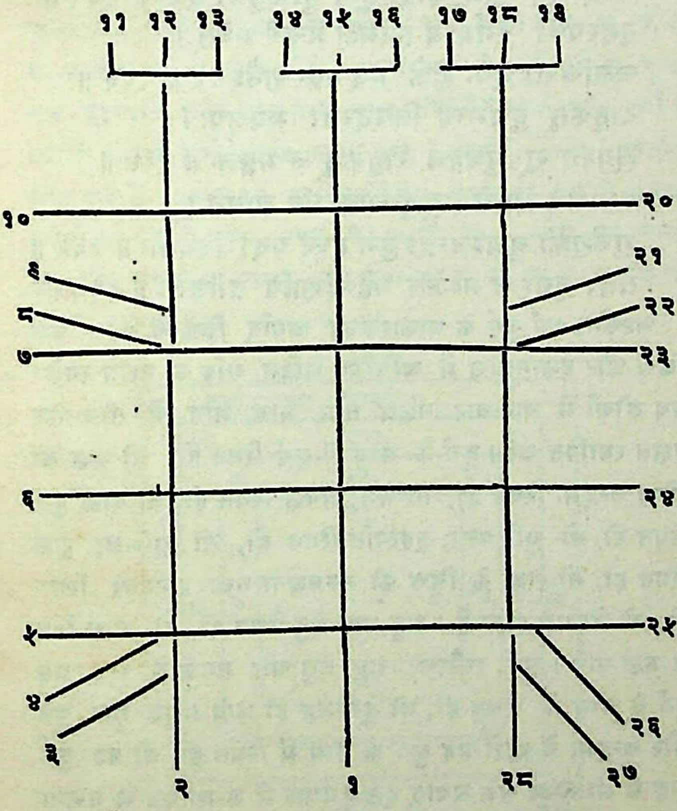
सूर्यकालानलं चक्रं स्वरशास्त्रोदितं च यत् ।
तदहं विशदं वक्ष्ये चमत्कृतिकरं परम् ॥ १५४ ॥

त्रिशूलकाग्राः सरलाश्च तिस्रः
किलोर्ध्वरेखाः परिकल्पनीयाः ।
रेखात्रयं मध्यगतं च तत्र
द्वे द्वे च कोणोपरिगे विधेये ॥ १५५ ॥
त्रिशूलकोणान्तरगान्यरेखा
तदग्रयोः शृंगयुगं विधेयम् ।
मध्ये त्रिशूलस्य च दण्डमूला-
त्सव्येन भान्यर्कभतोऽभिजिच्च ॥ १५६ ॥
स्वनामभं यत्र गतं च तत्र
प्रकल्पनीयं सदसत्फलं हि ।
तलस्थऋक्षत्रितये क्रमेण
चिन्ता वधश्च प्रतिबन्धकानि ॥ १५७ ॥
शृंगद्वये रुक् च भवेद्धि भंगं
शूलेषु मृत्युं परिकल्पनीयम् ।
शेषेषु धिष्ण्येषु जयश्च लाभो-
ऽभीष्टार्थसिद्धिर्बहुधा नराणाम् ॥ १५८ ॥
श्रीसूर्यकालानलचक्रमेत-
द्द्वन्द्वे च वादे च रणे प्रयाणे ।
प्रयत्नपूर्वं ननु चिन्तनीयं
पुरातनानां वचनं प्रमाणम् ॥ १५९ ॥

स्वरशास्त्रोक्त अत्यन्त चमत्कारी सूर्यकालानल चक्र का विशद वर्णन किया जाता है । त्रिशूल के आगे की ओर तीन सीधी रेखाएँ तथा तीन रेखाएँ मध्य में खींचे । उनपर दो-दो कोण बनावे । त्रिशूल और कोणों के बीच में एक रेखा और खींच देवे । त्रिशूल के आगे दो शृंग बनावे । त्रिशूल के मध्य में दण्ड के मूल से बाईं ओर को सूर्यनक्षत्र से अभिजित्समेत सब नक्षत्र लिखे ।

अपने नाम का नक्षत्र जहाँ पर हो उस स्थान का अच्छा या बुरा फल विचार करना चाहिए। नीचे के तीन नक्षत्रों में चिन्ता, वध तथा रुकावट होती है। दो शृंगों में रोग तथा भंग होते हैं। शूलों में मृत्यु तथा शेष नक्षत्रों में जय-लाभ और अभीष्ट-सिद्धि होती है। रोग, विवाद, यात्रा तथा युद्ध में इस चक्र का यत्नपूर्वक विचार कर लेना चाहिए॥ १५४–१५६॥

सूर्यकालानलचक्रम्



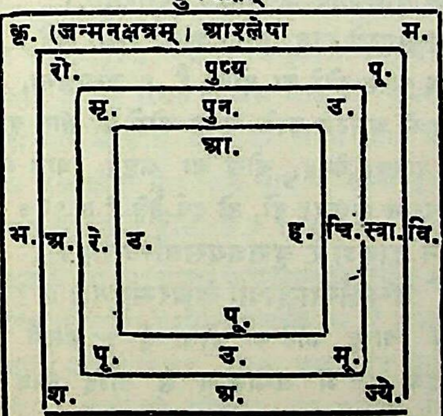
दुर्गचक्रवर्णनम्

दुर्गाकारं लिखेच्चक्रमष्टकोणसमन्वितम् ।
ईशाने ग्रामनक्षत्रं दत्त्वा चाभिजिता सह ॥ १६० ॥
चतुष्कं च चतुष्कं च कोणेषु सकलेषु च ।
मध्ये मध्ये सग्रहं च दद्याद्धिष्ण्यत्रयं त्रयम् ॥ १६१ ॥
दुर्गमध्ये स्थिते सूर्ये जलशोषः प्रजायते ।
चन्द्रे भङ्गः कुजे दाहो बुधे बुद्धियुतो नृपः ॥ १६२ ॥
बृहस्पतौ दुर्गमध्ये सुभिक्षं प्रचुरं भवेत् ।
चलचित्तो नृपः शुक्रे भेदभङ्गः शनैश्चरे ॥ १६३ ॥
राहुकेतू दुर्गमध्ये विषदग्धो भवेन्नृपः ।
सूर्यश्च सूर्यपुत्रश्च राहुकेतू च मङ्गलः ॥ १६४ ॥
एते चेद्दुर्गमध्ये स्युर्दुर्गभङ्गोऽपि जायते ।
गुरुशुक्रो बुधश्चन्द्रो दुर्गमध्ये यदा स्थिताः ॥ १६५ ॥
तदा दुर्गो न भज्जेत महेन्द्रेणापि ताडितः ॥ १६६ ॥

अष्टकोण एवं दुर्ग के आकारवाला अर्थात् क़िले के सदृश चक्र लिखे और ईशानकोण में अभिजित् सहित गाँव का नक्षत्र रक्खे। सब कोणों में चार-चार नक्षत्र तथा मध्य भाग में तीन-तीन नक्षत्र स्थापित करे। दुर्ग के मध्य में सूर्य स्थित हो, तो जल का शोष; चन्द्रमा स्थित हो, तो भंग; मंगल स्थित हो, तो दाह; बुध स्थित हो, तो बुद्धिमत्ता; बृहस्पति स्थित हो, तो सुभिक्ष; शुक्र स्थित हो, तो राजा के चित्त की चञ्चलता तथा शनैश्चर स्थित हो, तो भेदभङ्ग होता है। राहु तथा केतु स्थित हो, तो राजा विष से जल जावे। सूर्य, शनैश्चर, राहु, केतु और मंगल ये सब ग्रह दुर्ग के मध्य में स्थित हों, तो दुर्ग-भङ्ग हो जावे। गुरु, शुक्र, बुध और चन्द्रमा ये चारों ग्रह दुर्ग के मध्य में स्थित हों, तो वह दुर्ग इन्द्र से भी न टूट सके अर्थात् इस दुर्गचक्र में जन्मनक्षत्र से गणना

की जाती है । जन्मनक्षत्र का स्वामी दुर्गेश होता है । जैसे जन्म-नक्षत्र कृत्तिका है । "अश्विनी-भरणी-कृत्तिकापादे मेषः" इस रीति से कृत्तिका नक्षत्र में मेष राशि हुई । मेष राशि का स्वामी मंगल है, इसलिये दुर्गेश मंगल हुआ । वर्गेश दुर्गपाल होता है । वर्गेश का प्रकार यह है कि अवर्ग का स्वामी सूर्य, कवर्ग का स्वामी मंगल, चवर्ग का स्वामी शुक्र, टवर्ग का स्वामी बुध, तवर्ग का स्वामी बृहस्पति, पवर्ग का स्वामी शनि तथा यवर्ग और शवर्ग का स्वामी चन्द्रमा होता है अर्थात् अ, क, च, ट, त, प तथा य, श इन वर्गों के स्वामी क्रम से सूर्य, मंगल, शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि चन्द्र तथा चन्द्र, होते हैं। अवर्ग आदि वर्गों के स्वामी क्रम से सूर्य, मंगल, शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि, चन्द्रमा तथा राहु हैं। एवं अवर्ग का स्वामी सूर्य, कवर्ग का स्वामी मंगल, चवर्ग का स्वामी शुक्र, टवर्ग का स्वामी बुध, तवर्ग का स्वामी बृहस्पति, पवर्ग का स्वामी शनि तथा य, र, ल, व से क्ष तक का स्वामी चन्द्रमा है ॥ १६०-१६६ ॥

दुर्गचक्रम्



जैसे अम्बिकाप्रसाद का वर्ग 'अवर्ग' हुआ और अवर्ग का स्वामी सूर्य है, अतः दुर्गपाल सूर्य होता है। इसी रीति से अन्य उदाहरण भी समझिए।

पञ्चाङ्ग में ग्रहस्पष्ट देखकर ३।२०, ६।४० इत्यादि रीति से कौन ग्रह किस नक्षत्र में है यह जाना जा सकता है। इस प्रकार जो ग्रह जिस नक्षत्र में हो उसके ऊपर लिखना चाहिए।

यदि पापग्रह भीतर हो, तो दुर्ग का भंग, मध्य में हो, तो मध्यम, यदि पापग्रह बाहर को आनेवाले हों, तो दुर्ग का भंग, यदि शुभग्रह हों, तो शुभ होता है।

जब दुर्गेश दुर्ग के मध्य में स्थित हो तथा दुर्गपाल बाहर स्थित हो, तो दुर्गभय नहीं होता है। यदि इसके विपरीत हो, तो विघ्न होता है।

इसका विचार विशेषतः युद्ध में करना चाहिए; परन्तु इस समय रोगी के रोग का विचार भी इससे किया जाता है।

सुदर्शनचक्ररीतिः

सुदर्शनं द्वादशारं जन्मभेन्द्वर्कराशितः।
केन्द्रकोणाष्टगो राहुः पापा अन्ये शुभा मुदे॥ १६७॥

सुदर्शनचक्र बारह कोठे का होता है। जन्मलग्न, चन्द्रराशि तथा सूर्यराशि से आरम्भ करके बारह कोठों के तीन वृत्त बनावे। यदि राहु या पापग्रह केन्द्र, कोण या अष्टम स्थान में हों, तो दुःख देते हैं; परन्तु शुभग्रह हों, तो हर्ष देते हैं॥ १६७॥

सुदर्शनं द्वादशारं वृत्तत्रयसमन्वितम्।
पूर्ववृत्ते जन्मलग्नाद्भावाः खेचरसंयुताः॥ १६८॥

सुदर्शनचक्र बारह कोठे का होता है। उसमें तीन वृत्त होते हैं। पहले वृत्त में जन्मलग्न से बारह भाव ग्रहसहित लिखे॥ १६८॥

तदूर्ध्ववृत्ते चन्द्राद्य भावाः खेटसमन्विताः ।
तदूर्ध्ववृत्ते सूर्याद्य भावा लेख्याः सखेचराः ॥ १६९ ॥

उसके ऊपर दूसरे वृत्त में चन्द्रराशि को लग्न मानकर बारह भाव ग्रहसहित लिखे। उसके ऊपर के वृत्त में सूर्यराशि को लग्न मानकर ग्रहसहित भाव लिखने चाहिए ॥ १६९ ॥

वृत्तत्रयेऽपि ये खेटा यत्र भावे व्यवस्थिताः ।
ते तत्र तत्र संलेख्यास्तस्माद्भावान्विचिन्तयेत् ॥ १७० ॥

तीनों वृत्त में जो ग्रह जिस भाव में स्थित हों, वे वहाँ लिखने चाहिए। उससे भावों का विचार करे ॥ १७० ॥

यद्यद्वृत्ते तु यद्भावात्केन्द्रकोणाष्टगस्तमः ।
पापा वा यत्र बहवस्तत्तद्भावविनाशनम् ॥ १७१ ॥

जिस वृत्त में जिस भाव से केन्द्र, कोण या अष्टम स्थानों में राहु या बहुत पापग्रह हों उस भाव का नाश होता है ॥ १७१ ॥

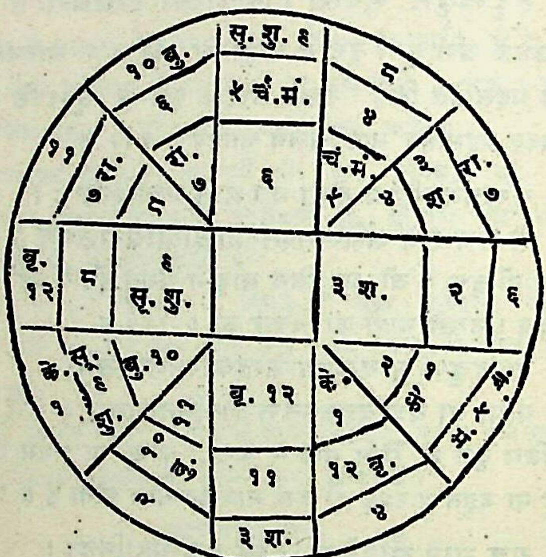
यत्र भावे सैंहिकेयोऽवश्यं तद्भावहानिदः ।
यस्माद्भावात्केन्द्रकोणाष्टमे सौम्यः शुभप्रदः ॥
तदा तद्भाववृद्धिः स्यात् त्रिवृत्तेऽपि शुभग्रहाः ॥१७२॥

जिस भाव में राहु स्थित हो उस भाव की अवश्य हानि करता है। जिस भाव से केन्द्र, कोण या अष्टम स्थान में शुभग्रह हों उसका शुभ फल होता है। जिस भाव में तीनों वृत्तों में शुभग्रह हों उस भाव की वृद्धि होती है ॥ १७२ ॥

तन्वाद्यैर्वर्षमासार्धद्वयेकघस्रान्प्रवर्त्तयेत् ।
विरिष्फारिशुभैः पापैस्त्रिषडाये च वै शुभम् ॥ १७३ ॥

लग्न आदि स्थानों से वर्ष, मास, पक्ष, दिन आदि की कल्पना करे। १२,६ स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में शुभग्रह हों ३।६।११ स्थानों में पापग्रह हों, तो शुभ फल होता है ॥ १७३ ॥

सुदर्शनचक्रम्



डिम्भचक्ररीतिः

डिम्भाख्यचक्रं रविभाच्च भानां
त्रयं न्यसेन्मूर्ध्नि मुखे त्रयं च ।
द्वे स्कन्धयोर्द्वे भुजयोर्द्वयं च
पाणिद्वये वक्षसि पञ्चभानि ॥ १७४ ॥
नाभौ च लिंगे च तथैकमेकं
जान्वोर्भषट्कं परिकल्पनीयम् ।
पादद्वये भद्वितयं क्रमेण
मुनिप्रवर्यैः फलमुक्तमत्र ॥ १७५ ॥
मस्तके राज्यसौख्यं च वक्त्रे मिष्टान्नभोजनम् ।
स्कन्धयोः सुखभोगौ च भुजयोर्विभवो भवेत् ॥ १७६ ॥

हृदये च धनाध्यक्षो जंघयोर्दुःखभाजनम् ।
नाभौ दरिद्रतामेति गुह्ये च पारदारिकः ॥ १७७ ॥

सूर्यनक्षत्र से जन्मनक्षत्र पर्यन्त गिनती करे। पहले तीन नक्षत्र सिर पर (फल राज्य-सुख), फिर तीन नक्षत्र मुख में (फल मिष्टान्न भोजन), फिर दो नक्षत्र दोनों कन्धों पर (फल सुखभोग), फिर दो नक्षत्र भुजाओं पर (फल विभव), फिर दो नक्षत्र हाथों पर (फल शुभ), फिर पाँच नक्षत्र हृदय में (फल धनाध्यक्ष होना), फिर एक नक्षत्र नाभि पर (फल दरिद्रता), फिर एक नक्षत्र गुह्य में (फल परस्त्रीगमन), फिर छः नक्षत्र जानु पर (फल दुःख) तथा दो नक्षत्र पैरों में (फल भ्रमण) रहते हैं। इसी प्रकार अन्य ग्रहों के भी नराकार चक्र बनते हैं ॥ १७४–१७७॥

डिम्भचक्रम्
(सूर्यनक्षत्राद्विचार्यम्)

नक्षत्र	अंग	फल
३	सिर	राज्यसुख
३	मुख	मिष्टान्नभोजन
२	दोनों कन्धे	सुखभोग
२	दोनों भुजाएँ	विभव
२	दोनों हाथ	शुभ
५	हृदय	धनाध्यक्ष
१	नाभि	दरिद्रता
१	गुह्य (लिंग)	परस्त्रीगमन
६	जानु	दुःख
२	पैर	भ्रमण

आठवाँ अध्याय समाप्त ।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

नवाँ अध्याय

मंगलाचरणम्

लक्ष्मीकान्तस्तुतौ पादौ यस्यं स आशुतोषणः ।
शिवः सफलतां दद्याल्लक्ष्मीकान्तस्य सत्कृतौ ॥ १ ॥
आलोड्य विविधान्ग्रन्थान्संगृह्यार्थमितस्ततः ।
वर्षरञ्जनमित्येतद्रचितं भाषया युतम् ॥ २ ॥
गुरोरवन्यां सुगृहीतनाम्नो
विद्वत्समाजे हरिशङ्कराभिधात् ।
प्रतीतपात्रेण सुशिक्षितेन
कूर्माचलीयेन मया निबद्धम् ॥ ३ ॥

वर्षरञ्जनप्रकरणम्

वर्षफले वर्षानयनरीतिः

गताः समाः पादयुताः प्रकृतिघ्नसमागणात् ।
खवेदाप्तघटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुताः ॥
अब्दप्रवेशे वारादि सप्ततष्टेऽत्र निर्दिशेत् ॥ १ ॥

गत वर्षों में चतुर्थांश (चौथाई) के जोड़ देने से वारांक निकल आता है । फिर गत वर्षों को २१ से गुणा करके ४० का भाग देने से घटी,

पल तथा विपल निकल आते हैं। उनमें जन्मसमय के वार, घटी तथा पलों के जोड़ देने से वर्षप्रवेश का ध्रुवा निकल आता है। वाराङ्क ७ से अधिक हों, तो ७ से भाग देकर शेष अङ्कों से वार (दिन) जान लेना चाहिए। शून्य से शनिवार का ग्रहण होता है ॥१॥

प्रकारान्तरेण वर्षानयनम्

इष्टः शको जन्मशकेन हीन-
स्त्रिधा सपादो दलितश्च सार्धः ।
समन्वितो जन्मगवासराद्यैः
स्फुटो भवेदब्दनिवेशकालः ॥ २ ॥

वर्त्तमान संवत्सर में जन्मसंवत्सर को घटा देने से शेष गत वर्ष निकल आते हैं। गत वर्षों को ३ स्थानों में स्थापित करे। इन स्थापित अङ्कों को क्रम से सवाया, आधा तथा ड्योढ़ा करे। उसमें जन्म के वार, घटी तथा पल जोड़ देवे, जोड़ देने से वर्षप्रवेश के वार आदि अर्थात् वार इष्ट घटी तथा पल निकल आते हैं। इस प्रकार इष्ट निकालकर जन्मपत्र के अनुसार लग्न निकाल लेना चाहिए * ॥ २ ॥

---

* विशेष सूचना यह है कि जन्म के समय में जिस राशि के जितने अंशों में सूर्य हों, उसी राशि के उतने ही अंशों में वर्षप्रवेश भी होता है। कभी-कभी एक दिन का अन्तर भी पड़ जाता है; परन्तु वार (दिन) का अन्तर कभी नहीं होता है।

ध्रुवा निकालने की रीति किसी प्राचीन कवि ने एक भाषा-पद्य द्वारा प्रकट की है—

वर्ष सवाया अर्ध करि, पुनि ड्योढ़ा करि लेय।
वार घटी पल जोड़ के, वर्ष ध्रुवा कहि देय॥

जन्मलग्नाद्वर्षलग्नानयनम्

गताब्दास्त्रिनिघ्ना हृताः शून्यरामै-
रवाप्तं फलं च त्रिनिघ्नेषु युक्तम् ।
ततो भानुभिर्भक्तशेषेण युक्तं
निजे जन्मलग्ने भवेदब्दलग्नम् ॥ ३ ॥

गत वर्षों को ३ से गुणा करके गुणनफल को दो स्थानों में रक्खे। एक में ३० का भाग देकर जो फल मिले उसको दूसरे स्थान में स्थित गुणनफल में जोड़ देवे, उसमें १२ का भाग दे, जो शेष रहे उसको जन्मलग्न में जोड़ दे, तो वर्ष का लग्न निकल आता है ॥३॥

मुन्थासाधनम्

गतवर्षसमायुक्ते जन्मलग्ने विभाजिते ।
सूर्यैः शिष्टमिता मुन्था भवेन्मेषादितः क्रमात् ॥ ४ ॥

गत वर्ष में जन्मलग्न को जोड़कर १२ का भाग देने से शेष अङ्कों द्वारा मेष आदि के क्रम से मुन्था निकल आती है ॥ ४ ॥

त्रिराशिपाः

त्रिराशिपाः सूर्यसितार्किशुक्रा
दिनेनिशीज्येन्दुबुधक्षमाजाः ।
मेषाच्चतुर्णां हरिभाद्विलोमं
नित्यं परेष्वार्किकुजेज्यचन्द्राः ॥ ५ ॥

दिन में वर्षप्रवेश हो, तो मेष आदि चार राशियों में सूर्य, शुक्र शनि तथा शुक्र त्रिराशिप होते हैं। रात में हो; तो बृहस्पति, चन्द्रमा, बुध तथा मंगल त्रिराशिप होते हैं। सिंह आदि चार राशियों में विपरीत अर्थात् दिन में बृहस्पति, चन्द्रमा, बुध तथा मंगल और रात में सूर्य, शुक्र, शनि तथा शुक्र त्रिराशिप होते हैं। शेष चार राशियों में दिन रात दोनों में शनि, मंगल, बृहस्पति तथा चन्द्र त्रिराशिप होते हैं ॥ ५ ॥

त्रिराशिपचक्रम्

लग्न	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	कन्या	तु.	वृ.	धन	म.	कुं.	मी.
दिन में त्रिराशिप	सू.	शु.	श.	शु.	वृ.	चं.	बु.	मं.	श.	मं.	वृ.	चं.
रात्रि में त्रिराशिप	वृ.	चं.	बु.	मं.	सू.	शु.	श.	शु.	श.	मं.	वृ.	चं.

वर्षेशज्ञानाय पञ्चाधिकारिणः

तत्रादौ लघुपञ्चवर्गीप्रकारः

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो
मुन्थहापतिरतस्त्रिराशिपः ।
सूर्यराशिपतिरह्नि चन्द्रमा-
धीश्वरो निशि विमृश्य पञ्चकम् ॥ ६ ॥

जन्मलग्न का स्वामी, वर्षलग्न का स्वामी, मुन्था का स्वामी, त्रिराशिप, दिन में सूर्यराशि का स्वामी तथा रात में चन्द्रराशि का स्वामी ये पाँच लघुपञ्चवर्गी कहलाते हैं। इससे वर्षेश का निर्णय होता है ॥ ६ ॥

बलज्ञानाय हद्देशविचारः

मेषेऽङ्गतर्काष्टशरेषुभागा
जीवास्फुजिज्ज्ञारशनैश्चराणाम् ।
वृषेऽष्टषण्नागशरानलांशाः
शुक्रज्ञजीवार्किकुजेशहद्दाः ॥ ७ ॥

मेषराशि में ६।६।८।५।५ अंशों के क्रम से बृहस्पति,

शुक्र, बुध, मंगल तथा शनि हद्देश होते हैं। वृषराशि में ८।६।८।५।३ अंशों के क्रम से शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि तथा मंगल हद्देश होते हैं ॥ ७ ॥

युग्मे षडङ्गेषुनगाङ्गभागाः
सौम्यास्फुजिज्जीवकुजार्किहद्दाः ।
कर्केऽद्रितर्काङ्गनगाब्धिभागाः
कुजास्फुजिज्ज्ञेज्यशनैश्चराणाम् ॥ ८ ॥

मिथुन के ६।३।५।७।६ अंशों के क्रम से बुध, शुक्र, बृहस्पति, मंगल, शनि तथा कर्क के ७।६।६।७।४ अंशों के क्रम से मंगल, शुक्र, बुध, बृहस्पति तथा शनि हद्देश होते हैं ॥ ८ ॥

सिंहेऽङ्गभूताद्रिरसाङ्गभागाः
सुरेज्यशुक्रार्किबुधारहद्दाः ।
स्त्रियो नगाशाब्धिनगाक्षिभागाः
सौम्योशनोजीवकुजार्किनाथाः ॥ ९ ॥

सिंह के ६।५।७।६।६ अंशों के क्रम से बृहस्पति, शुक्र, शनि, बुध, मंगल। कन्या के ७।१०।४।७।२ अंशों के क्रम से बुध, शुक्र, बृहस्पति, मंगल तथा शनि हद्देश होते हैं ॥ ९ ॥

तुले रसाष्टाद्रिनगाक्षिभागाः
कोणज्ञजीवास्फुजिदारनाथाः ।
कीटे नगाब्ध्यष्टशराङ्गभागा
भौमास्फुजिज्ज्ञेज्यशनैश्चराणाम् ॥ १० ॥

तुला के ६।८।७।७।२ अंशों के क्रम से शनि, बुध, बृहस्पति, शुक्र, मंगल तथा वृश्चिक के ७।४।८।५।६ अंशों के क्रम से मंगल, शुक्र, बुध, बृहस्पति तथा शनि हद्देश होते हैं ॥ १० ॥

चापे रवीष्वम्बुधिपञ्चवेदा
जीवास्फुजिज्ज्ञारशनैश्चराणाम् ।

मृगे नगाद्र्यष्टयुगश्रुतीनां
सौम्येज्यशुक्रार्किकुजेशहद्दाः ॥ ११ ॥

धन के १२।५।४।५।४अंशों के क्रम से बृहस्पति, शुक्र, बुध, मंगल, शनि तथा मकर के ७।७।८।४।४अंशों के क्रम से बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि तथा मंगल हद्देश होते हैं ॥ ११ ॥

कुम्भे नगाङ्गाद्रिशरेषुभागाः
शुक्रज्ञजीवारशनैश्चराणाम् ।
मीनेऽर्कवेदानलनन्दपक्षाः
सितेज्यसौम्यारशनैश्चराणाम् ॥ १२ ॥

कुम्भ के ७।६।७।५।५ अंशों के क्रम से शुक्र, बुध, बृहस्पति, मंगल, शनि तथा मीन के १२।४।३।६।२ अंशों के क्रम से शुक्र, बृहस्पति, बुध, मंगल और शनि हद्देश होते हैं ॥ १२ ॥

बृहत्पञ्चवर्गीबलम्

त्रिंशत्स्वभे विंशतिरात्मतुंगे
हद्देऽत्त्वचन्द्रादशकं दकाणे ।
मुसल्लहे पञ्चलवाः प्रदिष्टा
विंशोपका वेदलवैः प्रकल्प्याः ॥ १३ ॥

ग्रह अपने घर में हो, तो ३० बिस्वा; उच्च का हो तो, २० बिस्वा; अपने हद्दा का हो, तो १५ बिस्वा; अपने द्रेष्काण का हो, तो १० बिस्वा तथा अपने नवांश का हो, तो ५ बिस्वा बल पाता है ॥ १३ ॥

स्वस्वाधिकारोक्तबलं सुहृद्भे
पादोनमर्धं समभेऽरिभेऽङ्घ्रिः ।
एवं समानीय बलं तदैक्ये
वेदोद्धृते हीनबलः शरोनः ॥ १४ ॥

ग्रह मित्र के घर में हो, तो चौथाई कम बल पाता है अर्थात्

२२।३०, सम के घर में हो, तो आधा बल पाता है अर्थात् १५।०, शत्रु के घर में हो, तो चौथाई अर्थात् ७।३० बल पाता है। इस प्रकार सब बलों को जोड़कर ४ का भाग देने से बल निकल आता है। जब ५ विश्वा से कम बल हो, तो ग्रह बलहीन होता है। स्पष्ट ज्ञान होने के लिये नीचे चक्र दिया जाता है ॥ १४ ॥

बलप्रमाणम्	स्वगृही ग्रह	मित्रगृही ग्रह	समगृही ग्रह	शत्रुगृही ग्रह	
	३० बिस्वा	२२ । ३०	१५ । ०	७ । ३०	
	२० ,,				उच्च
	१५ ,,	११ । १५	७ । ३०	३ । ४५	हद्दा
	१० ,,	७ । ३०	५ । ०	२ । ३०	द्रेष्काण
	५ ,,	३ । ४५	२ । ३०	१ । १५	नवांश

हर्षबलम्

नन्दत्रिषट्लग्नभवर्त्तपुत्र-
व्यया इनाद्धर्षपदं स्वभोच्चम् ।
त्रिभं त्रिभं लग्नभतः क्रमेण
स्त्रीणां नृणां रात्रिदिनेषु तेषाम् ॥ १५ ॥

चार प्रकार के ग्रह हर्षबली होते हैं । १—लग्न से नवम सूर्य, तृतीय चन्द्र, षष्ठ मंगल, लग्न का बुध, एकादश बृहस्पति, पञ्चम शुक्र तथा द्वादश शनि ये ग्रह हर्ष-बली होते हैं ।

२–सब ग्रह अपनी राशि के या उच्च के हर्षबली होते हैं। ३–लग्न से १।२।३ स्थानों में स्त्रीग्रह, लग्न से ४।५।६ स्थानों में पुरुषग्रह, लग्न से ७।८।९ स्थानों में स्त्रीग्रह तथा लग्न से १०।११।१२ स्थानों में पुरुषग्रह हर्षबली होते हैं। ४–दिन में वर्ष प्रवेश हो, तो पुरुषग्रह तथा रात्रि में स्त्रीग्रह हर्षबली होते हैं ॥ १५ ॥

बुधसूर्यसुतौ नपुंसकाख्यौ।
शशिशुक्रौ युवती नराश्च शेषाः ॥ १६ ॥

ताजिक में बुध तथा शनि स्त्रीग्रह माने जाते हैं अन्यत्र ये दोनों नपुंसकसंज्ञक होते हैं। चन्द्रमा तथा शुक्र स्त्रीग्रह, शेष पुरुषग्रह माने जाते हैं। इस प्रकार हर्षबल ५–५ बिस्वा होता है। यदि कोई ग्रह चारों हर्षबल पावे, तो २० बिस्वा अर्थात् पूर्ण हर्षबली होता है ॥ १६ ॥

वर्षेशविचारः

बली य एषां तनुमीक्ष्यमाणः
स वर्षपो लग्नमनीक्ष्यमाणः।
नैवाब्दपो दृग्व्यतिरेकतः स्या-
द्बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्याः ॥ १७ ॥

पूर्वोक्त पञ्चाधिकारियों में जो ग्रह बलवान् होकर लग्न को देखता हो वही ग्रह वर्षेश होता है। यदि लग्न को देखे, तो वह ग्रह वर्षेश नहीं होता है। यदि अनेक ग्रह बलवान् हों, तो लग्न पर जिसकी दृष्टि अति बलवती हो वह ग्रह वर्षेश होता है ॥ १७ ॥

दृगादिसाम्येऽप्यथ निर्बलत्वे
वर्षाधिपः स्यान्मुथहेश्वरस्तु।
पञ्चापि चेन्नो तनुमीक्ष्यमाणा
वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्यः ॥ १८ ॥

यदि पाँचों ग्रहों की दृष्टि समान हो या पाँचों ग्रह बलहीन हों, तो मुन्था का स्वामी वर्षेश होता है । यदि पाँचों ग्रहों में से कोई भी ग्रह लग्न को न देखे, तो जो अधिक बली हो वह वर्षेश होता है ॥ १८ ॥

बलादिसाम्ये रविराशिपोऽह्नि
निशीन्दुराशीड्ति केचिदाहुः ॥ १९ ॥

किन्हीं आचार्यों का कहना है कि यदि बल आदि समान हो, तो दिन में सूर्यराशि का स्वामी और रात में चन्द्रराशि का स्वामी वर्षेश होता है ॥ १९ ॥

ताजिके ग्रहाणां दृष्टिः

पञ्चमे नवमे दृष्टिः पूर्णा प्रत्यक्षस्नेहदा ।
तृतीयैकादशे दृष्टिर्गुप्तस्नेहा च मित्रवत् ॥ २० ॥
चतुर्थे दशमे दृष्टिर्गुप्तवैराऽशुभावहा ।
सप्तमे च यदा दृष्टिरतिशत्रुश्च वैरिवत् ॥ २१ ॥

५ । ९ स्थानों में प्रत्यक्षस्नेहा-नामक अत्यन्त बलवती पूर्ण-दृष्टि होती है, ३ । ११ स्थानों में गुप्तस्नेहानामक मित्रदृष्टि होती है, ४ । १० स्थानों में गुप्तवैरा-नामक शत्रुदृष्टि होती है तथा सातवें स्थान में प्रत्यक्षवैरा-नामक अतिशत्रु-दृष्टि होती है ॥ २०-२१ ॥

ताजिके मित्रादयः

मित्रं तृतीयपञ्चमनवमैकादशगतोऽपि यो यस्य ।
धनरिपुमृतिरिष्फेषु समो ग्रहः स्यादिति ज्ञेयम् ॥२२॥

१—चन्द्रमा वर्षेश बहुत कम होता है ।

२—ताजिक में अन्य स्थानों में, दृष्टि नहीं होती है । एक स्थान में स्थित ग्रहों की परम शत्रुता होती है ।

शत्रुस्तथैकतुर्ये जायास्थाने तथा दशमे।
ताजिकहिल्लाजकमतेनैताहक्कथितमस्माभिः ॥ २३ ॥

३। ५। ९। ११ स्थानों में स्थित ग्रह मित्र, १। ४। ७। १० स्थानों में स्थित ग्रह शत्रु तथा २। ६। ८। १२ स्थानों में स्थित ग्रह सम होता है ॥ २२-२३ ॥

वामादिदृष्टिः

लग्नात्षष्ठपर्यन्तं दक्षिणो भाग ईरितः।
सप्तमाद्द्वादशं यावद्वामभागः प्रकीर्त्तितः ॥ २४ ॥

लग्न से षष्ठपर्यन्त दक्षिण भाग या पूर्वार्ध तथा सप्तम से द्वादश-पर्यन्त वामभाग या परार्ध कहलाता है। वामभाग में स्थित ग्रहों की वामदृष्टि तथा दक्षिणभाग में स्थित ग्रहों की दक्षिणदृष्टि[1] होती है ॥ २४ ॥

वर्षे विविधा दशाः

हीनांशदशा तसीरदशा च

बली यदा हीनबलो ग्रहः स्या-
त्तदा तु हीनांशदशा विधेया।
सर्वग्रहालोकनलब्धवीर्ये
तनौ तसीराख्यदशा प्रदिष्टा ॥ २५ ॥

यदि हीनबली ग्रह बलवान् हो, तो हीनांश दशा तथा लग्न में सब ग्रहों की दृष्टि हो, तो तसीरदशा होती है ॥ २५ ॥

भावतसीरदशा कालहोरादशा च

लग्नस्य सबलत्वे हि भावपूर्वा तु सा स्मृता।
कालहोरादशा कार्या सवीर्येऽब्दे तु तत्पतौ ॥ २६ ॥

१—वामदृष्टि से दक्षिणदृष्टि अधिक बलवती होती है।

लग्न बली हो, तो भावतसीरदशा तथा वर्षेश बलवान् हो, तो कालहोरादशा होती है ॥ २६ ॥

हद्दादशा नैसर्गिकदशा च

हद्दाख्या वर्षलग्नस्य हद्देशे बलसंयुते ।
अब्दे चन्द्रबलोपेते कुर्यान्नैसर्गिकीं दशाम् ॥ २७ ॥

वर्षलग्न का हद्देश बली हो, तो हद्दादशा तथा वर्ष में चन्द्रमा बली हो, तो नैसर्गिकदशा होती है ॥ २७ ॥

मुद्दादशा तसीरदशा च

सवीर्ये जन्मराशीशे मुद्दा गौरीमतेन तु ।
बलसाम्ये तु सर्वेषां तसीराख्या प्रकीर्त्तिता ॥ २८ ॥

जन्मराशि का स्वामी बलवान् हो, तो गौरीमत से मुद्दादशा होती है तथा सबका बल समान हो, तो तसीरदशा होती है * ॥२८॥

मुद्दादशाप्रकारः

जन्मर्क्षसंख्यासहिता गताब्दा
द्व्यूनिता नन्दहृतावशेषाः ।
आचंकुराजीशबुकेशुपूर्वा
ग्रहा दशास्वामिन इत्थमब्दे ॥ २९ ॥

जन्मनक्षत्र की संख्या में गतवर्षों को जोड़कर योगफल में दो घटाकर शेष में ९ का भाग देने से शेष आ० चं० कु० रा० जी०

---

*इस प्रकार ज्योतिष के अन्य ग्रन्थों में अनेक दशाओं का वर्णन विस्तृत-रूप से है । परन्तु इस ग्रन्थ में केवल मुद्दादशा का ही विचार किया गया है ।

श० बु० के० शु० के क्रम से ग्रहों की दशा जाननी चाहिए* ॥२६॥

गुणकाङ्काः स्वदशानयनं च

वेद नागाः शराः सप्त दिग्रसाङ्कशरा रसाः ।
सूर्यादीनां च गुणकास्तैर्निघ्ना स्वदशामितिः ॥ ३० ॥

४, ८, ५, ७, १०, ६, ९, ५, ६ ये क्रम से सूर्य आदि ग्रहों के गुणक हैं। इन अङ्कों से गुणन द्वारा (गुणा करने से) अपनी दशा का परिमाण निकल आता है ॥ ३० ॥

मुद्दादशाया अन्तर्दशानयनम्

षष्ट्याप्तान्तर्दशा तस्य जायतेऽतिपरिस्फुटा ॥ ३१ ॥

उपर्युक्त दशा में ६० का भाग देने से अन्तर्दशा स्पष्ट निकल आती है ॥ ३१ ॥

मुद्दादशायां शुभपापग्रहफलम्

पापवर्षे भवेद्दुःखं शुभवर्षे सुखाप्तयः ॥ ३२ ॥

---

* ग्रहों की महादशा की वर्ष-संख्या इस क्रम से जाननी चाहिए।

सूर्य की दशा ६ वर्ष, चन्द्रमा की दशा १० वर्ष, मंगल की दशा ७ वर्ष, राहु की दशा १८ वर्ष, बृहस्पति की दशा १६ वर्ष, शनि की दशा १९ वर्ष, बुध की दशा १७ वर्ष, केतु की दशा ७ वर्ष तथा शुक्र की महादशा २० वर्ष की होती है।

वर्ष में ग्रहों की मुद्दादशा की दिनसंख्या इस क्रम से जाननी चाहिए—

सूर्य की मुद्दादशा १८ दिन, चन्द्र की ३० दिन, मंगल की २१ दिन, राहु की ५४ दिन, बृहस्पति की ४८ दिन, शनि की ५७ दिन, बुध की ५१ दिन, केतु की २१ दिन तथा शुक्र की मुद्दादशा ६० दिन रहती है।

जो वर्ष पापग्रह का होता है उसमें दुःख होता है । जो वर्ष शुभग्रह का होता है उसमें सुख होता है ॥ ३२ ॥

सूर्यादीनां दशाफलम्

मुद्दादशायां सूर्यस्य फलम्

सूर्ये राजकुलाद्भीतिः पीडा स्यात्पित्तसम्भवा ।
विपत्तयश्च बन्धूनां वित्तानां व्यय एव च ॥ ३३ ॥

सूर्य की दशा या अन्तर्दशा हो, तो राजकुल से भय पित्तजनित पीड़ा, बन्धुओं को क्लेश तथा धन का व्यय होता है ॥३३॥

चन्द्रमसः फलम्

चान्द्र्यां स्त्रीसुतभूलाभो वस्त्राभरणसंयुतिः ।
स्वपक्षवैरं कन्याया जन्मनिद्रारतिस्तथा ॥ ३४ ॥

चन्द्रमा की एकान्तरी दशा हो, तो स्त्री, पुत्र तथा पृथिवी का लाभ, वस्त्र और आभूषणों की प्राप्ति, अपने पक्षवालों से वैर और निद्रा बहुत आती है ॥ ३४ ॥

मंगलस्य फलम्

भौमो शत्रुविमर्दश्च विग्रहो बान्धवैः सह ।
रक्तपित्तकृता पीडा परस्त्रीभिः समागमः ॥ ३५ ॥

मंगल की एकान्तरी दशा हो, तो शत्रुओं का नाश, बन्धुओं से लड़ाई-झगड़ा, रक्त-पित्तसम्बन्धी पीड़ा और परस्त्रीसंगम होता है ॥ ३५ ॥

बुधस्य फलम्

बौध्यां बन्धुसमायोगो मित्रधर्मसमागमः
प्रीतिर्जनस्य विपुला देहपीडा त्रिदोषजा ॥ ३६ ॥

बुध की एकान्तरी दशा हो, तो बन्धुओं से मेल, मित्र तथा धर्म का लाभ, लोगों में अत्यन्त स्नेह और त्रिदोष अर्थात् वात-पित्त-कफजनित पीड़ा होती है ॥ ३६ ॥

गुरोः फलम्

जैव्यां मानधनप्राप्तिर्देवब्राह्मणपूजनम् ।
कर्णरोगस्तथा वैरं स्वजनैश्च कलिर्भवेत् ॥ ३७ ॥

बृहस्पति की एकान्तरी दशा हो, तो आदर तथा धन का लाभ, देवता और ब्राह्मणों में भक्ति, कानों में पीड़ा तथा बन्धुओं से विरोध होता है ॥ ३७ ॥

शुक्रस्य फलम्

शौक्र्यां स्त्रीसंगमो लाभो वस्त्राभरणसंयुतः ।
कौशल्यं महती कीर्त्तिर्धनलाभश्च जायते ॥ ३८ ॥

शुक्र की एकान्तरी दशा हो, तो स्त्रीसंगम, आभूषण तथा वस्त्र आदि का लाभ, कलाकुशलता बड़ी कीर्त्ति और धन का लाभ होता है ॥ ३८ ॥

शनेः फलम्

शनैश्चर्यां देहपीडा पुत्रदारैश्च विग्रहः ।
तन्द्रा श्रमो बुद्धिनाशो विदेशगमनं भवेत् ॥ ३९ ॥

शनि की एकान्तरी दशा हो, तो देह में पीड़ा, पुत्र तथा स्त्री से विरोध, आलस्य, श्रम, बुद्धिनाश तथा विदेशयात्रा होती है ॥ ३९ ॥

राहोः फलम्

स्वर्भानौ जायते दुःखं बन्धूनामात्मनो रुजः ।
देशान्तरेषु गमनं धननाशोऽपि विग्रहः ॥ ४० ॥

राहु की एकान्तरी दशा हो, तो बन्धुओं तथा अपने को दुःख, गुप्तरोग, विदेशयात्रा, धननाश और विरोध होता है ॥ ४० ॥

केतोः फलम्

केतोर्दशायां स्यान्नादो द्रव्यपुत्रक्षयौ तथा ।
शत्रुराजकुलाद्भीतिरनर्थो बहुधा भवेत् ॥ ४१ ॥

केतु की एकान्तरी दशा हो, तो लोगों से विवाद, द्रव्यव्यय, पुत्रपीड़ा, शत्रु तथा राजपक्ष से भय और अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं ॥ ४१ ॥

वर्षे योगिनीदशाप्रकारः

जन्मनक्षत्रसंख्यां च गतवर्षेषु योजयेत् ।
त्रियुतं च तदष्टाभिर्भाजिते मंगलादिका ॥ ४२ ॥

गतवर्षों में जन्मनक्षत्र की संख्या को जोड़कर तीन जोड़ देवे। उसमें ८ का भाग देने से शेष मंगला आदि योगिनी दशा होती है। योगिनी दशा के स्वामी तथा दशा की दिनसंख्या चक्र में स्पष्ट है * ४२॥

दशास्वामिनः

स्वामिनः	चं०	सू०	वृ०	मं०	बु०	श०	शु०	रा०
दशा	मंगला	पिंगला	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	संकटा
दिनानि	१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०

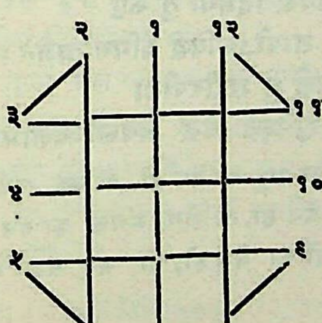
* इन दशाओं का फल नाम के सदृश होता है शुभग्रहों की दशा में शुभग्रहों का अन्तर हो, तो शुभ तथा पापग्रहों का अन्तर हो, तो शुभ नहीं होता है। पापग्रहों की दशा में पापग्रह का अन्तर हो, तो अत्यन्त अशुभ तथा पापग्रह की दशा में शुभग्रह की अन्तर्दशा हो, तो अशुभ होता है। जन्म में या वर्ष में जो ग्रह अपने घर का हो या उच्च का हो या मित्र के घर का हो या मित्र की हद्दा आदि का हो या शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो, तो उस ग्रह की दशा शुभ होती है। यदि ग्रह नीच का हो या शत्रु के घर का हो या अस्त का हो या ८। ६। १२ स्थानों का स्वामी हो, तो उस ग्रह की दशा अशुभ होती है। चन्द्रमा ४। ८। २। १। ६ स्थानों में स्थित हो, तो अशुभ होता है।

त्रिपताकचक्रप्रकारः

रेखात्रयं तिर्यगथोर्ध्वसंस्थ-
मन्योन्यविद्धाग्रगमेककोणात् ।
स्मृतं बुधैस्तत्त्रिपताकचक्रं
प्राङ्मध्यरेखाग्रगवर्षलग्नात् ॥ ४३ ॥

३ रेखा तिरछी और ३ रेखा खड़ी खींचे । एक कोण से दूसरे कोण तक भी रेखा खींचे इसको त्रिपताकचक्र कहते हैं । मध्य में ऊपर की ओर जो रेखा है उसको वर्षलग्न मानना चाहिए ॥४३॥

त्रिपताकचक्रं वर्षलग्नं वा



न्यसेद्धचक्रं किल तत्र सैका
याताब्दसंख्यां विभजेन्न भोगैः ।
शेषोन्मिते जन्मगचन्द्रराशे-
स्तुल्ये च राशौ विलिखेच्छशाङ्कम् ॥ ४४ ॥

त्रिपताक चक्र में राशियों को लिखे। गतवर्ष की संख्या में १ जोड़कर ९ का भाग देने से जो शेष रहे उसको जन्मराशि के चन्द्रमा में जोड़ दे। जो योगफल हो उसके तुल्य स्थान में चन्द्रमा को लिखे ॥ ४४ ॥

परेचतुर्भाजितशेषतुल्ये
स्थानेऽत्र राशौ खचराश्च लेख्याः ॥ ४५ ॥

गतवर्ष में ४ का भाग दे, जो शेष बचे उसको जन्म के सूर्य आदि के अङ्क में जोड़ दे। जो फल मिले उस स्थान में सूर्य आदि को लिख देवे राहु और केतु में शेष अंक को घटा देवे ॥ ४५ ॥

स्वर्भानुविद्धे हिमगौ तु कष्टं
तापोऽर्कविद्धे रुगिनात्मजेन।
महीजविद्धे तु शरीरपीडा
शुभैश्च विद्धे जयसौख्यलाभः ॥ ४६ ॥

यदि चन्द्रमा पर राहु का वेध हो, तो कष्ट, सूर्य का वेध हो, तो सन्ताप, शनि का वेध हो, तो रोग, मंगल का वेध हो, तो शरीर-पीड़ा तथा शुभग्रहों का वेध हो, तो जय तथा सुख का लाभ होता है ॥ ४६ ॥

द्विजन्मायोगः

वर्षलग्नजनुर्लग्ने भवेतां च यदा समे।
द्विजन्माख्यस्तदा योगः कष्टमृत्युप्रदायकः ॥ ४७ ॥

जिस वर्ष में जन्मलग्न तथा वर्षलग्न एक ही हो, तो द्विजन्मायोग होता है। उसका फल कष्ट या मृत्यु होता है ॥ ४७ ॥

वर्षस्य पूर्वापरभागे शुभाशुभज्ञानम्

ये जन्मकाले बलिनोऽब्दवेशे
चेद् बलास्तैरशुभं समान्ते।
विपर्यये पूर्वमनिष्टमुक्तं
तुल्यं फलं स्यादुभयत्र साम्ये ॥ ४८ ॥

जो ग्रह जन्मकाल में बलवान् हो परन्तु वर्ष में बलहीन हो, तो वर्ष के अन्त में अशुभ होता है। यदि इसके विपरीत हो, तो वर्ष के पूर्वभाग में अनिष्ट होता है। यदि वर्ष तथा जन्म दोनों में समान हो, तो पूर्व तथा अन्त दोनों भागों में समान फल होता है ॥ ४८ ॥

ये जन्मनि स्युः सबला विवीर्या
वर्षे शुभं प्राक् चरमं त्वनिष्टम्।
दद्युर्विलोमं त्रिपरीततायां
तुल्यं फलं स्यादुभयत्र साम्ये ॥ ४९ ॥

जो ग्रह जन्म में बली हों, वर्ष में बलहीन हों, तो वर्ष के पूर्व भाग में शुभ तथा अन्तभाग में अशुभ फल देते हैं। यदि इसके विपरीत हो, तो विपरीत फल देते हैं। यदि उभयत्र समान हो, तो समान फल देते हैं ॥ ४९ ॥

वर्षे तिथिफलम्

नन्दा भद्रा जया पूर्णा शुभदास्तिथयो मताः।
द्वादश्याद्याश्च रिक्ता च न शुभा वर्षवेशने ॥ ५० ॥

वर्षप्रवेश में नन्दा, भद्रा, जया और पूर्णासंज्ञक तिथियाँ शुभ फल देनेवाली तथा द्वादशी आदि तिथियाँ और रिक्तासंज्ञक तिथियाँ अशुभ फल देनेवाली होती हैं ॥ ५० ॥

वारफलम्

सोमो बुधो गुरुः शुक्रो वाराश्चत्वार उत्तमाः ।
भौमार्कशनिवाराश्च वर्षे हानिभयप्रदाः ॥ ५१ ॥

वर्षप्रवेश में सोम, बुध, गुरु और शुक्रवार उत्तम तथा भौम, रवि और शनिवार हानि एवं भय करनेवाले होते हैं ॥ ५१ ॥

नक्षत्रफलम्

अश्विनी मृगशीर्षं च हस्तः पुष्यः पुनर्वसुः ।
स्वाती च रेवती चैव वर्षवेशे शुभावहाः ॥ ५२ ॥

वर्षप्रवेश में अश्विनी, मृगशिरा, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, स्वाती तथा रेवती नक्षत्र शुभ हैं ॥ ५२ ॥

कृत्तिका रोहिणी चार्द्रा ज्येष्ठा मूलाख्यतारकाः ।
श्रवणं चानुराधा च मध्यं पूर्वोत्तरात्रयम् ॥ ५३ ॥

वर्षप्रवेश में कृत्तिका, रोहिणी, आर्द्रा, ज्येष्ठा, मूल, श्रवण, अनुराधा और तीनों पूर्वा तथा तीनों उत्तरा नक्षत्र मध्यम होते हैं ॥ ५३ ॥

भरणी च मघा चित्रा विशाखा शततारका ।
धनिष्ठाश्लेषिका प्रोक्ता वर्षवेशेऽतिनिन्दिताः॥ ५४ ॥

वर्षप्रवेश में भरणी, मघा, चित्रा, विशाखा, शतभिषा, धनिष्ठा तथा आश्लेषा अतिनिन्द्य होते हैं ॥ ५४ ॥

योगफलम्

विरुद्धयोगे विष्ट्यां च वर्षवेशो न शोभनः ॥ ५५ ॥

यदि वर्ष का प्रवेश निन्द्य योगों तथा भद्रा में हो, तो अशुभ होता है ॥ ५५ ॥

लग्नफलम्

शुभग्रहयुते सौम्ये वर्षस्वामिदृशा युते ।
रोगोद्वेगापदां नाशः सुतदारादिसम्पदः ॥ ५६ ॥

वर्षप्रवेशकाल में लग्न यदि शुभग्रह से युक्त या शुभग्रह से दृष्ट या वर्षेश से दृष्ट हो, तो रोग, उद्वेग और आपत्तियों का नाश होता है तथा पुत्र, स्त्री और सम्पत्ति का सुख होता है ॥ ५६ ॥

क्रूरवर्षे क्रूरयुते क्रूरस्यापि दृशा युते ।
रोगोद्वेगौ भयं दुःखं ज्वरो हानिर्दरिद्रता ॥ ५७ ॥

यदि वर्षलग्न क्रूर हो या क्रूर से युक्त या दृष्ट हो, तो रोग, गुप्तचिन्ता, गुप्तपीड़ा, शत्रुभय, ज्वर आदि का क्लेश, व्यापारहानि तथा धनव्यय होता है ॥ ५७ ॥

मतान्तरेण वर्षे शुभाशुभफलम्

जन्माब्दाङ्गपरन्ध्रपाब्दमुथहानाथाबलाढ्यास्तदा
रम्यं वर्षमुशन्ति सर्वमतुलं सौख्यं यशोऽर्थागमः ।
षष्ठाष्टान्त्यगता न चेदिह पुनस्ते दुःखभीतिप्रदा
निर्वीर्या यदि वर्षमतदशुभं वाच्यं शुभेत्तां विना ॥५८॥

जन्मलग्न का स्वामी, वर्षलग्न का स्वामी, अष्टमेश, मुन्थेश ये बलवान् हों, ६ । ८ । १२ स्थानों में न हों, तो साल भर तक अच्छा रहता है। उस वर्ष में सुख, यश और धन की प्राप्ति होती है। यदि वे बलवान् न हों, ६ । ८ । १२ स्थानों में हों, तो दुःख, शत्रूपद्रव और धनव्यय होते हैं। यदि वे बलरहित तथा शुभग्रहों की दृष्टि से रहित होकर अन्य स्थानों में रहें, तो भी अशुभ होता है ॥ ५८ ॥

मुन्थाफलम्

शत्रुनाशं सुताप्तिं च सम्मानं राज्यतो धनम् ।
देहसौख्यं विधत्ते वै मुन्था लग्नगता सुखम् ॥ ५६ ॥

लग्न में मुन्था हो, तो शत्रुनाश, सन्तानलाभ, राजपक्ष से सम्मान, धनलाभ तथा शरीर के लिये विविध सौख्य होता है ॥ ५६ ॥

कीर्त्तिं धनागमं मुन्था वित्तभावगता मुदाम् ।
ददाति राज्यतो वित्तं तेजोवृद्धिं सुभोजनम् ॥ ६० ॥

दूसरे स्थान में मुन्था हो, तो कीर्ति, धन, राजपक्ष से लाभ, प्रताप की वृद्धि तथा सुन्दर भोजन देती है ॥ ६० ॥

युद्धात्कीर्त्तिं च सम्मानं देहपुष्टिं सुखं तथा ।
सद्धर्मे निरतिं दत्ते मुन्था वै भ्रातृभावगा ॥ ६१ ॥

तृतीय स्थान में मुन्था हो, तो युद्ध से कीर्त्ति, सम्मान, शरीर-पुष्टि, विविध सुख तथा धर्म में प्रीति देती है ॥ ६१ ॥

देहपीडां रुजोत्पत्तिं निन्दाव्यापारबन्धताम् ।
महादुःखं करोत्येवं मुन्था पातालभावगा ॥ ६२ ॥

चतुर्थ स्थान में मुन्था हो, तो शरीरपीड़ा, गुप्तरोग, लोकापवाद, व्यापार में हानि तथा अधिक क्लेश देती है ॥ ६२ ॥

सुतभावगता मुन्था पुत्रबुद्धिधनागमम् ।
तेजोवृद्धिं प्रदत्ते च सौख्यं भार्यारतिं तथा ॥ ६३ ॥

पञ्चमभाव में मुन्था हो, तो पुत्र, बुद्धि, धन, प्रताप, विशिष्ट सौख्य तथा स्त्री से प्रीति देती है ॥ ६३ ॥

दौर्बल्यं वैरिसन्तापं कार्यबुद्धिविपर्ययम् ।
रोगोत्पत्तिं भयं चैव चौरान्मुन्था रिपुस्थिता ॥ ६४ ॥

षष्ठभाव में मुन्था हो, तो शरीरकृशता, शत्रु से सन्ताप, व्यापार तथा बुद्धि में हानि, रोग और चोरभय देती है ॥ ६४ ॥

स्त्रीपुत्रबन्धुदुःखं च विधत्ते रिपुतो भयम् ।
धनधर्मविनाशं च मुन्था द्यूनगता सदा ॥ ६५ ॥

सप्तमभाव में मुन्था हो, तो स्त्री, पुत्र, बन्धुओं का दुःख, शत्रु से भय तथा धन और धर्म का नाश करती है ॥ ६५ ॥

वित्तहानिं रिपोर्भीतिं विदेशगमनं तथा ।
रोगोत्पत्तिं करोत्येवं मुन्थारंध्रगता सदा ॥ ६६ ॥

अष्टमभाव में मुन्था हो, तो शत्रुभय, चौरभय, धन तथा धर्म का नाश, बुरे कार्यों में प्रीति, रोग, बलहानि और दूरगमन होता है ॥ ६६ ॥

पदाप्तिं धर्मवृद्धिं च पुत्रस्त्रीसौख्यमेव च ।
भाग्योदयं करोत्याशु मुन्था भाग्यस्थिता यशः ॥ ६७ ॥

नवमभाव में मुन्था हो, तो लोगों में कीर्ति, राजपक्ष से लाभ, धर्म की वृद्धि, पुत्र तथा स्त्री से सुख और भाग्योदय होता है ॥ ६७ ॥

सत्कर्मस्थिरतां मुन्था कीर्त्तिं विद्याधनागमम् ।
परोपकारितां चापि कर्मस्था कुरुते सुखम् ॥ ६८ ॥

दशम स्थान में मुन्था हो, तो राजपक्ष से विशेष लाभ, सुन्दर कार्य, विद्या तथा धन का लाभ, परोपकार और विशेष सुख देती है ॥ ६८ ॥

लाभगा कुरुते मुन्था भोगभाग्योदयं मुदम् ।
आरोग्यतां मनस्तोषं राज्यतश्च धनागमम् ॥ ६९ ॥

एकादश स्थान में मुन्था हो, तो विशेष भाग्योदय, सुन्दर विलास, आरोग्यता, मन की प्रसन्नता और राजपक्ष से लाभ करती है ॥ ६९ ॥

व्ययाधिक्यं शरीरार्त्तिं कुरुते दुष्टसंगतिम् ।
द्रव्यधर्मविनाशं च मुन्था द्वादशभावगा ॥ ७० ॥

द्वादश स्थान में मुन्था हो, तो अधिक खर्च, शरीरपीड़ा, दुष्ट से मेल तथा असत्कार्य में द्रव्य का नाश करती है ॥ ७० ॥

सूर्यादिगृहस्थमुन्थाफलम्

सूर्यगृहस्थमुन्थाफलम्

यद्देन्थिहा सूर्यगृहे युता वा
सूर्येण राज्यं नृपसंगमं च ।

दत्ते गुणानां परभोगमाप्तिं
स्थानान्तरस्येति फलं दृशोऽपि ॥ ७१ ॥

यदि मुन्था सूर्य के घर में हो या सूर्य से युक्त या दृष्ट हो, तो वह राजा से मेल, गुणों का लाभ, अत्यन्त सुख तथा स्थानान्तर का लाभ करती है ॥ ७१ ॥

चन्द्रगृहस्थमुन्थाफलम्

चन्द्रेण युक्तेन्दुगृहेऽथ दृष्टे-
न्दुनापि वा धर्मयशोऽभिवृद्धिम् ।
नैरुज्यसन्तोषमतिप्रवृद्धिं
ददाति पापेक्षणतोऽपि दुःखम् ॥ ७२ ॥

जब मुन्था चन्द्रमा से युक्त हो या चन्द्रमा के घर में हो या चन्द्रमा से दृष्ट हो, तो वह धर्म और यश की वृद्धि, आरोग्यता, चित्त में सन्तोष तथा बुद्धि की वृद्धि करती है। यदि पापग्रह से दृष्ट हो, तो मुन्था अति दुःख देती है ॥ ७२ ॥

भौमगृहस्थमुन्थाफलम्

कुजेन युक्ता कुजभे कुजेन
दृष्टा च पित्तोत्थरुजं तनोति ।
शस्त्राभिघातं रुधिरप्रकोपं
सौरीक्षिता सौरिगृहे विशेषात् ॥ ७३ ॥

जब मुन्था मंगल से युक्त हो या मंगल के घर में हो या मंगल से दृष्ट हो, तो वह पित्तरोग, शस्त्र से घाव तथा रुधिर-विकार करती है। यदि शनि के घर में हो या शनि से युक्त या दृष्ट हो, तो पूर्वोक्त फल विशेष घटित होता है ॥ ७३ ॥

बुधगृहस्थमुन्थाफलम्

बुधेन शुक्रेण युतेक्षितापि
तद्भेऽपि वा स्त्रीमतिलाभसौख्यम् ।

धर्मं यशश्चाप्यतुलं विधत्ते
कष्टं च पापेक्षणयोगतः स्यात् ॥ ७४ ॥

मुन्था बुध या शुक्र से युक्त हो या इनके घर में हो या इनसे दृष्ट हो, तो वह स्त्री, बुद्धि का लाभ, सुख, धर्म तथा यश देती है। यदि पापग्रह का योग या दृष्टि हो, तो कष्ट देती है ॥ ७४ ॥

गुरुगृहस्थमुन्थाफलम्

युतेक्षिता वा गुरुणा गुरोर्भे
यदीन्थिहा पुत्रकलत्रसौख्यम् ।
ददाति हेमाम्बररत्नभोगं
शुभेत्थशालादिह राज्यलाभः ॥ ७५ ॥

जब मुन्था बृहस्पति से युक्त या दृष्ट या इसके घर में हो, तो पुत्र और स्त्री का सुख, सुवर्ण, वस्त्र तथा रत्नों का भोग मिलता है। यदि शुभ इत्थशाल योग हो, तो राज्य का लाभ होता है ॥७५॥

शनिगृहस्थमुन्थाफलम्

शनेर्गृहे तेन युतेक्षिता वा
यदेन्थिहा वातरुजं विधत्ते ।
मानक्षयं वह्निभयं धनस्य
हानिं च जीवेक्षणतः शुभाप्तिम् ॥ ७६ ॥

जब मुन्था शनि के घर में हो या युक्त हो या दृष्ट हो, तो वात-रोग, मानहानि, अग्निभय और धन का नाश होता है। यदि उस-पर बृहस्पति की दृष्टि हो, तो शुभ फल देती है ॥ ७६ ॥

राहोर्मुखपुच्छं फलं च

भोग्या राहोर्लवास्तस्य मुखं पृष्ठं गता लवाः ।
ततः सप्तमभं पुच्छं त्रिस्पृश्येति फलं वदेत् ॥ ७७ ॥

राहु के जो भोग्य अंश होते हैं उनको राहु का मुख, जो अंश भुक्त हो गए हैं उनको पृष्ठ, जिस राशि पर राहु स्थित हो उससे

सातवीं राशि को पुच्छ कहते हैं। इन सब बातों का विचार करके फल कहना चाहिए * ॥ ७७ ॥

तमोमुखे चेन्मुथहा धनाप्तिं यशः सुखं धर्मसमुन्नतिं च।
सितेज्ययोगेक्षणतः पदाप्तिं सुवर्णरत्नाम्बरलब्धयश्च ॥७८॥

जब मुन्था राहु के मुख में हो, तो धनलाभ, यश, सुख तथा धर्म की वृद्धि होती है। यदि शुक्र या बृहस्पति से युक्त या दृष्ट हो, तो अच्छे पद का लाभ, सुवर्ण, रत्न तथा वस्त्रों का लाभ होता है ॥ ७८ ॥

तत्पृष्ठभागे न शुभप्रदा स्यात्तत्पुच्छभागाद्रिपुभीतिकष्टम्।
पापेक्षणादर्थसुखस्य हानिश्चेज्जन्मनीत्थंगृहवित्तनाशः७९॥

मुन्था राहु के पृष्ठ में हो, तो शुभ नहीं, पुच्छ में हो, तो शत्रु से भय तथा कष्ट, पापग्रह की दृष्टि हो, तो धन तथा सुख का नाश, जन्म में भी ऐसा ही हो, तो गृह तथा धन का नाश होता है ॥७९॥

मुन्थेशफलम्

मुन्थाधिपो व्ययविनाशगतो विवीर्यो
दुष्टग्रहस्त्वशुभवर्गगतोऽब्दकाले।
कष्टं नृणां परिकरोति भयं विवादं
लोकैस्तथा निजजनैः कलहं नितान्तम् ॥ ८० ॥

वर्षप्रवेश में मुन्थेश यदि १२। ८ स्थानों में निर्बल होकर स्थित

---

* राहु सदा वक्री ग्रह है। जैसे और ग्रह एक अंश से तीस अंश तक भोग करते हैं, राहु उसके विपरीत तीस अंश से एक अंश तक भोग करता है। जैसे राहु मेष के ८ अंश पर है, तो ८ अंश मुखसंज्ञक हैं, जो २२ अंश भुक्त हो गए हैं उसको पृष्ठ, मेष से तुला सातवां होती है इसलिये तुला को पुच्छ जान लेना चाहिए।

हो और क्रूरग्रह पापवर्ग में स्थित हों, तो मनुष्यों को भय, विवाद, स्वजनों तथा अन्य लोगों से अत्यन्त विवाद उपस्थित करता है ॥ ८० ॥

भाग्ये च लाभे सहजे च केन्द्रे
चेद्वर्षकाले मुथहाधिनाथः ।
करोति पुंसां विपुलं प्रतापं
मैत्री नृपैः सम्मतिवर्धनं च ॥ ८१ ॥

वर्ष में मुन्थेश यदि भाग्य, लाभ, सहज तथा केन्द्र (९ । ११ ३ । १ । ४ । ७ । १०) इन स्थानों में हो, तो अत्यन्त प्रताप, राजा से मेल, अच्छी बुद्धि तथा विशेष लाभ करता है ॥ ८१ ॥

वर्षेशफलम्

व्ययारिरन्ध्रप्रमितास्तु भावा-
न्विहाय चेद्वर्षपतिः स्थितः स्यात् ।
परेषु भावेषु ददाति वित्तं
सुखं च राज्याश्रयतो बलिष्ठः ॥ ८२ ॥

वर्षेश बली होकर १२ । ६ । ८ इन स्थानों को छोड़कर अन्यत्र स्थित रहे, तो धन, सुख तथा राजपक्ष से प्रतिष्ठा देता है ॥ ८२ ॥

पूर्णबलस्य वर्षेश्वरसूर्यस्य फलम्

स्वोच्चादिगो वर्षपतिश्च भानु-
र्बली प्रतिष्ठां रिपुनाशमाशु ।
कीर्त्तिं विशालां सुतवित्तलाभं
सुखं प्रभूतं कुरुते पदाप्तिम् ॥ ८३ ॥

अपने उच्च आदि स्थान में बली होकर सूर्य वर्षेश हो, तो विशेष प्रतिष्ठा, कीर्त्ति, पुत्र, धन, अत्यन्त सुख और कुल के अनुसार स्थान का लाभ करता है ॥ ८३ ॥

मध्यबलत्वे हीनबलत्वे च सूर्यफलम्

मध्यश्च पूर्वोक्तफलं च मध्यं
ददाति कार्श्यं धनहानिमेवम् ।
नीचो विदेशे गमनं च दुःखं
जनापवादं रिपुनाशमाशु ॥ ८४ ॥

मध्यबली होकर सूर्य वर्षेश हो, तो पूर्वोक्त फल मध्यम, कृशता और धनहानि करता है। नीच बली होकर वर्षेश हो, तो विदेश-गमन, दुःख, लोकापवाद और शत्रुनाश करता है ॥ ८४ ॥

पूर्णबलस्य चन्द्रस्य फलम्

चन्द्रेऽब्दपे स्वर्क्षगते धनाप्तिः
स्त्रीपुत्रमित्रादिसुखं प्रतिष्ठा ।
मैत्री नवीना सुजनैश्च सार्धं
स्याद्वै बलिष्ठे च शरीरपुष्टिः ॥ ८५ ॥

चन्द्रमा बली होकर तथा अपने घर में स्थित होकर वर्षेश हो, तो स्त्री, पुत्र, मित्र, बन्धु का सुख, प्रतिष्ठा, सज्जनों के साथ मैत्री और शरीरपुष्टि करता है ॥ ८५ ॥

मध्यबलत्वे हीनबलत्वे च चन्द्रफलम्

मध्ये बले दुर्बलता रुजाप्तिः
सर्वं फलं पूर्वगतं च मध्यम् ।
नीचे शशांके धनधान्यनाशो
वातादिवृद्धिः कृशता शरीरे ॥ ८६ ॥

चन्द्रमा मध्यबली हो, तो वह दुर्बलता, रोग तथा पूर्वोक्त मध्यम फल देता है। चन्द्रमा अल्पबली हो, तो धनधान्य का नाश, वायु की वृद्धि तथा शरीर में कृशता होती है ॥ ८६ ॥

पूर्णबलस्य भौमस्य फलम्

भौमेऽब्दपे स्वर्क्षगते बलिष्ठे
कीर्त्तिर्भवेच्छत्रुविनाशनं च ।
सेनापतित्वं द्रविणागमश्च
मित्रादिसौख्यं सततं जनानाम् ॥ ८७ ॥

अपने घर में बली होकर स्थित हुआ मंगल वर्षेश हो, तो वह विशेष कीर्त्ति, शत्रु का विनाश, फ़ौज का स्वामी, धन का लाभ तथा मित्र आदि से मेल कराता है ॥ ८७ ॥

मध्यबलत्वे हीनबलत्वे च भौमफलम्

मध्येतिरोगो रुधिरप्रकोपो
निन्दाक्षती दुःखततिश्च तीव्रा ।
नीचे भवेच्छत्रुभयं च बुद्धि-
ह्रासोऽग्निचौरातिभयं रुजार्त्तिः ॥ ८८ ॥

मंगल मध्यबली हो, तो रुधिर का विकार, निन्दा, धनहानि तथा अनेक प्रकार के दुःख होते हैं । मंगल नीचबली हो, तो शत्रु-भय, बुद्धिभ्रम, अग्नि तथा चौर से भय, गुप्तरोग और गुप्तचिन्ता होती है ॥ ८८ ॥

पूर्णबलस्य बुधस्य फलम्

स्वोच्चादिगे वर्षपतौ बुधे तु
विद्यां पदाप्तिर्जयवित्तलाभः ।
सौख्यं च राज्याश्रयतो भवेद्वै
कीर्त्तिर्बलिष्ठे विविधा प्रतिष्ठा ॥ ८९ ॥

अपने उच्च आदि स्थान में बली होकर स्थित बुध वर्षेश हो, तो वह अच्छी विद्या, किसी स्थान का लाभ, जय, धन, सौख्य तथा राजपक्ष से कीर्त्तिलाभ करता है ॥ ८९ ॥

मध्यबलत्वे हीनबलत्वे च बुधफलम्

मध्ये तु पूर्वोक्तफलं च मध्यं
नीचे भवेद् बुद्धिविपर्ययश्च ।
धर्मार्थहानिः कलहश्च साकं
मित्रैः सुतैश्चापि पराजयः स्यात् ॥ ६० ॥

बुध मध्यबली हो, तो पूर्वोक्त फल मध्यम होता है। बुध नीचबली हो, तो बुद्धिभ्रम, धर्म तथा धन का नाश, मित्र तथा पुत्रों से कलह और शत्रु से पराजय होता है ॥ ६० ॥

पूर्णबलस्य गुरोः फलम्

स्वोच्चस्थिते देवगुरौ बलिष्ठे
कुटुम्बसौख्यं धनकीर्त्तिलाभः ।
पुत्रप्रतिष्ठानिधिलाभ एव
भवेत्सदा वर्षपतौ पदाप्तिः ॥ ६१ ॥

अपने उच्च आदि स्थान में बली होकर स्थित बृहस्पति वर्षेश हो, तो कुटुम्बसौख्य, धन तथा कीर्त्ति का लाभ, पुत्र की प्रतिष्ठा, ख़ज़ाना का लाभ एवं विशेष प्रतिष्ठित पद की प्राप्ति होती है ॥ ६१ ॥

मध्यबलत्वे हीनबलत्वे च गुरुफलम्

सर्वं फलं मध्यमिदं च मध्ये
कृच्छ्रार्थलाभो रमणीवियोगः ।
नीचस्थिते वित्तसुसौख्यधर्म-
ह्रासो भवेत्स्त्रीसुतबन्धुदुःखम् ॥ ६२ ॥

बृहस्पति मध्यबली हो, तो पूर्वोक्त फल मध्यम, क्लेश से धनलाभ तथा स्त्रीवियोग होता है। बृहस्पति नीच का हो, तो धन, सुख तथा धर्म का नाश, स्त्री, पुत्र और बन्धु का दुःख होता है ॥ ६२ ॥

पूर्णबलस्य शुक्रस्य फलम्

शुक्रेऽब्दपे स्वोच्चगते बलिष्ठे
भूक्षेत्रलाभो वनिताविलासः ।
रोगप्रशान्तिर्द्रविणागमश्च
राज्याद्भवेत्सौख्यमहर्निशं वै ॥ ९३ ॥

अपने उच्च आदि स्थान में बली होकर स्थित शुक्र वर्षेश हों, तो भूमिलाभ, स्त्रीविलास, रोगशान्ति, धनलाभ, दिनोदिन राजपक्ष से सौख्य प्राप्त होता है ॥ ९३ ॥

मध्यबलत्वे हीनबलत्वे च शुक्रफलम्

मध्येऽर्थहानिर्बहुदुःखजातं
भवेदिदं सर्वफलं च मध्यम् ।
नीचस्थिते स्त्रीसुतमित्रवैरं
निन्दा च नित्यं निजवृत्तिनाशः ॥ ९४ ॥

शुक्र मध्यबली हो, तो धनहानि, अनेक प्रकार के दुःख एवं पूर्वोक्त फल मध्यम होता है । शुक्र नीच का हो, तो स्त्री, पुत्र तथा मित्र से वैर, लोकापवाद और अपनी वृत्ति का नाश होता है ॥९४॥

पूर्णबलस्य शनेः फलम्

मन्देऽब्दपे स्वोच्चगते बलिष्ठे
नवीनभूक्षेत्रगृहादिलाभः ।
आरोग्यमारामतडागवापी-
विधौ व्ययः स्याच्च कुलप्रतिष्ठा ॥ ९५ ॥

अपने उच्च आदि स्थान में बली होकर स्थित शनि वर्षेश हो, तो नवीन पृथिवी, मकान आदि का लाभ, आरोग्य, बगीचा, तालाब, कूप आदि के कार्यों में धन का खर्च तथा कुल की प्रतिष्ठा होती है ॥ ९५ ॥

मध्यबलत्वे हीनबलत्वे च शनिफलम्

मध्ये फलं सर्वमिदं च मध्यं
कृच्छ्राद्धनाप्तिस्तु भवेद्धि निन्दा ।
नीचस्थिते हीनबले च मन्दे
कार्यार्थनाशो रिपुतो भयं स्यात् ॥ ९६ ॥

शनैश्चर मध्यबली हो, तो पूर्वोक्त फल मध्यम एवं क्लेश से धनलाभ तथा लोकापवाद होता है। शनि हीनबली तथा नीचस्थित हो, तो कार्य तथा धन का नाश और शत्रु से भय प्राप्त होता है ॥ ९६ ॥

षोडशयोगानां संक्षेपः

इक्कबालेन्दुवाराख्याविथशालस्ततः परम् ।
ईसराफश्च नक्तं च यमया मणऊ ततः ॥ ९७ ॥
कम्बूलं गैरिकम्बूलं खल्लासरकरद्दके ।
ततो दुष्फालिकुत्थश्च दुत्थदव्बीरतम्बिरौ ॥
कुत्थश्च दुरितश्चैते योगाः षोडश कीर्तिताः ॥ ९८ ॥

इक्कबाल, इन्दुवार, इत्थशाल, ईसराफ, नक्त, यमया, मणऊ, कम्बूल, गैरिकम्बूल, खल्लासर, रद्द, दुप्फालिकुत्थ, दुत्थदव्बीर, तम्बीर, कुत्थ तथा दुरित ये सोलह योग कहे गये हैं ॥ ९७-९८ ॥

षोडशयोगफलानि

इत्थशालः स्वयंकर्त्ता यमया नक्तमन्यतः ।
ईसराफः स्वयंहर्त्ता मणऊ चान्यहस्ततः ॥ ९९ ॥

इत्थशाल योग स्वयं कार्य करता है। यमया और नक्त योग दूसरों के द्वारा कार्य कराते हैं। ईसराफ योग स्वयं काम को बिगाड़ता है। मणऊ योग दूसरे के हाथ से कार्य को बिगड़वाता है ॥ ९९ ॥

खल्लासरैः फलाभाव इति वर्षे विचिन्तयेत् ।
उत्तमोत्तमकम्बूलमुत्तमोत्तमकार्यकृत् ॥ १०० ॥

खल्लासर योग में कुछ फल नहीं होता है । इसका विचार वर्ष-फल में आवश्यक है । उत्तम कम्बूल उत्तम कार्यों को करता है ॥ १०० ॥

यदीत्थशालः खचरैश्च सौम्यैः
कृतोऽब्दलग्ने परिपूर्णकश्च ।
धत्ते तदासौ विविधान्विलासान्
धनागमं कान्तिविवर्धनं च ॥ १०१ ॥

जिस वर्ष में सौम्य ग्रहों का पूर्ण इत्थशाल हो उस वर्ष अनेक प्रकार के भोग-विलास, धन की प्राप्ति तथा कान्ति की वृद्धि होती है ॥ १०१ ॥

ग्रहाणां दीप्तांशकाः

तिथ्यर्काष्टनगाङ्कशैलखचराः सूर्यादिदीप्तांशकाः ॥ १०२ ॥

सूर्य के १५, चन्द्रमा के १२, मंगल के ८, बुध के ७, बृहस्पति के ९, शुक्र के ७ तथा शनि के ९ दीप्तांशक होते हैं ॥ १०२ ॥

पूर्वोक्तषोडशयोगानां लक्षणानि फलानि च

इक्बालयोगफलम्

चेत्कण्टके पणफरे च खगाः समस्ताः
स्यादिक्कबाल इति राज्यसुखाप्तिहेतुः ॥ १०३ ॥

यदि कण्टक (केन्द्र) अर्थात् १ । ४ । ७ । १० स्थानों तथा पणफर अर्थात् २ । ५ । ८ । ११ स्थानों में सब ग्रह हों, तो इक्बाल योग होता है । इसका फल राज्य तथा सुख की प्राप्ति होती है ॥ १०३ ॥

इन्दुवारयोगफलम्

आपोक्लिमे यदि खगाः स किलेन्दुवारो
न स्याच्छुभः क्वचन ताजिकशास्त्रगीतः ॥ १०४ ॥

यदि सब ग्रह आपोक्लिम अर्थात् ३ । ६ । ९ । १२ स्थानों में स्थित हों, तो इन्दुवार योग होता है । इसका फल ताजिकशास्त्र में शुभ नहीं माना गया है ॥ १०४ ॥

इत्थशाल (मुन्थशिल)-योगविचारः

शीघ्रोऽल्पभागैर्घनभागमन्दे
ऽग्रस्थे निजं तेज उपाददीत ।
स्यादित्थशालोऽयमथो विलिप्ता
लिप्तार्धहीनो यदि पूर्णमेतत् ॥ १०५ ॥

चन्द्रमा, सूर्य, बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति तथा शनैश्चर की चाल एक राशि में क्रमशः २$\frac{1}{4}$ दिन, ३० दिन, ३० दिन, ३० दिन, ४५ दिन, ३६० दिन तथा ९०० दिन होती है । चन्द्रमा, सूर्य, मंगल, बुध तथा शुक्र शीघ्री ग्रह कहलाते हैं । बृहस्पति तथा शनि मन्दगति कहलाते हैं * । इस प्रकार शीघ्री तथा मन्दी ग्रहों को समझकर प्रत्येक ग्रह के तात्कालिक अंश तिथिपत्र से लिख लेवे । यदि शीघ्री ग्रह के अंश कम हों तथा मन्दी ग्रह के अधिक अंश हों, एवं शीघ्री ग्रह से मन्दी ग्रह आगे स्थित हो, तो शीघ्री ग्रह मन्दी ग्रह को अपना तेज देता है । मन्दी ग्रह के अधिक अंशों में शीघ्री ग्रह के कम अंशों को घटाना चाहिए । यदि घटाकर अन्तरफल पूर्वोक्त दीप्तांशकों के भीतर आवे, तो इत्थशाल योग होता है । यदि दोनों का अन्तर ३० कला (आधे अंश) से न्यून हो, तो पूर्ण इत्थशाल योग होता है । इसी को मुन्थशिल योग भी कहते हैं ॥ १०५ ॥

* इन ग्रहों में भी शनि से बृहस्पति, बृहस्पति से मंगल, मंगल से सूर्य, बुध तथा शुक्र शीघ्री हैं । इन तीनों से भी चन्द्र अधिक शीघ्री है । जो ग्रह अधिक चले वह शीघ्री तथा जिसकी चाल कम हो वह मन्दा है ।

लग्नेशकार्याधिपयोर्यथैष
योगस्तथा कार्यमुशन्ति सन्तः ॥ १०६ ॥
लग्नेशकार्याधिपतत्सहाया
यत्र स्युरस्मिन्पतिसौम्यदृष्टे ।
तदा बलाढ्यं कथयन्ति योगं
विशेपतः स्नेहदृशापि सन्तः ॥ १०७ ॥

जिस भाव का विचार करना हो उस भाव के स्वामी का लग्नेश के साथ इत्थशाल होता है। लग्नेश तथा कार्येश का जैसा इत्थशाल हो वैसे ही कार्य का भी शुभ या अशुभ फल जान लेना चाहिए। लग्नेश, कार्येश, लग्नेश का मित्र तथा कार्येश का मित्र ये चारों जिस राशि में हों वह राशि अपने स्वामी या शुभग्रह से दृष्ट हो, तो इत्थशाल योग बलवान् होता है। यदि स्नेह दृष्टि हो, तो और भी विशेप फल देता है। यदि वे शत्रु के घर में पापग्रह से दृष्ट या युक्त हों, तो शुभ फल न्यून हो जाता है। लग्नेश का षष्ठेश, अष्टमेश तथा द्वादशेश के साथ इत्थशाल हो, तो रोगवृद्धि, मृत्यु तथा अधिक व्यय करता है ॥ १०६-१०७ ॥

ईसराफयोगस्तत्फलं च

शीघ्रग्रहो मन्दखगा यदाग्रे प्रयान्ति रूपान्तरभागकेन ।
तदेसराफः कथितोमुनीन्द्रैः कष्टप्रदोऽसौ मुशरीफको वा १०८

यदि शीघ्री ग्रह मन्दी ग्रह से एक अंश भी अधिक हो, तो ईसराफ योग होता है। इसी को मूसरीफ योग भी कहते हैं। इस योग में कष्ट होता है * ॥ १०८ ॥

---

* यह योग इत्थशाल योग का बिलकुल उलटा है। इस योग में शीघ्री और मन्दी ग्रह शुभग्रह हों, तो शुभ तथा पापग्रह हों, तो कार्य का विनाश करते हैं।

नक्तयोगस्तत्फलं च

लग्नेशकार्याधिपयोर्न दृष्टि-
र्मिथोऽथ तन्मध्यगतोऽपि शीघ्रः ।
आदाय तेजो यदि पृष्ठसंस्था-
न्न्यसेदथान्यत्र हि नक्तमेतत् ॥ १०६ ॥

लग्नेश तथा कार्येश इन दोनों की परस्पर दृष्टि न हो तथा इन दोनों के मध्य में कोई अन्य शीघ्री ग्रह आ जावे, तो वह मध्यवाला ग्रह पीछे स्थित ग्रह से तेज लेकर आगे स्थित ग्रह को देता है । इसे नक्तयोग कहते हैं ॥ १०६ ॥

यमयायोगस्तत्फलं च

अन्तःस्थितो मध्यगतिस्तु पश्ये-
द्दीप्तांशकैर्द्वावथ शीघ्रतस्तु ।
नीत्वा महो यच्छति मन्दगाय
कार्यस्य सिद्ध्यै यमया प्रदिष्टः ॥ ११० ॥

लग्नेश तथा कार्येश इन दोनों की परस्पर दृष्टि न हो तथा दोनों के बीच में एक मन्दगति ग्रह बैठा हो, तो यमया योग होता है । इस योग में कार्य की सिद्धि होती है ॥ ११० ॥

मणऊयोगस्तत्फलं च

वक्रः शनिर्वा यदि शीघ्रखेटा-
त्पश्चात्पुरस्तिष्ठति तुर्यदृष्ट्या ।
एकर्क्षसप्तर्क्षभुवा दृशा वा
पश्यन्नथांशैरधिकोनकैश्चेत् ॥ १११ ॥
तेजो हरेत्कार्यपदेत्थशाली
स्थितोऽपि वासौ मणऊ शुभो न ॥ ११२ ॥

यदि शीघ्री ग्रह से मंगल या शनि पीछे या आगे स्थित होकर चतुर्थस्थान दृष्टि से या एकस्थान दृष्टि से या सप्तमस्थान दृष्टि से

अधिक ऊन अंशों से देखता हो, तो मणऊ योग होता है। इस योग का फल शुभ नहीं होता है ॥ १११-११२ ॥

कम्बूलयोगः

लग्नकार्येशयोरित्थशालेऽत्रेन्दित्थशालतः।
कम्बूलं श्रेष्ठमध्यादिभेदैर्नानाविधं स्मृतम् ॥ ११३ ॥

मिथःस्वगेहोच्चगतौ प्रधानं
मध्यं स्वगेहारिगृहादिगौ च।
नीचारिगेहावधमं निरुक्तं
कम्बूलकं चेदथ संग्रहज्ञैः ॥ ११४ ॥

रात्रीश्वरश्चेद्बलिखगेन सार्धं
करोति नूनं यदि चेत्थशालम्।
कम्बूलकोऽसौ कथितस्त्रिभेदैः
सम्पूर्णमध्याधमकैर्महद्भिः ॥ ११५ ॥

यदि लग्नेश तथा कार्येश का परस्पर इत्थशाल हो तथा उन दोनों में से किसी एक के साथ चन्द्रमा भी इत्थशाल करे, तो कम्बूल योग होता है। यदि दोनों स्वगृही या उच्च के हों, तो उत्तम कम्बूल योग होता है। यदि एक स्वगृही दूसरा शत्रुगृही हो, तो मध्यम कम्बूल योग होता है। यदि दोनों नीच या शत्रुगृही हों, तो अधम कम्बूल योग होता है * ॥ ११३-११५ ॥

गैरिकम्बूलयोगः

यस्याधिकारः स्वर्क्षादिः शुभो वाप्यशुभोऽपि वा।
केनाप्यदृश्यमूर्त्तिश्च स शून्याध्वग इष्यते ॥ ११६ ॥
लग्नकार्येशयोरित्थशाले शून्याध्वगः शशी।
उच्चादिपदशून्यत्वान्नेत्थशालोऽस्य केनचित् ॥ ११७ ॥

* इस योग के सोलह भेद होते हैं।

यद्यन्यदृक्षं प्रविश्यैव स्वत्र्योश्चस्थेत्थशालवान् ।
गैरिकम्बूलमेतत्तु पदोनेनाशुभं स्मृतम् ॥ ११८ ॥

जो ग्रह स्वगृही, अपने उच्च का, अपनी हद्दा का, अपने द्रेष्काण का, अपने नवांश का, शुभ फलों का अधिकारवाला न हो तथा अशुभ का भी अधिकारी न हो तथा किसी शुभग्रह या पापग्रह से दृष्ट न हो, तो वह ग्रह शून्यमार्गी कहा जाता है। जब लग्नेश तथा कार्येश का इत्थशाल हो तथा चन्द्रमा शून्यमार्गी हो, चन्द्रमा के साथ लग्नेश तथा कार्येश का इत्थशाल योग न हो, ऐसा चन्द्रमा यदि राशि के अन्त में होकर आगे की राशि में प्रवेश करे। जिस राशि में प्रवेश करे वह राशि जिस ग्रह का अपना घर या अपना उच्च स्थान हो वह ग्रह यदि इसी राशि में स्थित हो और उसी ग्रह के साथ चन्द्रमा इत्थशाल करे, तो वह गैरिकम्बूल योग होता है। यदि अन्य राशि में स्थित चन्द्रमा उसी राशि में स्थित स्वगृह आदि अधिकारों से रहित ग्रह के साथ इत्थशाल करे, तो अशुभ फल देनेवाला होता है ॥ ११६-११८ ॥

खल्लासरयोगस्तत्फलं च

शून्येऽध्वनीन्दुरुभयोर्नेत्थशालो न ना युतिः ।
खल्लासरो न शुभदः कम्बूलफलनाशनः ॥ ११६ ॥

यदि चन्द्रमा शून्यमार्गी * हो और लग्नेश तथा कार्येश किसी के साथ इत्थशाल न करे या लग्नेश तथा कार्येश किसी के साथ चन्द्रमा न हो, तो खल्लासर योग होता है। यह योग शुभ फल नहीं देता है तथा कम्बूल के फल का नाश करता है ॥ ११६ ॥

---

* शून्यमार्गी ग्रह जानने का विधान इसी अध्याय के ११६ वें श्लोक द्वारा देख लेना चाहिए।

रद्दयोगस्तत्फलं च

वक्रेण द्युमणिकराभिगामिनास्तं
प्राप्तं न व्ययरिपुनाशगाभिना च ।
क्रूरेण क्रमिततमः सदेत्थशालं
तद्रद्दं हरति फलं प्रहर्षिणीयम् ॥ १२० ॥

यदि निर्बल अर्थात् वक्री ग्रह, अस्तंगत ग्रह या ६ । ८ । १२ स्थानों में स्थित क्रूर ग्रह अर्थात् नीच ग्रह या शत्रुक्षेत्री ग्रह का किसी भाव के स्वामी के साथ इत्थशाल योग हो, तो रद्द योग होता है । यह योग सब फलों को नाश कर देता है ॥ १२० ॥

दुष्फालिकुत्थयोगस्तत्फलं च

मन्दस्वगेहे यदि वा निजोच्चे
त्रैराशिके वापि निजे प्रकुर्यात् ।
योगं चरेणानधिकारिणा चेद्
दुष्फालिकुत्थः शुभकृन्निरुक्तः ॥ १२१ ॥

यदि मन्दगति ग्रह अपने घर का हो या उच्च का हो या अपने द्रेष्काण, हद्दा तथा नवांश में हो और शुभ अधिकार से रहित शीघ्री ग्रह के साथ इत्थशाल करे, तो दुष्फालिकुत्थ योग होता है । इस योग का फल शुभ होता है ॥ १२१ ॥

दुत्थतब्बीरयोगस्तत्फलं च

लग्नेशकार्याधिपती निर्बलौ योगकारकौ ।
तयोरेकः स्वगेहोच्चादिस्थे नान्येन योगकृत् ॥
दुत्थतब्बीरयोगोऽन्यसाहाय्यात्कार्यकारकः ॥१२२॥

यदि लग्नेश तथा कार्येश दोनों निर्बल हों अर्थात् अस्त, नीच या शत्रुक्षेत्री हों, उनमें से एक अपने घर के या उच्च आदि बलवाले किसी तीसरे ग्रह के साथ इत्थशाल करे, तो दुत्थतब्बीर योग होता है । इस योग में दूसरे के द्वारा कार्य की सिद्धि होती है ॥ १२२॥

तम्बीरयोगस्तत्फलं च

बली राश्यन्तगोऽन्यर्क्षगामो दीप्तांशकैर्ग्रहः ।
दत्तेऽन्यस्मै कार्यकरस्तम्बीरो लग्नकार्ययोः ॥ १२३ ॥

यदि लग्नेश तथा कार्येश का इत्थशाल न हो और उनमें से एक ग्रह बलवान् अर्थात् अपने घर का या उच्च का होकर राशि के अन्त में हो और दूसरी राशि में जाने को तत्पर हो, तो वह अपना तेज दूसरे को देता है। इसको तम्बीर योग कहते हैं। यह योग कार्य करनेवाला होता है ॥ १२३ ॥

कुत्थयोगस्तत्फलं च

खेटःस्वीयगृहादिकण्टकगतः प्राग्लग्नसंलग्नदृक्
सद्भिर्दृग्युतश्च पापयुतिदृक्संवर्जितोऽभ्युद्गमः ।
मार्गी कालबलान्वितः स बलवान् सम्यक्फलावाप्तिदः
कालज्ञैर्बलवीक्षणाय गदितो योगो हि कुत्थाभिधः ॥१२४॥

यदि ग्रह अपने घर का या उच्च आदि केन्द्र में हो या लग्न में हो या लग्न को देखता हो या शुभ ग्रहों से युक्त या शुभग्रहों से दृष्ट हो, पापग्रहों की १।४।७।१० दृष्टि या उनके योग से वर्जित हो, उदयी हो, मार्गी हो, कालबल से युक्त हो, तो वह ग्रह बलवान् तथा शुभफलदायक होता है। शुक्र, चन्द्रमा तथा मंगल यदि उदित हों, तो सायंकाल में बलवान् होते हैं। बृहस्पति तथा शनि अर्धरात्रि के उपरान्त बलवान् होते हैं। सूर्य, मंगल तथा बृहस्पति दिन में बलवान् तथा चन्द्र, बुध, शुक्र तथा शनि रात्रि में बलवान् होते हैं। वृष, सिंह, वृश्चिक तथा कुम्भलग्न में स्थित ग्रह बली होते हैं। पुरुषसंज्ञक ग्रह दशवें स्थान से तीसरे स्थान-पर्यन्त तथा स्त्रीसंज्ञक ग्रह चौथे स्थान से नवें स्थान पर्यन्त बली होते हैं। विषम राशि में पुरुषग्रह तथा सम राशि में स्त्रीग्रह बली होते हैं। सब ग्रहों से बलवान् लग्नस्थ ग्रह, उसके अभाव में

केन्द्रस्थ ग्रह, उसके अभाव में पणफरस्थ अर्थात् द्वितीय, पञ्चम, अष्टम तथा एकादशभावस्थ ग्रह बलवान् होते हैं। आपोक्लिमस्थ अर्थात् तृतीय, षष्ठ, नवम तथा द्वादशभावस्थ ग्रह सबसे निर्बल होता है। ग्रहों का बल विचारने के लिये यह कुत्थ योग होता है ॥ १२४ ॥

लग्नात्षष्ठाष्टमेऽन्त्येऽनृजुररिगृहगो नीचगो वक्रगामी
क्रूरैर्युक्तोऽस्तगो वा यदि न मुथशिली क्रूरनीचारिभस्थैः।
त्वदृष्ट्या क्रूरदृष्टो व्ययरिपुमृतिगैरित्थशालं विधित्सुः
कुर्वन्वा निर्बलो यः स्वगृहनगभगो राहुपुच्छास्यवर्ती ॥१२५॥

यदि ग्रह लग्न से ६। ८। १२ स्थानों में स्थित हो, वक्री हो, शत्रुगृही हो, नीच राशि का हो, क्रूर ग्रहों से युक्त हो, अस्तंगत हो, पापग्रह, नीच ग्रह शत्रुक्षेत्री ग्रहों से इत्थशाल करता हो, क्रूर ग्रहों से क्षुद्दृष्टि (१।४।७।१०) से देखा जाता हो, १२।८।६ स्थानों में स्थित ग्रहों से इत्थशाल करनेवाला हो, अपने घर से सातवें स्थान में स्थित हो तथा जो ग्रह राहु के पुच्छ या मुख में हो, तो वह ग्रह बलहीन होता है। इस योग को दुरफ या दुरित योग कहते हैं * ॥ १२५ ॥

योगानामुपसंहारः

तं तं विशेषं प्रतिपद्यमानो
निरूपितः षोडशधेत्थशालः।
यथा चतुर्विंशतिभेदशाली
स्यात्केशवश्चक्रगदादिभेदैः ॥ १२६ ॥

जैसे विष्णु भगवान् एक ही हैं; परन्तु शंख, चक्र, गदा आदि भेदों से २४ भेदवाले हो जाते हैं, इसी प्रकार पूर्वोक्त सब योग इत्थशाल योग ही के भेद हैं ॥ १२६ ॥

* सूर्य से द्वादश स्थान में स्थित तथा तुला के उत्तरार्ध और वृश्चिक के पूर्वार्ध में स्थित तथा क्षीण चन्द्रमा बलहीन होता है।

सूर्यादिग्रहाणां फलानि

वर्षलग्ने लग्नगतसूर्यफलम्

रविर्लग्नगो वातपित्तं करोति
कलत्रांगपीडां शिरोत्तैंश्च रोगम् ।
विवादं जनानां भवेद्गुप्तचिन्ता
दशा नेष्टकारी भवेद्धायनेऽस्मिन् ॥ १२७ ॥

जिस वर्ष में सूर्य लग्न में हो, तो वात-पित्त का रोग, स्त्री को क्लेश, शिर में दर्द, लोगों से विवाद तथा गुप्तचिन्ता होती है अर्थात् लग्नगत सूर्य की दशा अच्छी नहीं होती है ॥ १२७ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितसूर्यफलम्

कुटुम्बाद्विरोधो नृपाद्भीतिकष्टं
धनार्तिर्धनस्थे रवौ मानवानाम् ।
पशूनां प्रपीडोदरे चापदाः स्युः
ससौम्यान्वितो द्रव्यलाभं करोति ॥ १२८ ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित सूर्य हो, तो कुटुम्ब से विरोध, राजा से भय, धन का नाश, पशुओं को पीड़ा तथा उदर-रोग होता है । यदि सूर्य शुभ ग्रह से युक्त हो, तो द्रव्यलाभ करता है ॥ १२८ ॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितसूर्यफलम्

तृतीयगोऽर्कोऽपि सहोदराणां
पीडां करोत्यस्य हि वर्षलग्ने ।
पराक्रमं राजकृपां च लक्ष्मीं
रिपुक्षयं कीर्त्तिविवर्धनं च ॥ १२९ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित सूर्य हो, तो भाई की पीड़ा, पराक्रम, राजपक्ष से जय, लक्ष्मी, शत्रुक्षय तथा कीर्त्ति की वृद्धि होती है ॥ १२९ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितसूर्यफलम्

पशोः पीडनं तुर्यसंस्थे रवौ च
कृषेः कर्मणां हानिरत्यन्तपीडा ।
नृपाद्भीतिकष्टं भवेन्मातृपीडो-
दरे हृद्यपि स्यात्प्रपीडाऽब्दमध्ये ॥ १३० ॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित सूर्य हो, तो पशुओं की पीड़ा, खेती में हानि, राजा से भय, माता की पीड़ा, उदर तथा हृदय में पीड़ा होती है ॥ १३० ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितसूर्यफलम्

दिनेशे सुतस्थे सुताङ्गेषु पीडा
सुबुद्धेश्च हानिर्विवादो जनानाम् ।
भवेच्छोकमोहादि चाङ्गेषु रोगो
धनार्तिश्च भूपाद्भयं तद्दशायाम् ॥ १३१ ॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित सूर्य हो, तो सन्तानों की पीड़ा, बुद्धिभ्रम, विवाद, शोक, गुप्तचिन्ता, धन का नाश तथा राजा से भय होता है ॥ १३१ ॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितसूर्यफलम्

रिपूणां विनाशो रुजो मातृपक्षे
रवौ षष्ठसंस्थे सुखाप्तिर्जनानाम् ।
नृपान्मित्रपक्षाज्जयः स्वार्थलाभो
भवेद्द्रव्यलाभः क्रये विक्रयेऽपि ॥ १३२ ॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित सूर्य हो, तो शत्रुनाश, माता को रोग, सुखलाभ, राजपक्ष, तथा मित्रपक्ष से जय, मनोभिलषित कार्य तथा व्यापार से लाभ होता है ॥ १३२ ॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितसूर्यफलम्

कलत्रेऽर्कसंस्थे कलत्रांगपीडा

स्वकीयांगपीडा तथा तद्दशायाम् ।
शिरोऽर्तिश्च मार्गाद्भयं वै विवादो
गुदे पादयोः पीडनं वर्षमध्ये ॥ १३३ ॥

वर्षलग्न में सप्तमभावस्थित सूर्य हो, तो स्त्री को कष्ट, अपने को भी कष्ट, शिर में पीड़ा, रास्ते में भय, विवाद, गुदा तथा पैरों में पीड़ा होती है ॥ १३३ ॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितसूर्यफलम्

रवौ चाष्टमे बन्धुदुःखं च कष्टं
यशोविद्रवो व्याधिशोकं धनार्त्तिः ।
कलत्रांगपीडा सुतस्यांगरोगो
व्रणं वातपीडा भवेद्वर्षमध्ये ॥ १३४ ॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित सूर्य हो, तो बन्धुओं को दुःख, यश का नाश, गुप्तरोग, धन का नाश, स्त्री की पीड़ा, सन्तान को कष्ट, फोड़ा-फुंसी तथा वातरोग होता है ॥ १३४ ॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितसूर्यफलम्

धर्मस्थितोऽर्कश्च सहोदराणां
पीडाकरः क्लेशविवर्धनं च ।
धर्मप्रदो राज्ययशःप्रदः स्या-
त्तद्वर्षमध्ये स्वदशां गतश्चेत् ॥ १३५ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित सूर्य हो, तो भाइयों को पीड़ा, रोगवृद्धि, धर्मवृद्धि तथा राजा द्वारा कीर्त्ति का विस्तार होता है ॥ १३५ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितसूर्यफलम्

यदा दिनेशो गगनाश्रितः स्या-
द्राज्यार्थदो मानविवर्धनश्च ।

हिरण्यभूम्यम्बरलाभकारी
चतुष्पदाङ्गेषु रुजो विवृद्धिः ॥ १३६ ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित सूर्य हो, तो राजपक्ष से लाभ, विशेष कीर्त्ति, सुवर्ण, पृथिवी तथा वस्त्र का लाभ और पशुओं को पीड़ा होती है ॥ १३६ ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितसूर्यफलम्

रवौ लाभगे लाभकारी नृपः स्या-
द्धनाप्तिश्च धान्याम्बरं वै हिरण्यम् ।
विलासादिसौख्यं रिपूणां विनाशः
सुतस्याङ्गपीडा भवेदत्र वर्षे ॥ १३७ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित सूर्य हो, तो धनलाभ, धान्य, सुवर्ण और वस्त्र का लाभ, राजपक्ष से कीर्त्ति, शत्रुनाश, विविध सौख्य तथा सन्तानपीड़ा होती है ॥ १३७ ॥

वर्षलग्ने द्वादशभावस्थितसूर्यफलम्

व्ययस्थितश्चेत्खलभास्करोऽसौ
स्त्रीविग्रहोद्वेगकृताङ्घ्रिरोगम् ।
व्ययं च शीर्षोदरनेत्रपीडां
करोति चिन्तां रिपुभिर्विवादम् ॥ १३८ ॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित सूर्य हो, तो स्त्री से लड़ाई, पैरों में पीड़ा, व्यय की अधिकता, शिर, पेट और नेत्र में पीड़ा तथा शत्रु से विवाद होता है ॥ १३८ ॥

चन्द्रफलानि

वर्षलग्ने लग्नगतचन्द्रफलम्

तनुगतो ननु चेद्रजनीकरो
विकलताकफकृज्ज्वरपीडनम् ।

भवति पापखगान्वितदृग्यदा
नतु विनाशकरो बहुलव्ययः ॥ १३९ ॥

वर्षलग्न में लग्नगत चन्द्रमा हो, तो कफ से विकलता तथा ज्वरपीड़ा होती है । यदि पापग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो मृत्यु के समान दुःख तथा अधिक खर्च कराता है ॥ १३९ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितचन्द्रफलम्

कुटुम्बाज्जयं मित्रपक्षाच्च लाभं
धनाढ्यं धनस्थः शशांकः प्रकुर्यात् ।
रिपूणां विनाशं तथा नेत्रपीडा
भवेदब्दमध्ये नृपात्सौख्यकारी ॥ १४० ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित चन्द्रमा हो, तो कुटुम्ब तथा राजपक्ष से लाभ, शत्रु का नाश, नेत्रपीड़ा, विशिष्ट लाभ तथा विविध प्रकार का सौख्य प्राप्त होता है ॥ १४० ॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितचन्द्रफलम्

तृतीये स्थितः शीतरश्मिर्यदा स्या-
त्तदा सोदराणां भवेत्सौख्यकारी ।
धनाप्तिं च पुण्योदयं गुप्तसौख्यं
प्रतिष्ठाविवृद्धिं करोतीह वर्षे ॥ १४१ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित चन्द्र हो, तो भाइयों का सौख्य, धन का लाभ, पुण्य का उदय, गुप्तसौख्य तथा प्रतिष्ठा की वृद्धि होती है ॥ १४१ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितचन्द्रफलम्

शशांके चतुर्थे च भूपाज्जयः स्या-
त्कृषेः कर्मणां लाभवान्स्यात्सुखी च ।
धनाप्तिः क्रये विक्रये चाब्दमध्ये
सुखं वाहनानां रिपोर्नाशनं च ॥ १४२ ॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित चन्द्र हो, तो राजा से जय, खेती में लाभ, सुख, व्यापार से लाभ, पशुओं का सुख तथा शत्रुओं का नाश होता है ॥ १४२ ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितचन्द्रफलम्

सुतस्थानगो रात्रिनाथः स्वबुद्ध्या
जयं मित्रपक्षाच्च लाभं करोति ।
सुतांगेषु पीडा भवेत्पापदृष्टिः
सुतस्यापि सौख्यं यदा सौम्यदृष्टिः ॥१४३॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित चन्द्र हो, तो अपनी बुद्धि से जय-लाभ, मित्रपक्ष से लाभ, यदि चन्द्र पर पापग्रहों की दृष्टि हो, तो सन्तान को पीड़ा तथा शुभग्रहों की दृष्टि हो, तो सन्तान को सुख प्राप्त होता है ॥ १४३ ॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितचन्द्रफलम्

अरिस्थानगो रात्रिनाथो रिपूणां
विवादो विरोधो भवेन्नेत्रपीडा ।
व्ययं व्यग्रतां गुप्तचिन्तां तनोति
कलत्रांगपीडां करोतीह वर्षे ॥ १४४ ॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित चन्द्रमा हो, तो शत्रु से विवाद, विरोध, नेत्रों में पीड़ा, अधिक खर्च, गुप्तचिन्ता, चित्तभ्रम तथा स्त्री को पीड़ा होती है ॥ १४४ ॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितचन्द्रफलम्

कलत्रे शशांको यदा पापदृष्टो
ज्वरं वातपीडां भयं दारुणं च ।
कलत्रांगपीडां कफोत्पत्तिबाधां
स सौम्यान्वितो द्रव्यलाभं करोति ॥१४५॥

वर्षलग्न में पापग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा सप्तम भाव में स्थित हो,

तो ज्वर, वातपीड़ा, अत्यन्त भय, स्त्री को पीड़ा तथा कफसम्बन्धी विकार होता है। यदि चन्द्र शुभ ग्रह से दृष्ट हो, तो द्रव्य का लाभ कराता है ॥ १४५ ॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितचन्द्रफलम्

निधनगतशशांकः कष्टवन्तं करोति
ज्वरवमनविकारं चोदरे गुप्तपीडा ।
भवति कफविकारो नेत्ररोगाङ्गभंगो
जलभयमरिवादो द्रव्यनाशोऽब्दमध्ये ॥ १४६ ॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित चन्द्रमा हो, तो अनेक प्रकार के कष्ट, ज्वर, वमन, उदरपीड़ा, कफविकार, नेत्ररोग, शरीर में चोट, जल से भय, शत्रूपद्रव तथा धन का नाश होता है ॥ १४६ ॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितचन्द्रफलम्

पुण्योदयं धर्मगतः शशांको
भाग्योदयं चार्थसमागमं च ।
स्वदेहसौख्यं च रिपोर्विनाशं
व्यापारसौख्यं च करोति वर्षे ॥ १४७ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित चन्द्रमा हो, तो पुण्यलाभ, विशिष्ट भाग्योदय, धनलाभ, विविध प्रकार के सौख्य, शत्रुनाश तथा व्यापार से लाभ होता है ॥ १४७ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितचन्द्रफलम्

कर्मोदयं प्रकुरुते गगने शशांके
द्रव्यागमं नृपकुलाद्रिपुपक्षनाशम् ।
व्यापारतो बहुसुखं महतीं प्रतिष्ठां
कीर्त्तिप्रवर्धनसुताम्बरलाभमाशु ॥ १४८ ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित चन्द्रमा हो, तो व्यापार में लाभ, धनलाभ, राजपक्ष से शत्रुओं का नाश, व्यापार से अधिक सुख,

बड़ी कीर्ति, किसी पदवी का लाभ, सन्तान तथा वस्त्र का लाभ होता है ॥ १४८ ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितचन्द्रफलम्

रिपोर्नाशनं लाभसंस्थे शशांके
बहुद्रव्यलाभं क्रये विक्रयेऽपि ।
नृपात्सौख्यलाभं सुतस्यागमं च
प्रतिष्ठाविवृद्धिर्भवेद्धायनेऽस्मिन् ॥ १४६ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित चन्द्रमा हो, तो शत्रुनाश, विशेष लाभ, व्यापार से लाभ, राजपक्ष से सौख्य, सन्तानलाभ तथा किसी पदवी की प्राप्ति होती है ॥ १४६ ॥

द्वादशभावस्थितचन्द्रफलम्

शशांको व्ययस्थो रिपूणां प्रपीडां
तथा सद्व्ययं नेत्ररोगं करोति ।
विवादं जनानां महाकष्टसाध्यां
कफार्त्तिं च गुल्मोदयं तत्र वर्षे ॥ १५० ॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित चन्द्रमा हो, तो शत्रु से पीड़ा, अच्छे कार्य में व्यय, नेत्ररोग, विवाद, कफ से अतिकष्ट तथा गुल्मरोग होता है ॥ १५० ॥

भौमफलानि

वर्षलग्ने लग्नगतभौमफलम्

धरणिजतनुषि लग्ने स्याद्व्रणं वातपीडा
भवति रिपुविवादो नेत्रशीर्षे च रोगः ।
ज्वरवमनविकारं चांगनानीचकष्टं
नृपभयमथ लोहादग्नितो वा भयं च ॥ १५१ ॥

वर्षलग्न में लग्नस्थित मंगल हो, तो घाव, वातपीडा, शत्रु से

विवाद, नेत्र तथा शिर में रोग, ज्वर, वमन, स्त्री को पीड़ा, राजा तथा अस्त्र एवं अग्नि से भय होता है ॥ १५१ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितभौमफलम्

धनस्थो धरण्यात्मजो द्रव्यनाशं
शिरोर्तिं जनानां विरोधं प्रकुर्यात् ।
तथा सर्पवह्न्योर्भयं शोकमोहौ
कलत्रेऽक्षिरोगं करोतीह वर्षे ॥ १५२ ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित मंगल हो, तो द्रव्य का नाश, शिर में पीड़ा, लोक में विरोध, सर्प तथा वह्नि से भय, भ्रम, शोक तथा स्त्री की आँख में रोग होता है ॥ १५२ ॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितभौमफलम्

तृतीयस्थिते क्ष्मासुते बान्धवानां
भवेदङ्गकष्टं सुखं वाहनानाम् ।
रिपूणां विनाशस्तथा द्रव्यलाभो
नृपान्मित्रपक्षाज्जयो हायनेऽस्मिन् ॥ १५३ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित मंगल हो, तो बान्धवों को पीड़ा, सुख, वाहनों का सुख, शत्रु का नाश, द्रव्यलाभ, राजपक्ष तथा मित्रपक्ष से जय हो ॥ १५३ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितभौमफलम्

चतुर्थे कुजो वह्निपीडां व्रणार्त्तिं
पशोः पीडनं व्यग्रतां क्लेशकष्टम् ।
कृषेः कर्मणां हानिमप्येव कुर्या-
त्क्रये विक्रये चाब्दमध्ये तथैव ॥ १५४ ॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित मंगल हो, तो वह्निपीड़ा, घाव, पशुओं को पीड़ा, चिन्ता, क्लेश, खेती तथा व्यापार में हानि होती है ॥ १५४ ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितभौमफलम्

सुतानां प्रपीडा कुजे पञ्चमस्थे
रिपूणां विवादो भवेद्व्यग्रता च।
स्वबुद्धेर्विनाशो भवेच्चाग्निघातः
सशोकोदरे गुह्यपीडाऽब्दमध्ये ॥ १५५ ॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित मंगल हो, तो सन्तान को पीड़ा, शत्रु से विवाद, चिन्ता, बुद्धिभ्रम, अग्निभय, शोक तथा गुह्यपीड़ा होती है ॥ १५५ ॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितभौमफलम्

कुजः षष्ठगः शत्रुनाशं करोति
स्वभूपाज्जयं मित्रपक्षाच्च लाभम्।
हयानां च सौख्यं भवेदङ्गनानां
सुखं हायनेऽस्मिन्दशायां च तस्य ॥१५६॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित मंगल हो, तो शत्रुनाश, राजा से जय, मित्रपक्ष से लाभ, घोड़ों का सुख तथा स्त्री का सुख होता है ॥ १५६ ॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितभौमफलम्

कलत्रे स्थिते स्यात्सुतस्त्रीषु रोग-
स्तथा चात्मनो मार्गतःक्लेशकष्टम्।
तथा वै रिपूणां विवादो जनानां
दशा नेष्टकारी भवेद्धायनेऽस्मिन् ॥ १५७ ॥

वर्षलग्न में सप्तमभावस्थित मंगल हो, तो सन्तान तथा स्त्री को रोग, मार्ग में क्लेश, कष्ट, शत्रु तथा बान्धवों से विवाद होता है ॥ १५७ ॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितभौमफलम्

कुजे चाष्टमे शत्रुपीडाङ्गकष्टं
व्रणस्योदयश्चाङ्गनानां च रोगः ।
धनानां विनाशो भवेच्छस्त्रघात-
स्तथा व्यग्रता गुप्तचिन्ता नरस्य ॥ १५८ ॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित मंगल हो, तो शत्रुपीड़ा, व्रण, स्त्री को रोग, धन का नाश, शस्त्र से घाव, चित्त में व्याकुलता तथा गुप्तचिन्ता होती है ॥ १५८ ॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितभौमफलम्

धर्मस्थिते भूमिसुते च वर्षे
पुण्योदयो वित्तसमागमं च ।
भाग्योदयो मानविवर्धनं च
महाप्रतिष्ठा बहुला च तत्र ॥ १५९ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित मंगल हो, तो पुण्योदय, धनलाभ, भाग्योदय, मान तथा अनेक प्रकार की प्रतिष्ठा प्राप्त होती है ॥ १५९ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितभौमफलम्

धर्मस्थितो भूतनयोऽब्दमध्ये
कर्मोदयं चार्थसमागमं च ।
राज्यार्थलाभं च महाप्रतिष्ठां
करोति मानं सुखसम्पदं च ॥ १६० ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित मंगल हो, तो व्यापारवृद्धि, धन का लाभ, राजा से लाभ, बड़ी कीर्त्ति, मान तथा सुख-विशेष होता है ॥ १६० ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितभौमफलम्

अवनिजनुषि लाभे राज्यसौख्यागमश्च
भवति रिपुविनाशो मित्रपक्षाज्जयश्च ।

हयगजसुहिरण्यं प्राप्यते चाम्बराणि
तनयसुखविलासो जायतेऽस्मिंश्च वर्षे ॥ १६१ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित मंगल हो, तो राजा से सौख्य-लाभ, शत्रुनाश, मित्रपक्ष से जय, घोड़ा, हाथी, सोना तथा वस्त्र का लाभ एवं सन्तान का सुख प्राप्त होता है ॥ १६१ ॥

वर्षलग्ने द्वादशभावस्थितभौमफलम्

व्ययश्चापदो भूमिपुत्रे व्ययस्थे
भवेन्नेत्रपीडा च कर्णे विकारः ।
शिरोर्त्तिर्जनानां विवादस्तथा स्या-
त्कलत्राङ्गचिन्ता भवेत्तत्र वर्षे ॥ १६२ ॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित मंगल हो, तो खर्च अधिक, नेत्र तथा कर्ण में पीड़ा, शिर में पीड़ा, विवाद, चिन्ता एवं स्त्री को क्लेश होता है ॥ १६२ ॥

बुधस्य फलानि

वर्षलग्ने लग्नस्थितबुधफलम्

रजनिकरसुतः स्याल्लग्नगो हायनेऽस्मि-
न्बहुलबलविवृद्धिर्योषितां चापि सौख्यम् ।
भवति रिपुविनाशो भूपपक्षाच्च लाभो
धनजयसुखकारी मित्रलाभं करोति ॥ १६३ ॥

वर्षलग्न में लग्नस्थित बुध हो, तो बल की वृद्धि, स्त्री का सौख्य, शत्रुनाश, राजपक्ष से लाभ, धन, जय, सुख तथा मित्र का लाभ होता है ॥ १६३ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितबुधफलम्

धनस्थो यदि स्यात्सुतः शीतरश्मे-
र्भवेद्द्रव्यलाभः कुटुम्बाज्जयश्च ।

रिपोर्नाशनं मानकृत्योश्च वृद्धिः
प्रतिष्ठाधिका हायनेऽस्मिन्सुखं च ॥ १६४ ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित बुध हो, तो द्रव्यलाभ, कुटुम्ब के लोगों से जय की प्राप्ति, शत्रुनाश, मान, व्यापार की वृद्धि तथा विशेष कीर्त्ति होती है ॥ १६४ ॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितबुधफलम्

शशिसुतश्च तृतीयगतो यदा
सकलतापविनाशकरस्तदा ।
भवति मानविवृद्धिरथो यशः
सुतसुखं प्रकरोति धनागमम् ॥ १६५ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित बुध हो, तो सकल क्लेशों का नाश, मान, यश की वृद्धि, सन्तान, सुख तथा धन का लाभ होता है ॥ १६५ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितबुधफलम्

बुधश्चतुर्थः प्रकरोति सौख्यं
द्रव्यागमं मित्रसमागमं च ।
गोभूहिरण्यादिसमागमं च
महासुखं वाहनमत्र वर्षे ॥ १६६ ॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित बुध हो, तो सौख्य, द्रव्यलाभ, मित्रसंगम, गौ, भूमि, सोना आदि का लाभ, अतिसुख तथ वाहन का सुख प्राप्त होता है ॥ १६६ ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितबुधफलम्

सुतभवनगतश्चेत्सोमपुत्रः सुतानां
प्रसवसुखकरः स्यादर्थलाभप्रदश्च ।
भृतकजनसुखं स्याद्भमन्स्यात्क्षराणां
सुखमपि नृपपक्षान्मित्रपक्षाज्जयश्च ॥ १६७ ॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित बुध हो, तो सन्तानोत्पत्ति, धन-लाभ, नौकर का सुख, सोना, धान्य तथा वस्त्र का सुख, राजपक्ष तथा मित्रपक्ष से जय लाभ हो ॥ १६७ ॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितबुधफलम्

रिपुस्थानसंस्थो रिपूणां विवादो
भवेदंगनानां च कष्टं करोति ।
व्ययं व्यग्रतां स्वे शरीरे च कष्टं
कफार्त्तिं महद्दुःखमप्यत्र वर्षे ॥ १६८ ॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित बुध हो, तो शत्रु से विवाद, स्त्री को कष्ट, अधिक व्यय, चिन्ता तथा शरीर में कफविकार उत्पन्न हो जाने से महद्दुःख प्राप्त होता है ॥ १६८ ॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितबुधफलम्

शशांकात्मजे सप्तमस्थेऽङ्गनानां
विलासादिसौख्यं भवत्यत्र वर्षे ।
प्रतिष्ठाधिकारो हिरण्याम्बराप्ति-
र्जयः सर्वदा तद्दशायां तथैव ॥ १६९ ॥

वर्षलग्न में सप्तमभावस्थित बुध हो, तो स्त्रीविलास-सुख, कीर्त्ति, किसी पदवी का लाभ, सोना, वस्त्र तथा जय का लाभ होता है ॥ १६९ ॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितबुधफलम्

निशानाथपुत्रो यदा रन्ध्रसंस्थो
नरं मृत्युतुल्यं कफार्तिं करोति ।
ज्वराणां प्रकोपो भवेन्नेत्रपीडा-
भयं व्यग्रतां हायने तद्दशायाम् ॥ १७० ॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित बुध हो, तो मृत्यु के समान कफ-रोग, ज्वरों का प्रकोप, नेत्रपीड़ा, भय तथा चिन्ता होती है ॥ १७० ॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितबुधफलम्

धर्मस्थितः शशिसुतः सुतलाभसौख्य-
मर्थागमं सततमंगलमाशु कुर्यात्।
भूपाज्जयो भवति कीर्त्तिविवर्धनं च
भाग्योदयो रिपुविनाशमपीह वर्षे ॥ १७१ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित बुध हो, तो सन्तानलाभ, धन का लाभ, किसी मांगलिक कार्य का होना, राजा से जय, कीर्त्ति, भाग्योदय तथा शत्रुनाश होता है ॥ १७१ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितबुधफलम्

गगनगः शशिजो यदि हायने
भवति वाहनसौख्यकरस्तदा।
सुतविवृद्धिरथापि धनागमो
विलसनं च तथा नृपतेर्जयः ॥ १७२ ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित बुध हो, तो वाहनसुख, सन्तान-वृद्धि, धनलाभ, विलास तथा राजा से विजय की प्राप्ति होती है ॥ १७२ ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितबुधफलम्

लाभाश्रितः शशिसुतो जयसम्पदश्च
धान्याम्बराणि बहुलानि करोत्यवश्यम्।
कीर्त्तेर्विवर्धनमनोऽर्थसमागमश्च
स्याद्धायने पशुविवर्धनमत्र लाभः ॥ १७३ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित बुध हो, तो जयसम्पत्ति, धान्य, वस्त्र की वृद्धि, कीर्त्ति, मनोऽभिलाषों की पूर्ति, अर्थलाभ, पशुओं की वृद्धि तथा विशेष लाभ होता है ॥ १७३ ॥

वर्षलग्ने द्वादशभावस्थितबुधफलम्

बुधे द्वादशस्थे रिपूणां विवादो
व्यये गुप्तचिन्ता च कर्णे विकारः।
दशा नेष्टकारी भवेन्नेत्रपीडा
कफार्त्तिश्च कष्टं तथा हायनेऽस्मिन् ॥१७४॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित बुध हो, तो विवाद, निरर्थक व्यय से गुप्तचिन्ता, कर्ण में विकार, नेत्ररोग तथा कफरोग होता है ॥ १७४ ॥

गुरोः फलानि

वर्षलग्ने लग्नगतगुरुफलम्

जीवे लग्नगते हयाम्बरसुखं प्राप्नोति वृद्धिं परां
राज्यात्सौख्यसमागमं च बहुलव्यापारतश्चोदयः।
कीर्तेश्चापि विवर्धनं रिपुजनो नश्यत्यवश्यं तथा
जायासौख्यमथापि मौक्तिकधनं हेम्नश्च लाभो भवेत् ॥१७५॥

वर्षलग्न में लग्नगत बृहस्पति हो, तो घोड़ा तथा वस्त्रों का सुख, अत्यन्त वृद्धि, राजा से सुख तथा व्यापार से लाभ, कीर्त्ति की वृद्धि, शत्रु का नाश, स्त्री का सौख्य, मुक्ता, सोना तथा धन का लाभ होता है ॥ १७५ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितगुरुफलम्

कुटुम्बराशौ च गते सुरेज्ये
धनादिभोगाल्लभते मनुष्यः।
चतुष्पदानां च समागमः स्या-
त्तद्धायने भूपजनाच्च लाभः ॥ १७६ ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित गुरु हो, तो धन आदि का भोग, पशुओं का लाभ तथा राजा से लाभ होता है ॥ १७६ ॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितगुरुफलम्

तृतीयसंस्थः सुरराजमन्त्री
भूपाज्जयं कीर्त्तिविवर्धनं च ।
सस्याम्बराणां च तथा धनानां
करोति वृद्धिं महतीं च वर्षे ॥ १७७ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित बृहस्पति हो, तो राजा से विजय की प्राप्ति, विशेष कीर्त्ति, धान्य, वस्त्र तथा धन का लाभ और महती प्रतिष्ठा प्राप्त होती है ॥ १७७ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितगुरुफलम्

सुरेज्ये सुखस्थे सुखं वाहनानां
क्रये विक्रये लाभकारी जनस्य ।
भवेद्भूपपक्षाज्जयो हायनेऽस्मि-
न्महालाभदः स्यात्कृषेः कर्मणश्च ॥ १७८ ॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित बृहस्पति हो, तो वाहनों का सुख, व्यापार में लाभ, राजपक्ष से लाभ तथा खेती में विशेष लाभ होता है ॥ १७८ ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितगुरुफलम्

सुतस्थानगो देवमन्त्री सुतानां
विवृद्धिः स्वबुद्ध्या जयं हायनेऽस्मिन् ।
रिपूणां विनाशः सुखं चेष्टभोगां-
स्तथा गोहिरण्याम्बराप्तिं करोति ॥ १७९ ॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित बृहस्पति हो, तो सन्तानवृद्धि, अपनी बुद्धि से जय, शत्रुनाश, सुख, अनेक प्रकार के भोग, गौ, सोना तथा वस्त्र का लाभ होता है ॥ १७९ ॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितगुरुफलम्

कष्टं रिपूणां रिपुगः सुरेज्यो
भयार्त्तिदोषान्कुरुते नराणाम्।
भार्याङ्गपीडामथ नेत्ररोग-
ज्वरातिसारं प्रकरोति वर्षे॥ १८०॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित बृहस्पति हो, तो शत्रु से कष्ट, भय, पीड़ा, स्त्री को कष्ट, नेत्ररोग, ज्वर तथा अतिसार रोग होता है॥ १८०॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितगुरुफलम्

कलत्रे सुरेज्ये कलत्राज्जनस्य
सुखं निर्भयं शत्रुनाशं करोति।
सुखं वाहनानां विलासादिकं च
नृपाल्लब्धलक्ष्मीर्भवेद्धायनेऽस्मिन्॥ १८१॥

वर्षलग्न में सप्तमभावस्थित बृहस्पति हो, तो स्त्री से सुख, निर्भयता, शत्रुनाश, वाहनों का सुख, अनेक सुख-विलास तथा राजपक्ष से लाभ होता है॥ १८१॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितगुरुफलम्

ज्वरवमनकफार्तिर्नैधनस्थे सुरेज्ये
बहुलकठिनरोगः कर्णयोर्नेत्रयोश्च।
भवति भयमरीणामङ्गनाङ्गेषु कष्टं
व्रणकृतबहुपीडा हायनेऽस्मिन्नराणाम्॥ १८२॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित बृहस्पति हो, तो ज्वर, वमन, कफ-विकार, कठिन रोग, कर्ण तथा नेत्रों में पीड़ा, शत्रुभय, स्त्री को कष्ट तथा व्रण होता है॥ १८२॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितगुरुफलम्

वाचस्पतिर्धर्मगतो नराणां
करोति धर्मं बहुलं सुखं च।

भाग्योदयं चार्थसमागमं च
तीर्थाटनं पुण्यमतिं प्रकुर्यात् ॥ १८३ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित बृहस्पति हो, तो अधिक धर्म, सुख, भाग्योदय, धनलाभ, तीर्थयात्रा तथा सद्बुद्धि होती है ॥ १८३ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितगुरुफलम्

व्योम्नि स्थितश्चेत्सुरराजमन्त्री
हेमाम्बराप्तिं च जयं करोति ।
भूपप्रसादात्क्षितिगोधनाप्तिः
स्याद्वायने शत्रुविनाशनं च ॥ १८४ ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित बृहस्पति हो, तो सोना, वस्त्र का लाभ, कीर्त्ति, राजपक्ष से भूमि, गौ तथा धन का लाभ और शत्रु का विनाश होता है ॥ १८४ ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितगुरुफलम्

जयो मानवानां सुरेज्ये च लाभे
भवेद्वै जनानां हयानां च लाभः ।
सुतस्योदयो जायते शत्रुनाशः
प्रतिष्ठाविवृद्धिः सुतस्यापि सौख्यम् ॥ १८५ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित बृहस्पति हो, तो जय, वाहनों का लाभ, सन्तानोत्पत्ति, शत्रुनाश, बड़ी कीर्त्ति तथा पुत्र का सुख प्राप्त होता है ॥ १८५ ॥

वर्षलग्ने द्वादशभावस्थितगुरुफलम्

रिष्फस्थितः सुरगुरुर्बहुलव्यथाकृ-
त्कष्टप्रवादनृपभीतिकरश्च वर्षे ।
नेत्राङ्गपीडनकफार्तिजनप्रवादं
हानिर्भयं भवति शोकविकारकारी ॥ १८६ ॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित बृहस्पति हो, तो शरीर में पीड़ा,

राजभय, नेत्रपीड़ा, कफजन्यपीड़ा, लोकापवाद, व्यापार में हानि, भय तथा गुप्तचिन्ता होती है ॥ १८६ ॥

शुक्रस्य फलानि

वर्षलग्ने लग्नस्थितशुक्रफलम्

तनुस्थानगो भार्गवश्चेदिह स्या-
त्प्रतिष्ठाविशेषं समृद्ध्यागमं च ।
रिपूणां विनाशं तथा भूपमानं
जयं भूषणादीन्नराणां करोति ॥ १८७ ॥

वर्षलग्न में लग्नस्थित शुक्र हो, तो विशेष कीर्त्ति, संपत्तिलाभ, शत्रुनाश, राजा से सम्मान, जय तथा भूषण आदि का लाभ होता है ॥ १८७ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितशुक्रफलम्

धनस्थे कवौ धान्यलाभो धनाप्ति-
र्भवेन्म्लेच्छजात्या सुखं सम्पदश्च ।
नरो राजतुल्यो भवत्यत्र वर्षे
पशूनां हयानां गृहे स्यात्सुखं च ॥ १८८ ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित शुक्र हो, तो धान्य तथा धन का लाभ, म्लेच्छजाति से सुख, राजा के समान प्रताप तथा पशुओं का सुख होता है ॥ १८८ ॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितशुक्रफलम्

भृगुस्तृतीयश्च सहोदराणां
सुखं प्रकुर्याद्विविधैः प्रकारैः ।
अर्थागमं कीर्त्तिविवर्धनं च
जनोपकारं च करोति वर्षे ॥ १८९ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित शुक्र हो, तो सहोदरों का सुख, धन, कीर्त्ति तथा लोकोपकार होता है ॥ १८९ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितशुक्रफलम्

प्रथमदैत्यगुरुः सुखगो यदा
सुखकरः कृषिवाहनयोस्तदा ।
धरणिलब्धिसुवर्णसमागमो
भवति भूपसमो मनुजस्तदा ॥ १९० ॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित शुक्र हो, तो खेती तथा वाहन से सुख की प्राप्ति, पृथिवी का लाभ, सुवर्ण आदि का लाभ तथा राजा के समान प्रताप होता है ॥ १९० ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितशुक्रफलम्

सुतानां विवृद्धिर्भृगुः पञ्चमस्थो
भयक्लेशचिन्तापदानां विनाशः ।
रिपूणां विनाशं तथा वर्षलग्ने
महाभोगवन्तं धनाढ्यं करोति ॥ १९१ ॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित शुक्र हो, तो सन्तानवृद्धि, भय, क्लेश, आपत्तियों का नाश, शत्रुनाश, अत्यन्त भोग तथा विशेष धन का लाभ होता है ॥ १९१ ॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितशुक्रफलम्

अरिस्थानगो हायने दैत्यमन्त्री
जनानां विवादं रिपोर्भीतिकष्टम् ।
भवेद्गुप्तचिन्ताङ्गरोगप्रपीडा-
शिरोर्त्तिश्च नेत्रोदरे पीडनं च ॥ १९२ ॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित शुक्र हो, तो विवाद, शत्रुभय, कष्ट, गुप्तचिन्ता, रोग, शिर तथा नेत्रों में पीड़ा होती है ॥ १९२ ॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितशुक्रफलम्

कलत्रे कविश्चेत्स्थितो वर्षलग्ने
कलत्राङ्गसौख्यं विलासादिकं च ।

रिपोर्नाशनं मानवानां च सौख्यं
भवेद्वस्त्रहेमादिलाभं करोति ॥ १६३ ॥

वर्षलग्न में सप्तमभावस्थित शुक्र हो, तो स्त्री को सौख्य, अनेक प्रकार के विलास, शत्रुनाश, सौख्य, वस्त्र तथा सुवर्ण (सोना) आदि का लाभ होता है ॥ १६३ ॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितशुक्रफलम्

मृत्युस्थितो मृत्युसमं मनुष्यं
शुक्रः करोतीह जनापवादम् ।
ज्वरादिपीडामथ भीतिकष्टं
नेत्रे च रोगो रिपुभिर्विवादम् ॥ १६४ ॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित शुक्र हो, तो मृत्यु के समान क्लेश, लोकापवाद, ज्वर आदि की पीड़ा, नेत्ररोग तथा विवाद होता है ॥ १६४ ॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितशुक्रफलम्

धर्मस्थितो धर्मकरः कविः स्या-
न्नरेन्द्रतुल्यं मनुजं करोति ।
सुखप्रदो भूषणवाहनादे-
र्गोभूहिरण्याम्बरलाभदः स्यात् ॥ १६५ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित शुक्र हो, तो उस मनुष्य को राजा के समान करता है तथा भूषण, गौ, सुवर्ण, वस्त्र आदि का सुख एवं लाभ होता है ॥ १६५ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितशुक्रफलम्

गगनगे भृगुनन्दनसंज्ञके
नृपसमो मनुजोऽथ महाजयः ।
भवति गोधनधान्यसमागमो
बहुसुखं कृपिवाहनयोर्मतम् ॥ १६६ ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित शुक्र हो, तो वह मनुष्य राजा के समान, प्रताप, जय, गौ, धन तथा धनधान्य का लाभ, खेती और वाहन से सुख प्राप्त होता है ॥ १६६ ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितशुक्रफलम्

कविर्लाभगो लाभकृत्स्वर्णकस्य
जयं मानवानां करोतीह वर्षे ।
सुतानां विवृद्धिः सुखं राजपक्षा-
द्रिपूणां विनाशं तथा मित्रवृद्धिः ॥ १६७ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित शुक्र हो, तो सुवर्णलाभ, जय, सन्तानवृद्धि, राजपक्ष से सुख, शत्रुनाश तथा मित्रवृद्धि होती है ॥ १६७ ॥

वर्षलग्ने द्वादशभावस्थितशुक्रफलम्

व्ययगतभृगुजे स्यात्सद्व्ययो वातपीडा
रिपुजनप्रतिवादो नेत्रयोश्चापि रोगः ।
भवति नृपभयं वै शोकमोहादिकष्टं
ज्वरवमनविकारी मृत्युतुल्यो नरश्च ॥ १६८ ॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित शुक्र हो, तो अच्छे कार्य में व्यय, वातपीड़ा, शत्रु से विवाद, नेत्रों में रोग, राजा से भय, चिन्ता, ज्वर, वमन तथा मृत्यु के समान कष्ट होता है ॥ १६८ ॥

शनिफलानि

वर्षलग्ने लग्नस्थितशनिफलम्

मूर्त्तिस्थितो रविसुतः सुतलाभकारी
तुङ्गस्थितः स्वगृहगश्च करोति वृद्धिम् ।
शेषेषु वैरिभयमाशु स वायुपीडां
जायाङ्गकष्टमथ शोकविकारकारी ॥ १६९ ॥

वर्षलग्न में लग्नस्थित शनि हो, तो सन्तानोत्पत्ति, उच्च या

स्वगृह का हो, तो भाग्योदय अन्य स्थान में हो, तो शत्रुभय, वायुपीड़ा, स्त्री को कष्ट तथा चिन्ता करता है ॥ १६६ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितशनिफलम्

दिवानाथपुत्रो धनस्थो धनानां
विनाशं विधत्ते कुटुम्बाद्विरोधम् ।
प्रकुर्याच्च नेत्रोदरेषु प्रपीडां
कफार्त्तिश्च वर्षे भवेत्सर्वदेहे ॥ २०० ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित शनि हो, तो धन का नाश, कुटुम्ब से विरोध, नेत्रों तथा उदर में पीड़ा और कफविकार होता है ॥२००॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितशनिफलम्

रविसुतो भवतीह तृतीयगो
रिपुविनाशकरो जयकृन्नृपात् ।
भवति भूधनलाभकरस्तथा
स्वजनबन्धुविरोधकरस्तदा ॥ २०१ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित शनि हो, तो शत्रुनाश, राजा से जय, भूमि और धन का लाभ तथा अपने जनों से विरोध होता है ॥ २०१ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितशनिफलम्

बन्धुस्थानगतो दिवाकरसुतः स्याद्वायने कष्टदो
भीतिं हानिमुपक्रमे च कुरुते लोकापवादं तथा ।
बन्धूनामपताडनं प्रकुरुते नेत्रोदरे पीडनं
लोहाग्नेश्च भयं पशोश्च मरणं हानिः कृषीणां तथा ॥२०२॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित शनि हो, तो कष्ट, भय, व्यापार में हानि, लोकापवाद, बन्धुविरोध, नेत्र और उदर में पीड़ा, लोह और अग्नि से भय, पशु का मरण तथा खेती में हानि होती है ॥ २०२ ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितशनिफलम्

सुतगतः सुतहानिकरः शनि-
र्भवति चोदरपीडनकष्टदः ।
विकलताबहुतापकरो भवे-
न्नृपभयं प्रकरोति जनेषु च ॥ २०३ ॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित शनि हो, तो सन्तानबाधा, उदर-पीड़ा, चित्त में व्याकुलता, राजा से भय तथा विशेष कष्ट होता है ॥ २०३ ॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितशनिफलम्

षष्ठस्थितो भूधनलाभकर्त्ता
सूर्यात्मजो नृपसमं पुरुषं प्रकुर्यात् ।
धान्याम्बराणि बहुलानि ददाति नित्यं
कीर्त्तिर्विवर्धनमथार्त्तिविनाशनं च ॥२०४॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित शनि हो, तो भूमि और धन का लाभ, राजा के समान पराक्रम, धान्य और वस्त्र का लाभ, विशेष कीर्त्ति तथा दुःख का नाश होता है ॥ २०४ ॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितशनिफलम्

जायास्थानगतो दिवाकरसुतः स्यादङ्गनापीडको
मार्गाद्भीतिकरः पशोश्च मरणं राज्याद्भयं व्यग्रता ।
क्लेशानां च विवर्धनं प्रकुरुते मिथ्यापवादं तथा
देहे वायुसमुद्भवोऽथ जठरे पीडा भवेद्धायने ॥ २०५ ॥

वर्षलग्न में सप्तमभावस्थित शनि हो, तो स्त्री को पीड़ा, मार्ग से भय, पशु का मरण, राजा से भय, चिन्ता, रोगों की वृद्धि, मिथ्यापवाद, शरीर तथा उदर में वायुजनित पीड़ा होती है ॥२०५॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितशनिफलम्

निधनगो निधनं कुरुते शनि-
र्ज्वरविमर्दकफार्तिजनापदम् ।
नृपभयं धनहानिमरेर्भयं
भवति तापकरः पवनोदयः ॥ २०६ ॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित शनि हो, तो अनिष्टफलकारक, ज्वर, कफ, लोकविवाद, राजा से भय, धनहानि, शत्रुभय तथा वायुजनित रोग होता है ॥ २०६ ॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितशनिफलम्

भाग्योदयो भाग्यगतः शनिश्चे-
द्भूपार्थदः शत्रुविनाशनश्च ।
कीर्तिश्रियं मानमथापि दद्या-
त्सहोदराणां च भयार्तिकारी ॥ २०७ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित शनि हो, तो भाग्योदय, राजपक्ष से लाभ, शत्रु का नाश, कीर्त्ति, लक्ष्मी, मान तथा सहोदर भाइयों को भय और पीड़ा होती है ॥ २०७ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितशनिफलम्

गगनगः कृषिहानिकरः शनिः
पशुभयं स्वजनोदरपीडनम् ।
नृपसमं मनुजं च धनागमं
प्रकुरुते क्रयविक्रयलाभकृत् ॥ २०८ ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित शनि हो, तो खेती में हानि, पशुओं को भय, अपने आदमियों को उदरपीड़ा, राजा के समान पराक्रम, धन का लाभ तथा व्यापार से लाभ होता है ॥ २०८ ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितशनिफलम्

लाभस्थितो भास्करसूनुरत्र
हिरण्यगोभूमिरथाश्वलाभम् ।
अर्थागमं कीर्त्तिविवर्धनं च
सन्तानपीडां च करोति वर्षे ॥ २०९ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित शनि हो, तो सुवर्ण, गौ, भूमि, रथ तथा अश्व का लाभ, धन, विशेष कीर्त्ति और सन्तानपीडा होती है ॥ २०९ ॥

वर्षलग्ने द्वादशभावस्थितशनिफलम्

व्ययस्थानगो जायते चार्कपुत्रो
भयं व्यग्रता क्लेशचिन्तादिकष्टम् ।
रिपूणां विनाशो भवेदर्थनाशः
शिरोऽर्त्यक्षिपीडा तदा हायनेऽस्मिन् ॥२१०॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित शनि हो, तो भय, चित्तोद्वेग, क्लेश, गुप्तचिन्ता, शत्रुनाश, धनहानि, शिर तथा नेत्रों में पीड़ा होती है ॥ २१० ॥

राहुफलानि

वर्षलग्ने लग्नस्थितराहुफलम्

तमो लग्नगः कामिनीनां च पीडा
रिपोर्भीतिचिन्ता व्ययं व्यग्रता च ।
शिरोऽर्त्तिं च भूपाद्भयं मानभंगं
तथा नेत्ररोगं करोतीह वर्षे ॥ २११ ॥

वर्षलग्न में लग्नस्थित राहु हो, तो स्त्री को पीड़ा, शत्रुभय, चिन्ता, व्यय, चित्तोद्वेग, शिर में पीड़ा, राजा से भय, मान-भंग तथा नेत्रों में पीड़ा होती है ॥ २११ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितराहुफलम्

जनापवादं च कुटुम्बगश्चे-
त्तमस्तदा भूपभयं करोति।
नेत्रोदरव्याधिभयार्त्तिदोषा-
न्धनापहारं च भयं तथाब्दे ॥ २१२ ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित राहु हो, तो लोकापवाद, राज-भय, नेत्र तथा उदर में पीड़ा, धन का नाश तथा विशेष चिन्ता होती है ॥ २१२ ॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितराहुफलम्

शशिविमर्दकरश्च तृतीयगो
धनसुतं नरराजसमं नरम्।
प्रकुरुते पशुवाहनजं सुखं
स्वजनपीडनमाशु करोत्यसौ ॥ २१३ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित राहु हो, तो धन, सन्तान, राजा के समान पराक्रम; पशुओं और वाहनों से सुख तथा स्वजनों से पीड़ा प्राप्त होती है ॥ २१३ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितराहुफलम्

हिमांशो रिपुस्तुर्यगो वाहनानां
विनाशं तथा भूपपक्षाद्भयं च।
कफार्त्तिं च कष्टं तथा वायुपीडां
विदेशे भ्रमं हायनेऽसौ करोति ॥ २१४ ॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित राहु हो, तो वाहनों का नाश, राजपक्ष से भय, कफ और वायु से पीड़ा तथा विदेश-भ्रमण होता है ॥ २१४ ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितराहुफलम्

स्वबुद्धेर्विनाशं सुतस्थानगश्चे-
द्विमांशो रिपुः सन्ततेः पीडनं च ।
स्वकीयोदरे वायुभीतिं भयार्तिं
तथा सर्वदा क्लेशचिन्तां करोति ॥ २१५ ॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित राहु हो, तो बुद्धि का नाश, सन्तानपीड़ा, उदरपीड़ा, भय तथा विशेष चिन्ता होती है ॥२१५॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितराहुफलम्

रिपोर्विनाशो यदि सैंहिकेयः
षष्ठस्थितः स्यान्नृपतुल्यकारी ।
गोभूहिरण्याम्बरलाभकारी
धनाप्तिकृद्दुःखविनाशनश्च ॥ २१६ ॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित राहु हो, तो शत्रु का नाश, राजा के समान कीर्त्ति, गौ, भूमि, सुवर्ण, वस्त्र और धन का लाभ तथा दुःख का नाश होता है ॥ २१६ ॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितराहुफलम्

वातप्रमेहादि तथा नराणां
गुह्येन्द्रियार्त्तिं च तमो मनुष्यः ।
विषाग्निपीडां च तथाङ्गनानां
कष्टं करोतीह भयं नराणाम् ॥ २१७ ॥

वर्षलग्न में सप्तमभावस्थित राहु हो, तो वातरोग, प्रमेह आदि रोग, गुप्त इन्द्रिय में पीड़ा, विष और अग्नि से पीड़ा, स्त्री को कष्ट तथा भय होता है ॥ २१७ ॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितराहुफलम्

छिद्रस्थितो मृत्युसमं मनुष्यं
तमस्तथा भूपभयं करोति ।

ज्वरातिसारं च कफार्तिदोषं
विशूचिकां वायुभयं नराणाम् ॥ २१८ ॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित राहु हो, तो मृत्यु के समान कष्ट, राजा से भय, ज्वर, अतीसार, कफविकार, हैज़ा तथा वातरोग होता है ॥ २१८ ॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितराहुफलम्

धर्मस्थितो धर्मविवर्धनं स्या-
ज्जयं नृपाच्छत्रुविनाशनं च ।
भाग्योदयं धान्यधनागमं च
करोति पीडां पशुबान्धवेषु ॥ २१९ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित राहु हो, तो धर्मवृद्धि, राजा से जय, शत्रु का नाश, भाग्योदय, धान्य और धन का लाभ, पशुओं तथा बान्धवों को पीड़ा होती है ॥ २१९ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितराहुफलम्

सिंहीसुतो दशमगः क्रयविक्रयेषु
लाभं नरं नृपसमं च करोति वर्षे ।
भूपाज्जयं सततमङ्गलमाशुकुर्या-
त्कीर्त्तिश्रियं भवति वाहनहानिकारी ॥ २२० ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित राहु हो, तो व्यापार से लाभ, राजा के समान कीर्त्ति, राजा से जय, अनेक मांगलिक कार्य, लक्ष्मी की प्राप्ति तथा वाहन की हानि होती है ॥ २२० ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितराहुफलम्

लाभस्थितश्चेत्खलु सैंहिकेयो
नरं नरेन्द्रेण समं करोति ।
हिरण्यगोभूधनसञ्चयं च
शत्रुक्षयं पुत्रभयं तथैव ॥ २२१ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित राहु हो, तो राजा के समान प्रताप, सुवर्ण, गौ, भूमि, धन का सञ्चय, शत्रु का नाश तथा पुत्र-भय होता है ॥ २२१ ॥

वर्षलग्ने द्वादशभावस्थितराहुफलम्

स्थानभ्रंशो भवति पवनस्योदयश्चेद्व्ययस्थः
सिंहीपुत्रो रिपुभयमथो मर्त्यमृत्युं विधत्ते ।
शीर्षे कर्णे व्यथनमुदरे नेत्ररोगं नराणां
लक्ष्मीहानिः स्वजनकलहः कामिनीनां च पीडा ॥२२२॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित राहु हो, तो स्थान का नाश, वायु का कोप, शत्रु से भय, मृत्यु के समान रोग, शिर, कर्ण, उदर तथा नेत्रों में पीड़ा, लक्ष्मी की हानि, स्वजनों से विरोध और स्त्री को पीड़ा होती है ॥ २२२ ॥

केतुफलानि

वर्षलग्ने लग्नस्थितकेतुफलम्

शिखी लग्नगः स्याद्भयं व्यग्रता च
रिपोर्भीतिचिन्ता भवेद्राज्यकष्टम् ।
शिरोर्त्तिस्तथा मानभंगो जनस्य
करोत्येव नेत्रे च योषित्सु पीडा ॥ २२३ ॥

वर्षलग्न में लग्नस्थित केतु हो, तो भय, व्याकुलता, शत्रुभय, गुरुचिन्ता, राजा से कष्ट, शिर में पीड़ा, मानभंग, नेत्रों में पीड़ा तथा स्त्री को पीड़ा होती है ॥ २२३ ॥

वर्षलग्ने द्वितीयभावस्थितकेतुफलम्

कुटुम्बगश्चेद्यदि केतुरब्दे
भूपाद्भयं हानिकरो धनानाम् ।
नेत्रोदरव्याधिभयार्त्तिदोषान्
जनापवादं प्रकरोति दुःखम् ॥ २२४ ॥

वर्षलग्न में द्वितीयभावस्थित केतु हो, तो राजा से भय, धन की हानि, नेत्र और उदर में व्याधि तथा लोकापवाद होता है ॥२२४॥

वर्षलग्ने तृतीयभावस्थितकेतुफलम्

यदि शिखी च तृतीयगृहस्थितः
प्रकुरुते पशुवाहनजं सुखम्।
धनसुतं नरराजसमं जनं
स्वजनपीडनमाशु करोति वै ॥ २२५ ॥

वर्षलग्न में तृतीयभावस्थित केतु हो, तो पशुओं तथा वाहनों का सुख, धन, सन्तान, राजा के समान पराक्रम तथा स्वजनों को पीड़ा होती है ॥ २२५ ॥

वर्षलग्ने चतुर्थभावस्थितकेतुफलम्

चतुर्थे शिखी मानसे व्यग्रता च
कफार्त्तिस्तथा वायुपीडा च दुःखम्।
भयं वाहनेभ्यस्तथा भूपपक्षा-
द्विदेशे भ्रमं वत्सरेऽसौ करोति ॥ २२६ ॥

वर्षलग्न में चतुर्थभावस्थित केतु हो, तो मन में चिन्ता, कफ-विकार, वायुपीड़ा, वाहनों से भय, राजपक्ष से भय तथा विदेश-भ्रमण होता है ॥ २२६ ॥

वर्षलग्ने पञ्चमभावस्थितकेतुफलम्

सुबुद्धेर्विनाशं सुतस्थानगश्चे-
च्छिखी सन्ततेः पीडनं हायनेऽस्मिन्।
तथा सर्वदा क्लेशचिन्तां भयासि
स्वकीयोदरे वायुभीतिं विधत्ते ॥ २२७ ॥

वर्षलग्न में पञ्चमभावस्थित केतु हो, तो बुद्धि का नाश, सन्तानपीड़ा, क्लेश, गुप्तचिन्ता, भय तथा उदर में पीड़ा रहा करती है ॥ २२७ ॥

वर्षलग्ने षष्ठभावस्थितकेतुफलम्

केतुर्यदा षष्ठगतस्तदा स्या-
द्रिपोर्विनाशो नृपतुल्यकारी ।
गोभूहिरण्याम्बरलाभदायी
धनाप्तिकृद्दुःखसमूहकारी ॥ २२८ ॥

वर्षलग्न में षष्ठभावस्थित केतु हो, तो शत्रुनाश, राजा के समान कीर्ति, गौ, भूमि, सुवर्ण तथा वस्त्र का लाभ, धनलाभ एवं अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं ॥ २२८ ॥

वर्षलग्ने सप्तमभावस्थितकेतुफलम्

केतुर्यदा सप्तमगेहसंस्थितो
वातप्रमेहादिविषाग्निपीडाम् ।
गुह्येन्द्रियार्तिं भयमङ्गनानां
करोति पुंसां स्वदशां गतेऽपि ॥ २२९ ॥

वर्षलग्न में सप्तमभावस्थित केतु हो, तो वातरोग, प्रमेह, विष और अग्नि से पीड़ा, गुह्येन्द्रिय में रोग तथा स्त्री को भय होता है ॥ २२९ ॥

वर्षलग्नेऽष्टमभावस्थितकेतुफलम्

मृत्युस्थितो मृत्युसमं मनुष्यं
केतुर्यदा भूपभयं करोति ।
ज्वरातिसारं च कफार्तिदोषं
विशूचिकां वायुभयं नराणाम् ॥ २३० ॥

वर्षलग्न में अष्टमभावस्थित केतु हो, तो मृत्युसम क्लेश, राजा से भय, ज्वर, अतीसार, कफविकार, हैज़ा तथा वायुपीड़ा होती है ॥ २३० ॥

वर्षलग्ने नवमभावस्थितकेतुफलम्

धर्मस्थितो धर्मविनाशकारी
जयं नृपाच्छत्रुविनाशनं च।
करोति पीडां पशुबान्धवेषु
भाग्योदयं धान्यधनागमं शिखी ॥ २३१ ॥

वर्षलग्न में नवमभावस्थित केतु हो, तो धर्म का नाश, राजा से भय, शत्रु का नाश, पशुओं और स्वजनों को पीड़ा, भाग्योदय, धन तथा धान्य का लाभ हो ॥ २३१ ॥

वर्षलग्ने दशमभावस्थितकेतुफलम्

शिखी यदा राजगृहे स्थितः स्या-
द्व्यापारलाभं च करोति वर्षे।
कीर्तिर्भवेद्वाहनहानिकारी
भूपाज्जयं मङ्गलमाशु कुर्यात् ॥ २३२ ॥

वर्षलग्न में दशमभावस्थित केतु हो, तो व्यापार से लाभ, कीर्ति, वाहन की हानि, राजा से भय तथा मांगलिक कृत्य होते हैं ॥ २३२ ॥

वर्षलग्ने एकादशभावस्थितकेतुफलम्

लाभस्थितश्चेत्स्वकुले तु खेचरो
नरं नरेन्द्रेण समं करोति।
शत्रुक्षयं पुत्रभयं तथा स्या-
द्धिरण्यगोभूधनसञ्चयं च ॥ २३३ ॥

वर्षलग्न में एकादशभावस्थित केतु हो, तो राजा के समान प्रतिष्ठा की प्राप्ति, शत्रुनाश, पुत्रभय, सुवर्ण, गौ, भूमि तथा धन का सञ्चय होता है ॥ २३३ ॥

वर्षलग्ने द्वादशभावस्थितकेतुफलम्

व्ययस्थः शिखी व्यग्रतां संप्रदत्ते
भयं शत्रुतः कामिनीनां च पीडा ।
भवेत्पीडनं कर्णनेत्रोदरेषु
विवादं जनैः सार्धमब्दे करोति ॥ २३४ ॥

वर्षलग्न में द्वादशभावस्थित केतु हो, तो व्याकुलता, शत्रु से भय, स्त्री को पीड़ा, कर्ण, नेत्र और उदर में पीड़ा तथा परस्पर विवाद होता रहता है ॥ २३४ ॥

पञ्चाशत्सहमानां क्रमेण विचारः फलानि च

आदौ पुण्यसहमसाधनम्

सूर्योनचन्द्रान्वितमह्नि लग्नं
वीन्द्वर्कयुक्तं निशि पुण्यसंज्ञम् ।
शोध्यर्क्षशुद्ध्याश्रयभान्तराले
लग्नं न चेत्सैकभमेतदुक्तम् ॥ २३५ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो चन्द्रमा में सूर्य का शोधन, रात्रि में वर्षप्रवेश हो, तो सूर्य में चन्द्रमा का शोधन करे। फिर एक सहित लग्न के जोड़ देने से राश्यादियुक्त पुण्यसहम हो जाता है। सब कहीं सहम लाने के लिये विशेष क्रिया यह है कि जो ग्रह शोधा जाता है अर्थात् घटाया जाता है वह शोध्य राशि कहलाता है। जिस शोध्य ग्रह में जो ग्रह शोधा जाय अर्थात् घटाया जाय वह शुद्ध्याश्रय (शोधक) राशि कहलाता है। यदि इन दोनों ग्रहों के राशियों के बीच में लग्न न हो, तो कहे हुए राश्यादि पुण्यसहम में एक राशि को जोड़ दे। यदि शोध्य और शोधक के बीच में लग्न हो, तो एक राशि नहीं जोड़ी जाती है ॥ २३५ ॥

उदाहरण

शोध्य चन्द्रमा ५ । २२ । ६ । ४७ है, इसमें शोधक सूर्य ९ । ७ । ३० । ६ को घटाया, तो ८ । १४ । ३६ । ४१ शेष रहा। इसमें लग्न ० । १८ । १० । १६ तथा एक राशि और जोड़ दिया, तो १० । २ । ४६ । ५७ यह पुण्यसहम सिद्ध हुआ।

इस उदाहरण में चन्द्रमा शोध्य तथा सूर्य शोधक है। अतः चन्द्रमा की राशि कन्या से सूर्य की राशि मकर तक गिना, तो शोध्य और शोधक के बीच में मेषराशि नहीं आई इस कारण एक राशि जोड़ दिया। यह सिद्धान्त ध्यान में रखना चाहिए।

पुण्यसहमस्य फलम्

सबले पुण्यसहमे धर्मसिद्धिर्धनागमः।
शुभस्वामीक्षितयुते व्यत्यये व्यत्ययं विदुः॥ २३६॥

पुण्यसहम बली हो, शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो, तो धर्मलाभ और धनलाभ होता है, यदि निर्बल हो, पापग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो उस वर्ष में धर्म तथा धन का नाश होता है॥ २३६॥

पुण्यसहमस्याशुभफलम्

लग्नात्षष्ठाष्टरिष्फस्थं धर्मभाग्ययशोहरम्।
शुभस्वामिदृशां प्रान्ते सुखधर्मादिसम्भवः॥ २३७॥

जब वर्षलग्न से छठे, आठवें तथा बारहवें स्थानों में स्थित पुण्यसहम हो, तो उस वर्ष में धर्म, भाग्य और यश का नाश होता है। यदि पुण्यसहम को शुभग्रह या अपना स्वामी देखे, तो वर्ष के अन्त में सुख तथा धर्म आदि की प्राप्ति होती है॥२३७॥

पापशुभग्रहसम्बन्धेन युतिदृष्ट्योः फलम्

पापयुक् शुभदृष्टं चेदशुभं प्राक् ततः शुभम्।
शुभयुक्तं पापदृष्टमादौ शुभमसत्परे॥ २३८॥

यदि पुण्यसहम पापग्रहों से युक्त और शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो वर्ष

के पूर्वार्ध में अशुभ और उत्तरार्ध में शुभ होता है। यदि पुण्यसहम शुभ ग्रहों से युक्त और पापग्रहों से दृष्ट हो, तो वर्ष के पूर्वार्ध में शुभ और उत्तरार्ध में अशुभ फल होता है * ॥ २३८ ॥

पुण्यसहमस्य प्रशंसा

यत्राब्दे पुण्यसहमं शुभं सोऽत्र शुभावहः।
अनिष्टेऽस्मिन् शुभो नेति पुण्यमादौ विचारयेत् ॥२३९॥

जिस वर्ष में पुण्यसहम शुभफलकारी हो, तो वह वर्ष अच्छे फलों का देनेवाला होता है। जिस वर्ष में पुण्यसहम अनिष्ट हो, तो वह वर्ष अच्छे फलों का देनेवाला नहीं होता इसलिये पहले पुण्यसहम का विचार करे ॥ २३९ ॥

जन्मलग्नतः पुण्यसहमस्य शुभफलविवेकः

सूतौ षष्ठाष्टरिष्फस्थमब्दे पापहतं पुनः।
पुण्यं धर्मार्थसौख्यघ्नं पत्यौ दग्धे फलं तथा ॥ २४० ॥

जन्म-समय में लग्न से छठे, आठवें या बारहवें स्थानों में पुण्य-सहम स्थित हो, फिर वर्ष में पुण्यसहम पापग्रहों से युक्त या पापग्रहों से दृष्ट हो या पुण्यसहम का स्वामी अस्तंगत हो, तो धर्म, अर्थ और सौख्य आदि का नाश होता है ॥ २४० ॥

सहमविचारे फलितार्थः

सहमान्यखिलानीत्थं सूतौ वर्षे विचिन्तयेत्।
मान्द्यारिकलिमृत्यूनां व्यत्ययाद‍ादिशेत्फलम् ॥ २४१ ॥

इस प्रकार जन्मकाल और वर्ष में समस्त सहमों का विचार कर लेना चाहिए। इन सहमों में से मान्द्य (रोग), अरि (शत्रु), कलि (कलह), मृत्यु तथा दरिद्र-नामक सहमों के फल को

* तात्पर्य यह है कि जब पापग्रहों से युक्त या दृष्ट होगा, तो समस्त वर्ष पर्यन्त अशुभ फल तथा शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट होगा, तो समस्त वर्ष शुभफल प्राप्त होगा।

पुण्यसहम से विपरीत कहे अर्थात् इन सहमों का शुभफल आया हो, तो अशुभ फल तथा मान्द्यादि सहमों का अशुभ फल आया हो, तो शुभ फल कहना चाहिए ॥ २४१ ॥

गुरु-विद्या-यशःसहमसाधनम्

व्यत्यस्तमस्माद्गुरुविद्ययोस्तु
संसाधनं पुण्यवियुक्सुरेज्यः ।
दिवा विलोमं निशि पूर्ववत्तु
यशोऽभिधं तत्सहमं वदन्ति ॥ २४२ ॥

पुण्यसहम के साधन से गुरुसहम और विद्यासहम का साधन विपरीत करना चाहिए। यदि वर्षप्रवेश रात में हो, तो चन्द्रमा में सूर्य को घटाना चाहिए, शेष में लग्न जोड़ दे। तदनन्तर एक अन्य राशि के जोड़ने अथवा न जोड़ने से गुरुसहम और विद्यासहम सिद्ध होते हैं। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो सूर्य में चन्द्रमा का शोधन करके लग्न जोड़ देने से दोनों सहम सिद्ध होते हैं। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो पुण्यसहम को बृहस्पति में घटावे तथा लग्न को जोड़े यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो पुण्यसहम में बृहस्पति को घटावे तथा लग्न को जोड़े, तो यशःसहम सिद्ध होता है ॥ २४२ ॥

उदाहरण

६ । ७ । ३० । ६ इस शोध्य सूर्य में ५ । २२ । ६ । ४७ शोधक चन्द्रमा को घटाया, तो ३ । १५ । २० । १६ शेप रहा। इसमें ० । १८ । ३ । ५४ लग्न जोड़ दिया ४ । ३ । २४ । १३ हुए। इसमें एक और जोड़ दिया, तो ५ । ३ । २४ । १३ यह गुरुसहम एवं विद्यासहम सिद्ध हुआ, ६ । २ । ४३ । ३५ पुण्यसहम को गुरु में से घटा दिया, तो ११ । २६ । ५ । १३ शेप रहा। इसमें लग्न जोड़ दिया, तो ० । १४ । ५५ । ३२ यह यशःसहम सिद्ध हुआ।

शुद्धा ग्रहाः

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	रा०
९	५	८	८	८	७	६	०
७	२२	१४	१२	२९	२४	६	१८
३०	९	३२	१६	३५	३१	४६	३
६	४७	३६	८	१३	४८	५४	५४

मित्रसहमसाधनम्

पुण्यसद्मगुरुसद्मतस्त्यजे-
द्व्यत्ययो निशि सितान्वितं च तत् ।
सैकता तनुवदुक्तरीतितो
मित्रनामसहमं विदुर्बुधाः ॥ २४३ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो गुरुसहम से पुण्यसहम घटावे, रात में हो, तो पुण्यसहम से गुरुसहम घटावे । शेष में शुक्र को जोड़ दे और लग्न को न जोड़े, सहमसाधन की रीति के अनुसार एक जोड़ दे, तो मित्रसहम होता है ॥ २४३ ॥

माहात्म्य-आशासहमयोः साधनम्

पुण्याद्भौमं शोधयेदुक्तवत्स्या-
न्माहात्म्यं तन्नक्तमस्माद्विलोमम् ।
शुक्रं मन्दादह्नि नक्तं विलोम-
माशाख्यं स्यादुक्तवच्छेषमूह्यम् ॥ २४४ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो पुण्यसहम में मंगल को घटा दे, शेष में एक सहित लग्न को जोड़ देवे । यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो, तो मंगल में पुण्यसहम घटा दे, पूर्वोक्त लग्न और एक अन्य राशि जोड़ दे, तो २ । ६ । १४ । ५२ माहात्म्यसहम होता है । यदि दिन में वर्ष का प्रवेश हो, तो शनि में शुक्र को घटाकर एक-

सहित लग्न को जोड़ दे। यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो, तो शुक्र में शनि को घटाकर एक सहित लग्न को जोड़ दे, तो ११।०।१६।० आशासहम (इच्छासहम) होता है ॥ २४४ ॥

सामर्थ्य-भ्रातृसहमयोः साधनम्

सामर्थ्यमारात्तनुपं विशोध्य
नक्तं विलोमं तनुपे कुजे तु।
जीवाद्विशुद्ध्येत्सततं पुरावत्
भ्रातार्किहीनाद्गुरुतः सदोह्यः ॥ २४५ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो मंगल में लग्नस्वामी को घटाकर एक सहित लग्न को जोड़ देवे। यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो लग्नस्वामी में मंगल को घटाकर एक सहित लग्न को जोड़ दे, तो सामर्थ्यसहम २।३।६।३१ सिद्ध होता है। लग्न का स्वामी मंगल हो, तो दिन और रात्रि दोनों में मंगल को बृहस्पति में घटानें एवं उक्त कार्यों के करने से सामर्थ्यसहम होता है। दिन और रात्रि दोनों में शनि को बृहस्पति में घटाकर एक सहित लग्न को जोड़ दे, तो भ्रातृसहम ४।१०।५०।१३ सिद्ध होता है॥२४५॥

गौरव-राज-तातसहमानां साधनम्।

दिने गुरोश्चन्द्रमपास्य नक्तं
रविक्रमादर्कविधू च देयौ।
रीत्योक्तया गौरवमर्कमार्क-
रपास्य वामं निशि राजतातौ ॥ २४६ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो बृहस्पति में चन्द्रमा को घटावे और सूर्य को जोड़े, रात्रि में वर्षप्रवेश हो, तो बृहस्पति में सूर्य को घटावे और चन्द्रमा को जोड़े। एक सहित लग्न को जोड़नें से गौरव-सहम १।१४।५५।३२ सिद्ध होता है। दिन में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में से सूर्य को घटावे, रात्रि में वर्षप्रवेश हो, तो सूर्य में

से शनि को घटावे, एक सहित लग्न को जोड़ दे, तो राजसहम तथा तातसहम १ । ० । २२ । ४२ सिद्ध होते हैं ॥ २४६ ॥

मातृ-पुत्र-जीवित-अम्बुसहमानां साधनानि ।

मातेन्दुतोऽपास्य सितं विलोमं
नक्तं सुतोऽहर्निशमिन्दुमीज्यात् ।
स्याज्जीविताख्यं गुरुमार्कितोऽह्नि
वामं निशीदं सममम्बयाम्बु ॥ २४७ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो चन्द्रमा में से शुक्र को घटावे और रात्रि में वर्षप्रवेश हो, तो शुक्र में से चन्द्रमा को घटा दे तथा एक सहित लग्न को जोड़ देने से मातृसहम १० । १५ । ४१ । ५२ सिद्ध होता है । रात दिन दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो बृहस्पति में से चन्द्रमा को घटा देवे तथा एक सहित लग्न को जोड़ देने से पुत्र-सहम ४ । २५ । २१ । २० सिद्ध हो जाता है । दिन में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में से गुरु को घटा देवे तथा रात्रि में वर्षप्रवेश हो, तो गुरु में से शनि को घटा दे तथा एक सहित लग्न को जोड़ देने से जीवितसहम १ । २५ । १७ । ३५ सिद्ध होता है । अम्बुसहम का साधन मातृसहम के समान कर देने से १० । १५ । ४१ । ५२ निष्पन्न हो जाता है ॥ २४७ ॥

कर्म-रोग-मन्मथसहमानां साधनानि ।

कर्मक्ष्मारान्निशि वाममुक्तं
रोगाख्यमिन्दुं तनुतः सदैव ।
स्यान्मन्मथो लग्नपमिन्दुतोऽह्नि
वामं निशीन्दुं तनुपं सदार्कात् ॥ २४८ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो मंगल में से बुध को घटावे, यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो, तो बुध में से मंगल को घटावे, एक सहित लग्न के जोड़ देने से कर्मसहम १।२०।२०।२२ निष्पन्न होता है ।

दिन रात दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो लग्न में चन्द्रमा को घटावे, एक सहित लग्न को जोड़ देने से रोगसहम ७।१३। ५८।१ सिद्ध होता है। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो चन्द्रमा में लग्नस्वामी को घटावे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो लग्नस्वामी में चन्द्रमा को घटावे, एक सहित लग्न को जोड़ दे तो मन्मथसहम ६।२९।४१।९ निष्पन्न हो जाता है ॥ २४८ ॥

कलह-क्षमा-शास्त्रसहमानां साधनानि

कलिक्षमे स्तो गुरुतो विशुद्धे-
त्कुजे विलोमं निशि पूर्वरीत्या ।
शास्त्रं दिने सौरिमपास्य जीवा-
द्वामं निशिज्ञस्य युतिः पुरावत् ॥ २४९ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो बृहस्पति में मंगल को घटा दे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो मंगल में बृहस्पति को घटाकर एक सहित लग्न को जोड़ देने से कलिसहम तथा क्षमासहम २।३।६।३१ निष्पन्न होते हैं। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो बृहस्पति में शनि को घटावे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में बृहस्पति को घटावे, फिर शेष में बुध को जोड़ देने से शास्त्रसहम ११।२।४।२७ सिद्ध होता है ॥ २४९ ॥

बन्धु-बन्दक-मृत्युसहमानां साधनानि

दिवानिशं ज्ञाच्छशिनं विशोध्य
बन्ध्वाख्यमेतन्निशि बन्दकं स्यात् ।
वामं दिवैतन्मृतिरष्टमर्क्षा-
दिन्दुं विशोध्योक्तवदार्किणोभात् ॥ २५० ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो बुध में चन्द्रमा को घटावे, एक सहित लग्न को जोड़ दे, तो बन्धुसहम ४।८।१०।२९ निष्पन्न होता है। यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो बुध में चन्द्रमा को घटा-

कर एक सहित लग्न को जोड़ देने से वन्दकसहम होता है। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो चन्द्रमा में बुध को घटावे तथा एक सहित लग्न को जोड़ देने से वन्दकसहम ९। २७। ५७। ३२ निष्पन्न हो जाता है। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो अष्टम भाव में चन्द्रमा को घटाकर शनि को तथा एक अन्य राशि को जोड़ देवे, तो मृत्युसहम ७। २८। २६। ३७ निष्पन्न हो जाता है॥ २५०॥

देशान्तरार्थसहमयोः साधनम्

देशान्तराख्यं नवमाद्विशोध्यं
धर्मेश्वरं सन्ततमुक्तवत्स्यात्।
अहर्निशं वित्तपमर्थभावा-
द्विशोध्य पूर्वोक्तवदर्थसद्म॥ २५१॥

यदि रात दिन दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो नवम भाव ८।१।२६।२८ में नवम भाव के स्वामी बृहस्पति को घटावे, लग्न और एक राशि जोड़ देने से देशान्तरसहम ११। २७। ५५। १८ सिद्ध होता है। दिन रात्रि दोनों में नवम भाव (८। १। २६। २८) में बृहस्पति को घटावे, लग्न और एक राशि जोड़े, तो अर्थसहम ६। ७। २१। ३६ सिद्ध होता है॥ २५१॥

परस्त्री-परकर्म-वाणिज्यसहमानां साधनानि

सितादपास्यार्कमथान्यदारा-
ह्वयं सदा प्राग्वदथान्यकर्म।
चन्द्राच्छनिं वाममथो निशायां
शश्वद्वणिज्यं दिनवन्दकोक्त्या॥ २५२॥

यदि दिन रात दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो शुक्र में सूर्य को घटावें लग्न और एक राशि को जोड़ देने से परस्त्रीसहम ११।५।५।२६ सिद्ध होता है। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो चन्द्रमा में शनि को घटावे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में चन्द्रमा

को घटावे, लग्न तथा एक राशि जोड़ देवे, तो परकर्मसहम ० । ३ ।२६ । ४७ सिद्ध होता है । रात दिन दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो चन्द्रमा में बुध को घटाकर लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से वाणिज्यसहम ६ । २७ । ५७ । ३३ सिद्ध हो जाता है ॥ २५२ ॥

कार्यसिद्धि-विवाहसहमयोः साधनम्

शनेर्दिवार्कं निशि चन्द्रमार्कं-
विशोध्य सूर्येन्दुभनाथयोगात् ।
स्यात्कार्यसिद्धिः सततं विशोध्य
मन्दं सितात्स्यात्सु विवाहसद्म ॥ २५३ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में सूर्य को घटाकर सूर्य-राशि के स्वामी को जोड़ दे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में चन्द्रमा को घटाकर चन्द्रराशि के स्वामी को जोड़ दे, और एक राशि जोड़ देवे, तो कार्यसिद्धिसहम ३ । ६ । ३ । ४२ सिद्ध होता है । रात दिन दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो शुक्र में शनि को घटाकर एक राशि जोड़ देवे, तो विवाहसहम ३ । ५ । ४८ । ४८ सिद्ध हो जाता है ॥ २५३ ॥

प्रसूति-सन्तापसहमयोः साधनम्

गुरोर्बुधं प्रोज्झ्य भवेत्प्रसूति-
र्वामं निशीन्दुं शनितो विशोध्य ।
षष्ठं क्षिपेद्धुक्रदिशा सदैव
सन्तापसंज्ञारमपास्य शुक्रात् ॥ २५४ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो बृहस्पति में बुध को घटावे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो बुध में बृहस्पति को घटावे, लग्न तथा एक राशि जोड़ देने से प्रसूतिसहम २ । ५ । २२ । २६ सिद्ध होता है । यदि रात दिन दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में चन्द्रमा को घटावे, षष्ठभाव (५ । १३ । ४५ । १६) को जोड़कर एक

राशि के जोड़ देने से सन्तापसहम ६ । २८ । २२ । २३ सिद्ध होता है ॥ २५४ ॥

श्रद्धा-प्रीति-बल-देह-जाड्यसहमानां साधनानि

श्रद्धा सदा प्रोक्तदिशाऽथ पुण्यं
विद्याख्यतः प्रोज्झ्य सदा पुरोक्त्या ।
प्रीत्याख्यमुक्तं बलदेहसंज्ञे
यशःसमे जाड्यमपास्य भौमात् ॥ २५५ ॥

यदि रात दिन दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो शुक्र में मंगल को घटावे, लग्न तथा एक राशि जोड़ देने से श्रद्धासहम ११ । २८ । ३ । ६ सिद्ध होता है। यदि रात दिन दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो विद्यासहम में पुण्यसहम को घटावे लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से प्रीतिसहम ८ । १८ । ४४ । ३२ सिद्ध होता है। यशः-सहम के समान बलसहम तथा देहसहम ० । १४ । ५५ । ३२ सिद्ध हो जाता है ॥ २५५ ॥

जाड्य-व्यापार-पानीय-पातसहमानां साधनानि

शनिर्विलोमं निशि चान्द्रयोगा-
द्व्यापार आराज्ज्ञमपास्य शश्वत् ।
पानीयपातः शशिनं विशोध्य
सौरेर्विलोमं निशि पूर्ववत्स्यात् ॥ २५६ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो मंगल में शनि को घटावे, राश्यात्मक बुध को जोड़े । यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में मंगल को घटावे, राश्यात्मक बुध तथा एक राशि जोड़ देने से जाड्यसहम १० । २० । ६ । ५० सिद्ध होता है। रात दिन दोनों में वर्षप्रवेश हो, तो मंगल में बुध को घटावे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से व्यापारसहम १ । २० । २० । २२ सिद्ध हो जाता है। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में चन्द्रमा को

घटावे, रात में वर्षप्रवेश हो, तो चन्द्रमा में शनि को घटावे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से पानीयपातसहम २ । २ । ४१ । १ निष्पन्न हो जाता है ॥ २५६ ॥

शत्रु-शौर्यसहमयोः साधनम्

मन्दं कुजात्प्रोज्झ्य रिपुर्विलोमं
रात्रौ भवेद्धौमविहीनपुण्यात् ।
शौर्यं विलोमं निशि पूर्ववत्स्या-
दुपाय ईज्यं शनिता विशोध्य ॥ २५७ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो मंगल में शनि को घटावे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में मंगल को घटावे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से रिपुसहम ३ । २५ । ४६ । ३६ सिद्ध होता है । दिन में वर्षप्रवेश हो, तो पुण्यसहम में मंगल को घटावे । रात में वर्षप्रवेश हो, तो मंगल में पुण्यसहम को घटावे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से शौर्यसहम २ । ६ । १४ । ३६ निष्पन्न हो जाता है ॥ २५७ ॥

उपाय-दारिद्र्य-गुरुतासहमानां साधनानि

वामं निशि ज्ञं तु विशोध्य पुण्या-
ज्ज्ञयुग्विलोमं निशि तद्दरिद्रम् ।
सूर्योच्चतः सूर्यमपास्य नक्तं
चन्द्रं तदुच्चं गुरुता पुरोक्त्या ॥ २५८ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में बृहस्पति को घटावे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो गुरु में शनि को घटावे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से उपायसहम ६ । २५ । १७ । ३५ सिद्ध होता है । यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो पुण्यसहम में बुध को घटावे और बुध को जोड़े, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो बुध में पुण्यसहम को घटावे और बुध को जोड़े तथा एक राशि को जोड़

दे, तो दरिद्रसहम ६ । २ । ४३ । ३५ सिद्ध हो जाता है। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो सूर्य के उच्च (० । १०) में सूर्य को घटावे, यदि रात में वर्षप्रवेश हो, तो चन्द्र के उच्च में चन्द्र को घटावे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से गुरुतासहम ४ । २० । ३३ । ४८ निष्पन्न हो जाता है ॥ २५८ ॥

जलमार्ग-बन्धनसहमयोः साधनम्

कर्कार्धतः प्रोज्झ्य शनिं स्याज्जलाध्वाऽन्यथा निशि ।
पुण्याच्छनिं विशोध्याह्नि वामं निशि तु बन्धनम् ॥२५६॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो, तो साढ़े तीन राशियों में शनि को घटावे, रात में वर्षप्रवेश हो, तो शनि में से साढ़े तीन राशियाँ घटा दे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से जलपथसहम ६।२६।१७।० सिद्ध होता है। यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो, तो पुण्य-सहम में शनि को घटावे, रात में वर्ष प्रवेश हो, तो शनि में पुण्य-सहम को घटावे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से बन्धन-सहम ४ । १३ । ५८ । ३५ निष्पन्न हो जाता है ॥ २५६ ॥

कन्या-अश्वसहमयोः साधनम्

चन्द्रः सितादपास्योक्तं सदा कन्याख्यमुक्तवत् ।
पुण्यादर्कमपास्यायमयोगादश्वोऽन्यथा निशि ॥ २६० ॥

यदि दिन रात दोनों में वर्ष प्रवेश हो, तो शुक्र में चन्द्रमा को घटावे, लग्न तथा एक राशि के जोड़ देने से कन्यासहम ३।२०।२५।५५ सिद्ध होता है। यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो, तो पुण्यसहम में सूर्य को घटाकर एकादश भाव (१० । ६ । २६ । ३८) के जोड़ देने से अश्वसहम ११ । ४ । ४७ । ७ निष्पन्न हो जाता है ॥ २६० ॥

सहमानां बलाबलज्ञानम्

स्वोच्चादिसत्पदगतो यदि लग्नदर्शी
वीर्यान्वितः सहमपो यदि नेक्षतेऽङ्गम्।
नासौ बली रविशशिश्रितभेशदर्श-
पूर्णान्तलग्नपबलस्य विचारणेत्थम् ॥ २६१ ॥

यदि सहम का स्वामी अपने घर का या उच्च आदि का या नवांश का या मित्रगृह का या शुभगृह का होकर लग्न को देखे, तो बली होता है। यदि लग्न को न देखे, तो निर्बल होता है। जन्म के समय सूर्य तथा चन्द्रमा जिस राशि में स्थित हों उन राशियों के स्वामी या जन्मकाल के समीपस्थ जो अमावास्या या पूर्णिमा जितनो बड़ी हो उस काल की साधित हुई लग्न का स्वामी इन चारों के बलों का विचार इस प्रकार किया जाता है * ॥ २६१ ॥

निर्बलसबलत्वलक्षणम्

पञ्चवर्गीबलेनोनो न हर्षस्थानमाश्रितः।
अबलोऽयं लग्नदर्शी बली स्वल्पेऽपि चेत्पदे ॥ २६२ ॥

यदि ग्रह पञ्चवर्गीबल से हीन हो, तो वह ग्रह निर्बल होता है या किसी हर्षदस्थान का आश्रय न करे और लग्न को न देखे, तो निर्बल होता है, परन्तु स्वल्पपद † अर्थात् त्रैराशिक या मुसल्लह स्थान में स्थित होकर लग्न को देखे, तो भी ग्रह बली होता है ॥ २६२ ॥

---

* यद्यपि इन चारों बलों का विचार हिल्लाज तथा मनुष्यजातक के आयुर्दायानयन-प्रकरण में अपेक्षित हैं, तो भी यहाँ प्रसंगवश वर्णन आ गया है।

† ग्रह अपने घर या अपने उच्च में ग्रहों के रहते हुए महाधिकारी, अपनी हद्दा में ग्रहों के रहते हुए मध्यमाधिकारी तथा अपने त्रैराशिक या अपने नवांश में ग्रहों के रहते हुए स्वल्पाधिकारी होता है।

सहमाधिपस्य वृद्धिह्रासौ

स्वस्वामिना शुभखगैः सहितं च दृष्टं
स्वामी बली च यदि तत्सहमस्य वृद्धिः।
यत्स्वामिना शुभखगैश्च न युक्तदृष्टं
तत्सम्भवो न हि भवेदिति चिन्त्यमादौ ॥ २६३॥

जो सहम अपने स्वामी से या शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट होने के कारण सहम का स्वामी बली हो, तो उस सहम की वृद्धि होती है अर्थात् फल देने में सामर्थ्य होता है। जो सहम अपने स्वामी से या शुभग्रहों से युक्त न हो और न दृष्ट हो, तो उस सहम का नाम-सदृश फल न होगा * ॥ २६३ ॥

सहमानां फलपाकसमयः

स्वनाथहीनं सहमं तदंशाः
स्वीयोदयस्था विहृतास्त्रिशत्या।
तत्सद्मपाको दिवसैर्हि लब्धैः
स्यात्तद्दशायां तदसम्भवे वा ॥ २६४ ॥

जिस सहम के शुभाशुभ फल मिलने के दिन जानने की इच्छा हो उसके राशि आदि लिखे, उस राशि के स्वामी को उसमें घटावे, शेष के अंश बना डाले, अपनी राशि के उदय से उसको गुण देवे, तीस-सौ से भाग देवे, जो दिन लब्धि आवें, उसी से सहम का फल जान लेना चाहिए। किसी का मत है कि सहम-स्वामी के दशा-दिन में सहम का फल होता है ॥ २६४ ॥

* सहम के फल-काल के संबंध में गणक-चक्र-चूड़ामणि श्रीकेशवजी ने कहा है—जो सहम वर्षेश्वर या राशीश से युक्त हो या अपने ही स्वामी से दृष्ट हो या शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो उसी के स्वामी की दशा में फल होगा।

उदाहरण

पुण्यसहम ५ । ५ । २५ । १ इसका स्वामी बुध ३।६।१४।१२, इसको घटाने से १ । २६ । १० । ४६ इसके अंश ५६ । १०।३६, अब कन्योदय ३२५ से गुणा कर देने पर १६८२५ । २३ । ३५ हुआ। इसको तीन-सौ से भाग दे दिया, तो लब्ध दिन ६६, घटी ५, पल ४ हुए। वर्षप्रवेश से लेकर इतने दिन तक सहम का फल जानना चाहिए।

विशेषतः सहमानां फलविचारः

अष्टमाधिपतिना युतेक्षितं
पापदृग्युतमथेत्थशालितैः ।
सम्भवेऽपि विलयं प्रयाति
तत्तेन जन्मनि पुरेदमीक्ष्यताम् ॥ २६५ ॥

यदि सहम अष्टमाधिपति से युक्त या दृष्ट हो या पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो या इन दोनों के साथ इत्थशाल करे, तो सहम का नाश हो जाता है अतः इसका विचार करके फल कहना चाहिए ॥ २६५ ॥

आदौ जन्मनि सर्वेषां सहमानां बलाबलम् ।
विमृश्य सम्भवो येषां तानि वर्षे विचिन्तयेत् ॥ २६६ ॥

पहले सब सहमों के बलाबल-विचार के अनुसार जिसके फल-प्राप्ति का सम्भव हो उसका विचार करे, जिसका स्वामी निर्बल हो उसका कभी विचार न करे * ॥ २६६ ॥

---

* तात्पर्य यह है कि सब सहमों का विचार अशुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट होने पर अशुभ फल तथा शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट होने पर शुभफल होता है।

अरिष्टविचारः

लग्नेशेऽष्टमगेऽष्टेशे तनुस्थे वा कुजेक्षिते ।
ज्ञजीवयोरस्तंगयोः शस्त्राघातो विपन्मृतिः ॥ २६७ ॥

यदि वर्ष लग्न का स्वामी अष्टम स्थान में हो और उसको मंगल देखता हो या अष्टमेश लग्न में हो और उस पर मंगल को दृष्टि हो या बुध एव बृहस्पति अस्तंगत हों, तो शस्त्र से चोट तथा विपत्ति से मृत्यु होती है ॥ २६७ ॥

अब्दलग्नेशरन्ध्रेशौ व्ययाष्टद्विसुकोपगौ ।
मुथहासंयुतौ मृत्युप्रदौ तद्धातुकोपतः ॥ २६८ ॥

यदि वर्ष लग्नेश तथा अष्टमेश १२ । ८ । ४ स्थानों में से किसी एक स्थान में हों तथा मुन्था से युक्त हों, तो अपने धातु (वात, पित्त आदि) के कोप से मृत्यु करते हैं * ॥ २६८ ॥

जन्मलग्नाधिपोऽवीर्यो मृतीशोऽब्देऽस्तगो यदा ।
सूर्यदृष्टो मृतिं दत्ते कुष्ठं कण्डूं तथापदः ॥ २६९ ॥

यदि जन्मलग्न का स्वामी बलरहित हो तथा वर्ष में अष्टमेश सप्तम स्थान में हो, उस पर सूर्य को दृष्टि हो, तो कुष्ठ या खुजली का रोग तथा अनेक प्रकार की आपत्तियाँ होती हैं ॥ २६९ ॥

अस्तगौ मुंथहालग्ननाथौ मन्देक्षितौ यदा ।
सर्वनाशो मृतिः कष्टमाधिव्याधिभयं रुजः ॥ २७० ॥

यदि मुन्थेश तथा लग्नेश अस्तंगत हो तथा शनि की दृष्टि भी पड़ती हो, तो उस व्यक्ति का सर्व अर्थात् स्त्री, लड़के तथा द्रव्य आदि का नाश या मृत्यु या कष्ट या आधि (मानसी दुःख) या

---

* लग्नेश, अष्टमेश और मुथहा इन तीनों को मिलाकर एक ही योग होता है । इन तीनों योगों के पृथक्-पृथक् होने पर पूर्वोक्त फल नहीं होता है, किंतु केवल क्लेश मिलता है ।

व्याधि (शारीरिक व्यथा) या भय एवं अनेक प्रकार के रोग होते हैं ॥ २७० ॥

क्रूरा वीर्याधिकाः सौम्या निर्बला रिपुरन्ध्रगाः ।
तदाधिव्याधिभीतिः स्यात्कलिर्हानिस्तथा विपत् ॥२७१॥

यदि पापग्रह पञ्चवर्गी के बल से अधिक बलवान् हों, शुभग्रह पञ्चवर्गी के बल से निर्बल होकर छठे या आठवें स्थानों में स्थित हों, तो मानसी व्यथा, चित्त में व्याकुलता, अनेक प्रकार के भय, पारस्परिक कलह, सञ्चित धन की हानि तथा अनेक प्रकार के क्लेश होते हैं ॥ २७१ ॥

निर्बलौ धर्मवित्तेशौ दुष्टखेटास्तनौ स्थिताः ।
लक्ष्मीश्चिरार्जिता नश्येद्यदि शक्रोऽपि रक्षिता ॥ २७२ ॥

यदि नवमेश तथा धनेश पञ्चवर्गी के बल से बलहीन हों, लग्न में दुष्टग्रह हों, तो चिरसञ्चित लक्ष्मी का नाश होता है। यदि इन्द्र भी वज्र लेकर रक्षा करें, तो भी रक्षा नहीं हो सकती है ॥ २७२ ॥

नीचे चन्द्रेऽस्तगाः सौम्याः वियोगः स्वजनैः सह ।
शरीरपीडा मृत्युर्वा साधिव्याधिभयं महत् ॥ २७३ ॥

चन्द्रमा नीच राशि में स्थित हो और शुभग्रह अर्थात् बुध, बृहस्पति और शुक्र अस्तंगत हों, तो स्वजनों से वियोग, शरीर-पीड़ा या मृत्यु, चिन्ता, व्याकुलता तथा महद्भय उपस्थित होता है ॥ २७३ ॥

अब्दलग्नं जन्मलग्नराशिभ्यामष्टमं यदा ।
कष्टं महाव्याधिभयं मृत्युः पापयुतेक्षणात् ॥ २७४ ॥

यदि जन्मलग्न या जन्मराशि से वर्षलग्न अष्टम हो, तो कष्ट और बड़े-बड़े रोगों का सामना करना पड़ता है। यदि वर्षलग्न पापग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो मृत्यु के समान क्लेश होता है ॥२७४॥

जन्मन्यष्टमगः पापो वर्षलग्ने रुगाधिदः।
चन्द्राब्दलग्नपौ नष्टबलौ चेत्स्यात्तदा मृतिः ॥ २७५ ॥

यदि जन्म के समय पापग्रह अष्टम स्थान में स्थित हो, वही पापग्रह वर्षलग्न में हो, तो विशेष रोग और मानसी व्याधि को देता है। चन्द्रमा तथा वर्षलग्नेश पञ्चवर्गी के बल से बलहीन हो या चन्द्रमा की राशि का स्वामी और वर्षलग्न का स्वामी ये दोनों नष्टबल हों, तो मृत्यु होती है ॥ २७५ ॥

व्ययाम्बुनिधनारिस्था जन्मेशाब्दपमुन्थहा।
एकर्क्षगास्तदा मृत्युः पापक्षुतदृशा ध्रुवम् ॥ २७६ ॥

यदि जन्मलग्नेश, वर्षेश और मुन्थेश एक ही साथ १२।४।८।६ स्थानों में हों तथा जन्मलग्नेश, वर्षेश और मुन्थेश ये तीनों पापग्रहों से क्षुतदृष्टि अर्थात् चौथे, सातवें, दशवें और पहले इन स्थानों में स्थित दृष्टि करके देखे जावें, तो उस व्यक्ति की अवश्य मृत्यु होती है ॥ २७६ ॥

अरिष्टभंगः

यदा सवीर्यो मुथहाधिनाथो
लग्नाधिपो जन्मविलग्नपो वा।
केन्द्रत्रिकोणायधनस्थितास्ते
सुखार्थहेमाम्बरलाभदाः स्युः ॥ २७७ ॥

यदि मुन्थेश या लग्नेश या जन्मलग्नेश पञ्चवर्गी के उत्तम बल से युक्त होकर केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०), त्रिकोण (९ । ५), लाभ तथा धनस्थानों में स्थित हों, तो सुख, धन, सुवर्ण (सोना) तथा वस्त्र का लाभ होता है ॥ २७७ ॥

त्रिषष्ठलाभोपगतैरसौम्यैः
केन्द्रत्रिकोणोपगतैश्च सौम्यैः।

रत्नाम्बरस्वर्णयशःसुखाप्ति-
नाशोऽप्यरिष्टस्य तनोश्च पुष्टिः ॥ २७८ ॥

यदि वर्षलग्न से ३ । ६ । ११ स्थानों में से किसी स्थान में पापग्रह स्थित हों और केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०) तथा त्रिकोण (६ । ५) स्थानों में से किसी एक स्थान में शुभग्रह हों, तो रत्न, वस्त्र, सुवर्ण (सोना), यश और सुख की प्राप्ति तथा अरिष्टों का नाश और शरीर की पुष्टि होती है ॥ २७८ ॥

लग्नाधिपो बलयुतः शुभेक्षितयुतोऽपि वा ।
केन्द्रत्रिकोणगोऽरिष्टं नाशयेत्सुखवित्तदः ॥ २७९ ॥

यदि लग्नेश बलवान् हो या शुभयुक्त या शुभदृष्ट हो या केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०), त्रिकोण (६ । ५) में हो, तो अरिष्ट का नाश करता है तथा सुख और धन देता है ॥ २७९ ॥

गुरुः केन्द्रे त्रिकोणे वा पापादृष्टः शुभेक्षितः ।
लग्नचन्द्रेन्थिहारिष्टं विनाश्यार्थसुखं दिशेत् ॥ २८० ॥

यदि बृहस्पति पापग्रहों से अदृष्ट और शुभग्रहों से दृष्ट होकर केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०) त्रिकोण (६ । ५) स्थानों में स्थित हो, तो लग्न, चन्द्रमा और मुन्था के अरिष्टों का नाश करके धन और सुख को देता है ॥ २८० ॥

जनने जननेत्रगोचराः
खचराः स्वस्वगृहोच्चसंस्थाः ।
अरिभं प्रविहाय हायने
यदि ते स्युः सकलार्थसिद्धिदाः ॥ २८१ ॥

जन्म के समय जिसके ग्रह स्वगृही हों, अपने उच्च के हों, बन-स्थान में हों, शत्रुस्थान को छोड़ अन्य किसी स्थान में स्थित हों, तथा वर्ष में भी ऐसे ही ग्रह पड़ें, तो सब कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं ॥ २८१ ॥

ताजिके भावफलानि

ताजिके लग्नफलम्

सूर्यारमन्दास्तनुगा ज्वरार्ति
धनक्षयं पापयुगिन्दुरित्थम् ।
शुभान्वितः पुत्रकलत्रसौख्यं
जीवज्ञशुक्रा धनराज्यलाभम् ॥ २८२ ॥

यदि लग्न में सूर्य, मंगल, शनि या पापयुक्त चन्द्रमा हो, तो ज्वरपीड़ा तथा धनहानि होती है। यदि चन्द्रमा शुभग्रहों से युक्त हो, तो सन्तान तथा स्त्री का सुख प्राप्त होता है। यदि लग्न में बृहस्पति, बुध या शुक्र हो, तो धन तथा राजपक्ष से लाभ होता है ॥ २८२ ॥

ताजिके द्वितीयभावफलम्

चन्द्रज्ञजीवास्फुजितो धनस्था
धनागमं राज्यसुखं प्रदद्युः ।
पापा धनस्था धनहानिदाः स्यु-
र्नृपाद्भयं कार्यविघातमार्किः ॥ २८३ ॥

यदि द्वितीय भाव में चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति या शुक्र हों, तो धन तथा राजपक्ष से सुख देते हैं। यदि द्वितीय भाव में पापग्रह हों, तो धन की हानि तथा द्वितीय भाव में शनि हो, तो राजा से भय तथा कार्य का नाश होता है ॥ २८३ ॥

ताजिके तृतीयभावफलम्

दुश्चिक्यगाः खलखगा धनधर्मराज्य-
लाभप्रदा बलयुताः क्षितिलाभदाः स्युः ।
सौम्याः सुखार्थसुतमानयशोविलास-
लाभाय हर्षमतुलं किल तत्र चन्द्रः ॥ २८४ ॥

यदि तीसरे स्थान में पापग्रह हों, तो धन, धर्म तथा राज्यलाभ

होता है। यदि पापग्रह बलवान् हों, तो भूमि का लाभ होता है। यदि शुभग्रह हों, तो सुख, धन, पुत्र, आदर, यश तथा भोग-विलास का लाभ होता है। यदि उस स्थान में चन्द्रमा भी हो, तो अत्यन्त हर्ष होता है ॥ २८४ ॥

ताजिके चतुर्थभावफलम्

चन्द्रः सुखे खलयुतो व्यसनं रुजं च
पुष्टः शुभेन सहितः सुखमातनोति ।
सौम्याः सुखं विविधमत्र खलाः सुखार्थ-
नाशं रुजो व्यसनमप्यतुलं भयं च ॥ २८५ ॥

यदि सुखस्थान में चन्द्रमा पापग्रह से युक्त हो, तो दुःख तथा रोग, यदि चन्द्रमा बलवान् होकर शुभग्रह-सहित हो, तो सुख, यदि चन्द्रमा से अन्य कोई शुभग्रह स्थित हो, तो अनेक प्रकार के सुख, यदि पापग्रह हों, तो सुख, धन का नाश, रोग तथा अत्यन्त भय होता है ॥ २८५ ॥

ताजिके पञ्चमभावफलम्

पुत्रवित्तसुखसञ्चयं शुभाः
पुत्रगो भृगुसुतोऽतिहर्षदः ।
पुत्रमित्रधनबुद्धिहारका-
स्तस्करामयकलिप्रदाः खलाः ॥ २८६ ॥

यदि पञ्चम स्थान में शुभग्रह हों, तो पुत्र, धन तथा सुख का लाभ; केवल शुक्र हो, तो अत्यन्त हर्ष; यदि पापग्रह हों, तो पुत्र, मित्र, धन तथा बुद्धि का नाश एवं चोरी, रोग और कलह होते हैं ॥ २८६ ॥

ताजिके षष्ठभावफलम्

षष्ठे पापा वित्तलाभं सुखाप्तिं
भौमोऽत्यन्तं हर्षदः शत्रुनाशम् ।

सौम्या भीतिं वित्तनाशं कलिं च
चन्द्रो रोगं पापयुक्तः करोति ॥ २८७ ॥

यदि छठे स्थान में पापग्रह हों, तो धन तथा सुख का लाभ; मंगल हो, तो अत्यन्त हर्ष तथा शत्रु का नाश; शुभग्रह हों, तो भय, धन का नाश तथा कलह, पापयुक्त चन्द्रमा हो, तो रोग होते हैं ॥ २८७ ॥

ताजिके सप्तमभावफलम्

सपापः शशी सप्तमे व्याधिभीतिं
खलाः स्त्रीविनाशं कलिं मृत्युभीतिम् ।
शुभाः कुर्वते वित्तलाभं सुखाप्तिं
यशोराज्यमानोदयं बन्धुसौख्यम् ॥ २८८ ॥

यदि सप्तम स्थान में पापग्रह-सहित चन्द्रमा हो, तो व्याधि तथा भय की प्राप्ति होती है। यदि पापग्रह हों, तो स्त्री का नाश, कलह, मृत्यु तथा भय होते हैं। यदि शुभग्रह हों, तो धन, सुख, यश, राज्य, सम्मान तथा बान्धवों से सुख की प्राप्ति होती है ॥२८८॥

ताजिकेऽष्टमभावफलम्

चन्द्रोऽष्टमे निधनदः खलखेटयुक्तः
पापाश्च तत्र मृतितुल्यफला विचिन्त्याः ।
सौम्याः स्वधातुवशतो रुजमर्थहानिं
मानक्षयं मुथशिले शुभजे शुभं च ॥ २८९ ॥

यदि अष्टम स्थान में चन्द्रमा पापग्रह से युक्त हो, तो मृत्यु; यदि केवल पापग्रह हों, तो मृत्यु के समान क्लेश; यदि शुभग्रह हों, तो अपने धातु के वश से रोगकारक, द्रव्यहानिकारक तथा मानहानिकारक होते हैं, यदि शुभ इत्थशाल पड़े, तो शुभ होता है ॥ २८९ ॥

ताजिके नवमभावफलम्

तपसि सोदरभीः पशुपीडनं
खलखगेऽतिमुदो रविरत्र चेत् ।
शुभखगा धनधर्मविवृद्धिदाः
खलखगे च शुभान्यपरे जगुः ॥ २६० ॥

यदि नवम स्थान में पापग्रह हों, तो सहोदर से भय तथा पशुओं की पीड़ा; यदि सूर्य हो, तो अत्यन्त हर्ष; यदि शुभग्रह हों, तो धर्म तथा धन की वृद्धि होती है। किसी आचार्य के मत से पापग्रह का फल भी शुभ होता है ॥ २६० ॥

ताजिके दशमभावफलम्

गगनगो रविजः पशुवित्तहा
रविकुजौ व्यवसायपराक्रमैः ।
धनसुखानि परे च धनात्मजा-
वनिपसङ्गसुखानि वितन्वते ॥ २६१ ॥

यदि दशम स्थान में शनि हो, तो पशु तथा धन का नाश; यदि सूर्य तथा मंगल हों, तो उद्यम तथा पराक्रम के द्वारा धन एवं सुख का लाभ; शेष ग्रह हों, तो धन, पुत्र, राजसंगम तथा सुख देते हैं ॥ २६१ ॥

ताजिके एकादशभावफलम्

लाभे धनोपचयसौख्ययशोऽभिवृद्धि-
सन्मित्रसङ्गबलपुष्टिकराश्च सर्वे ।
क्रूरा बलेन रहिताः सुतवित्तबुद्धि-
नाशं शुभास्तु तनुतां स्वफलस्य कुर्युः ॥ २६२ ॥

यदि ग्यारहवें स्थान में सब ग्रह हों, तो धनसंग्रह, सुख, यश की वृद्धि, अच्छे मित्र से मेल, बल तथा पुष्टि को देते हैं। यदि पापग्रह बलहीन होकर इस स्थान में स्थित हों, तो, पुत्र धन तथा बुद्धि

का नाश करते हैं। यदि शुभग्रह बलहीन हों, तो शुभ फल न्यून हो जाता है ॥ २९२ ॥

ताजिके द्वादशभावफलम्

पापा व्यये नेत्ररुजं विवादं
हानिं धनानां नृपतस्करादेः।
सौम्या व्ययं सद्व्ययहारमार्गे
कुर्युः शनिर्हर्षविवृद्धिमत्र ॥ २९३ ॥

यदि बारहवें स्थान में पापग्रह हों, तो नेत्ररोग, विवाद, राजा या चोर से धन की हानि होती है। यदि शुभग्रह हों, तो शुभ कार्य में व्यय कराते हैं। यदि इस स्थान में शनि हो, तो हर्ष की वृद्धि होती है ॥ २९३ ॥

मासप्रवेशो दिनप्रवेशश्च

जन्मार्कांशेन तुल्यः स्याद्यदा तात्कालिको रविः।
तदा मासप्रवेशश्चेद् द्युप्रवेशः कलासमः ॥ २९४ ॥

जब वर्तमान समय के स्पष्ट सूर्य का अंश जन्मसमय के स्पष्ट सूर्य के अंशों के समान हो, तो मास का प्रवेश होता है और कलाओं के समान हो, तो दिन का प्रवेश होता है ॥ २९४ ॥

मासप्रवेशानयनम्

कार्यं तु स्फुटपंक्तिस्थसूर्ययोरन्तरं मिथः।
पंक्त्यासन्नार्कगत्या च सप्तं कृत्वा मिथो बुधः ॥ २९५ ॥
हरेदंशादिकं तद्धि फलं ज्ञेयं दिनादिकम्।
स्फुटार्कांशादि शुद्ध्येच्चेत्पंक्तिस्थे तु रवौ तदा ॥२९६॥
फलं विशोधयेत्सम्यग्मिश्रमाने बुधः सदा।
अन्यथा योजयेत्तत्र स्फुटार्कात्पंक्तिगे लघौ ॥ २९७ ॥

स्पष्ट सूर्य और पञ्चाङ्ग का निकटवर्त्ती पंक्तिस्थ सूर्य इन दोनों का आपस में अन्तर करे। आसन्नपंक्ति के सूर्य की गति को आपस

में सवर्णित कर ले उस सवर्णित अन्तर में भाग देने से जो लब्धि मिले, उसे दिन, घटी आदि फल जानिए। यदि स्पष्ट सूर्य के अंश आदि पंक्तिवाले सूर्य के अंश आदि में घटा देने से घट जावें, तो पूर्वोक्त फल को मिश्रमान में घटा देवे। यदि स्पष्ट सूर्य से पंक्तिवाला सूर्य न्यून अर्थात् पंक्ति का सूर्य स्पष्ट सूर्य में घट जावे, तो पूर्वोक्त फल को मिश्रमान में जोड़ देवे, तो दिन आदि फल सिद्ध होते हैं ॥ २६५-२६७ ॥

द्वादशमासानां प्रवेशः

एवं दिनादिकं यत्स्यात्तदिष्टं परिकीर्त्तितम् ।
उदयोक्तविधानेन लग्नं साध्यं बुधेन तु ॥ २६८ ॥
तत्र मासप्रवेशः स्यादेवं कार्यं पुनः पुनः ।
इत्थं द्वादशमासानां निवेशः साध्यतां बुधैः ॥ २६९ ॥

पूर्वोक्त प्रकार से जो दिन, घटी आदि आवें, उन्हें इष्ट-काल कहते हैं। इष्ट द्वारा लग्न लाने का जो प्रकार पहले लिख आए हैं, तदनुसार पण्डित लोग लग्न का साधन कर लेवें। उसी लग्न में मास का आरम्भ हो जाता है। ऐसे ही क्रिया वारंवार करने से बारह महीनों के मासप्रवेश निकल आते हैं ॥ २६८-२६९ ॥

मासेशज्ञानम्

अपरे मासलग्नेशं मासाधिपतिमूचिरे।
दिनेशं दिनलग्नेशं तथा प्रोचुर्विचक्षणाः ॥
मासवस्त्रेशयोर्वाच्यं फलं वर्षेशवद्बुधैः ॥ ३०० ॥

मासलग्न का स्वामी मासाधिपति, दिनलग्न का स्वामी दिनेश होता है तथा वर्षेश के समान उनका फल होता है ॥ ३०० ॥

मासेशस्य सामान्यफलम्

लग्नेशमासेशसमेशमुन्था-
धीशाः षडष्टोपगताः सपापाः ।

दृष्टाः खलैः शत्रुदृशाऽत्र मासे
व्याध्यादिविड्ढिट्भयदुःखदाः स्युः ॥३०१॥

लग्नेश, मासेश, वर्षेश तथा मुन्थेश ६।८ स्थानों में पापग्रह-सहित हों, खलग्रह उनको शत्रुदृष्टि से देखें, तो वे उस मास में व्याधि, शत्रुभय तथा दुःखकारक होते हैं ॥ ३०१ ॥

मासेशफलम्

मासेशसूर्यफलम्

महीशाद्धनाप्तिर्महामानलाभो
मनःसंप्रमोदः सदा मानवानाम्।
दिगन्तप्रचारं यशः स्यान्नितान्तं
भवेन्मासनाथो यदा घस्रनाथः ॥ ३०२ ॥

मास का पति सूर्य हो, तो राजपक्ष से लाभ, अतिकीर्त्ति, मन में हर्ष तथा देशान्तर में यश की प्राप्ति होती है ॥ ३०२ ॥

मासेशचन्द्रफलम्

मुक्ताहारश्वेतवस्त्रादिलाभः
स्त्रीयाल्लोकाद्भूपतेः सौख्यलाभः।
वित्तं तीर्थासक्रियुङ्मानवानां
मासाधीशो यामिनीशो यदा स्यात् ॥३०३॥

मासपति चन्द्रमा हो, तो मोतियों के हार तथा श्वेत वस्त्रों का लाभ, आत्मीय जनों तथा राजा से सुख, धन का लाभ एवं तीर्थयात्रा आदि शुभ कार्य होते हैं ॥ ३०३ ॥

मासेशभौमफलम्

द्रविणशोणितवस्तुसमागमो
जययुतो हि ततः समराजिरे।
भवति मङ्गलमण्डितमन्दिरं
तनुभृतां यदि मासपमङ्गलः ॥ ३०४ ॥

मासपति मंगल हो, तो धन तथा लाल वस्तुओं का लाभ, संग्राम में विजय तथा घर में सर्वदा मांगलिक कार्य हों ॥ ३०४ ॥

मासेशबुधफलम्

नानाविलासं वरवस्त्रलाभं
धनागमं भूपतितो नितान्तम् ।
कुर्यान्नराणां विपुलां च कीर्त्तिं
मासाधिनाथः शशिजो नितान्तम् ॥ ३०५ ॥

मासपति बुध हो, तो अनेक प्रकार के भोग-विलास, उत्तम वस्त्रों का लाभ, राजपक्ष से लाभ तथा कीर्ति प्राप्त होती है ॥३०५॥

मासेशगुरुफलम्

वृन्दारकार्चानिरतो नितान्तं
वन्दाभिभूताखिलशूरलोकम् ।
धत्ते पुमांसं धिषणाभियुक्तं
मासाधिनाथो धिषणाभिधानः ॥ ३०६ ॥

मासपति बृहस्पति हो, तो देवभक्ति, लोक में अधिक सम्मान तथा उत्तम बुद्धि होती है ॥ ३०६ ॥

मासेशशुक्रफलम्

निजजनाभिहतावरतान्वितो
रतिविधानविचक्षणमानसः ।
हरति वारिगणे विहितेहितो
भृगुसुते यदि मासपतौ स्थिते ॥ ३०७ ॥

मासपति शुक्र हो, तो बन्धुओं में आदर, कामक्रीड़ा में अधिक स्नेह तथा जलक्रीड़ा में प्रेम होता है ॥ ३०७ ॥

मासेशशनिफलम्

नरेशात्सदा प्राप्तमानो नरः स्या-
त्तताभूरुहारोपणे सक्तचित्तः ।

विलासान्वितो वैरिमानप्रमाथी
प्रभुत्वं प्रयातः शनिर्यत्र मासे ॥ ३०८ ॥

मासपति शनि हो, तो राजा से सम्मान की प्राप्ति, वृक्ष आदि के लगाने में प्रेम, हास्य-विलास में चित्त की संलग्नता तथा शत्रुओं का मद नाश होता है ॥ ३०८ ॥

तन्वादिभावगतमासेशफलम्

लग्नगतमासेशफलम्

मासेश्वरो लग्नगतः करोति
धनागमं सन्ततिमेव सौख्यम् ।
कर्मोदयं बाहुबलप्रतापं
शत्रुक्षयं स्यात्खलु राजमान्यम् ॥ ३०९ ॥

मासपति लग्न में स्थित हो, तो धनलाभ, सन्तानसुख, भाग्योदय, बाहुबल से शत्रुओं का नाश तथा राजा से मान प्राप्त होता है ॥ ३०९ ॥

धनभावगतमासेशफलम्

मासेश्वरः कोशगतः करोति
द्रव्यागमं बाहुबलप्रमोदम् ।
धनागमं वाहनमन्दिराणि
युक्तेक्षितो वा शुभखेचरेन्द्रैः ॥ ३१० ॥

शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट मासपति धनभाव में स्थित हो, तो धनलाभ, हर्ष, सवारी तथा मकान आदि का लाभ होता है ॥ ३१० ॥

सहजभावगतमासेशफलम्

भवति मासपतिः सहजे यदा
निजपराक्रमसिद्धिकरस्तदा ।
निजसहोदरदेहसुखं भवे-
त्खलखगैः सहितो न च वीक्षितः ॥ ३११ ॥

मासपति तृतीयभाव में स्थित हो एवं पापग्रहों से युक्त या दृष्ट न हो, तो अपने पराक्रम से कार्यों की सिद्धि तथा भाइयों को सुख प्राप्त होता है ॥ ३११ ॥

सुहृद्भावगतमासेशफलम्

मासे यदा मासपतिश्चतुर्थो
भवेत्तदा वाहनहेमलाभः ।
सत्सङ्गतिं ब्राह्मणदेवभक्तिं
युक्तेक्षितो वा खलु सौम्यखेटैः ॥ ३१२ ॥

मासपति चतुर्थभाव में स्थित हो एवं शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो सवारी, सुवर्णलाभ सत्संगति, ब्राह्मणों और देवताओं में भक्ति होती है ॥ ३१२ ॥

पुत्रभावगतमासेशफलम्

मासेश्वरः पञ्चमगः करोति
धनागमं सन्ततिमेव सौख्यम् ।
स्त्रीणां विलासं रिपुरोगनाशं
सुखार्थसिद्धिं तनुतेऽत्र मासे ॥ ३१३ ॥

मासपति पञ्चमभाव में स्थित हो, तो धनागम, सन्तानसुख, स्त्री का विलास, शत्रुओं तथा रोगों का नाश, सुख एवं कार्यों की सिद्धि होती है ॥ ३१३ ॥

शत्रुभावगतमासेशफलम्

मासेश्वरः शत्रुगतः करोति
रोगागमं वाहनवित्तहानिः ।
शत्रूदयः कार्यकृतां न सिद्धिः
प्रमेहपीडा कथिता मुनीन्द्रैः ॥ ३१४ ॥

मासपति छठे भाव में स्थित हो, तो रोग, वाहन तथा धन

की हानि, शत्रुओं का उदय, कार्यविनाश तथा प्रमेहरोगजन्य पीड़ा होती है ॥ ३१४ ॥

कलत्रभावगतमासेशफलम्

कलत्रगो मासपतिर्यदा स्या-
ज्जायाविलासं कुरुते सदाऽसौ ।
व्यापारसिद्धिं धनधान्यमुच्चै-
र्युक्तेक्षितश्चेत्खलु सौम्यखेटैः ॥ ३१५ ॥

मासपति सप्तमभाव में स्थित हो एवं शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो स्त्री का सुख, व्यापार से लाभ तथा धन की वृद्धि होती है ॥ ३१५ ॥

मृत्युभावगतमासेशफलम्

मासेश्वरो मृत्युगतः करोति
वपुःप्रणाशं बलबुद्धिनाशम् ।
रमावियोगं सुतबन्धुखेद-
मितस्ततः संभ्रमणं करोति ॥ ३१६ ॥

मासपति अष्टमभाव में स्थित हो, तो शरीर में क्लेश, बल-बुद्धि की हानि, स्त्री से वियोग, पुत्र तथा भाई का खेद एवं विदेश में भ्रमण करना पड़ता है ॥ ३१६ ॥

धर्मभावगतमासेशफलम्

मासेश्वरो भाग्यगतो नराणां
भाग्योदयं धर्मविवर्धनं च ।
स्त्रीणां विलासं खलु मित्रलाभं
सन्तानसौख्यं प्रकरोति नूनम् ॥ ३१७ ॥

मासपति नवमभाव में स्थित हो, तो भाग्योदय, धर्म की वृद्धि, स्त्रीविलास, मित्रलाभ तथा सन्तान का सुख प्राप्त होता है ॥ ३१७ ॥

कर्मभावगतमासेशफलम्

कर्मस्थितो मासपतिर्नराणां
यदा तदा स्याद्धिततं च लाभम्।
कान्तासुखं सङ्गसुखं विलासं
युक्तेक्षितः सौम्यखगैः प्रमोदम् ॥ ३१८ ॥

मासपति दशमभाव में स्थित हो, तो पुत्रसुख, प्रताप की वृद्धि, स्त्री का विलास, धन-धान्य का लाभ तथा सर्वार्थसिद्धि होती है ॥ ३१८ ॥

लाभभावगतमासेशफलम्

लाभे भवेन्मासपतिर्नराणां
यदा तदा स्यात्सुतसौख्यकीर्त्तिम्।
स्त्रीणां विलासं धनधान्यलाभं
युक्तेक्षितः सौम्यखगैः प्रमोदम् ॥ ३१९ ॥

मासपति लाभस्थान में स्थित हो, तो बहुत लाभ, स्त्री का सुख, पुत्रसुख, कीर्त्ति तथा धन-धान्य का लाभ होता है ॥ ३१९ ॥

व्ययभावगतमासेशफलम्

व्ययस्थितो मासपतिः करोति
धनव्ययं धान्यविनाशनं च।
शिरोऽङ्गपीडां सुतसौख्यनाशं
जायादिकष्टं रिपुविग्रहं च ॥ ३२० ॥

मासपति बारहवें स्थान में स्थित हो, तो धन का ख़र्च, धान्य का नाश, मस्तक और शरीर में पीड़ा, पुत्रसुख की हानि, स्त्री आदि को कष्ट तथा शत्रुविरोध होता है ॥ ३२० ॥

मासे भावगतमुन्थाफलम्

लग्नगतमुन्थाफलम्

शरीरेऽतिसौख्यं सुतेभ्यः प्रमोदं
सुखं कामिनीकेलिजं मित्रलाभम् ।
नरेशाद्धनाप्ति यशो वृद्धिदा च
नृणां लग्नगा मासवेशे विधत्ते ॥ ३२१ ॥

मास में मुन्था लग्न में स्थित हो, तो शारीरिक सुख, पुत्रहर्ष, स्त्री का विलास, सुख, मित्र का लाभ, राजा से धन तथा कीर्त्ति का लाभ होता है ॥ ३२१ ॥

द्वितीयभावगतमुन्थाफलम्

मतिं निर्मलां नित्यमिष्टान्नभोगं
विनाशं रिपूणां नृपाद्वित्तलाभम् ।
सुहृद्भिः सुखं मुन्थहा वित्तगा चे-
न्नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३२२ ॥

मास में मुन्था द्वितीयभाव में स्थित हो, तो श्रेष्ठ बुद्धि, नित्य मिष्टान्नभोजन, शत्रुनाश, राजा से लाभ तथा मित्रों से सुख की प्राप्ति होती है ॥ ३२२ ॥

तृतीयभावगतमुन्थाफलम्

अनेको विलासः स्ववर्गातिसौख्यं
सुखं बन्धुतः पौरुषस्यापि वृद्धिम् ।
धरेशाद्धनं विक्रमे मुन्थहा चे-
न्नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३२३ ॥

मुन्था तृतीयभाव में स्थित हो, तो नाना प्रकार के विलास, सम्बन्धियों से सुख की प्राप्ति, पुरुषार्थ की वृद्धि तथा राजा से लाभ होता है ॥ ३२३ ॥

चतुर्थभावगतमुन्थाफलम्

शरीरे कृशत्वं द्विषद्भिश्च भीतिं
धनाभावतां दुःखलब्धिं नितान्तम्।
कृषीणां भयं तुर्ययाते हि मुन्था
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३२४ ॥

मुन्था चतुर्थभाव में स्थित हो, तो शरीर में दुर्बलता, शत्रुभय, धनहानि, अत्यन्त दुःख तथा खेती में हानि होती है ॥ ३२४ ॥

पञ्चमभावगतमुन्थाफलम्

सुपर्वाद्विजार्चारतिं बुद्धिवृद्धिं
सुतेभ्योऽतिसौख्यं सदा कीर्तिलाभम्।
अनेकार्थलब्धिं सुमुन्था सुतस्था
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३२५ ॥

मुन्था पाँचवें स्थान में स्थित हो, तो शुभ पर्वों में ब्राह्मणों की पूजा में अनुराग, बुद्धि की वृद्धि, पुत्रसुख, कीर्त्तिलाभ तथा अनेक कार्यों की सिद्धि होती है ॥ ३२५ ॥

षष्ठभावगतमुन्थाफलम्

स्वकार्ये रिपुत्वं नरेशाच्च भीतिं
गतौजः शरीरं सुपुत्रार्त्तिवृद्धिम्।
धनार्त्तिं च चौरादरिस्थानगेन्था
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३२६ ॥

मुन्था छठे भाव में स्थित हो, तो अपने कार्य में शत्रुता, राजा से भय, बल की हानि, पुत्र को पीड़ा तथा चोर से धन की हानि होती है ॥ ३२६ ॥

सप्तमभावगतमुन्थाफलम्

अनेकाधिपीडां कलत्राङ्गकष्टं
विनाशं धनस्याथ लोके रिपुत्वम्।

स्वदेहे च पीडां मदस्थानगेन्था
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३२७ ॥

मुन्था सप्तम भाव में स्थित हो, तो मानसी चिन्ता, स्त्री को कष्ट, धन का नाश, लोगों से शत्रुता तथा गुप्त पीड़ा होती है ॥३२७॥

अष्टमभावगतमुन्थाफलम्

बलेभ्यो धनेभ्यो भयं रोगवृद्धि
रिपुत्वं स्वकार्ये धनाभावमुग्रम् ।
सदा भावचिन्ता वसुस्थानगेन्था
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३२८ ॥

मुन्था अष्टम भाव में स्थित हो, तो बल तथा धन का भय, रोगों की वृद्धि, बुद्धि से शत्रुता, धनहानि तथा चिन्ता होती है ॥ ३२८ ॥

नवमभावगतमुन्थाफलम्

प्रसिद्धं प्रचण्डं स्वपुत्रादिशक्ति
सुखप्राप्तिमात्मीयलोकान्नितान्तम् ।
महाभाग्यतामिन्थिहा भाग्ययाता
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३२९ ॥

मुन्था नवम भाव में स्थित हो, तो पुत्रादिकों की शक्ति की वृद्धि, आत्मीय जनों से सुख तथा विशिष्ट भाग्योदय होता है ॥ ३२९ ॥

दशमभावस्थितमुन्थाफलम्

महीशादभीष्टार्थलाभं नितान्तं
स्वकीयातिसौख्यं कलत्राच्च तोपम् ।
शरीरे सुरूपं च मुन्था नभःस्था
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३३० ॥

मुन्था दशम भाव में स्थित हो, तो राजा से विशेष लाभ, कुटुम्बियों से सुख, स्त्री का सुख तथा शरीर में सुन्दरता होती है ॥३३०॥

एकादशभावस्थितमुन्थाफलम्

नरेशाद्धनाप्ति च योषातितोषं
परं स्वर्णभूषाम्बरं वित्तलाभम् ।
सुरार्चारतिं मुन्थहा लाभयाता
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३३१ ॥

मुन्था ग्यारहवें भाव में स्थित हो, तो राजा से लाभ, स्त्री का सुख, सुवर्ण के आभूषणों तथा वस्त्रों का लाभ एवं देवताओं में भक्ति होती है ॥ ३३१ ॥

द्वादशभावस्थितमुन्थाफलम्

धरेशाद्भयं वैरितो भीतिमुग्रां
व्ययं चातिलोलं कृषीणां भयं च ।
व्ययस्थानगा मुन्थहा व्यग्रतां च
नराणां हि मासप्रवेशे विधत्ते ॥ ३३२ ॥

मुन्था द्वादश भाव में स्थित हो, तो राजा तथा चोरों से भय, खर्च की अधिकता, खेती में हानि तथा मानसी चिन्ता होती है ॥ ३३२ ॥

सूर्यादीनां मासभावफलानि

मासे लग्नगतसूर्यफलम्

बहुचिन्तातुरोद्वेगः शिरोऽक्षिवक्त्रपीडनम् ।
बहुरोगोऽङ्गनापीडा मासे लग्नगते रवौ ॥ ३३३ ॥

मासप्रवेश के समय लग्नगत सूर्य हो, तो अनेक प्रकार की चिन्ताएँ, आतुरता, आकुलता, शिर, नेत्र तथा मुखरोगों का होना, बहुरोगता तथा स्त्री को कष्ट मिलता है ॥ ३३३ ॥

मासे द्वितीयभावगतसूर्यफलम्

रिपुराजानलैश्चौरैर्विवादे वा धनव्ययम्।
कुटुम्बकलहं चैव द्वितीये दिवसाधिपे ॥ ३३४ ॥

मासप्रवेश के समय द्वितीयभावस्थित सूर्य हो, तो शत्रुओं, राजाओं, चोरों तथा अग्नि के द्वारा धनव्यय तथा कौटुम्बिक कलह को करता है ॥ ३३४ ॥

मासे तृतीयभावगतसूर्यफलम्

धर्मवृद्धिमनारोग्यं परमैश्वर्यसम्पदम्।
स्त्रीपुत्रमित्रके सौख्यं तृतीयस्थे दिवाकरे ॥ ३३५ ॥

मासप्रवेश के समय तृतीयभावस्थित सूर्य हो, तो धर्म की वृद्धि, नीरोगता, ऐश्वर्यशालिता, सम्पत्तियाँ, स्त्री, पुत्र तथा मित्रों के द्वारा सुख की प्राप्ति होती है ॥ ३३५ ॥

मासे चतुर्थभावगतसूर्यफलम्

दुष्टस्वजनविद्वेषं भयं भूपालसम्भवम्।
चतुष्पदमनुष्याणां क्षयं सूर्ये चतुर्थगे ॥ ३३६ ॥

मासप्रवेश के समय चतुर्थभावस्थित सूर्य हो, तो स्वजनों तथा दुष्टजनों से विरोध, भूपाल से पीड़ा, चौपायों तथा मनुष्यों का विनाश होता है ॥ ३३६ ॥

मासे पञ्चमभावगतसूर्यफलम्

पुत्ररुक्कामिनीकष्टं निर्धनं मतिमूढता।
मित्रवैरं वपुःपीडा मासे पञ्चमगे रवौ ॥ ३३७ ॥

मासप्रवेश के समय पञ्चमभावस्थित सूर्य हो, तो पुत्र-पीड़ा, स्त्री को कष्ट, निर्धनता, बुद्धिहीनता, मित्रों से वैर तथा शारीरिक पीड़ा प्राप्त होती है ॥ ३३७ ॥

मासे षष्ठभावगतसूर्यफलम्

धनागमस्तथैश्वर्यं राजमान्यं रिपुक्षयम्।
सौख्यं पुत्रकलत्रादौ षष्ठः प्रद्योतनो यदि ॥ ३३८ ॥

मासप्रवेश के समय षष्ठभावस्थित सूर्य हो, तो धनागम, ऐश्वर्य, राजमान्यता, शत्रुओं का नाश, पुत्रों तथा स्त्री से सुख की प्राप्ति होती है ॥ ३३८ ॥

मासे सप्तमभावगतसूर्यफलम्

वस्तिकुक्षिशिरोरोगं स्त्रीपीडा नगराटनम्।
धनहानिप्रदो द्यूने भास्करो नियतो नृणाम् ॥ ३३९ ॥

मासप्रवेश के समय सप्तमभावस्थित सूर्य हो, तो वस्ति, कुक्षि तथा शिर में पीड़ा, स्त्री को कष्ट, नगरों में भ्रमण तथा धनहानि-कारक होता है ॥ ३३९ ॥

मासेऽष्टमभावगतसूर्यफलम्

वस्तिरुग्धनहानिश्च देहे रोगसमुद्भवः।
पित्तरुङ्नृपतेर्भीतिर्मासे चाष्टमगे रवौ ॥ ३४० ॥

मासप्रवेश के समय अष्टमभावस्थित सूर्य हो, तो वस्तिस्थान में पीड़ा, धन का नाश, शारीरिक व्याधियाँ, पित्तजन्य रोग तथा राजा से भय प्राप्त होता है ॥ ३४० ॥

मासे नवमभावगतसूर्यफलम्

जायापुत्रविवादं च मतिर्धर्मक्रियादिषु।
चित्तोद्वेगाकुलं नित्यं नवमे तपनो यदि ॥ ३४१ ॥

मासप्रवेश के समय नवमभावस्थित सूर्य हो, तो स्त्री और पुत्र से कलह, धार्मिक कार्यों में संलग्नता तथा चित्त में सदा आकुलता रहती है ॥ ३४१ ॥

मासे दशमभावगतसूर्यफलम्

राजमुद्रादिकं सौख्यं शिवं भाग्यं सुखं धनम् ।
प्रख्यातकीर्त्तिविस्तारं करोति व्योमगो रविः ॥ ३४२ ॥

मासप्रवेश के समय दशमभावस्थितसूर्य हो, तो अशर्फियों द्वारा सुख की प्राप्ति, भाग्यवत्ता, प्रख्यातता तथा कल्याण करता है ॥ ३४२ ॥

मासे एकादशभावगतसूर्यफलम्

गोऽश्ववृषादिद्रव्याप्तिः प्रमादोऽभीष्टवर्गतः ।
नृपप्रसादमारोग्यं मासे लाभगते रवौ ॥ ३४३ ॥

मासप्रवेश के समय एकादशभावस्थित सूर्य हो, तो गऊ, अश्व, बैल तथा द्रव्य की प्राप्ति, इष्ट-मित्रों से अनबन, राजा की प्रसन्नता तथा नीरोगता होती है ॥ ३४३ ॥

मासे द्वादशभावगतसूर्यफलम्

दृष्टिरुक् राजपीडा च विद्वेषं बन्धुवर्गतः ।
देहे पित्तभवा पीडा सदा सूर्ये व्ययस्थिते ॥ ३४४ ॥

मासप्रवेश के समय द्वादशभावस्थित सूर्य हो, तो नेत्रों में पीड़ा, राजभय, बन्धुवर्ग से विरोध तथा शरीर में पित्तजन्य पीड़ा होती है ॥ ३४४ ॥

द्वादशभावगतचन्द्रफलानि

मासे लग्नगतचन्द्रफलम्

मासकाले विलग्नेन्दौ कासश्वासादिपीडनम् ।
वदनाक्षिविकारं च पूर्णे चन्द्रे धनागमम् ॥ ३४५ ॥

मासप्रवेश के समय लग्नगत चन्द्र हो, तो खाँसी, दमा, मुख तथा नेत्रों में पीड़ा तथा चन्द्रमा पूर्ण हो, तो धन का आगम होता है ॥ ३४५ ॥

मासे द्वितीयभावगतचन्द्रफलम्

इष्टस्वजनतः सौख्यं धनाप्तिः श्वेतवस्तुतः।
द्वितीयस्थो यदा पूर्णचन्द्रो मासविलग्नतः॥ ३४६॥

मासप्रवेश के समय द्वितीयभावस्थित पूर्ण चन्द्र हो, तो प्रिय स्वजनों से सुख की प्राप्ति तथा सफ़ेद चीज़ों द्वारा धन की प्राप्ति होती है॥ ३४६॥

मासे तृतीयभावगतचन्द्रफलम्

पराक्रमात्सुखप्राप्तिर्बन्धुस्वजनतः सुखम्।
शरीरे चैवमारोग्यं तृतीये पूर्णचन्द्रमाः॥ ३४७॥

मासप्रवेश के समय तृतीयभावस्थित पूर्ण चन्द्र हो, तो पराक्रम तथा बन्धुओं एवं स्वजनों द्वारा सुख की प्राप्ति तथा शारीरिक नीरोगता होती है॥ ३४७॥

मासे चतुर्थभावगतचन्द्रफलम्

सुहृद्बन्धुकलत्रादि स्वल्पं चैव धनागमम्।
गोमहिष्यादिलाभं च चतुर्थे यदि चन्द्रमाः॥ ३४८॥

मासप्रवेश के समय चतुर्थभावस्थित पूर्ण चन्द्रमा हो, तो मित्रों, बन्धुओं, स्त्री तथा धन द्वारा स्वल्प सुख की प्राप्ति तथा गऊ, भैंस आदि का लाभ होता है॥ ३४८॥

मासे पञ्चमभावगतचन्द्रफलम्

सुतसौख्यं महोत्साहं शरीरे स्यात्सुखं तथा।
करोति पञ्चमे चन्द्रो यदि सौम्यखगेक्षितः॥ ३४९॥

मासप्रवेश के समय पञ्चमभावस्थित चन्द्र हो, तो पुत्रसुख, घर में उत्साह तथा शारीरिक सुख प्राप्त होता है॥ ३४९॥

मासे षष्ठभावगतचन्द्रफलम्

वातश्लेष्मोद्भवा पीडा विद्वेषो बान्धवैः सह।
नृपचौरोद्भवा पीडा मासे षष्ठे स्थितः शशी॥ ३५०॥

मासप्रवेश के समय षष्ठभावस्थित चन्द्र हो, तो वात तथा कफ-जन्य पीड़ा, बन्धुओं से विरोध तथा राजा और चोर द्वारा कष्ट की प्राप्ति होती है ॥ ३५० ॥

मासे सप्तमभावगतचन्द्रफलम्

स्त्रीसुखं नृपतेर्मानं लाभो ग्रामान्तरे भवेत् ।
वाणिज्यजनमार्गाच्च सप्तमे यदि चन्द्रमाः ॥ ३५१ ॥

मासप्रवेश के समय सप्तमभावस्थित चन्द्र हो, तो स्त्री से सुख, राजा से मान, अन्य ग्राम में तथा व्यापारियों द्वारा धनलाभ होता है ॥ ३५१ ॥

मासेऽष्टमभावगतचन्द्रफलम्

अष्टमे स्वल्पसन्तापो द्रव्यनाशसमुद्भवः ।
श्लेष्मादिविविधा पीडा मासकाले निशापतौ ॥ ३५२ ॥

मासप्रवेश के समय अष्टमभावस्थित चन्द्र हो, तो स्वल्प सन्ताप, द्रव्यहानि तथा कफजन्य अनेक बाधाएँ उपस्थित होती हैं ॥ ३५२ ॥

मासे नवमभावगतचन्द्रफलम्

नवमे धर्मवृद्धिश्च नृपमान्यं यशोदयम् ।
प्राप्यते विपुलान्भोगान्मासकाले यदा शशी ॥ ३५३ ॥

मासप्रवेश के समय नवमभावस्थित चन्द्र हो, तो धर्म की वृद्धि, राजा द्वारा सन्मान की प्राप्ति, कीर्ति तथा अनेक प्रकार के सुखोपभोग होते हैं ॥ ३५३ ॥

मासे दशमभावगतचन्द्रफलम्

लाभं सौख्यं प्रमोदं च राजपूजारिपुक्षयम् ।
जायापुत्रादिजं सौख्यं मासे च दशमे शशी ॥ ३५४ ॥

मासप्रवेश के समय दशमभावस्थित चन्द्र हो, तो धन आदि

का लाभ, सुख, निर्द्वन्द्वता, राजाओं से सन्मान की प्राप्ति, शत्रुओं का विनाश, स्त्री तथा पुत्रों द्वारा सुखलाभ होता है ॥ ३५४ ॥

मासे एकादशभावगतचन्द्रफलम्

श्वेतवस्त्रतुरङ्गादिलाभं भूपालसम्भवम् ।
श्वेतक्रय्याऽथ्कालाभो मासे लाभस्थितः शशी ॥ ३५५ ॥

मासप्रवेश के समय एकादशभावस्थित चन्द्र हो, तो राजा द्वारा सफ़ेद वस्त्रों तथा अश्व का लाभ एवं सफ़ेद वस्तुओं को ख़रीद कर बेचने से लाभ होता है ॥ ३५५ ॥

मासे द्वादशभावगतचन्द्रफलम्

द्रव्यव्ययो रिपूत्पत्तिर्नैअरुक् कलहो गृहे ।
दत्ते चित्तोद्भवां चिन्तां व्ययगो मासचन्द्रमाः ॥३५६॥

मासप्रवेश के समय द्वादशभावस्थित चन्द्र हो, तो धन का व्यय, शत्रुओं की वृद्धि, घर में कलह तथा मानसिक चिन्ता रहती है ॥३५६॥

द्वादशभावगतभौमफलानि

मासे लग्नगतभौमफलम्

मूर्ध्नि वक्त्राक्षिरोगं च कलहं च धनक्षयम् ।
रक्तपित्तप्रकोपं च मासे भौमो विलग्नगः ॥ ३५७ ॥

मासप्रवेश के समय लग्नस्थित भौम हो, तो शिर, मुख तथा नेत्रों में पीड़ा, परस्पर लड़ाई-झगड़ा, धन का विनाश तथा रक्त-पित्त रोग होता है ॥ ३५७ ॥

मासे द्वितीयभावगतभौमफलम्

वह्निचौरनृपादिभ्यो भयं च विभवव्ययम् ।
शोकं क्रूरा मतिः कष्टं धनस्थे भूमिनन्दने ॥ ३५८ ॥

मासप्रवेश के समय द्वितीयभावस्थित भौम हो, तो अग्नि, चोर, राजा आदि से भय, धन आदि का नाश, शोक, क्रूर बुद्धि तथा कष्ट होता है ॥ ३५८ ॥

मासे तृतीयभावगतभौमफलम्

नृपमान्यं धनप्राप्तिमित्रलाभं रिपुक्षयम् ।
गृहे महोत्सवो नित्यं तृतीये भूमिनन्दने ॥ ३५९ ॥

मासप्रवेश के समय तृतीयभावस्थित भौम हो, तो राजा से सम्मान की प्राप्ति, धनलाभ, मित्रों की प्राप्ति, शत्रुओं का नाश तथा घर में उत्सवों की अधिकता होती है ॥ ३५९ ॥

मासे चतुर्थभावगतभौमफलम्

देशाटनं च कष्टं च भयं भूपालसम्भवम् ।
कुटुम्बकलहं चैव यदि तुर्ये महीसुतः ॥ ३६० ॥

मासप्रवेश के समय चतुर्थभावस्थित भौम हो, तो अनेक देशों में परिभ्रमण, राजा से कष्ट तथा भय एवं कौटुम्बिक कलह होता है ॥ ३६० ॥

मासे पञ्चमभावगतभौमफलम्

पुत्ररुक्कामिनीकष्टं निर्धनत्वं च मूढता ।
मित्रभीतिर्वपुःकष्टं मासे पुत्रे च भूमिजे ॥ ३६१ ॥

मासप्रवेश के समय पञ्चमभावस्थित भौम हो, तो पुत्रों तथा स्त्री को कष्ट, निर्धनता, मूर्खता, मित्रों से भय तथा शारीरिक कष्ट होता है ॥ ३६१ ॥

मासे षष्ठभावगतभौमफलम्

इष्टस्वजनतः सौख्यं धनलाभं रिपुक्षयम् ।
प्रमोदं नृपतेर्मान्यं षष्ठस्थानगते कुजे ॥ ३६२ ॥

मासप्रवेश के समय षष्ठभावस्थित भौम हो, तो प्रिय स्वजनों से सुखप्राप्ति, धनलाभ, शत्रुविनाश, आनन्द तथा राजा से सन्मान की प्राप्ति होती है ॥ ३६२ ॥

मासे सप्तमभावगतभौमफलम्

जायाकष्टं तथा हानिः पीडा त्वात्मकलेवरे।
देशभ्रंशभयं पुंसां कुर्याद्भौमस्तु सप्तमे ॥ ३६३ ॥

मासप्रवेश के समय सप्तमभावस्थित भौम हो, तो स्त्री को कष्ट, धन आदि की हानि, शारीरिक पीड़ा तथा देश निकाला का भय होता है ॥ ३६३ ॥

मासेऽष्टमभावगतभौमफलम्

रक्तपित्तप्रकोपं च गुह्यपीडा धनव्ययम्।
विपत्तिमिष्टवर्गाच्च अष्टमस्थे धरासुते ॥ ३६४ ॥

मासप्रवेश के समय अष्टमभावस्थित भौम हो, तो रक्तपित्त रोग, गुह्य में पीड़ा, धननाश तथा इष्ट-मित्रों से विपत्ति की आशंका रहती है ॥ ३६४ ॥

मासे नवमभावगतभौमफलम्

पापबुद्धिर्भवेत्पुंसामुग्रं च विभवव्ययम्।
कलहं बन्धुवर्गाच्च नवमस्थे धरात्मजे ॥ ३६५ ॥

मासप्रवेश के समय नवमभावस्थित भौम हो, तो पाप में बुद्धि, क्रूरता, सम्पत्ति का विनाश तथा बन्धुओं से विरोध हो जाता है ॥ ३६५ ॥

मासे दशमभावगतभौमफलम्

व्यापारे धनलाभश्च प्रसादं भूमिपालतः।
तेजोवृद्धिस्तथा राज्यं यदि भूमिसुतोऽम्बरे ॥ ३६६ ॥

मासप्रवेश के समय दशमभावस्थित भौम हो, तो व्यापार द्वारा धनलाभ, राजा की प्रसन्नता, प्रताप की वृद्धि तथा भूमि का लाभ होता है ॥ ३६६ ॥

मासे एकादशभावगतभौमफलम्

जायासुखं पुत्रसुहृत्सुखं च
तेजः प्रतापं विभवागमं च ।
शत्रुक्षयं भूमिपतेः प्रसादं
लाभालये भूमिसुते नराणाम् ॥ ३६७ ॥

मासप्रवेश के समय एकादशभावस्थित भौम हो, तो स्त्री, पुत्रों तथा मित्रों से सुख, तेज, प्रताप तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति, शत्रुओं का विनाश तथा राजा की कृपा होती है ॥ ३६७ ॥

मासे द्वादशभावगतभौमफलम्

नेत्ररुक् च वपुःकष्टं धननाशं नृपाद्भयम् ।
सुतजायादितोद्वेगं मासे द्वादशगे कुजे ॥ ३६८ ॥

मासप्रवेश के समय द्वादशभावस्थित भौम हो, तो नेत्रों में पीड़ा, शारीरिक कष्ट, धननाश, राजा से भय, पुत्र तथा स्त्री आदि से मानसिक खेद की प्राप्ति होती है ॥ ३६८ ॥

द्वादशभावगतबुधफलानि

मासे लग्नगतबुधफलम्

देहे सौख्यं धियो वृद्धिर्नृपमान्यं यशोदयम् ।
तेजोबलधिवृद्धिं च मासे सौम्ये विलग्नगे ॥ ३६९ ॥

मासप्रवेश के समय लग्न में स्थित बुध हो, तो शारीरिक सुख, बुद्धि की वृद्धि, राजा से सन्मान की प्राप्ति, कीर्ति की वृद्धि, तेज तथा बल की विशेष वृद्धि होती है ॥ ३६९ ॥

मासे द्वितीयभावगतबुधफलम्

शरीरे निरुजं नित्यं द्रव्यलाभं नृणां भवेत् ।
इष्टस्वजनजं सौख्यं रोहिणीजे कुटुम्बगे ॥ ३७० ॥

मासप्रवेश के समय द्वितीयभावस्थित बुध हो, तो शरीर को

नीरोगता, धन का लाभ तथा प्रिय स्वजनों द्वारा सुख की प्राप्ति होती है ॥ ३७० ॥

मासे तृतीयभावगतबुधफलम्

लाभालाभं सुखं दुःखं शत्रुमित्रसमागमम् ।
मासकाले यदा चन्द्रे तृतीये कुरुते नृणाम् ॥ ३७१ ॥

मासप्रवेश के समय तृतीयभावस्थित बुध हो, तो लाभ-हानि, सुख-दुःख, शत्रुओं तथा मित्रों से लाभ होता है ॥ ३७१ ॥

मासे चतुर्थभावगतबुधफलम्

मित्रबन्धुस्त्रियाः सौख्यं स्वजनस्य समागमम् ।
राजमान्यं तथैश्वर्यं हिबुके चन्द्रजे नृणाम् ॥ ३७२ ॥

मासप्रवेश के समय चतुर्थभावस्थित बुध हो, तो मित्रों, बन्धुओं तथा स्त्री को सुख, आत्मीयों का शुभागमन, राजा से सम्मान की प्राप्ति तथा ऐश्वर्यलाभ होता है ॥ ३७२ ॥

मासे पञ्चमभावगतबुधफलम्

जायामित्रादिजं सौख्यं मानं भूपालसम्भवम् ।
प्राप्यते विविधैश्वर्यं पञ्चमे शशिनन्दने ॥ ३७३ ॥

मासप्रवेश के समय पञ्चमभावस्थित बुध हो, तो स्त्री, मित्र आदि से सुख, राजा से सम्मान तथा अनेक प्रकार के ऐश्वर्यों की प्राप्ति होती है ॥ ३७३ ॥

मासे षष्ठभावगतबुधफलम्

शत्रुवृद्धिं च हानिं च जायापुत्रादिजं भयम् ।
देहे वातोद्भवा पीडा कुर्यात्सौम्यस्तु शत्रुगे ॥ ३७४ ॥

मासप्रवेश के समय षष्ठभावस्थित बुध हो, तो शत्रुओं की वृद्धि, धन आदि की हानि, स्त्री, पुत्र आदि से भय तथा शरीर में वायुजन्य पीड़ा होती है ॥ ३७४ ॥

मासे सप्तमभावगतबुधफलम्

मार्गाल्लाभं तथा सौख्यं वाणिज्याच्च धनागमम् ।
चन्द्रजः कुरुते नित्यं मासे सप्तमगे यदि ॥ ३७५ ॥

मासप्रवेश के समय सप्तमभावस्थित बुध हो, तो मार्ग में धन आदि का लाभ, सुख तथा व्यापार से धन की प्राप्ति होती है ॥३७५॥

मासेऽष्टमभावगतबुधफलम्

लाभं सौख्यं धनप्राप्तिं राजपूजां रिपुक्षयम् ।
विदधात्यष्टमे नित्यं मासे चन्द्रात्मजो यदि ॥ ३७६ ॥

मासप्रवेश के समय अष्टमभावस्थित बुध हो, तो धन आदि का लाभ, सुख तथा धन की प्राप्ति, राजा से सन्मान का लाभ तथा शत्रुओं का विनाश होता है ॥ ३७६ ॥

मासे नवमभावगतबुधफलम्

धर्मबुद्धिं तथारोग्यं जायापुत्रादिजं सुखम् ।
चन्द्रजः कुरुते नित्यं मासे तु नवमे यदि ॥ ३७७ ॥

मासप्रवेश के समय नवमभावस्थित बुध हो, तो धार्मिक बुद्धि नीरोगता तथा स्त्री, पुत्र आदि के द्वारा सुख की प्राप्ति होती है ॥ ३७७ ॥

मासे दशमभावगतबुधफलम्

वाणिज्याद्राज्यसम्मानं धनलाभं रिपुक्षयम् ।
बन्धुवृद्धिं सदा मासे सौम्यस्तु दशमे नृणाम् ॥ ३७८ ॥

मासप्रवेश के समय दशमभावस्थित बुध हो, तो व्यापार से लाभ, राजसम्मान, धनप्राप्ति, शत्रुओं का विनाश तथा कौटुम्बिक वृद्धि होती है ॥ ३७८ ॥

मासे एकादशभावगतबुधफलम्

द्रव्यं लाभं तथारोग्यं पुत्रमित्रादिजं सुखम् ।
शुक्लवस्तुक्रयाल्लाभो लाभस्थाने यदा बुधः ॥ ३७९ ॥

मासप्रवेश के समय एकादशभावस्थित बुध हो, तो द्रव्य की प्राप्ति, नीरोगता, पुत्रों तथा मित्रादिकों से सुख की प्राप्ति तथा सफ़ेद वस्तुओं के ख़रीदने-बेचने से लाभ होता है ॥ ३७९ ॥

मासे द्वादशभावगतबुधफलम्

स्वल्पलाभं व्ययं नित्यं बहुलं च नृपाद्भयम् ।
स्ववर्गकलहो नित्यं मासे सौम्ये व्ययस्थिते ॥ ३८० ॥

मासप्रवेश के समय द्वादशभावस्थित बुध हो, तो धनप्राप्ति की अल्पता तथा व्यय की अधिकता, राजा से भय तथा कौटुम्बिक कलह होता है ॥ ३८० ॥

द्वादशभावगतगुरुफलानि

मासे लग्नगतगुरुफलम्

सौख्यं पुत्रकलत्राच्च स्वदेहे वातजं भयम् ।
लाभं भूपालसम्मानं देवेज्यो मासलग्नगः ॥ ३८१ ॥

मासप्रवेश के समय लग्न में स्थित गुरु हो, तो पुत्रों तथा स्त्री से सुखप्राप्ति, शरीर में वातजन्य पीड़ा, द्रव्य आदि का लाभ तथा राजा से सम्मान की प्राप्ति होती है ॥ ३८१ ॥

मासे द्वितीयभावगतगुरुफलम्

धनलाभं तथारोग्यं प्रमोदं बन्धुवर्गतः ।
राजवर्गाच्च सम्मानं मासे धनगते गुरौ ॥ ३८२ ॥

मासप्रवेश के समय द्वितीयभावस्थित गुरु हो, तो धन की प्राप्ति, नीरोगता, बन्धुवर्ग से आनन्द की प्राप्ति तथा राजाओं से सम्मान की प्राप्ति होती है ॥ ३८२ ॥

मासे तृतीयभावगतगुरुफलम्

तृतीयेऽल्पसुखं लाभं सुहृद्बन्धुधनागमम् ।
मासे नृणां स्त्रियाः सौख्यं राजसम्मान एव च ॥३८३॥

मासप्रवेश के समय तृतीयभावस्थित गुरु हो, तो सुख की

अल्पता, अनेक पदार्थों की प्राप्ति, मित्रों तथा बन्धुओं से धन-लाभ, स्त्रीसुख तथा राजसम्मान प्राप्त होता है ॥ ३८३ ॥

मासे चतुर्थभावगतगुरुफलम्

जायापत्यसुहृत्सौख्यं नृपमान्यं धनागमम् ।
भूमिवाहनविद्याभिश्चतुर्थे मासगे गुरौ ॥ ३८४ ॥

मासप्रवेश के समय चतुर्थभावस्थित गुरु हो, तो स्त्री, सन्तान तथा मित्रों से सुख की प्राप्ति, राजाओं से सन्मानोपलब्धि, भूमि, सवारी तथा विद्याओं द्वारा धन की प्राप्ति होती है ॥ ३८४ ॥

मासे पञ्चमभावगतगुरुफलम्

सद्बुद्धिर्मित्रसंप्राप्तिः सौख्यं लाभो भवेन्नृणाम् ।
इष्टमित्रकृतं सौख्यं पञ्चमस्थे सुरार्चिते ॥ ३८५ ॥

मासप्रवेश के समय पञ्चमभावस्थित गुरु हो, तो बुद्धि की समीचीनता, मित्रों की प्राप्ति, सुखलाभ तथा आत्मीय मित्र आदिकों से सुख, धन आदि की प्राप्ति होती है ॥ ३८५ ॥

मासे षष्ठभावगतगुरुफलम्

रिपुवृद्धिस्तथोद्वेगो धननाशो बलक्षयः ।
इष्टस्वजनविद्वेषः षष्ठे देवपुरोहिते ॥ ३८६ ॥

मासप्रवेश के समय षष्ठभावस्थित गुरु हो, तो शत्रुओं की वृद्धि, मानसिक चिन्ता, धन तथा बल का नाश एवं प्रिय स्वजनों मे विरोध होता है ॥ ३८६ ॥

मासे सप्तमभावगतगुरुफलम्

वाणिज्यं व्यवहाराच्च मार्गाच्चैव धनागमम् ।
स्त्रीसुखं राजसम्मानं सप्तमे सुरमन्त्रिणि ॥ ३८७ ॥

मासप्रवेश के समय सप्तमभावस्थित गुरु हो, तो व्यापार से लाभ, व्यवहार तथा मार्ग आदि में धन की प्राप्ति, स्त्रीसुख तथा राजसम्मान का लाभ होता है ॥ ३८७ ॥

मासेऽष्टमभावगतगुरुफलम्

धनव्ययमनारोग्यं कलहं मित्रवर्गतः।
वियोगं च प्रवासं च ह्यष्टमस्थे सुरार्चिते ॥ ३८८ ॥

मासप्रवेश के समय अष्टमभावस्थित गुरु हो, तो धननाश, नीरोगता, मित्र आदिकों से विरोध, वियोग तथा विदेशगमन होता है ॥ ३८८ ॥

मासे नवमभावगतगुरुफलम्

धनलाभो नृपात्सौख्यं धर्मकार्यं भवेत्सदा।
प्राप्नोति विविधान्भोगान्देवेज्ये नवमस्थिते ॥ ३८६ ॥

मासप्रवेश के समय नवमभावस्थित गुरु हो, तो धनलाभ, राजा से सुख की प्राप्ति, धार्मिक कार्य तथा अनेक प्रकार के भोग प्राप्त होते हैं ॥ ३८६ ॥

मासे दशमभावगतगुरुफलम्

सत्कीर्तिर्भूभृतां मानं धनलाभं सुहृत्सुखम्।
गेहे महोत्सवो नित्यं देवेज्यो दशमे यदि ॥ ३६० ॥

मासप्रवेश के समय दशमभावस्थित गुरु हो, तो कीर्ति का विकास, राजाओं से सम्मान की प्राप्ति, धन का लाभ, मित्रों द्वारा सुख की उपलब्धि तथा घर में नित नए उत्सव हुआ करते हैं ॥ ३६० ॥

मासे एकादशभावगतगुरुफलम्

आयुरारोग्यमैश्वर्यं जायापत्यसुहृत्सुखम्।
नृणां चतुष्पदप्राप्तिं देवेज्यो लाभगो यदि ॥ ३६१ ॥

मासप्रवेश के समय एकादशभावस्थित गुरु हो, तो आयु, नीरोगता, ऐश्वर्य, स्त्री, सन्तान तथा मित्रों द्वारा सुख की प्राप्ति एवं चतुष्पदों (चौपायों) की प्राप्ति होती है ॥ ३६१ ॥

मासे द्वादशभावगतगुरुफलम्

स्वजनैर्विग्रहो दुःखं क्षयोत्पत्तिर्धनव्ययः।
प्रवासो नृपतेर्भीतिर्देवेज्ये व्ययसंस्थिते ॥ ३९२ ॥

मासप्रवेश के समय द्वादशभावस्थित गुरु हो, तो आत्मीय जनों से विरोध, दुःख, क्षयरोग की उत्पत्ति, धननाश, विदेश में निवास तथा राजा से भय होता है ॥ ३९२ ॥

द्वादशभावगतशुक्रफलानि

मासे लग्नगतशुक्रफलम्

सौख्यं लाभं प्रमोदं च कुलवृद्धिर्भवेन्नृणाम्।
मानं भूमिपतेर्मासे दैत्येज्यो लग्नगो यदि ॥ ३९३ ॥

मासप्रवेश के समय लग्न में शुक्र स्थित हो, तो सुख तथा धन का लाभ, चित्त की प्रसन्नता, कुल की वृद्धि तथा राजा से सम्मान की प्राप्ति होती है ॥ ३९३ ॥

मासे द्वितीयभावगतशुक्रफलम्

धनलाभं सुहृद्वृद्धिः स्त्रीसुखं शत्रुसंक्षयम्।
कान्तिवृद्धिर्नृणां मासे दैत्येज्या धनगो यदि ॥ ३९४ ॥

मासप्रवेश के समय द्वितीयभावस्थित शुक्र हो, तो धनलाभ, मित्रों की वृद्धि, स्त्री से सुख, शत्रुओं का विनाश तथा कान्ति की वृद्धि होती है ॥ ३९४ ॥

मासे तृतीयभावगतशुक्रफलम्

तृतीयेऽल्पसुखं पुंसां धनव्यय उपद्रवः।
विवादं स्वजनैः सार्धं मासे दैत्यपुरोहिते ॥ ३९५ ॥

मासप्रवेश के समय तृतीयभावस्थित शुक्र हो, तो सुख की अल्पता, धननाश, उपद्रव तथा स्वजनों के साथ उपद्रव होते रहते हैं ॥ ३९५ ॥

मासे चतुर्थभावगतशुक्रफलम्

नृपमान्यं तथैश्वर्यमारोग्यं विभवागमम्।
मित्रस्वजनजं सौख्यं मासे तु हिबुके भृगौ॥ ३९६॥

मासप्रवेश के समय चतुर्थभावस्थित शुक्र हो, तो राजा से सम्मान की प्राप्ति, ऐश्वर्य, नीरोगता, ऐश्वर्यलाभ तथा मित्रों और आत्मीय जनों से सुखलाभ होता है॥ ३९६॥

मासे पञ्चमभावगतशुक्रफलम्

जायापुत्रादिकं सौख्यं सद्बुद्धिर्विभवागमम्।
तन्त्रोपदेशे कौशल्यं पञ्चमे भृगुनन्दने॥ ३९७॥

मासप्रवेश के समय पञ्चमभावस्थित शुक्र हो, तो स्त्री और पुत्रादिकों से सुखप्राप्ति, सद्बुद्धि समृद्धिलाभ तथा तन्त्रशास्त्र के उपदेश में चातुर्य होता है॥ ३९७॥

मासे षष्ठभावगतशुक्रफलम्

वातश्लेष्मभवा बाधा क्षयोत्पत्तिर्धनक्षयम्।
नृपाद्भयं गृहे कष्टं मासे षष्ठगते भृगौ॥ ३९८॥

मासप्रवेश के समय षष्ठभावस्थित शुक्र हो, तो वात एवं कफजन्य पीड़ा, क्षयरोग की उत्पत्ति, धननाश, राजा से भय तथा घर में कष्ट मिलता है॥ ३९८॥

मासे सप्तमभावगतशुक्रफलम्

दयितापुत्रजं सौख्यं वाणिज्याद्विभवागमम्।
मार्गाल्लाभं प्रमोदं च सप्तमे भृगुजे नृणाम्॥ ३९९॥

मासप्रवेश के समय सप्तमभावस्थित शुक्र हो, तो स्त्री तथा पुत्रों से सुख, व्यापार से धनलाभ, मार्ग में धनप्राप्ति एवं सर्वदा चित्त प्रसन्न रहता है॥ ३९९॥

मासेऽष्टमभावगतशुक्रफलम्

अल्पलाभमनारोग्यं जायापुत्रादिपीडनम् ।
धर्मनाशं प्रवासश्च भृगुपुत्रेऽष्टमस्थिते ॥ ४०० ॥

मासप्रवेश के समय अष्टमभावस्थित शुक्र हो, तो स्वल्प धन, नीरोगता, स्त्री तथा पुत्रादिकों से पीड़ा, धर्मनाश एवं विदेशवास होता है ॥ ४०० ॥

मासे नवमभावगतशुक्रफलम्

शरीरे चैव ह्यारोग्यं सद्बुद्धिर्विभवागमम् ।
पुत्रजायादिजं सौख्यं नवमे भृगुजे नृणाम् ॥ ४०१ ॥

मासप्रवेश के समय नवमभावस्थित शुक्र हो, तो शारीरिक नीरोगता, सद्बुद्धिता, सम्पत्तियों की प्राप्ति, पुत्र तथा स्त्री आदि से सुखलाभ होता है ॥ ४०१ ॥

मासे दशमभावगतशुक्रफलम्

नृपमानं सुहृत्सौख्यं धनलाभं रिपुक्षयम् ।
सर्वारम्भाः प्रसिद्ध्यन्ति दैत्येज्ये दशमे नृणाम् ॥४०२॥

मासप्रवेश के समय दशमभावस्थित शुक्र हो, तो राजा से सम्मान, मित्रों से सुख, धनलाभ, शत्रुओं का विनाश तथा आरम्भ किए हुए सभी कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ४०२ ॥

मासे एकादशभावगतशुक्रफलम्

जलमार्गाद्धनप्राप्तिस्तथा शुभक्रयाणकात् ।
प्रियागमस्तथा सौख्यं लाभगे भृगुनन्दने ॥ ४०३ ॥

मासप्रवेश के समय एकादशभावस्थित शुक्र हो, तो जलीय प्रदेश तथा क्रय-विक्रय द्वारा धनप्राप्ति, प्रेमपात्र का आगमन तथा सुखलाभ होता है ॥ ४०३ ॥

मासे द्वादशभावगतशुक्रफलम्

मित्रस्वजनविद्वेषः सन्मार्गे धिभवव्ययः ।
निःसंगत्वं प्रवासं च द्वादशे भृगुजे नृणाम् ॥ ४०४ ॥

मासप्रवेश के समय द्वादशभावस्थित शुक्र हो, तो मित्रों तथा आत्मीय जनों से विरोध, सुकर्म में धनव्यय, निःसंगता तथा विदेश में निवास होता है ॥ ४०४ ॥

द्वादशभावगतशनिफलानि

मासे लग्नगतशनिफलम्

कफमारुतकोपं च शिरोजठरपीडनम् ।
इष्टद्वेषं वक्त्रपीडां मासे लग्नगते शनौ ॥ ४०५ ॥

मासप्रवेश के समय लग्न में शनि स्थित हो, तो कफ और वायु का प्रकोप, शिर और पेट में पीड़ा, आत्मीय जनों से विरोध तथा मुख में पीड़ा होती है ॥ ४०५ ॥

मासे द्वितीयभावगतशनिफलम्

पीडा वक्त्रे तथा नेत्रे धननाशो नृपाद्भयम् ।
पुत्रजायादिकष्टं च राजमानं धनागमम् ॥ ४०६ ॥

मासप्रवेश के समय द्वितीयभावस्थित शनि हो, तो मुखपीड़ा, नेत्ररोग, धननाश, राजा से भय, पुत्र तथा स्त्री को कष्ट, राजा से सम्मान की प्राप्ति एवं धनलाभ होता है ॥ ४०६ ॥

मासे तृतीयभावगतशनिफलम्

सर्वदुःखादिमोक्षं च राजमानं धनागमम् ।
मासकाले यदा सौरिस्तृतीये कुरुते नृणाम् ॥ ४०७ ॥

मासप्रवेश के समय तृतीयभावस्थित शनि हो, तो समस्त दुःखों का विनाश, राजा से सम्मान तथा धनलाभ होता है ॥ ४०७ ॥

मासे चतुर्थभावगतशनिफलम्

मातृपक्षे भवेत्कष्टं प्रवासं च धनक्षयम् ।
असन्तोषो राजपीडा चतुर्थे रविनन्दने ॥ ४०८ ॥

मासप्रवेश के समय चतुर्थभावस्थित शनि हो, तो मातृपक्ष में पीड़ा, विदेशवास, धननाश, असन्तोष एवं राजा से पीड़ा प्राप्त होती है ॥ ४०८ ॥

मासे पञ्चमभावगतशनिफलम्

जायापुत्रसुहृत्कष्टं दुष्टबुद्धिर्धनक्षयम् ।
उदरे वातपीडा च पञ्चमे रविनन्दने ॥ ४०९ ॥

मासप्रवेश के समय पञ्चमभावस्थित शनि हो, तो स्त्री, पुत्र एवं मित्रों को कष्ट, दुष्टबुद्धिता, धननाश तथा पेट में वायुविकार होता है ॥ ४०९ ॥

मासे षष्ठभावगतशनिफलम्

देहे सौख्यं द्रव्यवृद्धिः प्रसादो भूमिपालतः ।
स्त्रीपुत्रजनितं सौख्यं मासे षष्ठगते शनौ ॥ ४१० ॥

मासप्रवेश के समय षष्ठभावस्थित शनि हो, तो दैहिक सुख, द्रव्य की वृद्धि, राजा की प्रसन्नता, स्त्री तथा पुत्रों से सुख की प्राप्ति होती है ॥ ४१० ॥

मासे सप्तमभावगतशनिफलम्

सततं गमने भीतिः सुहृत्कष्टं धनक्षयम् ।
प्रवासं शत्रुतो भीतिः सप्तमे रविनन्दने ॥ ४११ ॥

मासप्रवेश के समय सप्तमभावस्थित शनि हो, तो इधर-उधर जाने में भय, मित्रों को कष्ट, धननाश विदेशवास तथा शत्रुओं से भय रहता है ॥ ४११ ॥

मासेऽष्टमभावगतशनिफलम्

रोगपीडा महाव्याधिः पुत्रजायादिपीडनम्।
व्यसनं द्रव्यहानिश्च मासे तु चाष्टमे शनौ ॥ ४१२ ॥

मासप्रवेश के समय अष्टमभावस्थित शनि हो, तो रोगजन्य पीड़ा, अनेक प्रकार की व्याधियाँ, पुत्र, स्त्री आदि को पीड़ा, व्यसन तथा द्रव्य की हानि होती है ॥ ४१२ ॥

मासे नवमभावगतशनिफलम्

जायापुत्रसुहृत्कष्टं धननाशं नृपाद्भयम्।
दुर्मतिः पापबुद्धिश्च नवमे भास्करात्मजे ॥ ४१३ ॥

मासप्रवेश के समय नवमभावस्थित शनि हो, तो स्त्री, पुत्र तथा सुहृदों को कष्ट, धन का नाश, राजा से भय, दुष्टबुद्धिता तथा पापबुद्धिता होती है ॥ ४१३ ॥

मासे दशमभावगतशनिफलम्

व्यापाराद्धनहानिश्च भयं भूपालसम्भवम्।
सुखे दैन्यं प्रवासश्च दशमे रविनन्दने ॥ ४१४ ॥

मासप्रवेश के समय दशमभावस्थित शनि हो, तो व्यापार से धन की हानि, राजा से भय, सुख के समय में दीनता तथा विदेश में निवास करना पड़ता है ॥ ४१४ ॥

मासे एकादशभावगतशनिफलम्

द्रव्यागमस्तथैश्वर्यमारोग्यं योषितां सुखम्।
शूरत्वं नृपतेर्लाभो मासे लाभगते शनौ ॥ ४१५ ॥

मासप्रवेश के समय एकादशभावस्थित शनि हो, तो द्रव्य का आगम, ऐश्वर्य, नीरोगता, स्त्रियों को सुख, शूरता तथा राजा से लाभ प्राप्त होता है ॥ ४१५ ॥

मासे द्वादशभावगतशनिफलम्

पादाक्षिहृदये पीडा द्रव्यनाशं नृपाद्भयम् ।
कलहं बन्धुवर्गादौ कुर्यान्मन्दो व्ययस्थितः ॥ ४१६ ॥

मासप्रवेश के समय द्वादशभावस्थित शनि हो, तो पैर, नेत्र तथा हृदय में पीड़ा, द्रव्य का नाश, राजा से भय तथा पारस्परिक कलह होता है ॥ ४१६ ॥

द्वादशभावगतराहुफलानि

मासेलग्नगतराहुफलम्

देहे मरुत्कृता पीडा कलहं विभवक्षयम् ।
पुत्रमित्रादिकं कष्टं राहौ मासविलग्नके ॥ ४१७ ॥

मासप्रवेश के समय लग्न में राहु स्थित हो, तो शरीर में वात-रोग, पारस्परिक कलह, ऐश्वर्य का विनाश, पुत्रों तथा मित्रों को कष्ट होता है ॥ ४१७ ॥

मासे द्वितीयभावगतराहुफलम्

धनव्ययं तथा रोगं चिन्ता बस्त्यादिपीडनम् ।
वक्त्रलोचनपीडा च धनस्थे सिंहिकासुते ॥ ४१८ ॥

मासप्रवेश के समय द्वितीयभावस्थित राहु हो, तो धननाश, रोग, चिन्ता, बस्तिस्थान में पीड़ा, मुख तथा नेत्रों में पीड़ा होती है ॥ ४१८ ॥

मासे तृतीयभावगतराहुफलम्

राजमानं तथैश्वर्यमारोग्यं विभवागमम् ।
शत्रुक्षयं सुहृत्सौख्यं राहौ मासे तृतीयके ॥ ४१९ ॥

मासप्रवेश के समय तृतीयभावस्थित राहु हो, तो राजा से सम्मान की प्राप्ति, ऐश्वर्यलाभ, नीरोगता, धन-धान्य की वृद्धि, शत्रुओं का विनाश तथा मित्रों से सुखप्राप्ति होती है ॥ ४१९ ॥

मासे चतुर्थभावगतराहुफलम्

चिन्ता दुःखं प्रवासश्च प्रवादः स्वजनैः सह ।
चतुष्पदाः क्षयं यान्ति राहुस्तुर्यगतो यदि ॥ ४२० ॥

मासप्रवेश के समय चतुर्थभावस्थित राहु हो, तो अनेक प्रकार की चिन्ताएँ, दुःख, विदेश में निवास, पारस्परिक विरोध तथा चौपायों का विनाश होता है ॥ ४२० ॥

मासे पञ्चमभावगतराहुफलम्

पुत्रादिभ्यो महापीडा दुर्मतिर्बन्धुविग्रहः ।
नियतं जठरे पीडा सैंहिकेये तु पञ्चमे ॥ ४२१ ॥

मासप्रवेश के समय पञ्चमभावस्थित राहु हो, तो पुत्र, स्त्री आदि से पीड़ा, दुष्टबुद्धिता, बन्धुओं से विरोध तथा उदर में पीड़ा होती रहती है ॥ ४२१ ॥

मासे षष्ठभावगतराहुफलम्

नृपप्रसादमारोग्यं धनलाभो रिपुक्षयम् ।
कलत्रपुत्रजं सौख्यं मासे षष्ठे विधुन्तुदे ॥ ४२२ ॥

मासप्रवेश के समय षष्ठभावस्थित राहु हो, तो राजा की कृपा, नीरोगता, धनलाभ, शत्रुनाश, स्त्री तथा पुत्रों से सुखप्राप्ति होती है ॥ ४२२ ॥

मासे सप्तमभावगतराहुफलम्

प्रवासं पीडनं चाङ्गे स्त्रीकष्टं पवनोऽथ रुक् ।
कटिवस्तौ भवेत्पीडा सैंहिकेये च सप्तमे ॥ ४२३ ॥

मासप्रवेश के समय सप्तमभावस्थित राहु हो, तो विदेश में वास, शरीर के अंगों में पीड़ा, स्त्री को कष्ट, शरीर में वातपीड़ा, कमर तथा बस्तिस्थान में दर्द रहता है ॥ ४२३ ॥

मासेऽष्टमभावगतराहुफलम्

धनव्ययं तथा रोगं विवादो बन्धुभिः सह ।
स्त्रीकष्टश्च प्रवासश्च राहुरष्टमगो यदि ॥ ४२४ ॥

मासप्रवेश के समय अष्टमभावस्थित राहु हो, तो धननाश, रोग, कुटुम्बियों से विरोध, स्त्री को कष्ट तथा विदेश में वास होता है ॥ ४२४ ॥

मासे नवमभावगतराहुफलम्

विक्षेपश्च वपुःपीडा दैन्यं राजभयं भवेत् ।
धर्मकार्ये विलम्बश्च राहुर्धर्मगतो यदि ॥ ४२५ ॥

मासप्रवेश के समय नवमभावस्थित राहु हो, तो पारस्परिक कलह, शरीर में पीड़ा, दीनता, राजा से भय तथा धार्मिक कार्यों में विलम्ब होता है ॥ ४२५ ॥

मासे दशमभावगतराहुफलम्

भूमिनाशो भयं नित्यं देहपीडा धनक्षयः ।
इष्टस्वजनविद्वेषं राहौ दशमसंस्थिते ॥ ४२६ ॥

मासप्रवेश के समय दशमभावस्थित राहु हो, तो भूमि का नाश, सभी प्राणियों से भय, शरीरपीड़ा, धननाश तथा प्रिय आत्मीय जनों से विरोध हो जाता है ॥ ४२६ ॥

मासे एकादशभावगतराहुफलम्

शरीरारोग्यमैश्वर्यं स्त्रीसुखं विभवागमम् ।
सङ्कीर्णवर्णतो लाभो राहुर्लाभगतो यदि ॥ ४२७ ॥

मासप्रवेश के समय एकादशभावस्थित राहु हो, तो शरीर की नीरोगता, ऐश्वर्यलाभ, स्त्री को सुख, ऐश्वर्य की प्राप्ति तथा संकरवर्णवालों से धन आदि का लाभ होता है ॥ ४२७ ॥

मासे द्वादशभावगतराहुफलम्

धनव्ययं च कष्टं च राजपीडा रिपूदयः।
जायापीडा भवेन्नित्यं स्वर्भानुर्द्वादशे यदि ॥ ४२८ ॥

मासप्रवेश के समय द्वादशभावस्थित राहु हो, तो धननाश, अनेक प्रकार के कष्ट, राजा से पीड़ा, शत्रुओं की वृद्धि तथा स्त्री को कष्ट प्राप्त होता है ॥ ४२८ ॥

वर्षरञ्जनप्रकरणं समाप्तम्।

नवाँ अध्याय समाप्त।

ज्योतिषतत्त्वप्रकाश

भाषाटीकासहित

दशवाँ अध्याय

प्रश्नप्रकरणम्

प्रष्टुः कौटिल्यज्ञानम्

लग्नस्थे शशिनि शनौ केन्द्रस्थे ज्ञे दिनेशरश्मिगते ।
भौमज्ञयोः समदृशा लग्नचन्द्रेऽनृजुः प्रष्टा ॥ १ ॥

लग्न में चन्द्रमा हो, केन्द्र में शनि हो, बुध सूर्य के साथ में हो तथा लग्नस्थ चन्द्रमा पर मंगल एवं बुध की समदृष्टि हो, तो प्रश्नकर्त्ता को कुटिल समझ लेना चाहिए ॥ १ ॥

प्रष्टुः सरलत्वज्ञानम्

लग्ने शुभग्रहयुते सरलः क्रूरान्विते भवेत्कुटिलः ।
लग्नास्तयोः सौम्यदृशा विधुगुरुदृष्ट्या च सरलोऽयम् ॥२॥

लग्न में शुभग्रह हो, तो प्रश्नकर्त्ता को सरल, क्रूरग्रह हो, तो कुटिल, लग्न तथा सप्तमभाव में सौम्यग्रह की दृष्टि हो या चन्द्रमा तथा बृहस्पति की दृष्टि हो, तो प्रष्टा को सरल समझ लेना चाहिए ॥ २ ॥

अनेकप्रश्नविचारे विशेषः

आदिमं लग्नतो ज्ञानं चन्द्रस्थानाद्द्वितीयकम् ।
सूर्यस्थानात्तृतीयं स्यात्तुर्यं जीवग्रहाद्भवेत् ॥ ३ ॥

यदि प्रश्नकर्ता एक ही बार अनेक प्रश्न करे, तो प्रथम प्रश्न के उत्तर का लग्न से, द्वितीय प्रश्न का चन्द्रमा से, तृतीय प्रश्न का सूर्य से तथा चतुर्थ प्रश्न का बृहस्पति से विचार करे ॥ ३ ॥

पुत्रकन्याजन्मपत्रीज्ञानम्

रव्यङ्कतन्वङ्कतमोऽङ्कयुक्तं
कुजाङ्कयुक्तं त्रिविभाजितं च ।
शेषे समाङ्के भवतीह पुंस
ओजाङ्कशेषे यदि वा कुमार्याः ॥ ४ ॥

सूर्य, लग्न, राहु तथा मंगल की राशियों के अंकों को जोड़कर तीन से भाग दे। यदि शेष शून्य या सम अंक बचे, तो पुत्र की, विषम अंक बचे, तो कन्या की जन्मपत्री जान लेना चाहिए * ॥४॥

पुत्रकन्याजन्मपत्र्याः पुनर्विचारः

मूर्तांङ्कसूर्यराह्वङ्कान्सम्मील्य च त्रिभिर्भजेत् ।
विषमे हि रमायाः स्यात्समे पुंसश्च पत्रिका ॥ ५ ॥

लग्न, सूर्य तथा राहु के अंकों को जोड़कर तीन का भाग दे। विषम अंक शेष रहे, तो कन्या की, शून्य या सम अंक शेष रहे, तो पुत्र की जन्मपत्री जान लेना चाहिए ॥ ५ ॥

---

* कुछ लोग ज्योतिष-शास्त्र के सत्यासत्य के परीक्षार्थ एक जन्मपत्री लाकर रख देते हैं और कहते हैं कि भविष्यद्वक्ता श्रीज्योतिषीजी महाराज, आप पहले यही बतलावें कि यह जन्मपत्री पुत्र की है या कन्या की? अतः प्राचीन आचार्यों ने इसका भी विचार किया है।

जीवितजन्मपत्रीज्ञानम् *

जन्माङ्कलग्नाष्टमस्थप्रश्नलग्नं
युतिश्च निघ्नाष्टमभावपेन।
लग्नेशसंस्थर्क्षविभक्तशेषे
स्वोजे भवेज्जीवितजन्मपत्री॥ ६॥

जन्मलग्न, अष्टमलग्न तथा प्रश्नलग्न के अंकों को जोड़कर अष्टमेश के अंक से गुणा करे और लग्नेश की राशि की संख्या से भाग दे। यदि विषम अंक शेष रहे, तो जीवित व्यक्ति की जन्म-पत्री जान लेना चाहिए॥ ६॥

प्रश्नजातकयोः समानता

यज्जातके निगदितं भुवि मानवानां
तत्प्राश्निकेऽपि सकलं कथयन्ति तज्ज्ञाः।
प्रश्नोऽपि जन्मसदृशो भवति प्रभेदः
प्रश्नस्य चात्र जननस्य न किञ्चिदस्ति॥ ७॥

जो विचार जातक में कहा गया है वही विचार प्रश्न में भी करना चाहिए। प्रश्न भी जन्म के समान है। प्रश्न तथा जातक में कोई भेद नहीं है॥ ७॥

प्रश्नविचारणा

यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा
सौम्यैर्वा स्यात्तस्य तस्यास्ति वृद्धिः।

* आजकल के बहुत से लोग ज्योतिषियों की परीक्षा करने के विचार से मरे हुए व्यक्ति की जन्मपत्री लाकर रख देते हैं और पूछते हैं कि इस कुण्डली द्वारा ग्रह-दशा का विचार कर दीजिए, यह व्यक्ति सख्त बीमार है आदि। अतः प्राचीन आचार्यों ने इस विषय को भी स्पष्ट कर दिया है।

पापैरेवं तस्य तस्यास्ति हानि-
निर्देष्टव्या पृच्छतां जन्मतो वा ॥ ८ ॥

जो जो भाव अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो या सौम्यग्रह से युक्त या दृष्ट हो उस भाव की वृद्धि होती है। यह विचार प्रश्न में या जन्म में अवश्य कर लेना चाहिए ॥ ८ ॥

असमर्था ग्रहाः

नीचस्थिता अस्तमिताश्च पापै-
र्युक्तास्तथा शत्रुजिता विरुद्धाः ।
बलेन हीनास्त्वणवश्च न स्युः
स्वकर्म कर्तुं खचराः समर्थाः ॥ ९ ॥

जो ग्रह नीच के हों, अस्तंगत हों, पापग्रहों से युक्त हों, युद्ध में शत्रु से पराजित हों, जिनके अंश अल्प शेष रह गए हों एवं बल-हीन हों, तो ऐसे ग्रह शुभाशुभ फल करने में समर्थ नहीं होते ॥९॥

चरस्थिरद्विस्वभावलग्नवशात्प्रश्नफलानि

चरलग्नप्रश्नफलम्

लग्ने चरे विहितलाभरणाः पदार्थ-
नाशो गदक्षयगमागमबन्धमोक्षः ।
प्राप्नुर्भवन्ति परचक्रमुपैति शीघ्रं
कल्याणवृद्धिकलहोपशमाश्च न स्युः ॥१०॥

चरलग्न अर्थात् (मेष, कर्क, तुला या मकर लग्न) में प्रश्न हो या चन्द्रमा चरलग्न में हो, तो अभीष्ट वस्तु का लाभ, युद्ध, पदार्थ का नाश, रोग का नाश, आना-जाना तथा बन्दी का मोक्ष ये बातें सिद्ध होती हैं। एवं शत्रु की सेना शीघ्र समीप में आ जाती है, परन्तु कल्याण की वृद्धि तथा कलह की शान्ति नहीं होती है ॥ १० ॥

स्थिरलग्नप्रश्नफलम्

वृषसिंहवृश्चिकघटैर्विद्धि स्थानं गमागमौ न स्तः ।
न मृतं नचापि नष्टं न रोगशान्तिर्नचाभिभवः ॥ ११ ॥

स्थिरलग्न अर्थात् वृष, सिंह, वृश्चिक या कुम्भ लग्न हो या चन्द्रमा इन लग्नों में हो, तो खोई हुई वस्तु अपने ही स्थान पर मिल जाती है तथा कहीं पर आना-जाना नहीं होता है एवं रोगी हो, तो वह नहीं मरता है, किसी वस्तु का नाश नहीं होता है एवं रोग की शान्ति नहीं होती है तथा शत्रु से पराजय नहीं होता है ॥ ११ ॥

द्विस्वभावलग्नप्रश्नफलम्

द्व्यङ्गोदयैर्ह्तधनाप्तिरभीष्टवस्तु-
प्राप्तिश्चिरेण गमनागमबन्धमोक्षाः ।
प्रष्टुर्भवन्ति परचक्रमुपैति वीर्यं
रोगी च जीवति कलिं च हिनोति भूपः ॥ १२ ॥

द्विस्वभावलग्न अर्थात् मिथुन, कन्या, धन या मीन लग्न हो या चन्द्रमा द्विस्वभाव लग्न में हो, तो चोरी गई हुई वस्तु की प्राप्ति, अभीष्टलाभ, आना-जाना तथा बन्धमोक्ष देरी में होते हैं या शत्रु की सेना बलवान् हो जाती है । रोगी हो, तो वह अच्छा हो जाता है, राजा कलह को छोड़ देता है ॥ १२ ॥

चरस्थिरद्विस्वभावलग्नगतचन्द्रफलम्

स्थिरोदये चन्द्रमसि स्थिरस्थे
द्व्यङ्गे हिमांशौ द्वितनूदयेऽपि ।
चरोदये शीतकरे चरे तथा
फलं विशेषात्प्रथमोदितं भवेत् ॥ १३ ॥

यदि चन्द्रमा चर, स्थिर या द्विस्वभावसंज्ञक लग्नों में स्थित हो, तो भी पूर्वोक्त फल घटित होते हैं ॥ १३ ॥

कार्यसिद्धियोगाः

सौम्ये विलग्ने यदि वास्य वर्गे
शीर्षोदये सिद्धिमुपैति कार्यम्।
अतो विपर्यस्तमसिद्धिहेतुः
कृच्छ्रेण संसिद्धिकरं विमिश्रम् ॥ १४ ॥

लग्न में शुभग्रह हों या शुभराशि हो या शीर्षोदय राशि अर्थात् मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक या कुम्भ लग्न हो, तो कार्य की सिद्धि होती है। इससे विपरीत होने पर सिद्धि नहीं होती है। यदि मिश्रित हो, तो कष्ट से कार्य की सिद्धि होती है ॥ १४ ॥

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभस्थितेषु
पापेषु केन्द्राष्टमवर्जितेषु
सर्वार्थसिद्धिं प्रवदेन्नराणां
विपर्ययस्थेषु विपर्ययः स्यात् ॥ १५ ॥

केन्द्र या त्रिकोण में शुभग्रह हों, केन्द्र तथा अष्टम स्थानों से अतिरिक्त स्थानों में पापग्रह हों, तो समस्त कार्यों में सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। इससे विपरीत में विपरीत फल होता है ॥ १५ ॥

शीतांशुशुक्रज्ञसुरार्चितानां-
मेको निजोच्चं भवनं प्रपश्येत्।
लग्ने तदा स्थानसुखार्थलाभान्
समुन्नतिं चाशु समेति मर्त्यः ॥ १६ ॥

चन्द्र, शुक्र, बुध तथा बृहस्पति इनमें से कोई भी एक ग्रह लग्न में होकर अपने उच्चस्थान को देखे, तो स्थान-सुख, धन का लाभ तथा उन्नति की प्राप्ति होती है ॥ १६ ॥

कोणस्थितः पूर्णतनुः शशाङ्को
जीवेन दृष्टो यदि वा सितेन।

क्षिप्रं प्रणष्टस्य करोति लब्धि
लाभोपयातो बलवान् सितश्च ॥ १७ ॥

पूर्ण चन्द्रमा कोण में स्थित हो, उस पर बृहस्पति या शुक्र की दृष्टि हो या बलवान् शुक्र लाभस्थान में स्थित हो, तो नष्ट वस्तु की प्राप्ति शीघ्र होती है ॥ १७ ॥

गुरौ विलग्ने तपनेऽम्बरस्थे
प्रष्टा पुमान्सौख्यजयौ च लाभम् ।
युग्मे सितेज्यौ शशिजो विलग्ने
मेषूरणे भूमिसुतो यदा स्यात् ॥ १८ ॥
प्रष्टा पुमान्वित्तजयौ च राज्यं
स्थितिं च सौख्यं लभते तदानीम् ॥ १९ ॥

लग्न में बृहस्पति हो और दशम में सूर्य हो, तो सुख, जय तथा लाभ होता है। मिथुन में बृहस्पति तथा शुक्र हों और लग्न में बुध हो एवं दशम में मंगल हो, तो धन, जय, राज्य तथा सुख का लाभ होता है ॥ १८-१९ ॥

लग्ने गुरौ स्थानसुखाम्बरार्थ-
लाभः सुवृद्ध्यर्थसुखाप्तिरिन्दुजे।
शुक्रे विलग्नेऽर्थसुखास्पदाप्तिः
सूर्ये भयं कार्यविनाशरुग्भयम् ॥ २० ॥

लग्न में बृहस्पति हो, तो स्थान, सुख, वस्त्र तथा धन का लाभ होता है। लग्न में बुध हो, तो वृद्धि, धन तथा सुख का लाभ होता है। लग्न में शुक्र हो, तो धन, सुख तथा पदवी की प्राप्ति होती है। लग्न में सूर्य हो, तो भय, कार्य का नाश तथा रोग होते हैं ॥ २० ॥

लग्नेशकार्येश्वरयोः समागमः
फलत्यवश्यं शुभखेटयोर्द्वयोः ।

तयोश्च पापग्रहयोश्च सङ्गमः
प्रष्टुर्भवेत्स्वल्पककार्यसिद्धिः ॥ २१ ॥

लग्नेश तथा कार्येश दोनों शुभग्रह हों, एवं एक स्थान में स्थित हों, तो अवश्य शुभ फल होता है। यदि दोनों पापग्रह हों एवं एक स्थान में स्थित हों, तो कार्य की अल्प सिद्धि होती है ॥ २१ ॥

अर्धयोगादयः

कथयन्ति पादयोगं पश्यति सौम्यो लग्नपो लग्नम्।
लग्नाधिपं च पश्यति शुभग्रहश्चार्धयोगोऽत्र ॥ २२ ॥

शुभग्रह लग्न को देखता हो तथा लग्नेश लग्न को न देखे, तो चतुर्थांश कार्य को सिद्धि होती है। यदि शुभग्रह लग्नेश को देखे, तो अर्ध कार्य की सिद्धि होती है ॥ २२ ॥

एकः शुभग्रहो यदि पश्यति लग्नाधिपं विलग्नं वा।
पादोनयोगमाहुस्तदा बुधाः कार्यसंसिद्ध्यै ॥ २३ ॥

यदि एक शुभग्रह लग्नेश या लग्न को देखे, तो एक पादहीन कार्य की सिद्धि होती है ॥ २३ ॥

कार्यविघातकयोगाः

लग्नस्थितं भूमिजमर्कपुत्रं
पश्येद्यदा शत्रुग्रहस्तदा स्यात्।
चौराद्भयं रोगभयं विपत्तिः
स्त्रीभिः कलिर्चाग्निभयाभिघातः ॥ २४ ॥

लग्न में मंगल या शनि हों, उसको शत्रुग्रह देखें, तो चोर से भय, रोग, विपत्ति, स्त्री से कलह, अग्नि से भय तथा चोट लग जाने का भय होता है ॥ २४ ॥

लग्नाष्टवित्तात्मजकण्टकस्थाः
पापा न सौम्यैः सहितेक्षिताः स्युः।

कार्याभिघातं जयवित्तनाशं
नष्टार्थनाशं च भयं च कुर्युः ॥ २५ ॥

पापग्रह १।७।६।४।५।८।१०।३ स्थानों में हों, शुभग्रहों से दृष्ट या युक्त न हों, तो कार्य में विघ्न होता है। जय तथा धन का नाश होता है एवं नष्ट धन की प्राप्ति नहीं होती है ॥ २५ ॥

चेत्प्रश्नलग्नादरिकामनाश-
स्थिताः खला वा तनुपान्विता वा।
प्रष्टुस्तदा द्रव्यविनाशहानि-
क्लेशाभयादिप्रतिवादिचिन्ता ॥ २६ ॥

यदि प्रश्नलग्न से ६। ७। ८ स्थानों में पापग्रह हों या लग्नेश से युक्त हों, तो द्रव्य का नाश, हानि, रोग तथा शत्रु की चिन्ता होती है ॥ २६ ॥

प्रश्नादवधिज्ञानम्

ग्रहो विलग्नाद्यतमे गृहे तु
तेनाहता द्वादशराशयः स्युः।
तावद्दिनान्यागमनस्य विद्या-
न्निवर्तनं वक्रगतैर्ग्रहैस्तु ॥ २७ ॥

प्रश्नलग्न से जिस स्थान में ग्रह हो उससे बारह राशियों को गुणा करे, जो गुणनफल हो उतने ही दिनों में परदेश से लौट आवेगा। वक्री ग्रह से लौटना बतलावे ॥ २७ ॥

ग्रहः सर्वोत्तमबलो लग्नाद्यस्मिन्गृहे स्थितः।
मासैस्तु तुल्यसंख्याङ्कैर्निवृत्तिं यातुरादिशेत् ॥ २८ ॥

सबसे उत्तम बलवाला ग्रह लग्न से जिस स्थान पर स्थित हो उसी स्थान की संख्या के समान महीनों में गया हुआ लौट आवेगा ॥ २८ ॥

चरांशस्थे ग्रहे तस्मिन्कालमेवं विनिर्दिशेत् ।
द्विगुणं स्थिरभागस्थे त्रिगुणं द्व्यात्मकांशके ॥ २६ ॥

चर नवांश में ग्रह हो, तो पूर्वोक्तकाल, स्थिर नवांश में उसका दोगुना, द्विस्वभाव नवांश में उसका तिगुना काल जानना चाहिए ॥ २६ ॥

यातुर्विलग्नाज्जामित्रभवनाधिपतिर्यदा ।
करोति वक्रमावृत्तेः कालं तं ब्रुवतेऽपरे ॥ ३० ॥

किसी आचार्य का मत है कि लग्न से सप्तम स्थान का स्वामी जब वक्री होगा, तब प्रवासी लौटेगा ॥ ३० ॥

यदा लग्नतो नूनमायाति साम्य-
स्तृतीयं तदाभ्येति पान्थो यदीन्दुः ।
विवाहस्मरं कण्टकादग्रिमर्क्षे
व्रजेदागमस्तत्क्षणे ह्यन्यदेशात् ॥ ३१ ॥

सौम्यग्रह जब लग्न से तीसरे स्थान पर पहुँचे, तब परदेश से लौट आता है। जब चन्द्रमा केन्द्र से आगे बढ़े, तब उसी समय परदेश से लौट आता है ॥ ३१ ॥

लग्नाद्बली तिष्ठति यत्र गेहे
कश्चिद्ग्रहस्तद्गृहसम्मिताङ्काः ।
सूर्याहतास्तैर्दिवसैः समेति
वक्री स चेत्तैः पुनरेव गन्ता ॥ ३२ ॥

लग्न से जिस घर में बलवान् ग्रह हो उस घर के अङ्क को बारह से गुणा करने से जो गुणनफल हो उतने ही दिन में लौट आता है। यदि वह ग्रह वक्री हो, तो लौटकर चला जावेगा ॥ ३२ ॥

यदाङ्गनेशस्तनुमेति यद्वा
लग्नाधिनाथेन कृतेत्थशालः ।

तदा प्रवासी स्वगृहं समेति
चरर्क्षयोगे सविशेषतश्च ॥ ३३ ॥

जब सप्तमेश लग्न में आवे या लग्नेश के साथ इत्थशाल करे, तब विदेशी विदेश से घर लौट आवे। चर लग्न हो, तो विशेष योग होता है ॥ ३३ ॥

प्रश्नलग्नादवधिज्ञानम्

लग्नस्य योंऽशको देवि तस्य स्वामी तु यो ग्रहः।
तद्वशात्कालविज्ञानमुदितांशकसंख्यया ॥ ३४ ॥

लग्न के नवांश के स्वामी ग्रह से नीचे लिखी अवधि बतलाई आवे ॥ ३४ ॥

ऋतुत्रयं वासरनायकस्य
क्षणं शशांकस्य दिनं कुजस्य।
विदो ऋतुर्देवगुरोस्तु मासः
पक्षो भृगोर्वत्सरमर्कसूनोः ॥ ३५ ॥
अष्टौ तु मासास्तु हिमांशुशत्रोः
केतोस्तु मासत्रयमेव कालः ॥ ३६ ॥

सूर्य की अवधि छः महीना, चन्द्रमा की अवधि एक क्षण, मंगल की अवधि एक दिन, बुध की अवधि दो महीना, बृहस्पति की अवधि एक महीना, शुक्र की अवधि पन्द्रह दिन, शनि की अवधि एक वर्ष, राहु की अवधि आठ महीना तथा केतु की अवधि तीन महीने की होती है ॥ ३५-३६ ॥

प्रश्नविषये जैमिनीयसूत्राणि

चरलग्ने शीघ्रं, द्विस्वभावे विलग्नः,
स्थिरे चिरकालेन ॥ ३७ ॥

चर लग्न में शीघ्र (४-५ दिन में), द्विस्वभाव लग्न में

विलम्ब से (१०-१५ दिन में), स्थिर लग्न में बहुत देरी से अवधि बतलाना चाहिए ॥ ३७ ॥

लग्नचन्द्रान्तरयोरन्तरालसंख्यया
फलपाककालो वा ॥ ३८ ॥

लग्न तथा चन्द्रमा के बीच में जितने घर हों उतने दिन में कार्य की सिद्धि कहना चाहिए ॥ ३८ ॥

राशीनां वर्णाः *

रक्तः श्वेतः शुकतनुनिभः पाटलो धूम्रपाण्डु-
श्चित्रः कृष्णः कनकसदृशः पिङ्गलः कर्बुरश्च ॥ ३९ ॥
बभ्रुः स्वच्छः ।

मेष लग्न का वर्ण लाल, वृष लग्न का वर्ण सफ़ेद, मिथुन लग्न का वर्ण हरित, कर्क लग्न का वर्ण गुलाबी, सिंह लग्न का वर्ण धुएँ के सदृश, कन्या लग्न का वर्ण चित्र-विचित्र, तुला लग्न का वर्ण काला, वृश्चिक लग्न का वर्ण सुनहरा, धन लग्न का वर्ण पीला, मकर लग्न का वर्ण चितकबरा, कुम्भ लग्न का वर्ण नकुल के समान तथा मीन लग्न का वर्ण स्वच्छ होता है ॥ ३९ ॥

मूकप्रश्नविचारः

मेषे च द्विपदां चिन्ता वृषे चिन्ता चतुष्पदाम् ।
मिथुने गर्भचिन्ता च व्यवसायस्य कर्कटे ॥ ४० ॥
सिंहे च जीवचिन्ता स्यात्कन्यायां च स्त्रियास्तथा ।
तुलायां धनचिन्ता च व्याधिश्चिन्ता च वृश्चिके ॥ ४१ ॥
चापे च धनचिन्ता स्यान्मकरे शत्रुचिन्तनम् ।
कुम्भे स्थानस्य चिन्ता स्यान्मीने चिन्ता च दैविकी॥४२॥

यदि प्रश्न करने के समय मेष लग्न हो, तो प्रश्नकर्ता के मन

---

* प्रश्नकर्ता से किसी पुष्प का नाम पूछ ले । पुष्प के वर्णवाली जो राशि हो उससे लग्न स्थिर करके तदनुसार फल कहे परन्तु यह रीति स्थूल है ।

में द्विपद अर्थात् मनुष्यों की चिन्ता, वृष लग्न में चतुष्पद अर्थात् चौपायों की चिन्ता, मिथुन लग्न में गर्भ की चिन्ता, कर्क लग्न में व्यवसाय की चिन्ता, सिंह लग्न में जीव की चिन्ता, कन्या लग्न में स्त्री की चिन्ता, तुला लग्न में धन की चिन्ता, वृश्चिक लग्न में रोग की चिन्ता, धन लग्न में धन की चिन्ता, मकर लग्न में शत्रु की चिन्ता, कुम्भ लग्न में स्थान की चिन्ता तथा मीन लग्न में देवसम्बन्धी चिन्ता होती है ॥ ४०-४२ ॥

मूकप्रश्नः

रविभौमौ बलयुतौ केन्द्रे धातुप्रदौ शनीन्दुसुतौ ।
मूलकरौ शशिशुक्रामरगुरवो जीवकारकाः प्रश्ने ॥ ४३ ॥

यदि केन्द्र में रवि या मंगल बलवान् हों, तो धातु का प्रश्न, यदि शनि या बुध हो, तो मूलसम्बन्धी प्रश्न, यदि चन्द्रमा, शुक्र या बृहस्पति हो, तो जीवसम्बन्धी प्रश्न जानना चाहिए ॥ ४३ ॥

मेषालिसिंहलग्ने हि कुजार्काभ्यां युतेक्षिते ।
धातुचिन्तामृगद्वन्द्वकन्याकुम्भे युतेक्षिते ॥ ४४ ॥

मेष, वृश्चिक या सिंह लग्न हो, मंगल या सूर्य से युक्त या दृष्ट हो, तो धातुसम्बन्धी चिन्ता, मकर, मिथुन, कन्या या कुम्भ लग्न हो, शनि या बुध से युक्त या दृष्ट हो, तो मूलचिन्ता जाननी चाहिए ॥ ४४ ॥

मन्दविद्भ्यां मूलचिन्ता कर्कमीनधनुस्तुले ।
वृषे च भृगुचन्द्रेज्यैर्दृष्टं जीवस्य चिन्तना ॥ ४५ ॥

कर्क, मीन, धन, तुला या वृष लग्न हो, शुक्र, चन्द्रमा या बृहस्पति से युक्त या दृष्ट हो, तो जीवसम्बन्धी चिन्ता जाननी चाहिए ॥ ४५ ॥

लग्नलाभपयोः स्वामी तयोर्यद्भावगः शशी ।
तस्य भावस्य या चिन्ता प्रष्टुः सा हृदि वर्त्तते ॥ ४६ ॥

लग्नेश या लाभेश से जिस स्थान में चन्द्रमा स्थित हो प्रश्न-कर्त्ता के मन में उसी भाव की चिन्ता जानना चाहिए ॥ ४६ ॥

एवं बलाधिकाच्चन्द्राल्लग्ननाथो यतः स्थितः।
दैवज्ञेन विनिर्णेयः प्रश्नस्तद्भावसम्भवः ॥ ४७ ॥

बलवान् चन्द्रमा से जिस स्थान में लग्नेश हो उस भाव का प्रश्न जानना चाहिए ॥ ४७ ॥

तनुलाभपयोश्च यो बली शशभृद्यत्र ततस्तु भावके।
अनुयोगकृतो विचिन्तनं हृदि तद्भावगतस्य वस्तुनः ॥४८॥

लग्नेश तथा लाभेश में जो बलवान् हो उससे चन्द्रमा जिस भाव में हो उस भाव की चिन्ता जानना चाहिए ॥ ४८ ॥

आत्मसमं लग्नगतैस्तृतीयगैर्भ्रातरं सुतं सुतगैः।
मातरं तद्भगिनीं वा चतुर्थगैः शत्रुगैः शत्रुः ॥
जायासप्तमसंस्थैर्नवमे धर्माश्रितो नृपो दशमे ॥ ४९ ॥

यदि लग्न में बलवान् ग्रह हो, तो अपने विषय में प्रश्न, तीसरे स्थान में बलवान् ग्रह हो, तो भाई के विषय में प्रश्न, पञ्चम स्थान में बलवान् ग्रह हो, तो सन्तान के विषय में प्रश्न, चतुर्थ स्थान में बलवान् ग्रह हो, तो माता या मौसी के विषय में प्रश्न, छठे स्थान में बलवान् ग्रह हो, तो शत्रु के विषय में प्रश्न, सप्तम स्थान में बलवान् ग्रह हो, तो स्त्री के विषय में प्रश्न, नवम स्थान में बलवान् ग्रह हो, तो धर्म के विषय में प्रश्न तथा दशम स्थान में बलवान् ग्रह हो, तो राजा के विषय में प्रश्न जान लेना चाहिए ॥४९॥

रवौ स्वभे भूपतिराज्यचिन्ता
विधौ जलक्षेत्रनिखातचिन्ता।
कुजेऽरिभूपालभयस्य चिन्ता
बुधे कृषिक्षेत्रखलायुधानाम् ॥ ५० ॥

प्रश्न के समय यदि सूर्य अपने घर का हो, तो प्रश्नकर्त्ता के मन

में राजा या राज्य की नौकरी की चिन्ता, चन्द्रमा स्वगृही हो, तो जल या क्षेत्र या वापी आदि की चिन्ता, मंगल अपने घर का हो, तो शत्रुभय या राजभय की चिन्ता, बुध अपने घर का हो, तो खेती या आयुधों की चिन्ता होती है ॥ ५० ॥

चिन्ता गुरौ धर्मसुहृन्नराणां
भृगौ स्वभे वाऽखिलसौम्यचिन्ता।
शनैश्चरे स्वर्क्षगते नरस्य
चिन्ता भवेद्वेश्ममहीपितॄणाम् ॥ ५१ ॥

यदि प्रश्न के समय में बृहस्पति स्वगृही हो, तो प्रश्नकर्त्ता के मन में धर्म या मित्र या राजा के विषय में चिन्ता, शुक्र स्वगृही हो, तो शुभ कार्य की चिन्ता तथा शनि स्वगृही हो, तो घर या भूमि या पितृविषयक चिन्ता होती है ॥ ५१ ॥

मार्गारिचिन्ताथ तनौ हिमांशौ
क्षेत्रार्थभोज्यस्य भवेद्धने च।
विप्रप्रवासस्य तथा तृतीये
वृष्टेश्चतुर्थे च गृहाम्बयोश्च ॥ ५२ ॥

यदि प्रश्न करने के समय में चन्द्रमा लग्न में हो, तो प्रश्नकर्त्ता के मन में मार्ग या शत्रु की चिन्ता, धनभाव में हो, तो क्षेत्र या धन या भोज्य पदार्थों की चिन्ता, तीसरे भाव में हो, तो प्रवास की चिन्ता, चतुर्थ भाव में हो, तो वृष्टि या घर या माता की चिन्ता होती है ॥ ५२ ॥

सुतेऽसुतानां च रिपौ गदानां
मदे युवत्या निधने मृतेश्च।
मार्गप्रयाणस्य तपःस्थिते स्या-
त्कर्मस्थिते क्षेत्रधूर्तादिचिन्ता ॥ ५३ ॥

लाभे शशाङ्के शुचिवस्तुवस्त्र-
चिन्ता व्ययस्थे हृतवस्तुलब्धेः ॥ ५४ ॥

यदि प्रश्न करने के समय में चन्द्रमा पञ्चम भाव में स्थित हो, तो प्रश्नकर्त्ता के मन में पुत्रसम्बन्धी चिन्ता, षष्ठ भाव में हो, तो रोगचिन्ता, सप्तम भाव में हो, तो स्त्रीचिन्ता, अष्टम भाव में हो, तो मरणचिन्ता, नवम भाव में हो, तो मार्गगमनचिन्ता, दशम भाव में हो, तो क्षेत्र या भूत्त आदि की चिन्ता, ग्यारहवें भाव में हो, तो स्वच्छ वस्तु या वस्त्र की चिन्ता तथा बारहवें भाव में हो, तो चोरी में गई हुई वस्तु के लाभ की चिन्ता होती है ॥ ५३-५४ ॥

प्रष्टुः स्वचिन्ता सबले कुजे स्या-
ज्जीवे स्त्रिया रात्रिकरे जनन्याः ।
वंशस्य शुक्रे सहजस्य सौम्ये
शनौ रिपूणां जनकस्य सूर्ये ॥ ५५ ॥

यदि प्रश्न करने के समय में मंगल बलवान् हो, तो प्रश्नकर्त्ता को अपने विषय में चिन्ता, बृहस्पति बलवान् हो, तो स्त्री की चिन्ता, चन्द्रमा बलवान् हो, तो माता की चिन्ता, शुक्र बलवान् हो, तो वंश की चिन्ता, बुध बलवान् हो, तो भाई की चिन्ता, शनि बलवान् हो, तो शत्रु की चिन्ता तथा सूर्य बलवान् हो, तो पिता की चिन्ता होती है ॥ ५५ ॥

उदये यदि चरराशिर्द्रेष्काणे वा नवांशके लग्ने ।
यद्वा खेटे चरभे दशमाद्भ्रष्टे प्रवासचिन्ता स्यात् ॥५६॥

यदि लग्न में चर राशि हो या लग्न में चर राशि का द्रेष्काण या नवांशक हो या चर राशि का कोई ग्रह दशम घर से आगे गया हो, तो यात्रा की चिन्ता होती है ॥ ५६ ॥

मुष्टिप्रश्नविचारः

मेषे रक्तं वृषे पीतं मिथुने नीलवर्णकम् ।
कर्के च पाण्डुरं ज्ञेयं सिंहे धूम्रं प्रकीर्तितम् ॥ ५७ ॥
कन्यायां नीलमिश्रं च तुलायां पीतमिश्रितम् ।
वृश्चिके ताम्रमिश्रं च चापे पीतं विनिश्चितम् ॥ ५८ ॥
नक्रे कुम्भे कृष्णवर्णं मीने पीतं वदेत्सुधीः ॥ ५९ ॥

प्रश्नकाल में मेष लग्न हो, तो वस्तु का रंग लाल, वृष लग्न हो, तो पीला, मिथुन लग्न हो, तो नीला, कर्क लग्न हो, तो गुलाबी, सिंह लग्न हो, तो धूम्रवर्ण, कन्या लग्न में नीला, तुला लग्न में पीला, वृश्चिक लग्न में लाल, धन लग्न में पीला, मकर तथा कुम्भ लग्न में कृष्णवर्ण तथा मीन लग्न में पीला रंग जान लेना चाहिए । इस प्रकार लग्नेश से वस्तु का स्वरूप आदि जान लिए जाते हैं ॥ ५७-५९ ॥

प्रश्नलग्नाद्विवाहविचारः

... ... विषमस्थितेऽर्कपुत्रे
लभ्या वरस्य नारी समस्थितेऽतोऽन्यथा वामम् ॥ ६० ॥

प्रश्नकाल में शनि सम स्थान में स्थित हो, तो वर को कन्या-लाभ होता है, अन्यथा नहीं ॥ ६० ॥

विषमांशगतौ शशिभार्गवौ
तनुगृहं बलिनौ यदि पश्यतः ।
रचयतो वरलाभमथो यदा
युगलभांशगतौ युवतिप्रदौ ॥ ६१ ॥

यदि प्रश्नकाल में चन्द्रमा तथा शुक्र बलवान् होकर विषम राशि या विषम नवांशक में स्थित होकर लग्न को देखें, तो कन्या को वर की प्राप्ति होती है । यदि युग्मराशि या युग्म नवांश में स्थित हों, तो वर को कन्या मिलती है ॥ ६१ ॥

यदि भवति सितातिरिक्तपक्षे
तनुगृहतः समराशिगः शशाङ्कः।
अशुभखचरवीक्षितोऽरिरन्ध्रे
भवति विवाहविनाशकारकोऽयम् ॥ ६२ ॥

यदि प्रश्नकाल में कृष्णपक्ष का चन्द्रमा लग्न से सम गृह में स्थित हो तथा ६। ८ स्थानों में बैठा हुआ पापग्रह से दृष्ट हो, तो विवाह का नाश करनेवाला होता है ॥ ६२ ॥

गर्भिणीप्रश्नः

स्थिरलग्ने गर्भस्थितिः ॥ ६३ ॥ (जैमिनीयसूत्रे)

यदि प्रश्नलग्न स्थिर हो, तो गर्भस्थिति होती है ॥ ६३ ॥

तत्प्रश्नलग्ने रविजीवभौमा-
स्तृतीयशैले नवपञ्चमे च।
गर्भः पुमान्वै ऋषिभिः प्रणीत-
श्चान्यद्गृहे स्त्रीविबुधैः प्रणीता ॥ ६४ ॥

सूर्य, बृहस्पति या मंगल प्रश्नलग्न में हो या ३। ७। ९। ५ स्थानों में हो, तो गर्भ में पुत्र होता है। यदि कोई अन्य ग्रह हो, तो कन्या होती है ॥ ६४ ॥

ओजर्क्षे पुरुषांशके सुबलिभिर्लग्नार्कगुर्विन्दुभिः
पुंजन्म प्रवदेत्समांशकगतैर्युग्मेषु वा योषितः।
गुर्वर्कौ विषमे नरं शशिसुतौ वक्रश्च युग्मे स्त्रियं
द्व्यङ्गस्था बुधवीक्षिताश्च यमलौ कुर्वन्ति पक्षे स्वके ॥६५॥

जब विषम राशि हो तथा विषम नवांशक हो, उस पर लग्न, सूर्य, बृहस्पति तथा चन्द्रमा बलवान् होकर बैठे हों, तो पुत्र का जन्म होता है। यदि सम राशि या सम नवांशक में पूर्वोक्त ग्रह हों, तो कन्या का जन्म होता है। बृहस्पति तथा सूर्य विषम राशि में हों, तो पुत्र का जन्म तथा चन्द्रमा, शुक्र या मंगल सम राशि

में हो, तो कन्या का जन्म कहना चाहिए। यदि द्विस्वभाव लग्न में बुध की दृष्टि हो, तो यमल उत्पन्न होते हैं ॥ ६५ ॥

विहाय लग्नं विषमर्क्षसंस्थः
सौरो हि पुंजन्मकरो विलग्नात्।
प्रोक्तग्रहाणामवलोक्य वीर्यं
वाच्यः प्रसूतौ पुरुषोऽङ्गना वा ॥ ६६ ॥

यदि शनि लग्न को छोड़कर विषम राशि में स्थित हो, तो पुत्र का जन्म होता है। ग्रहों का बल देखकर पुत्र या कन्या का जन्म बतलाना चाहिए ॥ ६६ ॥

पुंवर्गे लग्नगते पुंग्रहदृष्टे बलान्विते पुरुषः।
युग्मे स्त्रीग्रहदृष्टे स्त्री बुधयुक्ते तु गर्भयुता ॥ ६७ ॥
विषमस्थितेऽर्कपुत्रे सुतस्य
जन्माऽन्यथाऽङ्गनायाश्च ॥ ६८ ॥

जब लग्न में पुरुषराशि हो या बलवान् पुरुषग्रह की उस पर दृष्टि हो, तो पुत्र का जन्म, यदि सम राशि हो तथा स्त्रीग्रह की दृष्टि हो, तो कन्या का जन्म, यदि लग्न बुधयुक्त हो, तो स्त्री गर्भ-युक्त होती है; यदि शनि विषम राशि में स्थित हो, तो पुत्र का जन्म अन्यथा कन्या का जन्म बतलाना चाहिए ॥६७-६८ ॥

तनुभावप्रश्नः

यदि लग्ने लग्नपतिः सौम्ययुतो वा विलोकितः पापैः।
तत्प्रष्टुर्व्याकुलता शरीरदोषा विनश्यन्ति ॥ ६९ ॥

लग्नेश लग्न में हो, शुभग्रहों से युक्त या पापग्रहों से दृष्ट हो, तो प्रश्नकर्त्ता के चित्त की व्याकुलता तथा शरीर के दोषों का नाश शीघ्र होता है ॥ ६९ ॥

धनलाभप्रश्नः

चन्द्रलग्नधनाधीशा दृष्टयुक्ताः परस्परम् ।
धनकेन्द्रत्रिकोणस्थाः सद्योलाभकरा मताः ॥ ७० ॥

चन्द्रमा, लग्नेश तथा धनेश आपस में एक दूसरे को देखते हों या धन, केन्द्र या त्रिकोण में एक साथ बैठे हों, तो तत्काल लाभ बतलाना चाहिए ॥ ७० ॥

चतुर्थे सप्तमे चन्द्रे खे रवौ लग्नगे शुभे ।
प्रष्टुः सद्योऽर्थलाभः स्याल्लग्ने वा सुरमन्त्रिणि ॥ ७१ ॥

चतुर्थ या सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो, दशम में सूर्य हो, लग्न में शुभग्रह हो, तो तत्काल लाभ होता है ॥ ७१ ॥

लग्ने धने त्रिकोणे वा चन्द्रे वित्ते च लग्नपः ।
अन्योन्यं लोकिता युक्ता द्रुतं लाभप्रदा मताः ॥ ७२ ॥

लग्न या धनस्थान या त्रिकोण में चन्द्रमा हो, धनस्थान में लग्नेश हो या परस्पर दृष्टि हो, तो शीघ्र लाभ होता है ॥ ७२ ॥

त्रिकोणकेन्द्रगाः सौम्याः सद्योलाभप्रदा मताः ।
केन्द्रत्रिकोणगाः पापा लाभे विघ्नकरा मताः ॥ ७३ ॥

त्रिकोण या केन्द्र में सौम्य ग्रह हों, तो तत्काल लाभ होता है। यदि पापग्रह हों, तो लाभ में विघ्न होता है ॥ ७३ ॥

सुतभावप्रश्नः

सुतभावपतिर्लग्ने लग्नपचन्द्रौ सुतेऽथवा स्यात् ॥ ७४ ॥
(त्वरितं सुतलाभः स्यात्)

पञ्चमेश लग्न में हो या लग्नेश और चन्द्रमा पञ्चम स्थान में हो, तो शीघ्र पुत्रलाभ होता है * ॥ ७४ ॥

* यदि जन्मकुण्डली में कोई सन्तानप्रतिबन्धक योग पड़ गया हो, तो उसकी शान्ति कर लेना परमावश्यक है ।

द्विशरीरे च विलग्ने शुभयुतपुत्रे ह्यपत्ययोगोऽस्ति ॥ ७५ ॥

यदि द्विस्वभाव राशि लग्न में हो तथा पञ्चम स्थान में शुभग्रह हों, तो सन्तान का योग कहना चाहिए ॥ ७५ ॥

यदि लग्नपतिः पुंराशौ चेत्तदा सुतो गर्भे ॥ ७६ ॥

यदि लग्नेश पुरुषराशि में हो, तो गर्भ में पुत्र कहना चाहिए ७६॥

लग्नपशशिनोः सुतस्थयोर्गर्भे भवत्येव ।
सुतेशलग्नपौ समे सुता सुतोऽसमेऽत्र चेत् ॥ ७७ ॥

लग्नेश तथा चन्द्रमा पञ्चम स्थान में हो, तो अवश्य गर्भ होता है । यदि पञ्चमेश तथा लग्नेश सम राशि में हो, तो कन्या, यदि विषम राशि में हो, तो पुत्र होता है ॥ ७७ ॥

लग्नाद्यतमे स्थाने शुक्रस्तावन्तो वदेन्मासान् ॥ ७८ ॥

लग्न से जिस स्थान पर शुक्र बैठा हो उतने ही मास व्यतीत जानना चाहिए ॥ ७८ ॥

यदि धर्मादूर्ध्वंस्थस्तद्वदेत्पञ्चमस्थानात् ॥ ७९ ॥

यदि शुक्र धर्मस्थान से आगे बैठा हो, तो पञ्चम स्थान से गिनती करना चाहिए ॥ ७९ ॥

विवादप्रश्नः

क्रूरः खचरो लग्ने
विवादपृच्छा सुजयति विवदन्तम् ।
सर्वावस्थासु परं
नाचऽस्ते जयति न द्विषतः ॥ ८० ॥

लग्न में क्रूरग्रह हों, तो विवाद में जय, यदि सप्तम स्थान में नीचग्रह हों, तो पराजय (हार) होता है ॥ ८० ॥

रोगप्रश्नः

एकः सौम्यो बली लग्ने त्रायते रोगपीडितम् ।
सौम्या धर्मारिलाभस्थास्तृतीयस्था गदापहाः ॥ ८१ ॥

लग्न में बलवान् होकर एक भी सौम्य ग्रह बैठा हो, तो रोग से रोगी की रक्षा करता है, ६ । ६ । ११ । ३ स्थानों में शुभग्रह हों, तो रोग का नाश हो जाता है ॥ ८१ ॥

विलग्ने षष्ठपः पापो जन्मराशिनिरीक्षिते ।
रोगिणस्तस्य मरणं निश्चयेन वदेद्बुधः ॥ ८२ ॥

जब षष्ठेश पापग्रह हो तथा लग्न में बैठा हो और जन्मराशि पर उसकी दृष्टि हो, तो रोगी की मृत्यु होती है ॥ ८२ ॥

चतुर्थाष्टमगे चन्द्रे पापमध्यगतेऽपि वा ।
मृतिः स्याद्बलसंयुक्ते सौम्यदृष्ट्या चिरात्सुखम् ॥ ८३ ॥

यदि चन्द्रमा ४ । ८ स्थानों में हो या दो पापग्रहों के मध्य में होकर बलवान् हो, तो रोगी की मृत्यु होती है । यदि सौम्य ग्रह की दृष्टि हो, तो चिरकाल में सुख की प्राप्ति होती है ॥ ८३ ॥

विधौ लग्ने स्मरे भानौ रोगी याति यमालयम् ॥ ८४ ॥

लग्न में चन्द्रमा हो, सप्तम स्थान में सूर्य हो, तो मृत्यु होती है ॥ ८४ ॥

शुभग्रहाः सौम्यनिरीक्षिताश्च
विलग्नसप्ताष्टमपञ्चमस्थाः ।
त्रिषट्दशा ये च निशाकरः स्या-
च्छुभं वदेद्रोगनिपीडितानाम् ॥ ८५ ॥

यदि शुभग्रह १ । ७ । ८ । ५ स्थानों में हो तथा उन पर शुभग्रह की दृष्टि भी हो, ३ । ६ । १० । ११ स्थानों में चन्द्रमा हो, तो रोगियों को शुभ होता है, अन्यथा विपरीत फल होता है ॥ ८५ ॥

रोगिप्रश्ने रोगगृहं सप्तमं गृहमुच्यते ।
शुभे तत्र शुभं वाच्यमशुभे त्वशुभं वदेत् ॥ ८६ ॥

रोगी के प्रश्न का विचार सप्तम स्थान से करे । यदि उस स्थान

में शुभग्रह हो, तो शुभ फल तथा पापग्रह हो, तो अशुभ फल कहना चाहिए ॥ ८६ ॥

मन्दः पापसमेतो लग्नान्नवमे शुभैरदृष्टः ।
रोगार्त्तः परदेशे चाष्टमगो मृत्युकर एव ॥ ८७ ॥

यदि शनि पापग्रह से युक्त होकर नवम स्थान में हो तथा उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि न हो, तो वह मनुष्य परदेश में रोग से पीड़ित होता है । यदि अष्टम स्थान में हो, तो उस रोगी की मृत्यु हो जाती है ॥ ८७ ॥

सम्मिलनप्रश्नः

केन्द्रस्थिते बलयुते मिलति स्वगेहे
जायेश्वरे पणफरे निकटे स्वगेहात् ।
आपोक्लिमे न मिलति क्वचिदन्यगेहे
संस्थः स यस्य मिलनाय गतो हि गन्ता ॥ ८८ ॥

यदि सप्तमेश बलवान् होकर केन्द्र अर्थात् १ । ४ । ७ । १० स्थानों में हो, तो मिलनेवाला अपने घर पर मिलता है । यदि सप्तमेश पणफर अर्थात् २ । ५ । ८ । ११ स्थानों में हो, तो अपने घर के पास मिलता है । यदि सप्तमेश आपोक्लिम अर्थात् ३ । ६ । ९ । १२ स्थानों में हो, तो वह मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य के घर गया होगा और आपको नहीं मिल सकेगा ॥ ८८ ॥

प्रवासिन आगमनप्रश्नः

धनसहजगतौ सितामरेज्यौ
कथयेदागमनं प्रवासिपुंसाम् ।
तनुहिबुकगताविमौ हि तद्वद्
झटिति नृणां कुरुतो गृहप्रवेशम् ॥ ८९ ॥

जब शुक्र तथा बृहस्पति २ । ३ स्थानों में हों, तो प्रवासी लौट

आवेगा, ऐसा कहना चाहिए। यदि वे १। ४ स्थानों में हों, तो प्रवासी पुरुष शीघ्र घर आता है ॥ ८६ ॥

गमागमौ तु न स्यातां स्थिरराशौ विलग्नगे ॥ ६० ॥

यदि लग्न में स्थिर राशि हो, तो आना-जाना कुछ नहीं होता है ॥ ६० ॥

जामित्रे त्वथवा षष्ठे ग्रहः केन्द्रेऽथ वाक्पतिः।
प्रोषितागमनं विद्यात् त्रिकोणे ज्ञे सितेऽपि वा ॥ ६१ ॥

यदि ६। ७ स्थानों में कोई ग्रह हो, केन्द्र में बृहस्पति हो, त्रिकोण में बुध या शुक्र हो, तो विदेशी परदेश से शीघ्र लौट आता है ॥ ६१ ॥

दूरगतस्यागमनं सुतधनसहज-
स्थितैः सौम्यैर्विलग्नर्क्षात् ॥ ६२ ॥

यदि २। ३। ५ स्थानों में शुभग्रह हों, तो विदेशी का दूरदेश से शीघ्र आगमन होता है ॥ ६२ ॥

चरे लग्ने चरे चन्द्रे द्विदेहे च चरांशके।
गमागमौ हि वक्तव्यौ स्थिरे लग्ने च नागमः ॥ ६३ ॥

यदि लग्न में चर राशि हो, चन्द्रमा चर राशि या द्विस्वभाव राशि पर हो या चर नवांश में हो, तो प्रवासी लौट आता है। यदि स्थिर लग्न हो, तो आगमन नहीं होता है ॥ ६३ ॥

अष्टमस्थे निशानाथे कण्टकैः पापवर्जितैः।
प्रवासी सुखमायाति सौम्यैर्लाभसमन्वितः ॥ ६४ ॥

अष्टम स्थान में चन्द्रमा हो, केन्द्र में पापग्रह न हों, तो प्रवासी सुख से लौट आता है। यदि सौम्य ग्रह हो, तो लाभसहित लौटता है ॥ ६४ ॥

गमनप्रश्नः

त्रिकोणे कुजात्सौरिशुक्रज्ञजीवा
यदैकोऽपि वा नो गमोऽर्काच्छशी वा ॥ ६५ ॥

यदि मंगल से त्रिकोण में शनि, शुक्र, बुध या बृहस्पति इनमें से एक भी हो या सूर्य से चन्द्रमा त्रिकोण में हो, तो गमन नहीं होता है ॥ ६५ ॥

पापे कलत्रे व्रजते यदर्थं
तत्कार्यनाशाद्गमनं च न स्यात् ।
पापग्रहैः कर्मगतैर्न यात्रा
स्याज्ज्येष्ठबन्धोर्नृपतेर्निषेधात् ॥ ६६ ॥

सप्तम स्थान में पापग्रह हो, तो जिस कार्य के लिये यात्रा करने का विचार हो उस कार्य का नाश होने से यात्रा नहीं होती है। दशम स्थान में पापग्रह हो, तो ज्येष्ठ भ्राता या राजा के निषेध करने से यात्रा नहीं होती है ॥ ६६ ॥

स्थिरोदये शीतकरे स्थिरस्थे
सौम्यग्रहैः संयुतवीक्षिते च ।
प्रष्टुः प्रयासो न भवेत्स्वधाम्नः
स्थितिप्रतिष्ठाशुभसिद्धयः स्यु. ॥ ६७ ॥

स्थिर लग्न हो तथा चन्द्रमा भी स्थिर राशि में हो, सौम्य ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो प्रश्नकर्त्ता की यात्रा नहीं होती है। अपने ही स्थान में रहने से प्रतिष्ठा, शुभफल तथा सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ६७ ॥

नष्टधनलाभप्रश्नः

शीर्षोदये सौम्ययुतेऽथ पूर्णे
चन्द्रे विलग्ने शुभदृष्टियुक्ते ।
लाभेऽथवा सौम्यखगे बलाढ्ये
नष्टार्थलाभं त्वचिरेण विद्यात् ॥ ६८ ॥

शीर्षोदय लग्न हो, उसमें शुभग्रह स्थित हो या पूर्ण चन्द्रमा लग्न में बैठा हो या शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो या लाभस्थान में बलवान् शुभग्रह स्थित हो, तो नष्ट हुई वस्तु का शीघ्र लाभ होता है ॥ ९८ ॥

कोणस्थितः पूर्णतनुः शशांको
जीवेन दृष्टो यदि वा सितेन ।
क्षिप्रं प्रणष्टस्य करोति लाभं
लाभोपयातो बलवाँच्छुभश्च ॥ ९९ ॥

यदि पूर्ण चन्द्रमा कोण में स्थित हो तथा बृहस्पति या शुक्र की दृष्टि हो या लाभ में बलवान् शुभग्रह हो, तो नष्ट हुई वस्तु का शीघ्र लाभ होता है ॥ ९९ ॥

सप्तमे यदि शुभो न हृताप्ति-
श्चेद्बली हिमगुरुद्रु तमाप्तिः ।
चेत्कृशो द्रुतमनाप्तिकरश्चे-
दस्तगस्तनुपतिर्न हृताप्तिः ॥ १०० ॥

यदि सप्तम स्थान में शुभ ग्रह हो, तो नष्ट हुई वस्तु न मिले। यदि चन्द्रमा बलवान् होकर सप्तम स्थान में बैठा हो, तो नष्ट हुई वस्तु शीघ्र मिले । यदि सप्तम स्थान में क्षीण चन्द्रमा हो, तो नष्ट हुई वस्तु शीघ्र न मिले । यदि लग्नेश सप्तम स्थान में स्थित हो, तो नष्ट हुई वस्तु न मिले ॥ १०० ॥

स्थिरोदये स्थिरांशे वा वर्गोत्तमगतेऽपि वा ।
स्थितं तत्रैव तद्द्रव्यं स्वकीयेनैव चोरितम् ॥ १०१ ॥

यदि स्थिर लग्न हो या स्थिर नवांश हो या वर्गोत्तम नवांश हो, तो द्रव्य अपने ही घर में होगा तथा अपना ही आदमी चोर होगा ॥ १०१ ॥

स्थिरे स्थिरांशे स्वजनैर्गृहान्तिके
चरे परेणापहृतं न चान्तिके ॥ १०२ ॥

यदि स्थिर लग्न या स्थिर नवांश हो, तो वस्तु अपने घर के समीप होगी और आपस के लोग चोर होंगे। यदि चर लग्न या चर नवांश हो, तो चोरी में गई हुई वस्तु अपने घर से दूर किसी बाहरी आदमी के पास होगी ॥ १०२ ॥

लग्नेश्वरे द्यूनगते विलग्ने
जायेश्वरे नष्टधनस्य लाभः।
अस्तेश्वरे केन्द्रगते स चौर-
स्तत्रैव नान्यत्र गतः पुराध्वनः ॥ १०३ ॥

यदि लग्नेश सप्तम स्थान में हो तथा सप्तमेश लग्न में हो, तो नष्ट हुए धन का लाभ होता है। यदि सप्तमेश केन्द्र में हो, तो चोर वहीं पर है, नगर से बाहर नहीं गया है ॥ १०३ ॥

लग्नाच्चौरज्ञानम्

मेषलग्ने द्विजश्चौरो राजन्यश्च वृषे भवेत्।
लग्ने च मिथुने वैश्यः शूद्रः कर्कटके भवेत् ॥ १०४ ॥
अन्त्यजस्तस्करः सिंहे कन्यायां च वराङ्गना।
पुत्रो भ्राता सखा वापि तुलायां तस्करो भवेत् ॥१०५॥
वृश्चिके सेवकश्चौरश्चापे भ्राता स्त्रियोऽपि वा।
मृगे वैश्यजनश्चौरः कुम्भे चौरश्च मूषकः ॥ १०६ ॥
मीने धरातलं स्थानमेवमाहुर्मनीषिणः ॥ १०७ ॥

मेष लग्न में चोरी हो, तो ब्राह्मण चोर, वृष लग्न में चोरी हो, तो क्षत्रिय चोर, मिथुन लग्न हो, तो वैश्य चोर, कर्क लग्न हो, तो शूद्र चोर, सिंह लग्न हो, तो अन्त्यज चोर, कन्या लग्न हो, तो स्त्री चोर, तुला लग्न हो, तो पुत्र, भाई या मित्र चोर, वृश्चिक लग्न हो, तो सेवक चोर, धन लग्न हो, तो भाई या स्त्री चोर, मकर लग्न हो,

तो वैश्य चोर, कुम्भ लग्न हो, तो चूहा चोर, तथा मीन लग्न हो, तो पृथ्वीगत वस्तु होती है ॥ १०४-१०७ ॥

चोरितवस्तुस्थानज्ञानम्

आदिमध्यावसानेषु द्रेष्काणेषु विलग्नतः ।
द्वारदेशे तथा मध्ये गृहान्ते च वदेद्धनम् ॥ १०८ ॥
स्थिरोदये स्थिरांशे वा वर्गोत्तमगतेऽपि वा ।
स्थितं तत्रैव तद्द्रव्यं स्वकीयेनैव चोरितम् ॥ १०९ ॥

लग्न का प्रथम द्रेष्काण हो, तो वस्तु द्वारदेश में, द्वितीय द्रेष्काण हो, तो घर के मध्य में, तृतीय द्रेष्काण में हो, तो घर के अन्त में बतलानी चाहिए ॥ १०८-१०९ ॥

नक्षत्रवशान्नष्टवस्तुलाभादिज्ञानम्

विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः ।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्याप्ती न सुलोचने ॥ ११० ॥

अन्धसंज्ञक * नक्षत्रों (रोहिणी, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा, पूर्वाषाढ़, धनिष्ठा तथा रेवती) में खोई हुई वस्तु का शीघ्र लाभ, मन्दलोचन संज्ञक नक्षत्रों (मृगशिरा, आश्लेषा, हस्त, अनुराधा, उत्तराषाढ़, शतभिषा तथा अश्विनी) में खोई हुई वस्तु का प्रयत्न से लाभ, मध्यलोचन संज्ञक नक्षत्रों (आर्द्रा, मघा, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित्, पूर्वभाद्रपद तथा भरणी) में खोई हुई वस्तु का समाचार बहुत दिनों में मिलता है एवं सुलोचनसंज्ञक नक्षत्रों (पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी, स्वाती, मूल, श्रवण, उत्तराभाद्रपद तथा कृत्तिका) में खोई हुई वस्तु का समाचार भी नहीं मिलता है ॥ ११० ॥

* नक्षत्रों की अन्ध आदि संज्ञाएं इस पुस्तक के पृष्ठ २३ में लिखी जा चुकी हैं ।

अन्धे पूर्वगतं वस्तु काणे चैव तु दक्षिणे।
चिर्पटे पश्चिमायां तु सुलोचने तथोत्तरे॥ १११॥

अन्धसंज्ञक नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु पूर्व दिशा में, काणसंज्ञक नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु दक्षिण दिशा में, चिर्पटसंज्ञक नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु पश्चिम दिशा में एवं सुलोचनसंज्ञक नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु उत्तर दिशा में होती है॥ १११॥

मघादिरर्यमान्तं च समीपे वस्तु दृश्यते।
हस्तादिवसुपर्यन्तमन्यहस्ते च दृश्यते॥ ११२॥
शततारायमान्तं तु स्वगृहे वस्तु दृश्यते।
अग्न्यादिसार्पपर्यन्तमदृष्टं दूरगं तथा॥ ११३॥

मघा से उत्तरफाल्गुनी पर्यन्त नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु समीप में दिखलाई देती है। हस्त से धनिष्ठापर्यन्त नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु दूसरे के हाथ में रहती है। शतभिषा से भरणीपर्यन्त नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु अपने घर में रहती है। कृत्तिका से आश्लेषापर्यन्त नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु देखने में नहीं आती है एवं दूर चली जाती है॥ ११२-११३॥

दूरस्थजीवितमरणप्रश्नः

सौम्यैः षष्ठान्त्यरन्ध्रस्थैर्विबलैश्च शुभेक्षितैः।
पापयुक्तौ शशाङ्कार्कौ तदा दूरस्थितो मृतः॥ ११४॥

यदि सौम्यग्रह ६। ८। १२ स्थानों में निर्बल होकर स्थित हों तथा अशुभ ग्रहों की उन पर दृष्टि हो, सूर्य तथा चन्द्रमा पापयुक्त हों, तो दूरदेशस्थ मनुष्य को मृत जानना चाहिए॥ ११४॥

पृष्ठोदये पापयुते त्रिकोणे
केन्द्राष्टषष्ठोपगतैश्च पापैः।
सौम्यैरदृष्टः परदेशसंस्थो
मृतो गदार्तो नवमे च सूर्ये॥ ११५॥

पृष्ठोदय लग्न हो, त्रिकोण में पापग्रह हों, केन्द्र एवं ८। ६ स्थानों में भी पापग्रह हों, उन पर शुभग्रहों की दृष्टि न हो, तो प्रवासी को मृतक कहना चाहिए। यदि नवम स्थान में सूर्य हो, तो प्रवासी को रोग से पीड़ित जानना चाहिए ॥ ११५ ॥

बद्धमोक्षप्रश्नः

बद्धो विमुच्यतेऽत्याशु सौम्यः श्रेयांस्तनौ यदा।
अस्तङ्गते तनौ शुक्रे बद्धमोक्षादिसम्भवः ॥
बन्धमोक्षे त्रिधर्मेशसंग्रहः शीघ्रमोक्षकृत् ॥ ११६ ॥

जब सौम्यग्रह लग्न में हो, तो बद्ध शीघ्र छूट जाता है। यदि शुक्र अस्तंगत हो या लग्न में हो, तो बद्ध का मोक्ष सम्भावित है। तृतीयेश तथा धर्मेश एक साथ स्थित हों, तो बद्ध व्यक्ति शीघ्र छूट जाता है ॥ ११६ ॥

अथपराजयप्रश्नः

झषालिकुम्भकर्कटा रसातले यदि स्थिताः।
रिपोः पराजयस्तदा चतुष्पदैः पलायनम् ॥ ११७ ॥

यदि चतुर्थ स्थान में मीन, वृश्चिक, कुम्भ तथा कर्क राशियाँ हों, तो शत्रु का पराजय होता है। यदि चतुष्पद अर्थात् मेष, वृष, सिंह राशियाँ हों, तो शत्रु का पलायन होता है ॥ ११७ ॥

शीर्षोदये शुभसुहृद्ग्रहयुक्तदृष्टे
लग्ने शुभैश्च बलिभिः शुभवर्गलग्ने।
सौम्यैर्ग्रहैः सुतचतुष्टयधर्मसंस्थैः
प्रष्टुर्भवेद्धनजयेप्सितकार्यसिद्धिः ॥ ११८ ॥

यदि शीर्षोदय अर्थात् ५। ६। ७। ८। ११ लग्न हो, शुभग्रह या मित्रग्रह से युक्त या दृष्ट हो, शुभग्रह बलवान् हो, पञ्चम, केन्द्र तथा धर्म स्थानों में सौम्यग्रह हों, तो प्रश्नकर्ता को धन तथा जय का लाभ होता है तथा अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है ॥ ११८ ॥

लग्ने क्रूरे जयः प्रष्टुः सप्तमे विद्विषो जयः ॥ ११९ ॥

लग्न में क्रूरग्रह हो, तो प्रश्नकर्त्ता का जय तथा सप्तम स्थान में क्रूरग्रह हो, तो शत्रु का जय होता है ॥ ११९ ॥

सन्धि कुर्यात्सुहृद्दृष्टिर्लग्नेशास्तपयोर्मिथः ।
आयेऽपि सबले सन्धिर्विबले विग्रहो भवेत् ॥ १२० ॥

लग्नेश तथा सप्तमेश की परस्पर मित्रदृष्टि हो, तो सन्धि तथा लाभ स्थान में बलवान् ग्रह हों, तो भी सन्धि हो जाती है । यदि लाभस्थान में बलहीन ग्रह हों, तो युद्ध होता है ॥ १२० ॥

मृगयाप्रश्नः

लग्नास्तनाथौ केन्द्रस्थौ निर्बलौ क्लेशदायिनी ।
मृगयोक्ता शुभफला वीर्याढ्यौ यदि तौ पुनः ॥ १२१ ॥

लग्नेश तथा सप्तमेश निर्बल होकर केन्द्र में स्थित हों, तो शिकार खेलने में क्लेश होता है । यदि वे बलवान् हों, तो शुभ फल होता है ॥ १२१ ॥

क्रूराक्रान्तानि यावन्ति मध्ये भानीन्दुलग्नयोः ।
तावन्तः प्राणिनो वध्या द्वित्रिघ्नाः स्वांशकादिषु ॥१२२॥

चन्द्रमा तथा लग्न के बीच जितने क्रूर ग्रह हों उतने ही प्राणियों का वध होगा । यदि अपने नवांश आदि में हों, तो द्विगुणित त्रिगुणित जानना चाहिए ॥ १२२ ॥

सवीर्यौ कुजज्ञौ नृपाखेटसिद्ध्यै
न सिद्धिर्यदा हीनवीर्याविमौ स्तः ।
जलाखेटमाहुः सवीर्यैर्ग्रहैस्तै-
र्जलाढ्यैर्नगाढ्यैर्नखाखेटमाहुः ॥ १२३ ॥

यदि मंगल तथा बुध बलवान् हो, तो शिकार खेलने में सिद्धि प्राप्त होती है, इन दोनों के बलहीन होने पर सिद्धि नहीं प्राप्त होती । यदि जलराशि (४ । ८ । १२) में बलवान् ग्रह हों, तो जलजन्तु

का शिकार होता है। यदि वनचरराशि (१ । ५ । ६) में बलवान् ग्रह हों, तो जंगल में शिकार का खेलना होता है ॥ १२३ ॥

लुब्धनामर्क्षगो राशिर्यत्र स्याद्दिनचन्द्रमाः ।
तन्मध्ये यदि सौम्याः स्युस्तदा च हरिणादिकम् ॥ १२४ ॥
राशिचन्द्रमसोर्मध्ये पापा दुष्टपशुस्तदा ।
मिश्रखेटे मिश्रपशुर्न ग्रहश्चेत्पशुर्नहि ॥ १२५ ॥

शिकारी की नामराशि तथा उस दिन के चन्द्रमा के बीच में यदि सौम्यग्रह हों, तो हरिण आदि का शिकार होता है। नामराशि तथा चन्द्र के बीच में पापग्रह हों, तो दुष्ट पशु का वध होता है। यदि मिश्रग्रह हों, तो मिश्र पशुओं का शिकार होता है। यदि कोई भी ग्रह न हों, तो कोई पशु न मिलेगा ॥ १२४-१२५ ॥

भोजनप्रश्नः

सूर्ये मूलं पुष्पमिन्दौ कुजे स्या-
त्पत्रं शाखा चापि शाकं सवीर्ये ।
शुक्रेऽयज्ञे व्यञ्जनं भूरिभेदं
मन्देनेत्थं सामिषं राहुकेत्वोः ॥ १२६ ॥

सूर्य लग्न में हो या लग्न को देखता हो, तो मूल अर्थात् आलू आदि, चन्द्रमा हो, तो फूल अर्थात् गोभी आदि का फूल, मंगल बलवान् हो, तो पत्र, शाखा तथा अन्य साग, शुक्र, बृहस्पति तथा बुध हो, तो अनेक प्रकार के व्यञ्जन तथा शनि, राहु एवं केतु हो, तो मांससहित भोजन मिलता है ॥ १२६ ॥

मन्दे तमसि वा लग्ने सूर्येणालोकिते युते ।
लभ्यते भोजनं नात्र शस्त्रभीतिस्तदा भवेत् ॥ १२७ ॥

यदि लग्न में शनि या राहु हो तथा उस पर सूर्य की दृष्टि भी हो या सूर्य से युक्त हो, तो भोजन नहीं मिलता है, किन्तु कभी-कभी शस्त्र का भय भी होता है ॥ १२७ ॥

रविदृष्टं युतं वापि लग्नं न यदि तत्र हि ।
उपवासस्तदा वाच्यो नक्तं वा विरसाशनम् ॥ १२८ ॥

यदि सूर्य से दृष्ट या युक्त लग्न न हो, तो उस दिन उपवास होता है या रात में रसहीन भोजन मिलता है ॥ १२८ ॥

स्निग्धमन्नं सिते तुर्ये तैलसंस्कृतमर्कजे ।
नीचोपगे कदशनं विरसं चाप्यसंस्कृतम् ॥ १२९ ॥

यदि चतुर्थ स्थान में शुक्र हो, तो स्निग्ध (चिक्कण) अन्न भोजनार्थ मिलता है । यदि शनि हो, तो तैलपक्व, नीच ग्रह हो, तो रसहीन एवं बिना पका हुआ कुत्सित भोजन प्राप्त होता है॥१२९॥

शुक्रे यवा वाजरिका युगन्धराः
शनौ कुलित्थादिसमाषमन्नम् ।
भोज्यं तुषान्नं शिखिराहुवीर्या-
च्छुभेक्षणालोकनतः सहर्षम् ॥ १३० ॥

यदि प्रश्नलग्न में शुक्र बलवान् हो, तो बाजरा या जौ, शनि बलवान् हो, तो कुल्थी का शाक तथा उड़द, राहु और केतु बलवान् हों, तो छिलकेवाला अन्न, यदि शुभग्रहों की दृष्टि हो, तो हर्ष-सहित भोजन की प्राप्ति होती है ॥ १३० ॥

तिलान्नमर्के हिमगौ सुतन्दुला
गुरौ सगोधूमभुजिः सवीर्ये ।
बुधे समुद्गाः खलु राजभोगा
भौमे मसूराश्चणकाश्च भोज्यम् ॥ १३१ ॥

यदि प्रश्नलग्न में सूर्य बलवान् हो, तो तिल का अन्न, चन्द्रमा बलवान् हो, तो चावल, मंगल बलवान् हो, तो मसूर एवं चने का भोजन, बुध बलवान् हो, तो मूँग एवं उड़द तथा बृहस्पति बलवान् हो, तो गेहूँ का भोजन मिलता है ॥ १३१ ॥

वृष्टिप्रश्नः

बुधः शुक्रसमीपस्थः करोत्येकार्णवां महीम् ।
तयोरन्तर्गतो भानुः समुद्रमपि शोषयेत् ॥ १३२ ॥

यदि शुक्र के समीप में बुध हो, तो समुद्र के समान पृथ्वी पानी से भर जाती है। यदि उनके मध्य में सूर्य हो, तो समुद्र भी सूख जाता है ॥ १३२ ॥

चलत्यङ्गारके वृष्टिस्त्रिधा वृष्टिः शनैश्चरे ।
वारिपूर्णां महीं कृत्वा पश्चात्सञ्चरते गुरुः ॥ १३३ ॥

जब मंगल एक राशि को छोड़कर दूसरी राशि में जाता है, तब वृष्टि होती है। शनि वक्री, उदयी या अस्तंगत हो, तो वर्षा होती है। बृहस्पति दूसरी राशि में जाने से पहले पृथ्वी को पानी से भर देता है ॥ १३३ ॥

भानोरग्रे महीपुत्रो जलशोषः प्रजायते ।
भानोः पश्चाद्धरासूनुर्वृष्टिर्भवति भूयसी ॥ १३४ ॥

यदि मंगल सूर्य से आगे हो, तो जल सूख जाता है। यदि मंगल सूर्य से पीछे हो, तो बहुत पानी बरसता है ॥ १३४ ॥

उदयास्तङ्गतः शुक्रो बुधश्च वृष्टिकारकः ।
जलराशिस्थिते चन्द्रे पक्षान्ते संक्रमे तदा ॥ १३५ ॥

जब शुक्र या बुध का उदय या अस्त हो, तो पानी बरसता है। जब चन्द्रमा जलचर राशि (४ । ८ । १२) में हो या पक्ष का अन्त हो या संक्रान्ति हो, तब भी वृष्टि होती है ॥ १३५ ॥

समागमे बुधसितयोस्तथैव गुरुशुक्रयोः ।
तथैव गुरुबुधयोर्वृष्टिः स्यान्नात्र संशयः ॥ १३६ ॥

जब बुध शुक्र का, बृहस्पति शुक्र का तथा बुध बृहस्पति का समागम हो, तो वर्षा होती है, इसमें सन्देह नहीं है ॥ १३६ ॥

एकराशिगतावेतौ चन्द्रमाधरणीसुतौ ।
यदि तत्र गतो जीवः करोत्येकार्णवां महीम् ॥ १३७ ॥

जब चन्द्रमा, मंगल तथा बृहस्पति एक राशि में हों, तो पृथ्वी जल से भरकर समुद्र के समान हो जाती है ॥ १३७ ॥

दशार्द्राद्याः स्त्रियस्तारा विशाखाद्या नपुंसकाः ।
त्रिस्रस्ततश्च मूलाद्याः पुरुषाश्च चतुर्दश ॥ १३८ ॥

आर्द्रा आदि दश नक्षत्र स्त्री, विशाखा आदि तीन नक्षत्र नपुंसक तथा मूल आदि चौदह नक्षत्र पुरुषसंज्ञक होते हैं ॥ १३८ ॥

स्त्रीपुंसयोर्महावृष्टिः स्त्रीनपुंसकयोः क्वचित् ।
स्त्रीस्त्रियोः शीतलच्छाया योगः पुरुषयोर्न च ॥ १३९ ॥

स्त्री-पुरुष योग में महावृष्टि, स्त्री-नपुंसक में क्वाचित्क, स्त्री-स्त्री तथा पुरुष-पुरुष नक्षत्रों के योग में वृष्टि नहीं होती है ॥ १३९ ॥

सूर्यस्य पुरतो गच्छेद्यदा शुक्रो बुधोऽपि वा ।
वर्षाकाले न सन्देहस्तदा वृष्टिर्निरन्तरा ॥ १४० ॥

जब शुक्र या बुध सूर्य से आगे चलें, तब वर्षाकाल में बराबर वृष्टि हुआ करती है ॥ १४० ॥

अनावृष्टिप्रश्नाः

एकराशिगतावेतौ धरापुत्राङ्गिरःसुतौ ।
तदा मेघा न वर्षन्ति वर्षाकाले न संशयः ॥ १४१ ॥

मंगल तथा बृहस्पति एक राशि में हों, तो वर्षाकाल में वर्षा नहीं होती है ॥ १४१ ॥

भौमस्य पृष्ठतो याति भानुश्चेज्जलशोषकः ।
भवत्यत्र न सन्देहो विपरीतो जलप्रदः ॥ १४२ ॥

मंगल की राशि से पिछली राशि में सूर्य हो, तो जलशोष होता है । यदि मंगल आगे और सूर्य पीछे हो, तो वर्षा होती है ॥१४२॥

दुर्भिक्षादियोगः

वृषे राहुर्यदा भौमः षष्ठे मासि महद्भयम् ।
भवत्यत्र न सन्देहस्तदा दुर्भिक्षपीडनम् ॥ १४३ ॥

वृष राशि में राहु और मंगल हो, तो छठे महीने में दुर्भिक्ष होता है ॥ १४३ ॥

भानुभौमौ भृगुश्चैव शनिक्षेत्रं समाश्रिताः ।
यदा निशापतिस्तत्र तदा दुर्भिक्षतो भयम् ॥ १४४ ॥

शनि के घर में सूर्य, मंगल या शुक्र स्थित हों तथा चन्द्रमा भी हो, तो दुर्भिक्ष होता है ॥ १४४ ॥

मिथुनर्क्षे सूर्यपुत्रो राहुर्वा यदि संस्थितः ।
दुर्भिक्षं जायते तत्र रोगाणां च विवर्धनम् ॥ १४५ ॥

मिथुन राशि में शनि या राहु हो, तो दुर्भिक्ष तथा रोगों की वृद्धि होती है ॥ १४५ ॥

रविराहुमहीपुत्राः शशिशुक्रशनैश्चराः ।
एक राशिगता ह्येते तदा पृथ्वी भयाकुला ॥ १४६ ॥

जब सूर्य, राहु और मंगल या चन्द्रमा, शुक्र और शनि एक राशि में स्थित हों, तो पृथ्वी भय से व्याकुल होती है ॥ १४६ ॥

शनिराहू यदैकत्र भवेतां सहितौ यदा ।
सर्वधान्यमहर्घत्वं जायते नात्र संशयः ॥ १४७ ॥

जब शनि और राहु एक साथ स्थित हों, तो सब प्रकार के अन्न महँगे हो जाते हैं. इसमें सन्देह नहीं है ॥ १४७ ॥

गुरुशुक्रावेकराशि गतौ दुर्भिक्षदुःखदौ ।
युद्धदौ शनिमाहेयौ तथा दुर्भिक्षकारकौ ॥ १४८ ॥

जब बृहस्पति और शुक्र एक राशि में स्थित हों, तो दुर्भिक्ष से दुःख प्राप्त होता है । यदि शनि और मंगल एक राशि में स्थित हों, तो युद्ध तथा दुर्भिक्ष दोनों होते हैं ॥ १४८ ॥

शुक्रसौर्योर्द्वयोरस्तमेकराशौ यदा भवेत् ।
अन्नपीडा महायुद्धं देशे देशे च विग्रहाः ॥ १४९ ॥

जब शुक्र और शनि दोनों एक ही राशि में अस्त हों, तो अन्न-पीड़ा, महायुद्ध तथा हरएक देश में युद्ध आदि छिड़ते हैं ॥ १४९ ॥

यदा जीवयुतो मन्दो जीवाद्वा सप्तमे स्थितः ।
तदा प्रजा विनश्यन्ति भूपाश्चान्नपरिक्षयः ॥ १५० ॥

जब शनि बृहस्पति से युक्त हो या शनि बृहस्पति से सातवें स्थान में हो, तब राजा-प्रजा दोनों का विनाश तथा अन्न का सर्व-नाश होता है ॥ १५० ॥

अग्रे याति दिवानाथः पृष्ठे च भृगुनन्दनः ।
मध्ये सोमसुतो याति भवत्यन्नमहर्घता ॥ १५१ ॥

जब सूर्य आगे, शुक्र पीछे तथा बुध मध्य में हो, तो अन्न महँगा हो जाता है ॥ १५१ ॥

रोहिणीशकटं केतुर्भिन्द्यात्सौरोऽथवा कुजः ।
यदा तदा जगत्सर्वं संक्षयं यात्यसंशयम् ॥ १५२ ॥

जब केतु, शनि या मंगल रोहिणीशकट को भेदन करे, तो समस्त चराचर जगत् का विनाश हो जाता है ॥ १५२ ॥

अतिचारगते सौम्ये क्रूरे वक्रत्वमागते ।
हाहाभूतं जगत्सर्वं रुण्डमुण्डं च जायते ॥ १५३ ॥

जब सौम्यग्रह का अतिचार हो, क्रूरग्रह वक्री हो, तो समस्त विश्व में हाहाकार मच जाता है ॥ १५३ ॥

सप्त ग्रहा यदैकत्र गोलयोगस्तदा भवेत् ।
दुर्भिक्षं राष्ट्रपीडा च तस्मिन् योगे न संशयः ॥ १५४ ॥

जब एक ही राशि में सात ग्रह आ पड़ते हैं, तो गोलयोग होता है । गोलयोग का फल यह है कि राष्ट्र में दुर्भिक्ष एवं राष्ट्र में पीड़ा होती है ॥ १५४ ॥

भूकम्पयोग:

उपप्लवात्सप्तमगो महीजो
महीसुतात्पञ्चमगो यदा बुधः ।
बुधाद्विधुः स्याच्च चतुष्टयस्थितः
स चेह भूकम्पनयोग उक्तः ॥ १५५ ॥

जब राहु से सप्तम स्थान में मंगल हो, मंगल से पञ्चम स्थान में बुध हो, बुध से केन्द्र में चन्द्रमा हो, तो भूकम्पयोग होता है ॥ १५५ ॥

यामक्रमेण भूकम्पो द्विजातीनामनिष्टदः ।
अनिष्टदः क्षितीशानां सन्ध्ययोरुभयोरपि ॥
षड्भिर्मासैश्च भूकम्पो द्वाभ्यां दाहः फलप्रदः ॥१५६॥

प्रथम प्रहर में भूकम्प हो, तो ब्राह्मणों, द्वितीय प्रहर में भूकम्प हो, तो क्षत्रियों, तृतीय प्रहर में भूकम्प हो, तो वैश्यों, चतुर्थ प्रहर में भूकम्प हो, तो शूद्रों तथा दोनों सन्ध्याओं में भूकम्प हो, तो राजाओं का अनिष्ट होता है । भूकम्प का फल छः महीनों में तथा दिग्दाह का फल दो महीने में होता है ॥ १५६ ॥

दिग्दाह:

सूर्याद्विधुः पञ्चमसप्तगः स्या-
त्क्षोणीसुतो याति तथारिगेहे ।
दिग्दाहयोगो मुनिना प्रदिष्टः
संजात उल्कापतनाधिकारी ॥ १५७ ॥

यदि सूर्य से चन्द्रमा पञ्चम या सप्तम स्थान में हो, मंगल छठे स्थान में हो, तो दिग्दाह तथा उल्कापात का योग होता है ॥१५७॥

दाहो दिशां राजभयाय पीतो
देशस्य नाशाय हुताशवर्णः ।

यश्चारुणः स्यादपसव्यवायुः
सस्यस्य नाशं स करोति दृष्टः ॥ १५८ ॥

यदि पीले रंग का दिग्दाह हो, तो राजाओं को भय, यदि अग्निवर्णवाला दिग्दाह हो, तो देश का नाश, यदि कुछ लाल रंग का हो तथा वायु दाहिनी ओर चले, तो धान्य का नाश होता है ॥ १५८ ॥

परिवेषः

किरणा वायुनिहता उच्छ्रिता मण्डलीकृताः ।
नानावर्णाकृतयस्ते परिवेषाः शशीनयोः ॥ १५९ ॥

सूर्य और चन्द्रमा के चारों ओर जो अनेक रंगोंवाला किरणों का घेरा देखने में आता है उसे परिवेष कहते हैं ॥ १५९ ॥

रविशशिपरिवेषे पूर्वयामे च पीडा
रविशशिपरिवेषे मध्ययामे च वृष्टिः ।
रविशशिपरिवेषे धान्यनाशस्तृतीये
रविशशिपरिवेषे राज्यभङ्गश्चतुर्थे ॥ १६० ॥

यदि दिन या रात के पहले पहर में परिवेष हो, तो पीड़ा, यदि दूसरे पहर में परिवेष हो, तो वर्षा, यदि तीसरे पहर में परिवेष हो, तो धान्य का नाश एवं चौथे पहर में परिवेष हो, तो राज्य का नाश होता है ॥ १६० ॥

शुभलक्षणानि

नभः प्रसन्नं विमलानि भानि
प्रदक्षिणं वाति सदागतिश्च ।
दिशां च दाहः कनकावदातो
हिताय लोकस्य सपार्थिवस्य ॥ १६१ ॥

जब आकाश स्वच्छ हो, तारागण निर्मल हों, वायु दक्षिण की

और चले तथा दिशाओं का सुवर्ण के समान वर्ण हो, तो राजा तथा प्रजा दोनों को शुभ फल प्राप्त होता है ॥ १६१ ॥

प्रश्नप्रकरण समाप्त ।

दशवाँ अध्याय समाप्त ।

ग्रन्थकर्तुः परिचयः

भारद्वाजकुलोत्पन्नाः सदसद्ग्रन्थपारगाः ।
पूर्वजा मम सत्रालीग्राममध्येऽवसन्पुरा ॥ १ ॥
कूर्माचले सुविख्यातौ भ्रातरौ च बभूवतुः ।
तयोरेको मन्त्रशास्त्रप्रवीणो देवसिद्धिकृत् ॥
लोहस्य द्रवनात्तस्य सन्ततिर्लोहिनी स्मृता ॥ २ ॥
द्वितीयो बहुभूमीश्च लब्ध्वा सत्कीर्तिसन्ततिम् ।
काण्डपाल इति ख्यातिं प्रापयच्च स्वसन्ततिम् ॥ ३ ॥
तस्मिन्वंशे भानुदेवो ज्योतिस्तत्त्वार्थपारगः ।
प्रपितामहो मदीयोऽभूत्खानग्रामनिवासकृत् ॥ ४ ॥
महेश्वर इव ख्यातस्तस्य पुत्रो महेश्वरः ।
पितामहो मदीयोऽभूत्सर्वशास्त्रार्थवित्तमः ॥ ५ ॥
ज्योतिषामयनं मन्त्रविच्छिवार्चनतत्परः ।
तस्य पुत्रो मम पिता बालकृष्णो विचक्षणः ॥ ६ ॥
आयुर्वेदविशारदः समभवज्ज्येष्ठो हि मे सोदरः
केशवदत्त इति स्मृतो निजपितुः स्वभ्यस्तविद्याव्रजः ।
हीरावल्लभ इत्युपासितगुरुर्लब्धप्रतिष्ठोऽनुजो
लक्ष्मीकान्त इति त्रयोऽपि तनुजास्तस्माच्च संजज्ञिरे॥ ७॥

लक्ष्मीकान्तेन संगृह्य ज्योतिस्तत्त्वनिबन्धनात् ।
प्रयत्नाल्लिखितो ह्येष ज्योतिस्तत्त्वप्रकाशकः ॥ ८ ॥

नगवेदाष्टचन्द्रेऽब्दे शके कृष्णे शुचौ शनौ ।
सप्तम्यां विष्णुसदने नानाग्रन्थविभूषिते ॥ ९ ॥

पूर्णतामगमद्ग्रन्थः शम्भोः पादाभिवन्दनात् ।
तत्करे चार्पितः ख्यातिं लभतां सत्समागमे ॥ १० ॥

इति भारद्वाजगोत्रोत्पन्नेन काण्डपाल (कन्याल)-इत्युपाधिधारि-
णाऽऽल्मोडामण्डलान्तर्गतखानग्रामनिवासिना ज्यौतिषाचार्येण
लक्ष्मीकान्तशर्मणा संगृह्य लिखितो भाषाटीका-
सहितो ज्योतिषतत्त्वप्रकाशः
पूर्णतामगमत् ।

अधिमासावली

१ संवत् १९८८ वैक्रमीये आषाढोऽधिमासः।

२ संवत् १९९१ वैक्रमीये वैशाखोऽधिमासः।

३ संवत् १९९३ वैक्रमीये भाद्रोऽधिमासः।

४ संवत् १९९६ वैक्रमीये श्रावणोऽधिमासः।

५ संवत् १९९९ वैक्रमीये ज्येष्ठोऽधिमासः।

६ संवत् २००२ वैक्रमीये चैत्रोऽधिमासः।

७ संवत् २००४ वैक्रमीये श्रावणोऽधिमासः।

८ संवत् २००७ वैक्रमीये आषाढोऽधिमासः।

क्षयमासावली
१ संवत् २०२० वैक्रमीये मार्गशीर्षस्य क्षयः।
२ संवत् २०३९ वैक्रमीये पौषस्य क्षयः।
३ संवत् २०८५ वैक्रमीये मार्गशीर्षस्य क्षयः।
४ संवत् २१०४ वैक्रमीये मार्गशीर्षस्य क्षयः।
५ संवत् २१४२ वैक्रमीये कार्तिकस्य क्षयः।
६ संवत् २१६१ वैक्रमीये मार्गशीर्षस्य क्षयः।
७ संवत् २१८० वैक्रमीये पौषस्य क्षयः।
८ संवत् २२२६ वैक्रमीये मार्गशीर्षस्य क्षयः।
९ संवत् २२४५ वैक्रमीये पौषस्य क्षयः।
१० संवत् २२८३ वैक्रमीये मार्गशीर्षस्य क्षयः।

सचित्र ज्योतिष शिक्षा

बी० एल० ठाकुर

ज्योतिष के अधिकतर ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं। कुछ की भाषा टीका भी उपलब्ध है। परन्तु जो ज्योतिष से पूर्ण अनभिज्ञ हैं उनके लिए कठिनाई थी। इसलिए हिन्दी में एक ऐसी पुस्तक की आवश्यकता थी जिससे कोई भी व्यक्ति उसके सहारे ज्योतिष का अध्ययन कर सके।

इसी बात को ध्यान में रख कर इस पुस्तक को सात खण्डों में प्रकाशित करने की योजना बनाई गई है। ये सात खण्ड प्रारम्भिक ज्ञान, गणित, फलित, वर्ष-फल, प्रश्न, मुहूर्त तथा संहिता हैं।

प्रारम्भिक ज्ञान खण्ड : इस खण्ड के अध्ययन से ज्योतिषसम्बन्धी बहुत-सी बातें समझ में आ जायेंगी, जैसे किसी का जन्म सम्वत्, मास, पक्ष, दिन, समय आदि ज्ञात न हो तो केवल कुण्डली चक्र देखकर सभी बातें बताई जा सकती हैं। विना पंचांग के तिथि, नक्षत्र, करण, वार, सूर्य, चन्द्र आदि स्पष्ट बताये जा सकते हैं। सिर्फ इसी भाग के अध्ययन से संक्षिप्त जन्मपत्रिका बना लेना आ जाता है। अन्त में फलित-सम्बन्धी मुख्य-मुख्य बातें संक्षेप में बताई गई हैं।

रु० ९.००

गणित खण्ड : इसके दो भाग हैं। इनमें पूरी जन्मपत्री बनाने की विधि है। प्रत्येक गणित करने की सोदाहरण रीति देकर पूरी गणित क्रिया दी गई है।

प्रथम भाग, रु० २५.००

द्वितीय भाग, रु० १०.००

फलित खण्ड : प्रथम भाग। इसमें फलित सम्बन्धी सभी बातें दी गई हैं और महापुरुषों की कुण्डलियों से उदाहरण देकर समझाया गया है।

रु० २०.००

द्वितीय भाग। इसमें ग्रहों की दृष्टि, योग, वर्ग, स्थान आदि ज्योतिष के आवश्यक विषयों पर सूक्ष्म विवेचन किया गया है। रु० २४.००

तृतीय भाग। रु० ४०.००

शेष निम्नलिखित खण्ड छप रहे हैं।

वर्षफल खण्ड : प्रश्न खण्ड : मुहूर्त खण्ड : संहिता खण्ड

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली :: वाराणसी :: पटना